

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती रचित

गोम्मटसार

(जीवकाण्ड)

भाग-२

सम्पादन-अनुवाद

डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये
सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

गोम्मटसार

जैन-धर्म के जीवतत्त्व और कर्मसिद्धान्त की विस्तार से व्याख्या करनेवाला महान् ग्रन्थ है 'गोम्मटसार'। आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती (दसवीं शताब्दी) ने इस वृहत्काय ग्रन्थ की रचना 'गोम्मटसार जीवकाण्ड' और 'गोम्मटसार कर्मकाण्ड' के रूप में की थी। डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये और सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री के सम्पादकत्व में यह ग्रन्थ भारतीय ज्ञानपीठ से सन् १९७८-१९८१ में प्राकृत मूल गाथा, श्रीमत् केशववर्णी विरचित कर्णाट वृत्ति जीवतत्त्व-प्रदीपिका, संस्कृत टीका तथा हिन्दी अनुवाद एवं विस्तृत प्रस्तावना के साथ पहली बार चार वृहत् जिल्दों (गोम्मटसार जीवकाण्ड, भाग १,२ और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, भाग १,२) में प्रकाशित हुआ था। और अब जैन धर्म-दर्शन के अध्येताओं एवं स्वाध्याय-प्रेमियों को समर्पित है ग्रन्थ का यह नया संस्करण, नयी साजसज्जा के साथ।

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती रचित

गोम्मटसार

(जीवकाण्ड)

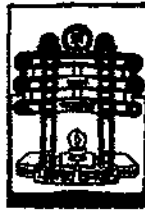
द्वितीय भाग

[श्रीमत्केशववर्णी विरचित कर्णाटवृत्ति, संस्कृत टीका जीवतत्त्वप्रदीपिका,
हिन्दी अनुवाद तथा प्रस्तावना सहित]

सम्पादन एवं अनुवाद

डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये

सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

वीर नि. संवत् २५२२ □ वि. संवत् २०५३ □ सन् १९९७

द्वितीय संस्करण □ मूल्य १८५.०० रुपये

भारतीय ज्ञानपीठ

(स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ६, वीर नि. सं. २४७० : विक्रम सं. २००० : १८ फरवरी १९४४)

स्व. पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी की पवित्र स्मृति में

स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित

एवं

उनकी धर्मपत्नी स्वर्गीय श्रीमती रमा जैन द्वारा सम्पोषित

मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्य का अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उसका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदि के साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारों की सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य, विशिष्ट विद्वानों के अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन साहित्य-ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमाला में प्रकाशित हो रहे हैं।

ग्रन्थमाला-सम्पादक (प्रथम संस्करण)

सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

१८, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-११०००३

मुद्रक - विकास ऑफसेट नवीन शाहपरा, दिल्ली-110032

सर्वाधिकार सुरक्षित

GOMMATASĀRA

(JĪVAKĀṆḌA)

of

ACHARYA NEMICHANDRA SIDDHANTA-CHAKRAVARTI

PART II

[With Karṇāṭa-vṛtti, Sanskrit Tikā Jīvatattvapradīpikā,
Hindi Translation & Introduction]

by

Dr. A. N. Upadhye

Siddhantacharya Pt. Kailash Chandra Shastri



BHARATIYA JNANPITH PUBLICATION

VĪRA NIRVĀṆA SĀMVAT 2522 □ V. SĀMVAT 2053 □ A.D. 1997

Second Edition □ Price Rs. 185.00

BHARATIYA JNANPITH

(Founded on Phalgun Krishna 9 : Vira Sam. 2470, Vikrama Sam. 2000 : 18th Feb., 1944)

MOORTIDEVI JAINA GRANTHAMALA

FOUNDED BY

LATE SAHU SHANTI PRASAD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE MOTHER SHRIMATI MOORTIDEVI

AND

PROMOTED BY HIS BENEVOLENT WIFE

LATE SHRIMATI RAMA JAIN

IN THIS GRATHMALA CRITICALLY EDITED JAINA AGAMIC, PHILOSOPHICAL, PAURANIC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS AVAILABLE IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRMSHA, HINDI, KANNADA, TAMIL ETC., ARE BEING PUBLISHED IN THE RESPECTIVE LANGUAGES WITH THEIR TRANSLATIONS IN MODERN LANGUAGES. ALSO BEING PUBLISHED ARE CATALOGUES OF JAINA-BHANDARAS, INSCRIPTIONS, STUDIES ON ART ARCHITECTURE BY COMPETENT SCHOLARS AND ALSO POPULAR JAINA LITERATURE.

General Editors (First Edition)

Siddhantacharya Pt. Kailash Chandra Shastri
Dr. Jyoti Prasad Jain

Published by

Bharatiya Jnanpith

18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110003

Printed at : Vikas Offset, Naveen Shahdara, Delhi-110032

All Rights Reserved

विषय-सूची

१२. ज्ञानमार्गाणा	५०५-६८०	प्राभृतक-प्राभृतकका स्वरूप	५७३
निरुक्तिपूर्वक ज्ञानसामान्यका लक्षण	५०५	प्राभृतकका स्वरूप	५७४
ज्ञानके भेद	५०६	वस्तु श्रुतज्ञानका स्वरूप	५७५
मिथ्याज्ञानकी उत्पत्तिके कारण और स्वरूप	५०७	पूर्व श्रुतज्ञानका स्वरूप	५७५
सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ज्ञानका स्वरूप	५०८	चौदह पूर्वोंका कथन	५७६
मिथ्याज्ञानोंका विशेष लक्षण	५०९	चौदह पूर्वगत वस्तुओंके प्राभृतक अधिकारोंकी संख्या	५७७
मतिज्ञानका कथन	५१२	श्रुतज्ञानके भेदोंका उपसंहार	५७८
मतिज्ञानके भेद	५१३	द्वादशांगके पदोंकी संख्या	५८१
अवग्रह और ईहाका स्वरूप	५१५	अंगबाह्यकी अक्षर संख्या	५८१
अवाय और धारणाका स्वरूप	५१७	श्रुतके समस्त अक्षर और उनकी लानेका क्रम	५८३-५९०
बहु-बहुविधमें अन्तर	५१८	अंगों और पूर्वोंके पदोंकी संख्या	५९२-५९८
अनिसुतका स्वरूप	५१९	दृष्टिवादके पाँच अधिकार	६००
उसका उदाहरण	५२०	उनमें पदोंकी संख्या	६०३
श्रुतज्ञान सामान्यका लक्षण	५२२	चौदह पूर्वोंमें पदोंकी संख्या	६०४
श्रुतज्ञानके मूल भेद	५२४	चौदह अंगबाह्योंका स्वरूप	६१२
श्रुतज्ञानके बीस भेद	५२५	श्रुतज्ञानका माहात्म्य	६१६
पर्याय श्रुतज्ञानका स्वरूप	५२७	अवधिज्ञानका कथन	६१७
पर्याय समासका कथन	५२९	अवधिज्ञानके दो भेद	६१८
छह वृद्धि और उनकी संज्ञा	५३०	गुणप्रत्यय अवधिज्ञानके छह भेद	६१९
षट्स्थान वृद्धियोंका क्रम	५३१	अवधिज्ञानके तीन भेद	६२०
षट्स्थानोंका आदि और अन्तिम स्थान	५५३	उनकी विशेषताएँ	६२१
षट्स्थान वृद्धियोंका जोड़	५५५	जघन्य देशावधिका विषय	६२३
लब्ध्याक्षर ज्ञान दुगुना	५५७	जघन्य देशावधिका क्षेत्र	६२५
अक्षर श्रुतज्ञानका कथन	५६६	जघन्य देशावधिका काल-भाव	६२७
श्रुतमें निबद्ध विषय	५६९	ध्रुवहारका प्रमाण	६२८
अक्षर समासका स्वरूप	५७०	देशावधिके द्रव्यकी अपेक्षा विकल्प	६३२
पद श्रुत ज्ञानका स्वरूप	५७०	देशावधिके जघन्य-उत्कृष्ट क्षेत्र	६३४
पदमें अक्षरोंका प्रमाण	५७०	परमावधिके भेद	६३५
संघात श्रुतज्ञानका स्वरूप	५७१	देशावधिके मध्यम भेद	६३७
प्रतिपत्ति श्रुतज्ञानका स्वरूप	५७२		
अनुयोग श्रुतज्ञान	५७३		

क्षेत्र और कालको लेकर उन्नीस काण्डक	६४२	यथाख्यातका स्वरूप	६८६
ध्रुव और अध्रुव वृद्धिका प्रमाण	६४५	देशविरतका स्वरूप	६८७
देशावधिका उत्कृष्ट द्रव्यादि	६४६	देशविरतके ग्यारह भेद	६८७
परमावधिका उत्कृष्ट द्रव्य	६४८	असंयतका स्वरूप	६८८
सर्वावधिका विषय	६४९	इन्द्रियोंके विषय	६८८
उत्कृष्ट अवधिज्ञानका क्षेत्र	६५२	संयममार्गणामें जीवसंख्या	६८८
परमावधिका उत्कृष्ट क्षेत्र काल	६५३		
नरकगतिमें अवधिका विषयक्षेत्र	६५७	१४. दर्शनमार्गणा	६९१-६९५
अन्य गतियोंमें	६५८	दर्शनका स्वरूप	६९१
भवनत्रिकमें	६५९	चक्षुदर्शनका स्वरूप	६९२
स्वर्गवासी देवोंमें	६६०	अचक्षुदर्शनका स्वरूप	६९२
कल्पवासी देवोंमें अवधिज्ञानका विषय द्रव्य		अवधिदर्शनका स्वरूप	६९२
लानेका क्रम	६६२	केवलदर्शनका स्वरूप	६९२
कल्पवासी देवोंके अवधिज्ञानके विषय-कालका		दर्शनमार्गणामें जीवसंख्या	६९३
प्रमाण	६६३		
मनःपर्यय ज्ञानका स्वरूप	६६४	१५. लेश्यामार्गणा	६९६-७०५
मनःपर्ययके भेद	६६५	लेश्याका स्वरूप	६९६
विपुलमतिके भेद	६६६	लेश्यामार्गणाके अधिकार	६९७
मनःपर्ययकी उत्पत्ति द्रव्यमगसे	६६७	लेश्याके छह भेद	६९८
द्रव्यमनका स्वरूप	६६७	द्रव्य लेश्याका स्वरूप	६९८
मनःपर्यय ज्ञानके स्वामी	६६८	नरकादि गतियोंमें द्रव्य लेश्या	६९९
ऋजुमति और विपुलमतिमें अन्तर	६६८	परिणामाधिकार	७००
ऋजुमतिके जाननेका प्रकार	६६९	लेश्याओंके स्थान	७०१
विपुलमतिके जाननेका प्रकार	६७०	उन स्थानोंमें परिणमन	७०२
ऋजुमतिके विषयभूत जघन्य और उत्कृष्ट द्रव्य	६७१	संक्रमणके दो भेद	७०४
विपुलमतिके विषयभूत जघन्य द्रव्य	६७२	संक्रमणमें छह हानि-वृद्धियाँ	७०५
विपुलमतिवा उत्कृष्ट द्रव्य क्षेत्र	६७३	लेश्याओंका कार्य	७०७
ऋजुमति-विपुलमतिके काल	६७४	कृष्णलेश्याका लक्षण	७०७
केवलज्ञानका स्वरूप	६७६	नीललेश्याके लक्षण	७०८
ज्ञानमार्गणामें जीव संख्या	६७७	कपोत लेश्याके लक्षण	७०९
		तेजोलेश्याके लक्षण	७०९
१३. संयममार्गणा	६८१-६९०	पद्मलेश्याके लक्षण	७१०
संयमका स्वरूप	६८१	शुक्ललेश्याके लक्षण	७१०
संयमभावका कारण	६८१	लेश्याओंके छब्बीस अंश	७११
सामायिक संयमका स्वरूप	६८३	अपकर्ष कालमें आयुबन्ध	७१२
छेदोपस्थापनाका स्वरूप	६८४	लेश्याओंके उत्कृष्ट आदि अंशोंमें मरनेवालोंका	
परिहार विशुद्धि किसके	६८४	जन्म	७१८
सूक्ष्मसाम्परायका स्वरूप	६८६	नारकियों आदिमें लेश्या	७१९

भोगभूमिमें लेश्या	७२०	पुद्गलका लक्षण	८०३
गुणस्थानोंमें लेश्या	७२१	परमाणुका स्वरूप	८०४
देवोंमें लेश्या	७२६	छह द्रव्योंका लक्षण	८०४
अशुभ लेश्यावालोंकी संख्या	७२८	कालद्रव्यका स्वरूप	८०५
शुभ लेश्यावालोंकी संख्या	७३१	अमूर्त द्रव्योंमें परिणमन कैसे	८०७
लेश्यावालोंका क्षेत्र	७३५	पर्यायका काल	८०८
उपवाद क्षेत्रानयन	७४६	समय और प्रदेशका स्वरूप	८०८
शुक्ललेश्याका क्षेत्र	७५८	आवली, उच्छ्वास, स्तोक और लवका स्वरूप	८०९
अशुभ लेश्याओंका स्पर्शन	७६०	नाली, मुहूर्त और भिन्न मुहूर्तका स्वरूप	८१०
तेजोलेश्याका स्पर्शन लानेके लिए गणितकी प्रक्रिया	७६२	व्यवहारकाल मनुष्यलोकमें	८११
सब द्वीप-समुद्रोंका प्रमाण	७६८	अतीतकालका प्रमाण	८११
एक योजनके अंगुल	७६९	वर्तमानकालका प्रमाण	८१२
राजू का प्रमाण	७७१	भाविकालका प्रमाण	८१२
पद्म लेश्यावालोंका स्पर्शन	७७६	छह द्रव्योंका अवस्थानकाल	८१३
शुक्ल लेश्यावालोंका स्पर्शन	७७७	छह द्रव्योंका अवस्थान क्षेत्र	८१४
छह लेश्याओंका काल	७७९	पुद्गल द्रव्य और कालाणुके प्रदेश	८१६
„ „ का अन्तर	७८०	लोकाकाश और अलोकाकाश	८१७
लेश्यारहित जीव	७८५	द्रव्योंकी संख्या	८१७
१६. भव्यमार्गणाधिकार	७८६-८००	प्रदेशके तीन प्रकार	८२१
भव्य और अभव्य जीव	७८६	चल, अचल चलाचल	८२१
जो भव्य भी नहीं और अभव्य भी नहीं	७८७	पुद्गल वर्गणाके तेईस भेद	८२२
अभव्य और भव्य जीवोंकी संख्या	७८७	वर्गणाओंका स्वरूप	८२३
नोकर्म द्रव्य परिवर्तन	७८८	वर्गणाओंमें जघन्य-उत्कृष्ट भेद	८३८
कर्म द्रव्य परिवर्तन	७९०	पुद्गल द्रव्यके छह भेद	८४६
स्वक्षेत्र परिवर्तन	७९३	स्कन्ध, देश और प्रदेश	८४७
परक्षेत्र परिवर्तन	७९३	द्रव्योंका उपकार	८४८
काल परिवर्तन	७९४	जीव और पुद्गलका उपकार	८५०
भव परिवर्तन	७९५	कर्म पौद्गलिक है	८५०
भाव परिवर्तन	७९६	वचन अमूर्तिक नहीं है	८५१
१७. सम्यक्त्व मार्गणाधिकार	८०१-८९१	मनके पृथक् द्रव्य और परमाणुरूप होनेका निराकरण	८५२
सम्यक्त्वका लक्षण	८०१	पाँच ग्राह्य वर्गणाओंका कार्य	८५४
सम्यग्दर्शनके दो भेद	८०१	परमाणुओंके बन्धका कारण	८५४
द्रव्य, अर्थ और तत्त्व नाम क्यों ?	८०२	तथा उसके नियम	८५६
छह द्रव्योंके अधिकार	८०२	पाँच अस्तिकाय	८६०
छह द्रव्योंके नामादि	८०३	नौ पदार्थ	८६१
		गुणस्थानोंमें जीवसंख्या	८६२
		उपशम श्रेणिमें जीवसंख्या	८६४

क्षपक श्रेणिमें जीवसंख्या	८६५	२१. ओघादेश प्ररूपणाधिकार	९०४-९३४
सयोगीजिनोकी संख्या	८६६	नरकादि गतियोंमें गुणस्थान	९०४
सब संयमियोंकी संख्या	८६९	मनोयोग-वचनयोगमें गुणस्थान	९०६
अयोगियोंकी संख्या	८७०	औदारिक-औदारिक मिश्रमें	९०६
चारों गतिके मिथ्यादृष्टि, सासादन, मिश्र और		वैक्रियिक-वैक्रियिक मिश्रमें	९०७
असंयत सम्यग्दृष्टियोंकी संख्याके साधक		आहारक-आहारक मिश्रमें	९०८
परत्यके भागहारोंका कथन	८७०	कार्मणाकाय योगमें	९०८
मनुष्यभूतिमें सासादन आदि पाँच गुणस्थानों-		वेदमार्गणामें	९०९
में संख्या	८८१	कषायमार्गणामें	९१०
क्षायिक सम्यग्दर्शनका स्वरूप	८८३	ज्ञानमार्गणामें	९१०
क्षायिक सम्यग्दर्शनकी विशेषताएँ	८८४	संयममार्गणामें	९११
वेदक सम्यग्दर्शनका स्वरूप	८८५	दर्शनमार्गणामें	९१३
उपशम सम्यक्त्वका स्वरूप	८८५	लेश्यामार्गणामें	९१३
पाँच लब्धियोंका स्वरूप	८८५	सम्यक्त्वमार्गणामें	९१४
उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके योग्य जीव	८८६	द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें	९१५
सासादन सम्यग्दृष्टिका स्वरूप	८८७	संज्ञीमार्गणामें	९१६
सम्यग्मिथ्यादृष्टिका स्वरूप	८८७	आहारमार्गणामें	९१७
मिथ्यादृष्टिका स्वरूप	८८७	गुणस्थानोंमें जीवसमास	९१८
सम्यक्त्व मार्गणामें जीवसंख्या	८८८	गति मार्गणामें जीवसमास	९१८
१८. संज्ञिमार्गणा	८९२-८९४	गुणस्थानोंमें पर्याप्ति और प्राण	९१९
संज्ञी-असंज्ञीका लक्षण	८९२	गुणस्थानोंमें संज्ञा	९१९
संज्ञी-असंज्ञी जीवोंकी संख्या	८९३	गुणस्थानोंमें मार्गणा	९२१
१९. आहारमार्गणा	८९५-८९९	गुणस्थानोंमें योग	९२५
आहारका लक्षण	८९५	गुणस्थानोंमें उपयोग	९३३
अनाहारक और आहारक	८९६	२२. आलापाधिकार	९३५-१०७२
सात समुद्घात	८९६	गुणस्थानोंमें आलाप	९३६
समुद्घातका लक्षण	८९६	सामान्य-पर्याप्ति-अपर्याप्ति तीन आलाप	९३७
आहार-अनाहारका काल	८९७	अपर्याप्तके दो भेद	९३७
अनाहारकों-आहारकोंकी संख्या	८९७	चौदह मार्गणाओंमें आलाप	९३८
२०. उपयोगाधिकार	९००-९०३	गतिमार्गणामें आलाप	९३८
उपयोगका स्वरूप और भेद	९००	इन्द्रिय मार्गणामें आलाप	९४२
साकार और अनाकार उपयोग	९००	कायमार्गणामें आलाप	९४३
और उनका स्वरूप	९०१	योगमार्गणामें आलाप	९४४
उनकी संख्या	९०१	शेष मार्गणाओंमें आलाप	९४४
		जीवसमासोंमें विशेष	९४७

गुणस्थानों और मार्गणाओंमें

बीस प्ररूपणाओंका कथन १५०

सामान्य नारक पर्याप्त असंयतमें

बीस प्ररूपणाओंका कथन १५८

पर्याप्त गुणस्थानोंमें	"	"	सामान्य नारक अपर्याप्त असंयत	"	"
अपर्याप्त गुणस्थानोंमें	"	"	धर्मा सामान्य नारक	"	"
सामान्य मिथ्यादृष्टियोंमें	"	१५१	धर्मा सामान्य नारक पर्याप्त	"	"
पर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें	"	"	धर्मा सामान्य नारक अपर्याप्त	"	"
अपर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें	"	"	धर्मा मिथ्यादृष्टि	"	१५९
सासादन गुणस्थानवालोंके	"	"	धर्मा नारक पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	"	"
पर्याप्तक सासादन गुण.	"	१५२	धर्मा नारक अपर्याप्त	"	"
अपर्याप्त सासादन गुण.	"	"	धर्मा पर्याप्त सासादन	"	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टिके	"	"	धर्मा मिश्र गु.	"	"
असंयत गुणस्थानवर्तीके	"	"	धर्मा असंयत गु.	"	"
असंयत गुणस्थानवर्ती पर्याप्तके	"	१५२	धर्मा पर्याप्त असंयत	"	१६०
असंयत गुणस्थानवर्ती अपर्याप्तके	"	१५३	धर्मा अपर्याप्त असंयत	"	"
देशसंयत गुणस्थानवर्तीके	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य	"	"
प्रमत्त गुणस्थानवर्तीके	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त	"	"
अप्रमत्त गुणस्थानवर्तीके	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक अपर्याप्त	"	१६१
अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तीके	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य	"	"
प्रथम भाग अनिवृत्तिकरणमें	"	१५४	मिथ्यादृष्टि	"	"
द्वितीय भाग	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त	"	"
तृतीय भाग	"	"	मिथ्यादृष्टि	"	"
चतुर्थ भाग	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक अपर्याप्त	"	"
पंचम भाग	"	"	मिथ्यादृष्टि	"	"
सूक्ष्म साम्पराय	"	१५५	द्वितीयादि पृथ्वी नारक सासादन	"	"
उपशान्त कषाय	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक सम्यग्-	"	"
क्षीणकषाय	"	"	मिथ्यादृष्टि	"	१६२
सयोगकेवली	"	"	द्वितीयादि पृथ्वी नारक असंयत	"	"
अयोगकेवली	"	"	सम्यग्दृष्टि	"	"
सिद्ध परमेष्ठी	"	"	सामान्य तिर्यंच	"	"
सामान्य नारक	"	१५६	तिर्यंच सामान्य पर्याप्तक	"	"
सामान्य नारक पर्याप्त	"	"	तिर्यंच सामान्य अपर्याप्तक	"	"
सामान्य नारक अपर्याप्त	"	"	" " मिथ्यादृष्टि	"	१६३
सामान्य नारक मिथ्यादृष्टि	"	"	" " पर्याप्तक मि.	"	"
सामान्य नारक पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	"	१५७	" " अपर्याप्तक	"	"
सामान्य नारक अपर्याप्त मि.	"	"	" " सासादन	"	"
सामान्य नारक सासादन	"	"	" " सासादन पर्याप्त	"	"
सामान्य नारक मिश्र	"	"	" " सासादन अपर्याप्त	"	१६४
सामान्य नारक असंयत	"	"	" " सम्यग्मिथ्यादृष्टि	"	"

तिर्यंच सामान्य असंयत सम्यग्दृष्टिमें		सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्त	
बीस प्ररूपणाओंका कथन	१६४	बीस प्ररूपणा	१७१
” ” असंयत पर्याप्त	” ”	अपर्याप्त	” ”
” ” असंयत अपर्याप्त	” ”	सासादन	१७२
सामान्य तिर्यञ्च देश संयत	१६५	पर्याप्त	” ”
पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च	” ”	अपर्याप्त	” ”
” ” पर्याप्तक	” ”	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	” ”
” ” अपर्याप्तक	” ”	असंयत	” ”
” ” मिथ्यादृष्टि	” ”	असंयत पर्याप्त	” ”
” ” मिथ्यादृष्टि पर्याप्त	१६६	असंयत अपर्याप्त	१७३
” ” मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त	” ”	संयतासंयत	” ”
” ” सासादन	” ”	प्रमत्त	” ”
” ” सासादन पर्याप्त	” ”	प्रमत्त पर्याप्त	” ”
” ” सासादन अपर्याप्त	” ”	प्रमत्त अपर्याप्त	” ”
” ” मिश्र	” ”	अप्रमत्त	१७४
” ” असंयत	१६७	अपूर्वकरण	” ”
” ” असंयत पर्याप्त	” ”	अनिवृत्ति प्रथम०	” ”
” ” असंयत अपर्याप्त	” ”	” द्वितीय०	” ”
” ” देशसंयत	” ”	” तृतीय०	” ”
” ” योनिमती	१६८	” चतुर्थ०	१७५
” ” योनिमती पर्याप्त	” ”	” पंचम	” ”
” ” योनिमती अपर्याप्त	” ”	सूक्ष्मसाम्पराय	” ”
” ” ” मिथ्यादृष्टि	” ”	उपशान्त कषाय	” ”
” ” योनिमती मिथ्यादृष्टि	” ”	क्षीणकषाय	” ”
” ” पर्याप्त	१६९	सयोगकेवली	१७६
” ” योनिमती मिथ्यादृष्टि	” ”	अयोगकेवली	” ”
” ” अपर्याप्त	” ”	मानुषी	” ”
” ” योनिमती सासादन	” ”	मानुषी पर्याप्त	” ”
” ” ” ” पर्याप्त	” ”	मानुषी अपर्याप्त	१७७
” ” ” ” अपर्याप्त	” ”	मानुषी मिथ्यादृष्टि	” ”
” ” ” मिश्र	१७०	मानुषी पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	” ”
” ” ” असंयत	” ”	मानुषी अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि	१७७
” ” ” देशसंयत	” ”	सासादन	” ”
” ” लब्धपर्याप्तक	” ”	सासादन पर्याप्त	१७८
सामान्य मनुष्य	” ”	सासादन अपर्याप्त	” ”
” ” पर्याप्त	” ”	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	” ”
” ” अपर्याप्त	१७१	असंयत सम्यग्दृष्टि	” ”
” ” मिथ्यादृष्टि	” ”	देशसंयत	” ”

मानुषी प्रमत्तसंयत	बीस प्ररूपणा १७८	सौधमेशान देव	बीस प्ररूपणा १८६
अप्रमत्तसंयत	१७९	देव पर्याप्त	१८७
अपूर्वकरण	१८०	देव अपर्याप्त	१८८
अनिवृत्ति प्रथम भा०	१८१	मिथ्यादृष्टि	१८९
अनिवृत्ति द्वितीय	१८२	पर्याप्त	१९०
अनिवृत्ति तृतीय	१८३	अपर्याप्त	१९१
अनिवृत्ति चतुर्थ	१८४	सासादन	१९२
अनिवृत्ति पंचम	१८५	सासादन पर्याप्त	१९३
सूक्ष्मसाम्पराय	१८६	सासादन अपर्याप्त	१९४
उपशान्तकषाय	१८७	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१९५
क्षीणकषाय	१८८	असंयत	१९६
सयोगकेवली	१८९	असंयत पर्याप्त	१९७
अयोगकेवली	१९०	असंयत अपर्याप्त	१९८
मनुष्य लब्धपर्याप्तक	१९१	सानत्कुमार माहेन्द्रदेव	१९९
देवगति	१९२	पर्याप्त	२००
देवसामान्य पर्याप्तक	१९३	अपर्याप्त	२०१
देवसामान्य अपर्याप्तक	१९४	सामान्य एकेन्द्रिय	२०२
देवसामान्य मिथ्यादृष्टि	१९५	पर्याप्त	२०३
मिथ्यादृष्टि पर्याप्त	१९६	अपर्याप्त	२०४
मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त	१९७	बादर एकेन्द्रिय	२०५
सासादन	१९८	बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त	२०६
सासादन पर्याप्त	१९९	अपर्याप्त	२०७
सासादन अपर्याप्त	२००	सूक्ष्म एकेन्द्रिय	२०८
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२०१	पर्याप्त	२०९
असंयत	२०२	अपर्याप्त	२१०
असंयत पर्याप्त	२०३	दोइन्द्रिय	२११
असंयत अपर्याप्त	२०४	दोइन्द्रिय पर्याप्त	२१२
भवनत्रिक देव	२०५	दोइन्द्रिय अपर्याप्त	२१३
भवनत्रिक पर्याप्त देव	२०६	त्रीन्द्रिय	२१४
भवनत्रिक अपर्याप्त देव	२०७	त्रीन्द्रिय पर्याप्त	२१५
मिथ्यादृष्टि	२०८	त्रीन्द्रिय अपर्याप्त	२१६
पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	२०९	चतुरिन्द्रिय	२१७
अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि	२१०	चतुरिन्द्रिय पर्याप्त	२१८
सासादन	२११	चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त	२१९
सासादन पर्याप्त	२१२	पंचेन्द्रिय	२२०
सासादन अपर्याप्त	२१३	पंचेन्द्रिय पर्याप्त	२२१
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२१४	पंचेन्द्रिय अपर्याप्त	२२२
असंयत	२१५	पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि	२२३

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि पर्याप्त	१९५	मनोयोगी मिथ्यादृष्टि	बीस प्ररूपणा १००४
„ „ अपर्याप्त	„	मनोयोगी सासादन	„ „
असंज्ञि पंचेन्द्रिय	„	मनोयोगी मिश्र	१००५
असंज्ञि पंचेन्द्रिय पर्याप्त	„	मनोयोगी असंयत	„ „
„ „ अपर्याप्त	„	मनोयोगी देशसंयत	„ „
सामान्य पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त	१९६	मनोयोगी प्रमत्त	„ „
संज्ञि पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त	„	असत्य मनोयोगी	१००६
असंज्ञि पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त	„	वाग्योगी	„ „
कायानुवाद	„	वाग्योगी मिथ्यादृष्टि	„ „
षट्काय सामान्य पर्याप्त	१९७	काययोगी	„ „
षट्काय सामान्य अपर्याप्त	„	„ पर्याप्तक	१००७
पृथ्वीकाय	„	„ अपर्याप्तक	„ „
पृथ्वीकाय पर्याप्तक	„	„ मिथ्यादृष्टि	„ „
पृथ्वीकाय अपर्याप्तक	१९८	„ „ पर्या०	„ „
बादर पृथ्वीकायिक	„	„ „ अपर्या०	„ „
„ „ पर्याप्त	„	„ सासादन	१००८
„ „ अपर्याप्त	„	„ „ पर्याप्तक	„ „
वनस्पतिकायिक	१९९	„ „ अपर्याप्तक	„ „
„ „ पर्याप्त	„	„ सम्यग्मिथ्यादृष्टि	„ „
„ „ अपर्याप्त	„	„ असंयत सम्यग्दृष्टि	„ „
प्रत्येक वनस्पति	„	„ पर्याप्त असंयत	१००९
„ „ पर्याप्तक	१०००	„ अपर्याप्त असंयत	„ „
„ „ अपर्याप्तक	„	„ देशविरत	„ „
साधारण वनस्पति	„	„ प्रमत्तसंयत	„ „
„ „ पर्याप्तक	„	„ अप्रमत्तसंयत	„ „
„ „ अपर्याप्तक	१००१	„ सयोगकेवल	१०१०
साधारण बादर वनस्पति	„	औदारिक काययोगी	„ „
„ „ पर्याप्तक	„	„ मिथ्यादृष्टि	„ „
„ „ अपर्याप्तक	„	„ सासादन	„ „
असकाय	१००२	„ सम्यग्मिथ्यादृष्टि	„ „
अस पर्याप्तक	„	„ असंयत सम्यग्दृष्टि	१०११
अस अपर्याप्तक	„	„ देशव्रती	„ „
अस मिथ्यादृष्टि	१००३	औदारिक मिश्रकाययोगी	„ „
„ „ पर्याप्त	„	„ „ मिथ्यादृष्टि	„ „
„ „ अपर्याप्त	„	„ „ सासादन	„ „
अकाय	१००४	„ „ असंयत	१०१२
अस लब्ध्यपर्याप्तक	„	„ „ सयोगकेवल	„ „
मनोयोगी	„	वैक्रियिक काययोगी	„ „

वैक्रियिक काययोगी मिथ्यादृष्टि बीस प्ररूपणा १०१२	नपुंसकवेदि-पर्याप्तिक १०२०
" " सासादन " " " १०१३	अपर्याप्तिक " १०२१
" " सम्यग्मिथ्यादृष्टि " " " १०१३	मिथ्यादृष्टि " "
" " असंयत " " " " " १०१४	पर्याप्तिक " "
वैक्रियिक मिश्रकाय० " " " " " १०१४	अपर्याप्तिक " "
" " मिथ्यादृष्टि " " " " " १०१४	सासादन " १०२२
" " सासादन " " " " " १०१४	पर्याप्तिक " "
" " असंयत " " " " " १०१४	अपर्याप्तिक " "
आहारक काययोगी " " " " " १०१४	सम्यग्मिथ्यादृष्टि " "
आहारक मिश्रकाययोगी " " " " " १०१४	असंयतसम्यग्दृष्टि " १०२३
कार्मण काययोगी " " " " " १०१४	पर्याप्तिक " "
" मिथ्यादृष्टि " " " " " १०१५	अपर्याप्तिक " "
" सासादन सम्यग्दृष्टि " " " " " १०१५	देशविरत " "
" असंयत सम्यग्दृष्टि " " " " " १०१५	अपगत वेद " १०२४
" सयोगकेवलि " " " " " १०१५	क्रोधकषायी " "
स्त्रीवेदी " " " " " १०१६	पर्याप्तिक " "
स्त्रीवेदि-पर्याप्तिक " " " " " १०१६	अपर्याप्तिक " "
स्त्रीवेदि-अपर्याप्तिक " " " " " १०१६	मिथ्यादृष्टि " १०२५
स्त्रीवेदि-मिथ्यादृष्टि " " " " " १०१६	पर्याप्तिक " "
" " पर्याप्तिक " " " " " १०१६	अपर्याप्तिक " "
" " अपर्याप्तिक " " " " " १०१६	सासादन " "
" सासादन " " " " " १०१६	पर्याप्तिक " १०२६
" " पर्याप्तिक " " " " " १०१६	अपर्याप्तिक " "
" " अपर्याप्तिक " " " " " १०१६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि " "
" सम्यग्मिथ्यादृष्टि " " " " " १०१६	असंयत सम्यग्दृष्टि " "
" असंयत " " " " " १०१६	पर्याप्तिक " "
स्त्रीवेदि-देशविरत " " " " " १०१६	अपर्याप्तिक " १०२७
स्त्रीवेदि- प्रमत्त " " " " " १०१६	देशविरत " "
" अप्रमत्त " " " " " १०१६	प्रमत्तसंयत " "
" अपूर्वकरण " " " " " १०१६	अप्रमत्तसंयत " "
" अनिवृत्तिकरण " " " " " १०१६	अपूर्वकरण " "
पुंवेदी " " " " " १०१६	प्रथम अनिवृत्ति. " १०२८
" - पर्याप्तिक " " " " " १०१६	द्वितीय अनिवृत्ति " "
" - अपर्याप्तिक " " " " " १०१६	अकषाय " "
" - मिथ्यादृष्टि " " " " " १०१६	कुमति कुश्रुतज्ञानी " "
" " पर्याप्तिक " " " " " १०१६	पर्याप्तिक " १०२९
" " अपर्याप्तिक " " " " " १०१६	अपर्याप्तिक " "
नपुंसक वेदी " " " " " १०१६	मिथ्यादृष्टि " "

कुमति कुश्रुतज्ञानी मिथ्यादृष्टि पर्याप्तक	बोस प्ररूपणा १०२९	अवधिदर्शनी	बीस प्ररूपणा १०३९
पर्याप्तक	१०२९	पर्याप्तक	१०३९
अपर्याप्तक	१०३०	अपर्याप्तक	१०४०
सासादन	१०३१	कृष्णलेश्या	१०४१
पर्याप्तक	१०३२	पर्याप्तक	१०४२
अपर्याप्तक	१०३३	अपर्याप्तक	१०४३
विभंगज्ञानी	१०३४	मिथ्यादृष्टि	१०४४
मिथ्यादृष्टि	१०३५	पर्याप्तक	१०४५
सासादन	१०३६	अपर्याप्तक	१०४६
मतिश्रुतज्ञानी	१०३७	सासादन	१०४७
पर्याप्तक	१०३८	पर्याप्तक	१०४८
अपर्याप्तक	१०३९	अपर्याप्तक	१०४९
असंयत	१०४०	मिश्र	१०५०
मतिश्रुतज्ञानी असंयत अपर्याप्तक	१०४१	असंयत सम्यग्दृष्टि	१०५१
पर्याप्तक	१०४२	पर्याप्तक	१०५२
मनःपर्ययज्ञानी	१०४३	अपर्याप्तक	१०५३
केवलज्ञानी	१०४४	कापोतलेश्या	१०५४
संयमानुवाद	१०४५	पर्याप्तक	१०५५
प्रमत्त संयत	१०४६	अपर्याप्तक	१०५६
अप्रमत्त सं.	१०४७	मिथ्यादृष्टि	१०५७
सामायिक संयम	१०४८	पर्याप्तक	१०५८
परिहारविशुद्धि	१०४९	अपर्याप्तक	१०५९
यथाख्यात संयम	१०५०	सासादन	१०६०
असंयम	१०५१	पर्याप्तक	१०६१
पर्याप्तक	१०५२	अपर्याप्तक	१०६२
अपर्याप्तक	१०५३	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१०६३
चक्षुदर्शनी	१०५४	असंयत सम्यग्दृष्टि	१०६४
पर्याप्तक	१०५५	पर्याप्तक	१०६५
अपर्याप्तक	१०५६	अपर्याप्तक	१०६६
मिथ्यादृष्टि	१०५७	तेजोलेश्या	१०६७
पर्याप्तक	१०५८	पर्याप्तक	१०६८
अपर्याप्तक	१०५९	अपर्याप्तक	१०६९
अचक्षुदर्शनी	१०६०	मिथ्यादृष्टि	१०७०
पर्याप्तक	१०६१	पर्याप्तक	१०७१
अपर्याप्तक	१०६२	अपर्याप्तक	१०७२
मिथ्यादृष्टि	१०६३	सासादन	१०७३
पर्याप्तक	१०६४	पर्याप्तक	१०७४
अपर्याप्तक	१०६५	सासादन अपर्याप्त	१०७५

तेजोलेश्या सम्यग्मिथ्या.	बीस प्ररूपणा १०४७	शुक्ललेश्या अप्रमत्तसंयत	बीस प्ररूपणा १०५५
असंयत	१०४७	अभव्य	१०५५
पर्याप्तिक	१०४८	पर्याप्तिक	१०५६
अपर्याप्तिक	१०४८	सम्यग्दृष्टि अपर्याप्तिक	१०५६
देशविरत	१०४८	पर्याप्तिक	१०५६
प्रमत्त	१०४८	अपर्याप्तिक	१०५६
अप्रमत्त	१०४८	आयिक सम्यग्दृष्टि	१०५७
पद्मलेश्या	१०४९	पर्याप्तिक	१०५७
पर्याप्तिक	१०४९	अपर्याप्तिक	१०५७
अपर्याप्तिक	१०४९	असंयत	१०५७
मिथ्यादृष्टि	१०४९	पर्याप्त असंयत	१०५७
पर्याप्तिक	१०५०	अपर्याप्त असंयत	१०५८
अपर्याप्तिक	१०५०	देशविरत	१०५८
सासादन	१०५०	वेदक सम्यग्दृष्टि	१०५८
पर्याप्त	१०५०	पर्याप्तिक	१०५८
अपर्याप्त	१०५०	अपर्याप्तिक	१०५८
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१०५१	असंयत	१०५९
असंयत सम्य.	१०५१	पर्याप्तिक	१०५९
पर्याप्तिक	१०५१	अपर्याप्तिक	१०५९
अपर्याप्तिक	१०५१	देशविरत	१०५९
देशविरत	१०५१	प्रमत्तसंयत	१०५९
प्रमत्तसंयत	१०५१	अप्रमत्तसंयत	१०६०
अप्रमत्तसंयत	१०५२	उपशम सम्यग्दृष्टि	१०६०
शुक्ललेश्या	१०५२	पर्याप्तिक	१०६०
पर्याप्तिक	१०५२	अपर्याप्तिक	१०६०
अपर्याप्तिक	१०५२	असंयत	१०६०
मिथ्यादृष्टि	१०५३	पर्याप्तिक	१०६१
पर्याप्तिक	१०५३	अपर्याप्तिक	१०६१
अपर्याप्तिक	१०५३	देशविरत	१०६१
सासादन	१०५३	प्रमत्त	१०६१
पर्याप्तिक	१०५३	अप्रमत्त	१०६१
अपर्याप्तिक	१०५४	संज्ञी	१०६२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१०५४	संज्ञी पर्याप्तिक	१०६२
असंयत सम्य.	१०५४	संज्ञी अपर्याप्तिक	१०६२
पर्याप्तिक	१०५४	संज्ञी मिथ्यादृष्टि	१०६२
अपर्याप्तिक	१०५४	पर्याप्तिक	१०६२
देशविरत	१०५५	अपर्याप्तिक	१०६३
प्रमत्त संयत	१०५५	सासादन	१०६३

संज्ञी सासादन पर्याप्तक	बीस प्ररूपणा १०६३	आहारी प्रमत्त	बीस प्ररूपणा १०६८
” ” अपर्याप्तक	” ”	” अप्रमत्त	” ”
” मिश्र	” ”	” अपूर्वकरण	” ”
” असंयत स०	” १०६४	” अनिवृत्ति	” ”
” ” पर्याप्तक	” ”	” सूक्ष्मसाम्पराय	” ”
” ” अपर्याप्तक	” ”	” उपशान्तकषाय	” १०६९
असंज्ञी	” १०६४	” क्षीणकषाय	” ”
” पर्याप्तक	” ”	” सयोगकेवली	” ”
” अपर्याप्तक	” १०६५	अनाहारी	” ”
आहारी	” ”	” मिथ्यादृष्टि	” १०७०
” पर्याप्तक	” ”	” सासादन	” ”
” अपर्याप्तक	” ”	” असंयत	” ”
” मिथ्यादृष्टि	” १०६६	” प्रमत्त	” ”
” ” पर्याप्तक	” ”	” सयोगकेवली	” ”
” ” अपर्याप्तक	” ”	” अयोगकेवली	” १०७१
” सासादन	” ”	” सिद्धपरमेष्ठी	” ”
” ” पर्याप्तक	” ”	” द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	” १०७३
” ” अपर्याप्तक	” १०६७	” सिद्धपरमेष्ठीके प्ररूपणाएँ	” ”
” मिश्र	” ”	” ग्रन्थसमाप्ति	” १०७५
” असंयत	” ”	” गायानुक्रमणी	” १०७७
” ” पर्याप्तक	” ”	” टीकागतपद्यानुक्रमणी	” १०८८
” ” अपर्याप्तक	” ”	” विशिष्ट शब्द सूची	” १०९२
” देशसंयत	” १०६८		



ज्ञानमार्गणाधिकारः ॥१२॥

अनंतरं श्रीनेमिचन्द्रसैद्धान्तचक्रवर्तिगच्छु ज्ञानमार्गणेयं पेळलुपक्रमिति निरुक्तिपूर्वकं ज्ञानसामान्यलक्षणं पेळदपर ।

जाणइ तिकालेविसए दव्वगुणे पज्जए य बहुभेदे ।

पच्चक्खं च परोक्खं अणेण णाणेत्ति णं वेत्ति ॥२९९॥

जानाति त्रिकालेविषयान् द्रव्यगुणान् पर्यायांश्च बहुभेदान् । प्रत्यक्षं परोक्षमनेन ज्ञानमिति इदं ब्रुवन्ति ॥

त्रिकालविषयान् वृत्तवत्स्यद्वर्तमानकालगोचरंगळप्प बहुभेदान् जीवादि ज्ञानादि स्यावरादि नानाप्रकारंगळप्प द्रव्यगुणान् जीवपुद्गलधर्माधर्माऽऽकाशकालंगळे ब द्रव्यंगळुमं ज्ञानदर्शन-सम्यक्त्वसुखवीर्यादिगळुं स्पर्शरसगन्धवर्णादिगळुं गतिस्थित्यवगाहनवर्तनाहेतुत्वादिगळुमे बी गुणंगळुमं पर्यायांश्च स्थावरत्त्वत्रसत्त्वंगळुमणुत्वस्कन्धत्त्वंगळुं अर्थव्यञ्जनभेदंगळुमं परवुगुमे बी पर्यायंगळुमनात्मं प्रत्यक्षं स्पष्टं परोक्षं च अस्पष्टमुमागि अनेन जानातीति अरिगुमिदरिनेदितु ज्ञानमितीदं ज्ञानमेदितिदं करणभूतमप्य स्वार्थव्यवसायात्मकमप्य जीवगुणमं ब्रुवन्ति पेळवरहंदादिगळी ज्ञानमे

वासवैः पूज्यपादाब्जं समवसुतिसंस्कृतम् ।

द्वादशं तीर्थकर्तारं वासुपूज्यं जिनं स्तुवे ॥१२॥

अथ श्रीनेमिचन्द्रसैद्धान्तचक्रवर्ती ज्ञानमार्गणामुपक्रममाणो निरुक्तिपूर्वकज्ञानसामान्यलक्षणमाह—

त्रिकालविषयान् वृत्तवत्स्यद्वर्तमानकालगोचरान् बहुभेदान्—जीवादिज्ञानादिस्थावरादिनानाप्रकारान् द्रव्याणि जीवपुद्गलधर्माधर्माऽकाशकालाख्यानि, गुणान् ज्ञानदर्शनसम्यक्त्वसुखवीर्यादीन् स्पर्शरसगन्धवर्णादीन् गतिस्थित्यवगाहनवर्तनाहेतुत्वादींश्च पर्यायांश्च स्थावरत्त्वसत्त्वादीन् अणुत्वस्कन्धत्वादीन् अर्थव्यञ्जनभेदानव्यांश्च आत्मप्रत्यक्षं स्पष्टं परोक्षं च अस्पष्टं अनेन जानातीति ज्ञानमितीदं करणभूतं स्वार्थव्यवसायात्मकं जीवगुणं

श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ज्ञानमार्गणाको प्रारम्भ करते हुए निरुक्तिपूर्वक ज्ञान-सामान्यका लक्षण कहते हैं—

त्रिकाल अर्थात् अतीत, अनागत और वर्तमान कालवर्ती बहुत भेदोंको अर्थात् जीव आदि, स्थावर आदि नाना प्रकारोंको, जीव-पुद्गल-धर्म-अधर्म-आकाश-काल नामक द्रव्योंको, ज्ञान-दर्शन-सम्यक्त्व-सुख-वीर्य आदि और स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण आदि गुणोंको, तथा गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व, अवगाहनहेतुत्व, वर्तनाहेतुत्व आदि पर्यायोंको, स्थावर-त्रस आदिको, परमाणु-स्कन्ध आदिको अर्थपर्याय और व्यञ्जनपर्यायोंको इसके द्वारा प्रत्यक्ष अर्थात् स्पष्ट और परोक्ष अर्थात् अस्पष्ट रूपसे जानता है, इसलिए अर्हन्त आदि इसे ज्ञान कहते हैं, यह जीवका व्यवसायात्मक गुण है । यह ज्ञान ही प्रत्यक्ष और परोक्षके भेदसे दो

१. म तिकालसहिए । २. त्रिकालसहितान् ।

प्रत्यक्षं परोक्षमुमेदितु द्विप्रकारमप्य प्रमाणमवकुं । तत्स्वरूपसंख्याविषयफललक्षणगणं तद्विप्रति-
पत्तिनिराकरणमिमं स्याद्वादमतप्रमाणस्थापनमुमं सविस्तरमाणि मार्तण्डादितर्कशास्त्रंगळो
नोडिकोळपट्टुबुदे के दोडेहेतुवादरूपमप्यागमदोळ हेतुवादकनधिकारत्वदिदं ।

अनंतरं ज्ञानभेदमं पेळदपं ।

पंचेव होंति णाणा मदिसुदओहोमणं च केवलं ।

५

खयउवसमिया चउरो केवलणाणं हवे खइयं ॥३००॥

पंचैव भवन्ति ज्ञानानि मतिः श्रुतावधिमनःपर्ययश्च केवलं । क्षायोपशमिकानि चत्वारि
केवलज्ञानं भवेत्क्षायिकं ॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलमेदितु सम्यग्ज्ञानंगळुमये अप्पुव नाधिकंगळत्तु । येत्तलानु
सामान्यापेक्षेयिदं संग्रहरूपद्रव्याधिकनयमनाश्रयिसि ज्ञानमोदे येदु पेळपट्टुदंतादोडं विशेषा-
१० पेक्षेयिदं पर्यायाधिकनयमनाश्रयिसि ज्ञानंगळुमे एदितु पेळपट्टुबुदत्थं । अवरोळु मतिश्रुता-
वधिमनःपर्ययमेव नात्कुं ज्ञानंगळुं क्षायोपशमिकंगळुपुवु । मतिज्ञानाद्यावरणवीर्यान्तरायकर्म-
द्रव्यगळनुभागके सर्वघातिस्पर्धकंगळुदयाभावरूपमं क्षयमे बुदनुदयप्राप्तंगळगे सदवस्थारूपमनुप-
शममे बुदु । क्षयश्चासावुपशमश्च क्षयोपशमः । क्षयोपशमे भवानि क्षायोपशमिकानि । अथवा
क्षयोपशमः प्रयोजनमेणां क्षायोपशमिकानि । तत्तदावरणदेशघातिस्पर्धकंगळुदयके विद्यमानत्व-
१५ व्रुवन्ति—कथयन्ति अर्हदादयः । एतज्ज्ञानं प्रत्यक्षं परोक्षं चेति द्विविधं प्रमाणं भवति । तत्स्वरूपसंख्याविषय-
फललक्षणानि तद्विप्रतिपत्तिनिराकरणं स्याद्वादमतप्रमाणस्थापनं च सविस्तरं मार्तण्डादितर्कशास्त्रेषु द्रष्टव्यं,
अत्राहेतुवादरूपे आगमे हेतुवादस्यानधिकारात् ॥२९९॥ अथ ज्ञानभेदानाह—

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलनामानि सम्यग्ज्ञानानि पञ्चैव नोनाधिकानि । यद्यपि सामान्यापेक्षया
संग्रहरूपद्रव्याधिकनयमाश्रित्य ज्ञानमेकमेव कथितं, तथापि विशेषापेक्षया पर्यायाधिकनयमाश्रित्य ज्ञानानि
२० पञ्चैवेत्युक्तानि इत्यर्थः । तेषु मतिश्रुतावधिमनःपर्ययाख्यानि चत्वारि ज्ञानानि क्षायोपशमिकानि भवन्ति
मतिज्ञानाद्यावरणवीर्यान्तरायकर्मद्रव्याणां अनुभागस्य सर्वघातिस्पर्धकानामुदयाभावरूपः क्षयः, तेषामेव अनुदय-
प्राप्तानां सदवस्थारूप उपशमः । क्षयश्चासावुपशमश्च क्षयोपशमः क्षयोपशमे भवानि क्षायोपशमिकानि ।
अथवा क्षयोपशमः प्रयोजनमेणामिति क्षायोपशमिकानि । तत्तदावरणदेशघातिस्पर्धकानामुदयस्य विद्यमानत्वेषि

प्रकारका प्रमाण होता है । प्रमाणका स्वरूप, संख्या, विषय, फल तथा तत्सम्बन्धी विवादों-
२५ का निराकरण करके स्याद्वादसम्मत प्रमाणका स्थापन विस्तारपूर्वक प्रमेयकमलमार्तण्ड आदि
तर्कशास्त्रके ग्रन्थोंमें देखना चाहिए । इस अहेतुवाद रूप आगम ग्रन्थमें हेतुवादका अधिकार
नहीं है ॥२९९॥

आगे ज्ञानके भेद कहते हैं—

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल नामक सम्यग्ज्ञान पाँच ही हैं, न कम हैं,
३० न अधिक हैं । यद्यपि सामान्यकी अपेक्षा संग्रह रूप द्रव्यार्थिक नयके आश्रयसे ज्ञान एक ही
कहा है, तथापि विशेषकी अपेक्षा पर्यायार्थिक नयके आश्रयसे ज्ञान पाँच ही कहे हैं; यह
उक्त कथनका अभिप्राय है । उनमें-से मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय नामक चार ज्ञान क्षायो-
पशमिक होते हैं । मतिज्ञान आदि आवरण और वीर्यान्तराय कर्म द्रव्यके अनुभागके
३५ सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयका अभाव रूप क्षय और जो उदय अवस्थाको प्राप्त न होकर सत्ता-
में स्थित हैं, उनका वही हुआ सदवस्थारूप उपशम । क्षय और उपशमको क्षयोपशम कहते

मादोऽं ज्ञानोत्पत्तिप्रतिधातित्वाऽभावदिदमविवक्षेरियल्पदुबुदु । केवलज्ञानं क्षायिकमेयकुमेक'दोऽं केवलज्ञानावरणवीर्यांतराय निरवशेषक्षयप्रादुर्भूतत्वदिदं, क्षये भवं क्षयः प्रयोजनमस्येति वा क्षायिकं । येतलानुमातमं केवलज्ञानं प्रतिबंधकावस्थेयोऽं शक्तिरूपदिदं मिपुंदतिदोऽं प्रतिबंधक-क्षयदिदमे तद्व्यक्तियवकुमेदितु व्यक्त्यपेक्षेयिदं कार्यत्वसंभवादिदं क्षायिकमेदितु येळल्पदुदु । आवरणक्षयमुंटागुत्तिरलु प्रादुर्भवति ये'वी निरुक्तिगे तद्व्यक्त्यपेक्षत्वमुळदुर्दिदं ।

अनंतरं मिथ्याज्ञानोत्पत्तिकारणस्वरूपस्वामिभेदंगळं पेळदपं :-

अण्णाणतियं होदि हु सण्णाणतियं खु मिच्छ अणउदए ।

णवरि विभंगं णाणं पंचिदियसण्णिपुण्णेव ॥३०१॥

अज्ञानत्रयं भवति खलु सज्ज्ञानत्रयं खलु मिथ्यात्वानंतानुबन्धुदये । विशेषो विभंगं ज्ञानं पंचेन्द्रियसंज्ञिपूर्ण एव ॥

आवुदो'दु मतिश्रुतावधिगळु सम्यग्दर्शनपरिणतजीवसंबंधि सम्यग्ज्ञानत्रयं संज्ञिपंचेन्द्रिय-पट्यामिजीवनविशेषग्रहणरूपाकारसहितोपयोगलक्षणमप्य तत् सम्यग्ज्ञानमे मिथ्यादर्शनानंतानुबन्धि-कषायान्यतमोदयमागुत्तिरलुऽतत्त्वार्थश्रद्धानपरिणतजीवसंबन्धिमिथ्याज्ञानत्रयं खलु स्फुटमवकुं । णवरि विशेषमुंटदु आवुदो'दवधिज्ञानविपर्ययरूपमप्य विभंगमे'व पेसरनुळळ मिथ्याज्ञानमदु

ज्ञानोत्पत्तिप्रतिधातित्वाभावात् अविवक्षा ज्ञातव्या । केवलज्ञानं पुनः क्षायिकमेव भवति केवलज्ञानावरणवीर्या-न्तरायनिरवशेषक्षयेण प्रादुर्भूतत्वात् । क्षये भवं, क्षयः प्रयोजनमस्येति वा क्षायिकम् । यद्यप्यात्मनः केवलज्ञानं प्रतिबन्धकावस्थायां शक्तिरूपेण विद्यमानं, तथापि प्रतिबन्धकक्षयेणैव तद्व्यक्तिः स्यात् इति व्यक्त्यपेक्षया कार्यत्वसंभवात् क्षायिकमित्युक्तं । आवरणक्षये सति प्रादुर्भवति इति निरुक्तेः तद्व्यक्त्यपेक्षत्वात् ॥३००॥ अथ मिथ्याज्ञानोत्पत्तिकारणस्वरूपस्वामिभेदानाह—

यत्सम्यग्दर्शनपरिणतजीवसंबन्धिमतिश्रुतावधिसंज्ञं सम्यग्ज्ञानत्रयं संज्ञिपञ्चेन्द्रियपर्याप्तजीवस्य विशेष-ग्रहणरूपाकारसहितोपयोगलक्षणं तदेव मिथ्यादर्शनानन्तानुबन्धिकषायान्यतमोदये सति अतत्त्वार्थश्रद्धानपरिणत-जीवसम्बन्धिमिथ्याज्ञानत्रयं खलु-स्फुटं भवति । नवरीति विशेषोऽस्ति यदवधिज्ञानविपर्ययरूपं विभङ्गनामकं

हैं । जो क्षयोपशमसे होते हैं अथवा क्षयोपशम जिनका प्रयोजन हैं, वे क्षायोपशमिक हैं । क्षायोपशमिक ज्ञानोंमें यद्यपि उस-उस आवरण सम्बन्धी देशघाती स्पर्धकोंका उदय विद्यमान रहता है, तथापि वे ज्ञानकी उत्पत्तिके प्रतिघाती नहीं हैं, इसलिए यहाँ उनकी विवक्षा नहीं है । किन्तु केवलज्ञान क्षायिक ही होता है, क्योंकि वह केवल ज्ञानावरण तथा वीर्यान्तरायके सम्पूर्ण क्षयसे प्रकट होता है । जो क्षयसे होता है या क्षय जिसका प्रयोजन है, वह क्षायिक है । यद्यपि आत्मामें केवलज्ञान प्रतिबन्धक अवस्थामें शक्तिरूपसे विद्यमान है, तथापि प्रतिबन्धकके क्षयसे ही वह प्रकट होता है, इसलिए व्यक्तिकी अपेक्षा कार्य होनेसे उसे क्षायिक कहा है । आवरणका क्षय होनेपर प्रकट होता है, ऐसी निरुक्ति होनेसे उसकी व्यक्तिकी अपेक्षा है ॥३००॥

अब मिथ्याज्ञानकी उत्पत्तिके कारण, स्वरूप और स्वामीभेदोंको कहते हैं—

जो सम्यग्दृष्टि जीवके मति, श्रुत और अवधि नामक तीन सम्यग्ज्ञान हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवके विशेष ग्रहणरूप आकार सहित उपयोग जिनका लक्षण है, वे ही तीनों मिथ्यादर्शन और (मिथ्यात्व विषयक) अनन्तानुबन्धी कषायमेंसे किसी एक कषायका उदय होनेपर अतत्त्वार्थश्रद्धानरूप परिणत मिथ्यादृष्टि जीवके मिथ्याज्ञान होते हैं । किन्तु इतना विशेष है

तत्संज्ञिपञ्चेन्द्रियपर्याप्तनोलेयकमुन्यनोळगदे बुद्धिरदं इतरमत्यज्ञानमुं श्रुताज्ञानमुं बोधज्ञानद्वयमे-
केंद्रियादिगळोळु पर्याप्तापर्याप्तिकरोळेलरोळु मिथ्यादृष्टिसासादनरोळु संभविमुगुमे दु पेळल्पदु-
दाय्तु । खलु स्फुटमणि ।

अनंतरं सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु ज्ञानस्वरूपमं पेळदपं ।

मिस्सुदए संमिस्सं अण्णाणतिएण णाणतियमेव ।

संजमविसेससहिए मणपज्जवणाणमुद्दिठं ॥३०२॥

मिश्रोदये संमिश्रमज्ञानत्रयेण ज्ञानत्रयमेव । संयमविशेषसहिते मनःपर्ययज्ञानमुद्दिष्टं ॥

- मिश्रोदये सम्यग्मिथ्यात्वकर्मोदयमागुत्तिरलु अज्ञानत्रयदोडने सम्यग्ज्ञानत्रयमे संमिश्रं
संमिश्रमवकुमशक्यविवेचनत्वादिदं । सम्यग्मिथ्यामतिज्ञानमुं सम्यग्मिथ्याश्रुतज्ञानमुं सम्यग्मिथ्या-
१० वधिज्ञानमुं ब व्यपदेशमवकुं । सम्यग्मिथ्यादृष्टियोळु वर्तमानज्ञानत्रयं केवलं सम्यग्ज्ञानमुमल्लु ।
केवलं मिथ्याज्ञानमुमल्लु । मत्ते तण्णुदोडुभयात्मकश्रद्धानमात्मनोळे तंते बुभयात्मकत्वादिदं ज्ञानमुं
संमिश्रमं दितु युक्तमपुद्दाचार्य्यं र्गळिदं पेळल्पदुदु । मनःपर्ययज्ञानं मत्ते संयमविशेषसहितनोळु
प्रमत्तसंयतादिक्षीणकषायपर्यंतमप्य गुणस्थानसप्तकदोळु तपोविशेषोपबृंहितविशुद्धिपरिणाम-
मुळळनोळु संभविमुगुमितरदेशसंयतादियोळु संभवितदेके दोडे देशसंयतादियोळु तद्विधतपो-
१५ विशेषाऽभावमप्युद्दिष्टं ।

मिथ्याज्ञानं तत् संज्ञिपञ्चेन्द्रियपर्याप्त एव भवति, नान्यस्मिन् जीवे इति अनेन इतरत् मत्यज्ञानं श्रुताज्ञानमिति
द्वयं एकेन्द्रियादिषु पर्याप्तापर्याप्तिषु सर्वेषु मिथ्यादृष्टिसासादनेषु संभवति इति कथितं भवति । द्वितीयः खलुशब्दः
अतिशयेन स्पष्टत्वायै स्फुटं ॥३०१॥ अथ सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने ज्ञानस्वरूपं निरूपयति—

- मिश्रोदये—सम्यग्मिथ्यात्वकर्मोदये सति अज्ञानत्रयेण सह सम्यग्ज्ञानत्रयमेव संमिश्रं भवति अशक्य-
२० विवेचनत्वेन सम्यग्मिथ्यामतिज्ञानं सम्यग्मिथ्याश्रुतज्ञानं सम्यग्मिथ्यावधिज्ञानमिति व्यपदेशभागभवति ।
सम्यग्मिथ्यादृष्टौ वर्तमानं ज्ञानत्रयं न केवलं सम्यग्ज्ञानं, न केवलं मिथ्याज्ञानं, किन्तु उभयात्मकश्रद्धानवत्
उभयात्मकत्वेव मिथ्याज्ञानसंमिश्रं सम्यग्ज्ञानं भवति इत्याचार्यैः कथितं जातव्यम् । मनःपर्ययज्ञानं तु संयम-
विशेषसहितत्वेन प्रमत्तसंयतादिक्षीणकषायपर्यन्तेषु सप्तगुणस्थानेषु तपोविशेषोपबृंहितविशुद्धिपरिणामविशिष्टेषु

- किं जो अवधिज्ञानका विपरीत रूप विभंग नामक मिथ्याज्ञान है, वह संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके
२५ ही होता है, अन्य जीवके नहीं होता । इससे यह व्यक्त होता है कि अन्य मतिअज्ञान और
श्रुतअज्ञान ये दोनों एकेन्द्रिय आदि पर्याप्त और अपर्याप्त सब मिथ्यादृष्टि और सासादन
गुणस्थानवर्ती जीवोंके होते हैं ॥३०१॥

अब सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ज्ञानका स्वरूप कहते हैं—

- मिश्र अर्थात् सम्यग्मिथ्यात्व कर्मका उदय होनेपर तीन अज्ञानोंके साथ तीनों
३० सम्यग्ज्ञान मिले हुए होते हैं । अलग-अलग करना शक्य न होनेसे उन्हें सम्यग्मिथ्या मति-
ज्ञान, सम्यग्मिथ्या श्रुतज्ञान और सम्यग्मिथ्या अवधिज्ञान नामसे कहते हैं । सम्यग्मिथ्या-
दृष्टिमें वर्तमान तीनों ज्ञान न केवल सम्यग्ज्ञान होते हैं और न केवल मिथ्याज्ञान होते हैं,
किन्तु जैसे उनके सम्यग्रूप और मिथ्यारूप मिला हुआ ज्ञान होता है, वैसे ही मिथ्याज्ञान
और सम्यग्ज्ञान मिला हुआ होता है, यह आचार्यका कल्पन जानना । किन्तु मनःपर्ययज्ञान
३५ विशेष संयमसे सहित प्रमत्तसंयत नामक लठे गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय नामक बारहवें
गुणस्थानपर्यन्त सात गुणस्थानोंमें तपोविशेषसे वृद्धिको प्राप्त विशुद्धिरूप परिणामोंसे विशिष्ट

अनंतरं मिथ्याज्ञानविशेषलक्षणं गाथात्रयदिदं पेच्छदपं ।

विसजंतकूटपंजरबंधादिसु विणुवएसकरणेण ।

जा खलु पवट्टइ मई मइअण्णाणेत्ति णं वेत्ति ॥३०३॥

विषयत्रकूटपंजरबंधादिषु विनोपदेशकरणेन । या खलु प्रवर्तते मतिर्मत्यज्ञानमितीदं ब्रुवन्ति ॥

विषयत्रकूट पंजरबंधमे बिनु मोदलाद जीवमारणबंधनहेतुगळोलू या मतिः आवुदो दु मति ५
परोपदेशकरणमित्तदे प्रवर्तिसुगुमदे मत्यज्ञानमे दु अर्हदादिगळु पेळवरल्लि परस्परसंयोगजनित-
मारणशक्तिविशिष्टतैलकपूरादिद्रव्यं विषमे बुदवकुं । सिंहव्याघ्रादि क्रूरमृगगळ धरणात्थं मभ्यन्तरी-
कृतच्छागादिजीवमनुळळ काष्ठादिरचितमपुदु तत्पादनिक्षेपमात्रकवाटसंघटीकरणदक्षसूत्रको-
लितमपुदु यन्त्रमे बुदवकुं । मत्स्यकच्छपमूषकादिग्रहणार्थमवष्टब्धकाष्ठादिमयं कूटमे बुदवकुं ।
तित्तिरोलावकहरिणादिधारणात्थं विरचितग्रन्थिविशेषकलितरज्जुमयमप जालं पंजरमे बुदवकुं । १०
गजोष्ठादिधारणात्थं मवष्टब्धमप्यगर्तमुखकीलितग्रन्थिविशिष्टवारिरज्जुरचनाविशेषं बंधमे बुदवकुं ।
आदिशब्ददिदं पक्षिगळ पक्षमं पत्तिसि सिक्किसल्ले दु दीर्घदंडाप्रबोळ तोडव पिप्पलनिर्यासादि
चिक्कणबंधधुं । गृहहरिणादिशृंगलग्नसूत्रग्रन्थिविशेषादिगळगे ग्रहणमवकुमुपदेशपूर्वकत्वबोळु

संभवति नेतरदेशसंयतादिषु गुणस्थानेषु तथाविधतपोविशेषाभावात् ॥३०२॥ अथ मिथ्याज्ञानविशेषलक्षणं गाथात्रयेणाह—

विषयत्रकूटपंजरबंधादिषु जीवमारणवन्धनहेतुषु या मतिः परोपदेशकरणेन विना प्रवर्तते तदिदं
मत्यज्ञानमित्यर्हदादयो ब्रुवन्ति । तत्र परस्परसंयोगजनितमारणशक्तिविशिष्टं तैलकपूरादिद्रव्यं विषं, सिंह-
व्याघ्रादिक्रूरमृगधारणार्थमभ्यन्तरीकृतछागादिजीवं काष्ठादिरचितं तत्पादनिक्षेपमात्रकवाटसंघटीकरणदक्षं
सूत्रकीलितं यन्त्रं, मत्स्यकच्छपमूषकादिग्रहणार्थमवष्टब्धं काष्ठादिमयं कूटं, तित्तिरोलावकहरिणादिधारणार्थ-
विरचितं ग्रन्थिविशेषकलितरज्जुमयं जालं पंजरः, गजोष्ठादिधारणार्थमवष्टब्धो गर्तमुखकीलितग्रन्थिविशिष्टो २०
वारिरज्जुरचनाविशेषो बन्धः । आदिशब्देन पक्षिमक्षलग्नात् दीर्घदंडाप्रक्षितपिप्पलनिर्यासादिचिक्कण-

महामुनियोंके होता है, अन्य देशसंयत आदि गुणस्थानमें नहीं होता; क्योंकि वहाँ उस प्रकार-
का तपविशेष नहीं है ॥३०२॥

अब तीन गाथाओंसे मिथ्याज्ञानोंका विशेष लक्षण कहते हैं—

जीवोंको मारने और बन्धनमें हेतु विष, यन्त्र, कूट, पंजर, बन्ध आदिमें विना २५
परोपदेशके मति प्रवर्तित होती है, वह मतिअज्ञान है; ऐसा अर्हन्त भगवान् आदि कहते हैं ।
परस्पर वस्तुके संयोगसे उत्पन्न हुई मारनेकी शक्तिसे युक्त तैल, रसकपूर आदि द्रव्य विष
हैं । सिंह, व्याघ्र आदि क्रूर जीवोंको पकड़नेके लिए, अन्दरमें बकरा आदि रखकर लकड़ी
आदिसे बनाया गया, जिसमें पैर रखते ही द्वार बन्द हो जाता हो, ऐसा सूत्रसे कीलित
यन्त्र होता है । मच्छ, कलुआ, चूहा आदि पकड़नेके लिए काष्ठ आदिसे रचे गयेको कूट कहते ३०
हैं । तीतर, लावक, हरिण आदि पकड़नेके लिये रस्सीमें अमुक प्रकारकी गाँठ देकर बनाये
गये जालको पंजर कहते हैं । हाथी, ऊँट आदि पकड़नेके लिए गढ़ा खोदकर और उसका
मुख ढाँककर या रस्सी आदिका फन्दा लगाकर जो विशेष रचना की जाती है, उसे बन्ध
कहते हैं । आदि शब्दसे पक्षियोंके पंख चिपकाने के लिए लम्बे बाँस आदिके अग्रभागमें
पीपल आदिका चिकना रस गोंद वगैरह लगाना और हरिण आदिके सींगके अग्रभागमें ३५
फन्दा आदि डालना आदि लिया जाता है । इस प्रकारके कार्योंमें जो विना परोपदेशके स्वयं

श्रुताज्ञानत्व प्रसंगमुल्लुवरिदमुपदेशक्रियेयितल्लदे येत्तलानुमितपूहापोहविकल्पात्मकमप्य हिंसानृत-
स्तेयाब्रह्मपरिग्रहकारणमप्यार्तरौद्रध्यानकारणमप्य शल्यदण्डगारवसंज्ञाप्रशस्तपरिणामकारणमप्य
इन्द्रियमनोजनितविशेषग्रहणरूपमप्य मिथ्याज्ञानमदु मत्यज्ञानमेदितु निश्चयिसत्पडुबुदु ।

आभीयमासुरखं भारहरामायणादि उवएसा ।

तुच्छा असादणीया सुयअण्णाणेत्ति णं वेत्ति ॥३०४॥

५ आभीतमासुरखं भारतरामायणाद्युपदेशः । तुच्छा असाधनीयाः श्रुताज्ञानमितीदं ब्रुवन्ति ॥
तुच्छाः परमार्थशून्यगळु असाधनीयाः सत्पुरुषवर्गनादरणीयंगळुमेकंदोडे परमार्थशून्यत्व-
दिदं आभीताऽसुरक्षभारतरामायणाद्युपदेशंगळुं तत्प्रबंधंगळुमवर श्रवणादिदं पुट्टिदुदाबुदोदु
ज्ञानमदिदु श्रुताज्ञानमेदिताचार्य्यगळु पेळ्वह । आसमंतात् भीताः आभीताः चोरास्तच्छास्त्र-
मप्याऽऽभीतं । असवः प्राणास्तेषां रक्षा येभ्यस्तेऽसुरक्षास्तलवरास्तेषां शास्त्रमासुरखं । कौरवपाण्डवीय-
पंचभर्तृकैकभार्यावृत्तान्तयुद्धव्यतिकरादिचर्चाव्याकुलं भारतमेबुदु । सीताहरणरामरावणीय-
जातिवानरराक्षसयुद्धव्यतिकरादिस्वेच्छाकल्पनारचितं रामायणमेबुदु । आदिशब्दादिदाबुदाबुदु
मिथ्यादर्शनदूषितसर्वथैकान्तवादिस्वेच्छाकल्पितकथाप्रबंधभुवनकोशहिंसायागादिगृहस्थकर्ममुं त्रि-

१० बन्धनग्रहहरिणादिश्रुत्ताग्रलग्नसूत्रग्रन्थिविशेषादिश्च गृह्यते । उपदेशपूर्वकत्वे श्रुताज्ञानत्वप्रसंगात् । उपदेशक्रियां
विना यदीदृशमूहापोहविकल्पात्मकं हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहकारणं आर्तरौद्रध्यानकारणं शल्यदण्डगारवसंज्ञा-
प्रशस्तपरिणामकारणं च इन्द्रियमनोजनितविशेषग्रहणरूपं मिथ्याज्ञानं तन्मत्यज्ञानमिति निश्चेतव्यं ॥३०३॥

तुच्छाः परमार्थशून्याः, असाधनीयाः अत एव सत्पुरुषाणामनादरणीयाः परमार्थशून्यत्वात् आभीता-
सुरक्षभारतरामायणाद्युपदेशः तत्प्रबन्धाः तेषां श्रवणादुत्पन्नं यज्ज्ञानं तदिदं श्रुताज्ञानमिति ब्रुवन्त्याचार्याः ।
आ समन्ताद्भीताः आभीता चोराः तच्छास्त्रमप्याभीतं । असवः प्राणाः तेषां रक्षा येभ्यः ते असुरक्षाः तलवराः
तेषां शास्त्रमासुरखं । कौरवपाण्डवीयपञ्चभर्तृकैकभार्यावृत्तान्तयुद्धव्यतिकरादिचर्चाव्याकुलं भारतं, सीताहरण-
रामरावणीयजातिवानरराक्षसयुद्धव्यतिकरादिस्वेच्छाकल्पनारचितं रामायणं । आदिशब्दाद्यद्यन्मिथ्यादर्शनदूषित-

१५ ही बुद्धि लगती है, वह कुमति ज्ञान है । उपदेशपूर्वक होनेपर उसे कुश्रुत ज्ञानका प्रसंग आता
है । अतः उपदेशके बिना जो इस प्रकारका ऊहापोह विकल्परूप हिंसा, असत्य, चोरी,
विषयसेवन और परिग्रहका कारण, आर्त तथा रौद्रध्यानका कारण, शल्य, दण्ड, गारव,
संज्ञा आदि अप्रशस्त परिणामोंका कारण, जो इन्द्रिय और मनसे उत्पन्न हुआ विशेष
ग्रहणरूप मिथ्या-ज्ञान है, वह कुमतिज्ञान है; यह निश्चय करना चाहिए ॥३०३॥

तुच्छ अर्थात् परमार्थसे शून्य और इसी कारणसे सज्जनोंके द्वारा अनादरणीय
२० आभीत तथा आसुरक्षा शास्त्र, भारत-रामायण आदिके उपदेश, उनकी रचनाएं, उनका सुनना तथा
उनके सुननेसे उत्पन्न हुआ ज्ञान, उसे आचार्य श्रुतअज्ञान कहते हैं । आभीत चोरको कहते
हैं, क्योंकि उसे सब ओरसे भय सताता है । उनके शास्त्रको भी आभीत शास्त्र कहते हैं ।
असु अर्थात् प्राणोंकी रक्षा जिनसे होती है, वे असुरक्ष अर्थात् कोतवाल आदि उनके शास्त्रको
असुरक्ष कहते हैं । कौरव पाण्डवोंके युद्ध, पंचभर्ता द्रौपदीका वृत्तान्त, युद्धकी कथा आदिकी
२५ चर्चासे भरा महाभारत ग्रन्थ है, सीताहरण, रामकी उत्पत्ति, रावणकी जाति, वानरों और
राक्षसोंके युद्धकी यथेच्छ कल्पनाको लेकर रची गयी रामायण है । आदि शब्दसे जो-जो
मिथ्यादर्शनसे दूषित सर्वथा एकान्तवादी यथेच्छ कथाप्रबन्ध, भुवनकोश हिंसामय यज्ञादि

दंडजटाधारणादितपःकर्ममुं षोडशपदार्थं षट्पदार्थं भावनाविधिनियोग भूतचतुष्टय पंचविंशति-
तत्त्वब्रह्माद्वैतचतुरार्यसत्यविज्ञानाद्वैतसर्वशून्यतादिप्रतिपादकागमाभासजनितमप्य श्रुतज्ञाना-
भासमदेतलं श्रुताज्ञानमं बुद्धिं निश्चेत्सत्पदुबुदेकं दोडे दृष्टेष्टविरुद्धार्थविषयत्वदिदं ।

विवरीयमोहिणाणं खओवसमियं च कम्मवीजं च ।

वेभंगोत्ति षउच्चइ समत्तणाणीण समयम्मि ॥३०५॥

५

विपरीतावधिज्ञानं क्षयोपशमिकं च कम्मवीजं च । विभंग इति प्रोच्यते समाप्तज्ञानिनां
समये ॥

मिथ्यादर्शनकलंकितमप्य जीवंगे अवधिज्ञानावरणीयवीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितमप्युदुं द्रव्य-
क्षेत्रकालभावमाश्रितमप्युदुं रूपिद्रव्यविषयमप्युदुं आप्तागमपदार्थगलोलु विपरीतग्राहकमप्युदुं
तिथ्यंमनुष्यगतिगलोलु तीव्रकायक्लेश द्रव्यसंयमरूपगुणप्रत्ययमप्युदुं । च शब्ददिदं देवनारकगति- १०
गलोलु भवप्रत्ययमप्युदुं मिथ्यात्वादिकर्मबंधबीजमप्युदुं चशब्ददिदं येतलानुं नारकादियोलु
पूर्वभवादुराचारसंचितदुःकर्मफलतीव्रदुःखवेदनाभिभवजनितसम्यग्दर्शनज्ञानरूपधर्मबीजमुमप्युदुं ।

एवंविधमवधिज्ञानं विभंगमेदितु समाप्तज्ञानिगळ केवलज्ञानिगळ समये स्याद्वादशास्त्रदोलु
प्रोच्यते पेळत्पट्टुदु । एकं दोडे नारकविभंगज्ञानदिदं वेदनाभिभवतत्कारणदर्शनस्मरणानुसंधान-

सर्वधैकान्तवादिस्वेच्छाकल्पितकथाप्रबन्धभुवनकोशहिंसायागादिगृहस्थकर्मत्रिदण्डजटाधारणादितपःकर्मषोडश - १५
पदार्थषट्पदार्थभावनाविधिनियोगभूतचतुष्टयपञ्च विंशतितत्त्वब्रह्माद्वैतचतुरार्यसत्यविज्ञानाद्वैतसर्वशून्यत्वादिप्रति-
पादकागमाभासजनितं श्रुतज्ञानाभासं तत्तत्सर्वं श्रुताज्ञानमिति निश्चेतव्यं, दृष्टेष्टविरुद्धार्थविषयत्वात् ॥३०४॥

मिथ्यादर्शनकलङ्कितस्य जीवस्य अवधिज्ञानावरणीयवीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितं द्रव्यक्षेत्रकालभाव-
सीमाश्रितं रूपिद्रव्यविषयं आप्तागमपदार्थेषु विपरीतग्राहकं तिथ्यंमनुष्यगत्योः तीव्रकायक्लेशद्रव्यसंयमरूपगुण-
प्रत्ययं, चशब्दादेवनारकगत्योर्भवप्रत्ययं च मिथ्यात्वादिकर्मबंधबीजं, चशब्दात् कदाचिन्नारकादिगतौ २०
पूर्वभवादुराचारसंचितदुःकर्मफलतीव्रदुःखवेदनाभिभवजनितसम्यग्दर्शनज्ञानरूपधर्मबीजं वा अवधिज्ञानं विभङ्ग
इति समाप्तज्ञानिनां केवलज्ञानिनां समये स्याद्वादशास्त्रे प्रोच्यते कथ्यते । नारकाणां विभङ्गज्ञानेन वेदनाभि-

गृहस्थकर्म, त्रिदण्ड तथा जटा धारण आदि तपस्वियोंका कर्म, नैयायिकोंका षोडश पदार्थ
वाद, वैशेषिकोंका षट्पदार्थवाद, मीमांसकोंका भावनाविधिनियोग, चार्वाकका भूत-
चतुष्टयवाद, सांख्योंके पच्चीस तत्त्व, बौद्धोंका चार आर्यसत्य, विज्ञानाद्वैत, सर्वशून्यवाद २५
आदिके प्रतिपादक आगमाभासोंसे होनेवाला जितना श्रुतज्ञानाभास है, वह सब श्रुतअज्ञान
ज्ञानना । क्योंकि प्रत्यक्ष और अनुमानसे विरुद्ध अर्थको विषय करता है ॥३०४॥

मिथ्यादृष्टि जीवके अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्तरायके क्षयोपशमसे उत्पन्न हुआ,
द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकी मर्यादाको लिये हुए रूपी द्रव्यको विषय करनेवाला, किन्तु देव
शास्त्र और पदार्थोंको विपरीत रूपसे ग्रहण करनेवाला अवधिज्ञान केवलज्ञानियोंके द्वारा ३०
प्रतिपादित आगममें विभंग कहा जाता है । यह विभंग ज्ञान तिर्यचगति और मनुष्यगतिमें
तीव्र कायक्लेश रूप द्रव्य संयमसे उत्पन्न होता है, इसलिए गुणप्रत्यय है । 'च' शब्दसे
देवगति और नरकगतिमें भवप्रत्यय है तथा मिथ्यात्व आदि कर्मोंके बन्धका बीज है । 'च'
शब्दसे कदाचित् नरकगति आदिमें पूर्वजन्ममें किये गये दुराचारमें-से संचित खोटे कर्मोंके
फल तीव्र दुःख वेदनाके भोगनेसे होनेवाले सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान रूप धर्मका भी बीज है । ३५

प्रत्ययबलात् सम्यग्दर्शनोत्पत्तिप्रतीतेर्विशिष्टस्यावधिज्ञानस्य भंगो विपर्ययो विभंगमे'दितु निरुक्तिसिद्धार्थविकदरिदमे प्ररूपितत्वविवं ।

अनंतरं गाथानवकदिदं स्वरूपोत्पत्तिकारणभेदविषयंगळनाश्रयिसि मतिज्ञानमं पेळदपं :—

अहिमुहणियमियबोहणमाभिणिबोहियमणिदिइंदियजं ।

५

अवगहईहावाया धारणगा होंति पत्तेयं ॥३०६॥

अभिमुखनियमितबोधनमाभिनिबोधिकमनिद्रियेन्द्रियजं । अवग्रहेहावायधारणकाः भवंति प्रत्येकं ॥

स्थूलवर्तमानयोग्यदेशावस्थितोऽर्थोऽभिमुखः । अस्मिन्द्वयस्यायमेवार्थः इत्यवधारितो नियमितोऽभिमुखश्चासौ नियमितश्च अभिमुखनियमितस्तस्यार्थस्य बोधनं ज्ञानमाभिनिबोधिकमे'दितु १० मतिज्ञानमे'बुदर्थः । अभिनिबोध एवाभिनिबोधिकमे'दितु स्वात्थिकठण् प्रत्ययदिदं सिद्धमवकुं । स्पर्शनादीन्द्रियंगळगे स्थूलादिगळप्य स्पर्शादिस्वार्थंगळो ज्ञानजननशक्तिसंभवमप्युदरिदं सूक्ष्मांतरितदूरार्थंगळप्य परमाणुशंखचक्रवर्तिनरकस्वर्गपटलमे'र्वादिगळोमा इन्द्रियंगळगे ज्ञानजननशक्ति संभविसे'बुदर्थः ।

इवरिदं मतिज्ञानके स्वरूपमं पेळत्पट्टुं, एतंप्पुवा मतिज्ञानमे'बोडे अनिन्द्रियेन्द्रियजं मनमं

१५ भवतत्कारणदर्शनस्मरणानुसंधानप्रत्ययबलात् सम्यग्दर्शनोत्पत्तिप्रतीतेः । विशिष्टस्य अवधिज्ञानस्य भङ्गः— विपर्ययः विभङ्ग इति निरुक्तिसिद्धार्थस्यैव अनेन प्ररूपितत्वात् ॥३०५॥ अथ नवभिर्गाथाभिः स्वरूपोत्पत्तिकारणभेदविषयान् आश्रित्य मतिज्ञानं प्ररूपयति—

स्थूलवर्तमानयोग्यदेशावस्थितोऽर्थः अभिमुखः, अस्मिन्द्वयस्य अयमेवार्थः इत्यवधारितो नियमितः । अभिमुखश्चासौ नियमितश्च अभिमुखनियमितः । तस्यार्थस्य बोधनं ज्ञानं आभिनिबोधिकं मतिज्ञानमित्यर्थः । २० अभिनिबोध एव आभिनिबोधकमिति स्वात्थिकेन ठण्प्रत्ययेन सिद्धं भवति । स्पर्शनादीन्द्रियाणां स्थूलादिष्वेव स्पर्शादिषु स्वार्थेषु ज्ञानजननशक्तिसंभवात् । सूक्ष्मान्तरितदूरार्थेषु परमाणुशङ्खचक्रवर्तिमे'र्वादिषु तेषां ज्ञानजननशक्तिर्न संभवतीत्यर्थः । अनेन मतिज्ञानस्य स्वरूपमुक्तं । कथंभूतं तत् ? अनिन्द्रियेन्द्रियजं—अनिन्द्रियं मनः,

क्योंकि नारकियोंके विभंग ज्ञानके द्वारा वेदनाभिभव और उसके कारणोंके दर्शन, स्मरण आदि रूप ज्ञानके बलसे सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति होती है । 'वि' अर्थात् विशिष्ट अवधिज्ञानका २५ भंग अर्थात् विपर्यय विभंग होता है, इस निरुक्ति सिद्ध अर्थको ही यहाँ कहा है ॥३०५॥

अब नौ गाथाओंसे स्वरूप, उत्पत्ति, कारण, भेद और विषयको लेकर मतिज्ञानका कथन करते हैं—

स्थूल, वर्तमान और योग्यदेशमें स्थित अर्थको अभिमुख कहते हैं । इस इन्द्रियका यही विषय है, इस अवधारणाको नियमित कहते हैं । अभिमुख और नियमितको अभिमुख- ३० नियमित कहते हैं । उस अर्थके बोधन अर्थात् ज्ञानको मतिज्ञान कहते हैं । अभिनिबोध ही अभिनिबोधिक है इस प्रकार स्वार्थमें ठण् प्रत्यय करनेसे इसकी सिद्धि होती है । स्पर्शन आदि इन्द्रियोंकी अपने स्थूल आदि स्पर्श आदि विषयोंमें ही ज्ञानको उत्पन्न करनेकी शक्ति

१. म स्थूलार्थंग । २. म येंतप्प । ३. अ अथ स्वरूपोत्पत्तिकारणभेदविषयान् आश्रित्य गाथानवकेन मतिज्ञानमाह । ४. अ स्थूलार्थरूपस्पर्शादि स्वार्थेषु । ५. अ पुनरकस्वर्गपटलमे । ६. अ पं. प्रारूपितम् ।

स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुश्रोत्रगन्धुर्मेबिवरिदं जातं पुट्टिदुदक्कुमिदरिदमिन्द्रियमनस्सुगच्छे मतिज्ञानोत्पत्ति-
कारणत्वं पेळल्पदुदुत्तु कारणभेदात् कार्यभेदः एदितु मतिज्ञानं षट्प्रकारमेदु पेळल्पदुदु ।

मत्ते प्रत्येकमोदोदु मतिज्ञानक्के अवग्रहमुमोहयवायमुं धारणे एदितु नाल्कु नाल्कु भेदगळ-
प्पुवु-। मदेते दोडे :—मानसोऽवग्रहः मानसीहा मानसोऽवायः मानसी धारणा एदितु नाल्कप्पुवु ४ ।
स्पर्शनजोऽवग्रहः स्पर्शनजेहे स्पर्शनजोऽवायः स्पर्शनजा धारणा एदितु नाल्कप्पुवु ४ । रसनजोऽवग्रहः
रसनजेहा रसनजोऽवायः रसनजा धारणा एदितु नाल्कप्पुवु ४ । घ्राणजोऽवग्रहः घ्राणजेहा
घ्राणजोऽवायः घ्राणजा धारणा एदितु नाल्कप्पुवु ४ । चाक्षुषोऽवग्रहः चाक्षुषोहा चाक्षुषोऽवायः
चाक्षुषी धारणा एदितु नाल्कप्पुवु ४ । श्रोत्रजोऽवग्रहः श्रोत्रजेहा श्रोत्रजोऽवायः श्रोत्रजा धारणा
एदितु नाल्कप्पुवु ४ । इंतु मतिज्ञानं चतुर्विंशतिप्रकारमक्कु २४ । मवग्रहादिगच्छे लक्षणमं मुदे
शास्त्रकारं ताने पेळ्दपं ।

वेंजणअत्थअवग्रह भेदा हु हवंति पत्तपत्तत्थे ।

कमसो ते वावरिदा पढमं णहि चक्खुमणसाणं ॥३०७॥

व्यंजनार्थावग्रहभेदो खलु भवतः प्राप्ताप्राप्तात्थयोः । क्रमशस्ती व्यापृतौ प्रथमो न हि
चक्षुर्मनसोः ॥

इन्द्रियाणि स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि । तेभ्यो जातमुत्पन्नं अनिन्द्रियेन्द्रियजं, अनेन इन्द्रियमनसोर्मति-
ज्ञानोत्पत्तिकारणत्वं दर्शितम् । एवं च कारणभेदात्कार्यभेद इति मतिज्ञानं षट्प्रकारमुक्तम् । पुनः प्रत्येकमेकैकस्य
मतिज्ञानस्य अवग्रहः ईहा अवायः धारणा चेति चत्वारो भेदा भवन्ति । तथा—मानसोऽवग्रहः मानसीहा
मानसोऽवायः मानसी धारणा इति चत्वारः । स्पर्शनजोऽवग्रहः, स्पर्शनजा ईहा स्पर्शनजोऽवायः स्पर्शनजा धारणा
इति चत्वारः । रसनजोऽवग्रहः रसनजा ईहा रसनजोऽवायः रसनजा धारणा इति चत्वारः । घ्राणजोऽवग्रहः
घ्राणजा ईहा घ्राणजोऽवायः घ्राणजा धारणा इति चत्वारः । चाक्षुषोऽवग्रहः चाक्षुषोहा चाक्षुषोऽवायः चाक्षुषी
धारणा ४ । श्रोत्रजोऽवग्रहः श्रोत्रजा ईहा श्रोत्रजोऽवायः श्रोत्रजा धारणा इति चत्वारः । एवं मतिज्ञानं
चतुर्विंशतिविकल्पं भवति अवग्रहादीनां लक्षणं^१ उत्तरत्र ग्रन्थकारः स्वयमेव वक्ष्यति ॥३०६॥

होती है । अर्थात् सूक्ष्म परमाणु आदि, अन्तरित शंख चक्रवर्ती आदि तथा दूरार्थ मेरु आदि-
को जाननेकी शक्ति उनमें नहीं है । इससे मतिज्ञानका स्वरूप कहा । वह मतिज्ञान अनिन्द्रिय
मन और इन्द्रियाँ स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्रसे उत्पन्न होता है । इससे इन्द्रिय और
मनको मतिज्ञानकी उत्पत्तिका कारण दिखलाया है । इस प्रकार कारणके भेदसे कार्यमें भेद
होनेसे मतिज्ञान छह प्रकारका कहा । पुनः प्रत्येक मतिज्ञानके अवग्रह, ईहा, अवाय और
धारणा ये चार भेद होते हैं । यथा—मानस अवग्रह, मानस ईहा, मानस अवाय और
मानसी धारणा । स्पर्शनजन्य अवग्रह, स्पर्शनजन्य ईहा, स्पर्शनजन्य अवाय और स्पर्शनजन्य
धारणा । रसनाजन्य अवग्रह, रसनाजन्य ईहा, रसनाजन्य अवाय और रसनाजन्य
धारणा । घ्राणज अवग्रह, घ्राणज ईहा, घ्राणज अवाय और घ्राणज धारणा । चाक्षुष अवग्रह,
चाक्षुषी ईहा, चाक्षुष अवाय और चाक्षुषी धारणा । श्रोत्रजन्य अवग्रह, श्रोत्रजन्य ईहा,
श्रोत्रजन्य अवाय और श्रोत्रजन्य धारणा । इस प्रकार मतिज्ञानके चौबीस भेद होते हैं ।
अवग्रह आदिका लक्षण आगे ग्रन्थकार स्वयं ही कहेंगे ॥३०६॥

१. ष कारणमुक्तं । २. ष षोढा कथितं । ३. बं त्रिभेदं । ४. ष णमग्रे शास्त्रकारः ।

मतिज्ञानविषयं व्यञ्जनमेदुमर्थमेदु द्विविधमवकुं २ । अल्लि इन्द्रियंगळिदं प्राप्तमप्य विषयं व्यञ्जनमे बुदवकुं । इन्द्रियंगळिदमप्राप्तमप्य विषयमर्थमे बुदवकुमा प्राप्ताप्राप्तार्थंगळोळु क्रमदिदं यथासंख्यं । आ व्यञ्जनार्थावग्रहभेदंगळेरडुं २ व्यापृती प्रवृत्ती भवतः प्रवृत्तंगळपुवु । इन्द्रियंगळिदं प्राप्ताप्राप्तविशेषग्रहणं व्यञ्जनावग्रहमवकुं- । मिन्द्रियंगळिदमप्राप्ताप्राप्तविशेषग्रहणमार्थावग्रहमवकुमेदु-
५ पेळदतेरं । व्यञ्जनव्यक्तं शब्दादिजातमेदितु तत्त्वार्थविवरणंगळोळु पेळत्पट्टुदितु पेळत्पट्टोडितो व्याख्यानदोडने तु संगतमवकुमेदोडे पेळत्पट्टुगु ।

विगतमञ्जनमभिव्यक्तिर्यस्य तद्व्यञ्जनं । व्यज्यते मृक्षयते प्राप्यते इति व्यञ्जनमेदितंजगति व्यक्ति मृक्षणेषु एदितु व्यक्तिमृक्षणात्थंगळगे ग्रहणमप्युदरिदं । शब्दाद्यर्थं श्रोत्रादीन्द्रियादिदं प्राप्तमुमा-
दोडमेन्नवरमभिव्यक्तमलतन्नेवरमे व्यञ्जनमेदु पेळत्पट्टुदेकवारजलकणसिक्तनूतनशरावदंते मत्तम-
१० भिव्यक्तियागुत्तिरलदे अर्थमवकुमेतीगळु पुनः पुनर्जलकणसिच्यमाननूतनशरावमभिव्यक्तसेक-
मवकुमदुकारणादिदं चक्षुर्मनस्सुगळप्राप्तमप्य विषयदोळु प्रथमोद्दिष्टव्यञ्जनावग्रहमिल्ल । चक्षु-
र्मनस्सुगळु स्वविषयमप्यार्थमे प्राप्य पोद्दिष्टे अल्लिज्ञानमे पुद्दिष्टुगुमे ब नैयायिकादिमतं स्याद्वाद-

मतिज्ञानविषयो व्यञ्जनं अर्थश्चेति द्विविधः । तत्र इन्द्रियैः प्राप्तो विषयो व्यञ्जनं^५ तैरप्राप्तः अर्थः । तयोः प्राप्ताप्राप्तयोरर्थयोः क्रमशः यथासंख्यं तौ व्यञ्जनार्थावग्रहभेदौ व्यापृती प्रवृत्ती भवतः । इन्द्रियैः
१५ प्राप्ताप्राप्तविशेषग्रहणं व्यञ्जनावग्रहः । तैरप्राप्ताप्राप्तविशेषग्रहणं अर्थावग्रह इत्यर्थः । व्यञ्जनं-अव्यक्तं शब्दादिजातं इति तत्त्वार्थविवरणेषु प्रोक्तं कथमनेन व्याख्यानेन सह संगतमिति चेदुच्यते । विगतं-अञ्जनं-अभिव्यक्तिर्यस्य तद्व्यञ्जनम् । व्यज्यते मृक्षयते प्राप्यते इति व्यञ्जनं अञ्जु गतिव्यक्तिमृक्षणेत्विति व्यक्तिमृक्षणार्थयोर्ग्रहणात् । शब्दाद्यर्थः श्रोत्रादीन्द्रियेण प्राप्तोऽपि यावन्नाभिव्यक्तस्तावद् व्यञ्जनमित्युच्यते एकवारजलकणसिक्तनूतन-
शराववत् । पुनरभिव्यक्तौ सत्यां स एवार्थो भवति । यथा पुनः पुनर्जलकणसिच्यमाननूतनशरावः अभिव्यक्तसेको
२० भवति । अतः कारणात् चक्षुर्मनसोप्राप्ते विषये प्रथमो व्यञ्जनावग्रहो नास्ति । चक्षुर्मनसौ स्वविषयमर्थं प्राप्यैव तत्र ज्ञानं जनयतः, इति नैयायिकादीनां मतं स्याद्वादतर्कग्रन्थेषु बहुधा निराकृतमित्यत्राहेतुवादे आगमांशे

मतिज्ञानका विषय दो प्रकारका है—व्यञ्जन और अर्थ । उनमें-से इन्द्रियोंके द्वारा प्राप्त विषयको व्यञ्जन और अप्राप्तको अर्थ कहते हैं । उन प्राप्त और अप्राप्त अर्थोंमें क्रमसे व्यञ्जनावग्रह और अर्थावग्रह प्रवृत्त होते हैं । इन्द्रियोंसे प्राप्त अर्थके विशेष ग्रहणको व्यञ्जनाव-
२५ ग्रह कहते हैं, और अप्राप्त अर्थके विशेष ग्रहणको अर्थावग्रह कहते हैं ।

शंका—तत्त्वार्थसूत्रकी टीकामें कहा है, शब्दादिसे होनेवाले अव्यक्त ग्रहणको व्यञ्जन कहते हैं । उसकी संगति इस व्याख्याके साथ कैसे सम्भव है ?

समाधान—‘अञ्जु’ धातुके तीन अर्थ हैं—गति, व्यक्ति और मृक्षण । यहाँ उनमें-से व्यक्ति और मृक्षण अर्थ लेकर व्यञ्जन शब्द बना है । ‘विगतं-अञ्जनं-अभिव्यक्तिर्यस्य’ जिसका
३० अञ्जन अर्थात् अभिव्यक्ति दूर हो गया है, वह व्यञ्जन है । यह अर्थ तत्त्वार्थकी टीकामें लिया है । ‘व्यज्यते मृक्षयते प्राप्यते इति व्यञ्जनम्’ जो प्राप्त हो, वह व्यञ्जन है, यह यहाँ ग्रहण किया है । शब्द आदि रूप अर्थ श्रोत्र आदि इन्द्रियके द्वारा प्राप्त होनेपर भी जबतक व्यक्त नहीं होता, तबतक उसे व्यञ्जन कहते हैं । जैसे एक बार जलबिन्दुसे सिक्त नया सकोरा । पुनः व्यक्त होनेपर उसे ही अर्थ कहते हैं । जैसे बार-बार जलबिन्दुओंसे सींचे जानेपर नया

३५ १. म प्राप्तमुमेबुदर्थम् । २. ब^० नमिन्द्रियैरप्राप्तो विषयोऽर्थः । ३. ब^० तार्थयोः । ४. ब^० णे प्रोक्तमनेन सहेदं व्याख्यानं कथं संगतं ।

तत्कर्कग्रन्थगळोळु बहुप्रकारदिदं निराकरिसल्पट्टुदंतिल्लि अहेतुवादमप्यागमांशदोळुपक्रमिसल्पट्टु-
दिल्लि । व्यंजनमप्य विषयदोळु स्पर्शनरसनघ्राणश्रोत्रगळे ब नाल्किद्रियगळिदमवग्रहमो दे पुट्टिसल्प-
डुवुडु ईहादिगळ पुट्टिसल्पडवेकें दोडे ईहादिज्ञानगळगे देशसर्वाभिव्यक्तियागुत्तिरले उत्पत्तिसंभव-
मप्युदर्दिदं । तत्कालदोळु तद्विषयक्के अव्यक्तरूपव्यंजनत्वाऽभावमप्युदर्दिदं । इंतु व्यंजनावग्रहंगळु
नाल्केयपुवु ।

विसयाणां विसईणं संयोगाणंतरं हवे णियमा ।

अवग्रहणाणं गहिदे विसेसकंखा हवे ईहा ॥३०८॥

विषयाणां विषयिणां संयोगानंतरं भवेन्नियमात् । अवग्रहज्ञानं गृहीते विशेषाकांक्षा
भवेदीहा ॥

विषयाणां अर्थगळ विषयिणामिन्द्रियगळ संयोगः योग्यदेशावस्थानमप्य संबंधमदुंटागुत्तिरलु १०
अनंतरं तदनंतरमे वस्तुसत्तामात्रलक्षणसामान्यनिर्विकल्पग्रहणं प्रकाशरूपमप्य दर्शनं नियमादु-
त्पद्यते नियमदिदं पुट्टुगुं । अनंतरं तदनंतरं दृष्टमप्यर्थं वर्णसंस्थानादिविशेषग्रहणरूपमप्यवग्रहमे ब
प्रसिद्धज्ञानं उत्पद्यते पुट्टुगुं । “अक्षार्थयोगे सत्तालोकोऽर्थाकारविकल्पधीरवग्रहः” ये दितु श्रीमद्-
भट्टाकलंकपादंगळिदं दर्शनपूर्वकं ज्ञानं छद्मस्थानामे दितु श्रीनेमिचंद्रसैद्धांतचक्रवर्त्तिगळिदमुं

नोपक्रम्यते । व्यञ्जनरूपे विषये स्पर्शनरसनघ्राणश्रोत्रैः चतुर्भिरिन्द्रियैः अवग्रह एवोत्पद्यते नेहादयः । १५
ईहादीनां ज्ञानानां देशसर्वाभिव्यक्तौ सत्यामेव उत्पत्तिसंभवात् । तदा तद्विषयस्य अव्यक्तरूपव्यञ्जनत्वाभावात् ।
इति व्यञ्जनावग्रहाश्चत्वार एव ॥३०७॥

विषयाणां—अर्थानां, विषयिणां इन्द्रियाणां च संयोगः—योग्यदेशावस्थानरूपसंबन्धः तस्मिन् जाते
सति अनन्तरं-तदनन्तरमेव वस्तुसत्तामात्रलक्षणसामान्यस्य निर्विकल्पग्रहणमिदमिति प्रकाशरूपं दर्शनं नियमा-
दुत्पद्यते—नियमाज्जायते । अनन्तरं तदनन्तरं दृष्टस्यार्थस्य वर्णसंस्थानादिविशेषग्रहणरूपं अवग्रहाख्यं आद्यं ज्ञानं २०
भवेत् उत्पद्यते । ‘अक्षार्थयोगे सत्तालोकोऽर्थाकारविकल्पधीः अवग्रहः’ इति श्रीमद्भट्टाकलङ्कादौ, ‘दर्शनपूर्वकं

सकोरा भीग जाता है । इस कारणसे अप्राप्त विषयमें चक्षु और मनसे प्रथम व्यंजनावग्रह
नहीं होता । चक्षु और मन अपने विषयभूत अर्थको प्राप्त होकर ही उसको जानते हैं, यह
नैयायिकोंका मत जैन तर्क ग्रन्थोंमें विस्तारसे खण्डित किया गया है । यह तो अहेतुवादरूप
आगम ग्रन्थ हैं, अतः यहाँ वैसा नहीं गिना है । व्यंजनरूप विषयमें स्पर्शन, रसना, घ्राण, २५
श्रोत्र चार इन्द्रियोंसे एक अवग्रह ही उत्पन्न होता है, ईहा आदि नहीं होते । क्योंकि एकदेश
या सर्वदेश अभिव्यक्ति होनेपर ही ईहा आदि ज्ञानोंकी उत्पत्ति सम्भव है । उस समय उनका
विषय अव्यक्तरूप व्यंजन नहीं रहता । इसलिए व्यंजनावग्रह चार ही होते हैं ॥३०७॥

विषय अर्थात् अर्थ और विषयी अर्थात् इन्द्रियोंका, संयोग अर्थात् योग्य देशमें स्थित
होनेरूप सम्बन्धके होते ही नियमसे दर्शन उत्पन्न होता है । वस्तुके सत्तामात्र सामान्यरूपके ३०
निर्विकल्प ग्रहणको दर्शन कहते हैं । दर्शनके पश्चात् ही दृष्ट अर्थके वर्ण-आकार आदि विशेष
रूपको ग्रहण करना अवग्रह नामक आद्यज्ञान उत्पन्न होता है । श्रीमद् भट्टाकलंक देवने
लघीयस्त्रयमें कहा है—इन्द्रिय और अर्थका योग होते ही सत्तामात्रका दर्शन होता है । उसके

- पेळत्पट्टुदरिदमिन्द्रियात्थसंबंधानंतरं दर्शनं पुट्टुगुमेदु पेलदी गाथासूत्रदोळनुक्तमुं पूर्वाचार्य-
वचनानुसारदिदं व्याख्यानिसत्पट्टुदु ग्राह्यमवकुं कैकोळत्पडुवुदेवुदत्थं । गृहीते अवग्रहदिदमिदु
श्वेतमेदितु ज्ञातार्थदोळु विशेषमप्य बलाकारूपकागलु पताकारूपकागलु यथावस्थितवस्तुविनाऽ-
कांक्षे बलाकया भवितव्यमेदितु भवितव्यताप्रत्ययरूपमप्य बलाकेयोळे संजायमानमीहे येब
५ द्वितीयज्ञानमवकुमथवा पताकारूपमप्य विषयमनवलंबिसि उत्पद्यमानमनया पताकया भवितव्यमेदितु
भवितव्यताप्रत्ययरूपं पताकेयोळे संजायमानाकांक्षे ईहेयेब द्वितीयज्ञानमवकुमिन्द्रियांतरविषय-
गळोळं मनोविषयदोळमवग्रहगृहीतदोळु यथावस्थितमप्य विशेषदाकांक्षारूपमीहे येदितु निश्चित-
व्यमवकुमेकेदोडे मतिज्ञानावरणक्षयोपशमतारतम्यभेददिदमवग्रहेहाज्ञानंगळमे भेदसंभवमुळु-
दरिदमी सम्यज्ञानप्रकरणदोळुबलाका वा पताका वा येदितु संशयमवकु बलाकेयोळु पताकया
१० भवितव्यमेदितु विपर्ययवकुमुमी मिथ्याज्ञानंगळनवतारमेदरियत्पडुगुं ।

ज्ञानं छद्मस्थानां' इति श्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिभिरपि प्रोक्तत्वात्, इन्द्रियार्थसंबन्धानन्तरं दर्शनमुत्पद्यते
इत्येतस्मिन् गाथासूत्रे अनुक्तमपि पूर्वाचार्यवचनानुसारेण व्याख्यानं ग्राह्यमित्यर्थः । गृहीते-अवग्रहेण इदं
श्वेतमिति ज्ञाते अर्थविशेषस्य बलाकारूपस्य पताकारूपस्य वा यथावस्थितवस्तुन आकाङ्क्षा बलाकया
भवितव्यमिति भवितव्यताप्रत्ययरूपं बलाकायामेव संजायमानं ईहाख्यं द्वितीयं ज्ञानं भवेत् । अथवा पताकारूपं
१५ विषयमालम्ब्य उत्पद्यमाना अनया पताकया भवितव्यमिति भवितव्यताप्रत्ययरूपा पताकायामेव संजायमाना
आकाङ्क्षा ईहेति द्वितीयं ज्ञानं भवेत् । एवं इन्द्रियान्तरविषयेषु मनोविषये च अवग्रहगृहीते यथावस्थितरूप-
विशेषस्य आकाङ्क्षारूपा ईहेति निश्चेतव्यम् । मतिज्ञानावरणक्षयोपशमस्य तारतम्यभेदेन अवग्रहेहाज्ञानयोर्भेद-
संभवात् । अस्मिन् सम्यज्ञानप्रकरणे बलाका वा पताका इति संशयस्य, बलाकायां पताकया भवितव्यमिति
विपर्ययस्य च मिथ्याज्ञानस्यानवतारत्वात् ॥३०८॥

- २० अनन्तर अर्थके आकारादिको लिये हुए जो सविकल्प ज्ञान होता है, वह अवग्रह है । श्री
नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्तीने भी कहा है कि छद्मस्थोंके दर्शनपूर्वक ज्ञान होता है । यद्यपि
इस गाथासूत्रमें यह नहीं कहा है कि इन्द्रिय और अर्थका सम्बन्ध होनेके अनन्तर दर्शन
उत्पन्न होता है । फिर भी पूर्वाचार्योंके वचनके अनुसार व्याख्यान करना चाहिए । 'गृहीते'
अर्थात् अवग्रहके द्वारा 'यह श्वेत है', ऐसा जाननेपर बलाकारूप या पताकारूप यथावस्थित
२५ अर्थको जाननेकी आकांक्षा यह बलाका—बगुलोंकी पंक्ति होना चाहिए, इस प्रकार बगुलोंकी
पंक्तिमें ही जो भवितव्यतारूप ज्ञान होता है, वह ईहा है । अथवा पताकारूप विषयका
आलम्बन लेकर अर्थात् यदि अवग्रहसे जानी हुई श्वेत वस्तु पताका प्रतीत हो, तो यह
पताका होनी चाहिए, इस प्रकार जो पताकामें ही भवितव्यता प्रत्ययरूप आकांक्षा होती है,
वह दूसरा ईहा ज्ञान है । इस प्रकार अन्य इन्द्रियोंके विषयमें और मनके विषयमें अवग्रहसे
३० गृहीत वस्तुमें यथावस्थित विशेषकी आकांक्षारूप ज्ञान ईहा है, यह निश्चय करना चाहिए ।
मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमकी हीनाधिकताके भेदसे अवग्रह और ईहा ज्ञानमें भेद होता है ।
इस सम्यज्ञानके प्रकरणमें 'यह बलाका है या पताका' इस संशयको तथा बलाकामें यह
पताका होनी चाहिए, इस विपरीत मिथ्याज्ञानको स्थान नहीं है ॥३०८॥

१. व० तार इति ज्ञातव्यम् ।

ईहणकरणेण जदा सुणिण्णओ होदि सो अवाओ दु ।

कालंतरेवि णिणिणदवत्थुसुभरणस्स कारणं तुरियं ॥३०९॥

ईहणकरणेन यदा सुनिर्णयो भवति सोऽवायस्तु । कालांतरेपि निर्णीतवस्तुस्मरणस्य कारणं तुर्यं ॥

ईहणकरणेन विशेषाकांक्षाकरणदिदं बलिकं यदा आगच्छोम्मे ईहितविशेषार्थं सुनिर्णयः उत्पत्तननिपत्तनपक्षविक्षेपादिजिह्वागच्छामिदु बलाकं ये ये दितु बलाकात्वक्कये आवुदो दु सुनिश्चय-मक्कुमागळु सः अदु अवाय इति अवायमे दितु अवयवोत्पात्तिरवायः एव व्यपदेशमक्कुं । तु गब्बं पेरगाकांक्षितविशेषक्कये सुनिर्णयमवायमे दितवधारणार्थमिदरिदं विपर्ययसिदं निर्णयं मिथ्या-ज्ञानतेयिदमवायमेतं दितु ग्राह्यमक्कुमल्लि बलिकं स एवावायः आ अवायमे पुनः पुनः प्रवृत्ति-रूपाभ्यासजनितसंस्कारात्मकमागि कालांतरदोळं निर्णीतवस्तुस्मरणकारणत्वदिदं तुरियं चतुर्थं धारणाख्यं ज्ञानं भवे अक्कुं ।

बहुबहुविहं च खिप्पाणिस्सिदणुत्तं धुवं च इदरं च ।

तत्थेक्कयेक्के जादे छत्तीसं तिसयभेदं तु ॥३१०॥

बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवं चेतरे च । तत्रैकैकस्मिन् जाते षट्त्रिंशत्त्रिंशतभेदं तु ॥

अर्थमुं व्यंजनमुमे ब मतिज्ञानविषयं द्वादशप्रकारमक्कुमे ते दोडे बहुबहुविधः क्षिप्रोऽनिःसृतोऽनुक्तो ध्रुवश्चेति । येदु षट्प्रकारमुं । एक एकविधोऽक्षिप्रोऽनिःसृत उक्तोऽध्रुवश्चेति । येदु षट्प्रकारमितरभेदमुं कूडि द्वादशविधमक्कुमल्लि बह्वादिद्वादशविषयभेदंगळोळु एकैकस्मिन्

ईहणकरणेन-विशेषाकांक्षाक्रियायाः पश्चात् यदा ईहितविशेषार्थस्य सुनिर्णयः उत्पत्तनपत्तनपक्षविक्षेपादिभिश्चिह्नेः इयं बलाकंवेति बलाकात्वस्य यः सुनिश्चयो भवेत् तदा स अवाय इति व्यपदिश्यते । तुशब्दः प्रागाकांक्षितविशेषस्यैव सुनिर्णयोऽवाय इत्यवधारणार्थः । अनेन विपर्ययसिने निर्णयो मिथ्याज्ञानतया अवायो न भवतीति ग्राह्यम् । ततः स एवावायः पुनः पुनः प्रवृत्तिरूपाभ्यासजनितसंस्कारात्मको भूत्वा कालान्तरेऽपि निर्णीतवस्तुस्मरणकारणत्वेन तुर्यं चतुर्थं धारणाख्यं ज्ञानं भवति ॥३०९॥

अर्थो व्यञ्जनं वा मतिज्ञानविषयः बहुः बहुविधः क्षिप्रः अनिसृतः अनुक्तो ध्रुवश्चेति षोढा । तथा इतरोऽपि एकः एकविधः अक्षिप्रः निसृतः उक्तः अध्रुवश्चेति षोढा एवं द्वादशधा भवति । तत्र द्वादशधा

विशेषकी आकांक्षारूप ईहा ज्ञानके पश्चात् जब ईहित विशेष अर्थका सुनिर्णय हो जाता है । जैसे ऊपर-नीचे होने तथा पंखोंके हिलाने आदि चिह्नोंसे यह बलाका ही है, इस प्रकार निश्चयके होनेको अवाय कहते हैं । 'तु' शब्द पहले आकांक्षा किये गये विशेष वस्तुके निर्णयको ही अवाय कहते हैं, यह अवधारणके लिए है । इससे यह ग्रहण करना चाहिए कि वस्तु तो कुछ और है और निर्णय अन्य वस्तुका किया, तो वह अवाय नहीं है । वही अवाय बार-बार प्रवृत्तिरूप अभ्याससे उत्पन्न संस्काररूप होकर कालान्तरमें भी निर्णीत वस्तुके स्मरणमें कारण होता है, तो धारण नामक चतुर्थ ज्ञान होता है ॥३०९॥

अर्थ या व्यंजनरूप मतिज्ञानका विषय बारह प्रकारका होता है—बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिसृत, अनुक्त, ध्रुव ये छह तथा इनके प्रतिपक्षी एक, एकविध, अक्षिप्र, निसृत, उक्त

१. ब स अवयवोत्पादः अवाय । २. ब काङ्क्षालक्षित वि । ३. 'हं पश्चात् स' ।

बो'दो'दु विषयदो'दु पेरगे पेळ्दष्टाविंशतिप्रकारमप्य मतिज्ञानं जाते सति पुट्टुत्तमिरलु मतिज्ञानं तु पुनः मत्ते षट्त्रिंशदुत्तरत्रिंशतभेदमक्कुमे'ते'दो'दु अर्थात्मकबहुविषयमो'दरो'दु अनिन्द्रियेन्द्रिय-भेदविदं मतिज्ञानंगळु षट्प्रकारंगळपु ६ बल्लि प्रत्येकमवग्रहेहावायधारणा एंव मतिज्ञानभेदंगळु नालकुं नालकुमागलुमारवकमिप्पत्तनालकुं भेदंगळपुट्टुव २४वी प्रकारविदं व्यंजनात्मक बहुविषयदो'दु ५ स्पर्शनरसनघ्राण श्रोत्रंगळे'व चतुष्कदिदं चतुरवग्रहज्ञानंगळे पुट्टुवविनु अर्थव्यंजनात्मकबहुविषय-दो'दु कूडि मतिज्ञानभेदंगळष्टाविंशतिप्रकारंगळपु २८ वो प्रकारविदमे अर्थव्यंजनात्मकबहुविधादि-गळो'दु प्रत्येकमष्टाविंशतिअष्टाविंशतिमतिज्ञानभेदंगळगुत्तमिरलु अर्थव्यंजनात्मकबहुविषयादि पन्नरडुं विषयंगळो'दु पुट्टुव मतिज्ञानभेदंगळु षट्त्रिंशदुत्तरत्रिंशतभेदंगळपुवु ३३६ ।

बहुवृत्तिजादिग्रहणे बहुबहुविधमियरमियरग्रहणम्मि ।

१० सगणामादो सिद्धा खिप्पादी सेदरा य तहा ॥३११॥

बहुव्यक्तिजातिग्रहणे बहुबहुविधमितरमितरग्रहणे । स्वकनामतः सिद्धाः क्षिप्रादयः सेतराश्च तथा ॥

एकैकस्मिन् विषये प्रागुक्तष्टाविंशतिप्रकारे मतिज्ञाने जाते उत्पन्ने सति मतिज्ञानं तु पुनः षट्त्रिंशदुत्तरत्रिंशतभेदं भवति ३३६ । तथा बहुविषये अर्थात्मके अनिन्द्रियेन्द्रियभेदेन मतिज्ञानस्य भेदाः षट्, त एव पुनः १५ अवग्रहेहावायधारणाभेदेन प्रत्येकं चत्वारश्चत्वारो भूत्वा चतुर्विंशतिः । तथा व्यञ्जनात्मके तु स्पर्शनरसनघ्राण-श्रोत्रैश्चत्वारोऽवग्रहा एव । एवमर्थव्यञ्जनात्मके बहुविषये मिलित्वा मतिज्ञानभेदा अष्टाविंशतिर्भवन्ति । अनेन प्रकारेण अर्थव्यञ्जनात्मकबहुविधादिष्वपि प्रत्येकमष्टाविंशत्यष्टाविंशतिज्ञानभेदेषु जातेषु द्वादशविषयेषु मतिज्ञानभेदाः षट्त्रिंशदुत्तरत्रिंशतीप्रमिता भवन्ति । यद्येकस्मिन्विषये अष्टाविंशतिर्मतिज्ञानभेदा भवन्ति तदा द्वादशसु विषयेषु कियन्तो मतिज्ञानभेदा भवन्तीति प्र १ । फ २८ । इ १२ त्रैराशिकं कृत्वा इच्छां फलेन संगुण्य प्रमाणेन भक्त्वा लब्धस्य तत्प्रमाणत्वात् ॥३१०॥

और अधुव । इन बारहोंमें-से एक-एक विषयमें पूर्वोक्त अष्टाईस भेदरूप मतिज्ञानके उत्पन्न होनेपर मतिज्ञानके तीन सौ छत्तीस ३३६ भेद होते हैं । जो इस प्रकार जानना—बहुविषयरूप अर्थमें अनिन्द्रिय और इन्द्रियके भेदसे मतिज्ञानके छह भेद होते हैं । वे ही अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणाके भेदसे प्रत्येकके चार-चार होकर चौबीस होते हैं । तथा व्यंजनरूप विषयमें २५ स्पर्शन, रसना, घ्राण और श्रोत्रके द्वारा चार अवग्रह ही होते हैं । इस प्रकार अर्थ और व्यंजनरूप बहुविषयमें मिलकर मतिज्ञानके अष्टाईस भेद होते हैं । इस प्रकार अर्थ व्यंजनरूप बहुविध आदिमें भी प्रत्येकके अष्टाईस भेद होनेपर बारह विषयोंमें मतिज्ञानके भेद तीन सौ छत्तीस होते हैं । यदि एक विषयमें मतिज्ञानके भेद अष्टाईस होते हैं, तो बारह विषयोंमें मतिज्ञानके भेद कितने होते हैं ? इस प्रकार त्रैराशिक प्रमाणराशि एक, फलराशि अष्टाईस, ३० इच्छाराशि बारह स्थापित करके फलराशि अष्टाईस को इच्छाराशि बारहसे गुणा करके प्रमाण-राशि एकसे भाग देनेपर मतिज्ञानके तीन सौ छत्तीस भेद होते हैं ॥३१०॥

१. म पुट्टुत्तं विरलु । २. म रमपुं ।

बहुव्यक्ति विषयग्रहणमतिज्ञानदोषः तद्विषयमुं बहु एतदु पेळल्पट्टुदु, एतोगळु खंडमुंडश-
बलादि बहुगोव्यक्तिगळिवेदितु । बहुजातिग्रहणमतिज्ञानदोषः तद्विषयं बहुविधमेतदु पेळल्पट्टुदु ।
येतोगळु गोमहिषाश्वादिबहुजातिगळेदितु । इतरग्रहणे एकव्यक्तिग्रहणमतिज्ञानदोषः तद्विषयमेकः
ओदु येतोगळु खंडनिदेदितु । एकजातिग्रहणमतिज्ञानदोषः तद्विषयमेकविधमेतोगळु खंडनागलि
मुंडनागलियदु गोवयेदितु ।

क्षिप्रादिगळु क्षिप्रांसिःसृतानुक्तध्रुवंगळु सेतरंगळुमक्षिप्रनिःसृत उक्त अध्रुवंगळु तंतम्म
नामदिदमे सिद्धंगळुदे तेदोडे क्षिप्रमे बुदु शीघ्रदिनिःसृतप्प जलधाराप्रवाहादियक्कुमनिःसृतमे बुदु
गूढं जलमग्नहस्त्यादियक्कुमनुक्तमे बुदु अकथितमभिप्रायगतमक्कु । ध्रुवमे बुदु स्थिरं चिरकालाव-
स्थाधिपर्वतादियक्कुमाक्षिप्रमे बुदु मंदगमनाश्वादिक्कु । निःसृतमे बुदु व्यक्तनिष्क्रान्तं जल-
निर्गतहस्त्यादियक्कुमुक्तमे बुदु इदु घटमेदितु पेळल्पट्टु दृश्यमानमक्कुमध्रुवमे बुदु क्षणस्थायि
विद्युदादियक्कु ।

वत्थुस्स पदेसादो वत्थुग्गहणं तु वत्थुदेसं वा ।

सयलं वा अवलंबिय अणिसिदं अण्वत्थुगई ॥३१२॥

वस्तुनः प्रदेशतो वस्तुग्रहणं तु वस्तुदेशं वा । सकलं वाऽवलंब्यानिःसृतमन्यवस्तुगतिः ॥

बहुव्यक्तीनां ग्रहणे मतिज्ञाने तद्विषयो बहुरित्युच्यते यथा खण्डमुण्डशबलादिबहुगोव्यक्तयः । बहुजातीनां
ग्रहणे मतिज्ञाने तद्विषयो बहुविध इत्युच्यते यथा गोमहिषाश्वादिबहुजातयः इति । इतरग्रहणे एकव्यक्तिग्रहणे
मतिज्ञाने तद्विषय एकः यथा खण्डोऽयमिति । एकजातिग्रहणे मतिज्ञाने तद्विषय एकविधः यथा खण्डो वा मुण्डो
वा गौरिति । क्षिप्रादयः क्षिप्रांसृतानुक्तध्रुवाः स्वतरे च अक्षिप्रानिसृतोक्ताध्रुवाश्च स्वस्वनामत एव सिद्धाः ।
तथाहि क्षिप्रः शीघ्रपतञ्जलधाराप्रवाहादिः । अनिसृतः गूढो जलमग्नहस्त्यादिः । अनुक्तः अकथितः अभि-
प्रायगतः । ध्रुवः स्थिरः चिरकालावस्थायी पर्वतादिः । अधिप्रः मन्दं गच्छन्नश्वादिः । निःसृतः व्यक्तनिष्क्रान्तः
जलनिर्गतहस्त्यादिः । उक्तः अयं घटः इति कथितो दृश्यमानः । अध्रुवः क्षणस्थायी विद्युदादिः । तथा चेति-
शब्दौ समुच्चयार्थौ ॥३११॥

जो मतिज्ञान बहुत व्यक्तियोंको ग्रहण करता है, उसके विषयको बहु कहते हैं; जैसे
खण्डी, मुण्डी, चितकबरी आदि बहुत-सी गायें । जो मतिज्ञान बहुत-सी जातियोंको ग्रहण
करता है, उसके विषयको बहुविध कहते हैं । जैसे गाय, भैंस, घोड़ा आदि बहुत-सी जातियाँ ।
जो मतिज्ञान एक व्यक्तिको ग्रहण करता है, उसके विषयको एक कहते हैं जैसे खण्डी गौ ।
जो मतिज्ञान एक जातिको ग्रहण करता है, उसके विषयको एकविध कहते हैं; जैसे खण्डी
या मुण्डी गौ । शेष क्षिप्र, अनिसृत, अनुक्त, ध्रुव और उनके प्रतिपक्षी अक्षिप्र, निःसृत, उक्त,
अध्रुव तो अपने नामसे ही स्पष्ट हैं । क्षिप्र जैसे शीघ्र गिरती हुई जलधाराका प्रवाह आदि ।
अनिसृत गूढ़को कहते हैं; जैसे जलमें डूबा हाथी आदि । अनुक्त बिना कहे हुए को या अभि-
प्रायमें वर्तमानको कहते हैं । ध्रुव स्थिरको कहते हैं; जैसे चिरकाल तक स्थायी पर्वत आदि ।
अक्षिप्र जैसे धीरे-धीरे जाता हुआ घोड़ा वगैरह । निःसृत व्यक्त या निकले हुएको कहते हैं;
जैसे जलसे निकला हाथी आदि । उक्त 'यह घट है'; इस प्रकारसे जो कहा गया, वह विषय
उक्त है । अध्रुव; जैसे क्षणस्थायी बिजली आदि । तथा और 'चैशब्द समुच्चयवाच्यो है ॥३११॥

१. ब बहुव्यथा । २. ब बहुविध यथा ।

ओदानुमोदु वस्तुविन प्रदेशात् एकदेशदोडनविनाभावियप्पज्ज्यक्तमप्प वस्तुविन ग्रहणमनि-
सृतज्ञानमबुदथवा ओदु वस्तुविन एकदेशमं मेणु सकलं वस्तुवं मेणवलंबिसिकोदु मत्तमन्य-
वस्तुविन गतिः ज्ञानमावुदोदुदुवुमनिःसृतज्ञानमक्कुमदक्कुदाहरणमं तोरिदपं ।

पुक्खरगहणे काले हस्तिग्गस्स य वदणगवयगहणे वा ।

वत्थंतरचंदस्स य धेणुस्स य बोहणं च हवे ॥३१३॥

पुष्करग्रहणे काले हस्तिनश्च वदनगवयग्रहणे वा । वस्त्वंतरचंद्रस्य च धेनोश्च बोधनं च भवेत् ॥

जलदिदं पोरगे दृश्यमानमप्य पुष्करद जलमग्नहस्तिकराग्रद ग्रहणकालदोळु, दर्शनकालदोळु
तदविनाभावि जलमग्नहस्तिग्रहणं जलदोळु हस्तिमग्ननिर्दुपुदेदितु प्रतीति वा इव एतंत इदरिदमी
१० साध्याविनाभावनियमनिश्चयमनुळ्ठा साधनदत्तणि “साधनात्साध्यविज्ञानमनुमानमेदितु अनुमान-
प्रमाणं संगृहीतमक्कुं । अथवा ओदानुमोद्वं युवतिय वदनग्रहणकाले वदनदर्शनकालदोळे वस्त्वंतर-
चंद्रग्रहणं मुखसादृश्यदिदं चंद्रस्मरणं चंद्रसदृशं मुखमेदितु प्रत्यभिज्ञानं मेणरण्यदोळु गवयग्रहणकाले
गवयदर्शनकालदोळे धेनुविन बोधनं धेनुविन स्मरणं गोसदृशं गवयमेदितु प्रत्यभिज्ञानं मेणु भवेत्
अक्कुं । अनंतरगाथोक्तमप्यनिःसृतज्ञानविक्रान्तमुदाहरणंगळु । वा शब्दं पक्षांतरसूचकं मेणु एतोमळु

१५ कस्याचिद्वस्तुनः, प्रदेशाद्-एकदेशाद् व्यक्तात् तदविनाभाविनोऽव्यक्तस्य वस्तुनो ग्रहणं अनिसृतज्ञानम् ।
अथवा एकस्य वस्तुनः एकदेशं वा सकलं वस्तुं वा अवलम्ब्य गृहीत्वा पुनरन्यस्य वस्तुनो गतिः-ज्ञानं यत्,
तदप्यनिसृतज्ञानं भवति ॥३१२॥ तदुदाहरति-

पुष्करस्य जलाद्वहिर्दृश्यमानस्य जलमग्नहस्तिकराग्रस्य ग्रहणकाले दर्शनकाले एव तदविनाभावजलमग्न-
हस्तिग्रहणं जले हस्ती मग्नोऽस्तीति प्रतीतिः । वा इव यथा अनेन अस्मात् साध्याविनाभावनियमनिश्चयात्
२० साधनात् साध्यस्य ज्ञानमनुमानमिति अनुमानप्रमाणं संगृहीतं भवति । अथवा कस्याचिन् युवतेर्वदनग्रहणकाले
वस्त्वन्तरस्य चन्द्रस्य ग्रहणम् । मुखसादृश्याच्चन्द्रस्य स्मरणं चन्द्रसदृशं मुखमिति प्रत्यभिज्ञानं वा । अरण्ये
गवयग्रहणकाले गवयदर्शनकाल एव धेनोर्बोधनं स्मरणं गोसदृशो गवय इति प्रत्यभिज्ञानं वा भवेत् । वा इव

किसी वस्तुके प्रकट हुए एकदेशको देखकर उसके अविनाभावी अप्रकट अंशको ग्रहण
करना अनिसृत ज्ञान है । अथवा एक वस्तुके एकदेश या समस्त वस्तुको ग्रहण करके अन्य
२५ वस्तुके ज्ञानना भी अनिसृत ज्ञान है ॥३१२॥

उसका उदाहरण देते हैं—

जलमें डूबे हुए हाथीकी जलसे बाहर दिखाई देनेवाली सूँड़को देखते ही उसके
अविनाभावी जलमग्न हस्तिका ग्रहण अनिसृत ज्ञान है । इससे, जिसका साध्यके साथ
अविनाभाव नियम निश्चित है, ऐसे साधनसे साध्यके ज्ञानको अनुमान कहते हैं, इस अनुमान
३० प्रमाणका संग्रह होता है । अथवा किसी युवतीके मुखको ग्रहण करते समय अन्य वस्तु
चन्द्रमाका ग्रहण अथवा मुखकी समानतासे चन्द्रमाका स्मरण कि चन्द्रके समान मुख है
अथवा गवयको देखते ही गायका स्मरण या गौके समान गवय है, यह प्रत्यभिज्ञान इससे
गृहीत होता है । ‘वा’ शब्द उदाहरणके प्रदर्शनमें प्रयुक्त हुआ है । जो बतलाता है कि अनन्तर

१. मं भावियप्प प्रतीत्यनिश्चयदत्तणिद साधनां ।

‘बाणसिगतावासदोळग्नियुंटागुत्तिरले पुट्टिद धूमं काणल्पट्टुदु अनतिनह्लाददोळु धूममनुपपन्नं निश्चितमंते सर्वदेशसर्वकालसंबन्धितेयिदमग्नि धूमंगळ अन्यथानुपपत्तिरूपाऽविनाभावसंबन्धके ज्ञानं तर्कमेव बुदकुं अदुवुं मतिज्ञानमक्कुमितनुमानस्मृतिप्रत्यभिज्ञानतर्काख्यंगळु नाल्कुं मतिज्ञानंगळुमनिःसृतात्थ्यविषयंगळु केवलपरोक्षंगळेकेदोडेकदेशदिदमुं वैशद्याभावमप्युदरिदं । शेषस्पर्शनादीन्द्रियानिन्द्रियव्यापारप्रभवंगळप्य बह्वाद्यर्थविषयमतिज्ञानंगळु सांव्यवहारिकप्रत्यक्षंगळप्युवेके-
दोडेकदेशदिदं वैशद्यसंभवादिदं प्रत्यक्षं विशदज्ञानमेदितु पूर्वाचार्यरुगळिदं प्रत्यक्षके लक्षणं पेळल्पट्टुदप्युदरिदं । धितवेल्लमुं मतिज्ञानंगळु प्रमाणंगळप्युवेकेदोडे सम्यग्ज्ञानत्वदिदं सम्यग्ज्ञानं प्रमाणमेदितु प्रवचनदोळु पेळल्पट्टुदरिदं ।

एकचउक्कं चउबीसट्टाबीसं च तिप्पडिं किच्चा ।

इगिळव्यारसगुणिदे मदिणाणे होंति ठाणाणि ॥३१४॥

एकं चत्वारि चतुर्विंशतिमष्टाविंशतिं च त्रिः प्रति कृत्वा । एक षड्द्वादशगुणिते मतिज्ञाने भवन्ति स्थानानि ॥

यथा अत्र इवार्थस्रोतको वाशब्दः उदाहरणप्रदर्शने प्रयुक्तः अनन्तरगाथोक्तानिसृतार्थज्ञानस्य एतावन्त्युदाहरणानि । पक्षान्तरसूचको वा । यथा महानसे अग्नी सत्येव धूम उपपन्नो दृष्टः । हृदे अग्न्यभावे धूमोऽनुपपन्नो निश्चितः । तथैव सर्वदेशकालसंबन्धितया अग्निधूमयोरन्यथानुपपत्तिरूपस्य अविनाभावसंबन्धस्य ज्ञानं तर्कः सोऽपि मतिज्ञानं भवति । एवमनुमानस्मृतिप्रत्यभिज्ञानतर्काख्यानि चत्वारि मतिज्ञानानि अनिसृतार्थविषयाणि केवलं परोक्षाणि एकदेशतोऽपि वैशद्याभावात् । शेषाणि स्पर्शनादीन्द्रियानिन्द्रियव्यापारप्रभवानि बह्वाद्यर्थविषयाणि मतिज्ञानानि सांव्यवहारिकप्रत्यक्षाणि एकदेशतो वैशद्यसंभवात् । प्रत्यक्षं विशदं ज्ञानमिति पूर्वाचार्यैः प्रत्यक्षलक्षणस्योक्तत्वात् । तानि सर्वाणि अपि मतिज्ञानानि प्रमाणानि सम्यग्ज्ञानत्वात् । सम्यग्ज्ञानं प्रमाणं, इति प्रवचने प्रतिपादनात् ॥३१३॥

गाथामें कहे अनिसृत अर्थके ज्ञानके ये उदाहरण हैं । अथवा वा शब्द पक्षान्तरका सूचक है । जैसे रसोई घरमें अग्निके होनेपर ही धूम देखा जाता है । तालाबमें अग्निका अभाव होनेसे धूम भी नहीं होता । तथा सर्वदेश और सर्वकाल सम्बन्धी रूपसे आग और धूमके अन्यथानुपपत्तिरूप अविनाभाव सम्बन्ध—कि जहाँ-जहाँ धूम होता है, वहाँ-वहाँ अग्नि होती है । जहाँ आग नहीं होती, वहाँ धूम भी नहीं होता—का ज्ञान तर्क है । यह भी मतिज्ञान है । इस प्रकार अनुमान, स्मृति, प्रत्यभिज्ञान और तर्क नामक चारों ज्ञान मतिज्ञान हैं । ये चारों अनिसृत अर्थको विषय करते हैं; इससे केवल परोक्ष हैं, एकदेशसे भी इनमें स्पष्टताका अभाव है । शेष स्पर्शन आदि इन्द्रियाँ और मनके व्यापारसे उत्पन्न होनेवाले तथा बहु आदि अर्थको विषय करनेवाले मतिज्ञान सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष हैं, क्योंकि एकदेशसे स्पष्ट होते हैं । स्पष्ट ज्ञानको प्रत्यक्ष कहते हैं । इस प्रकार पूर्वाचार्योंने प्रत्यक्षका लक्षण कहा है । ये सब मतिज्ञान प्रमाण हैं; क्योंकि सम्यग्ज्ञान है । ‘सम्यग्ज्ञान प्रमाण है’; ऐसा आगममें कहा है ॥३१३॥

१. म प्रमाण । २. ब^० स्यकयनात् ।

मतिज्ञानं सामान्यापेक्षेयिदमोऽङ्कु १। अवग्रहेहावायधारणापेक्षेयिदं नात्कु ४। इन्द्रिया-
निन्द्रियजनितात्थावग्रहेहावायधारणापेक्षेयिदं चतुर्विंशति २४। अर्थव्यञ्जनोभयावग्रहापेक्षेयिदं अष्टा-
विंशतिगळुमपु २८। वितु नात्कु स्थानंगळं त्रिःप्रतिकंगळं माडि यथाक्रमं प्रथमस्थानचतुष्टयं
विषयसामान्यविदेमोऽदरिदं गुणिसुबुद्धि। द्वितीयस्थानचतुष्टयं बह्वादिद्विषयवर्कदिदं गुणियिसुबुद्धि।
५ तृतीयस्थानचतुष्टयं बह्वादिद्वादशविषयगळिदं गुणिसुबुद्धितु गुणिसुत्तमिरलु मतिज्ञानदोऽङ्कु विषय-
सामान्यार्थविषयसर्वविषयापेक्षंगळपु स्थानंगळपुबु

२८।१	२८।६	२८।१२
२४।१	२४।६	२४।१२
४।१	४।६	४।१२
१।१	१।६	१।१२

अनंतरं श्रुतज्ञानप्ररूपणं प्रारंभिसुवातं मोदलोळन्नेवरं तत्सामान्यलक्षणं पेळदपं :—

अथादो अत्यंतरमुवलंभं तं भणति सुदणाणं।

आभिणिवोहियपुव्वं णियमेणिह सद्दजं पमुहं ॥३१५॥

१० अर्थादर्थान्तरमुपलभमानं तद्भणति श्रुतज्ञानमाभिनिबोधिकपूर्वं नियमेनेह शब्दजं प्रमुखं ॥

मतिज्ञानं सामान्येन एकं १। अवग्रहेहावायधारणापेक्षया चत्वारि ४। इन्द्रियानिन्द्रियजनितात्था-
वग्रहेहावायधारणापेक्षया चतुर्विंशतिः २४। अर्थव्यञ्जनोभयावग्रहापेक्षया अष्टाविंशतिः २८। एतानि
चत्वारि स्थानानि त्रिःप्रतिकानि—

२८।१	२८।६	२८।१२
२४।१	२४।६	२४।१२
४।१	४।६	४।१२
१।१	१।६	१।१२

१५ कृत्वा यथाक्रमं प्रथमं स्थानचतुष्टयं विषयसामान्येनैकेन गुणयेत्। द्वितीयं स्थानचतुष्टयं बह्वादिद्विषयवर्ककेन
गुणयेत्। तृतीयं स्थानचतुष्टयं बह्वादिभिर्द्वादशविषयैर्गुणयेत्। एवं गुणिते सति मतिज्ञाने सामान्यविषयार्थ-
विषयसर्वविषयापेक्षया स्थानानि भवन्ति ॥३१४॥ अथ श्रुतज्ञानप्ररूपणां प्रारंभमाणं प्रथमस्तावत्तत्सामान्य-
लक्षणमाह—

मतिज्ञान सामान्यसे एक है। अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणाकी अपेक्षा चार है।
इन्द्रिय और मनसे उत्पन्न अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणाकी अपेक्षा चौबीस हैं। अर्थाव-
२० ग्रह और व्यंजनावग्रहकी अपेक्षा अष्टाईस हैं। इन चारों स्थानोंको तीन जगह स्थापित
करके यथाक्रम प्रथम चार स्थानोंको सामान्य विषय एकसे गुणा करना चाहिए। दूसरे
चार स्थानोंको बहुआदि छह विषयोंसे गुणा करना चाहिए। तीसरे चार स्थानोंको बहु
आदि बारह विषयोंसे गुणा करना चाहिए। इस तरह गुणा करनेपर मतिज्ञानके सामान्य
विषय, बहु आदि छह अर्धविषय और सर्व विषयकी अपेक्षा स्थान होते हैं। यथा—॥३१४॥

२८ × १	२८ × ६	२८ × १२
२४ × १	२४ × ६	२४ × १२
४ × १	४ × ६	४ × १२
१ × १	१ × ६	१ × १२

२५ अब श्रुतज्ञान प्ररूपणाको प्रारम्भ करते हुए पहले श्रुतज्ञानका सामान्य लक्षण
कहते हैं—

१. म^०दिदं गुं। २. ब^०णं प्ररूपयति।

मतिज्ञानदिदं निश्चितमादर्थ्यदिदं तदर्थ्यमनवलंबिसि अर्थांतरं तत्संबन्धमन्यार्थ्यमं उपलभ-
मानं अवबुध्यमानमं श्रुतज्ञानावरणवीर्यान्तरायक्षयोपशमोत्पन्नमं जीवज्ञानपर्यायमं श्रुतज्ञानमैदितु
मुनीश्वरखण्ड भणन्ति पेळवरु । अदेतपुदेदोडे आभिनिबोधिकपूर्वं नियमेन आभिनिबोधिकं
मतिज्ञानं पूर्वं कारणं यस्य तदाभिनिबोधिकपूर्वं । मतिज्ञानावरणक्षयोपशमदिदं मतिज्ञानमे
मोदलोळ पुट्टुमुं मत्ते तद्गृहीतात्थमनवलंबिसि तद्वलादानदिदमर्थांतरविषयमप्य श्रुतज्ञानं ५
पुट्टुमुं मत्तोदु प्रकारदिदं पुट्टुदेदितु नियमशब्ददिदं मतिज्ञानप्रवृत्त्यभावदोळ श्रुतज्ञानाभावमैदितव-
धारणमरिपत्पट्टुदु । इह ई श्रुतज्ञानप्रकरणदोळ अक्षरानक्षरात्मकगळप्य शब्दजमुं लिंगजमुं बेरडुं
श्रुतज्ञानभेदंगळोळ शब्दजं वर्णपदवाक्यात्मकशब्दजनितमप्य श्रुतज्ञानं प्रमुखं प्रधानमेकंदोडे दत्त-
ग्रहणशास्त्राध्ययनादिसकलव्यवहारंगळमे तन्मूलत्वादिदं । अनक्षरात्मकमप्य लिंगजश्रुतज्ञानमे-
केन्द्रियादिपंचेन्द्रियपर्यंतमाद जीवंगळोळ विद्यमानमप्युदादोडं व्यवहारानुपयोगदिदमप्रधानमक्कुं । १०
श्रूयते श्रोत्रेन्द्रियेण गृह्यते इति श्रुतः शब्दस्तस्मादुत्पन्नमर्थज्ञानं श्रुतज्ञानमैदितु व्युत्पत्तिगमुमक्षरा-
त्मकप्राधान्याश्रयमक्कुमप्युदरिदमथवा श्रुतशब्दं लुट्टिशब्दमक्कुं । मतिज्ञानपूर्वकमर्थांतरमप्य

मतिज्ञानेन निश्चितमर्थमवलम्ब्य अर्थान्तरं—तत्संबन्धमन्यार्थ्यमुपलभ्यमानं—अवबुध्यमानं श्रुतज्ञानाव-
रणवीर्यान्तरायक्षयोपशमोत्पन्नं जीवस्य ज्ञानपर्यायं श्रुतज्ञानमिति मुनीश्वरा भणन्ति । तत्कथं भवेत् ? आभि-
निबोधिकपूर्वं—नियमेन आभिनिबोधिकं मतिज्ञानं पूर्वं कारणं यस्य तत् तथोक्तं आभिनिबोधिकपूर्वं, १५
मतिज्ञानावरणक्षयोपशमेन मतिज्ञानमेव पूर्वं प्रथममुत्पद्यते । पुनः—पश्चात् तद्गृहीतात्थमवलम्ब्य तद्वलादर्थ्या-
न्तरविषयं श्रुतज्ञानमुत्पद्यते नान्यप्रकारेणेति नियमशब्देन मतिज्ञानप्रवृत्त्यभावे श्रुतज्ञानाभाव इत्यवधार्यते ।
इह—अस्मिन् श्रुतज्ञानप्रकरणे अक्षरानक्षरात्मकयोः शब्दजलिङ्गजयोः श्रुतज्ञानभेदयोः मध्ये शब्दजं-वर्णपद-
वाक्यात्मकशब्दजनितं श्रुतज्ञानं प्रमुखं प्रधानं दत्तग्रहणशास्त्राध्ययनादिसकलव्यवहाराणां तन्मूलत्वात् ।
अनक्षरात्मकं तु लिङ्गजं श्रुतज्ञानं एकेन्द्रियादिपंचेन्द्रियपर्यन्तेषु जीवेषु विद्यमानमपि व्यवहारानुपयोगित्वाद्- २०

मतिज्ञानके द्वारा निश्चित अर्थका अवलम्बन लेकर उससे सम्बद्ध अन्य अर्थको जानने-
वाले जीवके ज्ञानको, जो श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायके क्षयोपशमसे उत्पन्न हुआ है,
मुनीश्वर श्रुतज्ञान कहते हैं । वह ज्ञान नियमसे अभिनिबोधिक पूर्व है अर्थात् अभिनिबोधिक
यानी मतिज्ञान उसका कारण है । मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमसे पहले मतिज्ञान ही उत्पन्न
होता है । पश्चात् उससे गृहीत अर्थका अवलम्बन लेकर उसके बलसे अन्य अर्थको विषय २५
करनेवाला श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है; अन्य प्रकारसे नहीं । नियम शब्दसे यह अवधारण
किया गया है कि मतिज्ञानकी प्रवृत्तिके अभावमें श्रुतज्ञान नहीं होता । इस श्रुतज्ञानके
प्रकरणमें श्रुतज्ञानके अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक या शब्दजन्य और लिंगजन्य भेदोंमें-से
वर्णपदवाक्यात्मक शब्दसे होनेवाला श्रुतज्ञान प्रमुख है प्रधान है, क्योंकि देन-लेन, शास्त्रका
अध्ययन आदि समस्त व्यवहारका मूल वही है । अनक्षरात्मक अर्थात् लिंगजन्य श्रुतज्ञान ३०
एकेन्द्रियसे लेकर पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवोंमें विद्यमान रहते हुए भी व्यवहारमें उपयोगी न
होनेसे अप्रधान होता है । 'श्रूयते' अर्थात् श्रोत्रेन्द्रियके द्वारा जो ग्रहण किया जाता है, वह

१. ब तत् तदाभिनि । २. ब ० ज्ञानं पूर्वमुं । ३. ब तद्वलाघानेनार्था ।

अर्थात्तरज्ञानं प्रतिपादकमप्युदु परमागमदोऽलु रुढमक्कुमो'दानुमो'दु प्रकारदिदं कथंचित् निरुक्ति-
संभविष रुढिशब्ददोऽलुजहत्सार्थवृत्तिकदोऽलु कुशं लातीति कुशलः एदितु कुशलादिशब्दंगलोऽलु
निपुणाद्यर्थंगलु रुढंगला रुढात्थंगलोऽलु तत्कुशलशब्दनिरुक्ति येतंते अरियत्पडुगुमल्लि जीवोऽस्ति
येदितु नुडियत्पडुत्तिरलु जीवोऽस्ति येदितो शब्दज्ञानं श्रोत्रेन्द्रियप्रभवमतिज्ञानमक्कुमा ज्ञानदिदं
५ जीवोऽस्तिशब्दवाच्यरूपात्मास्तित्वदोऽलु वाच्यवाचकसंबन्धसंकेतसंकलनेमा पूर्वकमागि आयुदो'दु
ज्ञानं पुट्टुगुमदक्षरात्मकश्रुतज्ञानमक्कुमेकेदोडक्षरात्मकशब्दसमुत्पन्नत्वदिदं काय्यंदोऽलु कारणोप-
चारमुल्लुदरिदं । वातशीतस्पर्शज्ञानदिदं वातप्रकृतिमे तत्स्पर्शनदोऽलुमनोज्ञानमनक्षरात्मक-
लिङ्गजमप्य श्रुतज्ञानमे बुदक्कुमेकेदोडे शब्दपूर्वकत्वाभावमप्युदरिदं ।

लोगानमसंखमिदा अणक्खरप्ये हवन्ति छद्वाणा ।

१० वेरुवच्छद्वगगपमाणं रूऊणमक्खरगं ॥३१६॥

लोकानामसंख्यमितान्यनक्षरात्मके भवन्ति षट्स्थानानि । द्विरूपषष्ठवर्गप्रमाणं रूपोनमभ्रगं॥

प्रधानं भवति । श्रूयते—श्रोत्रेन्द्रियेण गृह्यते इति श्रुतः शब्दः, तस्मादुत्पन्नमर्थज्ञानं श्रुतज्ञानमिति व्युत्पत्तेरपि
अक्षरात्मकप्राधान्याश्रयणात् । अथवा श्रुतमिति रुढिशब्दोऽयं मतिज्ञानपूर्वकस्य अर्थान्तरज्ञानस्य प्रतिपादकः
परमागमे रुढः । यथाकथंचिन्निरुक्तिसंभवः रुढिशब्दे अजहत्सार्थवृत्तिके कुशं लातीति कुशल इति कुशलादि-
१५ शब्देषु निपुणाद्यर्थेषु रुढेषु तन्निरुक्तिवत् । तत्र जीवोऽस्तीत्युक्ते जीवोऽस्तीति शब्दज्ञानं श्रोत्रेन्द्रियप्रभव
मतिज्ञानं भवति । तेन ज्ञानेन जीवोऽस्तीति शब्दवाच्यरूपे आत्मास्तित्वे वाच्यवाचकसंबन्धसंकेतसंकलनपूर्वकं
यत् ज्ञानमुत्पद्यते तदक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं भवति, अक्षरात्मकशब्दसमुत्पन्नत्वेन कार्ये कारणोपचारात् । वातशीत-
स्पर्शज्ञानेन वातप्रकृतिकस्य तत्स्पर्शं मनोज्ञानमनक्षरात्मकं लिङ्गजं श्रुतज्ञानं भवति, शब्दपूर्वकत्वा-
भावात् ॥३१५॥ अथ श्रुतज्ञानस्य अक्षरानक्षरात्मकभेदौ प्ररूपयति—

२० श्रुत अर्थात् शब्द है । उससे उत्पन्न अर्थज्ञान श्रुतज्ञान है । इस व्युत्पत्तिसे भी अक्षरात्मक
श्रुतज्ञानकी प्रधानता लक्षित होती है । अथवा 'श्रुत' यह रुढ़ि शब्द है । परमागममें मतिज्ञान-
पूर्वक होनेवाले अन्य अर्थके ज्ञानको कहनेमें रुढ़ि है । फिर भी यथायोग्य निरुक्ति होती है ।
रुढ़ि शब्द अपने अर्थको नहीं छोड़ते । जैसे कुशको जो लाता है, वह कुशल है। इस प्रकार कुशल
आदि शब्द चतुर आदि अर्थोंमें रुढ़ि हैं, फिर भी उनकी व्युत्पत्ति उसी प्रकार की जाती है ।
२५ इसी प्रकार श्रुतके सम्बन्धमें जानना । 'जीव है', ऐसा कहनेपर यह जो शब्दका ज्ञान
होता है कि 'जीव है,' यह श्रोत्रेन्द्रियसे उत्पन्न हुआ मतिज्ञान है । और ज्ञानके द्वारा 'जीव
है,' इस शब्दके वाच्यरूप आत्माके अस्तित्वमें वाच्यवाचक सम्बन्धके संकेत ग्रहणपूर्वक
जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है । क्योंकि अक्षरात्मक शब्दसे उत्पन्न
हुआ है, इस प्रकार कार्यमें कारणका उपचार किया है । तथा वायुके शीत स्पर्शके ज्ञानसे
३० वात प्रकृतिवाले मनुष्यको जो उसके स्पर्शमें 'यह मेरे लिए अनुकूल नहीं है', ऐसा जो ज्ञान
होता है, वह अनक्षरात्मक लिङ्गजन्य श्रुतज्ञान है, क्योंकि वह शब्दपूर्वक नहीं हुआ है ॥३१५॥

अब श्रुतज्ञानके अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक भेदोंको कहते हैं—

१. म^०लनपूर्व संकलनमागि । २. म कार्यकारणो । ३. ब^०स्त्वेतद्ज्ञानं ।

अल्लि श्रुतज्ञानकक्षरात्मक अक्षरात्मकभेदविदं द्विभेदमवकु मल्लि अनक्षरात्मकमप्य श्रुत-
भेददोषो पथ्यायपथ्यायसमासलक्षणसर्वजघन्यज्ञानं मोदल्लोडु स्वोत्कृष्टपथ्यंत असंख्येयलोकमात्राऽ
ज्ञानविकल्पंगळपुवुमसंख्येयलोकमात्रवारषट्स्थानवृद्धिपिदं संवृद्धंगळपुवु । अक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं
द्विरूपवर्गधारात्पन्नषष्ठवर्गमप्ये कट्टुमेव पेसरनुळ्ळोडिडनोळ्ळेतितोळुवु रूपुगळनितुमेकरूपोर्नंगळ-
पुवुमनितुमक्षरंगळुमपुनरुक्ताक्षरंगळनाश्रयिसि संख्यातविकल्पमवकुं । विवक्षितात्थाऽभिव्यक्ति-
निमित्तपुनरुक्ताक्षरग्रहणदोषं नोडलधिकप्रमाणमुमवकुं बुदत्थं ।

अनंतरं श्रुतज्ञानवके प्रकारान्तरविदं भेदप्ररूपणार्थमागि गाथाद्वयमं पेळदपं :—

पञ्जायकखरपदसंघादं पडिवत्तियाणि जोगं च ।

दुमवारपाहुडं च य पाहुडयं वत्थु पुव्वं च ॥३१७॥

पथ्यायपक्षरपदसंघातं प्रतिपत्तिकानुयोगं च । द्विकवारप्राभृतं च च प्राभृतकं वस्तुपूर्व्वं च ॥ १०

तेसिं च समासेहि य वीसविधं वा हु होदि सुदणाणं ।

आवरणस्स वि भेदा तत्तियमेत्ता इवंतित्ति ॥३१८॥

तेषां च समासैश्च विजतिविधं वा हि भवति श्रुतज्ञानं । आवरणस्यापि भेदास्तावन्मात्रा
भवन्तीति ॥

श्रुतज्ञानस्य अनक्षरात्मकाक्षरात्मकौ द्वौ भेदौ, तत्र अनक्षरात्मके श्रुतज्ञाने पर्यायपर्यायसमासलक्षणे १५
सर्वजघन्यज्ञानमार्दि कृत्वा स्वोत्कृष्टपर्यन्तं असंख्येयलोकमात्रा ज्ञानविकल्पा भवन्ति । ते च असंख्येयलोकमात्र-
वारषट्स्थानवृद्ध्या संवर्धिता भवन्ति । अक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं द्विरूपवर्गधारात्पन्नषष्ठवर्गस्य एकद्विनाम्नो यावन्ति
रूपाणि एकरूपोनानि सन्ति तावन्ति अक्षराणि अपुनरुक्ताक्षराण्याश्रित्य संख्यातविकल्पं भवति । विवक्षितात्था-
भिव्यक्तिनिमित्तं पुनरुक्ताक्षरग्रहणे ततोऽधिकप्रमाणं भवतीत्यर्थः ॥३१६॥ अथ श्रुतज्ञानस्य प्रकारान्तरेण भेदान्
गाथाद्वयेनाह—

२०

श्रुतज्ञानके अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक ये दो भेद हैं । अनक्षरात्मक श्रुतज्ञानके पर्याय
और पर्यायसमास दो भेद हैं । इसमें सर्वजघन्य ज्ञानसे लेकर अपने उत्कृष्ट पर्यन्त असंख्यात
लोक प्रमाण ज्ञानके भेद होते हैं । वे भेद असंख्यात लोकमात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धिको
लिये हुए हैं । अक्षरात्मक श्रुतज्ञानके संख्यात भेद हैं । सो द्विरूप वर्गधारामें उत्पन्न छठे
वर्गका, जिसका प्रमाण एकट्ठी है, उसके प्रमाणमें-से एक कम करनेपर जितने अपुनरुक्त अक्षर २५
होते हैं, उतने हैं । इसका आशय यह है कि विवक्षित अर्थको प्रकट करनेके लिए पुनरुक्त
अक्षरोंके ग्रहण करनेपर उससे अधिक प्रमाण हो जाता है ॥३१६॥

विशेषार्थ— दोसे लेकर वर्ग करते जानेको द्विरूपवर्गधारा कहते हैं । जैसे दोका प्रथम
वर्ग चार होता है । चारका वर्ग सोलह होता है । सोलहका वर्ग दो सौ छप्पन होता है ।
दो सौ छप्पनका वर्ग पैसठ हजार पाँच सौ छत्तीस होता है, जिसको पण्णट्ठी कहते हैं । ३०
पण्णट्ठीका वर्ग बादाल और बादालका वर्ग एकट्ठी प्रमाण होता है, यही छठा वर्गस्थान है ।
इसमें एक कम करनेसे श्रुतज्ञानके समस्त अपुनरुक्त अक्षर होते हैं । उतने ही अक्षरात्मक
श्रुतज्ञानके भेद हैं ।

अब अन्य प्रकारसे श्रुतज्ञानके भेद दो गाथाओंसे कहते हैं—

वा अथवा पर्यायश्च पर्यायमुं अक्षरं च अक्षरमुं पदं च पदमुं संघातश्चेति संघातमुमेदितु द्वंद्वैकत्वं प्रतिपत्तिकश्चानुयोगश्च प्रतिपत्तिकसमनुयोगमुमेदितिलियुमंते द्वंद्वैकत्वमवकुं । द्विकवार-
माभूतकं च प्राभूतकप्राभूतकमुं प्राभूतकमेदुं वस्तु वस्तुमेदुं पूर्वं च पूर्वमुमेदितु दशभेदगण्युवु ।
तेषां पेरगे पेळद पर्यायादिगळ पत्तुं समासगळिंद कूडि श्रुतज्ञानं विंशतिविधमुमवकुमल्लि अक्षरादि
५ विषयात्थंज्ञानमप्य भावश्रुतकके विवक्षितत्वादिदमवर विंशतिविधत्वनियमदोळु हेतुवं पेळदपं ।

श्रुतज्ञानावरणद भेदगळुमंतावन्मात्रंगळे भवंति अप्पुवेदितु इतिशब्दकके हेत्वर्थवृत्ति सिद्ध-
माद्यु । पर्यायः पर्यायसमासश्च अक्षरमक्षरसमासश्च पदं पदसमासश्च संघातः संघातसमासश्च
प्रतिपत्तिकः प्रतिपत्तिकसमासश्च अनुयोगोऽनुयोगसमासश्च प्राभूतकप्राभूतकं प्राभूतकप्राभूतक-
समासश्च प्राभूतकं प्राभूतकसमासश्च वस्तु वस्तुसमासश्च पूर्वं पूर्वसमासश्चेति एदितु तदा-
१० लापक्रममवकुं ।

अन्तरं पर्यायमेवं प्रथमश्रुतज्ञानभेदस्वरूपप्रलपणार्थं गाथाचतुष्टयमं पेळदपं ।

णवरि विसेसं जाणे सुहुमजहणं तु पज्जयं णाणं ।

पज्जायावरणं पुण तदणंतरणाणभेदमि ॥३१९॥

नवरि विशेषं जानीहि सूक्ष्मजघन्यं तु पर्यायं ज्ञानं । पर्यायावरणं पुनस्तदनंतरज्ञानभेदे ॥

१५ वा-अथवा, पर्यायाक्षरपदसंघातं पर्यायश्च अक्षरं च पदं च संघातश्चेति द्वंद्वैकत्वम् । प्रतिपत्ति-
कानुयोगं-प्रतिपत्तिकश्च अनुयोगश्चेति द्वंद्वैकत्वम् । द्विकवारप्राभूतकं च प्राभूतकप्राभूतकमित्यर्थः । प्राभूतकं
च वस्तुं च पूर्वं च इति दशभेदा भवन्ति । तेषां पूर्वोक्तानां पर्यायादीनां दशभिः समासैः मिलित्वा श्रुतज्ञानं
विंशतिविधं भवति । अत्राक्षरादिविषयार्थज्ञानस्य भावश्रुतस्य विवक्षितत्वेन तेषां विंशतिविधत्वनियमे हेतुमाह-
श्रुतज्ञानावरणस्य भेदा अपि तावन्मात्रा एव विंशतिविधा एव भवन्ति, इति इतिशब्दस्य हेत्वर्थवृत्तिसिद्धेः ।

२० तद्यथा-पर्यायः पर्यायसमासश्च, अक्षरं, अक्षरसमासश्च, पदं, पदसमासश्च, संघातः, संघातसमासश्च,
प्रतिपत्तिकः, प्रतिपत्तिकसमासश्च, अनुयोगः, अनुयोगसमासश्च, प्राभूतकप्राभूतकं, प्राभूतकप्राभूतकसमासश्च,
प्राभूतकं, प्राभूतकसमासश्च, वस्तु वस्तुसमासश्च, पूर्वं पूर्वसमासश्चेति तदालापक्रमो भवति ॥३१७-३१८॥
अथ पर्यायान्तरः प्रथमश्रुतज्ञानस्य स्वरूपं गाथाचतुष्टयेनाह—

२५ पर्याय, अक्षर, पद, संघात, प्रतिपत्ति, अनुयोग, प्राभूत प्राभूतक, प्राभूतक, वस्तु, पूर्वं
ये दस भेद होते हैं । इनके दस समास मिलानेसे श्रुतज्ञानके बीस भेद होते हैं—अर्थात्
पर्याय, पर्यायसमास, अक्षर, अक्षरसमास, पद, पदसमास, प्रतिपत्तिक, प्रतिपत्तिकसमास,
अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभूतक प्राभूतक, प्राभूतक प्राभूतकसमास, वस्तु, वस्तुसमास,
पूर्वं, पूर्वसमास, यह उनके आलापका क्रम है । यहाँ अक्षरादिके द्वारा कहे जानेवाले अर्थका
ज्ञानरूप जो भावश्रुत है, उसकी विवक्षा होनेसे उनके बीस ही होनेमें हेतु कहते हैं कि श्रुत-
३० ज्ञानावरणके भेद भी बीस ही होते हैं । यहाँ 'इति' शब्द हेतुके अर्थमें है । इसलिए श्रुतज्ञानके
बीस भेद हैं ॥३१७-३१८॥

अब पर्याय नामक प्रथम श्रुतज्ञानका स्वरूप चार गाथाओंसे कहते हैं—

पोसतत्प विशेषसरियत्पडुगुमदावुदे दोडे पर्यायमेव प्रथमश्रुतज्ञानं तु मत्ते सूक्ष्मनिगोद-
लब्ध्यपर्याप्तकन संवन्धि सर्वजघन्यश्रुतज्ञानमवकुं । पुनः मत्ते पर्यायज्ञानावरणमुं तदनन्तरज्ञान
भेददोषान्तभागवृद्धियुक्तपर्यायसमासज्ञानप्रथमभेददोषकुमदे ते दोडे उदयागतपर्यायज्ञानावरण-
समयप्रबद्धकुत निषेकदनुभागगत सर्वघातिस्पर्धकंगुदयाभावलक्षणक्षयमुमववकेये सदवस्था-
लक्षणोपशममुं देशघातिस्पर्धकंगुदयगुणुतागुतिरलुमन्तप्पावरणोदयदिदं पर्यायसमासप्रथमज्ञानये- १
यावरणिसलपडुनुं । तुयत्ते पर्यायज्ञानमावरणिसलपडुदेके दोडे तदावरणदोषु जीवगुणमप्य ज्ञानवक-
भावज्ञागुतिरलु गुणियप्यजीववकेयुमभावप्रसंगमवकुमप्युदरिणं ।

अनुभागरचनेयं स्थापिसलपट्टलिल सिद्धान्तैकभागमात्रद्रव्यानुभागक्रमहानिवृद्धियुक्ताना-
गुणहानिस्पर्धकवर्गणात्मकमप्य श्रुतज्ञानावरणद्रवदलिल सर्वतःस्तोकमप्य सर्वपश्चिमप्रक्षीणोदया-
नुभागसर्वघातिस्पर्धकद्रव्यवकेयो पर्यायज्ञानावरणत्वदिदं तावन्मात्रावरणद्रव्यवके सर्वकालदोल-
मुदयाभावमप्युदरिणं ।

नवीनं विशेषं जानीहि, सः कः ? पर्यायज्ञानं—पर्यायार्थं प्रथमं श्रुतज्ञानं, तु—पुनः, सूक्ष्मनिगोदलब्ध्य-
पर्याप्तकस्य संवन्धि सर्वजघन्यं श्रुतज्ञानं भवति । पुनः—पश्चात् पर्यायज्ञानस्य आवरणं तदनन्तरज्ञानभेदे
अनन्तभागवृद्धियुक्ते पर्यायसमासज्ञानप्रथमभेदे भवति, तद्यथा—उदयागतपर्यायज्ञानावरणसमयप्रबद्धोदयानियेक-
स्यानुभागानां सर्वघातिस्पर्धकानामुदयाभावलक्षणः क्षयः, तेषामेव सदवस्थालक्षण उपशमः, देशघातिस्पर्ध- १५
कानामुदये सति तदावरणोदयेन पर्यायसमासप्रथमज्ञानमेव आव्रियते न तु पर्यायज्ञानम् । तदावरणे जीवगुणस्य
ज्ञानस्याभावे गुणिनो जीवस्याप्यभावप्रसंगात् । अनुभागरचनायां विन्यस्ते सिद्धान्तैकभागमात्रे द्रव्यानुभाग-
क्रमहानिवृद्धियुक्ते नानागुणहानिस्पर्धकवर्गणात्मके श्रुतज्ञानावरणद्रव्ये सर्वतः स्तोकस्य सर्वपश्चिमप्रक्षीणोदयानु-
भागसर्वघातिस्पर्धकद्रव्यस्यैव पर्यायज्ञानावरणत्वात् । तावतः आवरणद्रव्यस्य सर्वकालेऽप्युदयाभावात् ॥३१९॥

यह विशेष जानना कि पर्याय नामक प्रथम श्रुतज्ञान सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकका २०
सबसे जघन्य श्रुतज्ञान होता है । किन्तु पर्यायज्ञानका आवरण उसके अनन्तर जो ज्ञानका
भेद है, जो उससे अनन्तभागवृद्धिको लिये हुए है; उस पर्याय समास ज्ञानके प्रथम भेदपर
होता है । जो इस प्रकार है—उदयप्राप्त पर्याय ज्ञानावरणके समयप्रबद्धका जो निषेक उदयमें
आया है, उसके अनुभागके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयका अभाव ही क्षय है तथा जो अगले
निषेक सम्बन्धी सर्वघाती स्पर्धक सत्तामें वर्तमान है उनका उपशम है और देशघाती २५
स्पर्धकोंका उदय है । ऐसी क्षयोपशम पर्याय ज्ञानावरणकी सदा रहती है । अतः पर्याय
ज्ञानावरणके उदयसे पर्याय समास ज्ञानका प्रथम भेद ही आवृत होता है; पर्यायज्ञान नहीं ।
यदि उसका भी आवरण हो जाये, तो जीवके गुण ज्ञानका अभाव होनेपर गुणी जीवके भी
अभावका प्रसंग आता है । तथा अनुभाग रचनामें स्थापित किया सिद्ध राशिका अनन्तवाँ
भागमात्र जो श्रुतज्ञानावरणका द्रव्य अर्थात् परमाणुसमूह है, वह क्रम हानि और वृद्धिसे ३०
संयुक्त है, नाना गुणहानि स्पर्धक वर्गणात्मक है, उस श्रुतज्ञानावरणके द्रव्यमें जिसका उदयरूप
अनुभाग क्षीण हो गया है और जो सबसे थोड़ा तथा सबसे अन्तिम सर्वघाति स्पर्धक है,
उसीका नाम पर्यायज्ञानावरण है । इतने आवरणका कभी भी उदय नहीं होता । इसलिए
भी पर्यायज्ञान निरावरण है ॥३१९॥

सुहुमणिगोद अपञ्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्मि ।

हवदि हु सच्चजहण्णं णिच्चुग्घाडं णिरावरणं ॥३२०॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये भवति खलु सर्वजघन्यं नित्योद्घाटं निरावरणं ॥

- ५ सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तक जननद प्रथमसमयदोळु निरावरणं प्रच्छादनरहितमप्य नित्योद्घाटं सर्वदा प्रकाशमानमप्य सर्वजघन्यं सर्वनिकृष्टशक्तिकमप्य पर्यायमेव श्रुतज्ञानमक्कुं । खलु । ई गाथासूत्रं पूर्वाचार्यप्रसिद्धं स्वोक्तात्थसंप्रतिपत्तिप्रदर्शनात्थमाणि उदाहरणत्वादिदं वरेयल्पदुदु ।

सुहुमणिगोद अपञ्जत्तगेसु सगसंभवेसु भमिऊण ।

- १० चरिमापुण्णतिवक्काणादिमवक्कट्टियेव हवे ॥३२१॥

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तगतेषु स्वसंभवेषु भ्रमित्वा । चरमापूर्णत्रिवक्काणामाद्यवक्कस्थित एव भवेत् ॥

- १५ सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तनोळु संद स्वसंभवेषु द्वादशोत्तरषट्सहस्रप्रमितंगळप्य भवेषु भवंगळोळु भ्रमित्वा भ्रमिसि चरमापूर्णभवद त्रिवक्कविग्रहगतिरित्युत्पन्नजीवन प्रथमवक्कद प्रथमसमयदोळिहंगेये मुपेळद सर्वजघन्यपर्यायमेव श्रुतज्ञानमक्कुं । मत्तल्लिये तज्जीवक्के स्पर्शनेन्द्रियप्रभवसर्वजघन्यमतिज्ञानमचक्षुर्दशनावरणक्षयोपशमसमुद्भूताचक्षुर्दशनमुमक्कुमेके दोडे -

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य जात-जननं तस्य प्रथमसमये निरावरणं-प्रच्छादनरहितं नित्योद्घाटं अतएव सर्वदा प्रकाशमानं सर्वजघन्यं-सर्वनिकृष्टशक्तिकं पर्यायार्थं श्रुतज्ञानं भवति । खलु एतद्गाथासूत्रं पूर्वाचार्यप्रसिद्धं-स्वोक्तात्थसंप्रतिपत्तिप्रदर्शनात्थं उदाहरणत्वेन लिखितम् ॥३२०॥

- २० सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकेषु स्वसंभवेषु द्वादशोत्तरषट्सहस्रप्रमितेषु भवेषु भ्रमित्वा चरमापूर्णभवस्य त्रिवक्कविग्रहगत्या उत्पन्नस्य जीवस्य प्रथमवक्कसमये स्थितस्यैव पूर्वोक्तं सर्वजघन्यं पर्यायार्थं श्रुतज्ञानं भवति तत्रैव तस्य जीवस्य स्पर्शनेन्द्रियप्रभवं सर्वजघन्यं मतिज्ञानं, अचक्षुर्दशनावरणक्षयोपशमसंभूतं अचक्षुर्दर्शनमपि

- २५ सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तके जन्मके प्रथम समय पर्यायनामक श्रुतज्ञान होता है । यह निरावरण है, इसीसे सर्वदा प्रकाशमान रहता है, सबसे जघन्य अर्थात् निकृष्ट शक्तिवाला होता है । यह गाथा सूत्र प्राचीन है । यहाँ ग्रन्थकारने अपने कथनकी यथार्थता दिखलानेके लिए उदाहरणके रूपमें लिखा है ॥३२०॥

- ३० सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीव अपने सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक सम्बन्धी छह हजार बारह भवोंमें भ्रमण करके अन्तिम लब्ध्यपर्याप्तक भवमें तीन मोड़ेवाली विग्रहगतिसे उत्पन्न होकर प्रथम मोड़ेके समयमें स्थित होता है । उसके ही सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान होता है । उसी समय उसके स्पर्शन इन्द्रियजन्य सबसे जघन्य मतिज्ञान होता है और अचक्षुर्दशनावरणके क्षयोपशमसे उत्पन्न अचक्षुर्दर्शन भी होता है । वहाँ ही सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान होनेका कारण यह है कि बहुत क्षुद्रभवोंमें भ्रमण करनेसे उत्पन्न हुए बहुत

१. ब पर्यायनाम ।

बह्वपर्याप्तभवभ्रमणसंभूतबहुतमसंक्लेशवृद्धियिदमावरणके तीव्रतमानुभागोदयसंभवमप्युदरिदं ।
द्वितीयादिसमयंगळोळु ज्ञानदर्शनवृद्धि संभवमेदितु त्रिवक्रप्रथमवक्रसमयदोळे पर्यायज्ञानसंभव-
मरियल्पडुगुं ।

सूक्ष्मनिगोद अपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्मि ।

फासिंदियमदिपुव्वं सुदणाणं लद्धिअक्खरयं ॥३२२॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये । स्पर्शनैन्द्रियमतिपूर्वम् श्रुतज्ञानं लब्ध्यक्षरकं ॥

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकन जननप्रथमसमयदोळु सर्वजघन्यस्पर्शनैन्द्रियमतिज्ञानपूर्वकमप्य
लब्ध्यक्षरापरनामधेयमप्य पूर्वोक्तचरमभवत्रिवक्रप्रथमसमयादिविशेषणविशिष्टमप्य सर्वजघन्य-
पर्यायश्रुतज्ञानमवकुमेदितु ज्ञातव्यमवकु । लब्धि एंवुदु श्रुतज्ञानावरणक्षयोपशममवकुमत्तर्ग्रहण-
शक्तिमेणु लब्ध्याअक्षरमविनश्वरं लब्ध्यक्षरं तावन्मात्रक्षयोपशमकके सर्वदा विद्यमानत्वदिदं । १०

अनंतरं दशगाथासूत्रंगळिदं पर्यायसमासप्रकरणमं पेळ्ढयं :—

अवरुवरिम्मि अणंतमसंखं संखं च भागवड्ढीओ ।

संखमसंखमणंतं गुणवड्ढी होति हु कमेण ॥३२३॥

अवरोपार्धनंतमसंख्यं संख्यं च भागवृद्धयः । संख्यमसंख्यमनंतं गुणवृद्धयो भवन्ति हि क्रमेण ॥

सर्वजघन्यपर्यायज्ञानदमेले क्रमेण वक्ष्यमाणपरिपाटियिदमनंतभागवृद्धियुमसंख्यातभाग- १५
वृद्धियुं संख्यातभागवृद्धियुं संख्यातगुणवृद्धियुमसंख्यातगुणवृद्धियुमनंतगुणवृद्धियुमेदितु षट्स्थान-

भवति । बह्वपर्याप्तभवभ्रमणसंभूतबहुतमसंक्लेशवृद्ध्या आवरणस्य तीव्रतमानुभागोदयसंभवात्, द्वितीयादि-
समयेषु ज्ञानदर्शनवृद्धिसंभवात् 'त्रिवक्रप्रथमवक्रसमये एव पर्यायज्ञानसंभवो ज्ञातव्यः ॥३२१॥

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य जननप्रथमसमये सर्वजघन्यस्पर्शनैन्द्रियमतिज्ञानपूर्वकं लब्ध्यक्षरापरनामधेयं
'पूर्वोक्तचरमभवत्रिवक्रप्रथमसमयादिविशेषणविशिष्ट' सर्वजघन्यं पर्यायश्रुतज्ञानं भवतीति ज्ञातव्यम् । लब्धिनार्म- २०
श्रुतज्ञानावरणक्षयोपशमः अर्थग्रहणशक्तिर्वा, लब्ध्या अक्षरं अविनश्वरं लब्ध्यक्षरं तावत् : क्षयोपशमस्य सर्वदा
विद्यमानत्वात् ॥३२२॥ अथ दशभिर्गाथाभिः पर्यायसमासप्रकरणं प्ररूपयति—

सर्वजघन्यपर्यायज्ञानस्य उपरि क्रमेण वक्ष्यमाणपरिपाट्या अनन्तभागवृद्धिः असंख्यातभागवृद्धिः

संक्लेशके बढनेसे आवरणके तीव्रतम अनुभागका उदय होता है, तथा दूसरे मोड़े आदिके
समयोंमें ज्ञान और दर्शनमें वृद्धि सम्भव है । इसलिए तीन मोड़ोंमें-से प्रथम मोड़ेके समयमें २५
ही पर्याय ज्ञान जानना ॥३२१॥

सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवके जन्म लेनेके प्रथम समयमें सबसे जघन्य स्पर्शन
इन्द्रियजन्य मतिज्ञानपूर्वक तथा पूर्वोक्त विशेषणोंसे विशिष्ट सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान
होता है । उसका दूसरा नाम लब्ध्यक्षर है । श्रुतज्ञानावरणके क्षयोपशमको अथवा अर्थको
ग्रहण करनेकी शक्तिको लब्धि कहते हैं । लब्धिसे जो अक्षर अर्थात् अविनाशी होता है, वह ३०
लब्ध्यक्षर है ; क्योंकि इतना क्षयोपशम सदा विद्यमान रहता है ॥३२२॥

अब दस गाथाओंसे पर्यायसमासका कथन करते हैं—

सबसे जघन्य पर्यायज्ञानके ऊपर आगे कही गयी परिपाटीके अनुसार अनन्तभागवृद्धि,

पतितंगलप्य वृद्धिगलप्युवु । खलु । द्विरूपवर्गधारिप्रोक्तान्तान्तवर्गस्थानगलं नडेदु जीवपुद्गल-
कालाकाशश्रेणिषिदं मेलेषुमनंतान्तवर्गस्थानगलं नडेदु सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकन जघन्यज्ञाना-
विभागप्रतिच्छेदंगलुत्पत्तिकथनविदं तज्जघन्यज्ञानवकनंतात्मकभागहारं पुट्टिसुगुं विरुद्धमल्लु ।

जीवाणं च य रासी असंखलोगा वरं खु संखेज्जं ।

५

भागगुणंमि य कमसो अवट्टिदा होति छट्ठाणा ॥३२४॥

जीवानां च च राशिसंख्यातलोका वरं खलु संखेयं । भागगुणयोश्च क्रमशोऽवस्थिता भवन्ति
षट्स्थाने ॥

इलियनंतभागादिषट्स्थानगलोळु क्रमदि ई षट्संदृष्टिगलप्युवुमवस्थितंगलु प्रतिनियतं-
गलुमप्युववे ते दोडे अनंतमेवुदु भागवृद्धियोळं गुणवृद्धियोळं भागहारमुं गुणकारमुं प्रतिनियत-
१० सर्वजीवराशियेयक्कुं । १६ । असंख्यातभागवृद्धियोळं गुणवृद्धियोळं भागहारमुं गुणकारमुं प्रति-
नियतमसंख्यातलोकमेयक्कुं ≡ a । संख्यातभागवृद्धियोळं गुणवृद्धियोळं भागहारमुं गुणकारमुं
प्रतिनियतोत्कृष्टसंख्यातमेयक्कुं ।

उब्बंक्कं चउरंक्क पणछस्सत्तं अट्ठ अंकं च ।

छव्वड्ढीणं सण्णा कमसो संदिट्ठिकरणट्ठं ॥३२५॥

१५

उब्बंक्कश्चतुरंकः पंचषट्सप्तांकाः । अष्टांकश्च षड्वृद्धीनां संज्ञाः क्रमशः संहृष्टिकरणार्थं ॥

संख्यातभागवृद्धिः संख्यातगुणवृद्धिः असंख्यातगुणवृद्धिः अनन्तगुणवृद्धिश्चेति षट्स्थानपतिता वृद्धयो भवन्ति
खलु । द्विरूपवर्गधारायां अनन्तानन्तानि वर्गस्थानानि अतीत्यातीत्य उत्पन्नानां जीवपुद्गलकालाकाशश्रेणीनां
उपर्यपि अनन्तानन्तवर्गस्थानानि अतीत्य सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य जघन्यज्ञानाविभाग-प्रतिच्छेदानामुत्पत्ति-
कथनात् तज्जघन्यज्ञानस्यानन्ततात्मकभागहारः सुघटन् न विरुध्यते ॥३२३॥

२०

अत्र अनन्तभागादिषु षट्सु स्थानेषु क्रमेण एताः षट् संदृष्टयः अवस्थिताः प्रतिनियता भवन्ति ।
तद्यथा—अनन्तभागवृद्धौ गुणवृद्धौ च भागहारो गुणकारश्च प्रतिनियतः सर्वजीवराशिरेव १६ । असंख्यात-
भागवृद्धौ गुणवृद्धौ च भागहारो गुणकारश्च प्रतिनियतः असंख्यातलोक एव ≡ a । संख्यातभागवृद्धौ गुणवृद्धौ
च भागहारो गुणकारश्च प्रतिनियतः उत्कृष्टसंख्यात एव १५ ॥३२४॥

२५

असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुण-
वृद्धि ये षट्स्थानपतित वृद्धियाँ होती हैं । द्विरूपवर्गधारामें अनन्तानन्त वर्गस्थान जा-जाकर
जीवराशि, पुद्गलराशि, कालके समयोंकी राशि तथा आकाश श्रेणी उत्पन्न होती है । उनके
भी ऊपर अनन्तानन्त वर्गस्थान जाकर सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकके जघन्य ज्ञानके अवि-
भाग प्रतिच्छेद उत्पन्न होते, हैं ऐसा कथन है । अतः उसके जघन्य ज्ञानका भागहार अनन्तरूप
सुघटित होता है, इसमें कोई विरोध नहीं है ॥३२३॥

३०

यहाँ अनन्तभागादिरूप छह स्थानोंमें क्रमसे ये छह संदृष्टियाँ अवस्थित हैं जो इस
प्रकार हैं—अनन्तभागवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धिका भागहार और गुणकार प्रतिनियत सर्व
जीवराशि प्रमाण है । असंख्यात भागवृद्धि और गुणवृद्धिका भागहार और गुणकार प्रति-
नियत असंख्यात लोक ही है । संख्यातभागवृद्धि और गुणवृद्धिका भागहार और गुणकार
प्रतिनियत उत्कृष्ट संख्यात ही है ॥३२४॥

पूर्वोक्तानन्तभागाद्यर्थसंदृष्टिगन्धे मत्तं लघुसंदृष्टिनिमित्तं षड्विधवृद्धिगन्धे यथासंख्यमागि-
यन्यनामसंदृष्टिगल् पेळल्पदृष्टुवदेते दोडनंतभागक्के उर्वकं । ३ । असंख्यातभागक्के चतुरकं । ४ ।
संख्यात भागक्के पंचांकं । ५ । संख्यातगुणक्के षडंक- । ६ । असंख्यातगुणक्के सप्तांक । ७ । मनंत-
गुणक्केष्टांक । ८ । मक्कं ।

अंगुल असंख्यभागे पुचवगवड्डीगदे दु परवड्डी ।

एककं वारं होदि हुं पुण पुणो चरिमउड्ढिती ॥३२६॥

अंगुलासंख्यातभागान् पूर्ववृद्धौ गतायां तु परवृद्धिरेकं वारं भवति खलु पुनःपुनश्चरम-
वृद्धिरिति ॥

अंगुलासंख्यातभागान् सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रवारंगलनु पूर्ववृद्धौ गतायां सत्यां पूर्व-
वृद्धियोलुसलुतंविरलु । तु मत्ते परवृद्धिरेकंवारं भवति खलु । मुंदणवेद्वियोडु बारियहुदु । स्फुट- १०
मागियिती प्रकारदिदं पुनःपुनश्चरमपर्यंतं ज्ञातव्यं । मत्ते मत्ते चरमवृद्धिपर्यंतं अरियल्पडुगुम-
देते दोडे पर्यायाख्यजघन्यज्ञानद मेलनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगलु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगलु
पर्यायसमासज्ञानविकल्पंगलु नडेदोडोम्मे असंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कं । ४ । मत्तमत्ते
अनंतैकभागवृद्धियुक्तस्थानंगलु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगलु नडु मत्तमोम्मे असंख्यातभाग-

पूर्वोक्तानन्तभागाद्यर्थसंदृष्टीनां पुनः लघुसंदृष्टिनिमित्तं षड्विधवृद्धीनां यथासंख्यं अपरसंज्ञाः संदृष्टयः १५
कथ्यन्ते । अनन्तभागस्य उर्वङ्कः ३ । असंख्यातभागस्य चतुरङ्कः ४ । संख्यातभागस्य पञ्चाङ्कः ५ । संख्यात-
गुणस्य षडङ्कः ६ । असंख्यातगुणस्य सप्ताङ्कः ७, अनन्तगुणस्य अष्टाङ्कः ८ ॥३२५॥

पूर्ववृद्धौ-अनन्तभागवृद्धौ सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् गतायां सत्यां तु पुनः परवृद्धिः-असंख्यात-
भागवृद्धिरेकवारं भवति खलु स्फुटं, पुनरपि अनन्तभागवृद्धौ सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रवारान् गतायां सत्यां
असंख्यातभागवृद्धिरेकवारं भवति । अनेन क्रमेण तावद् गन्तव्यं यावदसंख्यातभागवृद्धिरपि सूच्यङ्गुलासंख्यातैक- २०
भागमात्रवारान् गच्छति । ततः पुनरपि अनन्तभागवृद्धौ सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रवारान् गतायां संख्यात-

पूर्वोक्त अनन्तभाग आदि अर्थसंदृष्टियोंकी पुनः लघुसंदृष्टिके निमित्त छह प्रकारकी
वृद्धियोंकी यथाक्रम अन्य संज्ञा संदृष्टि कहते हैं—अनन्तभागवृद्धिकी उर्वक अर्थात् ३,
असंख्यातभाग वृद्धिकी चारका अंक ४, संख्यातभागवृद्धिकी पाँचका अंक ५, संख्यातगुणवृद्धि-
की छहका अंक ६, असंख्यातगुणवृद्धिकी सातका अंक ७, और अनन्तगुणवृद्धिकी आठका २५
अंक ८ ॥३२५॥

पूर्ववृद्धि अर्थात् अनन्तभागवृद्धिके सूच्यंगुलके असंख्यात भाग बार होनेपर परवृद्धि
अर्थात् असंख्यातभागवृद्धि एक बार होती है । पुनः अनन्तभागवृद्धि सूच्यंगुलके असंख्यात
भाग बार होनेपर असंख्यातभागवृद्धि एक बार होती है । इस क्रमसे तबतक जाना चाहिए ३०
जब तक असंख्यातभागवृद्धि भी सूच्यंगुलके असंख्यात भाग बार होवे । उसके पश्चात् पुनः
अनन्तभागवृद्धिके सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र बार होनेपर संख्यातभागवृद्धि एक बार
होती है । पुनः पूर्वोक्त क्रमसे पूर्व-पूर्व वृद्धिके सूच्यंगुलके असंख्यातभाग मात्र बार होनेपर

१. म वृद्धिगलेकैकवारंगलपुव स्फुटं । २. म दोडनंतभागवृद्धियुक्त स्थानंगलु पर्यायजघन्यज्ञानादि-
विकल्पंगलु सूच्यं । ३. म तैकभाग ।

- वृद्धियुक्तस्थानमक्कु-। ४। मी प्रकारदिदमसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैक
भागमात्रंगळुगुत्तिरलु। मत्तं मुंदेयनंतैकभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु
नडदोम्मं संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कु। ५। मत्तमनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैक-
भागमात्रंगळु नडदोम्मं असंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुमत्तमंते अनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु
५ सूच्यंगुलासंख्यातैकभागंगळु नडदु मत्तोम्मं असंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुमितु असंख्यात-
भागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळुगुत्तिरलु मत्तमनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु
सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडदु मत्तोम्मं संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुमितु पूर्वपूर्वा-
नंतासंख्यातैकभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडनडदोम्मं संख्यात-
भागवृद्धियुक्तस्थानंगळुगुत्तिरलु संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळु-
१० पुवतागुत्तिरलु मत्तमितनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळुमसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु प्रत्येकं
सूच्यंगुलासंख्यातैकभागप्रमितंगळु नडेनडदु मत्तं मुंदे अनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुला-
संख्यातैकभागमात्रंगळु नडदोम्मं संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानमक्कु-। ६। मितु पूर्वपूर्वभागवृद्धि-
युक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागंगळु नडनडदोम्मोम्मं संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळुगुत्तं
पोगलासंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळुपुवतागुत्तिरलु। मत्तमित-
१५ नंतासंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु प्रत्येकं कांडकमितंगळुनडेनडदु मत्तं मुंदेयनंतभाग-
वृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडदोम्मं असंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानमक्कुमिते
पूर्वपूर्वानंतासंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुला-

- भागवृद्धिरेकवारं भवति। पुनरपि पूर्वोक्तक्रमेण पूर्वपूर्ववृद्धौ सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् गतायां
परवृद्धिरेकवारं भवतीत्यङ्गुलासंख्यातभागमात्रसंख्यातभागवृद्धौ गतायां पुनः पूर्ववृद्धिषु सर्वासु पूर्वोक्तक्रमेण
२० संख्यातभागवृद्धिरहितं आवर्तितासु संख्यातगुणवृद्धिरेकवारं भवति। उक्तानां वृद्धीनां पूर्वोक्तसंदृष्टयः—उ उ ४,
उ उ ४, उ उ ५, उ उ ४, उ उ ४, उ उ ५, उ उ ४, उ उ ४, उ उ ६, द्विवारलिखित उर्वङ्कादिः
अङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारसंदृष्टिः। एवं षडङ्कपर्यन्तपङ्क्तिगतोर्वङ्कादीनां सर्वेषामावृत्तौ सत्यां षडङ्कोऽप्य-
ङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् गतः इत्यर्थः, ततः षडङ्करहितैकपङ्क्तिरावृत्तौ सत्यां एकवारं सप्ताङ्कनामा-

- वृद्धि एक-एक बार होती है। इस प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातभाग मात्र संख्यात भागवृद्धिके
२५ होनेपर पुनः पूर्वोक्त क्रमसे संख्यातभाग वृद्धिके सिवाय सब पूर्व वृद्धियोंकी आवृत्ति होनेपर
एक बार संख्यात गुणवृद्धि होती है। उक्त वृद्धियोंकी पूर्वोक्त संदृष्टि इस प्रकार है—

- उ उ ४। उ उ ४। उ उ ५। उ उ ४। उ उ ४। उ उ ५। उ उ ४। उ उ ४। उ उ ६।
उर्वङ्क आदिका दो बार लिखना सूच्यंगुलके असंख्यातभाग मात्र बारकी संदृष्टि है। इस
प्रकार षडङ्क पर्यन्त पङ्क्तिगत उर्वङ्क आदि सबकी आवृत्ति होनेपर षडङ्क भी सूच्यंगुलके
३० असंख्यात बार हुआ। अर्थात् ६ के अङ्ककी वृद्धि भी दो बार हुई कहलायी। उसके पश्चात्

१. मं युक्त मं। २. म मात्रस्थानंगळु। ३. मं ला संख्यातैकभागं। ४. मं मत्तमनन्तैक भागं।
५. मं तैकभागं।

संख्यातैकभागमात्रंगळ नडेनडेदोम्मे असंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानमक्कुमंतागुत्तविरलुमा
असंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळ सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळपुवंतागुत्तमिरलु । मत्तमंते
अनंतासंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळ प्रत्येक कांडक-
प्रमितंगळ नडेनडेदु मत्तमंते मुंदे अनंतासंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ प्रत्येक कांडक-
प्रमितंगळ नडेदु मत्तमंते मुंदे मुंदेयु अनंतासंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ प्रत्येक कांडकप्रमितंगळ
नडेदु मत्तमंते मुंदे मुंदेयु अनंतासंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ प्रत्येक कांडकप्रमितंगळ नडे नडेदु
मुंदेयुमनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळ नडेदोम्मे अनंतगुणवृद्धियुक्त-
स्थानमक्कुमितोडु षट्स्थाननदोळनंतासंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ संख्यातासंख्यातानंत-
गुणवृद्धियुक्तस्थानंगळमेदिती षट्स्थानंगळगमनिकेयुमं तत्तद्वृद्धिस्थानसंख्याप्रमाणमुमं ज्ञापिसि
तोरलु समर्थमप्य रचनाविशेषमिदु :—

२१२	२२१	२१	२२२	२२१	२२	२					
०	०	०	०	०	०	०	०				
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ	६
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	२
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ७	१
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	१
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	२
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	०
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ७	२
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ७	०
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	१
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	२
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ६	०
उउ४	उउ४		उउ५	उउ४	उउ४	उउ५	उउ४	उउ४	उउ४	उउ८	१

संख्यातगुणवृद्धिर्भवति । एवं षडङ्कपङ्क्तिद्वयसप्ताङ्कपङ्क्तिरूपपङ्क्तित्रयस्यावृत्तौ सत्यां सप्ताङ्कस्याङ्कुला-
संख्यातभागमात्रवारसंदृष्टिर्भवति । इत्थं षट् पङ्क्तयो जाताः । ततः पुनः सप्ताङ्करहितपङ्क्तित्रयस्य आवृत्तौ
सत्यां एकवारमष्टाङ्कनामा अनन्तगुणवृद्धिर्भवति । एवं षट्स्थानवृद्धीनां वृत्तिक्रमो दर्शितो ग्रन्थलिखितरचनानु-
सारेण अव्यामोहेन श्रोतृजनैर्जातव्यः ।

षडङ्क रहित एक पङ्क्तिकी आवृत्ति होनेपर एक बार सप्ताङ्क नामक संख्यात गुणवृद्धि होती है । २५
इसी प्रकार षडङ्क सहित दो पङ्क्तियों और सप्ताङ्क सहित एक पङ्क्ति, इस तरह तीन पङ्क्तियोंकी
आवृत्ति होनेपर सप्ताङ्ककी सूच्यंगुलके असंख्यातभाग बार संदृष्टि होती है । इस प्रकार छह
पङ्क्तियाँ हुई । इसके पश्चात् पुनः सप्ताङ्क रहित तीन पङ्क्तियोंकी आवृत्ति होनेपर एक बार
अष्टाङ्क नामक अनन्तगुणवृद्धि होती है । यथा—

उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ८

१० इस प्रकार षट्स्थान वृद्धियोंका क्रम दिखलाया। ग्रन्थमें दर्शित रचनाके अनुसार श्रोताजनोंको बिना व्यामोहके जानना चाहिए। इस यन्त्रका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

- पर्याय नामक श्रुतज्ञानके भेदसे अनन्तभागवृद्धि युक्त पर्याय समास नामक श्रुतज्ञानका प्रथम भेद होता है। इस प्रथम भेदसे अनन्तभागवृद्धि युक्त पर्याय समासका दूसरा भेद होता है। इस प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार
- १५ असंख्यात भागवृद्धि होती है। ऊपर यन्त्रमें प्रथम पंक्तिके प्रथम कोठेमें दो बार उकार लिखा है, वह सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिकी पहचान जानना। उसके आगे चारका अंक लिखा, वह एक बार असंख्यात भाग वृद्धिकी पहचान जानना। इसके ऊपर सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भागवृद्धि होनेपर दूसरी बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इसी क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इसीसे यन्त्रमें प्रथम पंक्तिके दूसरे कोठेमें प्रथम कोठाकी तरह दो उकार और एक चारका अंक लिखा है जो दो बार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग बारका सूचक है। अतः दूसरी बार लिखनेसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग बार जानना। उससे आगे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। अतः प्रथम पंक्तिके तीसरे कोठेमें दो उकार और एक पाँचका अंक लिखा है। आगे जैसे पहले अनन्त भाग वृद्धिकी लिये सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके होनेपर पीछे
- २५ सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके होनेपर एक बार संख्यात भाग वृद्धि हुई, वैसे ही उसी क्रमसे दूसरी संख्यात भाग वृद्धि हुई। इसी क्रमसे तीसरी हुई। इस प्रकार संख्यात भाग वृद्धि भी सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण बार होती है। इससे ऊपर यन्त्रमें प्रथम पंक्तिमें जैसे तीन कोठे किये थे, वैसे ही सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागकी पहचानके लिए दूसरे तीन कोठे उसी प्रथम पंक्तिमें किये। यहाँसे आगे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके होनेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इस प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धि होती है। उसकी पहचानके लिए यन्त्रमें दो उकार और चारका अंक लिये दो कोठे किये। इससे आगे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार संख्यात गुण वृद्धि होती है। सो उसकी पहचानके लिए प्रथम पंक्तिके नौवें कोठेमें दो उकार और लहका अंक लिखा। जैसे प्रथम पंक्तिका क्रम रहा, उसी प्रकार आदिसे लेकर सब क्रम दूसरी बार होनेपर एक बार दूसरी संख्यातगुणवृद्धि होती है। इसी क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण संख्यातगुणवृद्धि

द्विवारलिखितोर्व्वकादिकमंगुलासंख्यातैकवारसंदृष्टिः ।

मत्तमिल्लि सर्व्वजघन्यमप्य श्रुतज्ञानं पर्यायमेव लब्धक्षरापरनामधेयस्थानद मुंदण पर्यायसमासज्ञानविकल्पांगठनंतैकभागवृद्धिपुक्तस्थानंगठु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रविकल्प-
गठपुववर वृद्धिप्रमाण क्रमविधानप्ररूपणं माडल्पडुमुगदेतेदोडनंतगुणजीवराशिप्रमितस्वार्थ-
प्रकाशनशक्त्यविभागप्रतिच्छेदात्मकसर्व्वजघन्यश्रुतज्ञानं । ज । एदितु संस्थापिसि मत्तमा राशियं ५
सर्व्वजीवराशियप्पनंतदिदं भागिसि तदेकभागमं तज्जघन्यज्ञानदोळे समच्छेदमं माडि कूडुत्तमिरलदु

अथानन्तभागवृद्धेरङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् वृत्तिक्रमो दश्यते तद्यथा—अनन्तगुणजीवराशिमात्र-
स्वार्थप्रकाशनशक्त्यविभागप्रतिच्छेदात्मकं सर्व्वजघन्यश्रुतज्ञानं ज इति संदृष्ट्या संस्थाप्य तं राशि सर्व्वजीवराशि-
रूपानन्तेन भक्त्वा तदेकभागे ज तज्जघन्यस्योपरि समच्छेदेन युते सति यो राशिर्जायते स पर्यायसमाश्रुत-
१६

होती है । उसकी पहचानके लिए यन्त्रमें जैसे प्रथम पंक्ति थी, उसी प्रकार उसके नीचे दूसरी १०
पंक्ति लिखी । यहाँसे आगे—तीसरी पंक्ति प्रथम पंक्तिके समान लिखी । इतना विशेष कि
नौवें कोठेमें जहाँ दो उकार एक छहका अंक लिखा था, वहाँ तीसरी पंक्तिमें नौवें कोठेमें दो
उकार और सातका अंक लिखा । यहाँसे आगे जैसे तीनों पंक्तियोंमें आदिसे लेकर अनु-
क्रमसे वृद्धि हुई, उसी अनुक्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण होनेपर जब असंख्यात
गुण वृद्धि भी सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण हो, तब पूर्ति हो । इसीसे यन्त्रमें जैसे प्रथम १५
तीन पंक्तियाँ थी, वैसे ही दूसरी तीन पंक्तियाँ लिखीं । इस तरह छह पंक्तियाँ हुईं । यहाँसे
आगे—जैसे आदिसे लेकर तीन पंक्तियोंमें क्रमसे वृद्धियाँ कही थी, वैसे ही क्रमसे पुनः सब
वृद्धियाँ हुईं । विशेष इतना कि तीसरी पंक्तिके अन्तमें जहाँ असंख्यात गुण वृद्धि कही थी,
उसके स्थानमें यहाँ तीसरी पंक्तिके अन्तमें एक बार अनन्त गुणवृद्धि होती है । इसीसे यन्त्रमें २०
पहली, दूसरी, तीसरीके समान तीन पंक्तियाँ और लिखीं । किन्तु तीसरी पंक्तिके नौवें
कोठेमें जहाँ दो उकार और सातका अंक लिखा है, उसके स्थानमें यहाँ तीसरी पंक्तिके नौवें
कोठेमें दो उकार और आठका अंक लिखा । जो अनन्त गुणवृद्धिका सूचक है । इसके आगे
किसी वृद्धिके न होनेसे अनन्त गुणवृद्धि एक ही बार होती है । उसके होनेपर जो प्रमाण
हुआ, वह षट्स्थान पतित वृद्धिका प्रथम स्थान जानना । इस प्रकार पर्याय समास श्रुतज्ञानमें २५
असंख्यात लोक बार मात्र षट्स्थान पतित वृद्धि होती है ।

आगे उक्त कथनको स्पष्ट करते हैं—

सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञानके अपने विषयके प्रकाशनरूप शक्तिके अविभाग
प्रतिच्छेद जीवराशिसे अनन्तगुणे होते हैं । उस राशिको सब जीवराशिरूप अनन्तसे भाजित
करनेपर जो एक भाग आवे, उसे उस जघन्य ज्ञानमें मिलानेपर पर्याय समास श्रुतज्ञानके ३०
विकल्पोंमें—से सबसे जघन्य प्रथम भेद आता है । यह एक बार अनन्त भाग वृद्धि हुई । फिर
उस पर्याय समास ज्ञानके प्रथम विकल्पको जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो एक
भाग आवे, उसे पर्याय समास ज्ञानके प्रथम भेदमें मिलानेपर उसका दूसरा भेद होता है ।
यह दूसरी अनन्त भाग वृद्धि हुई । उस दूसरे भेदको अनन्तका भाग देनेसे जो एक भाग
आवे, उसे उस दूसरे विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका तीसरा विकल्प होता है ।
यह तीसरी अनन्तभाग वृद्धि हुई । फिर इस तीसरे भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो एक भाग ३५

पर्यायसमासश्रुतज्ञानविकल्पंगळोळु सर्वजघन्यप्रथमविकल्पमक्कु ज १६ मिदरनंतैकभागमन-
१६

ल्लिये समच्छेदं माडि कूडुत्तिरलुमडु पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पमक्कु ज १६ १६ मदरनंतैक-
१६ १६

भागममल्लिये समच्छेदं माडि कूडुत्तं विरलु पर्यायसमासतृतीयज्ञानविकल्पमक्कु ज १६ १६ १६
१६ १६ १६

मदरनंतैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासचतुर्थज्ञानविकल्पमक्कु

५ ज १६ १६ १६ १६ मदरनंतैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासपंचम-
१६ १६ १६ १६

श्रुतज्ञानविकल्पमक्कु ज १६ १६ १६ १६ १६ मदरनंतैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडु-
१६ १६ १६ १६ १६

ज्ञानविकल्पेषु सर्वजघन्यप्रथमविकल्पः स्यात् ज १६ अस्यानन्तैकभागे ज १६ अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते
१६ १६

स पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ १६

तृतीयज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ । १६ । १६ ।

१० चतुर्थज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ । १६ । १६ । १६

पञ्चमश्रुतज्ञानविकल्पः । ज १६ । १६ । १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन
१६ । १६ । १६ । १६ । १६

आवे,उसे उस तीसरे भेदमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका चतुर्थ विकल्प आता है । यह
चतुर्थ अनन्त भाग वृद्धि हुई । फिर इस चतुर्थ भेदमें अनन्तसे भाग देकर जो एक भाग
आवे,उसे उस चतुर्थ विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समासका पंचम विकल्प आता है । यह
१५ पाँचवीं अनन्तभाग वृद्धि हुई । फिर उस पाँचवें भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो भाग आता
है,उसे पाँचवें भेदमें मिलानेपर पर्याय समासका छठा विकल्प आता है । यह छठी अनन्त
भाग वृद्धि हुई । इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर
जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ,उसको एक बार असंख्यात लोक प्रमाण संख्यातसे भाग
देनेपर जो परिमाण आवे,उसे उसी भेदमें मिलानेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धिको लिये
२० हुए पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । उसमें अनन्तसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे,उसे

तिरलु पर्यायसमासषष्ठश्रुतज्ञानविकल्पमक्कु ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ मितु सूच्यंगुला-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

संख्यातैकभागमात्रान्तैकभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सव्वमु नडसत्पडुवुवल्लि तद्वृद्धिगळ्ळे तज्जघन्यं

युते पर्यायसमासषष्ठश्रुतज्ञानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ एवं सूच्यङ्गुलासंख्यातैक-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

भागमात्राणि अनन्तैकभागवृद्धियुक्तस्थानानि सर्वाध्यानेतव्यानि ।

उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँसे अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ । इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ, उसमें पुनः असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया, उसको उसी भेदमें मिलानेपर दूसरी असंख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । ५

इसी क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ, उसमें अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे, उसको उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँ पुनः अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ सो सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ, उसको उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया, उसको उसीमें मिलानेपर प्रथम संख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समासका भेद होता है । १५
इससे आगे पुनः अनन्त भाग वृद्धि प्रारम्भ होती है । सो जैसे पूर्वमें कहा है, उसीके अनुसार वृद्धि जानना । इतना विशेष है कि जिस भेदसे आगे अनन्त भाग वृद्धि होती है, उसी भेदमें जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे, उसे उसी भेदमें मिलानेपर अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे असंख्यात भाग वृद्धि होती है, वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे, उसको उसी भेदमें मिलानेपर उससे अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात भाग वृद्धि हो, वहाँ उसी भेदको उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे, उसे उसी भेदमें मिलानेपर उससे आगेका भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात गुण वृद्धि होती है, वहाँ उस भेदको उत्कृष्ट संख्यातसे गुणा करनेपर उस भेदसे अनन्तरवर्ती भेद होता है । जिस भेदसे आगे असंख्यात गुण वृद्धि होती है, वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोकसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है । जिस भेदसे आगे अनन्त गुण वृद्धि होती है, वहाँ उसी भेदको जीवराशि प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है; इस प्रकार षट्स्थान पतित वृद्धिका क्रम जानना । २५

यहाँ जो संख्या कही है सो सब संख्या ज्ञानके अविभागी प्रतिच्छेदोंकी जानना । तथा जो यहाँ भेद कहे हैं, उनका भावार्थ यह है कि जीवके पर्याय ज्ञानसे यदि बढ़ता हुआ ज्ञान होता है, तो पर्याय समासका प्रथम भेद ही होता है । ऐसा नहीं है कि किसी जीवके पर्यायज्ञानसे एक-दो अविभाग प्रतिच्छेद बढ़ता हुआ भी ज्ञान हो । ३०

मोदलो डु तदुत्कृष्टवृद्धिपर्यन्तं भेदमुत्पुद्गिरिदमवर विन्यासं तोरल्पडुगुमदेते दोडे पर्यायसमास-
ज्ञानप्रथमविकल्पदोळिहं वृद्धियं तेगदु जघन्यद मेगे स्थापिसि अदर केळगे एकसारान्तैकभाग-
वृद्धियं स्थापिसुवुदंतु स्थापिसुत्तिरलु तद्वृद्धिगे प्रक्षेपकमेव पेसरक्कु। मंते द्वितीयविकल्प-
दोळिहं जघन्यमं मेगे स्थापिसि तदधस्तनभागदोळु तद्वृद्धिप्रक्षेपकंगळेरडुमो डु प्रक्षेपकप्रक्षेपक-
५ मुमपुववं क्रमादिदं केळगे केळगिरिसुवुदु। तृतीयविकल्पदोळं जघन्यमं मेगे स्थापिसि तद्वृद्धि-
गळप्प मूरं प्रक्षेपकंगळं मूरं प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळमो डु पिशुलिधुमं यथाक्रमादिदं तज्जघन्यद केळगे केळगे
स्थापिसुवुदु। चतुर्थविकल्पदोळुमंते जघन्यमं मेगे स्थापिसि तदधस्तनभागदोळु तद्वृद्धिगळप्प
नात्कुं प्रक्षेपकंगळं षट्प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळं चतुःपिशुलिगळुमनो डु पिशुलिपिशुलियुमं यथाक्रमादिदं
केळगे केळगे स्थापिसुवुदु।

१० पंचमविकल्पदोळुमंते जघन्यमं मेग स्थापिसि तदधस्तनभागदोळु तद्वृद्धिगळप्प प्रक्षेपकंग-
ळडुमं प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळ पत्तुं। पिशुलिगळु पत्तुमं पिशुलिपिशुलिगळैडुमनो डु चूर्णियुमं यथाक्रम-
दिदं केळगे केळगे स्थापिसुवुदु। षष्ठविकल्पदोळुमंते जघन्यमं मेगे स्थापिसि तदधस्तनभागदोळु

तत्र तद्वृद्धीनां तज्जघन्यमादि कृत्वा तदुत्कृष्टवृद्धिपर्यन्तं भेदे सति तद्विन्यासो दश्यते। तद्यथा—
प्रथमविकल्पे स्थितवृद्धि पृथक्कृत्य जघन्यमुपरि संस्थाप्य तस्याधः एकवारानन्तैकभागवृद्धि स्थापयेत्, तद्वृद्धेः
१५ प्रक्षेपक इति नाम। तथा द्वितीयविकल्पे जघन्यमुपरि संस्थाप्य तदधस्तनभागे तद्वृद्धेर्द्वौ प्रक्षेपकौ एकं प्रक्षेपक-
प्रक्षेपकं च अधोधो न्यस्येत्। तृतीयविकल्पे जघन्यमुपरि संस्थाप्य तद्वृद्धेस्त्रीन् प्रक्षेपकान् त्रीन् प्रक्षेपक-
प्रक्षेपकान् एकं पिशुलि च अधोधो न्यस्येत्। चतुर्थविकल्पे तज्जघन्यमुपरि न्यस्य तदधस्तनभागे तद्वृद्धेश्चतुरः
प्रक्षेपकान् षट् प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् चतुरः पिशुलीन् एकं पिशुलिपिशुलि च अधोधो न्यस्येत्। पञ्चमविकल्पे

आगे यहाँ अनन्त भाग वृद्धि रूप सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थान कहे हैं,
२० उसका जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट स्थान पर्यन्त स्थापनका विधान कहते हैं। सो प्रथम ही
संज्ञाओंको कहते हैं—

विवक्षित मूल स्थानको विवक्षित भागहारका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे
प्रक्षेपक कहते हैं। उसी प्रमाणको उसी भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे प्रक्षेपक-
प्रक्षेपक कहते हैं। उसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे पिशुलि
२५ कहते हैं। उसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे पिशुलि-पिशुलि
कहते हैं। उसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे चूर्णि कहते हैं।
उसमें भी विवक्षित भागहारका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे चूर्णि-चूर्णि कहते हैं। इसी
प्रकार पूर्व प्रमाणमें विवक्षित भागहारका भाग देनेपर द्वितीय आदि चूर्णि-चूर्णि कही
जाती है। अस्तु—

३० सो पर्याय समास ज्ञानके प्रथम भेदमें ऊपर जघन्यको स्थापित करके उसके
नीचे एक बार अनन्त भाग वृद्धिकी स्थापना करना चाहिए। उस वृद्धिका नाम प्रक्षेपक है।
तथा दूसरे विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके दो प्रक्षेपक
और एक प्रक्षेपक-प्रक्षेपक स्थापित करें। तीसरे विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके
उसकी वृद्धिके तीन प्रक्षेपक, तीन प्रक्षेपक-प्रक्षेपक और एक पिशुलि नीचे-नीचे स्थापित करें।
३५ चतुर्थ विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके चार प्रक्षेपक,

तद्वृद्धिगच्छ्य प्रक्षेपकंगळारुमं प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळ पदिनैदुमं पिशुलिगच्छिपत्तुमं पिशुलिपिशुलिगळ पदिनैदुमं चूर्णिगळारुमनोदु चूर्णिचूर्णियुमं यथाक्रमदिदं केळगे केळगे स्थापिसुवुदितनंतभागवृद्धि-
युक्तस्थानंगळ सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळेल्हवरोळं बेवर्केयुदु तंतम्म जघन्यंगळ केळगे केळगे
तंतम्म प्रक्षेपकंगळ गच्छमात्रंगळपुववं स्थापिसि यवर केळगे प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळ रूपोनगच्छेय
एकवारसंकलनधनमात्रंगळपुववं स्थापिसुवुदवर केळगे पिशुलिगळ द्विरूपोनगच्छेय द्विकवार- ५
संकलनधनमात्रंगळपुववं स्थापिसि यवर केळगे पिशुलिपिशुलिगळ त्रिरूपोनगच्छेय त्रिकवार-
संकलनधनमात्रंगळपुववं स्थापिसि यवर केळगे चूर्णिगळ चतुरूपोनगच्छेय चतुर्वारसंकलनधन-
मात्रंगळपुववं स्थापिसि यवर केळगे चूर्णिचूर्णिगळ पंचरूपोनगच्छेय पंचवारसंकलनधनमात्रं-
गळपुववं स्थापिसुवुदितु स्थापिसुतं पोगुतिरलु चरमाननंतभागवृद्धियुक्तस्थानविकल्पदोळु

तज्जघन्यमुपरि न्यस्य तदधस्तनभागे तद्वृद्धेः पञ्च प्रक्षेपकान् दश प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् दश पिशुलीन् पञ्च १०
पिशुलिपिशुलीन् एकं चूर्णि च अधोधो न्यस्येत् । षष्ठविकल्पे तज्जघन्यमुपरि न्यस्य तदधस्तनभागे तद्वृद्धेः
षट् प्रक्षेपकान् पञ्चदश प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् विंशति पिशुलीन् पञ्चदश पिशुलिपिशुलीन् षट् चूर्णीन् एकं चूर्णिचूर्णि
च अधोधो न्यस्येत्, एवमनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानेषु सूच्यङ्गुलासंख्येयभागमात्रेषु सर्वेष्वपि स्वस्वजघन्यानामधोः
स्वस्वप्रक्षेपकान् गच्छमात्रान् न्यस्येत्, तेषामधः प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् रूपोनगच्छस्य एकवारसंकलनधनमात्रान्
न्यस्येत् । तेषामधः पिशुलीन् द्विरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तेषामधः पिशुलिपिशुलीन् १५
त्रिरूपोनगच्छस्य त्रिकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत्, तेषामधः चूर्णीन् चतुरूपोनगच्छस्य चतुर्वारसंकलनधन-
मात्रान् न्यस्येत् । तेषामधः चूर्णिचूर्णीन् पञ्चरूपोनगच्छस्य पञ्चवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । एवं गत्वा

छह प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, चार पिशुलि और एक पिशुलि-पिशुलि स्थापित करें । पाँचवें विकल्पमें
जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके पाँच प्रक्षेपक, दश प्रक्षेपक-
प्रक्षेपक, दस पिशुलि, पाँच पिशुलि-पिशुलि और एक चूर्णि स्थापित करे । छठे विकल्पमें २०
जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके छह प्रक्षेपक, पन्द्रह प्रक्षेपक-
प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पन्द्रह पिशुलि-पिशुलि, छह चूर्णि और एक चूर्णि-चूर्णि स्थापित करे ।
इस प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनन्त भाग वृद्धि युक्त सब पर्याय समाप्त
ज्ञानके स्थानोंमें अपने-अपने जघन्यके नीचे-नीचे अपने-अपने प्रक्षेपकोंको गच्छ प्रमाण २५
स्थापित करना । उनके नीचे प्रक्षेपक-प्रक्षेपक एक कम गच्छके एक बार संकलन धन मात्र
स्थापित करना । उनके नीचे पिशुलि दो हीन गच्छके दो बार संकलन धन मात्र स्थापित
करना । उनके नीचे पिशुलि-पिशुलि तीन हीन गच्छके तीन बार संकलन धन मात्र स्थापित
करना । उनके नीचे चूर्णि चार हीन गच्छके चार बार संकलन धनमात्र स्थापित करना ।
उनके नीचे चूर्णि-चूर्णि पाँच हीन गच्छके पाँच बार संकलन धन मात्र स्थापित करना ।
इसी प्रकार क्रमसे एक हीन गच्छका एक-एक अधिक बार संकलन चूर्णि-चूर्णि ही अन्त पर्यन्त ३०
ज्ञानना । अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें अनन्तका जो स्थान है, उनमें-से जघन्यको ऊपर
स्थापित करना । उसके नीचे क्रमानुसार प्रक्षेपकोंको सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र

बेक्कट्टु तज्जघन्यमं मेरो स्थापिसि तदधस्तनभागदोळु यथाक्रमदिदं प्रक्षेपकंगळु गच्छेमात्रंगळु-
 पुवेदु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळं स्थापिसिदवर केळगे प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळु रूपोनगच्छेय
 एकवारसंकलनधनमात्रंगळपुवेदु रूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय एकवारसंकलनधनप्रमितंगळं
 स्थापिसुबुदवर केळगे पिशुलिगळु द्विरूपोनगच्छेय द्विकवारसंकलनधनमात्रंगळपुवेदु द्विरूपोन-
 सूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय द्विकवारसंकलनधनमात्रंगळं स्थापिसुबुदवर केळगे पिशुलि पिशुलिगळु
 त्रिरूपोनगच्छेय त्रिवारसंकलनधनप्रमितंगळपुवेदु त्रिरूपोनसूच्यंगुलासंख्यात भागगच्छेय त्रिवार-

चरमानन्तभागद्विद्वयुक्तस्थानत्रिकल्पे पृथक्कृततज्जघन्यमुपरि न्यस्येत् । तदधस्तनभागे यथाक्रमं प्रक्षेपकान्
 सूच्यङ्गुलासंख्येयभागमात्रान् न्यस्येत् । तदधः प्रक्षेपकप्रक्षेपकाः रूपोनगच्छस्य एकवारसंकलनधनमात्राः सन्तीति
 रूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागगच्छस्य एकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः पिशुलयः द्विरूपोनगच्छस्य
 द्विकवारसंकलनधनमात्राः सन्तीति द्विरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागगच्छस्य द्विकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् ।

- स्थापित करना, उसके नीचे प्रक्षेपक-प्रक्षेपकोंको, यतः वे एक कम गच्छके एक बार संकलन
 धन मात्र होते हैं, अतः एक कम सूच्यंगुलके असंख्यात भाग गच्छके एक बार संकलन धन
 मात्र स्थापित करना । उनके नीचे पिशुलि, जो दो हीन गच्छके दो बार संकलन धन मात्र
 होती हैं, इसलिए दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके दो बार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । उनके नीचे पिशुलि-पिशुलि तीन हीन गच्छके तीन बार संकलन धन मात्र
 होती हैं, इसलिए तीन हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके तीन बार संकलन धन
 मात्र स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि चार हीन गच्छके चार बार संकलन धन मात्र होती
 हैं, इसलिए चार हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके चार बार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि-चूर्णि पाँच हीन गच्छके पाँच बार संकलन धन मात्र होती
 हैं, इसलिए पाँच हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके पाँच बार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । इसी प्रकार उसके नीचे-नीचे चूर्णि-चूर्णि छह हीन आदि गच्छके छह बार
 आदि संकलन धन मात्र होती हैं इसलिए छह हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग आदि
 गच्छोंके छह हीन सूच्यंगुलके असंख्यात भागादि बार संकलन धन मात्र नीचे-नीचे स्थापित
 करना । ऐसा करते-करते सबसे नीचेकी द्विचरम चूर्णि-चूर्णि दो हीन गच्छसे हीन गच्छकी
 दो हीन गच्छवार संकलित धन प्रमाण होती हैं, इसलिए दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें
 भागसे हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यात भाग बार
 संकलन धन मात्र स्थापित करना । उनके नीचे एक हीन गच्छसे हीन गच्छके एक हीन गच्छ
 मात्र बार संकलन धन मात्र उसकी अन्तिम चूर्णि-चूर्णि हैं, इसलिए एक हीन सूच्यंगुलके
 असंख्यातवें भागसे हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके एक हीन सूच्यंगुलके असंख्यात
 भाग मात्र बार संकलित धन प्रमाण स्थापित करना । परमार्थसे अन्तिम चूर्णि-चूर्णिका संक-
 लित धन ही घटित नहीं होता, क्योंकि द्वितीय आदि स्थानका अभाव है ।

विशेषार्थ—अंक संदृष्टिसे उक्त कथन इस प्रकार जानना । जघन्य पर्याय ज्ञानका
 प्रमाण ६५५३६ । विवक्षित भागहार अनन्तका प्रमाण चार । पूर्वोक्त क्रमसे चारका भाग
 देनेपर प्रक्षेपकका प्रमाण १६३८४ । प्रक्षेपक-प्रक्षेपकका प्रमाण ४०९६ । पिशुलि का प्रमाण
 १०२४ । पिशुलि-पिशुलि का प्रमाण २५६ । चूर्णि प्रमाण ६४ । चूर्णि-चूर्णि प्रमाण १६ । इसी

संकलनधनमात्रंगलं स्थापिसुबुदवर केळगे चूर्णिगळु चतूरूपोनगच्छेय चतुर्वारसंकलनधनप्रमितंग-
ळपुवेंदु चतूरूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय चतुर्वारसंकलनधनमात्रंगलं स्थापिसुबुदवर
केळगे चूर्णि चूर्णिगळु पंचरूपोनगच्छेय पंचवारसंकलनधनप्रमितंगळपुवेंदु पंचरूपोनसूच्यंगुला-
संख्यातभागगच्छेय पंचवारसंकलनधनमात्रंगलं स्थापिसुबुदितु तदधस्तनाधस्तनचूर्णिचूर्णिगळु

तदधः पिशुलिपिशुलयः त्रिरूपोनगच्छस्य त्रिवारसंकलनधनमात्राः सन्तीति त्रिरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभाग-
गच्छस्य त्रिकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः चूर्णयः चतूरूपोनगच्छस्य चतुर्वारसंकलनधनमात्राः
सन्तीति चतूरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागगच्छस्य चतुर्वारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः चूर्णिचूर्णयः पञ्च-
रूपोनगच्छस्य पञ्चवारसंकलनधनप्रमिताः सन्तीति पञ्चरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागगच्छस्य पञ्चवारसंकलन-

तरह चारका भाग देते रहनेसे द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णिका प्रमाण चार, एक आदि जानना ।
ऊपर जघन्य ६५५३६ को स्थापित करके नीचे एक बार प्रक्षेपक १६३८४ स्थापित करके १०
जोड़नेपर पर्याय समासके प्रथम भेदका प्रमाण ८१९२० होता है । फिर ऊपर जघन्य
६५५३६ स्थापित करके उसके नीचे दो प्रक्षेपक १६३८४।१६३८४ तथा एक प्रक्षेपक-प्रक्षेपक
४०९६ स्थापित करके जोड़नेपर पर्याय समासके दूसरे भेदका प्रमाण १०२४०० प्रमाण होता
है । फिर ऊपर जघन्य ६५५३६ स्थापित करके उसके नीचे तीन प्रक्षेपक १६३८४ । १६३८४ ।
१६३८४ । तीन प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, एक पिशुलि स्थापित करके जोड़नेपर तीसरे भेदका प्रमाण १५
१२८००० होता है । फिर ऊपर जघन्यको स्थापित करके नीचे-नीचे चार प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपक-
प्रक्षेपक, चार पिशुलि एक पिशुलिपिशुलि स्थापित करके जोड़नेपर चौथे भेदका प्रमाण
१६०००० होता है । फिर ऊपर जघन्य स्थापित करके नीचे-नीचे पाँच प्रक्षेपक, दश प्रक्षेपक-
प्रक्षेपक, दस पिशुलि, पाँच पिशुलि-पिशुलि, एक चूर्णि स्थापित करके जोड़नेपर पाँचवें भेदका
प्रमाण दो लाख होता है । फिर ऊपर जघन्य स्थापित करके उसके नीचे-नीचे छह प्रक्षेपक, २०
पन्द्रह प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पन्द्रह पिशुलि-पिशुलि, छह चूर्णि, एक चूर्णि-चूर्णि
स्थापित करके जोड़नेपर छठे स्थानका प्रमाण दो लाख पचास हजार होता है । इसी तरह
सब स्थानोंमें ऊपर जघन्य स्थापित करके उसके नीचे-नीचे जितना गच्छका प्रमाण है, उतने
प्रक्षेपक स्थापित करना । जहाँ जिस नम्बरका स्थान हो वहाँ उतना ही गच्छ जानना । जैसे
छठे स्थानमें गच्छका प्रमाण छह होता है । उसके नीचे एक हीन गच्छका एक बार संकलन २५
धनका जितना प्रमाण हो, उतने प्रक्षेपक-प्रक्षेपक स्थापित करना उनके नीचे दो हीन गच्छका
दो बार संकलन धनका जितना प्रमाण हो, उतने पिशुलि स्थापित करने । उनके नीचे तीन
हीन गच्छका तीन बार संकलन धनका जितना प्रमाण हो, उतने पिशुलि-पिशुलि स्थापित
करने । उनके नीचे चार हीन गच्छका चार बार संकलन धनका जितना प्रमाण हो, उतने चूर्णि
स्थापित करने । उनके नीचे पाँच हीन गच्छका पाँच बार संकलन धनका जितना प्रमाण हो, ३०
उतने चूर्णि-चूर्णि स्थापित करना । इसी तरह नीचे-नीचे छह आदि हीन गच्छका छह
आदि बार संकलन धनका जितना-जितना प्रमाण हो, उतने द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णि स्थापित
करना । इस तरह स्थापित करके जोड़नेपर पर्याय समास ज्ञानके भेदोंका प्रमाण आता है ।
यहाँ जो एक बार-दो बार आदि संकलन धन कहे हैं, उनका विधान कहते हैं ।

षड्भूषोनादिगच्छेय षड्वारसंकलनादिधनप्रमितंगळप्पुवेदु षड्भूषोनसूच्यंगुलासंख्यातभागादिवार-
संकलनधनमात्रंगळं केळगेकेळगे स्थापिसुत्तं पोणि सर्वाधस्तनद्विचरम चूर्णिचूर्णिगळु द्विरूपोन-
गच्छोनगच्छद्विरूपोनगच्छोनगच्छवारसंकलनधन प्रमितंगळप्पुवेदु द्विरूपोनसूच्यंगुलासंख्यात-
भागोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय द्विरूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागवारसंकलनधनमात्रंगळं

५ स्थापिसुवु ज २ । ३ । ४ । ००० । २-३ । २-२ । २-२ दुवनपवत्तिसि ज २ २ यवर केळगे
१६ २ २ २ २ २ ३ १००० ० ० ० ३ ० २ ० १ १६ ० ०

रूपोनगच्छोनगच्छरूपोनगच्छमात्रवार संकलनधनमात्र तच्चरमचूर्णिचूर्णिगळुदरिदं रूपोनसूच्यं-
गुलासंख्यातभागोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय रूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रवारसंकलनधन-
प्रमितं ज । १ । २ । ३ । ००० । २-२ । २-१ । २ अपवत्तितमनिदं ज । १ स्थापिसुवुदु
१६ २ । २ । २-१ । २-२ । ००० ० ३-० २ । ० १ १६ । २
० ० ० ० ० ०

परमार्थरूपदिदं चरमचूर्णिचूर्णिगे संकलितमे घटिसदेकेदोडे द्वितीयादिस्थानाभावमप्पुदरिदं ।
१० इल्लि षट्स्थानप्रकरणदोळनंतभागवृद्धियुक्तपर्यायसमासजघन्यादिज्ञानविकल्पंगळोळु सर्वत्र
स्थापिसिद प्रक्षेपकंगळु गच्छमात्रंगळप्पुवेदु कारणदिदं सुगमंगळु । प्रक्षेपकप्रक्षेपकादिगळ प्रमाण-
नरिवल्लिगे करणसूत्रमिदु ।

धनमात्रान् न्यस्येत् । एवं तदधस्तनाधस्तनचूर्णिचूर्णयः षड्भूषोनादिगच्छस्य षड्वारादिसंकलनधनप्रमिताः
सन्तीति षड्भूषोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागादिगच्छानां षड्भूषोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागादिवारसंकलनधनमात्रान्
१५ अधोऽधो विन्यस्यन् गत्वा सर्वाधस्तनद्विचरमचूर्णिचूर्णयः द्विरूपोनगच्छोनगच्छस्य द्विरूपोनगच्छवारसंकलनधन-
प्रमिताः सन्तीति द्विरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागगच्छस्य द्विरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभाग-
वारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत्—

ज २ ३ ४ १००० । २-३ २-२ २-१ २
१६ २-१ २-१ २-२ २-३ १००० । ० १ ४ ० १ ३ ० १ २ २ । १
० ० ० ० ०

ज २
अपवत्तिते एवं—१६ २-१ ० तदधो रूपोनगच्छोनगच्छस्य रूपोनगच्छमात्रवारसंकलनधनमात्राः तच्चरम-

२० चूर्णिचूर्णयः सन्तीति रूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागगच्छस्य रूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यात-
भागमात्रवारसंकलनधनप्रमितं—

ज १ २ ३ ४ ००० २ । ३ । २-२ । २-१ । २
१६ २ २ २-१ २-२ २-३ १००० ० ४ । ० ३ । ० २ । ० १
० ० ० ० ०

ज १
अपवत्तितमिदं—१६ २ स्थापयेत् । परमार्थतः चरमचूर्णिचूर्णेः संकलितमेव न घटेत द्वितीयादिस्थाना-

भावात् । अत्र षट्स्थानप्रकरणे अनन्तभागवृद्धियुक्तविकल्पेषु सर्वत्र प्रक्षेपकाः गच्छमात्राः सन्तीति सुगमाः ।

इस षट्स्थान प्रकरणमें अनन्त भागवृद्धि युक्त विकल्पोंमें सर्वत्र प्रक्षेपक गच्छ प्रमाण
२५ होते हैं, इसलिए वे सुगम हैं । प्रक्षेपक-प्रक्षेपक आदिका प्रमाण लानेके लिए करणसूत्र इस

व्येकपदोत्तरघातः सरूपवारोद्धृतो मुखेन युतः ।

रूपाधिकवारांताप्रपदाद्यंकैर्हंतो वित्तम् ॥

एदितु पद्यसमास ज्ञानविकल्पगणोऽनु विवक्षितषष्ठविकल्पदोऽनु चतुर्वार संकलन-
धनानयनदोऽनु व्येकपद विगतमेकेन व्येकं । तच्च तत्पदं च व्येकपदं । अत्र चतुरूपोनगच्छ एव
६ । ४ पदं २ । तत्र एकस्मिन्नपनीते २—१ एवं । तेनोत्तरघातः । एकवारादिसंकलनमाश्रित्यैवो- ५
त्पत्तिसंभवाद्येकाद्येकोत्तरत्वादुत्तरघातः कर्तव्यः । १ । १ । सरूपवारोद्धृतः रूपेण सहितः सरूपः ।

स चासौ वारश्च सरूपवार ४ स्तेनोद्धृतो भक्तः । १ ० १ । मुखेन युतः मुखमादिस्तेन युतः

१

४

समच्छेदो कृत्य युते एवं ६ पुनः रूपाधिकवारांताप्रपदाद्यंकैर्हंतः । रूपाधिकवारावसान १ । हार

५

४

विकल्पै ४ । ३ । २ । १ । राप्रभक्तपदाद्यंकैः । पदं गच्छ आदिष्वेषां ते पदादयस्ते च ते अंकाश्च
तैर्हंतः ६ । २ । ३ । ४ । ५ अपवर्तितं वित्तं धनं भवति एदितो सूत्रादिदं तरत्पट्ट विवक्षितषष्ठ- १०
५ । ४ । ३ । २ । १

विकल्पदोऽनु चतुर्वारसंकलनधनमारवकु । ६ । इते सर्वत्र समस्तवारसंकलनधनंगणं विवक्षितंगणं
तंदुको बुद्धु ।

प्रक्षेपकप्रक्षेपकादीनां प्रमाणानयने करणसूत्रमिदं—

व्येकपदोत्तरघातः सरूपवारोद्धृतो मुखेन युतः ।

रूपाधिकवारान्ताप्रपदाद्यंकैर्हंतो वित्तम् ॥

१५

तत्र षष्ठं विकल्पं विवक्षितं कृत्वा चूर्णीनां चतुर्वारसंकलितधनमानीयते । तत्र पदं चतुरूपोनगच्छ ६—४
मात्रं २ । व्येकं एकरहितं २—१ अस्य उत्तरेण घातः एकवारादिसंकलनरचनामाश्रित्यैव द्विकवारादिसंकलन-
रचनोत्पत्तेः सर्वत्रादिः उत्तरश्चैकैकः इत्येकेन घातः कर्तव्यः १ । १ । गुणिते एवं १, सरूपवारोद्धृतः

१

रूपाधिकवार ४ । भक्तः ४ । मुखमादिः १ तेन समच्छेदेन ५ सहितः ५ रूपाधिकवारान्ताप्रपदाद्य-

२ ३ ४ ५

६ २ ३ ४ ५

ङ्कैर्हंतः एकरूपप्रभृतिवारावसानहारभक्तपदाद्यङ्कैः ४ ३ २ १ हतः गुणितः ५ ४ ३ २ १ २०
अपवर्तितः ६ वित्तं षष्ठविकल्पचूर्णिधनं भवति, एवमेव सर्वत्र समस्तवारसंकलनधनानि विवक्षितान्यन्यानि

प्रकार है—उसे उदाहरण द्वारा स्पष्ट करनेके लिए छठे विकल्पको विवक्षित करके चूर्णियोंका
चार बार संकलित धन लाते हैं—यहाँ पद चार हीन गच्छ ६—४=मात्र २ है । उसमें एक
घटानेपर २—१=एक शेष रहता है । इसको उत्तरसे गुणा करना चाहिए । सो एक बार
आदि संकलन धन रचनाकी अपेक्षा ही दो बार आदि संकलनकी रचना उत्पन्न होती है । २५
सर्वत्र आदि और उत्तर एक-एक है, अतः उसे एकसे गुणा करने पर १×१=एक ही रहा ।
इसका यहाँ चार बार संकलन कहा है सो चारमें एक मिलानेपर पाँच हुआ । उसका भाग
देनेपर एकका पाँचवाँ भाग हुआ । इसमें मुख जो आदि, उसका प्रमाण एक, सो समच्छेद
करके मिलानेपर छहका पाँचवाँ भाग हुआ । यहाँ चार बार कहा है सो एकसे लेकर एक-एक

१. म चतुर्थवार ।

३०

www.jainelibrary.org

मत्तं केशण्णंगळु तम्मभिप्रायदि तरत्तपडुव विशेषकरणगाथासूत्रद्वयं :—

तिरियपदे रूऊणे तदिट्टुहेट्टिल्ल संकलणवारा ।

कोट्टुधणस्साणयणे पभवं इट्टूणिडुड्डपदसंखा ॥

तिरियपदे रूपोने तदिष्टाधनस्तनसंकलनवारा । भवंति कोष्ठधनस्यानयने प्रभवः इष्टोन्तितो-
ध्वंपदसंख्या ॥

५

तत्तो रूवहियकमे गुणगारा होंति उड्डगच्छोत्ति ।

इगिरूवमादिरूउत्तरहारा होंति पभवोत्ति ॥

ततो रूपाधिकक्रमेण गुणकारा भवंत्यूध्वगच्छपथ्यंतं । एकरूपादिरूपोत्तरहारा भवंति
प्रभवपथ्यंतं ।

इल्लिष्टमप्पुदावुदानुमोडु तिरियपददोळ् ६ रूपोनमागुत्तिरलु ६ तत्तत्पदप्रमाणं इष्टाध- १०
स्तनसंकलनवारा भवंति । आ तिरियगच्छेदद केळगे प्रक्षेपकोनैकवारसंकलनादिसध्वंसंभवद्वार-

आनयेत् । पुनरेतदेव केशववर्णिभिः स्वाभिप्रायेण आनेतुं गाथाद्वयमुच्यते—

तिरियपदे रूऊणे तदिट्टुहेट्टिल्लसंकलणवारा ।

कोट्टुधणस्साणयणे पभवं इट्टूण उड्डपदसंखा ॥१॥

तिरियपदे अनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानेषु यद्विवक्षितं स्यान् तत् तिरियपदं ६, तस्मिन् रूऊणे रूपोने १५

कृते ६ तदिट्टुहेट्टिल्लसंकलणवारा तदिष्टपदे प्रक्षेपकादधस्तनकोष्ठेषु प्रतिकोष्ठमेकैकं संकलनमिति संभवतां
क्रमेणैकवारद्विवारादिसंकलनानां संख्या भवति ५ ॥ तत्र इष्टस्य 'कोट्टुधणस्स' चतुर्वारसंकलनधनगतकोष्ठधनस्य
आणयणे आनयने 'इट्टूणउड्डपदसंखा' तदिष्टसंकलनवारस्य प्रमाणेन ४ न्यूनोध्वपदं-६-४ पभवो आदि-
भवति ॥२॥

तत्तो रूवहियकमे गुणगारा होंति उड्डगच्छोत्ति ।

२०

इगिरूवमादिरूउत्तरहारा होंति पभवोत्ति ॥२॥

ततो तमादि २ मादि कृत्वा रूवहियकमे रूपाधिकक्रमेण गुणगारा गुणकारा अनुलोमगत्या होंति—

बढ़ते हुए चार पर्यन्त अंक रखकर $1 \times 2 \times 3 \times 4$ परस्परमें गुणा करनेपर २४ हुए । यह
भागहार हुआ । और गच्छ दो के प्रमाणसे लेकर एक-एक बढ़ता अंक रखकर $2 \times 3 \times 4 \times 5$
परस्पर गुणा करनेपर १२० भाज्य हुआ । सो भाज्य १२० में भागहार २४ से भाग देनेपर २५
लब्ध पाँच आया । इस पाँचसे पूर्वोक्त छहके पाँचवें भागको गुणा करनेपर पाँच रहे । यही
दो का चार बार संकलन धन होता है । इसी तरह तीनका तीन बार संकलन धन लाना हो,
तो गच्छ तीनमें एक कम करके दो शेष रहे । उसे उत्तर एकसे गुणा करनेपर भी दो ही हुए ।
यहाँ तीन बार संकलन है । अतः उसमें एक अधिक बार चारका भाग देनेपर आधा रहा ।
उसमें मुख एक जोड़नेपर डेढ़ हुआ । यहाँ तीन बार कहा है, अतः एकसे लेकर एक-एक बढ़ते ३०
तीन पर्यन्त अंक रखकर $1 \times 2 \times 3 =$ परस्परमें गुणा करनेपर भागहार छह हुआ । और
गच्छको आदि लेकर एक-एक अधिक अंक रख $3 \times 4 \times 5$ परस्परमें गुणा करनेपर भाज्य
साठ हुआ । भाज्य साठमें भागहार छहसे भाग देनेपर दस पाये । इस दससे पूर्वोक्त डेढ़को
गुणा करनेपर छठे भेदमें तीन कम गच्छका तीन बार संकलन धनमात्र पन्द्रह पिशुलि-पिशुलि
होती हैं । इसी तरह सर्वत्र विवक्षित संकलित धन लाना चाहिये । ३५

संकलनवारंगल प्रमाणमक्कुमल्लि कोष्ठधनस्यानयने विवक्षित ४ चतुर्वारसंकलनधनमंतप्पल्लि । प्रभवः आदि ये तुंठक्कुमेदोडे इष्टोनितोर्ध्वपदसंख्या स्यात् । तन्न विवक्षितसंकलनवारप्रमाणमं नाल्कं कळदुळिद्विध्वपदप्रमाणमेतुंठुदु प्रभवमक्कुमेदिल्लि ऊर्ध्वगच्छमु मूरप्पुववरोळु नाल्कं कळदुळिद द्विरूपगळु प्रभवमे बुदर्थं ।

१ ततो रूपाधिक क्रमेण तदादिभूतप्रभवभूत द्विरूपं मोदलोडु मुंदे रूपाधिकक्रमदिदं गुणकारा भवत्पूध्वगच्छपर्यंतं अनुलोमक्रमदि गुणकारंगळप्पु ऊर्ध्वगच्छप्रमाणांकके नेवरमुत्पत्तियक्कु-मन्नेवरं ज २ । ३ । ४ । ५ । ६ ई गुणकारंगळगे कळगे एकरूपादि रूपोत्तरहाराः भवन्ति एक-
१६ । ५

रूपादिरूपोत्तरमप्प भागहारंगळु विलोमक्रमदिदमप्पुवु । प्रभवपर्यंतं मेलण गुणकारभूतप्रभवांक-भाद्यंकमवसानमन्नेवरमन्नेवरं ज ३ । ४ । ५ । ६ कळगे अपवत्तितलब्धं चतुर्वारसंकलन-
१६ । ५ । ४ । ३ । २ । १

१० धनमक्कु ज ६ इतनंतभागवृद्धियुक्तचरमज्ञानविकल्पद तिर्यक्पदे
१६ १६ १६ १६ १६

तिर्यग्गच्छदोळु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रगच्छदोळु २ रूपोने २ एकरूपोनमादोडे तत्
० ०

भवन्ति उड्डगच्छोत्ति ऊर्ध्वगच्छाङ्कोत्पत्तिपर्यन्तं-ज २ ३ ४ ५ ६ तेषां गुणकाराणां अधः हारा भागहाराः
१६ ५

इगिरूवमादि एकरूपादयः रुउत्तरा-रूपोत्तरा होंति भवन्ति विलोमक्रमेण रूपाधिकेष्टवारस्थानेषु पभवोत्ति प्रभवाङ्कपर्यन्तं ज २ ३ ४ ५ ६ अपवत्तिते लब्धं चतुर्वारसंकलनधनं भवति—
१६ १६ १६ १६ १६ ५ ४ ३ २ १

१५ ज ६ एवमनन्तभागवृद्धियुक्तचरमविकल्पे तिर्यक्पदं सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्रं २
१६ १६ १६ १६ १६ ०

इस संकलित धनको अपने अभिप्रायके अनुसार लानेके लिए केशववर्णीने दो गाथाएँ कही हैं । उनका अर्थ उदाहरण पूर्वक कहते हैं—अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें जो विवक्षित स्थान है, वह तिर्यक् पद है । जैसे छठा स्थान तिर्यक्पद है । उसमें एक घटानेपर उसके नीचे पाँच संकलन बार होते हैं । प्रक्षेपकके नीचे कोठोंमें-से प्रत्येकमें क्रमसे एक बार, दो बार आदि सम्भव संकलनोंकी संख्या होती है । यहाँ इष्ट चार बार संकलन धन गत कोठेके धनको लानेके लिए इष्ट संकलन बारके प्रमाण ४ को ऊर्ध्वपद ६ में कम करनेपर ६ - ४ = २ आदि होता है । इस आदि दोसे लगाकर एक-एक अधिकके क्रमसे ऊर्ध्व गच्छ छह पर्यन्त गुणकार होते हैं यथा २, ३, ४, ५, ६ । इन गुणकारोंके नीचे भागहार एक रूप आदि एक अधिक बढ़ते हुए उल्टे क्रमसे होते हैं । सो यहाँ चार बार संकलनके कोठेमें चूर्णि है । जघन्यमें पाँच बार अनन्तका भाग देनेसे जो प्रमाण आता है, उतना चूर्णिका प्रमाण है । इस प्रमाणके गुणकार क्रमसे दो, तीन, चार, पाँच, छह हैं और पाँच, चार, तीन, दो एक भागहार हैं । गुणकारसे चूर्णिके प्रमाणको गुणा करके भागहारोंका भाग देनेपर यथायोग्य अपवर्तन करने-पर छह गुणित चूर्णि मात्र प्रमाण आता है । इसका आशय यह है जो १६, १६, १६, १६, १६ यह चूर्णिका प्रमाण है । 'ज' अर्थात् जघन्य पर्याय ज्ञानमें १६ अर्थात् अनन्तका पाँच बार

३० १. मंणांकमेन्नेवरं ।

तत्पदप्रमाणं । इदुहेदुल्लसंकलनवारा इष्टाधस्तनसंकलनवाराः तन्न विवक्षित तिर्यग्गच्छद केळगे

केळगे संभविमुव प्रक्षेपकोनैकवारसंकलन आदिसर्व्ववारसंकलनगळ प्रमाणमक्कु २ मवरोळु

कोष्ठधनस्यानयने विवक्षित ४ चतुर्व्वारसंकलनधनमंतप्पल्लि प्रभवः आदि ये तुटक्कुमे दोडे इष्टो-
नितोर्ध्वपदसंख्या स्यात् तन्न विवक्षितसंकलनवारप्रमाणमं नाल्कं कळेदुळ्ळिदूर्ध्वपदप्रमाणमक्कु
२४ मिल्लियूर्ध्वगच्छमुं सर्वाधस्तनचूर्णिचूर्णियागि प्रक्षेपकाख्यपर्यायावसानमप्प स्थानगळुं ५

सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रमेयक्कु २ मवरोळातन्निष्टवारसंकलनांकं नाल्कं कळेदुळ्ळिद शेषप्रमाण-

मादियक्कुमेबुदर्थं ज २-४ ततो रूपाधिकक्रमेण ई यादिस्थानं मोदलोडु मुंदे रूपाधिक
१६।५।०

क्रमदिदं गुणकारा भवत्यूर्ध्वगच्छपथ्यंतं अनुलोमदि गुणकारंगळप्पुवूर्ध्वगच्छप्रमाणांकक्केन्नेवर-

मुत्पत्तिक्कुमन्नेवरं ज २-४।२-३।२-२।२-१।२ ई गुणकारंगळगे एकरूपादि रूपोत्तर-
१६।५।०० ० ० ०

तस्मिन् रूपोने २ अवशिष्टं तदिष्टाधस्तनसंकलनवारा भवन्ति २ तेषु मध्ये विवक्षितस्य चतुर्व्वारसंकलन- १०

गतकोष्ठधनस्यानयने तद्वारप्रमाणे ४ ऊर्ध्वपदे २ अपनीते २-४ शेषप्रमाणमादिर्भवति ज २-४ ततः
१६५०

तमादिमादि कृत्वा अग्रे रूपाधिकक्रमेण गुणकारा भवन्ति ऊर्ध्वगच्छप्रमाणं यावदुत्पद्यते तावत् ज
१६।५

२-४।२-३।२-२।२-१।२ एषां गुणाकाराणामधः एकाद्येकोत्तरा आदिपर्यन्तं विलोमक्रमेण भागहारा
० ० ० १० ०

भाग देनेसे आता है । भागहार और गुणकार इस प्रकार है— २, ३, ४, ५, ६ । यहाँ दो
५, ४, ३, २, १

तीन, चार पाँच का तो अपवर्तन हो गया । दोसे दो, तीनसे तीन, चारसे चार और पाँचसे १५
पाँच अपवर्तित हो गये । छह और भागहार एक शेष रहा । सो छहगुना चूर्णिमात्र प्रमाण
रहा । इसी प्रकार अनन्तभाग वृद्धि युक्त अन्तिम विकल्पमें वह स्थान सूच्यंगुलके असंख्यातवें
भागका जितना प्रमाण है, उतनेका है, इसलिए तिर्यग् गच्छ सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग मात्र
है । उसमें-से एक घटानेपर जो अवशेष है, उतना अधस्तन संकलनके बार हैं । उनमें-से
विवक्षित चार बार संकलन गत कोठाका धन लानेके लिए विवक्षित संकलन बारके प्रमाण २०
चारमें ऊर्ध्वगच्छ सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्रमें-से घटानेपर जो अवशेष रहता है, वह
आदि है । उसको आदि करके एक-एक बढ़ते क्रमसे ऊर्ध्वगच्छ सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग
पर्यन्त तो गुणकार होता है । और इन गुणकारोंके नीचे उल्टे क्रमसे एकको आदि लेकर एक-
एक बढ़ते हुए पाँच पर्यन्त भागहार होता है । यहाँ गुणकार और भागहार समान नहीं है,

१. ब रूपोने २ अवशिष्टं भवन्ति २ तेषु मध्ये ।

२५

हाराः एकरूपमादियाणि रूपोत्तरमप्य भागहारंगळु विलोमक्रमदि भवति प्रभवपर्यंतं आदिभूत-
रूपचतुष्टयोनसूच्यंगुलासंख्यातमागावसानमप्य गुणकारं गलकैल्लगेयप्युवु :—

ज २-४। २-३। २-२। २-१। २ इल्लि विषमपवर्तनमप्युदरिदमनपवर्तितमिते
१६। १६। १६। १६। १६। ०५। ०४। ०३। ०२। ०१

यिसतिक्कुमेके दोडे तल्लब्धमवधिज्ञानविषयमप्युदरिदं ।

५ इल्लिये चरमविकल्पदोळु ई प्रकारदिदं विवक्षितद्विचरमचूर्णिचूर्णि द्विरूपोनसूच्यंगुला-
संख्यातभागवारसंकलनधनं तरतरल्पडुगुमदे ते दोडे तिर्यक्पदे रूपोने सति रूपहीनमादोडिदु

२ तदिष्टाधस्तनसंकलनवाराः तद्विवक्षितेष्टाधस्तनसंकलनसमस्तवारसंख्येयक्कु कोष्ठधनस्या-
नयने तन्निष्टावारसंकलनधनमंतप्यल्लि प्रभवः आदिय प्रमाणमेतुदे दोडे इष्टोनितीध्वपदसंख्या
स्यात् तन्न विवक्षितवारसंकलनप्रमाणं २-२ कळिदुळिदूध्वपदप्रमाणं प्रभवमक्कुमेदूध्वपदं

१० सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रमदरोळकळेदोडे शेषं द्विरूपमादियक्कुमे बुदत्थं ।

ततो रूपाधिकक्रमेण तदादिभूतद्विरूपं मोदल्गोडु मुंदे रूपाधिकक्रमदिदं गुणकारा भवत्यू-
र्ध्वगच्छपर्यंतं अनुलोमक्रमदि गुणकारंगळूध्वगच्छप्रमाणांकोत्पत्तिपर्यवसानमागियप्यु-

भवन्ति— ज २-४। २-३। २-२। २-१। २ अत्र विषममपवर्तनमस्ती-
१६। १६। १६। १६। १६। ०५। ०४। ०३। ०२। ०१

त्यनपवर्तितमेव अवतिष्ठते तल्लब्धस्य अवधिज्ञानविषयत्वात् । पुनस्तच्चरमविकल्पे विवक्षितद्विचरमचूर्णिचूर्णे-

१५ द्विरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागवारसंकलनधनमानीयते, तद्यथा—तिर्यक्पदे २ रूपोने सति २ तदिष्टाधस्तन-
संकलनसमस्तवारसंख्या भवति निजेष्टावारसंकलनधनानयने तद्वारसंकलनप्रमाणेन २-२ ऊनोर्ध्वपदं २
आदिः २ । ततस्तमादि कृत्वा अग्रे रूपाधिकक्रमेण अनुलोमगत्या गुणकारा ऊर्ध्वगच्छप्रमाणांकोत्पत्तिपर्यन्तं

अतः अपवर्तनं हुए बिना तदवस्थ रहता है । यहाँ जो लब्ध राशि होती है, वह अवधिज्ञान-
का विषय है । पुनः अनन्त भाग वृद्धिसे युक्त उसके अन्तिम विकल्पमें विवक्षित उपान्त्य

२० चूर्णि-चूर्णिके दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यात भाग बार संकलन धनका प्रमाण लाते हैं जो इस
प्रकार है—यहाँ भी तिर्यग्गच्छ सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग मात्र है । उसमें एक घटानेपर
इष्ट अधस्तन संकलनके समस्त बारोंकी संख्या होती है । उनका संकलन धन लानेके लिए
विवक्षित संकलन बार दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र है । उसे ऊर्ध्वगच्छ
सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमें-से घटानेपर दो शेष रहे वह आदि, इससे लेकर आगे एक-एक
२५ बढ़ते क्रमसे ऊर्ध्वगच्छ पर्यन्त गुणकार होते हैं । और एकसे लेकर आगे एक-एक बढ़ते हुए
अपने इष्ट बारके प्रमाणसे एक अधिक पर्यन्त विपरीत क्रमसे भागहार होते हैं । यहाँ दो आदि
एक हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग पर्यन्त गुणकार और भागहारके अंक समान हैं । अतः

ज १ २ ३ ४ १ ००० १ २-३ १ २-२ १ २-२ वी गुणकारंगळ केळगे एकरूपादिरूपोत्तरहाराः

१६ २

a a a

एकरूपादिरूपोत्तरमप्य हारंगळु विलोमक्रमदि रूपाधिकेष्टवारसंकलनांकपर्ययवसानमाणि भवन्ति प्रभवपर्ययंतं । तदादिभूतगुणकारद्विरूपावसानमागियप्नुवुः—

ज १ २ ३ ४ १ ००००२-३ १ २-२ २ २

इल्लि समापवर्तनमुटप्पुदरिदमवर्तितमिदु

१६ २

२ २-२ २-३ १ ०००० a ४ a ३ १ a २ १

ज a a चरम चूर्णिचूर्णिगे संकलितमिल्ल द्वितीयादिस्थानाभावादिदं । सूच्यंगुलासंख्यात- ५

१६

a

भागमात्रवारानन्तभक्तजघन्यप्रमितमवकुं ज १ १ इतनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुला- १६ १ २

a

भवन्ति— ज १ २ ३ ४ १ ००० १ २-३ १ २-२ १ २-१ १ २ एषामधः रूपादिरूपोत्तरा १६ २ १ a a a a

हाराः विलोमक्रमेण रूपाधिकेष्टवारसंकलनाङ्कावसाना भवन्ति प्रभवपर्ययंतं—

ज १ २ ३ ४ १ ००० २-३ २-२ २-१ २ अत्र समानापवर्तनमस्तीति अप- १६ २ २ २-२ २-३ ००० a ४ a ३ a २ a १

a a a a

वर्तिते एवं— ज २ चरमचूर्णिचूर्णेः संकलितं नास्ति १ द्वितीयादिस्थानाभावात् । सूच्यङ्गुलासंख्यात- १६ २ १ a २ १ a

१०

भागमात्रवारानन्तभक्तजघन्यप्रमितं स्यात् ज १ एवमनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभाग- १६ २ a

उनका अपवर्तन करनेपर शेष सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागका गुणकार और एकका भागहार रहता है । इस कोठेमें उपान्त्य चूर्णि-चूर्णि है, उसका प्रमाण जघन्यको सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र बार भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उतना जानना । इसको पूर्वोक्त गुणकारसे गुणा करनेपर और एकसे भाग देनेपर जो प्रमाण आता है, वह उस कोठा सम्बन्धी प्रमाण है । १५ अन्तिम चूर्णि चूर्णिमें संकलन नहीं है; क्योंकि उसके दूसरे आदि स्थान न होनेसे वह एक ही है । सो जघन्यको सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र बार अनन्तसे भाग देनेपर अन्तिम चूर्णि-चूर्णिका प्रमाण होता है । उसमें एकसे गुणा करनेपर भी उतना ही उस कोठेमें वृद्धिका प्रमाण जानना । इस प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान

१. ब द्वितीयादिस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा ।

२०

संख्यातभागमात्रंगळु सलुत्तमिरलु वो'दसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुं ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ इल्लियुव्वंकंमं $\equiv a$
 चतुरंकदिद भागिसि तदेकभागमनल्लिये कूडिदप्पुदरिदं जघन्यं साधिकमक्कुं मुंदेलावृद्धिगळुग
 मी क्रममेयक्कुं तंतम्म पे'रगणुव्वंकंगळं भागिसिद भागवृद्धिगळुं गुणिसिद गुणवृद्धिगळुमरियल्पडुगं ।
 मत्तं मुन्निनंतान्तभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळु सलुत्तं विरलु मत्तमो'द-

५ संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुं ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ मी क्रमदिदमसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु $\equiv a$ $\equiv a$
 सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळु सलुत्तं विरलु मत्तमनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यात-
 भागमात्रंगळु सलुत्तं विरलु ओ'दु संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानमक्कुं ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv १५ \end{smallmatrix}$ मुंदे मत्तं मुन्निनंत-
 १५

मात्राणि नीत्वा एकं असंख्यातभागवृद्धियुक्तं स्थानं भवति ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ । अत्र उर्वकं चतुरङ्केन भक्त्वा तदेकभागः $\equiv a$
 तत्रैव युतोऽस्तीति जघन्यं साधिकं भवति । अग्रेऽपि सर्ववृद्धीनां अयमेव क्रमो भवति । स्वस्वप्राक्तनोर्वकं
 १० भवत्वा तदेकभागवृद्धिरवगन्तव्या । पुनः प्राग्बदनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि
 नीत्वा पुनरपरमसंख्यातभागवृद्धियुक्तं स्थानं भवति ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv a \end{smallmatrix}$ अनेन क्रमेण असंख्यातभागवृद्धियुक्त-
 $\equiv a \equiv a$
 स्थानान्यपि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा पुनरनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभाग-
 मात्राणि नीत्वा एकं संख्यातभागवृद्धियुक्तं स्थानं भवति ज $\begin{smallmatrix} \text{---} \\ \equiv १५ \end{smallmatrix}$ । पुनः पूर्वबदनन्तभागासंख्यातभागवृद्धि-
 १५

होनेपर एक असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान होता है । यहाँ ऊर्ध्वक जो अनन्त भाग
 १५ वृद्धि युक्त अन्तिम स्थान है, उसमें चतुरंकसे भाग देनेपर जो एक भागका प्रमाण आवे;
 उसे उसीमें जोड़ा, सो यहाँ जघन्य ज्ञान साधिक होता है । आगे भी सब वृद्धियोंका
 यही क्रम होता है । अपने-अपनेसे पूर्वके ऊर्ध्वकमें भाग देनेपर जो एक भाग आवे,
 उतनी वृद्धि जानना । पुनः पूर्वकी तरह सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र अनन्त भाग
 वृद्धि युक्त स्थानोंके बीतने पर पुनः आगेका असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान होता है ।
 २० इस क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान बिताकर
 पुनः सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनन्त भाग वृद्धिसे युक्त स्थान बिताकर एक
 संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान होता है । पुनः पूर्ववत् प्रत्येक अनन्त भाग वृद्धि युक्त
 तथा असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थानोंके सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होनेपर तथा पुनः
 सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान होनेपर पुनः एक संख्यात
 २५ भाग वृद्धि युक्त स्थान होता है । इसी क्रमसे संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान भी सूच्यंगुलके
 असंख्यातवें भाग मात्र होनेपर आगे पूर्ववत् सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र अनन्त भाग

नंतभागासंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु प्रत्येकं सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळावर्तिसि मुंदे मत्तम-
नंतवृद्धियुक्तस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळु सलुत्तं विरलु मत्तमो'दु संख्यातभागवृद्धि-

युक्तस्थानं पुट्टुगु ज १५।१५ मो क्रमदिदमो संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु संख्यातगुण-
१५।१५

वृद्धियुक्तस्थानंगळुमसंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळु यथाक्रमावस्थितरूपसूच्यंगुलासंख्यातभागमात्र-
वारंगळु संदु संदु मत्तं मुंदे अनंतभाग असंख्यातभागसंख्यातभागसंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळु ५
प्रत्येकं कांडक कांडक प्रमितंगळु संदु संदु मत्तं मुंदे अनंताऽऽसंख्यातसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानं-
गळु प्रत्येकं कांडककांडकप्रमितंगळु संदु संदु मत्तं मुंदे, अनंतासंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळु
प्रत्येकं कांडककांडकप्रमितंगळु नडेनडेदु मुंदे मत्तमनंतभागवृद्धियुक्तस्थानंगळे सूच्यंगुलासंख्यात-

युक्तस्थानानि प्रत्येकं सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि आवर्त्य पुनरनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुला-

संख्यातभागमात्राणि नीत्वा पुनरेकं संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानं ज १५।१५ अनेन क्रमेण संख्यातभाग- १०
१५।१५

वृद्धियुक्तस्थानान्यपि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा । अग्रे प्राग्वदनन्तभागासंख्यातभागवृद्धियुक्त-
स्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा पुनरनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभाग-
मात्राणि नीत्वा एकं संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानं भवति । एवं संख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानान्यपि सूच्यङ्गुला-
संख्यातभागमात्राणि नीत्वा पुनः अनन्तभागासंख्यातभागसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानानि प्राग्वत्सूच्यङ्गुला-
संख्यातभागमात्राणि नीत्वा पुनरनन्तभागासंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानानि पूर्ववत्सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि १५
नीत्वा (पुनरनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानानि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा) एकमसंख्यातगुणवृद्धियुक्तं
स्थानं भवति । एवमसंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानान्यपि सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्राणि नीत्वा अग्रे अनन्तभागा-
संख्यातभागसंख्यातभागसंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानानि प्रत्येकं काण्डककाण्डकप्रमितानि नीत्वा पुनरनन्तासंख्यात-

वृद्धि युक्त और असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थानोंको करके पुनः सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग
मात्र अनन्त भाग वृद्धि स्थानोंके होनेपर एक संख्यात गुण वृद्धि युक्त स्थान होता है । इस २०
प्रकार संख्यात गुण वृद्धि युक्त स्थान भी सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र होनेपर पुनः
अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान, असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान और संख्यात भाग वृद्धि
युक्त स्थानोंमें से प्रत्येक पूर्ववत् सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र होनेपर पुनः अनन्त भाग
वृद्धि युक्त असंख्यात भाग वृद्धि युक्त और संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यंगुलके
असंख्यात भाग मात्र होनेपर तथा पुनः अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यंगुलके असंख्यात २५
भाग मात्र होनेपर एक असंख्यात गुण वृद्धि युक्त स्थान होता है । इस प्रकार असंख्यात गुण
वृद्धि युक्त स्थान भी सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र होनेपर आगे अनन्त भाग वृद्धि युक्त,
असंख्यात भाग वृद्धि युक्त तथा संख्यात गुण वृद्धि युक्त स्थानोंमें-से प्रत्येकके सूच्यंगुलके
असंख्यातवें भाग होनेपर पुनः अनन्त भाग वृद्धि युक्त, असंख्यात भाग वृद्धि युक्त, संख्यात
भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें-से प्रत्येकके सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होनेपर पुनः अनन्त ३०
भाग वृद्धि और असंख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें-से प्रत्येकके सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग

१. न कोष्ठान्तर्गत भागो नास्ति । २. सूच्यङ्गुलसंज्ञा ।

भागमात्रंगलु संदु द्वितीयषट्स्थानवकादिभूतमप्पष्टांकमोदु पुट्टुगुमेन्नेवर मन्नेवरेगमो क्रममरि-
यत्पडुगु ।

आदिमल्लुट्टाणम्मि य पंच य वड्ढी हवंति सेसेसु ।

छव्वड्ढीओ होंति हे सरिसा सव्वत्थ पदसंखा ॥३२७॥

- ५ आदिमषट्स्थाने च पंच वृद्धयो भवन्ति शेषेषु । षड्वृद्धयो भवन्ति खलु सदृशी सर्वत्र पद-
संख्या ॥

इत्थिलि संभविमुवंतप्पसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानंगळोलु आदिमषट्स्थाने आदौ भवमादिमं
षण्णां स्थानानां समाहारः षट्स्थानं आदिम षट्स्थानमादिमषट्स्थानं तस्मिन् मोदल षट्स्थानदोळु
पंच वृद्धयो भवन्ति पंचवृद्धिगळेयप्पुवेके दोडे चरमाष्टांकसंज्ञेयनुळ्ळनंतगुणवृद्धियुक्तस्थानवके द्वितीया

- १० षट्स्थानवकादित्व प्रतिपादनविदं शेषेषु शेषद्वितीयादिचरमावसानमाद षट्स्थानंगळोळेल्लमष्टांका-
दियाद षड्वृद्धिगळप्पुवुमंतागुत्तिरलु सदृशी सर्वत्र पदसंख्या ई षट्स्थानंगळोळु संभविमुव स्थान-
विकल्पंगळ संख्यासादृश्यनियमवके निमित्तमप्प सूच्यंगुलासंख्यातभागवकवस्थितस्वरूपमुळुदरिदं ।
समस्तषट्स्थानंगळ स्थानविकल्पंगळ संख्यसमानमेयुक्कुमंतादोडे मोदल षट्स्थानदोळु पंचवृद्धि-
युक्तस्थानंगळप्पुदरितष्टांकमेतु घटियिसुगुमेदोडुत्तरसूत्रेदोळु पेळ्ळदपं :—

- १५ संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानान्यपि प्रत्येकं काण्डककाण्डकप्रमिताति नीत्वा पुनरनन्तभागासंख्यातभागवृद्धियुक्त-
स्थानानि प्रत्येकं काण्डकप्रमितानि नीत्वा पुनरनन्तभागवृद्धियुक्तस्थानान्येव सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्राणि
नीत्वा द्वितीयषट्स्थानस्य आदिभूतमष्टाङ्कसंज्ञं भवति इत्येवं सर्वत्र षट्स्थानपतितवृद्धिक्रमो ज्ञातव्यः ॥३२६॥

अत्र संभवत्सु असंख्यातलोकमात्रेषु षट्स्थानेषु मध्ये आदिमे प्रथमे षट्स्थाने पञ्चैव वृद्धयो भवन्ति,
चरमस्य अष्टाङ्कसंज्ञस्य अनन्तगुणवृद्धियुक्तस्य द्वितीयषट्स्थानस्यादित्वप्रतिपादनात् । शेषेषु द्वितीयादिचरमाव-

- २० सानेषु षट्स्थानेषु सर्वा अष्टाङ्कादयः षड्वृद्धयो भवन्ति । तथासति सदृशी सर्वत्र पदसंख्या एतेषु षट्स्थानेषु
संभवति-स्थानविकल्पसंख्या सदृशा समानैव सादृश्यनियमनिमित्तस्य सूच्यंगुलासंख्यातभागस्य अवस्थित-
स्वरूपत्वात् । तथा सति प्रथमषट्स्थाने पञ्चवृद्धियुक्तस्थानानि संभवन्ति ॥३२७॥ अष्टाङ्कः कथं न घटते इति
चेद्वेतुमाह—

होनेपर पुनः अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होनेपर द्वितीय

- २५ षट्स्थानका आदिभूत अष्टांक होता है । इस प्रकार सर्वत्र षट्स्थानपतित वृद्धि क्रम
जानना ॥३२६॥

जवन्य पर्याय ज्ञानके ऊपर असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान होते हैं, जो पर्याय समास
श्रुतज्ञानके विकल्प हैं । उनमें-से प्रथम षट्स्थानमें पाँच ही वृद्धियाँ होती हैं, क्योंकि अनन्त
गुण वृद्धिसे युक्त जो अष्टांक संज्ञावाला अन्तिम स्थान है, उसे दूसरे षट्स्थानका आदि स्थान

- ३० कहा है । शेष दूसरेसे लेकर अन्तिम पर्यन्त सब षट्स्थानोंमें अष्टांक आदि छहों वृद्धियाँ
होती हैं । ऐसा होनेसे इन षट्स्थानोंमें स्थानके विकल्पोंकी संख्या समान ही है, क्योंकि
सर्वत्र सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग तदवस्थ है, उसमें हीनाधिकता नहीं है । इस तरह प्रथम
षट्स्थानमें पाँच वृद्धि युक्त स्थान ही होते हैं ॥३२७॥

१. म °सूत्रंगल ।

छट्ठाणाणं आदी अट्ठकं होदि चरिममुव्वकं ।

जम्हा जहणणाणं अट्ठकं होदि जिणदिट्ठं ॥३२८॥

षट्स्थानानामादिरष्टांको भवति चरममुव्वकः । यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांको भवति जिनदृष्टः ॥

षट्स्थानवारंगळेनितोळवनितवकमादिस्थानमष्टांकमेयक्कुं चरममुव्वकमेयक्कुमंतागुत्तिरल्लु प्रथमषट्स्थानदोळष्टांकमेतक्कुमेदोडे यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांको भवति जिनदृष्टत्वात् । तस्मात् ५ आवुदोडु जिनदृष्टत्वकारणदिदं जघन्यज्ञानमष्टांकमक्कुमंतागुत्तिरल्लु प्रथमषट्स्थानदोळष्टांकादिकत्वं युक्तमक्कुं । इल्लि षट्स्थानंगळादियष्टांकमवसानमुव्वकमेव नियमं पेळपट्टुदरिदं चरमषट्स्थानंगळादियष्टांकमवसानमुव्वकमुमागुत्तिरल्लि मुंदणष्टांकमदेनक्कुमेदोडत्थाक्षरज्ञानमेदु मुंदे पेळपट्टुदरिदं जघन्यपर्यायज्ञानमादियेदु पेळदागमं निर्वाधबोधविषयमक्कुं ।

ई षट्स्थानंगळगे स्थानसंख्ये समानमेवुदं तोरिदणं :—

१०

एककं खलु अट्ठकं सत्तकं कंडयं तदो हेट्ठा ।

रुवहियकंडेण य गुणिदकमा जाव मुव्वकं ॥३२९॥

एकः खल्वष्टांकः सप्तांकः कांडकं ततोऽधो रूपाधिककांडकेन गुणितक्रमा यावदुव्वकः ॥

षट्स्थानवाराणां सर्वेषामादिः प्रथमस्थानमष्टाङ्कमेव अनन्तगुणवृद्धिस्थानमेव भवति तेषां चरमस्थानमुव्वकमेव अनन्तभागवृद्धिस्थानमेव भवति । तर्हि प्रथमस्थानस्य अष्टाङ्कत्वं कथं ? इति तन्न, यस्मात् कारणात् १५ तज्जघन्यं ज्ञानं पर्यायाख्यं पूर्वस्मादेकजीवागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदानां वर्गस्थानादनन्तगुणत्वेन अष्टाङ्कं भवतीति जिनैः अर्हदादिभिः दिष्टं कथितं दृष्टं वा, तस्मात् कारणात् प्रथमषट्स्थानेऽपि अष्टाङ्कादित्वं युक्तम् । अत्र षट्स्थानानामादिः अष्टाङ्कः, अवसानं उव्वकः इति नियम उक्तोऽस्तीति । चरमषट्स्थानेऽपि आदौ अष्टाङ्के अवसाने उव्वके च सति तदग्रतनोऽष्टाङ्कः कीदृगस्ति ? इति चेत् अर्थाक्षरज्ञानरूपो भवति तथैव अग्रे वक्ष्यमाणत्वात् । तदेवं जघन्यपर्यायज्ञानमादिः इत्युक्तागमो निर्वाधबोधविषयः ॥३२८॥ एषां २० षट्स्थानानां संख्या समानेति दर्शयति—

षट्स्थान पतित वृद्धिरूप सब स्थानोमें प्रथम स्थान अष्टांक अर्थात् अनन्तगुण वृद्धि रूप स्थान ही होता है । वही आदि स्थान है । तथा उनका अन्तिम स्थान उव्वक अर्थात् अनन्तभागवृद्धि युक्त स्थान ही होता है । तब प्रथम स्थानमें अष्टांक कैसे रहा ? इसका समाधान यह है वह जो पर्याय नामक जघन्य ज्ञान है, इस जघन्य ज्ञानसे पहला ज्ञान स्थान एक २५ जीवके अगुरुलघु गुणके अविभाग प्रतिच्छेद प्रमाण है, उससे अनन्त गुणा जघन्य ज्ञान है । इसलिए जिनदेवने अष्टांक रूप देखा है । इस कारणसे प्रथम स्थानके भी आदिमें अष्टांक और अन्तिम उव्वक है । यह नियम कहा है ।

शंका—अन्तिम षट्स्थानमें भी आदिमें अष्टांक और अन्तमें उव्वक होनेपर उससे आगेका अष्टांक किस रूपमें है ?

३०

समाधान—वह अर्थाक्षर ज्ञान रूप है । ऐसा ही आगे कहेंगे ।

इस प्रकार जघन्य पर्याय ज्ञान आदि है, यह कथन निर्वाध है ॥३२८॥

आगे इन षट्स्थानोंकी संख्या समान है, यह दर्शाते हैं—

१. म नदोलादि ।

ओङ् षट्स्थानदोळ् ओङ् देयष्टांकमक्कुमेकं दोडदक्कावृत्यभावमप्पुदरिदं । 'अंगुल असंख-
भागं पुव्वगवड्ढी गदे दु परवड्ढी एक्कं वारं होविह्' एदित्तु पूर्वपूर्ववृद्धिगळ् सूच्यंगुलासंख्यात-
भागमात्रवारंगळ् सलुत्तिरलुत्तरोत्तरवृद्धिगळो दोदप्पुवेव क्रममुळ्ळुदरिदं सन्तगुणवृद्धिगावृत्य-
भावमेकं दोड् ईयन्तगुणवृद्धिस्थानवक्के पूर्ववृद्धिगळावृत्यसिद्धियप्पुदरिदं । समांकः कांडकं
असंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानंगळ् सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगळेयक्कुमदरिदं केळगण षट्कपंचांक-
चतुरंकोर्व्वकगळ् रूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातभागगुणितक्रमंगळप्पुवु । यावदुर्व्वकमे बिदभिबिधि-
यप्पुदरिदमुर्व्वकक्के सोमात्त्वमं सूचिसुत्तमदनु व्यापिसुगुमवर न्यासमिदु :—

[illegible]

१८ एकस्मिन् पदस्थाने एक एवाष्टाङ्को भवति कृतः ? 'अङ्गुलअसंखभागं पुत्रगवद्दोषदे हु परवड्डी
एकं वारं होदीति' तस्य पूर्वत्वासंभवेनावृतेरभावात् । सप्ताङ्कः असंख्यातगुणवृद्धियुक्तस्थानानि काण्डकं
सूच्यङ्गुलामंख्यातभागमायाप्येव भवन्ति । तदधस्तनाः षडङ्गपञ्चाङ्कचतुरङ्कोऽष्टाङ्कस्तु रूपाधिकसूच्यङ्गुला-
संख्यातभागगुणितक्रमा भवन्ति यावदुर्वङ्क इत्यभिविधिः उर्वङ्कस्य सीमत्वं सूचयन् तमेव व्याप्नोति
तन्न्याशोऽयं—

[illegible]

१५ एक पदस्थानमें एक ही अष्टांक होता है; क्योंकि पहले कहा है कि सूच्यगुलके असंख्यातवें भाग पूर्वकी वृद्धि होनेपर आगेकी वृद्धि एक बार होती है। सो अष्टांक पूर्वमें है नहीं, इसलिए इसकी आवृत्ति बार-बार पलटना सम्भव नहीं है। सप्तांक अर्थात् असंख्यात

इत्तु द्वितीयादि षट्स्थानदोळादिभूताष्टांकदिदं मुंदे उर्वकमक्कुमादोडमेवकंखलु अटुंकमे बी नियमवचनदिदोळांककमंगुलासंख्यातभागमात्रवाराऽभावमेयक्कुमेके दोडे खलुशब्दक्के नियमार्थ-वाचकत्वदिदं ।

सच्चसमासो णियमा रूपाधिककांडस्य वर्गस्य ।

चिंदस्य य संवर्गो होदित्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥३३०॥

सच्चसमासो नियमाद्रूपाधिककांडस्य वर्गस्य । वृंदस्य च संवर्गो भवतीति जिनैर्निर्दिष्टं ॥

यत्ना अष्टांकादिषड्वृद्धिगळ संयोगं रूपाधिककांडस्य रूपाधिककांडक, वर्गस्य वर्गद, वृंदस्य च घनद, संवर्गः संवर्गमात्रं भवति अक्कुमे'दितु जिनैर्निर्दिष्टं अहंदादिगळिदं पेळल्पट्टु-दिल्लि तद्युतियं माळ्प क्रममेते'दोडे अष्टांकदात्मप्रमाणमनो'दु रूपं तंदु सप्तांकद सूच्यंगुला-संख्यातभागदोळु कूडुत्तिरलु रूपाधिककांडकमक्कुमदं तोरि तदात्मप्रमाणमनो'दु रूपं षडंक-संख्येयोळ्कूडुत्तिरलु रूपाधिककांडकद्वयमक्कुमा वर्गरूपाधिककांडकात्मप्रमाणं पंचांकसंख्ये-

एवं द्वितीयवारषट्स्थाने आदिभूताष्टाङ्कतोऽग्रे उर्यङ्कोऽस्ति तथापि 'एकं खलु अटुंक' इति नियम-वचनान्न तस्याङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारः, खलुशब्दस्य नियमार्थवाचकत्वान् ॥३२९॥

सर्वासां अष्टाङ्कादिषड्वृद्धीनां संयोगः रूपाधिककाण्डकस्य वर्गस्य वृन्दस्य च संवर्गमात्रो भवति इति जिनैर्हृदादिभिर्निर्दिष्टं कथितम् । अत्र तद्युतिः क्रियते तद्यथा—

अष्टाङ्कस्य आत्मप्रमाणैकरूपे सप्ताङ्कस्य सूच्यंगुलासंख्यातभागे युते सति रूपाधिककाण्डकं भवति तस्मिन् पुनः आत्मप्रमाणैकरूपे षडङ्कसंख्यायां काण्डकगुणितरूपाधिककाण्डकमात्र्यां युते सति रूपाधिक-

गुण वृद्धि युक्त स्थान काण्डक अर्थात् सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र ही होते हैं । उससे नीचेके षडंक, पंचांक, चतुरांक और उर्वक क्रमसे रूपाधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गुणित उत्तरोत्तर उर्वक पर्यन्त होते हैं अर्थात् असंख्यात गुण वृद्धिका प्रमाण सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग कहा है । उसको एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतनी बार संख्यात गुण वृद्धि होती है । इसको भी एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतनी बार संख्यात भाग वृद्धि होती है । इसको भी एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतनी बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है । इसको भी एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतनी बार अनन्त भाग वृद्धि होती है । इस प्रकार एक षट्-स्थान पतित वृद्धिमें पूर्वोक्त प्रमाण एक-एक वृद्धि होती है । दूसरे षट्स्थानमें आदिमें अष्टांक उससे आगे उर्वक है, अतः एक ही अष्टांकका नियम जानना । वह अंगुलके असंख्यात भाग मात्र बार नहीं होता ॥३२९॥

अष्टांक आदि छह वृद्धियोंका जोड़ एक अधिक काण्डकके वर्गका तथा घनका परस्पर-में गुणा करनेसे जो प्रमाण हो, उतना है; ऐसा जिन भगवान् ने कहा है । यहाँ उनका जोड़ दिखाते हैं—

अष्टांकके अपने प्रमाण एक रूपमें सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागको मिलानेपर सप्तांक-का प्रमाण एक अधिक काण्डक होता है । उसमें षडंककी संख्या, जो काण्डकसे गुणित एक अधिक काण्डक प्रमाण है, मिलानेपर रूपाधिक काण्डकका वर्ग होता है । उसमें पंचांककी संख्याको, जो काण्डकसे गुणित रूपाधिक काण्डकके वर्ग प्रमाण है, मिलानेपर रूपाधिक

योऽङ्कद्वितिरलु रूपाधिककाण्डकघनमवकुमदरात्मप्रमाणमनोदु रूपं चतुरङ्कसंख्येयोऽङ्कद्वितिरलु
 रूपाधिककाण्डकं गल घनमुं रूपाधिककाण्डकगुणमवकुमदरात्मप्रमाणमनोदु रूपं तदुर्व्वङ्कसंख्येयोऽङ्क
 रूपाधिककाण्डकचतुष्टयवर्गं रूपाधिककाण्डकचतुष्टयमं तोरि तोरिलल्लद काण्डकदोऽङ्कद्वितिरलु
 रूपाधिककाण्डकदवर्गदघनद संवर्गप्रमाणमवकुमेदे नंबुदेकेदोडे जिनैन्निदिष्टं जिनोक्तत्वात्
 ५ जिनप्रणीतमापुर्दारिदमिन्द्रियज्ञानागोचरमपुर्दारिदमा गुणकारंगळं गुणिसिद लब्धं घनाङ्गुलसंख्यात-
 भागमादोडं ६ घनाङ्गुलसंख्यातमादोडं ६ घनाङ्गुलप्रमितमादोडं ६ संख्यातघनाङ्गुलप्रमितमा-
 दोड ६ १ मसंख्यातघनाङ्गुलप्रमितमादोड ६ ० । स्मदादिगळगव्यक्तमिपुर्दारिदं ।

काण्डकवर्गो भवति । तदात्मप्रमाणैकरूपे पञ्चाङ्कसंख्यायां काण्डकगुणितरूपाधिककाण्डकवर्गप्रमितायां युते सति
 रूपाधिककाण्डकघनो भवति । तदात्मप्रमाणैकरूपे चतुरङ्कसंख्यायां काण्डकगुणितरूपाधिककाण्डकघनप्रमितायां
 १० युते सति रूपाधिककाण्डकवर्गस्य वर्गो भवति । तदात्मप्रमाणैकरूपे उर्व्वङ्कसंख्यायां काण्डकगुणितरूपाधिकं
 काण्डकवर्गस्य वर्गप्रमितायां रूपाधिककाण्डकचतुष्टयेन रूपाधिककाण्डकचतुष्टयं समं प्रदर्श्य आत्मप्रमाणैकरूपे
 शेषकाण्डके युते सति रूपाधिककाण्डकवर्गस्य घनस्य च संवर्गप्रमाणं भवति । इदमित्यत्र प्रतिपत्तव्यम् ।
 कुतः ? जिनैन्निदिष्टमिति कारणात् इन्द्रियज्ञानगोचरत्वाभावात् तेषु । गुणकारेषु गुणितेषु लब्धं घनाङ्गुला-
 संख्यातभागमात्रं वा ६ घनाङ्गुलसंख्यातभागमात्रं वा ६ घनाङ्गुलमात्रं वा । ६ । संख्यातघनाङ्गुलमात्रं
 ० १

१५ वा ६ १ असंख्यातघनाङ्गुलमात्रं वा ६ ० इत्यस्माभिर्न ज्ञायते ॥३३०॥

काण्डकका घन होता है । उसमें चतुरङ्कोंकी संख्या जो काण्डकसे गुणित रूपाधिक काण्डकके
 घन प्रमाण है, मिलानेपर रूपाधिक काण्डकके वर्गका वर्ग होता है । उर्व्वङ्कोंकी संख्या
 काण्डकसे गुणित रूपाधिक काण्डकके वर्गके वर्ग प्रमाण है । इसमें शेष काण्डकोंको जोड़नेपर
 रूपाधिक काण्डकके वर्गका तथा घनका गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है, उतना होता है ।
 २० विशेषार्थ—एक अधिक सूच्यङ्गुलके असंख्यातवें भागको दो जगह रख परस्परमें गुणा
 करनेसे जो परिमाण होता है, वह रूपाधिक काण्डकका वर्ग है और एक अधिक सूच्यङ्गुलके
 असंख्यातवें भागको तीन जगह रख परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण होता है, वह रूपाधिक
 काण्डकका घन है । इस वर्गको और घनको परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है,
 उतनी बार एक षट्संस्थानमें अनन्त भागादि वृद्धियाँ होती हैं । जैसे पहले अंक संदृष्टिमें आठका
 २५ अंक एक बार लिखा और सातका अंक दो बार लिखा । दोनों मिलकर तीन हुए । छहका
 अंक छह बार लिखा । मिलकर तीनका वर्ग नौ हुए । पाँचका अंक अठारह बार लिखा ।
 मिलकर तीनका घन सत्ताईस हुए । चारका अंक चौवन बार लिखा । मिलकर तीनसे गुणित
 तीनका घन $३ \times २७ = ८१$ इक्यासी हुए । उर्व्वङ्क एक सौ बासठ लिखे । मिलकर तीनके वर्गसे
 गुणित तीनका घन $९ \times २७ = २४३$ दो सौ तैंतालीस हुए । अंक संदृष्टिमें काण्डकका प्रमाण
 ३० दो है । यथार्थमें सूच्यङ्गुलका असंख्यातवाँ भाग है ।

इसको इसी प्रकार जानना, क्योंकि जिन भगवान् ने ऐसा कहा है । यह इन्द्रिय ज्ञानका
 विषय नहीं है । अतः उन गुणकारोंसे गुणा करनेपर लब्ध घनाङ्गुलका असंख्यातवाँ भाग मात्र
 है, अथवा घनाङ्गुलका संख्यातवाँ भाग है, अथवा घनाङ्गुल मात्र है अथवा असंख्यात घनाङ्गुल
 मात्र है, यह हम नहीं जानते ॥३३०॥

उक्कस्ससंखमेत्तं तत्तिचउत्थेक्कदालच्छप्पणं ।

सत्तदसमं व भागं गंतूण य लद्धियक्खरं दुगुणं ॥३३१॥

उत्कृष्टसंख्यातमात्रं तत्त्रिचतुर्थैकचत्वारिंशत् षट्पंचाशत् सप्तदशमं वा भागं गत्वा च लब्धक्षरं द्विगुणं ॥

रूपाधिककाण्डकगुणितांगुलसंख्यातभागमात्रवारंगळननंतभागवृद्धिस्थानंगळ २ २ मवर ५

मध्यदोळ सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रवारंगळनसंख्यातभागवृद्धिस्थानंगळ सलुत्तिरलु २ तदुभय- ०

वृद्धियुक्तजघन्यद एकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानमुत्पन्नमक्कु ज १५ मुंदे मत्तं मुं पेळ्द क्रम- १५

वृद्धिद्वयसहचरितंगळोळ संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळोळोळसंख्यातमात्रंगळ सलुत्तिमिरलु अल्लि प्रक्षेपकवृद्धियं कूडुत्तिरलु लब्धक्षरं सर्वजघन्यमप्य पर्यायमेवं श्रुतज्ञानं साधिकमागि द्विगुण- मक्कुमेकेदोडे प्रक्षेपकदुत्कृष्टसंख्यातभाज्यभागहारंगळनपर्वत्तिसि कूडिदोडे अदक्के द्विगुणत्वसंभव- १०

रूपाधिककाण्डकगुणितांगुलासंख्यातभागमात्रवारान् अनन्तभागवृद्धिस्थानेषु अङ्गुलासंख्यातभाग- मात्रवारान् असंख्येयभागवृद्धिस्थानेषु च गतेषु तदुभयवृद्धियुक्तजघन्यस्य एकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानमुत्पद्यते । १५ अग्रे पुनः प्रागुक्तक्रमवृद्धिद्वयसहचरितेषु संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानेषु उत्कृष्टसंख्यातमात्रेषु गतेषु १५

तत्र प्रक्षेपकवृद्धिषु युतासु लब्धक्षरं सर्वजघन्यपर्यायाख्यं श्रुतज्ञानं साधिकद्विगुणं भवति । कुतः ? प्रक्षेपकस्य उत्कृष्टसंख्यातभाज्यभागहारानपवर्त्य युते तस्य द्विगुणत्वसंभवात् तत्त्रिचतुर्थं पूर्वोक्तसंख्यातभागवृद्धियुक्तोत्कृष्ट- १५

एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवं भागसे गुणित अंगुलके असंख्यात भाग बार अनन्त भाग वृद्धियोंके होनेपर तथा अंगुलके असंख्यात भाग बार असंख्यात भाग वृद्धिके होनेपर उन दोनों वृद्धियोंसे युक्त जघन्य पर्याय ज्ञानका एक बार संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान उत्पन्न होता है । आगे पुनः पूर्वोक्त अनन्त भाग वृद्धि और असंख्यात भाग वृद्धिके साथ संख्यात भाग वृद्धिसे युक्त स्थानोंके उत्कृष्ट संख्यात मात्र होनेपर उनमें प्रक्षेपक वृद्धियोंको जोड़नेपर लब्धक्षर नामक सर्व जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान साधिक दुगुना होता है । कैसे होता है यह बतलाते हैं—पूर्ववृद्धिके होनेपर जो साधिक जघन्य ज्ञान हुआ उसे अलग रखकर उस साधिक जघन्य ज्ञानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है । तथा उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेपक है क्योंकि गच्छमात्र प्रक्षेपक वृद्धि होती है सो यहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र संख्यात वृद्धिके स्थान हुए इसलिये उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेपक बढ़ाने है । सो यहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रक्षेपक होनेसे उत्कृष्ट संख्यात ही गुणाकार हुआ । इस तरह गुणाकार भी उत्कृष्ट संख्यात और भागहार भी उत्कृष्ट संख्यात; क्योंकि साधिक जघन्य ज्ञानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेसे प्रक्षेपक होता है । सो गुणाकार और भागहारका अपवर्तन करने पर साधिक जघन्य ज्ञान रहा । उन्में अलग रखे साधिक जघन्य ज्ञानमें मिलाने पर जघन्य ज्ञान साधिक दूना होता है । तथा 'तत्तिचउत्थ' अर्थात् पूर्वोक्त संख्यात भाग वृद्धि युक्त उत्कृष्ट ३०

मुञ्जुर्दरिदं तत्त्रिचतुर्थं मुपेक्षदसंख्यातभागवृद्धियुक्तोत्कृष्टसंख्यातमात्रस्थानंगल त्रिचतुर्थभाग-
स्थानंगलु सलुत्तं विरलल्लिय प्रक्षेपकमुं प्रक्षेपकप्रक्षेपकमे बेरडु वृद्धिगळुं जघन्यदोळिक्कल्पडुतिरलु
लब्ध्यक्षरं द्विगुणमवकुमदे ते दोडे प्रक्षेपकप्रक्षेपकद रूपोनगच्छदेकवारसंकलनधनप्रमितद

ज १५।३।१५।३ ऋणमं बेरिरसि ज १।३ अपवर्तितधनमिडु ज ९ इदरोळोडु रूपं-
१५।१५।४।२।४।१ १५ ३२ ३२

५ तेगेडु धनमं बेरिरसिडु ज १ शेषापवर्तितधनं ज १ इदं प्रक्षेपकवृद्धियोळु ज ३ कूडिदोडे
३२ ४ ४

संख्यातमात्रस्थानानां त्रिचतुर्थभागस्थानानि नीत्वा तत्र प्रक्षेपकः प्रक्षेपकप्रक्षेपकश्चेति वृद्धिद्वये जघन्यस्योपरि
युते लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति । तद्यथा—

प्रक्षेपकप्रक्षेपकस्य रूपोनगच्छस्य एकवारसंकलनधनप्रमितस्य ज १५ ३।१५ ३ ऋणं पृथक्कृत्य
१५ १५ ४ २ ४ १

ज १ ३ शेषमपवर्त्य ज ९ एकरूपं पृथग् न्यस्य ज १ शेषे ज ८ अपवर्त्य ज १ प्रक्षेपकवृद्धौ ज ३
१५ ३२ ३२ ३२ ३२ ४ ४

- १० संख्यात मात्र स्थानोंको चारसे भाग देकर उनमें-से तीन भाग प्रमाण स्थानोंके होनेपर प्रक्षे-
पक और प्रक्षेपक-प्रक्षेपक इन दोनों वृद्धियोंको साधिक जघन्य ज्ञानमें जोड़नेपर लब्ध्यक्षर
ज्ञान साधिक दूना होता है। कैसे, सो कहते हैं—पूर्व वृद्धि होनेपर जो साधिक जघन्य ज्ञान
हुआ उसमें दो बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक-प्रक्षेपक होता है। सो एक हीन
गच्छका संकलन धन मात्र प्रक्षेपक-प्रक्षेपककी वृद्धि यहाँ करनी है। पूर्वोक्त करण सूत्रके
१५ अनुसार उस प्रक्षेपक-प्रक्षेपकको एक हीन उत्कृष्ट संख्यातके तीन चौथाई भागसे और उत्कृष्ट
संख्यातके तीन चौथाई भागसे गुणा करना और दो और एकसे भाग देना। ऐसा करनेपर
साधिक जघन्यका एक हीन तीन गुणा उत्कृष्ट संख्यात और तीन गुणा उत्कृष्ट संख्यात तो
गुणाकार हुआ तथा दो बार उत्कृष्ट संख्यात और चार दो, चार एक भागहार हुआ। एक
हीन सम्बन्धी ऋणराशि साधिक जघन्यको तीनका गुणाकार और उत्कृष्ट संख्यात तथा
२० बत्तीसको भागहार करनेपर होती है। उसको अलग रखकर शेषका अपवर्तन करनेपर
साधिक जघन्यको नौसे गुणा और बत्तीससे भाग प्रमाण हुआ। साधिक जघन्यका चिह्न
जैसा है सो जैसा हुआ।

विशेषार्थ—यहाँ दो बार उत्कृष्ट संख्यातका गुणाकार और भागहारका अपवर्तन
किया। गुणाकार तीन-तीनको परस्परमें गुणा करनेसे नौका गुणाकार हुआ और चार, दो,
२५ चार एक भागहारको परस्परमें गुणा करनेसे बत्तीस भागहार हुआ। ऐसे ही अन्यत्र भी
जानना। अस्तु।

इस जैसा ३६ में एक गुणाकार साधिक जघन्यका बत्तीसवाँ भाग है जैसा ३६। इसको
अलग रखकर शेष साधिक जघन्यको आठका गुणाकार और बत्तीसका भागहार रहा। इसका
अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यका चौथा भाग रहा जैसा ६। प्रक्षेपक गच्छ प्रमाण है सो
३० साधिक जघन्यको एक बार उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है उसको उत्कृष्ट

साधिकजघन्यमवकु ज मिदं मेलण साधिकजघन्यदोळकूडुत्तिरलु लब्ध्यक्षरं द्विगुणमवकु
(+ओ अथवा ज २) प्रक्षेपकप्रक्षेपकदोळगण ऋणधनमं ज १- नोडलु मसंख्यातगुणहीनमेदु
३२

किंचिन्मूलं माडि शेषम ज १ - द्विगुणजघन्यदोळकूडिसाधिकं मादुवुदु ।
३२

एकदालछप्पणं मुं पेळद संख्यातभागवृद्धिस्थानगळुत्तुकुष्टसंख्यातप्रमितंगळोळु एकचत्वारिंशत्
षट्पंचाशद्भागमात्रस्थानगळु सलुत्तं विरलु प्रक्षेपक प्रक्षेपकप्रक्षेपकवृद्धिद्वययोगदोळु साधिक-
जघन्यं द्विगुणमवकुमल्लि प्रक्षेपकमिदु ज १५।४१ प्रक्षेपकप्रक्षेपकमिदु रूपोनगच्छद एकवार-
१५।५६

संकलित धनमात्रं ज १५।४१।१५।४१ इल्लिय ऋणरूपं तेगेदु बेरिरिसुवुदु
१५।१५।५६।२।१।५६

युते सति साधिकजघन्यं भवति ज । अस्मिन् पुनः उपरितनसाधिकजघन्ये युते सति लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति
ज २ । प्रक्षेपकप्रक्षेपकागतऋणं घनतः संख्यातगुणहीनमिति किंचिदूनं कृत्वा शेषं ज १-द्विगुणजघन्ये संयोज्य
३२

साधिकं कुर्यात् । एकदालछप्पणं प्रागुक्तसंख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानानां उत्कृष्टसंख्यातमितेषु एकचत्वारिंशत्-
षट्पञ्चाशद्भागमात्रस्थानानि नीत्वा प्रक्षेपकप्रक्षेपकद्वययोगे साधिकजघन्यं द्विगुणं भवति तत्र प्रक्षेपकोऽयं—

ज १५ ४१ । प्रक्षेपकप्रक्षेपकस्तु रूपोनगच्छस्य एकबारसंकलितधनमात्रः । ज १५ ४१ १५ ४१
१५ ५६ १५ १५ ५६ २ ५६ १

संख्यातके तीन चौथे भागसे गुणा करना । सो उत्कृष्ट संख्यातगुणाकार भी और भागहार भी ।
उनका अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यका तीन चौथाई भाग मात्र प्रमाण रहा । इसमें
पूर्वोक्त एक चौथा भाग जोड़नेपर साधिक जघन्य मात्र वृद्धिका प्रमाण होता है । इसमें
मूल साधिक जघन्य ज्ञानको जोड़नेपर लब्ध्यक्षर दूना होता है । यहाँ प्रक्षेपक-प्रक्षेपक
सम्बन्धी ऋण राशि धन राशिसे संख्यात गुणी कम है, इसलिए साधिक जघन्यका बत्तीसवाँ
भाग मात्र धनराशिमें ऋणराशि घटानेके लिए कुछ कम करके शेषको पूर्वोक्त द्विगुणित
जघन्यमें जोड़नेपर साधिक दूना होता है ।

‘एकदालछप्पणं’ अर्थात् पूर्वोक्त संख्यात वृद्धि युक्त उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण स्थानोंमें-
से इकतालीस बटे छप्पन प्रमाण द्द्वे स्थान होनेपर प्रक्षेपक तथा प्रक्षेपक-प्रक्षेपक वृद्धियोंको
उसमें जोड़नेपर लब्ध्यक्षर दूना होता है । इसको स्पष्ट करते हैं—साधिक जघन्यको उत्कृष्ट
संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है । सो प्रक्षेपक गच्छमात्र है । इससे इसको उत्कृष्ट
संख्यात तथा इकतालीस बटे छप्पनसे गुणा करनेपर उत्कृष्ट संख्यातका अपवर्तन हो जाता
है, अतः साधिक जघन्यको इकतालीसका गुणाकार और छप्पन भागहार होता है । यथा—
ज १५ ४१ । तथा प्रक्षेपक-प्रक्षेपक एक हीन गच्छका एक बार संकलन धन मात्र है । सो
१५ ५६

पूर्वोक्त करण सूत्रके अनुसार साधिक जघन्यको दो बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर
प्रक्षेपक-प्रक्षेपक होता है । उसको एक हीन इकतालीस गुणा उत्कृष्ट संख्यात और इकतालीस

ज १ ४१ अपवर्तितप्रक्षेपकप्रक्षेपक ज १६ ८१ इल्लि एकरूपं धनं बेरिरिसुवुडु
१५ ११२ ५६ ११२ ५६

ज १ शेषमनु ज १६ ८० अपवर्तिसलु ज १५ इदं प्रक्षेपकदोळु ज ४१ कूडिदोडे
११२ ५६ ११२ ५६ ५६ ५६

ज ५६ अपवर्तितजघन्यमश्कुमदनुपरितनजघन्यदोळुकूडिदोडे लब्ध्यक्षरं द्विगुणमक्कु ज २।
५६

मुन्निरिसिद धनदोळु ज १ इदं नोडलु संख्यातगुणहीनमप्य ऋणमं ज १ ४१
११२ ५६ १५ ११२ ५६

किंचिदूनमं माडि शेषमं ज १ - द्विगुणजघन्यदोळु कूडिदोडे साधिकमक्कुव ज २ सत्तदसमं
११२ ५६

अत्रतनं ऋणं अपनीय पृथक् संस्थाप्य ज १ ४१ शेषं अपवर्त्य ज १६ ८१ एकरूपं धनं पृथग्भृत्य
१५ ११२ ५६ ११२ ५६

ज १ शेषं ज १६ ८० अपवर्त्य ज १५ प्रक्षेपके निक्षिप्य ज ५६ अपवर्तिते जघन्यं भवति ।
११२ ५६ ११२ ५६ ५६ ५६

ज १ अस्मिन् पुनः उपरितनजघन्ये युते सति लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति । ज २ इदमेव पृथक्स्थापितधनेन

ज १ इतः संख्यातगुणहीनऋणेन ज १ ४१ किंचिदूनीकृतेन ज १ - साधिकं कुर्यात् ज २ ।
११२ ५६ १५ ११२ ५६ ११२ ५६

१० गुणा उत्कृष्ट संख्यातका गुणाकार तथा छप्पन, दो, छप्पन एकका भागहार होता है। यहाँ एक हीन सम्बन्धी ऋण साधिक जघन्यको इकतालीसका गुणाकार और उत्कृष्ट संख्यात, एक सौ बारह और छप्पनका भागहार मात्र है-यथा ज १ × ४१ । सो इसको अलग रखकर
१५ ११२ ५६

शेषमें दो बार उत्कृष्ट संख्यातका अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको सोलह सौ इक्क्यासी-
का गुणाकार और एकसौ बारह गुणा छप्पनका भागहार होता है; यथा ज १६ ८१ । यहाँ
११२ × ५६

२५ गुणाकारमें इकतालीस-इकतालीस थे, उन्हें परस्परमें गुणा करनेपर सोलह सौ इक्क्यासी हुए और भागहारमें छप्पनको दोसे गुणा करनेपर एकसौ बारह हुए तथा दूसरे छप्पनको एकसे गुणा करने पर छप्पन हुए । गुणाकारमें एक अलग रखा, उसका धन साधिक जघन्यको एकसौ बारह गुणा छप्पनका भागहार मात्र होता है। शेष रहे साधिक जघन्यको सोलहसौ अस्सीका गुणाकार और एकसौ बारह गुणा छप्पनका भागहार । यथा एक ऋणका धन
ज १ शेष । ज १६ ८० । इसमें एकसौ बारहसे अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको
११२ × ५६ ११२ × ५६

पन्द्रहका गुणाकार और छप्पनका भागहार रहा-ज १६ ४ । इसमें प्रक्षेपकका प्रमाण जघन्यको

व भागं वा अथवा संख्यातभागवृद्धिस्थानंगत्कृष्टसंख्यातमात्रंगत्कृष्ट सप्तदशमभागमात्रंगत्कृष्ट सलुत्तिरलु प्रक्षेपक प्रक्षेपकप्रक्षेपक पिशुलिगळं ब मूरं वृद्धिगळं कूडुत्तिरलु साधिकजघन्यं द्विगुण-

मक्कुमदेते दोडे प्रक्षेपकं ज १५।७ प्रक्षेपकप्रक्षेपकं रूपोनगच्छद एकवारसंकलितधनमात्रं १५।१०

ज १५।७।१५।७ पिशुलिद्विरूपोनगच्छद्विकवारसंकलितधनमात्रं १५।१५।१०।२।१०।१

ज १५।७।१५।७।१५।७ ई मूरं वृद्धिगळोळु पिशुलिय प्रथम ऋणमं बेरिरिसि १५।१५।१५।१०।३।१०।२।१०।१

ज २ १५।७।७ शेषधनमपर्वत्तितमिदु ज १५।७।४९ इदरोळु इन्तिनु ऋणमं १५।१५।१६।१०।१०।१० १५।१०।६०००

‘सत्तदसमं च भागं’ वा अथवा संख्यातभागवृद्धिस्थानानां उत्कृष्टसंख्यातमात्रेषु मध्ये सप्तदशमभागमात्रेषु गतेषु प्रक्षेपक-प्रक्षेपकप्रक्षेपक-पिशुलिसंज्ञवृद्धित्रये प्रक्षिप्ते साधिकजघन्यं द्विगुणं भवति । तद्यथा प्रक्षेपकः

ज १५ ७। प्रक्षेपकप्रक्षेपको रूपोनगच्छस्य एकवारसंकलितधनमात्रः ज १५ ७ १५ ७। १५ १० १५ १० २ १०।१

पिशुलिः द्विरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलितधनमात्रः ज १५ ७। १५ ७। १५ ७ १५ १५ १५ १०।३।१०।२।१०।१ १०

तद्वृद्धित्रयमध्ये पिशुलेः प्रथमऋणं पृथक् संस्थाप्य ज २ १५ ७। ७। १५।१५।६।१०।१०।१०।१

इकतालीसका गुणाकार और छप्पनका भागहार मिलानेपर अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्य मात्रवृद्धिका प्रमाण रहा । इसमें मूल साधिक जघन्य जोड़नेपर लब्ध्यक्षर ज्ञान दूना होता है । यहाँ प्रक्षेपक-प्रक्षेपक सम्बन्धी धनसे ऋण संख्यात गुणा कम है । अतः किंचित् उन धनराशिको अधिक करनेपर साधिक दूना होता है ।

‘सत्तदसमं च भागं वा’ अथवा संख्यात भाग वृद्धि युक्त उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थानोंमें-से सात बटे दस भाग मात्र स्थानोंके होनेपर उसमें प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, और पिशुलि नाभक तीन वृद्धियोंके जोड़नेपर साधिक जघन्य ज्ञान दूना होता है । वही आगे कहते हैं—साधिक जघन्यको एक बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है, वह गच्छ मात्र है । अतः इसको उत्कृष्ट संख्यातके सात बटे दसवें भागसे गुणा और उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर साधिक जघन्यको सातका गुणाकार और दसका भागहार होता है । प्रक्षेपक-प्रक्षेपक

१. संदृष्टेरयमप्याकारः—ज २ १५।७।७ १५ १५ ६००।१०।१

ज १।४९ बेरिरिसि अपवर्त्तिसिदोडिनितक्कु ज ३४३ इदरोळु पदिमूरु रूपगळं तेगेविरि-
१५।६००० ६०००

सुवुदु ज १३ शेषमिदु ज ३३० अपवर्त्तितमिदु ज ११ इल्लि धन ज १३ मिदरोळु
६००० ६००० २०।१० ६०००

प्रथमद्वितीयऋणगळु संख्यातगुणहीनगळे दु किंचिदूनं माडि ज १३ = भत्तं प्रक्षेपकप्रक्षेपक
६०००

ज १५।७।७ ऋणमिनितक्कु ज १।७ मिदं बेरिरिसि ज १५।७।७ अपवर्त्तितमिदु
१५।२।१०।१० १५।२०० १५।२००

५ ज ४९ इदरोळु मुन्नित पिशुलिधनमनेकादशरूपं कूडुत्तिरलुभयधनमिदु ज ६० अपवर्त्तितमिदु
२०।१० २००

शेषधनमपवर्त्य ज १५ ७।४९ अत्रस्थमृणं ज १ ४९ पृथक्संस्थाप्य शेषमपवर्त्य ज ३४३।
१५ १० ६०० १५ ६००० ६०००

इतस्त्रयोदशरूपाण्यपनीय पृथक्संस्थाप्य ज १३। शेषं ज ३३०। अपवर्त्य ज ११ एकत्र संस्थाप्य
६००० ६००० २० १०

अस्य प्राक् पृथक्स्थूतधने ज १३ प्रथमद्वितीयऋणं संख्यातगुणहीनमिति किंचिदूनं कृत्वा ज १३-। एकत्र
६००० ६०००

संस्थाप्य पुनः प्रक्षेपकप्रक्षेपके ज १५ ७।७।७।७ ऋणं ज १ ७।७।७ पृथक् संस्थाप्य शेषं ज १५ ७ ७।
१५ २ १०।१०। १५ २०० १५ २००

- १० एक हीन गच्छका एक बार संकलन धन मात्र है सो साधिक जघन्यको दो बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक-प्रक्षेपक होता है। उसका पूर्व सूत्रानुसार एक हीन सात गुणा उत्कृष्ट संख्यातका तथा सात गुणा उत्कृष्ट संख्यातका गुणाकार और दस, दो तथा दस एक भागहार हुआ। पिशुलि दो हीन गच्छका दो बार संकलित धन मात्र होती है। सो साधिक जघन्यको तीन बार उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेसे पिशुलि होती है। उसको पूर्व सूत्रानुसार
- १५ दो हीन और सातसे गुणित उत्कृष्ट संख्यात और एक हीन तथा सातसे गुणित उत्कृष्ट संख्यात व सात गुणित उत्कृष्ट संख्यात गुणाकार तथा दस, तीन, दस दो, दस एक भागहार होते हैं। इनमें पिशुलिके गुणाकारमें दो कम किये थे, उस सम्बन्धी प्रथम ऋणका प्रमाण साधिक जघन्यको दोका और एक हीन तथा सातसे गुणित उत्कृष्ट संख्यातका तथा सात गुणा उत्कृष्ट संख्यातका गुणाकार तथा दो बार उत्कृष्ट संख्यातका और छहका और तीन
- २० बार दसका भागहार करनेपर होता है। उसको अलग स्थापित करके शेषका अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको एक हीन सात गुणा उत्कृष्ट संख्यातका तथा उनचासका तो गुणाकार हुआ और उत्कृष्ट संख्यात छह हजारका भागहार होता है। यहाँ गुणाकारमें एक हीन है।

ज ३ इदं प्रक्षेपकदोष्ट कूडिदोष्टे ज १० अपवर्तितमिदु ज इदरोष्ठ संख्यातगुणहीनमप्य
१० १०

प्रक्षेपकप्रक्षेपकऋणमं किंचिदूनं माडि धनमं ज १३ = साधिकं माडि मेलण जघन्यदोष्ट
६०००

कूडिदोष्टे लब्ध्यक्षरं द्विगुणमक्कुं ज २ मुन्नं प्रक्षेपकप्रक्षेपकधनदोष्ट बेरिरिसिद ज १३ त्रयोदश-
६००

रूपधनदोष्टतन्त संख्यातभागमात्र ऋण रहितधनमं साधिकं माडुवुदु । अंतु माडुतिरलु साधिक-
द्विगुणलब्ध्यक्षरमक्कुं ज २ । मोदलोष्ठकृष्टसंख्यातगुणितसंख्यातभागद सप्तदशमभागमात्रंगळ ५

ज १५ । ७ संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगळ पिशुलिपर्यंतमागि नड्डु लब्ध्यक्षरं द्विगुणमक्कुं ।
१५ । १०

अपवर्त्य ज ४९ । प्राक्तनपिशुलिधनैकादशरूपाणि मेलयित्वा ज ६० । अपवर्त्य इदं ज ३ । प्रक्षेपके
२०० २०० १०

ज ७ । संयोज्य ज १० । अपवर्त्येदं ज प्राक्पृथग्धृतकिंचिदूनत्रयोदशरूपैः संख्यातगुणहीनप्रक्षेपकप्रक्षेपक-
१० १०

ऋणेन पुनः किंचिदूनितैः ज १३ = । साधिकं कृत्वा उपरितनजघन्ये युते सति लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति ।
६०००

ज २ । प्रथमतः उत्कृष्टसंख्यातगुणितसंख्यातभागस्य सप्तदशमभागमात्रेषु ज १५ । ७ संख्यातभागवृद्धियुक्त-
१५ । १० १०

उस सम्बन्धी द्वितीय ऋणका प्रमाण साधिक जघन्यको उनचासका गुणाकार तथा उत्कृष्ट संख्यात और छह हजारका भागहार करनेपर होता है । उसको अलग रखकर शेषका अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको तीन सौ तैंतालीसका गुणाकार और छह हजारका भागहार होता है । यहाँ गुणाकारमें तेरह कम करके अलग रखना । उसमें साधिक जघन्यको तेरहका गुणाकार और छह हजारका भागहार जानना । शेष साधिक जघन्यको तीन सौ तीसका गुणाकार और छह हजारका भागहार रहा । तीससे अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको ग्यारहका गुणाकार और दस गुणित बीसका भागहार हुआ । उसे एक जगह स्थापित करना । यहाँ गुणाकारमें-से तेरह कम करके जो अलग स्थापित किये थे, उस सम्बन्धी प्रमाणसे प्रथम द्वितीय ऋण सम्बन्धी प्रमाण संख्यात गुणा कम है । इसलिए कुछ कम करके साधिक जघन्य किंचित् कम तेरह गुणाको छह हजारसे भाग देनेपर इतना शेष रहा सो अलग रखे । तथा प्रक्षेपक-प्रक्षेपक सम्बन्धी गुणाकारमें एक घटाया था, उस सम्बन्धी ऋणका प्रमाण साधिक जघन्यको सातका गुणाकार और उत्कृष्ट संख्यात तथा दो सौका भागहार किये होता है । उसको अलग रखकर शेष पूर्वोक्त प्रमाण साधिक जघन्यको उत्कृष्ट संख्यातका गुणाकार और

१५

२०

मत्तं मुंदे मुंदे तदेकचत्वारिंशत् षट्पञ्चाशत् भागद प्रक्षेपकप्रक्षेपकावसानमागि नडदु लब्ध्यक्षरं

द्विगुणमक्कुं-ज २ मुंदेयु संख्यातभागवृद्धिप्रथमस्थानं मोदल्गो डुत्कृष्टसंख्यातद त्रिचतुर्थभागमात्र-

स्थानंगळु ज १५ । ३ प्रक्षेपकप्रक्षेपकावसानमागि सलुत्तं विरलु लब्ध्यक्षरं द्विगुणमक्कु । ज २ ।
१५ । ४

मत्तमते संख्यातभागवृद्धिस्थानंगळु प्रथमस्थानंगळु मोदल्गो डुत्कृष्टसंख्यातमात्रंगळु प्रक्षेपकावसान-

मागि नडदल्लियु ज १५ लब्ध्यक्षरं द्विगुणमक्कुमिल्लि साधिकजघन्यं द्विगुणमादोडं पय्यायि-
१५

समासमध्यमविकल्पगत श्रुतज्ञानमुपचारदिदं लब्ध्यक्षरं मे दु पेळत्पट्टुदेके दोडे पय्यायिज्ञानमप्य

स्थानेषु पिशुलिपर्यन्तेषु गतेषु लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति ज २ । पुनस्तस्यैव एकचत्वारिंशत्षट्पञ्चाशद्भागस्य

प्रक्षेपकावसानेषु गतेषु लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति ज २ । अग्रेऽपि संख्यातभागवृद्धिप्रथमस्थानमादि कृत्वा उत्कृष्ट-

संख्यातस्य त्रिचतुर्थभागमात्रेषु ज १५ ३ । प्रक्षेपकप्रक्षेपकावसानेषु गतेषु लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति ज २ ।
१५ ४

१० पुनस्तथा संख्यातभागवृद्धिस्थानेषु प्रथमस्थानमादि कृत्वा उत्कृष्टसंख्यातमात्रेषु प्रक्षेपकावसानेषु गतेषु ज १५
१५

लब्ध्यक्षरं द्विगुणं भवति । ननु साधिकजघन्यं द्विगुणं तदा पर्यायसमासमध्यमविकल्पगतं श्रुतज्ञानं उपचारेण

दो बार सातका गुणाकार तथा उत्कृष्ट संख्यात, दस, दो, दस एकका भागहार रखकर अपवर्तन तथा परस्पर गुणा करनेपर साधिक जघन्यको उनचासका गुणाकार और दो सौका भागहार हुआ । इसमें पूर्वोक्त पिशुलि सम्बन्धी ग्यारह गुणाकार मिलानेपर साधिक जघन्य-

१५ को साठका गुणाकार और दो सौका भागहार हुआ । यहाँ बीससे अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यको तीनका गुणाकार और दसका भागहार हुआ । इसमें प्रक्षेपक सम्बन्धी प्रमाण साधिक जघन्यको सातका गुणाकार और दसका भागहार जोड़े, तो दससे अपवर्तन करनेपर वृद्धिका प्रमाण साधिक जघन्य होता है । इसमें मूल साधिक जघन्य जोड़नेपर लब्ध्यक्षर दूना होता है । तथा पहले पिशुलि सम्बन्धी ऋण रहित धनमें किंचित् कम तेरहका गुणकार

२० था, उसमें प्रक्षेपक-प्रक्षेपक सम्बन्धी ऋण संख्यात गुणा हीन है । उसको घटानेके लिए किंचित् कम करनेपर जो साधिक जघन्यको दो बार किंचित् कम तेरहका गुणाकार और छह हजारका भागहार हुआ सो इतना प्रमाण पूर्वोक्त दूना लब्ध्यक्षरमें जोड़नेपर साधिक दूना होता है । इस तरह प्रथम तो संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थानोंका सात बटे दस भाग प्रमाण स्थान पिशुलि वृद्धि पर्यन्त होनेपर लब्ध्यक्षर ज्ञान दूना होता है । दूसरे,

२५ उस हीके इकतालीस बटे छप्पन भाग प्रमाण स्थान प्रक्षेपक-प्रक्षेपक वृद्धि पर्यन्त होनेपर लब्ध्यक्षर ज्ञान दूना होता है । आगे भी संख्यात भागवृद्धिके पहले स्थानसे लेकर उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थानोंका तीन बटे चार भाग मात्र प्रक्षेपक-प्रक्षेपक वृद्धि पर्यन्त होनेपर

मुख्यलब्ध्यक्षरवर्के समीपवर्तित्वादिदं । नडे नडेवेदितु वीप्सात्थंज्ञापकं च शब्दमक्कुं ।

एवं असंखलोगा अणक्खरप्पे हवति छट्ठाणा ।

ते पज्जायसमासा अक्खरगं उवरि वोच्छामि ॥३३२॥

एवमसंख्यलोकान्यनक्षरात्मके भवन्ति षट्स्थानानि । तानि पर्यायसमासा अक्षरगमुपरि वक्ष्यामि ॥

इती पेळ्द प्रकारदिदमनक्षरात्मकमप्य पर्यायसमासज्ञानविकल्पसमूहबोळु षट्स्थानानि षट्स्थानवारंगळसंख्यातलोकमात्रंगळप्पुवु तत्प्रमाणं साधिसुव त्रैराशिकमिदु । एतलानुमितितोळुवु स्थानविकल्पंगळोवु षट्स्थानं पडेयत्पडुत्तिरलागळिनितु स्थानविकल्पंगळनक्षरात्मकज्ञानविकल्पं-

गळसंख्यातलोकमात्रंगळेतितोळुवु षट्स्थानवारंगळप्पुवेदु त्रैराशिकं माडि प्र २ २ २ २ २
० ० ० ० ०

प १ इ ३ ० प्रमाणराशिदिदमिच्छाराशिय भागिसुत्तिरलु तल्लब्धप्रमितषट्स्थानवारंगळप्पुवु १०

लब्ध्यक्षरं कथमुक्तं ? इति चेत् पर्यायज्ञानस्य मुख्यलब्ध्यक्षरस्य समीपवर्तित्वात् । चक्षब्दः गत्वागत्वेति वीप्सात्थं ज्ञापयति ॥३३१॥

एवमुक्तप्रकारेण अनक्षरात्मके पर्यायसमासज्ञानविकल्पसमूहे षट्स्थानवारा असंख्यातलोकमात्रा भवन्ति तद्यथा—यद्येतावतामनक्षरात्मकज्ञानविकल्पानां एकं षट्स्थानं लभ्यते तदा एतावतामनक्षरात्मकश्रुतज्ञानविकल्पानामसंख्यातलोकमात्राणां कति षट्स्थानवारा लभ्यन्ते । इति त्रैराशिकं कृत्वा

प्र २ २ २ २ २ फ १ । इ ३ ० प्रमाणराशिना इच्छाराशौ भक्ते यल्लब्धं तावन्तः
० ० ० ० ०

लब्ध्यक्षर ज्ञान दूना होता है । इसी तरह संख्यात भाग वृद्धिके पहले स्थानसे लेकर उत्कृष्ट संख्यात स्थान मात्र प्रक्षेपक वृद्धि पर्यन्त होनेपर लब्ध्यक्षर ज्ञान दूना होता है ।

शंका—साधिक जघन्य ज्ञान दूना हुआ कहा । सो साधिक जघन्य ज्ञान तो पर्याय समास ज्ञानका मध्य भेद है । यहाँ लब्ध्यक्षर दूना हुआ, ऐसे कैसे कहा ?

समाधान—मुख्य लब्ध्यक्षर जो पर्याय ज्ञान है, उसका समीपवर्ती होनेसे उपचारसे पर्याय समासके भेदको भी लब्ध्यक्षर कहा है ॥३३१॥

उक्त प्रकारसे अनक्षरात्मक पर्याय समास ज्ञानके भेदोंके समूहमें असंख्यात लोक मात्र बार षट्स्थान होते हैं । वही कहते हैं—यदि इतने अर्थात् एक अधिक सूर्यगुलके असंख्यातवें भागके वर्गसे उसहीके घनको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतने भेदोंमें एक बार षट्स्थान होता है, तो असंख्यात लोक प्रमाण पर्याय समासके भेदोंमें कितने बार षट्स्थान होंगे ? इस प्रकार त्रैराशिक करनेपर प्रमाण राशि एक अधिक सूर्यगुलके असंख्यातवें भागके वर्गसे गुणित उस ही के घन प्रमाण है, फलराशि एक, इच्छाराशि असंख्यात लोक मात्र पर्याय समासके स्थान । यहाँ फलसे इच्छाको गुणाकर उसमें प्रमाण राशिसे भाग देनेपर जो लब्ध राशि आवे, उतनी ही बार सब भेदोंमें षट्स्थान पतित वृद्धि होती है । इस प्रकार असंख्यात लोक

≡ ०

इंती प्रकारदिदमसंख्यातलोकमात्रवारषट्स्थानवृद्धिर्गाळिद संवृद्धंगळप्पनंतभाग-

२ २ २ २ २
० ० ० ० ०

वृद्धियुक्तजघन्यज्ञानविकल्पं मोदलो'डु सर्वचरमोर्वंकवृद्धियुक्तसर्वोत्कृष्टज्ञानावसानमाद
असंख्यातलोकमात्रंगळप्प ज्ञानविकल्पंगळनितोळवनितुं पर्यायसमासज्ञानविकल्पंगळप्पुव बुदत्तं ।
उवरि इल्लिद मेले अक्षरगं अक्षरगतज्ञानमप्य श्रुतज्ञानसं वक्ष्यामि पेळदपे ।

५

अनंतरमक्षरगतश्रुतज्ञानमं पेळदपं ।

चरिमुव्वंकेणवहिद अत्थक्खरगुणिदचरिममुव्वंकं ।

अत्थक्खरं णाणं होदित्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥२३३॥

चरमोर्वंकेनापहृतात्थार्थाक्षर गुणितचरमउव्वंकः । अर्थाक्षरंतु ज्ञानं भवतीति जिनैर्निर्दिष्टं ॥

पर्यायसमासज्ञानविकल्पंगळ संबंधिगळप्पसंख्यातलोकमात्रवारषट्स्थानंगळोळु भागवृद्धि-

१० गुणवृद्धियुक्तास्थानंगळोळु तद्वृद्धिनिमित्तंगळप्प संख्यातासंख्यातानंतंगळवस्थितंगळु प्रतिनियत-
प्रमाणंगळप्पुदरिदं चरमषट्स्थानद चरमोर्वंकदिदं मुंदणष्टांकवृद्धियुक्तस्थानसर्थाक्षरश्रुतज्ञान-
मपुदरिदमा पूर्वप्रतिनियताष्टांकप्रमाणमत्तीयष्टांकं विलक्षणमपुदे'डु पेळदपं । असंख्यातलोक-

≡ ०

षट्स्थानवारा भवन्ति २ २ २ २ २ एवमनेन प्रकारेण असंख्यातलोकवारषट्स्थानवृद्धिसंवृद्धा
० ० ० ० ०

अनन्तभागवृद्धियुक्तजघन्यज्ञानविकल्पमादि कृत्वा सर्वचरमोर्वंकवृद्धियुक्तसर्वोत्कृष्टज्ञानावसाना असंख्यातलोक-

१५ मात्रा ज्ञानविकल्पा यावन्तस्तावन्तः पर्यायसमासज्ञानविकल्पा भवन्ति इत्यर्थः । इत उपरि अक्षरगतं श्रुतज्ञानं
वक्ष्यामि ॥२३२॥ अथाक्षरगतं श्रुतज्ञानं प्ररूपयति—

पर्यायसमासज्ञानविकल्पसम्बन्धिषु असंख्यातलोकमात्रवारषट्स्थानेषु भागवृद्धिगुणवृद्धियुक्तेषु तद्वृद्धि-
निमित्तसंख्यातासंख्यातानन्ता अवस्थिताः प्रतिनियतप्रमाणा भवन्ति इति चरमषट्स्थानस्य चरमोर्वंकतो-
ऽप्रेतनमष्टाङ्कवृद्धियुक्तस्थानं अर्थाक्षरश्रुतज्ञानं भवति इति तत्पूर्वकप्रतिनियताष्टाङ्कप्रमाणं अत्रतनाष्टाङ्कविल-

२० क्षणमिति कथयति—

बार षट्स्थान वृद्धिसे बडे हुए पर्याय समास ज्ञानके विकल्प होते हैं । सो अनन्त भाग वृद्धिसे
युक्त जघन्य ज्ञानके विकल्पसे लेकर सबसे अन्तिम उर्वंक नामक अनन्त भाग वृद्धि युक्त
सबसे उत्कृष्ट ज्ञान पर्यन्त असंख्यात लोक मात्र ज्ञानके विकल्प होते हैं । वे सब पर्याय
समास ज्ञानके विकल्प हैं । यहाँसे आगे अक्षरात्मक श्रुतज्ञानको कहेंगे ॥२३२॥

२५

अब अक्षरश्रुतज्ञानको कहते हैं—

पर्याय समास ज्ञानके विकल्प सम्बन्धी असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान भाग वृद्धि
और गुणवृद्धिको लिये हुए हैं । उनमें वृद्धिके निमित्त संख्यात, असंख्यात और अनन्त अव-
स्थित हैं, उनका प्रमाण निश्चित है । अर्थात् संख्यातका प्रमाण उत्कृष्ट संख्यात मात्र,
असंख्यातका प्रमाण असंख्यात लोक मात्र और अनन्तका प्रमाण जीवराशि मात्र निश्चित
३० है । अन्तिम षट्स्थानका अन्तिम उर्वंक जो अनन्त भाग वृद्धिको लिए हुए पर्याय समास
ज्ञानका सर्वोत्कृष्ट भेद है, उससे आगेका अष्टांक अर्थात् अनन्त गुण वृद्धि युक्त स्थान अर्था-

मात्रवारषट्स्थानंगळ आवुदो दु चरमषट्स्थानमदर चरमोर्व्वकवृद्धियुक्तसर्वोत्कृष्टपर्यायसमास-
ज्ञानमष्टांकदिदमोम्मे गुणिसिदुदरोरन्नमपुदर्याक्षरज्ञानमष्टांकवृद्धियुक्तस्थानमे बुदर्थमवे तप्पुवे बोडे
रूपोनेकट्टमात्रापुनरुक्ताक्षरसंदर्भरूप द्वाषशांगश्रुतस्कन्धजनिताथज्ञानं श्रुतकेवलमे दु पेळत्पट्टुदु ।
के । ई श्रुतकेवलज्ञानं रूपोनेकट्टमात्रापुनरुक्ताक्षरप्रमाणदिदं भागिसुत्तिरलु अर्थाक्षररूपमपेकाक्षर-
प्रमाणमवकु के मो यर्थाक्षरं सर्वोत्कृष्टपर्यायसमासज्ञानमप्य चरमोर्व्वकदिद भागिसुत्तिरलु ५
१८ =

चरमोर्व्वकं गुणिसिदष्टांकप्रमाणमवकु मदु कारणदिद मिन्ना अर्थाक्षरश्रुतज्ञानोत्पत्तिनिमित्तं
चरमोर्व्वकापहृत अर्थाक्षररूपाष्टांकदिदं गुण्यरूपमप्य चरमोर्व्वकं गुणिसुत्तिरलु तु पुनः अर्था-
क्षरज्ञानं भवतीति अर्थाक्षरज्ञानं युक्ति युक्तमपुवे दु जिनैर्निदिष्टं जिनोक्तमवकुमिदंत्यदीपकमेत्ला
चतुरंकादियष्टांकावसानमाद षट्स्थानंगळ भागवृद्धियुक्तस्थानंगळं गुणवृद्धियुक्तस्थानंगळं तंतम्म
पिदणानंतरोर्व्वकवृद्धियुक्तस्थानं भागिसियं गुणिसियं यथासंख्यं चतुरंकपंचांकंगळ षट्समाष्टांकंगळ १०

असंख्यातलोकमात्रवारषट्स्थानेषु यच्चरमं षट्स्थानं तस्य चरमोर्व्वकरूपवृद्धियुक्तसर्वोत्कृष्टपर्यायसमास-
ज्ञानं अष्टाङ्केन एकवारं गुणिते समुत्पन्नं अर्थाक्षरज्ञानं अष्टाङ्कवृद्धियुक्तस्थानमित्यर्थः । तत् कियद् ? रूपोनेकट्ट-
मात्रापुनरुक्ताक्षरसंदर्भरूपद्वादशाङ्कश्रुतस्कन्धजनिताथज्ञानं श्रुतकेवलमित्युच्यत । के । इदं श्रुतकेवलज्ञानं
रूपोनेकट्टमात्रापुनरुक्ताक्षरप्रमाणेन भक्तं सत् अर्थाक्षररूपमेकाक्षरप्रमाणं भवति के इदमर्थाक्षरं सर्वोत्कृष्ट-
१८ =

पर्यायसमासज्ञानरूपोर्व्वङ्केन भक्तं सच्चरमोर्व्वङ्कगुणिताष्टाङ्कप्रमाणं भवति ततः कारणादिदानीं तदार्थाक्षरश्रुत- १५
ज्ञानोत्पत्तिनिमित्तं चरमोर्व्वकापहृताक्षररूपाष्टाङ्केन गुण्यरूपे चरमोर्व्वङ्के गुणिते तु-पुनः अर्थाक्षरज्ञानं युक्तियुक्तं
भवति इति जिनैर्निदिष्टम् । इदमन्त्यदीपकं इति सर्वाण्यपि चतुरङ्काष्टाष्टावसानानि षट्स्थानानां भागवृद्धि-
युक्तस्थानानि गुणवृद्धियुक्तस्थानानि च स्वस्वपूर्वानन्तरोर्व्वङ्कवृद्धियुक्तस्थानेन भवत्वा पुनस्तेनैव गुणयित्वा

क्षर श्रुत ज्ञान होता है । पहले जो अष्टांकका प्रमाण जीवराशि मात्र गुणा कहा है, उससे यहाँ २०
जो अष्टांक है, उसका प्रमाण वह नहीं है विलक्षण है, यह कहते हैं—

असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानोंमें जो अन्तिम षट्स्थान है, उसके अन्तिम उर्व्वक रूप २५
वृद्धिसे युक्त सर्वोत्कृष्ट पर्यायसमास ज्ञानको एक बार अष्टांकसे गुणा करनेपर अर्थाक्षर
श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है । इससे उसे अष्टांक वृद्धि युक्त स्थान कहते हैं । उस अष्टांकका
कितना प्रमाण है, यह बतलाते हैं, एक कम एकही मात्र अपुनरुक्त अक्षरोंकी रचना रूप द्वाद-
शांग श्रुतस्कन्धसे उत्पन्न हुए ज्ञानको श्रुत केवल ज्ञान कहते हैं । इस श्रुत केवल ज्ञानको एक २५
कम एकट्ठी मात्र अपुनरुक्त अक्षरोंके प्रमाणसे भाग देनेपर अर्थाक्षर रूप एक अक्षरका प्रमाण
होता है । इस अर्थाक्षरमें सबसे उत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञान रूप उर्व्वकसे भाग देनेपर अन्तिम
उर्व्वकके गुणकार रूप अष्टांकका प्रमाण होता है । अर्थात् अर्थाक्षर ज्ञानके अविभाग प्रतिच्छेदों-
का जितना प्रमाण है, उसमें सर्वोत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञानके भेद रूप उर्व्वकके अविभाग
प्रतिच्छेदोंके प्रमाणका भाग देनेपर जितना प्रमाण आता है, वही यहाँ अष्टांकका प्रमाण है । ३०
इस कारणसे अब उस अक्षर श्रुतज्ञानकी उत्पत्तिका कारण जो अन्तिम उर्व्वक है, उससे भाजित
अक्षर रूप अष्टांकसे गुण्य रूप अन्तिम उर्व्वकमें गुणा करने पर अर्थाक्षर ज्ञान होता है, यह
युक्तियुक्त है ; ऐसा जिनदेवने कहा है । यह कथन अन्त्यदीपक अर्थात् अन्तमें रखे हुए दीपक-

वृद्धियुक्तस्थानंगन्तुत्पत्तियुक्तमल्लदे केवलं पर्यायजघन्यज्ञानमने भागिसियं गुणिसियं पुट्टिदुवल्ले-
बुदक्के दु निश्चयिसुबुदु मीयर्थाक्षरज्ञानम के । उ नपवत्तिसुत्तिरलु श्रुतकेवलज्ञानसंख्यातभाग-
१८ = उ

मात्रार्थाक्षरज्ञानप्रमाणमक्कुं के अक्षराज्जातं ज्ञानमक्षरज्ञानमर्थविषयमर्थग्राहकमर्थाक्षर-
१८ =

ज्ञानं । अथवा अय्यते गम्यते जायतयित्यर्थः । न क्षरतीत्यक्षरं द्रव्यरूपतया विनाशाभावात् ।
५ अर्थश्चासावक्षरं च तदर्थक्षरं । अथवा अय्यते गम्यते श्रुतकेवलस्य संख्येयभागत्वेन निश्चीयत
इत्यर्थः । अर्थश्चासावक्षरं च तदर्थक्षरं तस्माज्जातं ज्ञानमर्थाक्षर ज्ञानं ।

अथवा त्रिविधमक्षरं लब्ध्यक्षरं निर्वृत्यक्षरं स्थापनाक्षरं चेति । तत्र पर्यायज्ञानावरण-
प्रभृतिश्रुतकेवलज्ञानावरणपर्यन्तक्षयोपशमोद्भूताऽत्मनोऽर्थग्रहणशक्तिर्लब्धिर्भावेन्द्रियं । तद्रूपमक्षरं
लब्ध्यक्षरं अक्षरज्ञानोत्पत्तिहेतुत्वात् । कण्ठोष्ठतात्वादित्थानस्पष्टताधिकरणप्रयत्ननिर्वर्त्यमानस्वरूप-
१० मकारादिककारादिस्वरव्यञ्जनरूपमूलवर्णतत्संयोगादिसंस्थानं निर्वृत्यक्षरं । पुस्तकेषु तत्तद्देशानु-

यथासंख्यं चतुरङ्गपञ्चाङ्गषडङ्गसप्ताङ्गाष्टाङ्गवृद्धियुक्तस्थानानि उत्पद्यन्ते, न च केवलं पर्यायजघन्यज्ञानमेव
भवत्वा गुणयित्वा उत्पद्यत इति निश्चेतव्यं, इदमर्थाक्षरज्ञानं के उ अपवत्तितं सत् श्रुतकेवलज्ञान-

१८ = उ

संख्यातभागमात्रं अर्थाक्षरज्ञानप्रमाणं भवति के अक्षराज्जातं ज्ञानं अक्षरज्ञानं अर्थविषयमर्थग्राहकं

१८ =

अर्थाक्षरज्ञानं अथवा अय्यते गम्यते जायते इत्यर्थः, न क्षरति इत्यक्षरं द्रव्यरूपतया विनाशाभावात् । अर्थश्चा-
१५ सावक्षरं च तदर्थक्षरम् । अथवा अय्यते गम्यते श्रुतकेवलस्य संख्येयभागत्वेन निश्चीयते इत्यर्थः, अर्थश्चासावक्षरं
च तदर्थक्षरं तस्माज्जातं ज्ञानमर्थाक्षरज्ञानम् । अथवा त्रिविधमक्षरं लब्ध्यक्षरं निर्वृत्यक्षरं स्थापनाक्षरं चेति ।
तत्र पर्यायज्ञानावरणप्रभृतिश्रुतकेवलज्ञानावरणपर्यन्तक्षयोपशमोद्भूतात्मनोऽर्थग्रहणशक्तिर्लब्धिः भावेन्द्रियं,
तद्रूपमक्षरं लब्ध्यक्षरं, अक्षरज्ञानोत्पत्तिहेतुत्वात् कण्ठोष्ठतात्वादित्थानस्पष्टताधिकरणप्रयत्ननिर्वर्त्यमानस्वरूपं
अकारादिककारादिस्वरव्यञ्जनरूपं मूलवर्णतत्संयोगादिसंस्थानं निर्वृत्यक्षरम् । पुस्तकेषु तत्तद्देशानुरूपतया

के समान है, इसलिए चतुरङ्गसे लेकर अष्टाङ्ग पर्यन्त षट्स्थानोंके भागवृद्धि और गुण वृद्धिसे
२० युक्त सब स्थान अपने-अपने अनन्तर पूर्व उर्वक वृद्धि युक्त स्थानसे भाग देनेपर जितना प्रमाण
आवे, उससे पुनः उस पूर्व स्थानको गुणा करनेपर यथाक्रमसे चतुरङ्ग, पञ्चाङ्ग, षष्ठाङ्ग, सप्ताङ्ग
और अष्टाङ्ग वृद्धि युक्त स्थान उत्पन्न होते हैं । केवल जघन्य पर्याय ज्ञानमें भाग देकर और
फिर उसीसे गुणा करनेपर ये स्थान उत्पन्न नहीं होते, यह निश्चित जानना । इस प्रकार
श्रुत केवल ज्ञानका संख्यातवाँ भाग मात्र अर्थाक्षर श्रुत ज्ञानका प्रमाण होता है ।

२५ अक्षरसे उत्पन्न हुआ ज्ञान अक्षर ज्ञान है । जो अर्थको विषय करता है या अर्थका
ग्राहक है, वह अर्थाक्षर ज्ञान है । अथवा जो अय्यते अर्थात् जाननेमें आता है, वह अर्थ है और
द्रव्य रूपसे विनाश न होनेसे अक्षर है। अर्थ और अक्षरको अर्थाक्षर कहते हैं । अथवा 'अय्यते'
अर्थात् श्रुत केवलके संख्यातवें भाग रूपसे जिसका निश्चय किया जाता है, वह अर्थ है ।
३० अर्थ और अक्षर अर्थाक्षर है । उससे उत्पन्न ज्ञान अर्थाक्षर ज्ञान है । अथवा अक्षर तीन
प्रकारका है—लब्ध्यक्षर, निर्वृत्यक्षर, और स्थापनाक्षर । उनमें-से पर्याय ज्ञानावरणसे लेकर
श्रुतकेवलज्ञानावरण पर्यन्तके क्षयोपशमसे उत्पन्न आत्माकी अर्थको ग्रहण करनेकी शक्ति लब्धि-

रूपतया लिखितसंस्थानं स्थापनाक्षरं । एवंविधमप्य एकाक्षरश्रवणसंजातार्थज्ञानमेकाक्षरश्रुतज्ञान-
मेदितुं जिनरुग्निदं पेठल्पदुर्दुर्मिदं किञ्चित्प्रतिपादितमाद्यु ।

अनंतरं श्रुतनिबद्धमं श्रुतविषयमं पेठदपं—

पण्णवणिज्जा भावा अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं ।

पण्णवणिज्जाणं पुण अणंतभागो दु सुदणिवद्धो ॥३३४॥

५

प्रज्ञापनीया भावा अनंतभागस्तु अनभिलाप्यानां । प्रज्ञापनीयानां पुनरनंतभागः श्रुत-
निबद्धः ॥

अनभिलाप्यंगळप्य वाग्विषयंगळलदंतप्य केवलं केवलज्ञानगोचरमप्य भावानां जीवाद्यर्थ-
गळ अनंतैकभागमात्रंगळु । भावाः जीवाद्यर्थंगळु प्रज्ञापनीयाः तीर्थकरसातिशयदिव्यध्वनि
प्रतिपाद्यंगळपुवु । पुनः मत्ते प्रज्ञापनीयानां सातिशयदिव्यध्वनिप्रतिपाद्यंगळप्य भावानां जीवाद्य- १०
र्थंगळ अनंतैकभागः अनंतैकभागं श्रुतनिबद्धद्वादशांगश्रुतस्कन्धनिबद्धक्के विषयतेयिदं नियमित-
मक्कुं । श्रुतकेवलिंगळगमुमगोचरार्थप्रतिपादनशक्ति दिव्यध्वनिगुंनुमादिव्यध्वनिगमगोचर-
जीवाद्यर्थग्रहणशक्ति केवलज्ञानदोळे बुदर्थं ।

अवाच्यानामनन्तांशो भावाः प्रज्ञाप्यमानकाः ।

प्रज्ञाप्यमानभावानामनन्तांशः श्रुतोदितः ॥

१५

लिखितसंस्थानं स्थापनाक्षरम् । एवंविधैकाक्षरश्रवणसंजातार्थज्ञानमेकाक्षरश्रुतज्ञानमिति जिनैः कथितत्वात्
किञ्चित् प्रतिपादितम् ॥३३३॥ अथ श्रुतनिबद्धं श्रुतविषयं च प्ररूपयति—

अनभिलाप्यानां अवाग्विषयाणां केवलं केवलज्ञानगोचराणां भावानां जीवाद्यर्थानां अनन्तैकभागमात्राः
भावाः—जीवाद्यर्थाः, प्रज्ञापनीयाः तीर्थकरसातिशयदिव्यध्वनिप्रतिपाद्याः भवन्ति । पुनः प्रज्ञापनीयानां भावानां
जीवाद्यर्थानां अनन्तैकभागः श्रुतनिबद्धः द्वादशाङ्गश्रुतस्कन्धस्य निबद्धः विषयतया नियमितः श्रुतकेवलिनामपि २०
अगोचरार्थप्रतिपादनशक्तिदिव्यध्वनेरस्ति तद्विव्यध्वनेरपि अगोचरजीवाद्यर्थग्रहणशक्तिः केवलज्ञानेऽस्तीत्यर्थः ।

अवाच्यानामनन्तांशो भावाः प्रज्ञाप्यमानकाः । प्रज्ञाप्यमानभावानां अनन्तांशः श्रुतोदितः ॥१॥

रूप भावेन्द्रिय है । उस रूप अक्षर लब्धयक्षर है । क्योंकि वह अक्षर ज्ञानकी उत्पत्तिमें कारण
है । कण्ठ, ओष्ठ, तालु आदि स्थानोंकी हलन-चलन आदि रूप क्रिया तथा प्रयत्नसे जिनके
स्वरूपकी रचना होती है, वे अकारादि स्वर, ककारादि व्यंजनरूप मूल वर्ण और उनके २५
संयोगसे बने अक्षर निर्वृत्त्यक्षर हैं । पुस्तकोंमें उस-उस देशके अनुरूप लिखित अकारादिका
आकार स्थापनाक्षर है । इस प्रकारके एक अक्षरके सुननेसे उत्पन्न हुआ अर्थज्ञान एकाक्षर
श्रुतज्ञान है, ऐसा जिनदेवने कहा है । उसीके आधारसे मैंने किञ्चित् कहा है ॥३३३॥

अब श्रुतके विषयको तथा श्रुतमें कितना निबद्ध है, इसको कहते हैं—

जो भाव अनभिलाप्य अर्थात् वचनके द्वारा कहनेमें नहीं आ सकते, केवल केवल-
ज्ञानके ही विषय हैं, ऐसे पदार्थ जीवादिके अनन्तवें भाग मात्र प्रज्ञापनीय हैं अर्थात् तीर्थकरकी ३०
सातिशय दिव्यध्वनिके द्वारा कहे जाते हैं । पुनः प्रज्ञापनीय जीवादि पदार्थोंका अनन्तवाँ
भाग द्वादशांग श्रुतस्कन्धमें विषय रूपसे निबद्ध होता है । श्रुतकेवलियोंके भी अगोचर अर्थ-
को कहनेकी शक्ति दिव्यध्वनिमें होती है । और दिव्यध्वनिसे भी अगोचर अर्थको ग्रहण
करनेकी शक्ति केवलज्ञानमें है ॥३३४॥

अनंतरं गाथाद्वयदिदं शास्त्रकारनक्षरसमासं पेक्ष्यं :—

एयक्खरादु उवरिं एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो ।

संखेज्जे खलु उड्ढे पदणामं होदि सुंदणाणं ॥३३५॥

एकाक्षरादुपरि चैकैकेनाक्षरेण वर्द्धमानाः । संख्येये खलु वृद्धे पदनाम भवति श्रुतज्ञानं ॥

- ५ एकाक्षरजनितार्थज्ञानदमेले तु मत्ते पूर्वोक्तक्रमदि षट्स्थानवृद्धिरहितमाणि एकैकाक्षरदिदं वर्द्धमानमागुत्तिरलु द्व्यक्षरत्र्यक्षरादिरूपोनैकपदाक्षरमात्रपर्यन्तसमुदायश्रवणजनिताक्षरसमासज्ञानविकल्पंगलु संख्येयंगलु द्विरूपोनैकपदाक्षरप्रमितंगलु सलुत्ते विरलु तदनंतरमुत्कृष्टाक्षरसमासविकल्पदमेले एकाक्षरवृद्धिमागुत्तिरलु पदनाममनुळ्ळ श्रुतज्ञानमक्कुं ।

सोलससयचउतीसा कोडी तियसीदिलक्खयं चेव ।

- १० सत्तसहस्सद्वसया अट्ठासीदी य पदवण्णा ॥३३६॥

षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोट्यष्ट्यशीतिलक्षाणि चैव । सप्तसहस्राष्टशताष्टाशीतिश्च पदवर्णाः ॥

इल्लि अर्थपदं प्रमाणपदं मध्यमपदमेदु पदं त्रिविधमक्कुं । अल्लिये निरक्षरसमूहदिदं विवक्षितार्थमरियल्लपडुवुमदर्थपदमक्कुं । गां दंडेन शालिभ्यो निवारय । त्वमग्निमानय । इत्यादिगलु । अष्टाक्षरादिसंख्येयिदं निष्पन्नमप्यक्षरसमूहं प्रमाणपदमेदुदक्कुं । नमः श्रीवर्द्धमानाय ।

- १५ एंबिवु मोदलादुवु । षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोट्यष्ट्यशीतिलक्षाणि । सप्तसहस्राष्टशताष्टाशीतिश्च पदवर्णाः एंदी गाथोक्तप्रमाणैकपदा पुनरुक्ताक्षरंगळं समूहं मध्यमपदमेदुदक्कुं १६३४८३०७८८८

॥३३४॥ अथ गाथाद्वयेन शास्त्रकारः अक्षरसमासं कथयति—

एकाक्षरजनितार्थज्ञानस्योपरि तु—पुनः पूर्वोक्तषट्स्थानवृद्धिक्रमरहिततया एकैकाक्षरेणैव वर्द्धमानाः द्व्यक्षरत्र्यक्षरादिरूपोनैकपदाक्षरमात्रपर्यन्ताक्षरसमुदायश्रवणसंजनिताक्षरसमासज्ञानविकल्पाः संख्येयाः द्विरूपोनैक-

- २० पदाक्षरप्रमितागताः तदा अनन्तरस्योपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां पदनाम श्रुतज्ञानं भवति ॥३३५॥

अत्र अर्थपदं प्रमाणपदं मध्यमपदं चेति पदं त्रिविधम् । तत्र यावताक्षरसमूहेन विवक्षितार्थो ज्ञायते तदर्थपदम् । दण्डेन शालिभ्यो गां निवारय, त्वमग्निमानय इत्यादयः । अष्टाक्षरादिसंख्येया निष्पन्नोऽक्षरसमूहः प्रमाणपदं 'नमः श्रीवर्द्धमानाय' इत्यादि । षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोट्यः त्र्यशीतिलक्षाणि सप्तसहस्राणि अष्टशतानि

अब शास्त्रकार दो गाथाओंसे अक्षर समासको कहते हैं—

- २५ एक अक्षरसे उत्पन्न अर्थज्ञानके ऊपर पूर्वोक्त षट्स्थानपतित वृद्धिके क्रमके बिना एक-एक अक्षर बढ़ते हुए दो अक्षर, तीन अक्षर आदि रूप एक हीन पदके अक्षर पर्यन्त अक्षर समूहके सुननेसे उत्पन्न अक्षर समास ज्ञानके विकल्प संख्यात हैं अर्थात् दो हीन पदके अक्षर प्रमाण हैं । उसके अनन्तर उत्कृष्ट अक्षर समासके विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़नेपर पदनामक श्रुतज्ञान होता है ॥३३५॥

- ३० पदके तीन भेद हैं—अर्थपद, प्रमाणपद, मध्यमपद । जितने अक्षरोंके समूहसे विवक्षित अर्थका ज्ञान होता है, वह अर्थपद है ; जैसे डण्डेसे गायको भगाओ । आग लाओ, इत्यादि । आठ आदि अक्षरोंकी संख्यासे बने अक्षर समूहको प्रमाण पद कहते हैं ; जैसे 'नमः श्रीवर्द्धमानाय' इत्यादि । सोलह सौ चौतीस करोड़, तेरासी लाख, सात हजार आठ-सौ अठासी अक्षरोंका एक पद होता है । इस गाथामें कहे प्रमाण एक पदके अपुनरुक्त अक्षरों-

- ३५ १. मं एंबीत्यादिगलु ।

हीनाधिकमानंगलप्य प्रमाणपदार्थपदद्वयमध्यदोले पेळलपट्ट संख्याक्षरपरिमितसमूहदोळु वर्तमानत्व-
दिदं मध्यमपदमेदितन्वत्येतेष्विदं परमाणमदोळा मध्यमपदमे गृहीतमाप्येकदोळे प्रमाणात्पदंगलु
लोकव्यवहारदोळु गृहीतंगलागुत्तिरली मध्यमपदमे लोकोत्तरमप्य परमाणमदोळु पदमेदितु
व्यवहारिसलपट्टदुदु ।

अनंतरं संघातश्रुतज्ञानमं पेळदपं :—

एयपदादो उअरिं एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो ।

संखेज्जसहस्सपदे उड्ढे संघादणाम सुदं ॥३३७॥

एकपदादुपय्येकैकाक्षरेण वर्द्धमाने । संख्येयसहस्रपदे वृद्धे संघातनामश्रुतं ॥

एकपदक्के पेळद प्रमाणाक्षरसमूहद मेले एकैकवर्णवृद्धिकमदिदमेकपदाक्षरमात्रपदसमास-
ज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु द्विगुणपदज्ञानमक्कु-। मदर मेले मत्तमेकैकवर्णवृद्धिकमदिदमेकपदा- १०
क्षरमात्रपदसमासज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु त्रिगुणपदश्रुतज्ञानमक्कुमितु प्रत्येकमेकपदाक्षरमात्र-
विकल्पसहचरितंगलप्य चतुर्गुणपदादिसंख्यातसहस्रगुणितपदमात्रंगळु रूपोनपदसमासज्ञानविकल्पं-

गळु सलुत्तं विरलु प ००० प २ प २०००० प ३०००० प ४०००० प १००० १-१ ई चरमपद-

अष्टाशीतिश्च पदवर्णाः इत्येतद्गाथोक्तप्रमाणैकपदाऽपुनरुक्ताक्षरसमूहो मध्यमपदं १६३४८३०७८८८ ।
हीनाधिकमानयोः प्रमाणपदार्थपदयोर्मध्ये एतदुक्तसंख्यापरिमिताक्षरसमूहे वर्तमानत्वात् मध्यमपदं इत्यन्वर्थतया १५
परमाणमे तदेव परिगृहीतं, प्रमाणपदार्थे पदे तु लोकव्यवहारे परिगृहीते । अत एव लोकोत्तरे परमाणमे
मध्यमपदमेव पदमिति व्यवहियते ॥३३६॥ अथ संघातश्रुतज्ञान प्ररूपयति—

एकपदस्य उक्तप्रमाणाक्षरसमूहस्योपरि एकैकाक्षरवृद्ध्या एकपदाक्षरमात्रेषु पदसमासज्ञानविकल्पेषु
गतेषु द्विगुणपदज्ञानं भवति । तस्योपरि पुनरपि एकपदाक्षरमात्रेषु पदसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु त्रिगुणपदज्ञानं
भवति । एवं प्रत्येकमेकपदाक्षरमात्रविकल्पसहचरितेषु चतुर्गुणपदादिषु संख्यातसहस्रगुणितपदमात्रेषु रूपोनेषु २०
पदसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु—

प। प प। ००। प २। प २। प २। ००। प ३। प ३। प ३ ००० प १ ००० १ उ

१ ६ = १ ६ = १ ६ = १ ० ० ० १

का समूह १६३४८३०७८८८ मध्यम पद है । प्रमाण पद और अर्थ पदमें हीन अधिक अक्षर
होते हैं । उन दोनोंके मध्यमें कही गयी संख्या परिमाणवाले अक्षर समूहमें वर्तमान होनेसे
इसका मध्यम पद नाम सार्थक होनेसे परमाणममें वही लिया गया है । प्रमाणपद और २५
अर्थपद तो लोकव्यवहारमें चलते हैं, इसीसे लोकोत्तर परमाणममें मध्यमपदको ही पद
कहा है ॥३३६॥

अब संघात श्रुतज्ञानको कहते हैं—

एक पदके उक्त प्रमाण अक्षर समूहके ऊपर एक-एक अक्षरकी वृद्धि होते-होते एक
पदके अक्षर प्रमाण पद समास ज्ञानके विकल्पोंके होनेपर पद श्रुत ज्ञान दूना होता है । उसके ३०
ऊपर पुनः एक पदके अक्षर प्रमाण पदसमास ज्ञानके विकल्प बीतनेपर पदज्ञान तिगुना होता

१. म पदमर्थपद । २. म संखेज्जपदे उड्ढे संघादं णाम होदि सुदं ।

समासज्ञानोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरमे वृद्धमागुतिरलु संघातश्रुतज्ञानमक्कुं— प १००० १ मिदुवुं चतुर्गतिगळोळोडु गतिस्वरूपनिरूपकमध्यमपदसमुदायरूपसंघातश्रवणजनितार्थज्ञानमक्कुं ।

अनंतरं प्रतिपत्तिकश्रुतज्ञानस्वरूपं पेळ्दपं :—

एकदरगदिगिरुवयसंघादसुदादु उवरि पुव्वं वा ।

वण्णे संखेज्जे संघादे उड्ढम्मि पडिवत्ती ॥३३८॥

एकतमगतिनिरूपकसंघातश्रुतादुपरि पूर्ववत् । वर्णं संख्येये संघाते वृद्धे प्रतिपत्तिः ॥

पूर्वोक्तप्रमाणमप्य एकतमगतिनिरूपकसंघातश्रुतद मेले पूर्वपरिपाटिधिदमेकैकवर्णवृद्धि-
सहचरितमपेकैकपदवृद्धिक्रमदिदं संख्यातसहस्रपदमात्रसंघातंगळु संख्यातसहस्रप्रमितंगळु रूपो-
संघातसमासज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु तच्चरमसंघातोत्कृष्टविकल्पद प १०००१ । १००० १-१
१० वृद्धिय मेले एकाक्षरवृद्धियमेलेयागुतिरलु प्रतिपत्तिकमेव श्रुतज्ञानमक्कुं १६ = १०००१ । १०००१ ।
इदुवुं नारकादिचतुर्गतिस्वरूपसविस्तरप्ररूपकप्रतिपत्तिकाख्यग्रन्थश्रवणसंजातार्थज्ञानमेदितु
निश्चैसल्पडुवुदु ।

अनंतरमनुयोगश्रुतज्ञानं पेळ्दपह—

चरमस्य पदसमासज्ञानोत्कृष्टविकल्पस्य उपरि एकस्मिन्नक्षरे वृद्धे सति संघातश्रुतज्ञानं भवति
१५ १६ = १०००१ तच्चतसृणां गतीनां मध्ये एकतमगतिस्वरूपनिरूपकमध्यमपदसमुदायरूपसंघातश्रवणजनितार्थ-
ज्ञानं ॥३३७॥ अथ प्रतिपत्तिकश्रुतज्ञानस्वरूपं निरूपयति—

पूर्वोक्तप्रमाणस्य एकतमगतिनिरूपकसंघातश्रुतस्य उपरि पूर्वोक्तप्रकारेण एकैकवर्णवृद्धिसहचरितैकैक-
पदवृद्धिक्रमेण संख्यातसहस्रपदमात्रसंघातेषु संख्यातसहस्रेषु रूपोनेषु संघातसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमस्य
संघातसमासोत्कृष्टविकल्पस्य १६ = १००० १ । १००० १-१ एतस्योपरि एकस्मिन्नक्षरे वृद्धे सति प्रति-
२० पत्तिकं नाम श्रुतज्ञानं भवति १६ = १००० १ । १००० १ । तच्च नारकादिचतुर्गतिस्वरूपसविस्तरप्ररूपक-
प्रतिपत्तिकाख्यग्रन्थश्रवणजनितार्थज्ञानमिति निश्चेतव्यम् ॥३३८॥ अथानुयोगश्रुतज्ञानं प्ररूपयति—

है । इस प्रकार प्रत्येक एक पदके अक्षर मात्र विकल्पोंके बीतनेपर पदज्ञानके चतुर्गुने-पंचगुने
होते-होते संख्यात हजार गुणित पदमात्र पदसमास ज्ञानके विकल्पोंमें एक अक्षर घटानेपर
जो प्रमाण रहे, उतने पदसमास ज्ञानके विकल्प होते हैं । अन्तिम पदसमास ज्ञानके उत्कृष्ट
२५ विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़ानेपर संघात श्रुतज्ञान होता है । सो चार गतियोंमें-से किसी
एक गतिके स्वरूपका कथन करनेवाले मध्यमपदके समुदायरूप संघात श्रुतज्ञानके सुननेसे जो
अर्थज्ञान होता है, वह संघात श्रुतज्ञान है ॥३३७॥

अब प्रतिपत्ति श्रुतज्ञानका स्वरूप कहते हैं—

पूर्वोक्त प्रमाण किसी एक गतिके निरूपक संघात श्रुतके ऊपर पूर्वोक्त प्रकारसे एक-
३० एक अक्षरकी वृद्धिपूर्वक एक-एक पदकी वृद्धिके क्रमसे संख्यात हजार पदप्रमाण संख्यात
हजार संघातमें होते हैं । उनमें एक अक्षर कम करनेपर संघात श्रुतज्ञानके विकल्प होते हैं ।
उसके अन्तिम संघात समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़ानेपर प्रतिपत्ति नामक
श्रुतज्ञान होता है । नारक आदि चार गतियोंके स्वरूपका विस्तारसे कथन करनेवाले
प्रतिपत्तिक नामक ग्रन्थके सुननेसे होनेवाला अर्थज्ञान प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान होता है ॥३३८॥

३५ अब अनुयोग श्रुतज्ञानको कहते हैं—

चउगइसरुवरुवयपडिवत्तीदो दु उवरि पुव्वं वा ।

वण्णे संखेज्जे पडिवत्ती उड्ढम्मि अणियोगं ॥३३९॥

चतुर्गतिस्वरूपरूपकप्रतिपत्तितस्तुपरि पूर्व्वं वत् । वर्णे संख्येये प्रतिपत्तिके वृद्धे अनुयोगं ॥

चतुर्गतिस्वरूपप्ररूपकप्रतिपत्तिकदिदं मुंदेयुमदर मेले प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिक्रमदिदं संख्यात-
सहस्रपदसंघातप्रतिपत्तिकंगळु संवृद्धिगळुगुत्तिरलु रूपोनतावन्मात्रप्रतिपत्तिकसमासज्ञानविकल्पंगळु
सलुत्तंमिरलु तच्चरमप्रतिपत्तिकसमासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तं विरलु अनुयोगाख्य-
श्रुतज्ञानमक्कुं । अदुवुं चतुर्दशमार्गणास्वरूपप्रतिपादकानुयोगमेव शब्दसंदर्भश्रवणजातार्थ-
ज्ञानमेवुदर्थ ।

अनंतरं प्राभूतप्राभूतकमं गाथाद्वयदिदं पेळ्ळदपर :—

चोदसमग्गणसंजुद अणियोगादुवरि वड्ढिदे वण्णे ।

चउरादी अणियोगे दुगवारं पाहुडं होदि ॥३४०॥

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगादुपरि वदिते वर्णे । चतुराद्यनुयोगे द्विकवारं प्राभूतं भवति ॥

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगश्रुतद मेले मुंदे पूर्व्वोक्तक्रमदिदं प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरित-
पदादिवृद्धिगळिदं चतुराद्यनुयोगंगळु संवृद्धिगळुगुत्तिरलु रूपोनतावन्मात्रंगलनुयोगसमासज्ञान-
विकल्पंगळु सलुत्तं विरलु तच्चरमानुयोगसमासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तिरलु-
द्विकवारप्राभूतकमेव श्रुतज्ञानमक्कुं ।

चतुर्गतिस्वरूपनिरूपकप्रतिपत्तिकात् परं तस्योपरि प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिक्रमेण संख्यातसहस्रेषु पदसंघात-
प्रतिपत्तिकेषु वृद्धेषु रूपोनतावन्मात्रेषु प्रतिपत्तिकसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमप्रतिपत्तिकसमासोत्कृष्ट-
विकल्पस्योपरि एकस्मिन्क्षरे वृद्धे सति अनुयोगाख्यं श्रुतज्ञानं भवति । तच्चतुर्दशमार्गणास्वरूपप्रतिपादकानु-
योगसंज्ञाशब्दसंदर्भश्रवणजनितार्थज्ञानमित्यर्थः ॥३३९॥ अथ प्राभूतकप्राभूतकस्य स्वरूपं गाथाद्वयेन प्ररूपयति—

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगात्परं तस्योपरि पूर्व्वोक्तक्रमेण प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिश्च-
तुराद्यनुयोगेषु संवृद्धेषु सत्सु रूपोनतावन्मात्रानुयोगसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमानुयोगसमासोत्कृष्टविकल्प-
स्योपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां द्विकवारप्राभूतकं नाम श्रुतज्ञानं भवति ॥३४०॥

चार गतियोंके स्वरूपको कहनेवाले प्रतिपत्तिकसे आगे उसके ऊपर एक-एक अक्षरकी
वृद्धिके क्रमसे संख्यात हजार पदोंके समुदायरूप संख्यात हजार संघात और संख्यात
हजार संघातोंके समूहरूप प्रतिपत्तिककी संख्यात हजार प्रमाण वृद्धि होनेपर उसमें-से एक
अक्षर कम करनेपर प्रतिपत्तिक समास ज्ञानके विकल्प होते हैं । उसके अन्तिम प्रतिपत्तिक
समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़ानेपर अनुयोग नामक श्रुतज्ञान होता है ।
चौदह मार्गणाओंके स्वरूपके प्रतिपादक अनुयोग नामक श्रुतग्रन्थके सुननेसे हुआ अर्थज्ञान
अनुयोग श्रुतज्ञान है ॥३३९॥

अब दो गाथाओंसे प्राभूतक-प्राभूतकका स्वरूप कहते हैं—

चौदह मार्गणाओंसे सम्बद्ध अनुयोगसे आगे उसके ऊपर पूर्व्वोक्त क्रमसे प्रत्येक एक-
एक अक्षरकी वृद्धिसे युक्त पद आदिकी वृद्धिके द्वारा चार आदि अनुयोगोंकी वृद्धि होनेपर
प्राभूतक-प्राभूतक श्रुतज्ञान होता है । उसमें एक अक्षर कम करनेपर उतने मात्र अनुयोग

पाहुडपाहुडणामं होदित्ति जिणेहि णिद्दिदट्ठं ॥३४१॥

वस्तुष्वेव श्रुतजानद अधिकारः प्राभूतकर्म बरेबुमेकात्थंगळु । प्राभूतद अधिकारमं प्राभूतक
प्राभूतकमेबुदु अदुकारणदिदमेकार्थपय्यायिषब्दमेदितु जिनेन्द्रभट्टारकरिदं पेळल्पद्दुदु । स्ववचि-
विरचित मल्लं बुदत्थं ।

दुग्गवारपाहुडादो उवरिं वण्णे कमेण चउवीसे ।

द्विकवारप्राभृतकादुपरि वर्णं क्रमेण चतुर्विंशती । द्विकवारप्राभृते संवृद्धे खलु भवति ॥

अनंतरं वस्तुवैब श्रुतज्ञानस्वरूपमं पैळदपं—

द्विकवारप्राभृतकात्परं तस्योपरि पूर्वोक्तक्रमेण प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिः चतुर्विंशति-
प्राभृतकप्राभृतकेषु वृद्धेषु रूपोन्नावावन्मात्रेषु प्राभृतकप्राभृतकज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमसमासोत्कृष्टविकल्पस्य
उपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां प्राभृतकं नाम श्रुतज्ञानं भवति ॥३४२॥ अथ वस्तुनामश्रुतज्ञानस्वरूपमाह—

वस्तु नामक श्रुतज्ञानका अधिकार कहो या प्राभृतक कहो, दोनोंका एक ही अर्थ है। प्राभृतकका अधिकार भी प्राभृतक-प्राभृतक नामक होता है। ऐसा अर्हन्त देवने कहा है, स्वरुचि रचित नहीं है ॥३४१॥

३० प्राभृतक-प्राभृतकसे आगे उसके ऊपर पूर्वोक्त प्रकारसे प्रत्येक एक-एक अक्षरकी वृद्धिके क्रमसे पद आदिकी वृद्धिके होते-होते चौबीस प्राभृतक प्राभृतकोंकी वृद्धिमें एक अक्षर घटानेपर प्राभृतक-प्राभृतक समासके भेद होते हैं। उसके अन्तिम भेदमें एक अक्षर बढ़ानेपर प्राभृतक श्रुतज्ञान होता है। उसके ऊपर पूर्वोक्त क्रमसे एक-एक अक्षरकी वृद्धिके क्रमसे बीस प्राभृतक नामक अधिकारोंके बढ़नेपर प्राभृतक नामक श्रुतज्ञान होता है। उसमें एक अक्षर कम करनेपर उतने मात्र प्राभृतक समास ज्ञानके विकल्प होते हैं। उसके अन्तिम प्राभृतक समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़नेपर

३५

वीसं वीसं पाहुड अहियारे एकवत्थुअहियारो ।

एकैकवर्णणउड्ढी क्रमेण सन्वत्थ णादव्वा ॥३४३॥

विंशतिविंशतिः प्राभूताधिकारे एकवस्त्वधिकारः । एकैकवर्णवृद्धिः क्रमेण सर्वत्र ज्ञातव्या ॥

मुं पेळ्द प्राभूतकद मुंदे तदुपरि अदर मेले पूर्वोक्तक्रमदिदमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिगळिमिप्पत्तु प्राभूतकनामाधिकारंगळु संवृद्धंगळुगुत्तं विरलु रूपोनतावन्मात्रप्राभूतकसमास- ५
ज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु तच्चरमप्राभूतकसमासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तं-
विरलु ओं दु वस्तुनामाधिकारश्रुतज्ञानमवक्तुं । वीसं वीसमिति उत्पादादिपूर्वगळनाश्रयिसलपट्ट
वस्तुगळ समूहवीप्सायोळु दिवंचनं पेळल्पट्टुदु । सर्वत्राक्षरसमासप्रथमविकल्पप्रभृति पूर्वसमासो-
त्कृष्टविकल्पपर्यंतमप्युवरोळु क्रमदिदं । पर्यायाक्षरपदसंघातेत्यादि परिपाटीयिदमेकैकवर्णवृद्धि- १०
येवुद्विदुपलक्षणमप्युदरिदमेकैकवर्णपदसंघातादिवृद्धिगळुमरियल्पडुवुवु । ई सूत्रानुसारदिदं वृत्ति-
योळमा प्रकारदिदमे बरेयल्पट्टुदु ।

अनंतरं गाथासूत्रत्रयदिदं पूर्वश्रुतस्वरूपं पेळ्वातं तदवयवंगळुत्पादपूर्वादिचतुर्दशपूर्व-
गळुत्पत्तिक्रमं तोरिदपं :—

दस चोद्दसदु अट्टारसयं चारं च बार सोलं च ।

वीसं तीसं पण्णारसं च दस चदुसु वत्थूणं ॥३४४॥

दश चतुर्दशाष्टाष्टादश द्वादश द्वादश षोडश, विंशति त्रिंशत्पंचदश दश चतुर्षु वस्तूनां ॥

पूर्वोक्तवस्तुश्रुतद मेले प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिगळिवं वक्ष्यमाणोत्पादादि
चतुर्दशपूर्वाधिकारंगळोळु यथासंख्यमागि दश चतुर्दश अष्ट अष्टादश द्वादश द्वादश षोडश विंशति १५

पूर्वोक्तप्राभूतकस्याग्रे तदुपरि पूर्वोक्तक्रमेण एकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिः विंशतिप्राभूतकनामा-
धिकारेषु संवृद्धेषु सत्सु रूपोनतावन्मात्रेषु प्राभूतकसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमप्राभूतकसमासोत्कृष्ट- २०
विकल्पस्योपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां एकं वस्तुनामाधिकारश्रुतज्ञानं भवति । वीसं वीसमिति उत्पादादिपूर्वा-
श्रितवस्तुसमूहवीप्सायां द्विवंचनमुक्तम् । सर्वत्राक्षरसमासप्रथमविकल्पात् प्रभृति पूर्वसमासोत्कृष्टविकल्पपर्यन्तेषु
क्रमेण पर्यायाक्षरपदसंघातेत्यादिपरिपाट्या एकैकवर्णवृद्धिः इदमुपलक्षणं, तेन एकैकवर्णपदसंघातादिवृद्धयो
ज्ञातव्याः । एतत्सूत्रानुसारेण वृत्तौ तथा लिखितम् ॥३४३॥ अथ गाथात्रयेण पूर्वनामश्रुतज्ञानस्वरूपं प्ररूपयं-
स्तदवयवभूतोत्पादपूर्वादिचतुर्दशपूर्वाणामुत्पत्तिक्रमं दर्शयति—

पूर्वोक्तवस्तुश्रुतज्ञानस्य उपरि प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिः वक्ष्यमाणोत्पादादिचतुर्दश- २५

एक वस्तु नामक श्रुतज्ञान होता है । उत्पाद पूर्व आदि पूर्वोक्त वस्तु समूहकी वीप्सामें 'वीसं वीसं' ऐसा दो बार कथन किया है । सर्वत्र अक्षर समासके प्रथम भेदसे लेकर पूर्व समासके उत्कृष्ट विकल्प पर्यन्त क्रमसे पर्याय, अक्षर, पद, संघात इत्यादि परिपाटीसे एक-एक अक्षरकी वृद्धि करना चाहिए । यह कथन उपलक्षण है । अतः 'एक-एक अक्षर पद, संघात आदिकी ३०
वृद्धि जानना' । इस सूत्रके अनुसार टीकामें सर्वत्र यथास्थान कथन किया है ॥३४२-३४३॥

अब तीन गाथाओंसे पूर्व नामक श्रुतज्ञानका स्वरूप कहते हुए उसके अवयवभूत उत्पाद पूर्व आदि चौदह पूर्वोक्त उत्पत्तिका क्रम दर्शाते हैं—

पूर्वोक्त वस्तु श्रुतज्ञानके ऊपर एक-एक अक्षरकी वृद्धिके साथ पद आदिकी वृद्धि होते-

त्रिंशत् पंचदश दश दश दश दश वस्तुगलु वृद्धंगलागुत्तिरलु ।

उत्पादपूर्वगोणिय विरियपवादस्थिणस्थियपवादे ।

पाणासच्चपवादे आदाकम्मपवादे य ॥३४५॥

पच्चक्खणे विज्जाणुवादकल्लाणपाणवादे य ।

५ किरियाधिसालपुच्चे कमसोथ तिलोयविंदुसारे य ॥३४६॥

उत्पादपूर्वग्रायणीयवीर्यप्रवादास्तिनास्तिप्रवादे । ज्ञानसत्यप्रवादे आत्मकर्मप्रवादे च ॥

प्रत्याख्याने विद्यानुवादकल्याणप्राणवादे च । क्रियाविशालपूर्व कमसोथ त्रिलोकविंदुसारे च ॥

१० यथाक्रमदिंदमुत्पादपूर्वमग्रायणीयपूर्व वीर्यप्रज्ञादपूर्वमस्तिनास्तिप्रवादपूर्व ज्ञानप्रवाद-
पूर्व सत्यप्रवादपूर्व आत्मप्रवादपूर्व कर्मप्रवादपूर्व प्रत्याख्यानपूर्व विद्यानुवादपूर्व कल्याणवाद-
पूर्व प्राणवादपूर्व क्रियाविशालपूर्व त्रिलोकविंदुसारपूर्व वेदितु चतुर्दशपूर्वगलुपुविनवरोलु
पूर्वोक्तवस्तुश्रुतज्ञानद मेले मुंदे प्रत्येकमेकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिद्विं दशवस्तुप्रमितवस्तु-
समासज्ञानविकल्पंगलु सलुत्तं विरलु रूपोनतावन्मात्रवस्तुश्रुतसमासज्ञानविकल्पंगलु चरमवस्तु-
समासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तं विरलुत्पादपूर्वश्रुतज्ञानमक्कुमल्लिदत्तलावुत्पाद-

पूर्वाधिकारेषु यथासंख्यं दशचतुर्दशाष्टाष्टादशद्वादशद्वादशषोडशविंशतित्रिंशत्पञ्चदशदशदशदशदशवस्तुषु वृद्धेषु

१५ सत्सु— ॥३४४॥

यथाक्रम उत्पादपूर्व आग्रायणीयपूर्व वीर्यप्रवादपूर्व अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व ज्ञानप्रवादपूर्व सत्यप्रवादपूर्व
आत्मप्रवादपूर्व कर्मप्रवादपूर्व प्रत्याख्यानपूर्व विद्यानुवादपूर्व कल्याणवादपूर्व प्राणवादपूर्व क्रियाविशालपूर्व
त्रिलोकविंदुसारपूर्व चेति चतुर्दशपूर्वाणि भवन्ति । एतेषु पूर्वोक्तवस्तुश्रुतज्ञानस्य उपरि—अग्रे प्रत्येकमेकवर्ण-
वृद्धिसहचरितपदादिवृद्ध्या दशवस्तुप्रमितवस्तुसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु रूपोनतावन्मात्रवस्तुश्रुतसमासज्ञान-
२० विकल्पेषु चरमवस्तुसमासोत्कृष्टविकल्पस्योपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां उत्पादपूर्वश्रुतज्ञानं भवति । ततः
उत्पादपूर्वश्रुतज्ञानस्य उपरि प्रत्येकमेकैकाक्षरवृद्धिसहचरितपदादिवृद्ध्या चतुर्दशवस्तुषु वृद्धेषु रूपोनतावन्मात्रो-
त्पादपूर्वममासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमोत्कृष्टोत्पादपूर्वसमासज्ञानविकल्पस्य उपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां

होते आगे कहे गये उत्पाद पूर्व आदि चौदह अधिकारोंमें क्रमसे दस, चौदह, आठ, अठारह,
बारह, बारह, सोलह, बीस, तीस, पन्द्रह, दस, दस, दस, दस वस्तु अधिकार होते हैं ।
२५ इतने वस्तु अधिकारोंकी वृद्धि होनेपर ॥३४४॥

यथा क्रम उत्पाद पूर्व, आग्रायणीयपूर्व, वीर्य प्रवाद पूर्व, अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व, ज्ञान-
प्रवाद पूर्व, सत्य प्रवाद पूर्व, आत्मप्रवादपूर्व, कर्मप्रवादपूर्व, प्रत्याख्यान पूर्व, विद्यानुवाद-
पूर्व, कल्याणवाद पूर्व, प्राणवादपूर्व, क्रियाविशाल पूर्व, त्रिलोकविंदुसार पूर्व ये चौदह पूर्व
होते हैं । इनमें-से प्रत्येकमें पूर्वोक्त वस्तु श्रुतज्ञानके ऊपर एक-एक अक्षरकी वृद्धिके साथ दस
३० वस्तु प्रमाण वस्तु समास ज्ञानके विकल्पोंमें एक अक्षरसे हीन विकल्प पर्यन्त वस्तु श्रुत
समास ज्ञानके विकल्प होते हैं । उनमें अन्तिम वस्तु समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक
अक्षरकी वृद्धि होनेपर उत्पाद पूर्व श्रुतज्ञान होता है । फिर उत्पादपूर्व श्रुतज्ञानके ऊपर एक-
एक अक्षरकी वृद्धिके क्रमसे पद आदिकी वृद्धिके साथ चौदह वस्तुओंकी वृद्धि होनेपर उसमें
एक अक्षर कम विकल्प पर्यन्त उत्पाद पूर्व समास ज्ञानके विकल्प होते हैं । उसके अन्तिम

पूर्वश्रुतज्ञानद मेले प्रत्येकमेकैकाक्षरवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिदिदं चतुर्दशवस्तुगळु सलुत्तं विरलु रूपोनतावन्मात्रोत्पादपूर्वसमासज्ञानविकल्पगळु सलुत्तं विरलु तच्चरमोत्कृष्टोत्पादपूर्वसमासज्ञानविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धिप्रागुत्तविरलु अप्रायणीयपूर्वश्रुतज्ञानमक्कु-। मितु मुंदे मुंदे अष्ट अष्टादश द्वादश द्वादश षोडश विंशति त्रिंशत् पंचदश दश दश दश दश वस्तुगळु कमवृद्धगङ्गागुत्तं विरलु रूपोन रूपोन तावन्मात्र तावन्मात्र तत्तत् पूर्वसमासज्ञानविकल्पगळु सलुत्तं विरलु तत्तत्पूर्वसमासोत्कृष्टस्थानविकल्पगळोकेकैकाक्षरवृद्धिप्रागुत्तं विरलु तत्तद्द्वीयप्रवादपूर्व-अस्तिनास्ति-प्रवादपूर्व-ज्ञानप्रवादपूर्व-सत्यप्रवादपूर्व-आत्मप्रवादपूर्व-कर्मप्रवादपूर्व-प्रत्याख्याननामधेयपूर्व-विद्यानुवादपूर्व-कल्याणवादपूर्व-प्राणावादपूर्व-क्रियाविशालपूर्व-त्रिलोकविन्दुसारपूर्वमेंबो श्रुत-ज्ञानगळुत्पत्तिगळुप्पुवु । इल्लि त्रिलोकविन्दुसारपूर्ववके समासाभावमेकैदोडे उत्तरज्ञानविकल्प-रहितत्वादिदं ।

५

१०

अनंतरं चतुर्दशपूर्ववस्तु वस्तुप्राभूतकसंख्येयं पेळदपर :-

पण णउदिसया वत्थू पाहुडया तियसहस्सणवयसया ।

एदेसु चोद्दसेसु वि पुव्वेसु हवंति मिलिदाणि ॥३४७॥

पंचनवतिशतानि वस्तूनि प्राभूतकानि त्रिसहस्रनवशतानि । एतेषु चतुर्दशसु पूर्वेषु सर्वेषु भवंति मिलितानि ॥

१५

उत्पादपूर्वमादियागि लोकविन्दुसारावसानमाद चतुर्दशपूर्वगळोळु वस्तुगळु सर्व्वमुं कूडि पंचनवत्पुतरशतप्रमितंगळुप्पुवु १९५ प्राभूतकंगळु सर्व्वमुं कूडि नवशतोत्तरत्रिसहस्रप्रमितंगळुप्पुवु

अप्रायणीयपूर्वश्रुतज्ञानं भवति । एवमग्रेज्येष्टाष्टादशद्वादशद्वादशषोडशविंशतित्रिंशत्पञ्चदशदशदशदशदश-वस्तुषु क्रमेण वृद्धेषु रूपोनतावन्मात्रतावन्मात्रतत्तत्पूर्वसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तत्तत्पूर्वसमासोत्कृष्टज्ञान-विकल्पस्योपरि एकैकाक्षरे वृद्धे सति तत्तद्द्वीयप्रवादपूर्वास्तिनास्तिप्रवादपूर्वज्ञानप्रवादपूर्वसत्यप्रवादपूर्व-प्रवादपूर्वकर्मप्रवादपूर्वप्रत्याख्यानपूर्वविद्यानुवादपूर्वकल्याणवादपूर्वप्राणवादपूर्वक्रियाविशालपूर्वत्रिलोकविन्दुसार - पूर्वनामश्रुतज्ञानान्त्पद्यन्ते । अत्र त्रिलोकविन्दुसारस्य तु समासो नास्ति उत्तरज्ञानविकल्पाभावात्॥३४५-३४६॥ अथ चतुर्दशपूर्वगतवस्तुप्राभूतकसंख्यां कथयति—

२०

उत्पादपूर्वमादि कृत्वा त्रिलोकविन्दुसारावसानेषु चतुर्दशपूर्वेषु वस्तूनि सर्वाणि मिलित्वा पञ्चनवत्पु-त्तरशतप्रमितानि १९५ भवन्ति । प्राभूतकानि तु सर्वाणि मिलित्वा नवशतोत्तरत्रिसहस्रप्रमितानि भवन्ति

२५

उत्कृष्ट उत्पाद पूर्व समास ज्ञान विकल्पके ऊपर एक अक्षरकी वृद्धि होनेपर अप्रायणी पूर्व श्रुतज्ञान होता है । इसी प्रकार आगे-आगे आठ, अठारह, बारह, बारह, सोलह, बीस, तीस, पन्द्रह, दस, दस, दस, दस वस्तुओंकी क्रमसे वृद्धि होनेपर एक अक्षर कम उतने-उतने उस-उस पूर्व समास ज्ञान पर्यन्त उस-उस पूर्व समास ज्ञान सम्बन्धी विकल्प होते हैं । उस-उस पूर्व समास ज्ञानके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक-एक अक्षर बढ़ानेपर उस-उस वीर्य प्रवाद पूर्व अस्ति, नास्ति, प्रवाद, पूर्व आदि त्रिलोकविन्दुसार पर्यन्त पूर्व श्रुतज्ञान उत्पन्न होते हैं । त्रिलोकविन्दुसारका समास ज्ञान नहीं है, क्योंकि उसके आगे श्रुतज्ञानके विकल्प नहीं हैं ॥३४५-३४६॥

३०

आगे चौदह पूर्वगत वस्तुओंके प्राभूतक नामक अधिकारोंकी संख्या कहते हैं—

उत्पाद पूर्वसे लेकर त्रिलोकविन्दुसार पर्यन्त चौदह पूर्वमें मिलकर सब वस्तु अधिकार एक सौ पंचानवे होते हैं । तथा सब प्राभूत मिलकर तीन हजार नौ सौ होते हैं,

३५

३९०० वस्तुगल प्रमाणमनिष्पत्तिरिव गुणिसुत्तिरलु तत्संख्ये संभविमुगुमपुदरिव ।

अनंतरं पूर्वोक्तविंशतिप्रकारश्रुतज्ञानविकल्पोपसंहारं गाथाद्वयेदं पेठदपं :—

अथक्खरं च पदसंघातं पडिवत्तिपाणियोगं च ।

दुगवारपाहुडं च य पाहुडयं वत्थुपुव्वं च ॥३४८॥

५

कमवण्णुत्तरवड्ढिय ताण समासा य अक्खरगदाणि ।

णाणवियप्पे वीसं ग्रंथे वारस य चोद्दसयं ॥३४९॥

अर्थाक्षरं च पदसंघातं प्रतिपत्तिकानुयोगं च । द्विकवारप्राभृतकं च च प्राभृतकं वस्तु-
पूर्वं च ॥ क्रमवर्णोत्तरवद्विततत्समासाश्च अक्षरगतानि । ज्ञानविकल्पे विंशतिः ग्रंथे द्वादश च
चतुर्दशकं ॥

अर्थाक्षरमे'बुदु रूपोनेकट्टविभक्तश्रुतकेवलज्ञानमात्रमेकाक्षरप्रमाणमक्कु के मी
१८ =

- १० अर्थाक्षरमुं पदमुं संघातमुं प्रतिपत्तिकमुं अनुयोगमुं द्विकवारप्राभृतमुं प्राभृतकमुं वस्तुमुं पूर्वमुमेवी
यो भत्तुयोभत्तरक्रमवर्णोत्तरवद्वितंगळप्पो भत्तुं समासंगळुमितष्टादशभेदंगळुमक्षरगतंगळु द्रव्यश्रुतवि-
कल्पंगळुपुव्वु । तत् द्रव्यश्रुतश्रवणसंजनितश्रुतज्ञानं विवक्षिसलपडुत्तिरलुमनक्षरात्मकपर्याय-पर्याय-
समासज्ञानद्वयसहितं विंशतिविकल्पं श्रुतज्ञानमक्कु । ग्रंथे शास्त्रसंदर्भं विवक्षिसलपडुत्तं विरलु द्वादश
आचारांगादि द्वादशांगविकल्पमुत्पादपूर्वादिचतुर्दशपूर्वभेदमुमप्य द्रव्यश्रुतमुं तच्छ्रवणजनितज्ञान-

- १५ ३९०० । वस्तुसंख्यायां विंशत्या गुणितायां तत्संख्यासंभवात् ॥३४७॥ अथ पूर्वोक्तविंशतिविधश्रुतज्ञान-
विकल्पोपसंहारं गाथाद्वयेनाह—

अर्थाक्षरं तु रूपोनेकट्टविभक्तश्रुतकेवलमात्रमेकाक्षरज्ञानं के तच्च तथा पदं च संघातं प्रति-
१८ =

- पत्तिकं अनुयोगं द्विकवारप्राभृतकं प्राभृतकं वस्तु, पूर्व चेति नव पुनः एषामेव नवानां क्रमवर्णोत्तरवदिताः
समासाश्च नव एवमष्टादशभेदा अक्षरगतद्रव्यश्रुतविकल्पा भवन्ति । तद्द्रव्यश्रुतश्रवणसंजनितश्रुतज्ञानमेव पुनः
२० ज्ञाने विवक्षिते अनक्षरात्मकपर्यायपर्यायसमासज्ञानद्वययुतं स्तु विंशतिविधं श्रुतज्ञानं भवति । ग्रंथे शास्त्रसन्दर्भे
विवक्षिते सति आचाराङ्गादिद्वादशाङ्गविकल्पं उत्पादपूर्वादिचतुर्दशपूर्वभेदं च द्रव्यश्रुतं तच्छ्रवणसंजनितज्ञान-
क्योंकि एक-एक वस्तुमें बीस-बीस प्राभृत होते हैं। अतः वस्तुओंकी संख्या एक सौ पंचानवेमें
बीससे गुणा करनेपर प्राभृतकोंकी संख्या उनतालीस सौ होती है ॥३४७॥

अब पूर्वोक्त श्रुतज्ञानके बीस भेदोंका उपसंहार दो गाथाओंसे करते हैं—

- २५ अर्थाक्षर, पद, संघात, प्रतिपत्ति, अनुयोग, प्राभृतक-प्राभृतक, प्राभृतक वस्तु, पूर्व ये नौ
तथा इन्हीं नौके क्रमसे एक-एक अक्षरसे बड़े नौ समास, इस प्रकार अठारह भेद अक्षरात्मक
द्रव्यश्रुतके होते हैं । उस द्रव्यश्रुतके सुननेसे उत्पन्न हुआ श्रुतज्ञान ही अनक्षरात्मक पर्याय
और पर्याय समास ज्ञानोंको मिलानेपर बीस प्रकारका श्रुतज्ञान होता है । ग्रन्थकी विवक्षा
होनेपर आचारांग आदि बारह भेदरूप और उत्पाद पूर्व आदि चौदह भेदरूप द्रव्यश्रुत है
३० और उसके सुननेसे उत्पन्न ज्ञानस्वरूप भावश्रुत है । 'च' शब्दसे अंगबाह्य, सामायिक आदि
चौदह प्रकीर्णक भेदरूप द्रव्यश्रुत और भावश्रुतका समुच्चय किया जाता है । पुद्गल द्रव्य

स्वरूपमप्य भावश्रुतं च शब्ददिनंगबाह्यमप्य सामायिकादिचतुर्दशप्रकीर्णकभेदद्रव्यभावात्मक-
श्रुतं समुच्चयं माडल्पटुदु । पुद्गलद्रव्यरूपं वर्णपदवाक्यात्मकं द्रव्यश्रुतमक्कुं । तच्छ्रवण-
समुत्पन्न श्रुतज्ञानपर्यायरूपं भावश्रुतमक्कुमेदितिदाचार्याभिप्रायं ।

पर्यायादिशब्दगच्छे निरुक्ति तोरल्पडुगुमदेते दोडे परीयंते व्याप्यंते सर्वे जीवा अनेनेति
पर्यायः । सर्वजघन्यज्ञानमित्यप्य ज्ञानरहितजीवकभावमेयक्कुमपुदरिदं । केवलज्ञानवन्तरप्य ५
जीवगळोलमा ज्ञानमुमक्कुमदेते दोडे महासंख्येयप्य कोट्यादियोलु एकाद्यल्पसंख्येयुमल्लियंतंते
ज्ञातव्यमक्कुं ।

अक्षामिद्वयं तस्मै अक्षाय श्रोत्रेन्द्रियाय राति ददाति स्वमर्पयतीत्यक्षरम् । पद्यते गच्छति
जानात्यर्थमात्माऽनेनेति पदम् । सम् संक्षेपेणैकदेशेन हन्यते गम्यते ज्ञायते एका गतिरनेनेति १०
संघातः । प्रतिपद्यते सामस्त्येन ज्ञायंते चतस्रो गतयोऽन्येति प्रतिपत्तिः । संज्ञायां कप्रत्ययविधाना-
त्प्रतिपत्तिकः । अनु गुणस्थानानुसारेण गत्यादिषु मार्गणासु युज्यंते संबध्यंते जीवा अस्मिन्ननेनेति
वा अनुयोगः ।

प्रकर्षेण नामस्थापनाद्रव्यभावनिर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानसत्संख्याक्षेत्र-
स्पर्शनकालांतरभावाल्पबहुत्वादिविशेषेण वस्त्वधिकारात्थ्यैराभूतं परिपूर्णं प्राभूतं वस्तुनोधिकारः
प्राभूतमिति संज्ञाऽस्यास्तीति प्राभूतकं प्राभूतकस्याधिकारः प्राभूतकप्राभूतकं । वसंति पूर्वमहार्ण- १५

स्वरूपं भावश्रुतम् । चशब्दात् अङ्गबाह्यसामायिकादिचतुर्दशप्रकीर्णकभेदद्रव्यभावात्मकश्रुतं पुद्गलद्रव्यरूपं
वर्णपदवाक्यात्मकं द्रव्यश्रुतं, तच्छ्रवणसमुत्पन्नश्रुतज्ञानपर्यायरूपं भावश्रुतं च समुच्चयते इति आचार्यस्य
अभिप्रायः । पर्यायादिशब्दानां निरुक्तिः प्रदर्श्यते । तद्यथा—परीयन्ते व्याप्यन्ते सर्वे जीवा अनेनेति पर्यायः-
सर्वजघन्यज्ञानं, ईदृशज्ञानरहितस्य जीवस्याभावात् । केवलज्ञानवत्स्वपि तत्संभवात् महासंख्यायां कोट्यादौ
एकाद्यल्पसंख्यावत् । अक्षाय—श्रोत्रेन्द्रियाय राति ददाति स्वमर्पयतीत्यक्षरम् । पद्यते गच्छति जानात्यर्थमात्मा २०
अनेनेति पदम् । सं—संक्षेपेण एकदेशेन हन्यते गम्यते ज्ञायते एका गतिः अनेनेति संघातः । प्रतिपद्यन्ते सामस्त्येन
ज्ञायन्ते चतस्रो गतयः अन्येति प्रतिपत्तिः, संज्ञायां कप्रत्ययविधानात् प्रतिपत्तिकः । अनु गुणस्थानानुसारेण
गत्यादिषु मार्गणासु युज्यन्ते संबध्यन्ते जीवा अस्मिन्ननेनेति चानुयोगः । प्रकर्षेण—नामस्थापनाद्रव्यभावनिर्देश-
स्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधान-सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वादिविशेषेण वस्त्वधिकारात्थ्यैरा-

रूप वर्णपद वाक्यात्मक द्रव्यश्रुत होता है और उसके सुननेसे उत्पन्न हुए ज्ञानरूप भावश्रुत २५
है, यह आचार्यका अभिप्राय है । अब पर्याय आदि शब्दोंकी निरुक्ति कहते हैं—इसके द्वारा
सब जीव 'परीयन्ते' व्याप्य किये जाते हैं, वह पर्याय अर्थात् सर्वजघन्य ज्ञान है । इस प्रकारके
ज्ञानसे रहित कोई जीव नहीं है, केवलज्ञानियोंमें भी वह रहता है । जैसे कोटि आदि महा-
संख्यामें एक आदि अल्प संख्या गभित रहती है । 'अक्षाय' अर्थात् श्रोत्रेन्द्रियके लिए 'राति'
अपनेको देता है, वह अक्षर है । जिसके द्वारा आत्मा अर्थको 'पद्यते' जानता है, वह पद है । ३०
जिसके द्वारा एक गति 'सं' संक्षेप रूपसे एकदेशसे 'हन्यते' जानी जाती है, वह संघात है ।
जिसके द्वारा चारों गतियाँ 'प्रतिपद्यन्ते' पूर्ण रूपसे जानी जाती हैं, वह प्रतिपत्ति है । संज्ञामें
'क' प्रत्यय करनेसे प्रतिपत्तिक होता है । जिसमें या जिसके द्वारा जीव 'अनु' गुणस्थानके
अनुसार गति आदि मार्गणाओंमें 'युज्यन्ते' युक्त किये जाते हैं, वह अनुयोग है । 'प्रकर्षेण'
नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान, सत्, ३५
संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व आदि विशेषोंसे वस्तु अधिकार

वस्यार्था एकदेशेन संत्यस्मिन्निति वस्तुपूर्वाधिकारः । पूरयति श्रुतार्थान् संविभर्तीति पूर्वम् । सं-संगृह्य पर्यायादीनि पूर्वपर्यन्तानि स्वीकृत्य अस्यन्ते क्षिप्यन्ते विकल्प्यन्ते इति समासाः । पर्याय-ज्ञानदत्तणिनुत्तरविकल्पंगळु पर्यायसमासंगळु । अक्षरज्ञानदत्तणिनुत्तरविकल्पंगळुअक्षरसमासंगळु इतु मुंदल्लेड्योळं पदसमासादिगळु योज्यंगळुप्पवु ।

- ५ इल्लि पूर्वंगळु १४ वस्तुगळु १९५ प्राभूतकंगळु ३९०० द्विकवारप्राभूतकंगळु ९३६०० अनुयोगंगळु ३७४४०० प्रतिपत्तिकसंघातपदंगळु संख्यातसहस्रगुणितक्रमंगळु । एकपदाक्षरंगळु १६३४८३०७८८८ समस्ताक्षरंगळु रूपोनेकट्टुप्रमितंगळु १८४४६७४४०७३७०९५११६१५ ईयक्षर-गळनेकपदाक्षरंगळि प्रमाणिसुत्तं विरलु द्वादशांगपदप्रमाणमकुमुं दु लब्धमं पेळदपं :—

वारुत्तरसयकोडी तेसीदी तह य होति लक्खाणं ।

- १० अट्टावण्णसहस्सा पंचेव पदाणि अंगाणं ॥३५०॥

द्वादशोत्तरं शतं कोट्यष्टशतीतिस्तथा च भवति लक्षणामष्टपंचाशत् सहस्राणि पंचैव पदान्यंगानां ॥

- भूतं परिपूर्णं प्राभूतं वस्तुनोऽधिकारः, प्राभूतमिति संज्ञा अस्यास्तीति प्राभूतकं, प्राभूतकस्याधिकारः प्राभूतक-प्राभूतकम् । वसन्ति पूर्वमहर्णवस्य अर्थाः एकदेशेन सन्त्यस्मिन्निति वस्तु । पूर्वाधिकारः पूरयति श्रुतार्थान् संविभर्तीति पूर्वम् । सं-संगृह्य पर्यायादीनि पूर्वपर्यन्तानि स्वीकृत्य अस्यन्ते क्षिप्यन्ते विकल्प्यन्ते इति समासाः । पर्यायज्ञानादुत्तरविकल्पाः पर्यायसमासाः । अक्षरज्ञानादुत्तरविकल्पाः अक्षरसमासाः । एवमग्रेऽपि सर्वत्र पदसमासादयो योज्याः । अत्र पूर्वाणि १४, वस्तूनि १९५, प्राभूतकानि ३९००, द्विकवारप्राभूतकानि ९३६००, अनुयोगाः ३७४४००, प्रतिपत्तिकसंघातपदानि संख्यातसहस्रगुणितक्रमाणि एकपदाक्षराणि १६३४८३०७८८८८, समस्ताक्षराणि रूपोनेकट्टुप्रमितानि १८४४६७४४०७३७०९५५११६१५ । एतेष्वक्षरेषु एकपदाक्षरैः प्रमाणितेषु यत्तल्लब्धं तद्द्वादशाङ्गपदप्रमाणं शेषमङ्गबाह्याक्षराणि ॥३४८-३४९॥ तत्र प्रथमं तत्पदप्रमाणमाह—

- सम्बन्धी अर्थोंसे जो 'प्राभूत' परिपूर्ण है, वह प्राभूत है । और प्राभूत संज्ञा होनेसे प्राभूतक है । प्राभूतकके अधिकारको प्राभूतक-प्राभूतक कहते हैं । जिसमें पूर्व नामक महासमुद्रके अर्थ 'वसन्ति' एक देशसे रहते हैं, वह वस्तु है । यह पूर्वोंका अधिकार है । श्रुतके अर्थोंका 'पूर-यति' पोषण करता है, वह पूर्व है । सं अर्थात् पर्यायसे लेकर पूर्व पर्यन्त भेदोंको 'अस्यन्ते' अपनाता है, वह समास है । पर्याय ज्ञानसे उत्तर भेद पर्याय समास हैं, अक्षर ज्ञानसे उत्तर भेद अक्षर समास हैं। इसी प्रकार आगे भी पदसमास आदिकी योजना कर लेना । पूर्व चौदह हैं । वस्तु एक सौ पंचानवे हैं । प्राभूतक उनतालीस सौ हैं । प्राभूतक-प्राभूतक तिरासवे हजार छह सौ हैं । अनुयोग तीन लाख चौदत्तर हजार चार सौ हैं । प्रतिपत्तिक, संघात और पद उत्तरोत्तर क्रमसे संख्यात हजार गुणित हैं । एक पदके अक्षर सोलह सौ चौतीस कोटि, तेरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी है । समस्त अक्षर एक कम एकट्ठी प्रमाण १८४४६७४४०७३७०९५५०६१५ हैं । इन अक्षरोंमें एक पदके अक्षरोंसे भाग देनेपर जो लब्ध आया, वह द्वादशांगके पदोंका प्रमाण है और शेष बचा वह अंगबाह्यके अक्षरोंका प्रमाण है ॥३४८-३४९॥

पहले द्वादशांगके पदोंकी संख्या कहते हैं—

द्वादशोत्तरशतप्रमितकोटिगण्डु त्रैशितिलक्षंगण्डु मध्यत्तेन्दु सासिरदण्डु द्वादशांगमध्यमसर्व-
पदप्रमाणमक्कुं ११२८३५८००५ ।

अनंतरमंगबाह्याक्षरसंख्येयं पेळदपनयु मेकपदाक्षरंगळि देक्कट्टनं भागिमुत्तिरलु शेयाक्षरं-
गळवर प्रमाणमं पेळदपं :—

अडकोडिएयलक्खा अडुसहस्सा य एयसदिगं च ।

५

पण्णत्तरिवण्णाओ पइण्णयाणं पमाणं तु ॥३५१॥

अष्टकोट्येकलक्षमष्टसहस्रं चैकशतिकं च । पंचोत्तरसप्ततिवर्णाः प्रकीर्णकानां प्रमाणं तु ॥

एदु कोटिगण्डुमेकलक्षमुमेदुसहस्रगण्डु नूरेप्पत्तेन्दु ८०१०८१७५ मंगबाह्यांगळप्प सामायि-
कादिचतुर्दशभेदंगळोळु संभविमुव प्रकीर्णकाक्षरंगळ प्रमाणमक्कुं । तु शब्दादिदं पूर्वसूत्रदोळु
द्वादशांगपदसंख्ये पेळल्पट्टुदो सूत्रदोळंगबाह्याक्षरसंख्ये पेळल्पट्टुदेवी विशेषमरियल्पट्टुगु ।

१०

अनंतरमी यत्थेनिर्णयात्थं गाथाद्वयमं पेळदपं :—

तेत्तीसर्वेजणाई सत्तावीसा सरा तहा भणिया ।

चत्तारिय जोगवहा चउसट्ठी मूलवण्णाओ ॥३५२॥

त्रयस्त्रिगद्वयंजनानि सप्तविंशति स्वराः तथा भणिताः । चत्वारश्च योगबाहः चतुःषष्टि-
मूलवर्णाः ॥

१५

द्वादशोत्तरशतकोट्यः त्र्यशितिलक्षाणि अष्टपञ्चाशत्सहस्राणि पञ्च च द्वादशाङ्गानां मध्यमसर्वपदप्रमाणं
भवति ११२, ८३, ५८, ००५ । [अंग्यते मध्यमपदैर्लक्ष्यते इत्यङ्गम् । अथवा आचारादिद्वादशशास्त्रसमूहस्वरूप-
श्रुतस्कन्धस्य अङ्गं अवयवः एकदेशः आचाराद्येकैकशास्त्रमित्यर्थः] ॥३५०॥ अथाङ्गबाह्याक्षरसंख्यां
कथयति—

अष्टकोट्येकलक्षाष्टसहस्रैकशतपञ्चसप्ततिप्रमाणाः प्रकीर्णकानां अङ्गबाह्यानां सामायिकादीनां च
चतुर्दशानां वर्णा भवन्ति ८०१०८१७५ तुशब्दः पूर्वसूत्रे द्वादशाङ्गपदसंख्योक्ता, अस्मिन् सूत्रे च अङ्गबाह्या-
क्षरसंख्योक्तेति विशेषं ज्ञायति ॥३५१॥ अथामुमेवार्थं गाथाद्वयेनाह—

२०

द्वादशांगके सब मध्यम पदोंका प्रमाण एक सौ बारह कोटि, तेरासी लाख, अट्ठावन
हजार पाँच है । अङ्गयते अर्थात् मध्यम पदोंके द्वारा जो लक्षित होता है, वह अंग है ।
अथवा आचार आदि बारह शास्त्रसमूहस्वरूप श्रुतस्कन्धका जो अंग अर्थात् अवयव या एक-
देश है । अर्थात् आचार आदि एक-एक शास्त्र अंग है ॥३५०॥

२५

अब अंगबाह्यकी अक्षर संख्या कहते हैं—

प्रकीर्णक अर्थात् सामायिक आदि चौदह अंगबाह्योंके अक्षर आठ कोटि, एक लाख
आठ हजार एक सौ पचहत्तर प्रमाण होते हैं । 'तु'शब्द विशेषार्थक है । वह ज्ञापित करता है
कि पूर्व गाथासूत्रमें द्वादशांगके पदोंकी संख्या कही है । इस गाथा सूत्रमें अंगबाह्यके अक्षरोंकी
संख्या कही है ॥३५१॥

३०

इसी अर्थको दो गाथाओंसे कहते हैं—

१. [] एतत्कोष्ठान्तर्गतपाठो नास्ति न प्रती ।

ओ अहो व्यंजनानि अर्धमात्राङ्गलप्य व्यंजनंगलुत्रयस्त्रिंशत्प्रमितंगलप्यु ३३ स्वराः स्वरंगलके द्वित्रिमात्राङ्गलु सप्तविंशतिः सप्तविंशतिप्रमितंगलु २७ योगवाहाः योगवाहंगलु चत्वारश्च नात्कु ४ अप्यु ३ इंतु मूलवर्णंगलुचतुःषष्टिप्रमितंगलप्युवे ६४ ओ अहो भव्या नीतरिद्ये दितनादिनिधनपरमागम - दोळु प्रसिद्धंगळा प्रकारादिदमे षेळलपट्टु ।

५ व्यज्यते स्फुटीक्रियतेऽर्थो यैस्तानि व्यंजनानि । स्वरंत्यर्थं कथयंतीति स्वराः । योगमन्या-
क्षरसंयोगं वहंतीति योगवाहाः । मूलानि संयुक्तोत्तरवर्णोत्पत्तिकारणभूता वर्णा मूलवर्णाः एदितु
समासार्थबलेन द्विदमसंयुक्तमागिद्ये चतुःषष्टिवर्णंगलु ग्राह्यंगलप्यु । ई वर्णवर्क संस्कृतदोळु दीर्घा-
भावमादोडमनुकरणदोळं देशांतर भाषेगळोळं सद्भावमक्कुं । ए ऐ ओ औ एंबी नात्कवकं संस्कृत-
दोळु ह्रस्वाभावमादोडं प्राकृतदोळं देशांतरभाषेगळोळं सद्भावमक्कुं ।

१० चउसट्ठपदं विरलिय दुगं च दाऊण संगुणं किच्चा ।

रूऊणं च कए पुण सुदणाणस्सक्खरा होति ॥३५३॥

चतुःषष्टिपदं विरलित्वा द्विकं च इत्वा संगुणं कृत्वा । रूपोऽनं च कृते पुनः श्रुतज्ञानस्या-
क्षराणि भवन्ति ॥

ओ-अहो भव्य ! व्यञ्जनानि अर्धमात्राणि क् ख् ग् घ् ङ् । च् छ् ज् झ् ञ् । ट् ठ् ड् ढ् ण् ।
१५ त् थ् द् ध् न् । प् फ् ब् भ् म् । य् र् ल् व् श् ष् स् ह् । इत्येतानि त्रयस्त्रिंशत् ३३ । स्वराः एकद्वित्रि-
मात्राः । अ इ उ ऋ ॠ ए ऐ ओ औ इत्येते नव, प्रत्येकं ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदैस्त्रिभिर्गुणिताः अ आ आ ३, इ ई
ई ३, उ ऊ ऊ ३, ऋ ऋ ऋ ३, ॠ ॠ ॠ ३, ए १ ए २ ए ३, ऐ १ ऐ २ ऐ ३, ओ १ ओ २ ओ ३,
औ १ औ २ औ ३ इत्येते सप्तविंशतिः २७ । योगवाहाः अं अः ङ्क ङ्प इत्येते चत्वारः ४, एवं
मिलित्वा मूलवर्णश्चतुःषष्टिः ६४ । यथानादिनिधने परमागमे प्रसिद्धास्तथैवात्र भणितः संजानीहि । व्यज्यते
२० स्फुटीक्रियते अर्थो यैस्तानि व्यञ्जनानि । स्वरन्ति-अर्थं कथयन्तीति स्वराः । योग-अन्याक्षरसंयोगं वहन्तीति
योगवाहाः । मूलानि संयुक्तोत्तरवर्णोत्पत्तिकारणानि वर्णाः मूलवर्णाः इति समासार्थबलेन असंयुक्ता एव
चतुःषष्टिरिति लभ्यन्ते । लवर्णः संस्कृते दीर्घो नास्ति तथापि अनुकरणे देशान्तरभाषायां चास्ति । ए ऐ ओ
औ इति चत्वारोऽपि संस्कृते ह्रस्वा न सन्ति तथापि प्राकृते देशान्तरभाषायां च सन्ति ॥३५२॥

‘ओ’ अर्थात् हे भव्य ! अर्धमात्रा जिनमें होती है, ऐसे सब व्यंजन तैतीस हैं—

२५ क् ख् ग् घ् ङ् । च् छ् ज् झ् ञ् । ट् ठ् ड् ढ् ण् । त् थ् द् ध् न् । प् फ् ब् भ् म् । य् र्
ल् व् श् ष् स् ह् । एक-दो-तीन मात्रावाले स्वर सत्ताईस होते हैं—अ, इ उ ऋ तु ए ऐ ओ
औ ये नौ । प्रत्येकको ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत तीनसे गुणा करनेपर सत्ताईस होते हैं । अ आ
आ ३ । इ ई ई ३ । उ ऊ ऊ ३ । ऋ ऋ ऋ ३ । ॠ ॠ ॠ ३ । ए १ ए २ ए ३ । ऐ १ ऐ २
ऐ ३ । ओ १ ओ २ ओ ३ । औ १ औ २ औ ३ । अं अः ङ्क ङ्प ये चार योगवाह । इस
३० प्रकार सब मिलकर मूल अक्षर चौंसठ हैं । जैसा अनार्दिनिधन परमागममें प्रसिद्ध हैं,
वैसा ही यहाँ कहे हैं ।

‘व्यज्यते’ जिनके द्वारा अर्थ प्रकट किया जाता है, वे व्यंजन हैं । ‘स्वरन्ति’ जो अर्थको
कहते हैं, वे स्वर हैं । योग अर्थात् अन्य अक्षरोंके संयोगको जो ‘वहन्ति’ वहन करते हैं, वे
योगवाह हैं । ‘मूल’ अर्थात् संयुक्त उत्तर वर्णोंकी उत्पत्तिके कारण वर्ण मूल वर्ण हैं । इस
३५ समासके अर्थके बलसे असंयुक्त अक्षर ही चौंसठ हैं, यह ज्ञात होता है । लृ वर्ण संस्कृत भाषा-
में दीर्घ नहीं है, तथापि देशान्तरकी भाषामें है । ए ऐ ओ औ ये चारों संस्कृतमें ह्रस्व नहीं
हैं, तथापि प्राकृत और देशभाषामें हैं ॥३५२॥

मूलवर्णप्रमाणमप्य चतुःषष्ट्यंकरूपस्थानरूपगणं विरलितं तिष्ठ्यंकरूपविरलितं स्थापितं रूपं प्रति द्विकंकरूपं संगुणं कृत्वा परस्पर गुणनमं माडि तल्लब्धदोळु रूपोनं माडुत्तिरलु श्रुत-
ज्ञानस्य द्वादशांगप्रकीर्णक श्रुतस्कंधद्रव्यश्रुतद अपुनरुक्ताक्षरंगळु तल्लब्धप्रमितंगळुपुर्वेतेदोडे
वाक्यार्थप्रतीतिनिमित्तंगळुपुनरुक्ताक्षरंगळो संख्यानियमाभावमपुर्वेदिदं । एकद्विज्यादि चतुः-
षष्टिसंयोगपर्यंतमप्य संयोगाक्षरंगळु संकलितमागुत्तिरलु श्रुतस्कंधाक्षरप्रमाणोत्पत्तियक्कुमा ५
संकलितधनमेनितेदोडे पेळदपरह :—

एककट्ट चदु चदु छस्सत्तयं चय चय सुणसत्ततियसत्ता ।

सुणं णव पण पंच य एकं छक्केकगो य पणं च ॥३५४॥

एकाष्टचतुःचतुःषट्सप्तकं च चतुःचतुःशून्यसप्तत्रिकसप्त । शून्यं नव पंच पंच च एकं षट्कैक-
कश्च पंचकं च ॥ १०

एदितेकांकमादियागि पंचांकावसानमार्दविंशतिस्थानात्मकद्विरूपवर्गधारा रूपोनषष्ठवर्ग-
प्रमाणाक्षरंगळपुवु—१८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ ।

क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	००००६४
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	प्रत्येक
१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	द्विसंयोग
	२	१	३	६	१०	१५	२१	२८	३६	त्रिसंयोग
		४	१	४	१०	२०	३५	५६	८४	चतुःसंयोग
			८	१	५	१५	३५	७०	१२६	पंचसंयोग
				१६	१	६	२१	५६	१२६	षट्संयोग
					३२	१	७	२८	८४	सप्तसंयोग
						६४	१	८	३६	अष्टसंयोग
							१२८	१	९	नवसंयोग
								२५६	१	दशसंयोग
									५१२	

१५

२०

मूलवर्णप्रमाणं चतुःषष्टिपदं एकैकरूपेण विरलयित्वा रूपं रूपं प्रति द्विकं दत्त्वा परस्परं सङ्गुण्य तल्लब्धे

मूल अक्षर प्रमाण चौसठ पदोंको एक-एक रूपसे विरलन करके एक-एक रूपपर दो- २५

इवेकद्वित्रिसंयोगादिचतुःषष्टिसंयोगपर्यन्तमप्य संयोगाक्षरसंजनिताक्षरंगळ संख्येयपुदरि ना एकद्वित्रिसंयोगाक्षरंगळिनृत्पत्तिक्रमं तोरत्पडुगुमदे ते दोडे व्यंजनंगळ त्रयस्त्रिंशत्प्रमितंगळ । स्वरंगळु सप्तविंशतिप्रमितंगळ । योगवहंगळु चतुःप्रमितंगळितु मूलवर्णंगळु चतुःषष्टिप्रमितंगळिवं क्रमदिद-
मखवत्तनाल्केडेयोळु बेरे बेरे तिर्य्यगूर्पादिदं स्थापिसि प्रत्येकं द्विसंयोगादिगळं माळपुदे ते दोडे कवर्ण-

- ५ दोळु प्रत्येकभंगभो देयकुं १ । द्विसंयोगमुळळ खवर्णदोळु प्रत्येकभंगु १ । द्विसंयोगभंग १ । अंतु २ । गवर्णदोळु प्र १ । द्वि २ त्रि ३ । अंतु ४ । घवर्णदोळु प्र १ । द्वि २ त्रि ३ च १ अंतु ८ । ड वर्णदोळु प्र १ द्वि ४ त्रि ६ च ४ पं १ अंतु १६ । च वर्णदोळु प्र १ द्वि ५ त्रि १० च १० पं ५ ष १ अंतु ३२ । छवर्णदोळु प्र १ द्वि ६ त्रि १५ च २० पं १५ ष ६ सप्त १ अंतु ६४ । जवर्णदोळु प्र १ द्वि ७ त्रि २१ च ३५ पं ३५ ष २१ सप्त ७ अष्ट १ अंतु १२८ । झवर्णदोळु प्र १ द्वि ८ त्रि २८
- १० रूपोने कृते सति श्रुतज्ञानस्य द्वादशाङ्गप्रकीर्णकरूपश्रुतस्कन्धस्य द्रव्यश्रुतस्य अपुनरुक्ताक्षराणि भवन्ति । वाक्यार्थप्रतीत्यर्थ गृहीतानां पुनरुक्ताक्षराणां संख्यानियमाभावात् ॥३५३॥ तदपुनरुक्ताक्षरप्रमाणं कियदिति चेदाह—

एकाष्टचतुश्चतुःषट्सप्तकं चतुश्चतुःशून्यसप्तत्रिकसप्तशून्यं नवपञ्चपञ्च एकं पट्कैकश्च पञ्चकं च इत्येकाङ्कादिपञ्चाङ्कावसानविंशतिस्थानात्मकद्विरूपवर्गधारोत्पन्नरूपोनवषट्चवर्गप्रमाणाक्षराणि भवन्ति—

- १५ १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ । एतानि अक्षराणि एकद्वित्रिसंयोगादीनि चतुषष्टिसंयोगपर्यन्तानि सन्ति तेषामुत्पत्तिक्रमो दर्श्यते तद्यथा—उक्तमूलवर्णचतुःषष्टि तिर्य्यकपङ्क्त्या लिखित्वा तत्र कवर्णे प्रत्येकभङ्गे एकः १ । द्विसंयोगो नास्ति । खवर्णे प्रत्येकभङ्गः १ द्विसंयोगभङ्गः १ एवं २ । गवर्णे प्र १ द्वि २ त्रि १ एवं ४ । घवर्णे प्र १ द्वि ३ त्रि ३ च १ एवं ८ । डवर्णे प्र १ द्वि ४ त्रि ६ च ४ पं १ एवं १६ । चवर्णे प्र १ द्वि ५ त्रि १० च १० पं ५ ष १ एवं ३२ । छवर्णे प्र १ द्वि ६ त्रि १५ च २० पं १५ ष ६ सप्त १ एवं ६४ ।
- २० जवर्णे प्र १ द्वि ७ त्रि २१ च ३५ पं ३५ ष २१ सप्त ७ अष्ट १ एवं १२८ । झवर्णे प्र १ द्वि ८ त्रि २८

दोका अंक देकर परस्परमें गुणा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो, उसमें एक कम करनेपर द्वादशांग और प्रकीर्णक श्रुतस्कन्ध रूप द्रव्य श्रुतके अपुनरुक्त अक्षर होते हैं । वाक्यके अर्थका ज्ञान करानेके लिए गृहीत पुनरुक्त अक्षरोंकी संख्याका कोई नियम नहीं है ॥३५३॥

- एक आठ चार चार छह सात चार चार शून्य सात तीन सात शून्य नौ पाँच पाँच
- २५ एक छह एक पाँच १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ इस प्रकार एक अंकसे लेकर पाँच अंक पर्यन्त बीस स्थानरूप अपुनरुक्त अक्षर होते हैं । सो द्विरूप वर्गधारामें उत्पन्न एक हीन छोटे वर्ग प्रमाण हैं । ये अक्षर एक संयोगी, दो संयोगी, तीन संयोगी, आदि चौंसठ संयोग पर्यन्त, होते हैं । उनकी उत्पत्तिका क्रम दिखलाते हैं—

- उक्त मूल वर्ण चौंसठ एक पंक्तिमें लिखें । उनमें-से कवर्णमें प्रत्येक भंग एक है;
- ३० द्विसंयोगी आदि नहीं हैं । खवर्णमें प्रत्येक भंग एक द्विसंयोगी भंग एक है । इस प्रकार दो भंग हैं । गवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी दो, तीन संयोगी एक, इस तरह चार भंग हैं । घवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी तीन, तीन संयोगी तीन, चार संयोगी एक, इस तरह आठ भंग हैं । डवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी चार, तीन संयोगी छह, चार संयोगी चार, पाँच संयोगी एक, इस तरह सोलह भंग हैं । चवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी पाँच, त्रिसंयोगी दस, चार संयोगी दस, पाँच संयोगी पाँच, छह संयोगी एक, इस तरह बत्तीस भंग हैं । छवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी छह, तीन संयोगी पन्द्रह, चार संयोगी बीस, पाँच संयोगी पन्द्रह, छह संयोगी छह, सात संयोगी एक, इस तरह चौंसठ भंग हैं । जवर्णमें प्रत्येक एक दो, संयोगी सात, तीन

च ५६ पं ७० । ष ५६ । सप्त २८ । अष्ट ८ नव १ अंतु २५६ । ज्वर्णंदोळु प्र १ द्वि ९ त्रि ३६ च ८४ पं १२६ । ष १२६ । स ८४ । अष्ट ३६ । नव ९ । दश १ अंतु ५१२ । इती क्रमदिदं अख्यस्त-
नालकुं स्थानंगळोळं नडसुचुदंतु नडसुत्तिरलु प्रत्येकादिभंगंगळु पूर्वपूर्वमं नोडलूतरोत्तर भंगयुतिगळु
द्विगुणद्विगुणक्रमदिदं नडेववा संहृष्टिपदगळंनिरिसिदोडितिपुर्वी चतुःषष्टिपदंगळोळु ट् ठ् ड् ण् ।
त् थ् द् ध् न् । प् फ् ब् भ् म् । य् र् ल् व् श् ष् स् ह् । अ आ आ । इ ई ई । ऊ ऊ ऊ इत्यादि ५
सप्तविंशतिस्वराः । अं अः ॐ पं इवरोळु विवक्षिताक्षरस्थानदोळु प्रत्येकद्विसंयोगादि भंगंगळं समस्त-
पदंगळोळु संभविमुव संयोगंगळ संख्याप्रमाणमुमं चरमस्थानपर्यंतं तरत्समर्थमप्य करणसूत्रमं
श्रीमदभयचंद्रसूरिसैद्धान्तचक्रवर्त्ति श्रीपादप्रसाददिदं केशववर्णंगळपेळदपरदेते दोडे :—

पत्तेयभंगमेगं वेसंजोगं विरूपपदमेतं ।

तिसंजोगादिपमा रूवाहियवारहीणपदसंकलिदं ॥

प्रत्येकभंग एकः विवक्षितस्थानदोळु प्रत्येकभंगमोदेयक्कुं । १ । द्विसंयोगो विरूपपदमात्रः
विगतं रूप यस्मात् तच्च तत्पदं च विरूपपदं । तदेव मात्रं प्रमाणं यस्यासौ विरूपपदमात्रः ।
रूपोनपदप्रमितमे बुद्धर्थं । तिसंजोगादिपमा त्रिसंयोगादिप्रमा त्रिसंयोगचतुःसंयोगपंचसंयोगादि-
विवक्षितपदसंभवसंयोगंगळ प्रमाणं यथाक्रमं क्रममनतिक्रमिसदे रूवाहियवारहीणपदसंकलिदं
रूपाधिकवारहीणपदसंकलितं भवति रूपाधिकैकद्वित्रिवारादिसंकलनसंख्याविहीनविवक्षितपदंगळ १५
एकद्वित्रिवारादिसंकलितधनमक्कुं । इल्लि विवक्षितमप्य पत्तनेय ज्वर्णंदोळु प्रत्येकभंग एकः
प्रत्येकभंगमोदु १ । द्विसंयोगो विरूपपदमात्रः द्विसंयोगसंख्ये रूपोनपदमात्रमक्कुं । ९ । त्रिसंयोगादि-

च ५६ पं ७० ष ५६ सप्त २८ अष्ट ८ नव १ एवं २५६ । ज्वर्णं प्र १ द्वि ९ त्रि ३६ च ८४ पं १२६
ष १२६ सप्त ८४ अष्ट ३६ नव ९ दश १ एवं ५१२ । अनेन क्रमेण चतुःषष्टिस्थानेषु गतेषु प्रत्येकादिभङ्गाः
पूर्वपूर्वभ्यः उत्तरोत्तरे द्विगुणा द्विगुणा भवन्ति । ३५४ । तेषां संख्यासाधने करणसूत्रं श्रीमदभयचन्द्रसूरिसैद्धान्त- २०
चक्रवर्त्तिश्रीपादप्रसादेन केशववर्णिनः प्राहुः—

पत्तेयभङ्गमेगं वेसंजोगं विरूपपदमेतं । तिसंजोगादिपमा रूवाहियवारहीणपदसंकलिदं ॥

प्रत्येकभङ्गमेकं द्विसंयोगं रूपोनपदमात्रं । त्रिसंयोगादिप्रमाणं रूपाधिकवारहीणपदसंकलितं ॥

विवक्षितस्थानेषु सर्वत्र प्रत्येकभङ्गः एकैकः । द्विसंयोगभङ्गो रूपोनपदमात्रः । त्रिसंयोगादीनां प्रमाणं
तु यथाक्रमं रूपाधिकवारहीणपदसंकलितम् । एकवारादिसंकलितं तद्वारसंख्यया एकरूपाधिकया हीनस्य २५

संयोगी इक्कीस, चार संयोगी पैतीस, पाँच संयोगी पैतीस, छह संयोगी इक्कीस, सात
संयोगी सात, आठ संयोगी एक, इस तरह एक सौ अठाईस भंग हैं । ज्वर्णमें प्रत्येक एक, दो
संयोगी आठ, तीन संयोगी अठाईस, चार संयोगी छप्पन, पाँच संयोगी सत्तर, छह संयोगी
छप्पन, सात संयोगी अठाईस, आठ संयोगी आठ, नौ संयोगी एक, इस तरह दो सौ छप्पन
भंग होते हैं । ज्वर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी नौ, तीन संयोगी छत्तीस, चार संयोगी ३०
चौरासी, पाँच संयोगी एक सौ छब्बीस, छह संयोगी एक सौ छब्बीस, सात संयोगी चौरासी,
आठ संयोगी छत्तीस, नौ संयोगी नौ, दस संयोगी एक, इस तरह पाँच सौ बारह भंग हैं ।
इस क्रमसे चौंसठ स्थानोंमें प्रत्येक आदि भंग पूर्व-पूर्वसे उत्तरोत्तर दुगुने-दुगुने होते हैं ।
उनकी संख्या लानेके लिए करणसूत्र श्रीमत् अभयचन्द्र सूरि सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणोंके
प्रसादसे केशववर्णी कहते हैं, जिसका आशय इस प्रकार है—विवक्षित स्थानोंमें सर्वत्र ३५
प्रत्येक भंग एक-एक होता है । द्विसंयोगी भंग एक कम गच्छ प्रमाण होते हैं । तीन संयोगी

प्रमाणं त्रिसंयोगचतुःसंयोगपञ्चसंयोगादिस्वसंभवसंयोगगङ्ग प्रमाणं रूपाधिकवारहीनपदसंकलितं भवति । रूपाधिकैकद्वित्रिवारादिस्वसंभवसंकलनसंख्या १ १ १ १ १ १ १ १ विहीनविवक्षित-
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

पदं—१०।-२।१०।-३।१०।-४।१०।-५।१०।-६।१०।-७।१०।-८।१०।-९।
ई पदगङ्ग तत्तद्वारसंकलितं यावत्तावद्भवति । त्रियोगगङ्ग रूपाधिकैकवारसंकलनसंख्याहीनपद-
५ देकवारसंकलितमक्कुं १०-२।१०१ अपवर्तितमिदु । ३६ । चतुःसंयोगगङ्ग त्रिरूपोनपदद्विकवार-
२ १

संकलितमक्कुं ७।८।९ अपवर्तितमिदु । ८४ । पञ्चसंयोगगङ्ग चतुरूपोनपदत्रिवारसंकलितमक्कुं
३।२।१

६।७।८।९ अपवर्तितमिदु । १२६ । षट्संयोगगङ्ग पञ्चरूपोनपदचतुर्वारसंकलितमक्कुं
४।३।२।१

५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु-१२६ । सप्तसंयोगगङ्ग षड्रूपोनपदपञ्चवारसंकलितमक्कुं
५।४।३।२।१

विवक्षितपदस्य यावत्तावद्भवति । यथा दशमे अवर्णे त्रिसंयोगाः द्विरूपोनपदस्य एकवारसंकलनमात्राः—
१०. १०—२ । १०—१ अपवर्तिताः ३६ चतुःसंयोगाः त्रिरूपोनपदस्य द्विकवारसंकलनमात्राः—
२ १ १

७।८।९ अपवर्तिताः ८४ । पञ्चसंयोगाः चतुरूपोनपदस्य त्रिकवारसंकलनमात्राः ६।७।८।९
३।२।१ ४।३।२।१

अपवर्तिताः १२६ । षट्संयोगाः षड्रूपोनपदस्य चतुर्वारसंकलनमात्राः ५।६।७।८।९ अपवर्तिताः
५।४।३।२।१

आदिका प्रमाण यथाक्रम एक अधिक बार हीन गच्छका संकलन धन मात्र है । जितनी बार
संकलन हो, उतने बारोंकी संख्यामें एक अधिक करके और उसे विवक्षित गच्छमें घटानेपर
१५ जो शेष प्रमाण रहे, उतनेका संकलन करना चाहिए । जैसे दसवें अवर्णमें त्रिसंयोगी भंग
लानेके लिए एक बार संकलनका प्रमाण एक होनेसे उसमें एक अधिक करनेपर दो हुए । इस
दोको गच्छ दसमें-से घटानेपर शेष आठ रहे । इस आठका एक बार संकलन धन मात्र
त्रिसंयोगी भंग होते हैं । संकलन धन लानेके लिए कहे गये करणसूत्रके अनुसार विवक्षित
दसवें अवर्णमें प्रत्येक भंग एक, द्विसंयोगी एक कम गच्छ प्रमाण नौ, त्रिसंयोगी भंग दो
२० हीन गच्छ प्रमाण आठका एक बार संकलन धन मात्र हैं । सो संकलन धन लानेके सूत्रके
अनुसार आठ और नौको दो और एकसे भाग देकर अपवर्तन करनेपर छत्तीस होते हैं ।
अर्थात् आठ और नौको परस्परमें गुणा करनेपर बहत्तर हुए । और दो-एकको परस्परमें गुणा
करनेपर दो हुए । दोसे बहत्तरमें भाग देनेपर छत्तीस रहते हैं । इसी तरह चतुःसंयोगी भंग
तीन हीन गच्छका दो बार संकलन धन मात्र हैं । सो सात, आठ, नौको तीन, दो, एकका
२५ भाग देनेपर ७।८।९। अपवर्तन करनेपर चौरासी होते हैं । पञ्चसंयोगी भंग चार हीन
३।२।१।

गच्छका तीन बार संकलन धन मात्र हैं । सो छह, सात, आठ, नौ को चार, तीन, दो, एकसे
भाग देकर ६।७।८।९। अपवर्तन करनेपर एक सौ छब्बीस होते हैं । षट्संयोगी भंग
४।३।२।१।

४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ८४। अष्टसंयोगंगळु। सप्तरूपोनपदषड्वारसंकलितमक्कु
६।५।४।३।२।१

३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ३६। नवसंयोगंगळु अष्टरूपोनपदसप्तवारसंकलितमक्कु
७।६।५।४।३।२।१

२।३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ९। दशसंयोगंगळु नवरूपोनपदाष्टवारसंकलित-
८।७।६।५।४।३।२।१

मक्कुमादोडमल्लि परमार्थदिदं संकलितमिल्लिल्लियो दे रूपमक्कु-। मिबेल्ळं कूडि ५१२। इती
प्रकारदिवेल्ळेयोळु तंदु कोंबुदु।

चरमस्थानदोळु तोर्पे व दंते दोडे चरसदोळं प्रत्येकभंग एकः प्रत्येकभंगमो दु। द्विसंयोगो ५
द्विरूपपदमात्रः। द्विसंयोगंगळवसंख्ये विरूपपदमात्रमक्कु। ६३। त्रिसंयोगादिक्रमाः त्रिसंयोगचतुः-
संयोगपंचसंयोगादि स्वसंभवचतुःषष्टिसंयोगावसानमाद संयोगंगळ प्रमाणं यथाक्रमं क्रममनलि-
क्रमसदे रूपाधिकवारहीनपदसंकलितं रूपाधिकैकद्वित्रिवारादि-स्वसंभवद्व्युत्तरषष्टिपर्यवसाने-

१२६। सप्तसंयोगाः षड् रूपोनपदस्य पञ्चवारसंकलनमात्राः ४।५।६।७।८।९ अपवर्तिता ८४।
६।५।४।३।२।१

अष्टसंयोगाः सप्तरूपोनपदस्य षड्वारसंकलनमात्राः ३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तिताः ३६। १०
७।६।५।४।३।२।१

नवसंयोगाः अष्टरूपोनपदस्य सप्तवारसंकलनमात्राः २।३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तिताः ९।
८।७।६।५।४।३।२।१।

दशसंयोगाः नवरूपोनपदस्य अष्टवारसंकलनमात्राः। अत्र परमार्थतः संकलनमेव नास्ति इत्येकः। एते सर्वे
एकप्रत्येकभङ्गनवद्विसंयोगैः द्वादशोत्तरपञ्चशतभङ्गा भवन्ति ५१२। एवं सर्वपदेष्वावयते। चरमस्थाने
प्रत्येकभंगः एकः १। द्विसंयोगो विरूपपदमात्राः। दश त्रिसंयोगाः द्विरूपोनपदस्यैकवारसंकलनमात्राः

पाँच हीन गच्छका चार बार संकलन धन मात्र हैं। सो पाँच, छह, सात, आठ, नौको पाँच, १५
चार, तीन, दो, एकसे भाग देकर ५।६।७।८।९। अपवर्तन करनेपर एक सौ छब्बीस
५।४।३।२।१।

होते हैं। सात संयोगी भंग छह हीन गच्छका पाँच बार संकलन धन मात्र हैं। सो चार,
पाँच, छह, सात, आठ, नौ में छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देकर ४।५।६।७।८।९
६।५।४।३।२।१

अपवर्तन करनेपर चौरासी होते हैं। आठ संयोगी भंग सात हीन गच्छका छह बार संकलन
धन मात्र हैं। सो तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ को सात, छह, पाँच, चार, तीन, २०
दो, एकका भाग देकर ३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तन करनेपर छत्तीस होते हैं।
७।६।५।४।३।२।१।

नौ संयोगी भंग आठ हीन गच्छका सात बार संकलन धन मात्र हैं। सो दो, तीन, चार,
पाँच, छह, सात, आठ, नौको आठ, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर
नौ होते हैं। दस संयोगी भंग नौ हीन गच्छका आठ बार संकलन धन मात्र हैं। सो यहाँ
वास्तवमें संकलन नहीं है। क्योंकि एकका संकलन एक ही होता है, अतः एक ही भंग है। २५
इस प्रकार सबको जोड़नेपर दसवें स्थानमें पाँच सौ बारह भंग होते हैं। इसी प्रकार सब

१. म° सानवार संकलनसंख्या°। २. इतीजे मुद्रितप्रती सर्व नास्ति।

संकलनवारसंख्याहीनपदंगळ ६४-२।-६४-३।-६४-४। ६४-५। ००००। ६-४-६३ तत्तद्वार-
संकलितं यावत्तावद्भवति एतदितु त्रिसंयोगंगळ रूपाधिकैकवारसंकलनसंख्याहीनपदद एकवार-
संकलितमक्कुं ६४-२। ६४। १ अपवर्तितमिदु १९५३ चतुःसंयोगंगळ त्रिरूपोनपदद्विकवार-

२ १

संकलितमक्कुं ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु ३९७११ पंचसंयोगंगळ चतुरूपोनपदत्रिवारसंकलित-

३ २ १

५ मक्कुं ६०। ६१। ६२ अपवर्तितमिदु ५९५६६५ षट्संयोगंगळ पञ्चरूपोनपदचतुर्वारसंकलित-

४। ३। २

मक्कुं ५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु ७०२८८७ सप्तसंयोगंगळ षड्रूपोनपदपंच-

५ ४ ३ २ १

वारसंकलितमक्कुं ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु गुणितमिदु ६७९४५५२१

६ ५ ४ ३ २ १

अष्टसंयोगंगळ सप्तरूपोनपद षड्वारसंकलितमक्कुं ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३

७ ६ ५ ४ ३ २ १

अपवर्तितगुणितमिदु ५५३२७०६७१ नवसंयोगंगळ अष्टरूपोनपदसप्तवारसंकलितमक्कु अपवर्तिते-

१० ६४-२। ६४-१ अपवर्तितगुणिताः १९५३। चतुःसंयोगाः त्रिरूपोनपदस्य द्विकवारसंकलनमात्राः

२ १

६१। ६२। ६३। अपवर्तिताः ५९५६६५। षट्संयोगाः पञ्चरूपोनपदस्य चतुर्वारसंकलनमात्राः

३ २ १ १ १

५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तिताः ७०२८८७। सप्तसंयोगाः षड्रूपोनपदस्य पञ्चवारसंकलन-

५ ४ ३ २ १

मात्राः। अपवर्तिताः ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। ६७९४५५२१। अष्टसंयोगाः सप्तरूपोन-

६ ५ ४ ३ २ १ १

पदस्य षड्वारसंकलनमात्राः। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। अपवर्तिताः ५५३२७०६७१।

७ ६ ५ ४ ३ २ १ १

१५ स्थानोंमें जानना। अन्तके चौंसठवें स्थानमें प्रत्येक भंग एक, द्विसंयोगी भंग एक हीन गच्छ

मात्र त्रिरेसठ, त्रिसंयोगी भंग दो हीन गच्छका एक बार संकलन धन मात्र। सो बासठ और त्रिरेसठको दो और एकका भाग देनेपर उन्नीस सौ त्रिरेपन होते हैं। तथा चतुःसंयोगी भंग तीन हीन गच्छका दो बार संकलन धन मात्र। सो इकसठ, बासठ, त्रिरेसठको तीन, दो, एकका भाग देनेपर उनतालीस हजार सात सौ ग्यारह भंग होते हैं। पंच संयोगी भंग चार

२० हीन गच्छका तीन बार संकलन धन मात्र। सो साठ, इकसठ, बासठ, त्रिरेसठको चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर पाँच लाख पनचानवे हजार छह सौ पैसठ होते हैं। छह संयोगी भंग पाँच हीन गच्छका चार बार संकलन धन मात्र। सो उनसठ, साठ, इकसठ, बासठ, त्रिरेसठको पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर सत्तर लाख अट्ठाईस हजार आठ सौ सैतालीस होते हैं। सात संयोगी भंग छह हीन गच्छको पाँच बार संकलन मात्र। सो

२५ अट्ठावन, उनसठ, साठ, इकसठ, बासठ, त्रिरेसठको छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर छह करोड़ उन्न्यासी लाख पैतालीस हजार पाँच सौ इक्कीस होते हैं। आठ संयोगी

१. म [५८०४५६०१] ।

नागतराशि ७। ५७। २९। ५९। ०। ६१। ३१। ० अपवर्तितगुणितमिदु ३८। ७२८९४६९७
५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३
८। ७। ६। ५। ४। ३। २। १

दशसंयोगदोळ नवरूपोनपद अष्टवारसंकलितमक्कुं अप ५५। ७। १९। २९। ५९। ०। ६१। ३१। ०
५५। ५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३
९ ८ ७ ६ ५ ४ ३ २ १
इंतीप्रकारदिंदमक्षसंचारसंजनितैकादशसंयोगादिभंगंगळु यथासंभवंगळु नड्डु द्विचरमत्रिषष्टि-

संयोगंगळु रूपाधिकैकषष्टिवारसंकलनसंख्याविहीनपद ६४-६१ एकषष्टिवारसंकलितमक्कुं
२३। ४। ००००। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु ६३। चतुःषष्टिसंयोगमोदेयक्कुं। १। ५
६२ ६२। ६०। ५५४। ३। २। १
मध्य
००००

ई चरमचतुःषष्ट्यक्षरस्थानदोळु प्रत्येकभंगमादियागि चतुःषष्ट्यक्षरं संयोगभंगार्वासानमादसमस्ता-
क्षरविकल्पंगळु युति एकट्टन अर्द्धमक्कु-१८= मितेकाद्येकोत्तरवर्णवृद्धिक्रमदिंदं चतुःषष्टिवर्णाव-
२

नवसंयोगाः अष्टरूपोनपदस्य सप्तवारसंकलनमात्राः ५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३।
८। ७। ६। ५। ४। ३। २। १।

अपवर्तिताः ३८७२८९४६९७। दशसंयोगाः नवरूपोनपदस्याष्टवारसंकलनमात्रा
५५। ५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। अनेन द्रवण.....क्षसंचारसंजनितैकादशसंयो- १०
९। ८। ७। ६। ५। ४। ३। २। १।

गादिभङ्गा यथासंभवं नीत्वा द्विचरमत्रिषष्टिसंयोगाः द्वाषष्टिरूपोनपदस्यैकषष्टिवारसंकलनमात्राः
२। ३। ४। ०००। ६०। ६१। ६२। ६३। अपवर्तिता ६३। चतुःषष्टिसंयोगः एक एव भवति।
६२। ६१। ६०। मध्य ४। ३। २। १।

अत्र चतुःषष्टितमेऽक्षरस्थाने प्रत्येकादीनां चतुःषष्टिसंयोगान्तानां सर्वेषामक्षराणां युतिरेकट्टस्यार्द्धं भवति।

भंग सात हीन गच्छका छह बार संकलन मात्र होते हैं सो सत्तावन, अट्ठावन, उनसठ, १५
साठ, इकसठ, बासठ, तिरेसठको सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर
पचपन करोड़ बत्तीस लाख सत्तर हजार छह सौ इकहत्तर होते हैं। नौ संयोगी भंग आठ
हीन गच्छका सात बार संकलन मात्र। सो छप्पन, सत्तावन, अट्ठावन, उनसठ, साठ, इक-
सठ, बासठ, तिरेसठको आठ, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर तीन
अरब सत्तासी करोड़ अट्ठाईस लाख चौरानवे हजार छह सौ सत्तानवे होते हैं। दस संयोगी
भंग नौ हीन गच्छका आठ बार संकलन मात्र। सो पचपन, छप्पन, सत्तावन, अट्ठावन, २०
उनसठ, साठ, इकसठ बासठ, तिरेसठको नौ, आठ, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका
भाग देनेपर होते हैं। इसी प्रकार ग्यारह संयोगी आदि भंग जानना।

तिरेसठ संयोगी भंग बासठ हीन गच्छ दोका इकसठ बार संकलन घन मात्र सो
दो, तीन आदि एक-एक बढ़ते तिरेसठ पर्यन्तको बासठ, इकसठ आदि एक-एक घटते एक
पर्यन्तका भाग देनेपर तिरेसठ भंग होते हैं। चौंसठ संयोगी भंग एक ही है। चौंसठवें २५

१. म अपवर्तितगुणितमिदु २१४५८८४५८३१५ इंती प्रकार। २. म °वस्थान°।

मज्झिमपदकखरवह्निदवण्णा ते अंगपुण्वगपदाणि ।

सेमकखरसंखाओ पइण्णयाणं पमाणं तु ॥३५५॥

मध्यमपदाक्षरापहतवर्णस्तानि अंगपूर्वगपदानि । शेषाक्षरसंख्याः ओ अहो भव्याः प्रकीर्ण-
कानां प्रमाणं तु ॥

परमागमप्रसिद्धमध्यमपदषोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोटिद्व्यशीतिलक्षसप्तसहस्राष्टशताष्टाशीति - ५
प्रमिताक्षरसंख्येयिदमा सकलश्रुतस्कन्धाक्षरसंख्येयं भागिसुत्तिरलु तल्लब्धप्रमितंगळु द्वादशांग-
पूर्वगतमध्यमपदंगळपुवु । अवशिष्टाक्षरसंख्येयु-मंगबाह्यप्रकीर्णकाक्षरंगळ प्रमाणमक्कुमिल्लि
त्रैराशिकं माडल्पडुगुमेत्तलानुमो दु मध्यमपदाक्षरंगळने तक्को दु मध्यमपदमागलु इतक्षरंगळगेनितु
मध्यमपदंगळपुवेदु त्रैराशिकममाडि प्रमाणराशिंयिदं भागिसिबंदलब्धमंगपूर्वपदंगळपुवु
११२८३५८००५ अवशिष्टाक्षरंगळु सामायिकादियादंगबाह्यश्रुताक्षरंगळपुवु ८१०८१७५ ओ १०
अहो भव्य येदितु । अंगअंगबाह्यश्रुतंगळेरडर यथानसंख्यमागिपदप्रमाणमुमनक्षरप्रमाणमुमनरिनी-
ने दितु । प्राकृतदोलु ओ शब्दमव्ययं संबोधनार्थमक्कुं ।

अनंतरमंगपूर्वगळ पदसंख्याविशेषं त्रयोदशगाथासूत्रंगळिदं पेळदपर :-

आयारे सूदयडे ठाणे समवायणामगे अंगे ।

ततो विहायपणत्तीए णाहस्स धम्मकहा ॥३५६॥

आचारे सूत्रकृते स्थाने समवायनामके अंगे । ततो व्याख्याप्रज्ञमौ नाथस्य धम्मकथा ॥

मध्यमपदस्य परमागमप्रसिद्धस्याक्षरैः षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोटिद्व्यशीतिलक्षसप्तसहस्राष्टशताष्टाशीति-
प्रमितैः तेषु सकलश्रुतस्कन्धाक्षरेषु रूपोत्तैकट्टमात्रेषु भक्तेषु यल्लब्धं तावन्त्यङ्गपूर्वगतमध्यमपदानि भवन्ति ।
अवशिष्टाक्षरसंख्या अङ्गबाह्यप्रकीर्णकाक्षरप्रमाणं भवति । यद्येतावतामक्षराणां एकं मध्यमपदं तदा एतावद-
क्षराणां कियन्ति मध्यमपदानि भवन्ति ? इति त्रैराशिकं कृत्वा प्रमाणराशिना भक्ते यल्लब्धं तदङ्गपूर्वपदानि २०
भवन्ति । ११२८३५८००५ । अवशिष्टाक्षराणि सामायिकाद्यङ्गबाह्यश्रुताक्षराणि भवन्ति । ८०१०८१७५ ।
ओ ! अहो भव्य ! इत्यङ्गाङ्गबाह्यश्रुतद्वयस्य यथासंभवं पदप्रमाणमक्षरप्रमाणं च त्वं जानीहि । प्राकृते ओ
शब्दः अव्ययं संबोधनार्थः ॥३५५॥ अथाङ्गपूर्वपदसंख्याविशेषं त्रयोदशगाथासूत्रैराख्याति—

परमागममे प्रसिद्ध मध्यम पदके सोलह सौ चौतीस कोटि, तिरासी लाख, सात
हजार आठ सौ अठासी प्रमाण अक्षरोंसे समस्त श्रुतस्कन्धके एक कम एकट्ठी प्रमाण २५
अक्षरोंमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतने अंगों और पूर्वोक्त मध्यमपद होते हैं । शेष रहे
अक्षरोंकी संख्या अंगबाह्यरूप प्रकीर्णकोंके अक्षरोंका प्रमाण होता है ।

यदि इतने अक्षरोंका एक मध्यमपद होता है, तब एक हीन एकट्ठी प्रमाण अक्षरोंके
कितने पद होते हैं ? इस प्रकार त्रैराशिक करके प्रमाण राशि मध्यम पदके अक्षरोंकी संख्यासे
भाग देनेपर जो लब्ध आया-एक सौ चारह कोटि, तिरासी लाख अठ्ठावन हजार पाँच, यह ३०
अंग और पूर्वोक्त पदोंका प्रमाण है । तथा शेष बचे अक्षर आठ करोड़ एक लाख आठ हजार
एक सौ पचहत्तर सामायिक आदि अंगबाह्यके अक्षर होते हैं । हे भव्य ! इस प्रकार अंग और
अंगबाह्य श्रुतोंके पद और अक्षरोंका प्रमाण जानो । प्राकृतमें 'ओ' शब्द सम्बोधनार्थक
अव्यय है ॥३५५॥

अब अंगों और पूर्वोक्त पदोंकी संख्या तेरह गाथासूत्रोंसे कहते हैं—

द्रव्यश्रुतमनधिकरिसिको'डे निरुक्तिपुं प्रतिपाद्यात्थमुं पदसंख्याविशेषंगळुमे'दिवक्के तत्तदंग-
पूर्वंगळोळु प्ररूपणे माडल्पडुगुमेके'दोडे भावश्रुतदोळु निरुक्त्याद्यसंभवमपुर्दारिदं । इत्लि द्वादशांग-
गळ मोदलोळाचारांग पेळल्पट्टुदेके'दोडे मोक्षहेतुगळप्य संवरनिर्जराकारणपंचाचारादिसकल-
चारित्रप्रतिपादकत्वदिदं । मुमुक्षुगळिनादरिसल्पडुव मोक्षांगमप्य परमागमशास्त्रवके मोदळोळु
५ वक्तव्यत्वं युक्तिसिद्धमे'दितु ।

चतुर्ज्ञानसप्तधिसंपन्नरूप गणधरदेवरुगळिदं तीर्थंकरमुखसरोजसंभूतसर्वभाषा-
त्मकदिव्यध्वनिश्रवणावधारितसमस्तशब्दात्थंगळिदं शिष्यप्रतिशिष्यानुग्रहात्थंगमागि विरचितसिद्ध
श्रुतस्कन्धद्वादशांगंगळोळगे मोदळोळाचारांग विरचितल्पट्टुदु । आचरन्ति समन्ततोऽनुतिष्ठन्ति
मोक्षमार्गमाराधयन्त्यस्मिन्ननेनेति वा आचारस्तस्मिन् आचारांगे इत्प्याचारांगदोळु—

१० जदं चरे जदं चिट्ठे जदं आसे जदं सये ।

जदं भुंजेज्ज भासेज्ज एवं पावं ण वज्झई ॥

कथं चरेत् कथमासीत् कथं शयीत् कथं भाषेत कथं भुंजीत् कथं पापं न बध्यते । ए'दितु
गणधरप्रश्नानुसारीदं यतं चरेत् यतं तिष्ठेत् यतमासीत् यतं शयीत् । यतं भाषेत यतं भुंजीत्

१५ द्रव्यश्रुतमधिकृत्य निरुक्तिप्रतिपाद्यात्थपदसंख्याविशेषाणां तत्तदङ्गपूर्वेषु प्ररूपणा क्रियते भावश्रुते
निरुक्त्याद्यसंभवात् । अत्र द्वादशाङ्गेषु प्रथमाचाराङ्गं कथितम् । कुतः ? मोक्षहेतुभूतसंवरनिर्जराकारणपञ्चा-
चारादिसकलचारित्रप्रतिपादकत्वेन मुमुक्षुभिराद्रियमाणस्य मोक्षाङ्गभूतस्य परमागमशास्त्रस्य प्रथमतो वक्तव्यत्वस्य
युक्तिसिद्धत्वात् । चतुर्ज्ञानसप्तधिसंपन्नगणधरदेवैः तीर्थंकरमुखसरोजसंभूतसर्वभाषात्मकदिव्यध्वनिश्रवणाव-
धारितसमस्तशब्दार्थैः शिष्यप्रशिष्यानुग्रहार्थं विरचितश्रुतस्कन्धद्वादशाङ्गानां मध्ये प्रथममाचाराङ्गं विरचितम् ।
आचरन्ति समन्ततोऽनुतिष्ठन्ति मोक्षमार्गमाराधयन्ति अस्मिन्ननेनेति वा आचारः तस्मिन् आचाराङ्गे—

२० जदं चरे जदं चिट्ठे जदं आसे जदं सये ।

जदं भुंजेज्ज भासेज्ज एवं पावं ण वज्झई ॥१॥

कथं चरेत् ? कथं तिष्ठेत् ? कथमासीत् ? कथं शयीत् ? कथं भाषेत ? कथं भुंजीत् ? कथं पापं न
बध्यते ? इति गणधरप्रश्नानुसारेण यतं चरेत् । यतं तिष्ठेत् । यतमासीत् । यतं शयीत् । यतं भाषेत । यतं

२५ द्रव्यश्रुतको अधिकृत करके उस-उस अंग और पूर्वो'में निरुक्ति, प्रतिपादित अर्थ और
पदोंकी संख्याका कथन करते हैं, क्योंकि भावश्रुतमें निरुक्ति आदि सम्भव नहीं हैं । द्वादशांग-
में पहला आचारांग कहा है ; क्योंकि मोक्षके हेतु संवर निर्जराके कारण पंचाचार आदि
सकल चारित्रका प्रतिपादक होनेसे मुमुक्षुओंके द्वारा आदरणीय तथा मोक्षके अंगभूत आचार-
का परमागम शास्त्रमें प्रथम वक्तव्य होना युक्तिसिद्ध है । चार ज्ञान और सात ऋद्धियोंसे
सम्पन्न गणधरदेवने तीर्थंकरके मुखकमलसे उत्पन्न सर्वभाषामयी दिव्यध्वनिको सुनकर
समस्त शब्दार्थको अवधारण करके शिष्य-प्रशिष्योंके अनुग्रहके लिए विरचित द्वादशांग श्रुत
३० स्कन्धमें प्रथम आचारांगकी रचना की । जिसमें या जिसके द्वारा 'आचरन्ति' अच्छी रीतिसे
आचरण करते हैं, मोक्ष मार्गकी आराधना करते हैं, वह आचार है । उस आचारांगमें कैसे
चलना, कैसे खड़े होना, कैसे बैठना, कैसे सोना, कैसे बोलना, कैसे भोजन करना कि पापका
बन्ध न हो । इस गणधरके प्रश्नके अनुसार सावधानतापूर्वक चलिए, सावधानतापूर्वक
खड़े होइए, सावधानता पूर्वक बैठिए, सावधानतापूर्वक सोइए, सावधानतापूर्वक बोलिए

एवं पापं न बध्यते । इत्याद्युत्तरवाक्यप्रतिपादितमुनिजनसमस्ताचरणं वर्णिसल्पट्टुदु । सूत्रयति-
संक्षेपेणार्थं सूचयतीति सूत्रं परमागमः । तदर्थं कृतं करणं ज्ञानविनयादि निर्विघ्नाध्ययनादिक्रिया ।
अथवा प्रज्ञापना कल्प्याकल्प्यच्छेदोपस्थापना व्यवहारधर्मक्रियाः स्वसमय-परसमयस्वरूपं च
सूत्रैः कृतं करणं क्रियाविशेषो यस्मिन् वर्ण्यते तत्सूत्रकृतं नाम द्वितीयमंगं । तिष्ठन्त्यस्मिन्येकाद्ये-
कोत्तराणि स्थानानीति स्थानं स्थानांगं तस्मिन् संग्रहनयेन एक एवात्मा व्यवहारनयेन संसारी ५
मुक्तश्चेति द्विविकल्पः उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त इति त्रिलक्षणः, कर्मवशाच्चतुर्गतिषु संक्रामतीति
चतुःसंक्रमणयुक्तः, औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकौदयिकपारिणामिकभेदेन पंच विशिष्टधर्म-
प्रधानः, पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरोर्ध्वाधोगतिभेदेन संसारावस्थायां षट्कोपक्रमयुक्तः, स्यादस्ति-
स्यान्नास्ति स्यादस्तिनास्ति स्यादवक्तव्यः स्यादस्त्यवक्तव्यः स्यान्नास्त्यवक्तव्यः स्यादस्तिनास्त्य-
वक्तव्यः इत्यादिसप्तभंगिसद्भावे उपयुक्तः, अष्टविधकर्मस्रवणयुक्तत्वादष्टास्रवः, नवजीवाजीवा- १०
स्रवबंधमंवरनिर्जराभोक्षपुण्यपापरूपाः अर्थाः पदार्थाः विषयाः यस्य स नवार्थः, पृथिव्यप्तेजो-
वायुप्रत्येकसाधारणद्वित्रिचतुःपंचेन्द्रियभेदादवशस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यार्पणया एकः

भुञ्जीत । एवं पापं न बध्यते । इत्याद्युत्तरवाक्यप्रतिपादितमुनिजनसमस्ताचरणं वर्ण्यते । सूत्रयति-संक्षेपेण
अर्थं सूचयति इति सूत्रं परमागमः । तदर्थं कृतं करणं ज्ञानविनयादिनिर्विघ्नाध्ययनादिक्रिया, अथवा प्रज्ञापना,
कल्प्याकल्प्यं, छेदोपस्थापना, व्यवहारधर्मक्रिया, स्वसमयपरसमयस्वरूपं च सूत्रैः कृतं करणं क्रियाविशेषो १५
यस्मिन् वर्ण्यते तत् सूत्रकृतं नाम द्वितीयमङ्गम् । तिष्ठन्ति अस्मिन् एकाद्येकोत्तराणि स्थानानीति स्थानं
तस्मिन् संग्रहनयेन एक एवात्मा । व्यवहारनयेन संसारी मुक्तश्चेति द्विविकल्पः । उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त इति
त्रिलक्षणः । कर्मवशात् चतुर्गतिषु संक्रामतीति चतुःसंक्रमणयुक्तः । औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकौदयिक-
पारिणामिकभेदेन पञ्चविशिष्टधर्मप्रधानः । पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरोर्ध्वाधोगतिभेदेन संसारावस्थायां षट्कोपक्रम-
युक्तः । स्यादस्ति स्यान्नास्ति स्यादस्तिनास्ति स्यादवक्तव्यः स्यादस्त्यवक्तव्यः स्यान्नास्त्यवक्तव्यः स्यादस्तिना- २०
स्त्यवक्तव्यः इत्यादिसप्तभङ्गोसद्भावेऽप्युपयुक्तः । अष्टविधकर्मस्रवयुक्तत्वादष्टास्रवः । नव जीवाजीवास्रवबंध-
मंवरनिर्जराभोक्षपुण्यपापरूपा अर्थाः-पदार्थाः विषयाः यस्य स नवार्थः । पृथिव्यप्तेजोवायुप्रत्येकसाधारण-

और सावधानतापूर्वक भोजन करिए । ऐसा करनेसे पापका बन्ध नहीं होता, इत्यादि उत्तर
वाक्योंमें प्रतिपादित मुनिजनोका समस्त आचरण वर्णित है । 'सूत्रयति' अर्थात् जो संक्षेपसे
अर्थको सूचित करता है, वह सूत्र नामक परमागम है । उसमें कृत अर्थात् ज्ञानकी विनय आदि, २५
निर्विघ्न अध्ययन आदि क्रिया अथवा प्रज्ञापना, कल्प्य-अकल्प्य, छेदोपस्थापना, व्यवहार
धर्मकी क्रियाएँ तथा स्वसमय-परसमयका वर्णन है । अथवा सूत्रोंके द्वारा कृत क्रियाविशेष
का जिसमें वर्णन है, वह सूत्रकृत नामक दूसरा अंग है । जिसमें एकको आदि लेकर एक-एक
बढ़ते हुए स्थान 'तिष्ठन्ति' रहते हैं, वह स्थानांग है । उसमें संग्रहनयसे आत्मा एक है,
व्यवहारनयसे संसारी मुक्त दो प्रकार है, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त होनेसे त्रिलक्षण है, कर्मवश ३०
चारों गतियोंमें संक्रमण करनेसे चार संक्रमणसे युक्त है, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक,
औदयिक, पारिणामिकके भेदसे पाँच विशिष्ट भावोंसे युक्त है, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर,
ऊर्ध्वगति, अधोगतिके भेदसे संसार अवस्थामें छह उपक्रमोंसे युक्त है, स्यादस्ति, स्यात् नास्ति,
स्यात् अस्ति नास्ति, स्यात् अवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य, स्यात् नास्ति अवक्तव्य, स्यात्
अस्ति नास्ति अवक्तव्य इत्यादि सप्तभंगीके सद्भावमें उपयुक्त है, आठ प्रकारके कर्मस्रवोंसे ३५
युक्त होनेसे आठ आस्रवरूप है, जीव-अजीव-आस्रव-बन्ध-मंवर-निर्जरा-भोक्ष-पुण्य-पाप

पुद्गलः विशेषार्पणया अणुस्कन्धभेदाद्विषयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि वर्ण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गं ।

- सम्संग्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायाङ्गं । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेनाधर्मास्तिकायः सदृशः, संसारिजीवेन संसारिजीवः सदृशः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सदृशः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरकमनुष्यक्षेत्र ऋत्विक्सिद्धक्षेत्राणि प्रदेशतः सदृशानि । अवधिस्थाननरकजम्बूद्वीपसर्वार्थसिद्धिविमानमैतानि सदृशानोत्थादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सदृशः । आवलिखलवत्या सदृशी । प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां जघन्यायूषि सदृशानि । सप्तमपृथ्वीनारक सर्वार्थसिद्धिदेवानामुत्कृष्टायुषी सदृशी । इत्यादि कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सदृशमित्यादिभावसमवायः । इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गं । विशेषैर्बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवो किमेको जीवः किमनेको जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमवक्तव्यो जीवः किं वक्तव्यो जीव इत्यादीनि (६००००) षष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदर्हतीत्यंकरसन्निधौ गणधरदेवप्रश्न-

- द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियभेदाद् दशस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यार्पणादेकः पुद्गलः विशेषार्पणया अणुस्कन्धभेदाद् द्विषयः, इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि वर्ण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गम् ।
- १५ सं-संग्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायाङ्गम् । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेन अधर्मास्तिकायः सदृशः । संसारिजीवेन संसारिजीवः सदृशः । मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सदृशः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरक-मनुष्यक्षेत्र-ऋत्विन्द्रक-सिद्धक्षेत्राणि प्रदेशतः सदृशानि । अवधिस्थान-नरक-जम्बूद्वीप-सर्वार्थसिद्धिविमानानि सदृशानि इत्यादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सदृशः, आवलिः आवल्या सदृशी, प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां जघन्यायूषि सदृशानि । सप्तमपृथ्वीनारकसर्वार्थसिद्धिदेवानां उत्कृष्टायुषी सदृशी इत्यादिः कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सदृशमित्यादिभावसमवायः इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गम् । विशेषैः बहुप्रकारैराख्यातं किमस्ति जीवः ? किं नास्ति जीवः ? किमेको जीवः ? किमनेको जीवः ? किं नित्यो जीवः ? किमनित्यो जीवः ? किं वक्तव्यो जीवः ? किमवक्तव्यो जीव इत्यादीनि षष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदर्हतीत्यंकरसन्निधौ

- ये नौ पदार्थ उसके विषय होनेसे नौ अर्थरूप है, पृथिवी-अप्-तेज-वायु-प्रत्येक-साधारण-
- २५ दोइन्द्रिय-त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका और सामान्यसे पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अणु और स्कन्धके भेदसे दो प्रकार है, इत्यादि पुद्गल आदिके एकादि एक-एक अधिक स्थानोंका वर्णन रहता है । इस प्रकार स्थान नामक तीसरा अङ्ग है । 'सं' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संग्रहनयसे 'अवेयन्ते' द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावको लेकर जीवादि पदार्थ जिसमें जाने जाते हैं, वह समवायाङ्ग है । उसमें द्रव्यकी
- ३० अपेक्षा धर्मास्तिकायसे अधर्मास्तिकाय समान है, संसारी जीवसे संसारी जीव समान है, मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रकी अपेक्षा सीमन्त नरक, मनुष्यलोक, ऋतु नामक इन्द्रक विमान, सिद्धक्षेत्र प्रदेशसे समान है, सातवें नरकका अवधि-स्थान नामक इन्द्रकविला, जम्बूद्वीप, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है, इत्यादि क्षेत्रसमवाय है । एक समय एक समयके समान है, आवली आवलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नारकी, भवनवासी और व्यन्तरोंकी जघन्य आयु समान है, सातवें नरकके नारकी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंकी उत्कृष्ट आयु समान है, इत्यादि कालसमवाय है । केवलज्ञान केवलदर्शनके समान है, इत्यादि भावसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके चतुर्थ

वाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञप्तिनाम पञ्चममंगं । नाथस्त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकस्तस्य धर्मकथा जीवादिवस्तुस्वभावकथनं । घातिकर्मक्षयानन्तर-केवलज्ञानसहोत्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नस्तोतीर्थंकरस्य पूर्वार्हमध्याह्नापरार्हार्ह-द्वारत्रिषु षट्-षट् घटिकाकालपर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिरुद्गच्छत्यन्यकालेपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं चोद्भवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नश्रोतृगणानु-दिश्य उत्तमक्षमादिलक्षणं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानु-सारेण तदुत्तरवाक्यरूपा धर्मकथातत्पृष्ठास्तित्वनास्तित्वादिवस्वरूपकथनं । अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकर-गणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबन्धिकथोपकथाकथनं ज्ञातृधर्मकथानाम षष्ठमंगं ।

तो वासयअज्झयणे अंतयडेणुत्तरोववाददसे ।

पण्हाणं वायरणे विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

१०

तत उपासकाध्ययने अंतकृद्दशे अनुत्तरोपपाददशे । प्रश्नानां व्याकरणे विपाकसूत्रे च पद-संख्या ॥

गणधरदेवप्रश्नवाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञप्तिनाम पञ्चममङ्गं । नाथः—त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकः तस्य धर्मकथा जीवादिवस्तुस्वभावकथनं, घातिकर्मक्षयानन्तरकेवलज्ञानसहो-त्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नः तीर्थंकरस्य पूर्वार्हमध्याह्नापरार्हार्हत्रिषु षट्षट्घटिकाकाल-पर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिरुद्गच्छति । अन्यकालेऽपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं चोद्भवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नश्रोतृगणानुदिश्य उत्तमक्षमादिलक्षणं रत्नत्रयात्मकं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानुसारेण तदुत्तरवाक्यरूपा धर्मकथा तत्पृष्ठा-स्तित्वनास्तित्वादिवस्वरूपकथनं, अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकरगणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबन्धिकथोपकथाकथनं नाथधर्मकथा ज्ञातृधर्मकथानाम वा षष्ठमङ्गम् ॥३५६॥

१५

२०

अंगमें होता है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव वक्तव्य है या अवक्तव्य है, इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न भगवान् अर्हन्त तीर्थंकरके पासमें पूछे गये, जिसमें विशेष अर्थात् बहुत प्रकारसे प्रज्ञाप्यन्ते कहे जाते हैं, वह व्याख्याप्रज्ञप्ति नामक पाँचवाँ अंग है । नाथ अर्थात् तीनों लोकों-के ईश्वरोंका स्वामी तीर्थंकर परम भट्टारककी धर्मकथा—जीवादि वस्तुओंके स्वभावका कथन, कि घातिकर्मोंके क्षयके अनन्तर केवलज्ञानके साथ उत्पन्न तीर्थंकर नामक पुण्याति-शयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है, उन तीर्थंकरकी पूर्वाह्ण, मध्याह्ण, अपराह्ण और अर्धरात्रिमें छह-छह घड़ी काल पर्यन्त बारह गणोंकी सभाके मध्य स्वभावसे दिव्यध्वनि खिरती है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और चक्रवर्तीके प्रश्न करनेपर खिरती है । इस प्रकार उत्पन्न हुई दिव्यध्वनि समस्त निकटवर्ती श्रोतागणोंके उद्देशसे उत्तमक्षमादि लक्षणरूप रत्नत्रयात्मक धर्म-का कथन करती है । अथवा ज्ञाता जिज्ञासु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर वाक्यरूप धर्मकथा, पूछे गये अस्तित्व-नास्तित्व आदिके स्वरूपका कथन अथवा ज्ञाता तीर्थंकर गण-धर, इन्द्र, चक्रवर्ती आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हों, वह ज्ञातृधर्मकथा नामक छठा अंग है ॥३५६॥

२५

३०

अल्लिदं बज्रिकं उपासते आहारादिदानैर्नित्यमहादिपूजाविधानैश्च संघमाराधयन्तीत्युपासकाः । ते अधीयन्ते पठन्ते दर्शनिकव्रतिकसामयिकप्रोषधोपवाससचित्तविरतरात्रिभक्तव्रत-
ब्रह्मचार्यारम्भपरिग्रहनिवृत्ताऽनुमतोद्दिष्टविरतभेदैकादशनिलयसंबन्धिव्रतगुणशीलाचारक्रियामन्त्रादि-
विस्तरैर्वर्ण्यन्तेऽस्मिन्निति उपासकाध्ययनं नाम सप्तममंगं ।

- ५ प्रतितीर्थं दशदशमुनीश्वरास्तीव्रं चतुर्विधोपसर्गं सोढ्वा इन्द्रादिभिर्विरचितं पूजादि,
प्रातिहार्यसंभावनां लब्ध्वा कर्मक्षयानन्तरं संसारस्यांतमवसानं कृतवन्तोऽन्तकृतः । श्रीवर्धमानतीर्थं
नमिमतंग सोमिल रामपुत्र सुदर्शन यमलीकवलिककिष्कंदिल पालंबष्टपुत्रा इति दश । एवं
वृषभादितीर्थेष्वपि दश दशान्तकृतो वर्ण्यते यस्मिन्तदन्तकृद्दशं नामाष्टममंगं । तथा उपपादः प्रयोजन-
मेवांते इमे औपपादिकाः अनुत्तरेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितसर्वार्थसिद्धिवाक्येषु औपपादिकाः
१० अनुत्तरौपपादिकाः । प्रतितीर्थं दश दश मुनयः दारुणान्महोपसर्गान्सोढ्वा लब्धप्रातिहार्याः समाधिविधिना
त्यक्तप्राणा ये विजयाद्यनुत्तरविजयानेषूपपन्नास्ते वर्ण्यन्ते यस्मिन् तदनुत्तरौपपादिकदशं
नाम नवममंगं । तत्र श्रीवर्धमानतीर्थं ऋजुदास धन्य मुनक्षत्र कार्तिकेय नंद नंदन शालिभद्र

- अतः परं उपासते आहारादिदानैर्नित्यमहादिपूजाविधानैश्च संघमाराधयन्तीति उपासकाः ते अधीयन्ते
पठन्ते दर्शनिकव्रतिकसामयिकप्रोषधोपवाससचित्तविरतरात्रिभक्तव्रतब्रह्मचार्यारम्भपरिग्रहनिवृत्ताऽनुमतोद्दिष्ट-
१५ विरतभेदैकादशनिलयसंबन्धिव्रतगुणशीलाचारक्रियामन्त्रादिविस्तरैर्वर्ण्यन्ते अस्मिन्निति उपासकाध्ययनं नाम
सप्तममङ्गम् । प्रति तीर्थं दश दश मुनीश्वराः तीव्रं चतुर्विधोपसर्गं सोढ्वा इन्द्रादिभिर्विरचितं पूजादिप्राति-
हार्यसंभावनां लब्ध्वा कर्मक्षयानन्तरं संसारस्यान्तं अवसानं कृतवन्तोऽन्तकृतः । श्रीवर्धमानतीर्थं नमि-मतङ्ग-
सोमिल-रामपुत्र-सुदर्शन-यमलीक-वलिक-किष्कन्त्रिल-पालंबष्ट-पुत्रा इति दश । एवं वृषभादितीर्थेष्वपि
दश दशान्तकृतो वर्ण्यन्ते यस्मिन्तदन्तकृद्दशनामाष्टममङ्गम् । तथा उपपादः प्रयोजनमेवांते इमे औपपादिकाः ।
२० अनुत्तरेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितसर्वार्थसिद्धिवाक्येषु औपपादिकाः अनुत्तरौपपादिकाः । प्रति तीर्थं दश
दश मुनयो दारुणान् महोपसर्गान् सोढ्वा लब्धप्रातिहार्याः समाधिविधिना त्यक्तप्राणाः ये विजयाद्यनुत्तर-
विमानेषूपपन्नाः ते वर्ण्यन्ते यस्मिन्तदनुत्तरौपपादिकदशं नाम नवममङ्गम् । तत्र श्रीवर्धमानतीर्थं ऋजुदास-

- ‘उपासते’ जो आहार आदि दानके द्वारा और नित्यमह आदि पूजाविधानके द्वारा
संघकी आराधना करते हैं, वे उपासक हैं । वे उपासक दर्शनिक, व्रतिक, सामयिक, प्रोषधो-
२५ पवास, सचित्तविरत, रात्रिभक्तव्रत, ब्रह्मचर्य, आरम्भविरत, परिग्रहविरत, अनुमतविरत,
उद्दिष्टविरत इन गृहस्थोंके ग्यारह भेदोंसे सम्बद्ध व्रत, गुण, शील, आचार, क्रिया, मन्त्र आदि
विस्तारसे जिसमें ‘अधीयन्ते’ पढ़े जाते हैं, वह उपासकाध्ययन नामक सातवाँ अंग है ।
प्रत्येक तीर्थमें दस-दस मुनीश्वर तीव्र चार प्रकारके उपसर्गको सहकर इन्द्रादिके द्वारा रचित
पूजादि प्रतिहार्योंकी सम्भावनाको प्राप्त करके कर्मोंके क्षयके अनन्तर संसारका अन्त करते
३० हैं, । इसलिए उन्हें ‘अन्तकृत’ कहते हैं । श्री वर्धमान तीर्थकरके तीर्थमें नमि, मतंग, सोमिल,
रामपुत्र, सुदर्शन, यमलीक, वलीक, किष्कंदिल, पालम्ब, अष्टपुत्र ये दस अन्तकृत हुए । इसी
प्रकार ऋषभदेव आदिके भी तीर्थमें हुए । जिसमें दस-दस अन्तकृतोंका वर्णन हो, वह अंग
अन्तकृद्दश नामक है । उपपाद जिनका प्रयोजन है, वे औपपादिक हैं । विजय, वैजयन्त,
जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि नामक अनुत्तरोंमें उपपाद जन्म लेनेवाले अनुत्तरौ-
३५ पपादिक होते हैं । प्रत्येक तीर्थमें दस-दस मुनि दारुण महान् उपसर्गोंको सहकर प्रातिहार्य
प्राप्त करके समाधिपूर्वक प्राणोंको त्यागकर विजयादि अनुरोत्तरोंमें उत्पन्न हुए । उनका
जिसमें वर्णन हो, वह अनुत्तरौपपादिकदश नामक नौवाँ अंग है । उनमें-से श्रीवर्धमान

अभय वारिषेण चिलातपुत्रा इत्येते दारुण महोपसर्गान्विजित्येन्द्रादिकृतां पूजां लब्ध्वाऽनुत्तरविमानेषूपपन्ताः । एवं वृषभादितीर्थेष्वपि परमागमानुसारेण ज्ञातव्याः । प्रश्नस्य दूतवाक्यनष्टमुष्टिचिन्तादिरूपस्यार्थः त्रिकालगोचरो धनधान्यादिलाभालाभमुखदुःखजीवितमरणजयपराजयादिरूपो व्याक्रियते व्याख्यायते यस्मिन् तत्प्रश्नव्याकरणम् । अथवा शिष्यप्रश्नानुरूपतया आक्षेपणी विक्षेपणी संवेजनी निर्व्वेजनी चेति कथा चतुर्विधा । तत्र प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोगद्रव्यानुयोगरूपपरमागमपदार्थानां तीर्थकरादिवृत्तांतलोकसंस्थानदेशसकलयतिधर्मपञ्चास्तिकायादीनां परमताशङ्कारहितं कथनमाक्षेपणीकथा । प्रमाणनयात्मकयुक्तियुक्तहेतुवादबलेन सर्वथैकान्तादिपरसमयार्थनिराकरणरूपा विक्षेपणीकथा । रत्नत्रयात्मकधर्मनुष्ठानफलभूततीर्थकराद्यैश्वर्यप्रभावतेजोवीर्यज्ञानसुखादिवर्णनारूपा संवेजनीकथा । संसारशरीरभोगजनितदुःकर्मफलनारकादिदुःखदुःकुलविरूपांगदारिद्र्यापमानदुःखादिवर्णनाद्वारेण वैराग्यकथनरूपा निर्व्वेजनीकथा । एवंविधाः कथाः व्याक्रियन्ते १०

धन्य-सुनक्षत्र-कार्तिकेय-नन्द-नन्दन-शालिभद्र-अभय-वारिषेण-चिलातपुत्रा इत्येते दारुणमहोपसर्गान् विजित्य इन्द्रादिकृतां पूजां लब्ध्वा अनुत्तरविमानेषूपपन्ताः । एवं वृषभादितीर्थेष्वपि परमागमानुसारेण ज्ञातव्याः । प्रश्नस्य-दूतवाक्यनष्टमुष्टिचिन्तादिरूपस्य अर्थः त्रिकालगोचरो धनधान्यादिलाभालाभमुखदुःखजीवितमरणजयपराजयादिरूपो व्याक्रियते व्याख्यायते यस्मिन्तत्प्रश्नव्याकरणम् । अथवा शिष्यप्रश्नानुरूपतया आक्षेपणी विक्षेपणी संवेजनी निर्व्वेजनी चेति कथा चतुर्विधा । तत्र प्रथमानुयोगकरणानुयोगचरणानुयोगद्रव्यानुयोगरूपपरमागमपदार्थानां तीर्थकरादिवृत्तांतलोकसंस्थानदेशसकलयतिधर्मपञ्चास्तिकायादीनां परमताशङ्कारहितं कथनमाक्षेपणी कथा । प्रमाणनयात्मकयुक्तियुक्तहेतुवादबलेन सर्वथैकान्तादि परसमयार्थनिराकरणरूपा विक्षेपणी कथा । रत्नत्रयात्मकधर्मनुष्ठानफलभूततीर्थकराद्यैश्वर्यप्रभावतेजोवीर्यज्ञानसुखादिवर्णनारूपा संवेजनी कथा । संसार-शरीरभोगराजनिर्दुष्कर्मफलनारकादिदुःखदुःकुलविरूपाङ्गदारिद्र्यापमानदुःखादिवर्णनाद्वारेण वैराग्यकथनरूपा १५

स्वामीके तीर्थमें ऋजुदास, धन्य, सुनक्षत्र, कार्तिकेय, नन्द, नन्दन, शालिभद्र, अभय, वारिषेण, चिलातपुत्र ये दारुण महा उपसर्गोंको जीतकर इन्द्रादिके द्वारा की गयी पूजाको प्राप्त करके अनुत्तर विमानमें उत्पन्न हुए । इसी प्रकार ऋषभ आदि तीर्थकरोंके तीर्थमें भी परमागमके अनुसार जानना । प्रश्न अर्थात् दूतवाक्य, नष्ट, मुष्टि चिन्तादि विषयक प्रश्नका त्रिकाल गोचर अर्थ जो धनधान्य आदिकी लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन-मरण, जय-पराजय आदि-से सम्बद्ध है, वह जिसमें व्याक्रियते अर्थात् उत्तरित किया गया हो, वह प्रश्नव्याकरण है । अथवा शिष्योंके प्रश्नके अनुसार अवक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेजनी और निर्व्वेजनी ये चार कथाएँ जिसमें वर्णित हों, वह प्रश्नव्याकरण हैं । तीर्थकर आदिके इतिवृत्तको कहनेवाले प्रथमानुयोग, लोकके आकार आदिका कथन करनेवाले करणानुयोग, देशचारित्र और सकलचारित्रको कहनेवाले चरणानुयोग तथा पञ्चास्तिकाय आदिका कथन करनेवाले द्रव्यानुयोग रूप परमागमके पदार्थोंका परमतकी आशंकाको दूर करते हुए कथनको आक्षेपणी कथा कहते हैं । प्रमाणनयात्मक युक्ति तथा हेतु आदिके बलसे सर्वथा एकान्त आदि अन्य मतोंका निराकरण करानेवाली कथाको विक्षेपणी कथा कहते हैं । रत्नत्रयात्मक धर्मका अनुष्ठान करनेके फलस्वरूप तीर्थकर आदिके ऐश्वर्य, प्रभाव, तेज, ज्ञान, सुख, वीर्य आदिका कथन करनेवाली संवेजनी कथा है । संसार शरीर और भोगोंसे राग करनेसे दुष्कर्मका बन्ध होता है और उसके फलस्वरूप नारक आदिका दुःख, दुष्कुलकी प्राप्ति, शरीरोंके अंगोंका विरूपपना, दारिद्र्य, अपमान आदिके वर्णनके द्वारा वैराग्यका कथन करनेवाली निर्व्वेजनी २० २५ ३० ३५

व्याख्यायन्ते यस्मिन् तत्प्रश्नव्याकरणं नाम दशममङ्गम् । शुभाशुभकर्मणां तीव्रमन्दमध्यमविकल्प-
शक्तिरूपानुभागस्य द्रव्यक्षेत्रकालभावाश्रयः फलदानपरिणतिरूप उदयो विपाकस्तं सूत्रयति
वर्णयतीति विपाकसूत्रं नामैकादशमङ्गम् । एतेष्व्याचारादिषु विपाकसूत्रपर्यन्तेष्वेकादशस्वङ्गेषु प्रत्येकं
मध्यमपदानां संख्या यथाक्रमं वक्ष्यते इत्यर्थः ।

५

अट्टारसं छत्तीसं बादालं अडकरी अडविछप्पणं ।

सत्तरि अट्टावीसं चउदालं सोलस सहसा ॥३५८॥

अष्टादश षट्त्रिंशत् द्वाचत्वारिंशत् अष्टकृतिरष्टद्विः षट्पञ्चाशत् सप्ततिरष्टविंशतिः चतुश्च-
त्वारिंशत् षोडश सहस्राणि ॥

इगिदुगपंचेयारं तिवीस दुतिणउदिलक्ख तुरियादी ।

१०

चलसीदिलक्खमेया कोडी य विवागसुत्तम्मि ॥३५९॥

एकद्विपंचैकादशत्रिंशति द्वित्रिंशतिलक्षाणि तुर्ग्यादीनि चतुरश्रतिलक्षाण्येका कोटी च
विपाकसूत्रे ॥

१५

सहस्रशब्दः सर्वत्र संबध्यते । आचाराङ्गे आचाराङ्गदोळु अष्टादशसहस्रपदङ्गळप्पुवु १८०००
सूत्रकृताङ्गदोळु षट्त्रिंशत्सहस्रपदङ्गळप्पुवु ३६००० स्थानाङ्गदोळु द्वाचत्वारिंशत्सहस्रपदङ्गळप्पुवु
४२००० चतुर्थसमवायादिप्रश्नव्याकरणपर्यन्तमाद सप्तङ्गदोळु एकलक्षादियोगं माडल्पडुवुद-
वेत्तेदोळे समवायाङ्गदोळु एकलक्षमुं चतुःषष्टिसहस्रपदङ्गळप्पुवु १६४००० । व्याख्याप्रज्ञप्त्यङ्गदोळु
द्विलक्षमुमष्टाविंशतिसहस्रपदङ्गळप्पुवु २२८००० ज्ञातृकथाङ्गदोळु पञ्चलक्षङ्गळु षट्पञ्चाशत्सहस्र-
पदङ्गळप्पुवु ५५६००० उपासकाध्ययनाङ्गदोळु एकादशलक्षसप्ततिसहस्राणि पदानि ११७००००

२०

निर्वेजनी कथा । एवंविधाः कथाः व्याक्रियन्ते व्याख्यायन्ते यस्मिन् तत्प्रश्नव्याकरणं नाम दशममङ्गम् । शुभा-
शुभकर्मणां तीव्रमन्दमध्यमविकल्पशक्तिरूपानुभागस्य द्रव्यक्षेत्रकालभावाश्रयफलदानपरिणतिरूप उदयः—
विपाकः तं सूत्रयति वर्णयतीति विपाकसूत्रं नामैकादशमङ्गम् । एतेष्व्याचारादिषु विपाकसूत्रपर्यन्तेषु एकादशसु
अङ्गेषु प्रत्येकं मध्यमपदानां संख्या यथाक्रमं वक्ष्यते इत्यर्थः ॥३५७॥

२५

सहस्रशब्दः सर्वत्र संबध्यते । आचाराङ्गे अष्टादशसहस्राणि पदानि १८००० । सूत्रकृताङ्गे षट्त्रिंश-
त्सहस्राणि पदानि ३६००० । स्थानाङ्गे द्वाचत्वारिंशत्सहस्राणि पदानि ४२००० । चतुर्थादिषु समवायादिषु
प्रश्नव्याकरणपर्यन्तेषु सप्तस्वङ्गेषु एकलक्षादियोगः क्रियते । तथा—समवायाङ्गे एकलक्षचतुःषष्टिसहस्राणि
पदानि १६४००० । व्याख्याप्रज्ञप्त्यङ्गे द्विलक्षाष्टाविंशतिसहस्राणि पदानि २२८००० । ज्ञातृकथाङ्गे पञ्चलक्ष-
षट्पञ्चाशत्सहस्राणि पदानि ५५६००० । उपासकाध्ययनाङ्गे एकादशलक्षसप्ततिसहस्राणि पदानि ११७०००० ।

३०

कथा है । इस प्रकारकी कथाएँ जिसमें वर्णित हों, वह प्रश्नव्याकरण नामक दसवाँ अङ्ग है ।
शुभ और अशुभ कर्मोंके तीव्र-मन्द-मध्यम विकल्प शक्तिरूप अनुभागके द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव-
के आश्रयसे फलदानकी परिणतिरूप उदयको विपाक कहते हैं । उसको जो वर्णन करता है,
वह विपाक सूत्र नामका ग्यारहवाँ अङ्ग है । आचारसे लेकर विपाक सूत्र पर्यन्त ग्यारह
अङ्गोंमें-से प्रत्येकमें मध्यमपदोंको यथाक्रम कहते हैं ॥३५७॥

३५

सहस्र शब्दका सम्बन्ध सर्वत्र लगता है । आचाराङ्गमें अठारह हजार पद हैं । सूत्र-
कृताङ्गमें छत्तीस हजार पद हैं । स्थानाङ्गमें बयालीस हजार पद हैं । चतुर्थ समवायाङ्गसे
लेकर प्रश्नव्याकरण पर्यन्त सात अङ्गोंमें एक लाख आदिका योग किया जाता है । अतः
समवायाङ्गमें एक लाख चौंसठ हजार पद हैं । व्याख्याप्रज्ञप्ति अङ्गमें दो लाख अट्ठाईस

अन्तकृद्दशांगदोऽत्र त्रयोविंशतिलक्षं गण्यमष्टाविंशतिसहस्रपदं गण्यम् २३२८००० । अनुत्तरौषपादिक-
दशांगदोऽत्र द्विनवतिलक्षं गण्यं चतुश्चत्वारिंशत्सहस्रपदं गण्यम् ९२४४००० । प्रश्नव्याकरणंगदोऽत्र
त्रिनवतिलक्षं गण्यं षोडशसहस्रपदं गण्यम् ९३१६००० । विपाकसूत्रांगदोऽत्र एककोटियं चतुरशीति-
लक्षपदं गण्यम् १८४००००० ।

वापणनरनोनानं एयारंगे जुदी हु वादम्मि ।

कनजतजमताननमं जनकनजयसीम वाहिरे वण्णा ॥३६०॥

वा चतुः । प एक । ण पंच । न शून्य । र द्वि । नो शून्य । ता शून्य । नं शून्यदेकादशांगे
युतिः । खलु वादे क एक । न शून्य । ज अष्ट । त षट् । ज अष्ट । म पंच । ता षट् । न शून्य । न
शून्य । मं पंच । ज अष्ट । न शून्य । क एक । न शून्य । ज अष्ट । य एक । सि सप्त । म पंच
वाह्ये वर्णाः पेरगे वेळत्पट्ट एकादशांगं पदसंख्यायुतिप्रनक्षरसंख्येयिदं वापणनरनोनानं नात्कु १०
कोटियं पदितैदुलक्षमुमेरडु सातिर पदं गण्यम् ४.५०२००० खलु स्फुटमाणि वादे दृष्टिवादोऽत्र
कनजतजमताननमं नूरे दुकोटियुमरुत्तै दुलक्षमुमप्य ताहसातिरदय्यु पदं गण्यम् १०८६८५६००५,
जनकनजयसीम । मेदुकोटियु मोदुलक्षमु मेदुसातिरद नूरेपत्तैदुक्षरंगं सामायिकादिचतुर्दशभेद-
दोऽंगबाह्यदोऽंग्यम् ८०१०८१७५, दृष्टीनां त्रिषष्ट्युत्तरत्रिशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां वादोऽनु-
वादस्तन्निराकरणं च यस्मिन् क्रियते तद् दृष्टिवादं नाम द्वादशमंगं । अदेते दोडे कोत्कल । काण्ठे १५

अन्तकृद्दशाङ्गे त्रयोविंशतिलक्षाष्टाविंशतिसहस्राणि पदानि २३२८००० । अनुत्तरौषपादिकदशाङ्गे द्विनवति-
लक्षचतुश्चत्वारिंशत्सहस्राणि पदानि ९२४४००० । प्रश्नव्याकरणाङ्गे त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्राणि पदानि
९३१६००० । विपाकसूत्राङ्गे एककोटिचतुरशीतिलक्षाणि पदानि १८४००००० ॥३५८-३५९॥

पूर्वोक्तादशाङ्गपदसंख्यायुतिः अक्षरसंख्या वापणनरनोनानं चतुःकोटिपञ्चदशलक्षद्विसहस्रप्रमिता
भवति ४१५०२००० खलु स्फुटं । दृष्टिवादाङ्गे कनजतजमताननमं अष्टोत्तरशतकोट्यष्टलक्षषट्पञ्चाश- २०
त्सहस्रपञ्चपदानि भवन्ति १०८६८५६००५ । जनकनजयसीम अष्टकोट्येकलक्षाष्टसहस्रैकशतपञ्चसप्तत्यक्षराणि
सामायिकादिचतुर्दशभेदेऽङ्गबाह्ययुते भवन्ति ८०१०८१७५ । दृष्टीनां त्रिषष्ट्युत्तरत्रिशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां
वादः अनुवादः तन्निराकरणं च यस्मिन् क्रियते तद् दृष्टिवादं नाम द्वादशमङ्गम् । तद्यथा कौत्कल-कण्ठेविद्धि-

हजार पद हैं । ज्ञातृकथांगमें पाँच लाख छप्पन हजार पद हैं । उपासकाध्ययनांगमें ग्यारह
लाख सत्तर हजार पद हैं । अन्तकृद्दशांगमें तेईस लाख अट्ठाईस हजार पद हैं । अनुत्तरौष- २५
पादिक दशांगमें बानवे लाख चवालीस हजार पद हैं । प्रश्नव्याकरणमें तिरानवे लाख सोलह
हजार पद हैं, विपाक सूत्रमें एक कोटि चौरासी लाख पद हैं ॥३५८-३५९॥

पूर्वोक्त ग्यारह अंगोंके पदोंका जोड़ अक्षरोंकी संख्यामें 'वापणनरनोनानं' अर्थात् चार
कोटि, पन्द्रह लाख दो हजार प्रमाण होते हैं । पहले गतिमार्गणामें मनुष्योंकी संख्या अक्षरों-
में कही है । उसकी टीकामें स्पष्ट कर दिया है कि किस अक्षरसे कौन संख्या लेना । जैसे ३०
यहाँ 'व' से चार, 'प' से एक, 'ण' से पाँच, 'न' से शून्य, 'र' से दो और तीन शून्य लेना
क्योंकि 'व' य से चतुर्थ अक्षर है, 'र' दूसरा अक्षर है, 'ण' टवर्गका पाँचवाँ अक्षर है
और 'प' पवर्गका प्रथम अक्षर है । दृष्टिवाद अंगमें 'कनजतजमताननमं' अर्थात् एक सौ
आठ कोटि, अड़सठ लाख, छप्पन हजार, पाँच पद हैं १०८६८५६००५ । 'जनकनजयसीम'
आठ कोटि, एक लाख, आठ हजार, एक सौ पचहत्तर ८०१०८१७५ अक्षर सामायिक आदि ३५
चौदह भेदरूप अंगबाह्यमें होते हैं । तीन सौ तिरेसठ दृष्टि अर्थात् मिथ्यादर्शनोंका वाद

विद्धि । कौशिक । हरिस्मश्रु । मान्धपिक । रोमश । हारीत । मुण्ड । आश्वलायननेबिबवर्गळु
क्रियावाददृष्टिगळिवर्गळु नूरेभत्तु १८० । मरीचि । कपिल । उलूक । गार्ग्य । व्याघ्रभूति ।
वाड्वलि । माठर । मौद्गलायन मोदलादवर्गळु अक्रियावाददृष्टिगळिवर्गळु वतनाल्कुं ८४ ।
शाकल्य । बालकल । कुंथुमि । सात्यमुग्रि । नारायण । कठ । माध्यंदिन । मौद । पैप्पलाद ।
५ बादरायण । स्वष्टिक्य । दैतिकायन । वसु जैमिन्यादिगळु अज्ञानदृष्टिगळु इवर्गळुवतेळुं ६७ ।
वशिष्ठ । पाराशर । जतुकर्ण । बाल्मोकि । रोमहर्षणि । सत्यदत्त । व्यास । एलापुत्र औपमन्यव ।
इन्द्रदत्त । अगस्त्यादिगळु वैनयिकदृष्टिगळिवर्गळु नूवत्तेरडु । ३२ । मितु कूडि सूतूरवत्तमूरु
मिथ्यावादंगळुपुवु । ३६३ ।

चंद्रविजंबुदीवय दीवसमुद्दय वियाहण्णत्ती ।

१० परियम्मं पंचविहं सुत्तं पढमाणियोगमदो ॥३६१॥

पुव्वं जलथलमाया आगासयरूवगयमिमा पंच ।

भेदा हु चूलियाए तेसु पमाणं इमं कमसो ॥३६२॥

चंद्रविजंबुदीपद्वीपसमुद्रव्याख्याप्रज्ञप्रयः । परिकर्मं पंचविधं सूत्रं प्रथमानुयोगोऽस्तः ॥

पूर्व्वं, जलस्थलमायाकाशरूपगतमिमे पंचभेदाश्चूलिकायाः तेषु प्रमाणमिदं क्रमशः ॥

१५ दृष्टिवाददोळधिकारंगळैवप्पुववावुवदोडे परिकर्मं । सूत्रं । प्रथमानुयोगः । पूर्व्वगतं ।

चूलिकेपुमेदितिल्लि परितः सर्व्वतः कम्मणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तत्परिकर्मं । ई परि-

कौशिक-हरिस्मश्रु-मान्धपिक-रोमश-हारीत-मुण्ड-आश्वलायनादयः क्रियावाददृष्टयः अशीत्युत्तरशतं १८० ।

मरीचि-कपिल-उलूक-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाड्वलि-माठर-मौद्गलायनादयः अक्रियावाददृष्टयश्चतुरशीतिः ८४ ।

शाकल्य-बालकल-कुंथुमि-सात्यमुग्रि-नारायण-कठ-माध्यन्दिन-मौद-पैप्पलाद-बादरायण-स्विष्टिक्य-दैतिकायन-वसु-

२० जैमिन्यादयः अज्ञानकुदृष्टयः सप्तषष्टिः ६७ । वशिष्ठ-पाराशर-जतुकर्ण-बाल्मिकि-रोमहर्षणि-सत्यदत्त-व्यास-

एलापुत्र-औपमन्यव-एन्द्रदत्त-अगस्त्यादयो वैनयिकदृष्टयो द्वाविंशद् ३२ । मिलित्वा मिथ्यावादाः त्रिषष्ट्यग्र-

विंशती भवन्ति ॥३६०॥

दृष्टिवादाङ्गे अधिकाराः पञ्च । ते के ? परिकर्म सूत्रं प्रथमानुयोगः पूर्व्वगतं चूलिका चेति । तत्र

अर्थात् अनुवाद और उनका निराकरण जिसमें किया जाता है वह दृष्टिवाद नामक

२५ बारहवाँ अंग है । कौत्कल, कंठेविद्धि कौशिक, हरिस्मश्रु, मांधपिक, रोमश, हारीत, मुंड, आश्वलायन आदि क्रियावाद दृष्टियाँ एक सौ अस्सी हैं । मरीचि, कपिल, उलूक, गार्ग्य,

व्याघ्रभूति, वाड्वलि, माठर, मौद्गलायन आदि अक्रियावाददृष्टि चौरासी हैं । शाकल्य,

बालकल, कुंथुमि, सात्यमुग्रि, नारायण, कठ, माध्यंदिन, मौद, पैप्पलाद, बादरायण,

स्विष्टिक्य, ऐतिकायन, वसु, जैमिनि आदि अज्ञानकुदृष्टि सड़सठ हैं । वशिष्ठ, पाराशर,

३० जतुकर्ण, बाल्मिकि, रोमहर्षणि, सत्यदत्त, व्यास, एलापुत्र, औपमन्यव, एन्द्रदत्त, अगस्त्य

आदि वैनयिक दृष्टि बत्तीस हैं । ये सब मिथ्यावाद मिलकर तीन सौ तिरसठ होते

हैं ॥३६०॥

दृष्टिवाद अंगमें पाँच अधिकार हैं—परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व्वगत, चूलिका ।

१. म मान्धयिक । २. ब काकल्य । ३. ब दतिकायन । दैत्यकायन मु । ४. अपमं ।

कम्ममेंदु प्रकौरकक्कुमदेते बोडे चन्द्रप्रज्ञमियं । सूर्यप्रज्ञमियं । जम्बूद्वीपप्रज्ञमियं । द्वीपसागरप्रज्ञमियं
व्याख्याप्रज्ञमियं दितुं चन्द्रप्रज्ञमियं बुदु चन्द्रविमानायुःपरिवारऋद्धिगमनहानिवृद्धिसकलाद्ध-
चतुर्थांशग्रहणादिगळं वर्णिसुगुं । सूर्यप्रज्ञमियं बुदु सूर्यनायुम्मंडलपरिवारऋद्धिगमनप्रमाणग्रहणा-
दिगळं वर्णिसुगुं । जम्बूद्वीपप्रज्ञमियं बुदु जम्बूद्वीपगतमेरुकुलशैलह्रदवर्षकुण्डवेदिकावनखण्डव्यंतरावास
महानदिगळमोदलादुवं वर्णिसुगुं । द्वीपसागरप्रज्ञमियं बुदु असंख्यातद्वीपसागरंगळ स्वरूपं तत्र- ५
स्थितज्योतिर्वानभावनावासंगळोळु विद्यमानांगळप्पऋद्धिमजिनभवनादिगळ वर्णनं माळकुं ।
व्याख्याप्रज्ञमियं बुदु रूप्यरूपिजीवाजीवद्रव्यंगळ भव्याभव्यभेदप्रमाणलक्षणंगळ, अनंतरसिद्ध परंपरा-
सिद्धरंगळ परेवुं वस्तुगळ वर्णनं माळकुं । सूत्रयति सूचयति कुदृष्टिदर्शनानिति सूत्रं । जीवोऽबन्ध-
कोऽकर्ता निर्गुणोऽभोक्ताऽस्वप्रकाशकः परप्रकाशकोऽस्त्येव जीवो नास्त्येव जीव इत्यादिक्रियाक्रिया-
ज्ञानविनयकुदृष्टिनां त्रिषष्ट्युत्तरत्रिशतमिथ्यादर्शनंगळं पूर्वपक्षतेयिदं पेळुगुं । प्रथमानुयोगे बुदु १०
प्रथमं मिथ्यादृष्टिमव्रतिकमव्युत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः ।

परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तत्परिकर्म, तच्च पञ्चविधं चन्द्रप्रज्ञतिः सूर्यप्रज्ञतिः
जम्बूद्वीपप्रज्ञतिः द्वीपसागरप्रज्ञतिः व्याख्याप्रज्ञतिश्चेति । तत्र चन्द्रप्रज्ञतिः चन्द्रस्य विमानायुःपरिवारऋद्धि-
गमनहानिवृद्धिसकलार्धचतुर्थांशग्रहणादीन् वर्णयति । सूर्यप्रज्ञतिः सूर्यस्यायुर्मण्डलपरिवारऋद्धिगमनप्रमाणग्रह-
णादीन् वर्णयति । जम्बूद्वीपप्रज्ञतिः जम्बूद्वीपगतमेरुकुलशैलह्रदवर्षकुण्डवेदिकावनखण्डव्यन्तरावासमहानद्यादीन् १५
वर्णयति । द्वीपसागरप्रज्ञतिः असंख्यातद्वीपसागराणां स्वरूपं तत्रस्थितज्योतिर्वानभावनावासेषु विद्यमानाऋद्धिम-
जिनभवनादीन् वर्णयति । व्याख्याप्रज्ञतिः रूप्यरूपिजीवाजीवद्रव्याणां भव्याभव्यभेदप्रमाणलक्षणानां अनन्तर-
सिद्धपरम्परासिद्धानां अन्यवस्तूनां च वर्णनं करोति । सूत्रयति—सूचयति कुदृष्टिदर्शनानिति सूत्रम् । जीवः
अबन्धकः अकर्ता निर्गुणः अभोक्ता स्वप्रकाशकः परप्रकाशकः अस्त्येव जीवः नास्त्येव जीवः इत्यादि क्रिया-
क्रियाज्ञानविनयकुदृष्टीनां त्रिषष्ट्युत्तरत्रिशतमिथ्यादर्शनानि पूर्वपक्षतया कथयति । प्रथमानुयोगः प्रथमं मिथ्या- २०
दृष्टिमव्रतिकमव्युत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः । चतुर्विंशतितीर्थकरद्वादश-

‘परितः’ अर्थात् पूरी तरहसे ‘कर्माणि’ अर्थात् गणितके करणसूत्र जिसमें हैं, वह परिकर्म है ।
उसके भी पाँच भेद हैं—चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, व्याख्या-
प्रज्ञप्ति । उनमें-से चन्द्रप्रज्ञप्ति चन्द्रमाके विमान, आयु, परिवार, ऋद्धि, गमन, हानि, वृद्धि,
पूर्णग्रहण, अर्धग्रहण, चतुर्थांशग्रहण आदिका वर्णन करती है । सूर्यप्रज्ञप्ति सूर्यकी आयु, २५
मण्डल, परिवार, ऋद्धि, गमनका प्रमाण तथा ग्रहण आदिका वर्णन करती है । जम्बूद्वीप-
प्रज्ञप्ति जम्बूद्वीपगत मेरु, कुलाचल, तालाव, क्षेत्र, कुण्ड, वेदिका, वनखण्ड, व्यन्तरोंके
आवास, महानदी आदिका वर्णन करती है । द्वीपसागरप्रज्ञप्ति असंख्यात द्वीप-समुद्रोंके
स्वरूप, उनमें स्थित ज्योतिषीदेवों, व्यन्तरों और भवनवासी देवोंके आवासोंमें वर्तमान
अऋद्धिम जिनालयोंका वर्णन करती है । व्याख्याप्रज्ञप्ति रूपी-अरूपी, जीव-अजीव द्रव्योंका, ३०
भव्य और अभव्य भेदोंका, उनके प्रमाण और लक्षणोंका, अनन्तर सिद्ध और परम्परा सिद्धों-
का तथा अन्य वस्तुओंका वर्णन करती है । ‘सूत्रयति’ अर्थात् जो मिथ्यादृष्टि दर्शनोंको
सूचित करता है, वह सूत्र है । जीव अबन्धक है, अकर्ता है, निर्गुण है, अभोक्ता है, स्वप्रकाशक
नहीं है, परप्रकाशक है, जीव अस्ति ही है या नास्ति ही है, इत्यादि क्रियावादी, अक्रियावादी,
अज्ञानी और वैनयिक मिथ्यादृष्टियोंके तीन सौ तिरसठ मतोंको पूर्वपक्षके रूपमें कहता है । ३५

१. म प्रकारमदेतेने । २. कं तु भल्लि चं ।

चतुर्विंशतितीर्थैकरद्वादश चक्रवर्तिगळ नवबलदेव नववासुदेव नवप्रतिवासुदेवरुगळप्प त्रिषष्टि-
शलाकापुरुषपुराणगळं वर्णिसुगुं । मुंदे पूर्व चतुर्दशविधं विस्तरदिदं पेळल्पट्टुदु ।

- चूलिकेयुमय्दु प्रकारमवकुमदं ते दोडे जलगता स्थलगता मायागता आकाशगता रूपगता
एंदितिवरोळु जलगताचूलिके जलस्तंभन जलगमनाग्निस्तंभनाग्निभक्षणाग्न्यासनग्निप्रवेशनादि-
५ कारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिसुगुं । स्थलगता चूलिकेयं बुदु मेरुकुलशैलभूम्यादिगळोळु
प्रवेशन शीघ्रगमनादिकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिसुगुं । मायागता चूलिकेयं बुदु माया-
रूपेन्द्रजालविक्रियाकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिसुगुं । रूपगताचूलिकेयं बुदु सिंहकरितुरग-
रुह्नर तरुहरिणशशकवृषभव्याघ्रादिरूपपरावर्तनकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं चित्रकाष्ठलेप्यो-
त्खननादिलक्षणधातुवादरसवादखन्यावादादिगळं वर्णिसुगुं ।

- १० आकाशगताचूलिकेयं बुदु आकाशगमनकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिसुगुं ।
पेरगे पेळद चंद्रप्रज्ञप्त्यादिगळोळु क्रमशः यथाक्रमदिदं पदप्रमाणमनन्तरमे वक्ष्यमाणमनिदं
जानीहि एंदितु संबोधनमध्याहार्यं ।

- चक्रवर्तिनवबलदेवनववासुदेवनवप्रतिवासुदेवरूपत्रिषष्टिशलाकापुरुषपुराणानि वर्णयति । पूर्वं चतुर्दशविधं विस्तरेण
अग्रे वक्ष्यति । चूलिकापि पञ्चविधा जलगता स्थलगता मायागता आकाशगता रूपगता चेति । तत्र जलगता
१५ चूलिका जलस्तम्भनजलगमनाग्निस्तम्भाग्निभक्षणाग्न्यासनाग्निप्रवेशनादिकारणमन्त्रतन्त्रतपश्चरणादीन् वर्णयति ।
स्थलगता चूलिका मेरुकुलशैलभूम्यादिषु प्रवेशनशीघ्रगमनादिकारणमन्त्रतन्त्रतपश्चरणादीन् वर्णयति ।
मायागता चूलिका मायारूपेन्द्रजालविक्रियाकारणमन्त्रतन्त्रतपश्चरणादीन् वर्णयति । रूपगता चूलिका
सिंहकरितुरगरुह्नरतरुहरिणशशकवृषभव्याघ्रादिरूपपरावर्तनकारणमन्त्रतन्त्रतपश्चरणादीन् चित्रकाष्ठलेप्योत्खन-
नादिलक्षणधातुवादरसवादखन्यावादादीश्च वर्णयति । आकाशगता चूलिका आकाशगमनकारणमन्त्रतन्त्र-
२० तपश्चरणादीन् वर्णयति । प्रागुक्तचन्द्रप्रज्ञप्त्यादिषु क्रमशो यथाक्रमं पदप्रमाणं अनन्तरमेव वक्ष्यमाणं जानीहि
इति संबोधनमध्याहार्यम् ॥३६१-३६२॥

- प्रथम अर्थात् मिथ्यादृष्टि, अत्रती या अव्युत्पन्न व्यक्तिके लिए जो अनुयोग रचा गया, वह
प्रथमानुयोग है । यह चौबीस तीर्थकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ वासुदेव, नौ प्रति-
वासुदेव, इन तिरेसठ शलाका प्राचीन पुरुषोंका वर्णन करता है । चौदह प्रकारके पूर्वोक्त
२५ सम्बन्धमें आगे विस्तारसे कहेंगे । चूलिका भी पाँच प्रकार की है—जलगता, स्थलगता,
मायागता, आकाशगता और रूपगता । जलगता चूलिका जलका स्तम्भन, जलमें गमन,
अग्निका स्तम्भन, अग्निका भक्षण, अग्निपर बैठना, अग्निमें प्रवेश आदिके कारण मन्त्र, तन्त्र,
तपश्चरण आदिका वर्णन करती है । स्थलगता चूलिका मेरु, कुलाचल, भूमि आदिमें प्रवेश
करने तथा शीघ्र गमन आदिके कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका वर्णन करती है ।
३० मायागता चूलिका मायावी रूप, इन्द्रजाल (जादूगरी) विक्रियाके कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण
आदिका वर्णन करती है । रूपगता चूलिका सिंह, हाथी, घोड़ा, मृग, खरगोश, बैल, व्याघ्र
आदिके रूप बदलनेमें कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका तथा चित्र, काष्ठ, लेप्य, उत्खनन
आदिका लक्षण व धातुवाद, रसवाद, खदान आदि वादोंका कथन करती है । आकाशगता
चूलिका आकाशमें गमन करनेमें कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका कथन करती है । इन
३५ चन्द्रप्रज्ञप्ति आदिमें क्रमसे पदोंका प्रमाण आगे कहते हैं ॥३६१-३६२॥

गतनम मनगं गोरम मरगत जवगातनोननं जजलक्खा ।

मननन धममननोनननामं रनधजधरानन जलादी ॥३६३॥

याजकनामेनाननमेदाणि पदाणि ह्येति परियम्मे ।

कानवधिशचनाननमेसो पुण चूलियाजोगो ॥३६४॥

ग । त्रि । त । षट् । न । शून्य । म । पंच । म । पंच । न । शून्य । रं । त्रि । गो । त्रि ।
र । द्वि । म । पंच । म । पंच । र । द्वि । म । त्रि । त । षट् । ज । अष्ट । व । चतुः । गा । त्रि ।
त । षट् । नोननं । शून्य । शून्य । शून्य । ज । अष्ट । ज । अष्ट । लक्षाणि । म । पंच । न । नन ।
शून्य । शून्य । शून्य । ध । नव । म । पंच । म । पंच । न । शून्य । नो । शून्य । न । शून्य । ना ।
शून्य । म । पंच । रा । द्वि । न । शून्य । ध । नव । ज । अष्ट । ध । नव । रा । द्वि । न । शून्य ।
न । शून्य । जलादयः ॥

५

१०

या । एक । ज । अष्ट । क एक । ना शून्य । मे । पंच । ना शून्य । न शून्य । न शून्य ।
मेतानि पदानि भवन्ति । परिकर्मणि । का । एक । न शून्य । व । चतुः । धि । नव । वा चतुः ।
च षट् । ना शून्य । न शून्य । न शून्य । मेघः पुनश्चूलिकायोगः । अक्षरसंज्ञायिदं गतनमनोननं
षट्त्रिंशलक्षपञ्चसहस्रपदंगळु चंद्रप्रज्ञप्तियोळपुवु ३६०५००० । मनगं नोननं पंचलक्षत्रिसहस्रपदंगळु
सूर्यप्रज्ञप्तियोळपुवु ५०३००० । गोरमनोननं त्रिलक्षपञ्चविंशतिसहस्रपदंगळु जंबूद्वीपप्रज्ञप्तियोळपुवु
३२५००० । मरगतनोननं द्विपञ्चाशलक्षषट्त्रिंशत्सहस्रपदंगळु द्वीपसागरप्रज्ञप्तियोळपुवु
५२३६००० । जवगातनोननं चतुरशीतिलक्षषट्त्रिंशत्सहस्रपदंगळु व्याख्याप्रज्ञप्तियोळपुवु ।
८४३६००० । जजलक्खा अष्टाशीतिलक्षपदंगळु सूत्रदोळपुवु ८८००००० । मननन पञ्चसहस्रपदंगळु
प्रथमानुयोगदोळपुवु ५००० । धममननोनननामं पञ्चनवतिकोटियुं पञ्चाशलक्षमुमपु पदंगळु
चतुर्दशपूर्वसमुच्चयदोळपुवु ९५५०००००५ । रनधजधराननजलादि द्विकोटिनवलक्षनवाशीति-
सहस्रद्विशतोत्तरपदंगळु प्रत्येकं जलगतादि पञ्चचूलिकास्थानंगळोळु समानंगळेयपुवु । जलगतं-
गळु २०९८९२०० स्थलगतंगळु २०९८९२०० मायागतंगळु २०९८९२०० आकाशगतंगळु

१५

२०

अक्षरसंज्ञया चन्द्रप्रज्ञप्तौ गतनमनोननं-षट्त्रिंशलक्षपञ्चसहस्राणि पदानि ३६०५००० । सूर्यप्रज्ञप्तौ
मनगंनोननं-पञ्चलक्षत्रिसहस्राणि पदानि ५०३००० । जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ गोरमनोननं त्रिलक्षपञ्चविंशतिसहस्राणि
पदानि ३२५००० । द्वीपसागरप्रज्ञप्तौ मरगतनोननं द्विपञ्चाशलक्षषट्त्रिंशत्सहस्राणि पदानि ५२३६००० ।
व्याख्याप्रज्ञप्तौ जवगातनोननं-चतुरशीतिलक्षषट्त्रिंशत्सहस्राणि पदानि ८४३६००० । सूत्रे जजलक्खा-
अष्टाशीतिलक्षाणि पदानि ८८००००० । प्रथमानुयोगे मननन-पञ्चसहस्राणि पदानि ५००० । चतुर्दशपूर्व-
समुच्चये धममनोनननामं-पञ्चनवतिकोटिपञ्चाशलक्षपञ्चपदानि ९५५००००००५ । जलादी जलगतादिपञ्च-
चूलिकास्थानेषु प्रत्येके रनधजधराननं-द्विकोटिनवलक्षनवाशीतिसहस्रद्विशतानि पदानि । २०९८९२०० ।

२५

अक्षरोंकी संज्ञासे चन्द्रप्रज्ञप्तिमें 'गतनमनोननं' अर्थात् छत्तीस लाख पाँच हजार
३६०५००० पद हैं । सूर्यप्रज्ञप्तिमें 'मनगंनोननं' पाँच लाख तीन हजार ५०३००० पद हैं ।
जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें 'गोरमनोननं' तीन लाख पच्चीस हजार ३२५००० पद हैं । द्वीपसागर
प्रज्ञप्तिमें 'मरगतनोननं' बावन लाख छत्तीस हजार ५२३६००० पद हैं । व्याख्याप्रज्ञप्तिमें
'जवगातनोन' चौरासी लाख छत्तीस हजार ८४३६००० पद हैं । सूत्रमें 'जजलक्खा' अठासी
लाख ८८००००० पद हैं । प्रथमानुयोगमें 'मननन' पाँच हजार ५००० पद हैं । औदह पूर्वोंमें
'धममननोनननामं' पञ्चानवे कोटि पचास लाख पाँच ९५५००००००५ पद हैं । जलगता आदि

३०

३५

२०९८९२०० रूपगतंगळु २०९८९२०० । याजकनामेनाननं एककोट्येकाशीतिलक्षंगळुमद्युसहस्र-
पदंगळु चंद्रप्रज्ञप्त्यादि पंचप्रकारमनुळळ परिकर्मयुतियोळपुवु १८१०५००० कानवधिवाचनाननं
दशकोट्येकोनपंचाशल्लक्षषट्चत्वारिंशत्सहस्रपदंगळु पुनः मत्ते जलगतादि पंचप्रकारभूतचूलिका-
योगमिदु १०४९४६००० ।

- ५ पण्णट्ठदाल पणतीस तीस पण्णास पण्ण तेरसदं ।
णउदी दुदाल पुव्वे पणवण्णा तेरससयाइं ॥३६५॥
छसयपण्णासाइं चउसयपण्णास छसयपणवीसा ।
विहि लक्खेहि दु गुणिया पंचम रूऊण छज्जुदा छट्ठे ॥३६६॥

पंचाशदष्टचत्वारिंशत्पंचत्रिंशत् त्रिंशत् पंचाशत् पंचाशत् त्रयोदशशतं नवतिर्द्वचत्वारिंशत्
१० पूर्वं पंच पंचाशत् त्रयोदशशतानि । षट्छतपंचाशश्चतुःशतपंचाशत् षट्शतपंचविंशतिर्द्व्याभ्यां
लक्षाभ्यां गुणितास्तु पंचमरूपेण षड्युताः षष्टि ।

५० । ४८ । ३५ । ३० । ५० । ५० । १३०० । ९० । ४२ । ५५ । १३०० ।—६९० ।
४५० । ६२५ ।

१५ पूर्वं उत्पादादि पूर्व्वदोळु चतुर्दशविधदोळं यथाक्रमदिदमी संख्ये पेळल्पट्ठुदु । वस्तुविन
द्रव्यद उत्पादव्ययध्रौव्यादि अनेकधर्मपूरकमुत्पादपूर्व्वमक्कु—मदु जीवादिद्रव्यंगळ नानानय-
विषयक्रम यौगपद्यसंभावितोत्पादव्ययध्रौव्यंगळु त्रिकालगोचरंगळु । नवधर्मंगळपुवु । तत्परिणत
द्रव्यमुं नवविधमक्कुं । उत्पन्नमुत्पद्यमानमुत्पत्त्यमानं नष्टं नश्यत् नक्ष्यत् स्थितं तिष्ठत् स्थास्यदिति
इंतु नवप्रकारंगळपुवुत्पन्नत्वादिगळ्णे प्रत्येकं नवविधत्वसंभवदत्तणिदमेकाशीतिविकल्पधर्म-

चन्द्रप्रज्ञप्त्यादिपञ्चविधपरिकर्मयुतौ याजकनामेनाननं—एककोट्येकाशीतिलक्षपञ्चसहस्राणि पदानि १८१०५००० ।
२० जलगतादिपञ्चविधचूलिकायोगः पुनः कानवधिवाचनाननं—दशकोट्येकोनपञ्चाशल्लक्षषट्चत्वारिंशत्सहस्राणि
पदानि १०४९४६००० ॥३६३—३६४ ॥

उत्पादादिचतुर्दशपूर्व्वेषु यथाक्रमं पदसंख्योच्यते—वस्तुनो—द्रव्यस्य उत्पादव्ययध्रौव्याद्यनेकधर्मपूरक-
मुत्पादपूर्व्वं तच्च जीवादिद्रव्याणां नानानयविषयक्रमयौगपद्यसंभावितोत्पादव्ययध्रौव्याणि त्रिकालगोचराणि
नवधर्मा भवन्ति । तत्परिणतं द्रव्यमपि नवविधं । उत्पन्नं उत्पद्यमानं उत्पत्त्यमानं । नष्टं नश्यत् नक्ष्यत् ।
२५ स्थितं तिष्ठत् स्थास्यदिति नवप्रकारा भवन्ति । उत्पन्नादीनां प्रत्येकं नवविधत्वसंभवादेकाशीतिविकल्पधर्मपरि-

प्रत्येक चूलिकामे 'रनधजधरानन' दो कोटि नौ लाख नवासी हजार दो सौ पद हैं २०९८९-
२०० । चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि पाँच परिकर्मोंमें मिलाकर 'याजकनामेनानन' एक कोटि इक्यासी
लाख पाँच हजार पद हैं १८१०५००० । जलगता आदि पाँचों चूलिकाओंके पदोंका जोड़
'कानवधिवाचनान' दस कोटि उनचास लाख छियालीस हजार १०४९४६०००
३० हैं ॥३६३-३६४॥

उत्पाद आदि चौदह पूर्व्वोंमें क्रमसे पद संख्या कहते हैं—द्रव्यके उत्पाद-व्यय आदि
अनेक धर्मोंका पूरक उत्पादपूर्व्व है । जीवादि द्रव्योंके नाना नय विषयक क्रम और युगपत्
होनेवाले तीन कालके उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप नौ धर्म होते हैं । अतः उन धर्मरूप परिणत
द्रव्य भी नौ प्रकारका है—उत्पन्न, उत्पद्यमान, उत्पत्त्यमान, जो नष्ट हो चुका, हो
३५ रहा है, होगा, स्थिर हुआ, हो रहा है, होगा ये नौ प्रकार हैं । उत्पाद आदि प्रत्येकके नौ

परिणतद्रव्यवर्णनम् माळकु-१। मल्लि द्विलक्षगणितं गुणितपञ्चाशत्तुगल्लेखकोटिपदंगल्लप्यु
१०००००००। अग्रस्य द्वादशांगेषु प्रधानभूतस्य वस्तुनः अयनं ज्ञानमग्रायणं तत्प्रयोजनमग्रायणीयं
द्वितीयं पूर्वमीयग्रायणी पूर्वं सप्तशतं सुनयं दुर्णयं पञ्चास्तिकायं षड्द्रव्यं सप्ततत्त्वं नवपदार्थगल्ल
मोदलादवनु वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणिताष्टचत्वारिंशत्पदंगल्ल षण्णवतिलक्षंगल्लप्युबुदत्थं।—
९६००००००। वीर्यस्य जीवादिवस्तुसामर्थ्यस्य अनुप्रवादोनुवर्णनमस्मिन्निति वीर्यानुप्रवादमंगं ५
तृतीयपूर्वमदु आत्मवीर्यं परवीर्यं उभयवीर्यं क्षेत्रवीर्यं कालवीर्यं भाववीर्यं तपोवीर्यं
भेदित्यादिसमस्तद्रव्यगुणपर्यायवीर्यगल्लं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितपञ्चात्रिंशत्पदंगल्ल सप्ततिलक्षपद-
गल्लप्युबुदत्थं—७०००००००। अस्तिनास्तीत्यादि धर्माणां प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति अस्ति-
नास्तिप्रवादं चतुर्थं पूर्वमदु।

जीवादिवस्तु स्यादस्ति स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य। स्यान्नास्ति परद्रव्यक्षेत्रकालभावा- १०
नाश्रित्य। स्यादस्ति च नास्ति च क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं संयुक्तमाश्रित्य। स्यादवक्तव्यं
युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयमाश्रित्य तथा वक्तुमशक्यत्वात्। स्यादस्ति चावक्तव्यं च
स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य। स्यान्नास्ति
चावक्तव्यं च परद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य।
स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यं च क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभाव- १५
द्वयं च संयुक्तमाश्रित्य एदितेकानेकनित्यानित्याद्यनंतधर्मगल्लं विधिनिषेधावक्तव्यभंगगल्लं प्रत्येक-

णतद्रव्यवर्णनं करोति। तत्र द्विलक्षगुणितपञ्चाशत्पदानि एका कोटिरित्यर्थः १०००००००। अग्रस्य द्वादशाङ्गेषु
प्रधानभूतस्य वस्तुनः अयनं ज्ञानं अग्रायणं। तत्प्रयोजनम् अग्रायणीयं, द्वितीयं पूर्वं। तच्च सप्तशतसुनयदुर्णय-
पञ्चास्तिकायषड्द्रव्यसप्ततत्त्वनवपदार्थादीन् वर्णयति। तत्र द्विलक्षगुणिताष्टचत्वारिंशत्पदानि षण्णवतिलक्षाणि
इत्यर्थः। ९६००००००। वीर्यस्य—जीवादिवस्तुसामर्थ्यस्य अनुप्रवादः—अनुवर्णनं अस्मिन्निति वीर्यानुप्रवादं नाम २०
तृतीयं पूर्वं। तच्च आत्मवीर्यपरवीर्योभयवीर्यक्षेत्रवीर्यकालवीर्यभाववीर्यतपोवीर्यादिसमस्तद्रव्यगुणपर्यायवीर्याणि
वर्णयति। तत्र द्विलक्षगुणितपञ्चात्रिंशत्पदानि सप्ततिलक्षाणीत्यर्थः ७०००००००। अस्तिनास्तीत्यादिधर्माणां
प्रवादः—प्ररूपणमस्मिन्निति अस्तिनास्तिप्रवादं चतुर्थं पूर्वं। तच्च जीवादिवस्तु स्यादस्ति स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावा-
नाश्रित्य, स्यान्नास्ति परद्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य। स्यादस्ति नास्ति च क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं
संयुक्तमाश्रित्य। स्यादवक्तव्यं युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयमाश्रित्य तथा वक्तुमशक्यत्वात्। स्यादस्ति २५

प्रकार हो सकते हैं। अतः इक्यासी धर्म परिणत द्रव्यका वर्णन करता है। उसमें दो
लाखसे गुणित पचास अर्थात् एक कोटि पद होते हैं। अग्र अर्थात् द्वादशांगमें प्रधान
भूत वस्तुका 'अयन' अर्थात् ज्ञान अग्रायण है। वह जिसका प्रयोजन है, वह दूसरा पूर्व
अग्रायण है। वह सात सौ सुनयों, दुर्नयों, पाँच अस्तिकाय, छह द्रव्य, सात तत्त्व, नौ
पदार्थ आदिका वर्णन करता है। उसमें दो लाखसे गुणित अड़तालीस अर्थात् छियानवे लाख ३०
पद हैं। वीर्य अर्थात् जीवादि वस्तुकी सामर्थ्यका 'अनुप्रवाद' अर्थात् वर्णन जिसमें होता है
वह वीर्यानुप्रवाद नामक तीसरा पूर्व है। वह अपने वीर्य, पराये वीर्य, उभयवीर्य, क्षेत्रवीर्य,
कालवीर्य, भाववीर्य, तपोवीर्य, आदि समस्त द्रव्य-गुण-पर्यायोंके वीर्यका कथन करता है।
उसमें दो लाखसे गुणित पैतीस अर्थात् सत्तर लाख पद हैं। अस्ति-नास्ति आदि धर्मोंका
'प्रवाद' अर्थात् प्ररूपण जिसमें है, वह अस्ति-नास्ति प्रवाद नामक चतुर्थ पूर्व है। जीवादि ३५
वस्तु स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभावकी अपेक्षा स्यादस्ति है। परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल
और परभावकी अपेक्षा स्यात्नास्ति है। क्रमसे स्वद्रव्यक्षेत्रकालभाव और परद्रव्यक्षेत्रकाल

द्विसंयोगत्रिसंयोगजंगल त्रित्रयेकसंख्यगल ७ मेलनंत सप्तभंगियं प्रश्नवशदिदमोदे वस्तुविनोदविरो-
धदिद संभविपुदं नानानयमुख्यगौणभावेदिदं प्ररूपिसुगुमिल्लि । द्विलक्षगुणितत्रिशत्पदंगल षष्टिलक्ष-
पदंगलपुवेबुदर्थ ६०००००० ल ।

- ज्ञानानां प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति ज्ञानप्रवादं । पंचमं पूर्वमिदु । मतिश्रुतावधिमनः-
५ पर्यय केवलमेदु पंच सम्यज्ञानंगलु । कुमतिकुश्रुतविभंगमेव त्र्यज्ञानंगलिवैरर स्वरूप-
संख्याविषयफलंगलनाश्रयिसियवक्के प्रामाण्याप्रामाण्यविभागमुमं वर्णिसुगुमिल्लि द्विलक्षगुणित-
पंचाशत्पदंगलु रूपोनकोटिगलपुवेकंदोडे पंचमरूऊणमेबुदरिदं पंचमपूवंदोळु द्विलक्षगुणित-
पंचाशत्पदलब्धदोळोदु कोटियोळोदु गुंदुगुमेदु पेळुदुदरिदं ५ = अ = ९९९९९९९ । सत्यस्य
प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति सत्यप्रवादं षष्ठपूर्वमिदु वाग्गुमियुमं वाक्संस्कारकारणंगलुमं
१० वाक्प्रयोगमुमं द्वादशभाषेगलुमं वक्तृभेदगलुमं बहुविधमृषाभिधानमुमं दशविधसत्यमुमं प्ररूपिसुगु-

- चावक्तव्यं च स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । स्यान्नास्ति
चावक्तव्यं च परद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । स्यादस्ति च नास्ति
चावक्तव्यं च क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । इत्ये-
कानेकनित्यानित्याद्यनन्तधर्माणां विधिनिषेधावक्तव्यभङ्गानां प्रत्येकद्विसंयोगत्रिसंयोगज्ञानां त्रित्रयेकसंख्यानां मेलनं
१५ सप्तभङ्गी प्रश्नवशादेकस्मिन्नेव वस्तुनि अविरोधेन संभवन्ती नानानयमुख्यगौणभावेन प्ररूपयति । तत्र
द्विलक्षगुणितत्रिशत्पदानि षष्टिलक्षाणि इत्यर्थः । ६०००००० । ज्ञानानां प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति ज्ञानप्रवादं
पञ्चमं पूर्व, तच्च मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि पञ्च सम्यज्ञानानि, कुमतिकुश्रुतविभङ्गाख्यानि त्रीण्य-
ज्ञानानि स्वरूपसंख्याविषयफलानि आश्रित्य तेषां प्रामाण्याप्रामाण्यविभागं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणित-
पञ्चाशत्पदानि किन्तु पञ्चमरूऊणमिति कथनादेकरूपोना कोटिरित्यर्थः ९९९९९९९ । सत्यस्य प्रवादः
२० प्ररूपणमस्मिन्निति सत्यप्रवादं षष्ठं पूर्व, तच्च वाग्गुतिः वाक्संस्कारकारणानि वाक्प्रयोगं द्वादश भाषाः

- भावकी अपेक्षा स्यात् अस्ति नास्ति है । एक साथ स्वपर द्रव्यक्षेत्रकाल भावकी अपेक्षा
अवक्तव्य है, क्योंकि एक साथ दोनों धर्मोंका कहना शक्य नहीं है । स्वद्रव्यक्षेत्रकाल भाव
तथा युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकाल भावकी अपेक्षा स्यादस्ति अवक्तव्य है । परद्रव्यक्षेत्रकालभाव
और युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावकी अपेक्षा स्यात् नास्ति अवक्तव्य है । तथा क्रमसे
२५ स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभाव और युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावकी अपेक्षा स्यात् अस्तिनास्ति
अवक्तव्य है । इस प्रकार एक-अनेक, नित्य-अनित्य आदि अनन्त धर्मोंके विधि, निषेध और
अवक्तव्य भंगोंके प्रत्येक, दो संयोगी, तीन संयोगी तीन, तीन और एक भंगोंकी संख्याको
मिलानेसे सप्तभंगी होती है । वह प्रश्नके अनुसार एक वस्तुमें किसी विरोधके बिना नाना
नयोंकी मुख्यता और गौणतासे कथन करती है । उसमें दो लाखसे गुणित तीस अर्थात् साठ
३० लाख पद हैं । ज्ञानका जिसमें प्रवाद अर्थात् प्ररूपण हो, वह ज्ञानप्रवाद नामक पंचम पूर्व है ।
वह मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल इन पाँच सम्यग्ज्ञानोंका तथा कुमति, कुश्रुत,
कुअवधि इन तीन अज्ञानोंका स्वरूप, संख्या, विषय और फलको लेकर कथन करता है ।
उसमें दो लाखसे गुणित पचास किन्तु 'पंचमरूऊण' कहनेसे एक कम एक करोड़ पद होते
हैं । सत्यका प्रवाद अर्थात् कथन जिसमें हो, वह सत्यप्रवाद पूर्व है । वह वचन गुप्ति, वचन-
३५ के संस्कारके कारण, वचन प्रयोग, बारह भाषा, वक्ताके भेद, अनेक प्रकारका असत्य और

१. म मेलन स । २. म लिविर ।

मदेतंदोडे असत्यनिवृत्तियुं मेणु मौनमुं वागुमियुमे बुदक्कुं । उरःकंठ शिरोजिह्वा मूलदंत-
नासिकाताल्वोष्ठाख्यंगळस्थानंगळुं स्पृष्टतेषत्पृष्टता विवृततेषद्विवृतता संवृतता रूपंगळप्प पंच-
प्रयत्नंगळुं वाक्संस्कार कारणंगळुं बुदक्कुं । शिष्टदुष्टरूपमप्य वाक्प्रयोगमुं तल्लक्षणशास्त्र संस्कृतादि
व्याकरणंगळुं वाक्प्रयोगमे बुदक्कुं । इदिवनिदं भाडत्पट्टुदे बनिष्टकथनरूपमभ्याख्यानमुं ।
परस्परविरोधकारणकलहवचनमुं पेरगे दोषसूचनपैशुन्यवचनमुं । धर्मार्थकाममोक्षाऽसंबधवचन-
रूपमबद्धप्रलापमुं इन्द्रियविषयंगळोळु रत्युत्पादिकेयप्य वागूपरीतिवचनमुं । अवरोळऽरत्युत्पादिका
वागूपरतिवचनमुं परिग्रहाज्जनसंरक्षणाद्यासक्तिहेतु वाक्कुपधिवचनमे बुदक्कुं । व्यवहारदोळु
वंचनाहेतुवाक् निकृतिवाक् बुदक्कुं । तपोज्ञानाधिकरोळमविनयहेतुवाक्कुप्रणतिवागे बुदु अक्कुं ।
स्तेयहेतुवचनं मोषवागे बुदक्कुं । सन्मार्गोपदेशवाक् सम्यग्दर्शनवागे बुदक्कुं । मिथ्यामार्गोपदेशवाक्
मिथ्यादर्शनवागे बुदक्कुमितु द्वादशभाषेगळु बुदक्कुं ।

५

१०

द्वीन्द्रियादिपंचेन्द्रियपर्यन्तमाद जीवंगळु व्यक्तवक्तृत्वपर्यायमनुळळ वक्तृगळप्पुवु । द्रव्य-
क्षेत्रकालभावाश्रितमप्य बहुविधमसत्यवचनं मृषाभिधानमक्कुं । जनपदसत्यादिदशप्रकारमप्य सत्यं
मुपेळत्पट्ट लक्षणमुळळुदक्कुमी सत्यप्रवादोळु द्विलक्षणगुणितपंचाशत्पदंगळु षडुत्तरकोटियक्कु-

वक्तृभेदान् बहुविधं मृषाभिधानं दशविधं सत्यं च प्ररूपयति । तद्यथा-असत्यनिवृत्तिमौनं वा वागुमिः ।
उरःकण्ठशिरोजिह्वा मूलदन्तनासिकाताल्वोष्ठाख्यानि अष्टौ स्थानानि । स्पृष्टतेषत्पृष्टताविवृततेषद्विवृततासंवृतता-
रूपाः पञ्च प्रयत्नाश्च वाक्संस्कारकारणानि । शिष्टदुष्टरूपः प्रयोगः वाक्प्रयोगः तल्लक्षणशास्त्रं संस्कृतादि-
व्याकरणं वा । इदमनेन कृतमित्यनिष्टकथनरूपमभ्याख्यानं । परस्परविरोधकारणं कलहवचनं । परदोषसूचनं
पैशुन्यवचनं । धर्मार्थकाममोक्षासंबद्धवचनरूपः अबद्धप्रलापः । इन्द्रियविषयेषु रत्युत्पादिका वाक् रतिवाक् ।
तेषु अरत्युत्पादिका वाक् अरतिवाक् । परिग्रहाज्जनसंरक्षणाद्यासक्तिहेतुवाक् उपधिवाक् । व्यवहारवञ्चनाहेतुवाक्
निकृतिवाक् । तपोज्ञानादिषु अविनयहेतुवाक् अप्रणतिवाक् । स्तेयहेतुवाक् मोषवाक् । सन्मार्गोपदेशवाक्
सम्यग्दर्शनवाक् । मिथ्यामार्गोपदेशवाक् मिथ्यादर्शनवाक् । एवं द्वादशभाषाः । द्वीन्द्रियादिपञ्चेन्द्रियपर्यन्ता जीवा
व्यक्ताव्यक्तवक्तृत्वपर्यायाः वक्तारः । द्रव्यक्षेत्रकालभावाश्रितं बहुविधमसत्यवचनं मृषावाक् । जनपदसत्यादि-

१५

२०

दस प्रकारके सत्यका कथन करता है । इन सबका स्वरूप इस प्रकार है—असत्यसे निवृत्ति या
मौनको वचन गुप्ति कहते हैं । उर, कण्ठ, शिर, जिह्वा मूल, दाँत, नाक, तालु, ओठ ये आठ
स्थान हैं । स्पृष्टता, किंचित् स्पृष्टता, विवृतता, किंचित् विवृतता, संवृतता ये पाँच प्रयत्न हैं ।
ये सब स्थान और प्रयत्न वचन संस्कारके कारण हैं । शिष्टरूप और दुष्टरूप वचनप्रयोग होता
है । 'यह इसने किया है' ऐसा अनिष्ट वचन अभ्याख्यान है । परस्परमें विरोधका कारण वचन
कलह वचन है । दूसरेके दोषको सूचन करना पैशुन्य वचन है । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-
से असम्बद्ध वचन असम्बद्ध प्रलाप है । जो वचन इन्द्रियोंके विषयोंमें रति उत्पन्न करे, वह
रतिवाक् है । जो उनमें अरति उत्पन्न करे, वह अरतिवाक् है । परिग्रहके अर्जन और संरक्षण-
में आसक्ति उत्पन्न करनेवाले वचन उपधिवाक् है । व्यवहारमें छल-कपट करनेमें हेतु वचन
निकृतिवाक् है । तपस्वी और ज्ञानी जनोंके प्रति अविनयमें हेतु वचन अप्रणतिवाक् है ।
चोरी करनेमें हेतु वचन मोषवाक् है । सन्मार्गका उपदेश करनेवाले वचन सम्यक्दर्शनवाक्
है । मिथ्या मार्गका उपदेश करनेवाले वचन मिथ्यादर्शनवाक् है । इस प्रकार बारह प्रकार-
की भाषा है । दोइन्द्रियसे लेकर पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीव, जिनमें वक्तृत्व पर्याय व्यक्त और
अव्यक्त हैं, वे वक्ता हैं । द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावकी अपेक्षा अनेक प्रकारका असत्य वचन

२५

३०

३५

मेकंदोडे छज्जुदा छट्टे एंदिदरिदं षष्ठपूर्वदोळु द्विलक्षगुणितपंचाशल्लब्धमोदु कोटिप्रमितसंख्येयोळु षड्युतत्वकथनदिदं १००००००६ ।

- आत्मनः प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति आत्मप्रवादं सप्तमं पूर्वमदु । आत्मन “जीवो कत्ताय वत्ताय पाणि भोत्ताय पोत्तालो । वेदो विण्हू सयंभू य सरीरो तह माणवो । सत्ता जंतू य माणी य मायी जोगी य संकुडो । असंकुडो य खेतण्हू अंतरप्पा तहेव य ॥” इत्यादि स्वरूपं वर्ण-
 ५ सुगुमदे ते दोडे :—जीवति व्यवहारनयेन दशप्राणान् निश्चयनयेन केवलज्ञानदर्शनसम्यक्त्वरूपचित्-
 प्राणान् धारयति जीविष्यति जीवितपूर्वश्चेति जीवः । व्यवहारनयेन शुभाशुभकर्मं निश्चय-
 नयेन चित्पर्यायान् करोतीति कर्ता । व्यवहारेण सत्यमसत्यं वक्तीति वक्ता निश्चयेनावक्ता । नय-
 द्वयोक्तप्राणाः संत्यस्येति प्राणी । व्यवहारेण शुभाशुभकर्मफलं निश्चयेन स्वस्वरूपं भुंक्ते अनुभवतीति
 १० भोक्ता । व्यवहारेण कर्मनोकर्मपुद्गलान् पूरयति गालयति चेति पुद्गलः । निश्चयेनापुद्गलः ।
 नयद्वयेन लोकालोकगतं त्रिकालगोचरं सर्वं वेत्ति जानातीति वेदः । व्यवहारेण स्वोपात्तदेहं समुदधाते
 सर्वलोकं निश्चयेन ज्ञानेन सर्वं वेवेष्टि व्याप्नोतीति विष्णुः । यद्यपि व्यवहारेण कर्मवशाद्भवे भवे
 भवति परिणमति तथापि निश्चयेन स्वयं स्वस्मिन्नेव ज्ञानदर्शनस्वरूपेणैव भवति परिणमतीति

- दशप्रकारसत्यं तत्प्रागुक्तलक्षणमिति । तत्र सत्यप्रवादे द्विलक्षगुणितपञ्चाशत्पदानि षडभिरधिकानि । छज्जुदा
 १५ छट्टे इति वचनात् षडुत्तरकोटिरित्यर्थः । १००००००६ । आत्मनः प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति आत्मप्रवादं
 सप्तमं पूर्व । तच्च आत्मनः ‘जीवो कत्ता य वत्ता य पाणी भोत्ता य पुत्तालो । वेदो विण्हू सयंभू य सरीरो
 तह माणवो ॥ सत्ता जंतू य माणी य मायी जोगी य संकुडो । असंकुडो य खेतण्हू अंतरप्पा तहेव य ।’ इत्यादि-
 स्वरूपं वर्णयति । तद्यथा—जीवति व्यवहारनयेन दशप्राणान् निश्चयनयेन केवलज्ञानदर्शनसम्यक्त्वरूपचित्प्राणांश्च
 २० धारयति । जीविष्यति जीवितपूर्वश्चेति जीवः । व्यवहारनयेन शुभाशुभं कर्म निश्चयनयेन चित्पर्यायांश्च
 करोतीति कर्ता । व्यवहारनयेन सत्यमसत्यं च वक्तीति वक्ता निश्चयेनावक्ता । नयद्वयोक्तप्राणाः सन्ति अस्येति
 प्राणी । व्यवहारेण शुभाशुभकर्मफलं निश्चयेन स्वस्वरूपं च भुंक्ते अनुभवतीति भोक्ता । व्यवहारेण कर्मनो-
 कर्मपुद्गलान् पूरयति गालयति चेति पुद्गलः । निश्चयेनापुद्गलः । नयद्वयेन लोकालोकगतं त्रिकालगोचरं
 सर्वं वेत्ति जानातीति वेदः । व्यवहारेण स्वोपात्तदेहं समुदधाते सर्वलोकं निश्चयेन ज्ञानेन सर्वं वेवेष्टि व्याप्नो-
 तीति विष्णुः । यद्यपि व्यवहारेण कर्मवशाद्भवे भवे भवति परिणमति तथापि निश्चयेन स्वयं स्वस्मिन्नेव

- २५ मृषावाक् है । जनपदसत्य आदि दस प्रकारके सत्यके लक्षण योगमार्गणामें कह आये हैं ।
 सत्य प्रवादमें दो लाख गुणित पचास तथा छह अधिक अर्थात् एक कोटि छह पद हैं ।
 आत्माका जिसमें प्रवाद अर्थात् कथन है, वह आत्मप्रवाद नामक सातवाँ पूर्व है । वह
 आत्माके स्वरूपका वर्णन करता है कि जीव कर्ता, वक्ता, प्राणी, भोक्ता, पुद्गल, वेदी, विष्णु,
 स्वयंभू, शरीरी, मानव, सत्ता, जंतु, मानी, मायी योगी, संकुट-असंकुट, क्षेत्रज्ञ तथा
 ३० अन्तरात्मा है । इनका स्वरूप कहते हैं—जीव अर्थात् जीता है, जो व्यवहारनयसे दस प्राणी-
 को और निश्चयनयसे केवलज्ञान, केवलदर्शन, सम्यक्त्वरूप चेतन प्राणीका धारण करता है ।
 तथा जो आगे जियेगा, पूर्वमें जिया है, वह जीव है । व्यवहारनयसे शुभ-अशुभ कर्मको
 और निश्चयनयसे चित्पर्यायोंको करता है, अतः कर्ता है । व्यवहार नयसे सत्य और असत्य
 बोलता है, अतः वक्ता है । निश्चयनयसे अवक्ता है । दोनों नयोंसे कहे गये प्राणवाला होनेसे
 ३५ प्राणी है । व्यवहारनयसे शुभ-अशुभ कर्मोंके फलको भोक्ता है और निश्चयसे अपने स्वरूपका
 अनुभव करता है, अतः भोक्ता है । व्यवहारनयसे कर्म और नोकर्म पुद्गलोंको पूरता और
 गलाता है, अतः पुद्गल है व निश्चयसे अपुद्गल है । दोनों नयोंसे लोक और अलोकमें रहने-

स्वयम्भूः । व्यवहारेणौदारिकादिशरीरमस्यास्तीति शरीरो निश्चयेनाशरीरः । व्यवहारेण मानवादि-
पर्यायपरिणतो मानवः । उपलक्षणात् । नारकस्तिर्यङ्देवश्च निश्चयेन मनो ज्ञाने भवो मानवः ।
व्यवहारेण स्वजनमित्रादिपरिग्रहेषु सजतीति सक्ता । निश्चयेनासक्ता । व्यवहारेण चतुर्गतिसंसारी
नानायोनिषु जायत इति जन्तुः । संसारीत्यर्थः । निश्चयेनाजन्तुः । व्यवहारेण मानोऽहंकारोऽस्यास्तीति
मानो निश्चयेनामानो । व्यवहारेण माया वचनास्यास्तीति मायो निश्चयेनामायी । व्यवहारेण ५
योगः कायवाग्मनस्कर्मस्यास्तीति योगी । निश्चयेनायोगी । व्यवहारेण सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्त-
कसर्वजघन्यशरीरप्रमाणेन संकुटते संकुचितप्रदेशो भवतीति संकुटः । समुद्घाते सर्वलोकं व्याप्नो-
तीत्यसंकुटः । निश्चयेन प्रदेशसंहारविसर्पणाभावादनुभयः किञ्चिदूनचरमशरीरप्रमाण इत्यर्थः ।
नयद्वयेन क्षेत्रं लोकालोकं स्वस्वरूपं च जानातीति क्षेत्रज्ञः व्यवहारेणाष्टकर्मभ्यन्तरवर्तित्वस्वभाव-
त्वात् । निश्चयेन चैतन्याभ्यन्तरवर्तित्वस्वभावत्वान्चांतरात्मा । इति चशब्दंगुक्तानुक्तसमुच्चया- १०

ज्ञानदर्शनस्वरूपेणैव भवति परिणमति इति स्वयम्भूः । व्यवहारेण औदारिकादिशरीरमस्यास्तीति शरीरो
निश्चयेनाशरीरः । व्यवहारेण मानवादिपर्यायपरिणतो मानवः, उपलक्षणान्नारकः तिर्यङ् देवश्च । निश्चयेन
मनो ज्ञाने भवः मानवः । व्यवहारेण स्वजनमित्रादिपरिग्रहेषु सजतीति सक्ता । निश्चयेनासक्ता । व्यवहारेण
चतुर्गतिसंसारं नानायोनिषु जायत इति जन्तुः संसारी इत्यर्थः निश्चयेनाजन्तुः । व्यवहारेण मानः अहंकारः
अस्यास्तीति मानो, निश्चयेनामानो । व्यवहारेण माया वचना अस्यास्तीति मायी निश्चयेनामायी । व्यवहारेण १५
योगः कायवाग्मनःकर्मस्यास्तीति योगी, निश्चयेनायोगी । व्यवहारेण सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तकसर्वजघन्य-
शरीरप्रमाणेन संकुटति संकुचितप्रदेशो भवतीति संकुटः, समुद्घाते सर्वलोकं व्याप्नोतीत्यसंकुटः । निश्चयेन
प्रदेशसंहारविसर्पणाभावादनुभयः किञ्चिदूनचरमशरीरप्रमाण इत्यर्थः । नयद्वयेन क्षेत्रं लोकालोकं स्वस्वरूपं
च जानातीति क्षेत्रज्ञः व्यवहारेण अष्टकर्मभ्यन्तरवर्तित्वस्वभावत्वात्, निश्चयेन चैतन्याभ्यन्तरवर्तित्वस्वभावत्वान्च
अन्तरात्मा । इति—यशब्दो उक्तानुक्तसमुच्चयार्थो । ततः कारणाद् व्यवहाराश्रयेण कर्मनोकर्मरूपमूर्तद्रव्या- २०

वाले त्रिकालवर्ती सब पदार्थोंको जानता है, अतः वेत्ता या वेद है । व्यवहार नयसे अपने
गृहीत शरीरको और समुद्घात दशामें सर्व लोकमें व्यापता है, निश्चयनयसे ज्ञानके द्वारा
सबको 'वेवेष्टि' अर्थात् व्यापता है, जानता है, अतः विष्णु है । यद्यपि व्यवहारनयसे कर्मवश
भव-भवमें परिणमन करता है, तथापि निश्चयनयसे 'स्वयं' अपनेमें ही ज्ञान-दर्शनरूप
स्वभावसे 'भवति' अर्थात् परिणमन करता है, अतः स्वयम्भू है । व्यवहारनयसे औदारिक २५
शरीरवाला होनेसे शरीरी है और निश्चयसे अशरीरी है । व्यवहारसे मानव आदि पर्यायरूप
परिणत होनेसे मानव है, उपलक्षणसे नारक, तिर्यच और देव है । निश्चयनयसे मनु अर्थात्
ज्ञानमें रहता है, अतः मानव है । व्यवहारसे अपने परिवार, मित्र आदि परिग्रहमें आसक्त
होनेसे सक्ता है, निश्चयसे असक्ता है । व्यवहारसे चार गतिरूप संसारमें नाना योनियोंमें
जन्म लेता है, अतः जन्तु यानी संसारी है निश्चयसे अजन्तु है । व्यवहारसे माया कषायसे ३०
युक्त होनेसे मायी है, निश्चयसे अमायी है । व्यवहारसे मन-वचन-कायकी किर्यारूप योग-
वाला होनेसे योगी है, निश्चयसे अयोगी है । व्यवहारसे सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तकके सर्व
जघन्य शरीरके परिमाणरूपसे 'संकुटति' संकुचित प्रदेशवाला होनेसे संकुट है । किन्तु समु-
द्घातसे सर्वलोकमें व्याप्त होनेसे असंकुट है । निश्चयसे प्रदेशोंके संकोच-विस्तारका अभाव
होनेसे अनुभय है अर्थात् मुक्तावस्थामें अन्तिम शरीरसे कुछ कम शरीर प्रमाण रहता है । ३५
दोनों नयोंसे क्षेत्र अर्थात् लोक-अलोक और अपने स्वरूपको जाननेसे क्षेत्रज्ञ है । व्यवहारसे
आठ कर्मोंके अभ्यन्तरवर्ती स्वभाववाला होनेसे और निश्चयसे चैतन्यके अभ्यन्तरवर्ती

स्थंगळदु कारणादिदं । व्यवहाराश्रयदिदं कम्मनो कम्मरूपमूर्तद्रव्यानादिसंबंधदिदं मूर्तनु निश्चयनया-
श्रयदिनमूर्तमेवित्याद्यात्मधर्मांगळ समुच्चयं माडल्पडुगुमीयात्मप्रवादोळु द्विलक्षगुणितत्रयोदशशत-
पदंगळु षड्विंशतिकोटिगळपुवे बुदत्थं । २६००००००० २६ को ।

कम्मणः प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति कम्मप्रवादमष्टमं पूर्वमदु । मूलोत्तरप्रकृतिभेदभिन्नं

- ५ बहुविकल्पबन्धोदयोदीरणासत्त्वाद्यवस्थं ज्ञानावरणादिकम्मस्वरूपं सांपरायिकेर्थापथतपस्याऽऽधा-
कम्मार्दियुमं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितनवतिपदंगळेककोटियुमशीतिलक्षंगळपुवे बुदत्थं
१८०००००० १८० ल । प्रत्याख्यायते निषिध्यते सावद्यमस्मिन्ननेनेति वा प्रत्याख्यानं नवमं
पूर्वमदु नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावंगळनाश्रयिसि पुरुषसंहननबलाद्यनुसारेदिदं परिमितकालं
मेणपरिमितकालं प्रत्याख्यानं सावद्यवस्तुनिवृत्तियनुपवासविधियं तद्भावनांगमुमं पंचसमिति
त्रिगुप्त्यादिकमं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितद्वाचत्वारिंशत्पदंगळु चतुरशीतिलक्षपदंगळपुवे बुदत्थं
१० ८४००००० ८४ ल । विद्यानामनुवादोऽनुक्रमेण वर्णनं यस्मिन् तद्विद्यानुवादं दशमं पूर्वमदु ।
सप्तशतमंगुष्ठप्रसेनाद्यल्पविद्यंगळु रोहिण्यादिपंचशतमहाविद्यंगळुमं तत्स्वरूपसामर्थ्यसाधनमंत्रतंत्र-
पूजाविधानंगळुमं सिद्धमादिविद्यंगळ फलविशेषंगळुमनेदु महानिमित्तंगळुमनवावुबंदोडे अंतरिक्ष

दिसंबन्धेन मूर्तः निश्चयनयाश्रयेणामूर्तः इत्यादयः आत्मधर्माः समुच्यन्ते । तस्मिन्नात्मप्रवादे द्विलक्षगुणित-

- त्रयोदशशतपदानि षड्विंशतिकोट्य इत्यर्थः २६०००००००० । कर्मणः प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति कर्मप्रवाद-
१५ मष्टमं पूर्वं तच्च मूलोत्तरोत्तरप्रकृतिभेदभिन्नं बहुविकल्पबन्धोदयोदीरणसत्त्वाद्यवस्थं ज्ञानावरणादिकम्मस्वरूपं
समवधानेर्थापथतपस्याधाकर्मार्दि च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणितनवतिपदानि एककोट्यशीतिलक्षा-
णीत्यर्थः १८००००००० । प्रत्याख्यायते निषिध्यते सावद्यमस्मिन्ननेनेति वा प्रत्याख्यानं नवमं पूर्वं । तच्च
नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य पुरुषसंहननबलाद्यनुसारेण परिमितकालं अपरिमितकालं वा प्रत्याख्यानं
सावद्यवस्तुनिवृत्ति उपवासविधि तद्भावनाङ्गं पञ्चसमितित्रिगुप्त्यादिकं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणितद्वाचत्वा-
२० रिंशत्पदानि चतुरशीतिलक्षानीत्यर्थः । ८४ ल । विद्यानां अनुवादः अनुक्रमेण वर्णनं यस्मिन् तद्विद्यानुवादं
दशमं पूर्वं, तच्च सप्तशतानि अङ्गुष्ठप्रसेनाद्यल्पविद्याः रोहिण्यादिपञ्चशतमहाविद्याः तत्स्वरूपसामर्थ्यसाधनमन्त्र-

स्वभाववाला होनेसे अन्तरात्मा है । 'इति और च' शब्द उक्त और अनुक्त अर्थके समु-
च्चयके लिए है । इससे व्यवहारनयसे कर्म-नो कर्मरूप मूर्त द्रव्य आदिके सम्बन्धसे मूर्तिक है
और निश्चयनयसे अमूर्तिक है, इत्यादि आत्मधर्मका समुच्चय किया जाता है । उस आत्म-
२५ प्रवादमें दो लाखसे गुणित तेरह सौ अर्थात् छब्बीस कोटि पद हैं । कर्मका प्रवाद अर्थात्
कथन जिसमें हो, वह कर्मप्रवाद नामक आठवाँ पूर्व है । वह मूल और उत्तर प्रकृतिके भेदसे
भिन्न, अनेक प्रकारके बन्ध-उदय-उदीरण-सत्ता आदि अवस्थाको लिये हुए ज्ञानावरण आदि
कर्मोंके स्वरूपको तथा समवदान, ईर्ष्यापथ, तपस्या, आधाकर्म आदिका कथन करता है । उसमें
दो लाखसे गुणित नब्बे अर्थात् एक कोटि इक्यासी लाख पद हैं । जिसमें 'प्रत्याख्यायते'
३० अर्थात् सावद्य कर्मका निषेध किया गया है, वह प्रत्याख्यान नामक नौवाँ पूर्व है । वह नाम,
स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके आश्रयसे पुरुषके संहनन और बलके अनुसार परिमित काल
या अपरिमितकालके लिए प्रत्याख्यान अर्थात् सावद्य वस्तुओंसे निवृत्ति, उपवासकी विधि,
उसकी भावना, पाँच समिति, तीन गुप्ति आदिका वर्णन करता है । उसमें दो लाखसे गुणित
बयालीस अर्थात् चौरासी लाख पद हैं । विद्याओंका अनुवाद अर्थात् अनुक्रमसे वर्णन
३५ जिसमें हो, वह विद्यानुवाद पूर्व है । वह अंगुष्ठप्रसेना आदि सात सौ अल्पविद्याओं,

१. च साम्परायिकेर्था ।

भौमांगस्वरस्वप्नलक्षणव्यंजनच्छिन्ननामंगलुं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितपंचपंचाशत्पदंगलेक-
कोटिदशलक्षंगलुपुर्वबुदर्थं । ११० ल । ११०००००० । कल्याणानां वादः प्ररूपणमस्मिन्निति
कल्याणवादमेकादशं पूर्वमदु । तीर्थैकरचक्रधरबलदेववासुदेवादिवगळ गर्भवितरणादिकल्याणंगळं
महोत्सवंगळुं तीर्थैकरत्वादिपुण्यविशेषहेतुषोडशभावना तपोविशेषाद्यनुष्ठानंगळं चंद्रसूर्यग्रह-
नक्षत्रचारग्रहणशकुनादियुं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितत्रयोदशशतपदंगळु षड्विंशतिकोटिपद-
गळपुर्वबुदर्थं । २६ को २६००००००० । प्राणानामावादः प्ररूपणमस्मिन्निति प्राणावादं द्वादशं
पूर्वं मदु । कायचिकित्साद्यष्टांगमायुर्वेदं भूतिकर्मजांगुलिकप्रक्रमं ईळापिंगलसुषुम्नादि बहु-
प्रकारप्राणापानविभागं दशप्राणंगळुपकारकापकारकद्रव्यंगळुं गत्याद्यनुसारेदि वर्णिसुगुमल्लि
द्विलक्षगुणितपंचाशदुत्तरषट्शतपदंगळु त्रयोदशकोटिगळपुर्वबुदर्थं । १३ को १३००००००० ।

क्रियादिभिन्नृत्यादिभिर्विशालं विस्तीर्णं शोभायमानं वा क्रियाविशालं त्रयोदशपूर्वमदु । १०
संगीतशास्त्रच्छंदोलंकारादिद्वासप्ततिकलेगळं चतुःषष्टिस्त्रीगुणंगळुं शिल्पादिविज्ञानंगळुं चतुर-
शीतिगळुं गर्भाधानादिकंगळुं अष्टोत्तरशतं सम्यग्दर्शनादिगळुं पंचविंशतियं देववंदनादि-

तन्त्रपूजाविधानानि सिद्धविद्यानां फलविशेषान् अष्टमहानिमित्तानि, (तानि कानि ?) अन्तरिक्षभौमाङ्गस्वर-
स्वप्नलक्षणव्यञ्जनच्छिन्ननामानि च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणितपञ्चपञ्चाशत्पदानि एककोटिदशलक्षणीत्यर्थः ।

११० ल । कल्याणानां वादः प्ररूपणमस्मिन्निति कल्याणवादमेकादशं पूर्वं, तच्च तीर्थैकरचक्रधरबलदेववासुदेव-
प्रतिवासुदेवादीनां गर्भवितरणकल्याणादिमहोत्सवान् तत्कारणतीर्थैकरत्वादिपुण्यविशेषहेतुषोडशभावनातपो-
विशेषाद्यनुष्ठानानि चन्द्रसूर्यग्रहनक्षत्रचारग्रहणशकुनादिकलादि च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणितत्रयोदशशत-
पदानि षड्विंशतिकोटी इत्यर्थः २६ को । प्राणानां आवादः प्ररूपणमस्मिन्निति प्राणावादं द्वादशं पूर्वं, तच्च
कायचिकित्साद्यष्टाङ्गमायुर्वेदं भूतिकर्मजांगुलिकप्रक्रमं इलापिङ्गलासुषुम्नादिबहुप्रकारप्राणापानविभागं दशप्राणानां
उपकारकापकारकद्रव्याणि गत्याद्यनुसारेण वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणितपञ्चाशदुत्तरषट्शतानि पदानि
त्रयोदशकोटी इत्यर्थः १३ को । क्रियादिभिः नृत्यादिभिः, विशालं विस्तीर्णं शोभायमानं वा क्रियाविशालं त्रयोदशं
पूर्वम् । तच्च संगीतशास्त्रच्छंदोलङ्कारादिद्वासप्ततिकलाः चतुःषष्टिस्त्रीगुणान् शिल्पादिविज्ञानानि चतुरशीतिगर्भा-

रोहिणी आदि पाँच सौ महाविद्याओंका स्वरूप, सामर्थ्य, साधन, मन्त्र-तन्त्र-पूजा विधान,
सिद्ध विद्याओंका फल विशेष तथा आकाश, भौम, अंग, स्वर, स्वप्न, लक्षण, व्यंजन, छिन्न
नामक आठ महानिमित्तोंका वर्णन करता है । उसमें दो लाखसे गुणित पचपन अर्थात् एक
करोड़ दस लाख पद हैं । कल्याणोंका वाद अर्थात् कथन जिसमें है वह कल्याणवाद नामक
ग्यारहवाँ पूर्व है । वह तीर्थैकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव आदिके गर्भमें
अवतरण कल्याण आदि महोत्सवोंका, उसके कारण तीर्थैकरत्व आदि पुण्य विशेषमें हेतु
सोलह भावना, तपोविशेष आदिके अनुष्ठान, चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्रोंका गमन, ग्रहण, शकुन
आदिके फल आदिका वर्णन करता है । उसमें दो लाखसे गुणित तेरह सौ अर्थात् छब्बीस
करोड़ पद हैं । प्राणोंका आवाद—कथन जिसमें है, वह प्राणावाद नामक बारहवाँ पूर्व है ।
वह कायचिकित्सा आदि अष्टांग आयुर्वेद, जननकर्म, जांगुलि प्रक्रम, गणित, इला, पिंगला,
सुषुम्ना आदि अनेक प्रकारके श्वास-उच्छ्वासके विभागका तथा दस प्राणोंके उपकारक-
अपकारक द्रव्यका गति आदिके अनुसार वर्णन करता है । उसमें दो लाखसे गुणित छह सौ
पचास अर्थात् तेरह करोड़ पद हैं । नृत्य आदि क्रियाओंसे विशाल अर्थात् विस्तीर्ण या
शोभायमान क्रियाविशाल नामक तेरहवाँ पूर्व है । वह संगीत शास्त्र, छन्द, अलंकार, आदि
बहत्तर कला, स्त्री सम्बन्धी चौंसठ गुण, शिल्पादि विज्ञान, चौरासी गर्भाधान आदि क्रिया,

गळुमं नित्यनैमित्तिकक्रियेगळुमं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्षगुणितपंचाशदधिकचतुःशतपदंगळु नवकोटि-
गळुपुवे बुदर्थं ९ को १०००००००० । त्रिलोकानां विदवोऽवयवाः सारं च वर्णयन्तेऽस्मिन्निति
त्रिलोकविदुसारं चतुर्दशपूर्वमदु । त्रिलोकस्वरूपं सूत्रात् परिकर्ममं एतु व्यवहारेगळुमं
नालकुबीजंगळुमं मोक्षस्वरूपं तद्गमनकारणक्रियेगळुमं मोक्षसुखस्वरूपमुमं वर्णिसुगुमल्लि द्विलक्ष-
५ गुणितपंचविंशत्यधिकषट्शतपदंगळु द्वादशकोटिगळु पंचाशल्लक्षंगळुपुवे बुदर्थं १२५००००००० ।

सामायिकचतुर्विंशतिस्तव ततो वंदना पडिकमणं ।

वेणयियं किरिकम्मं दस वेयालं च उत्तरज्झयणं ॥३६७॥

सामायिकचतुर्विंशतिस्तवं ततो वंदना प्रतिक्रमणं । नैनयिकं कृतिकर्मदशवैकालिकं
चोत्तराध्ययनं ।

१० कप्पव्यवहारकप्पा कप्पियमहकप्पियं च पुंडरियं ।

महपुंडरीयणिसिहियमिदि चोदसमंगवाहिरयं ॥३६८॥

कल्पव्यवहारं कल्पाकल्पं महाकल्पं च पुंडरीकं । महापुंडरीकं निषिद्धिकेति चतुर्दशंग-
बाह्यकं ।

सामायिकमेतुं चतुर्विंशतिस्तवनमेतुं वंदनेयेतुं प्रतिक्रमणमेतुं नैनैकमेतुं कृतिकर्ममेतुं
१५ दशवैकालिकमेतुं चोत्तराध्ययनमेतुं कल्पव्यवहारमेतुं कल्पाकल्पमेतुं महाकल्पमेतुं
पुंडरीकमेतुं महापुंडरीकमेतुं निषिद्धिकेयुमेदितंगवाह्यश्रुतं चतुर्दशविधमकुमल्लि सम् एकत्वे-
नात्मनि आयः आगमनं । परद्रव्येभ्यो निवृत्त्य उपयोगस्यात्मनि प्रवृत्तिः समयः अयमहं ज्ञाता द्रष्टा
चेति । येदित्तात्मविषयोपयोगमेतुदर्थ एकंदोडात्मनोर्वर्गेये ज्ञेयज्ञायकत्वसंभवमप्युदिरदं ।

धानादिकाः अष्टोत्तरशतसम्यग्दर्शनादिकाः पञ्चविंशति देववन्दनादिकाः नित्यनैमित्तिकाः क्रियाश्च वर्णयति ।
२० तत्र द्विलक्षगुणितपञ्चाशदधिकचतुःशतपदानि नवकोट्य इत्यर्थः । ९ को. । त्रिलोकानां बिन्दवः अवयवाः सारं
च वर्णयन्ते अस्मिन्निति त्रिलोकविन्दुसारं चतुर्दशं पूर्वं तच्च त्रिलोकस्वरूपं षट्त्रिंशत्परिकर्माणि अष्टौ
व्यवहारान् चत्वारि बीजानि मोक्षस्वरूपं तद्गमनकारणक्रियाः मोक्षसुखस्वरूपं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षगुणित-
पञ्चविंशत्यधिकषट्शतानि पदानि द्वादशकोटिपञ्चाशल्लक्षानोत्यर्थः १२ को. ५० ल ॥३६५-३६६॥

सामायिकं चतुर्विंशतिस्तवः ततो वन्दना प्रतिक्रमणं नैनयिकं कृतिकर्म दशवैकालिकं उत्तराध्ययनं
२५ कल्पव्यवहारं कल्पाकल्पं महाकल्पं पुंडरीकं महापुंडरीकं निषिद्धिका च इत्यङ्गवाह्यश्रुतं चतुर्दशविधं
भवति । तत्र सम् एकत्वेन आत्मनि आयः आगमनं परद्रव्येभ्यो निवृत्त्य उपयोगस्य आत्मनि प्रवृत्तिः समयः,

एक सौ आठ, सम्यग्दर्शन आदि पञ्चीस क्रिया, तथा देववन्दना आदि नित्य-नैमित्तिक
क्रियाओंका वर्णन करता है । उसमें दो लाख गुणित चार सौ पचास अर्थात् नौ करोड़ पद
हैं । तीनों लोकोंके बिन्दु अर्थात् अवयव और सार जिसमें वर्णित है, वह त्रिलोकविन्दुसार
१० नामक चौदहवाँ पूर्व है । वह तीनों लोकोंका स्वरूप, छत्तीस परिकर्म, आठ व्यवहार, चार
बीज, मोक्षका स्वरूप, मोक्षमें गमनके कारण क्रिया, और मोक्ष सुखका स्वरूप कहता है ।
उसमें दो लाखसे गुणित छह सौ पच्चीस अर्थात् बारह कोटि पचास लाख पद हैं ॥३६५-६६॥

सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, नैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक,
उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुण्डरीक, महापुण्डरीक, निषिद्धिका,
३५ इस प्रकार अंगवाह्य श्रुत चौदह प्रकारका होता है । 'सम' अर्थात् एकत्व रूपसे आत्मामें

अथवा सम् समे रागद्वेषाभ्यामनुपहते मध्यस्थे आत्मनि आय उपयोगस्य प्रवृत्तिः समायः स प्रयोजनमस्येति सामायिकं नित्यनैमित्तिकानुष्ठानमुं तत्प्रतिपादकं शास्त्रमुं सामायिकमेव बुद्धत्वं । नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावभेदादिदं सामायिकं षड्विधमवकुमल्लि इष्टानिष्टनामगच्छोऽङ्गो रागद्वेष-
निवृत्तियुं सामायिकमभिधानमुं मेणुं नामसामायिकमवकुं । मनोज्ञमनोज्ञस्त्रीपुरुषाद्याकार-
काष्ठलेप्यचित्रादिप्रतिमेगच्छोऽङ्गो रागद्वेषनिवृत्तियुं यिदु सामायिकमेदितु स्थाप्यमानासद्भावस्थापने-
युमपक्षतादिपुंज मेणुं स्थापनासामायिकमवकुं । इष्टानिष्टगच्छोऽङ्गो चेतनाचेतनद्रव्यगच्छोऽङ्गो रागद्वेष-
निवृत्तियुं सामायिकशास्त्रानुपयुक्तज्ञायकतच्छरीरादि मेणुं द्रव्यसामायिकमवकुं । ग्रामनगरवनादि-
क्षेत्रगलिष्टानिष्टगच्छोऽङ्गो रागद्वेषनिवृत्तिक्षेत्रसामायिकमवकुं । वसन्तादि ऋतुगच्छोऽङ्गो शुक्लपक्ष-
कृष्णपक्षगच्छोऽङ्गो दिवसवारनक्षत्रादिगच्छोऽङ्गो निष्टकालविशेषगच्छोऽङ्गो रागद्वेषनिवृत्तिकालसामायि-
कमवकुं । जीवादितत्त्वविषयोपयोगरूपपर्यायिकमे मिथ्यादर्शनकषायादिसंक्लेशनिवृत्तियुं सामा-
यिकशास्त्रोपयोगयुक्तज्ञायकनुं तत्पर्यायपरिणतमप्य सामायिकं मेणुं भावसामायिकमवकुं ।
तत्कालसंबन्धिगच्छोऽङ्गो चतुर्विंशतितीर्थकगच्छो नामस्थापनाद्रव्यभावंगच्छोनाश्रयिसि पञ्चमहाकल्याण-

अयमहं ज्ञाता द्रष्टा चेति आत्मविषयोपयोग इत्यर्थः, आत्मनः एकस्यैव ज्ञेयज्ञायकत्वसंभवात् । अथवा सं समे
रागद्वेषाभ्यामनुपहते मध्यस्थे आत्मनि आयः उपयोगस्य प्रवृत्तिः समायः स प्रयोजनमस्येति सामायिकं
नित्यनैमित्तिकानुष्ठानं तत्प्रतिपादकं शास्त्रं वा सामायिकमित्यर्थः । तच्च नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावभेदा-
त्षड्विधम् । तत्र इष्टानिष्टनामसु रागद्वेषनिवृत्तिः सामायिकमित्यभिधानं वा नाम सामायिकम् । मनोज्ञमनोज्ञासु
स्त्रीपुरुषाद्याकारासु काष्ठलेप्यचित्रादिप्रतिमासु रागद्वेषनिवृत्तिः । इदं सामायिकमिति स्थाप्यमानं यत् किञ्चि-
द्रस्तु वा स्थापनासामायिकम् । इष्टानिष्टेषु चेतनाचेतनद्रव्येषु रागद्वेषनिवृत्तिः सामायिकशास्त्रानुपयुक्तज्ञायकः
तच्छरीरादिर्वा द्रव्यसामायिकम् । ग्रामनगरवनादिक्षेत्रेषु इष्टानिष्टेषु रागद्वेषनिवृत्तिः क्षेत्रसामायिकम् । वसन्तादि-
ऋतुषु शुक्लकृष्णपक्षयोर्दिनवारनक्षत्रादिषु च इष्टानिष्टेषु कालविशेषेषु रागद्वेषनिवृत्तिः कालसामायिकम् ।
भावस्य जीवादितत्त्वविषयोपयोगरूपस्य पर्यायस्य मिथ्यादर्शनकषायादिसंक्लेशनिवृत्तिः सामायिकशास्त्रोपयोग-
युक्तज्ञायकः तत्पर्यायपरिणतसामायिकं वा भावसामायिकम् । तत्तत्कालसम्बन्धिनां चतुर्विंशतितीर्थकराणां

‘आय’ अर्थात् आगमनको समाय कहते हैं । अर्थात् परद्रव्योंसे निवृत्त होकर आत्मा में
प्रवृत्तिका नाम समाय है, यह मैं ज्ञाता-द्रष्टा हूँ—इस प्रकारका आत्मविषय में उपयोग समाय
है, क्योंकि आत्मा ही ज्ञेय और वही ज्ञायक होता है । अथवा ‘सं’ यानी सम—राग-द्वेषसे
अबाधित मध्यस्थ आत्मा में ‘आय’ अर्थात् उपयोगकी प्रवृत्ति समाय है । वह प्रयोजन
जिसका है, वह सामायिक है । नित्य-नैमित्तिक अनुष्ठान और उनका प्रतिपादक शास्त्र
सामायिक है, यह इसका अर्थ है । वह सामायिक नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव-
के भेदसे छह प्रकारकी है । इष्ट-अनिष्ट नामों में राग-द्वेषकी निवृत्ति अथवा सामायिक नाम
नामसामायिक है । मनोज्ञ और अमनोज्ञ स्त्री-पुरुष आदिके आकारों में काष्ठ, लेप्य और चित्र
आदि में अंकित प्रतिमाओं में राग-द्वेष न करना, अथवा जिस-किसी वस्तु में ‘यह सामायिक
है’ इस प्रकार स्थापना करना स्थापनासामायिक है । इष्ट-अनिष्ट, चेतन-अचेतन द्रव्यों में
राग-द्वेषकी निवृत्ति अथवा सामायिक शास्त्रका ज्ञाता जो उसमें उपयोगवान् नहीं है, अथवा
उसका शरीर आदि द्रव्यसामायिक है । इष्ट-अनिष्ट, ग्राम-नगर आदि क्षेत्रों में राग-द्वेष न
करना क्षेत्रसामायिक है । वसन्त आदि ऋतु, शुक्ल-कृष्ण पक्ष, दिन, वार, नक्षत्रादि इष्ट-
अनिष्ट काल विशेषों में राग-द्वेष न करना कालसामायिक है । भाव अर्थात् जीवादि तत्त्व
विषयक उपयोगरूप पर्यायकी मिथ्यादर्शन कषायादि संक्लेशोंसे निवृत्ति, अथवा सामा-

चतुर्विंशदतिशयाष्टमहाप्रातिहार्यपरमौदारिकदिव्यदेहसमवसरणसभाधर्मोपदेशनादितीर्थकरत्व-
महिमेयं स्तुतियु चतुर्विंशतिस्तवनमेबुद्धु । तत्प्रतिपादकशास्त्रमु चतुर्विंशतिस्तवनमेदु
पेठल्पदुद्धु । ततः परं एकतीर्थकरालम्बनचैत्यचैत्यालयादिस्तुतियं वन्दनेयं बुद्धु तत्प्रतिपादकशास्त्रमु
वन्दनेयं बुद्धु पेठल्पदुद्धु । प्रतिक्रम्यते प्रमादकृतदैवसिकादिदोषो निराक्रियते इनेनेति प्रतिक्रमणं ।

- ५ दैवसिक रात्रिक पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिकेर्ष्यापथिकोत्तमात्थभेदादि सप्तविधमवकुं ।
भरतादिक्षेत्रं दुःषमादिकालं षट्संहननसमन्वितस्थिरास्थिरादिपुरुषभेदंगलुमनाश्रयिसि तत्प्रति-
पादकमप्य शास्त्रं प्रतिक्रमणमेबुद्धु । विनयः प्रयोजनमस्येति वैनयिकमेदु ज्ञानदर्शनचारित्र-
तपउपचारविषयनप्य पंचविधविनयविधानं पेठगु ।

- कृतेः क्रियायाः कर्म विधानमस्मिन् वर्ण्यते इति कृतिकर्म । ई कृतिकर्मशास्त्रमर्हत्सिद्धा-
१० चार्यबहुश्रुतसाधुगळमोदलाद नवदेवतावन्दनानिमित्तं आत्माधीनता प्रादक्षिण्य त्रिवारत्रयवति
चतुःशिरोद्वादशावर्तादिलक्षणनित्यनैमित्तिकक्रियाविधानं वर्णिसुगुं । विशिष्टाः कालाः विकालाः
तेषु भवानि वैकालिकानि । दशवैकालिकानि वर्णस्तेस्मिन्निति दशवैकालिकं । ई दशवैकालिक-

- नामस्थापनाद्रव्यभावानाश्रित्य पञ्चमहाकल्याणचतुर्विंशदतिशयाष्टमहाप्रातिहार्यपरमौदारिकदिव्यदेहसमवसरण-
सभाधर्मोपदेशनादितीर्थकरत्वमहिमस्तुतिः चतुर्विंशतिस्तवः तस्य प्रतिपादकं शास्त्रं वा चतुर्विंशतिस्तव इत्युच्यते ।
१५ तस्मात्परं एकतीर्थकरालम्बना चैत्यचैत्यालयादिस्तुतिः वन्दना तत्प्रतिपादकं शास्त्रं वा वन्दना इत्युच्यते ।
प्रतिक्रम्यते प्रमादकृतदैवसिकादिदोषो निराक्रियते अनेनेति प्रतिक्रमणं तच्च दैवसिकरात्रिकपाक्षिकचातुर्मासिक-
सांवत्सरिकैर्ष्यापथिकोत्तमात्थभेदात्सप्तविधं, भरतादिक्षेत्रं दुःषमादिकालं षट्संहननसमन्वितस्थिरास्थिरादिपुरुष-
भेदश्च आश्रित्य तत्प्रतिपादकं शास्त्रमपि प्रतिक्रमणम् । विनयः प्रयोजनमस्येति वैनयिकं तच्च ज्ञानदर्शनचारित्र-
तपउपचारविषयं पञ्चविधविनयविधानं कथयति । कृतेः क्रियायाः कर्म विधानं अस्मिन् वर्ण्यते इति कृतिकर्म ।
२० तच्च अर्हत्सिद्धाचार्यबहुश्रुतसाध्वादिनवदेवतावन्दनानिमित्तमात्माधीनताप्रादक्षिण्यत्रिवारत्रिनवतिचतुःशिरो-
द्वादशावर्तादिलक्षणनित्यनैमित्तिकक्रियाविधानं च वर्णयति । विशिष्टाः काला विकालास्तेषु भवानि वैकालिकानि

- यिक शास्त्रमें उपयुक्त उसका ज्ञाता, अथवा सामायिक पर्यायरूप परिणत व्यक्ति भावसामा-
यिक है । उस-उस काल सम्बन्धी चौबीस तीर्थकरोंके नाम, स्थापना, द्रव्य और भावको लेकर
महाकल्याणक, चौतीस अतिशय, आठ महाप्रातिहार्य, परम औदारिक दिव्य शरीर, सम-
२५ वसरण सभा, धर्मोपदेशना आदिके द्वार, तीर्थकरकी महिमाका स्तवन चतुर्विंशतिस्तव है ।
अथवा उसका कथन करनेवाला शास्त्र चतुर्विंशतिस्तव कहा जाता है । उसके पश्चात् एक
तीर्थकरको लेकर चैत्य-चैत्यालय आदिकी स्तुति वन्दना है । अथवा उसका प्रतिपादक
शास्त्र वन्दना कहलाता है । जिसके द्वारा 'प्रतिक्रम्यते' अर्थात् प्रमादसे किये हुए दैवसिक
आदि दोषोंका विशोधन किया जाता है, वह प्रतिक्रमण है । वह दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक,
३० चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्ष्यापथिक और पारमार्थिकके भेदसे सात प्रकारका है । भरत
आदि क्षेत्र, दुषमादि काल, छह संहननोंसे युक्त स्थिर-अस्थिर आदि पुरुषोंके भेदोंको लेकर
प्रतिक्रमणका कथन करनेवाला शास्त्र भी प्रतिक्रमण है ।- विनय जिसका प्रयोजन है, वह
वैनयिक है । वह ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और उपचारके भेदसे पाँच प्रकारकी विनयका
कथन करता है । जिसमें कृति अर्थात् क्रियाकर्मका विधान कहा जाता है, वह क्रियाकर्म
३५ है । उसमें अर्हन्त, सिद्ध-आचार्य, बहुश्रुत (उपाध्याय), साधु आदि नौ देवताओंकी वन्दनाके
निमित्त आत्माधीनता (अपने अधीन होना), तीन बार प्रदक्षिणा, तीन बार नमस्कार, चार

शास्त्रं मुनिजनंगलाचरण गोचारविधियं पिण्डशुद्धिलक्षणं वर्णिसुगु । उत्तराण्यधीयन्ते पठ्यन्तेऽस्मिन्नित्युत्तराध्ययनं । ई उत्तराध्ययनशास्त्रं चतुर्विधोपसर्गांगल द्वाविंशतिपरीषहंगल सहनविधानं तत्फलमुमं यितु प्रश्नमादोडितुत्तरमेदितुत्तरविधानं वर्णिसुगु । कल्प्यं योग्यं व्यवहियते अनुष्ठीयतेऽस्मिन्निति अनेनेति वा कल्प्यव्यवहारः । ई कल्प्यव्यवहारशास्त्रं साधुगल योग्यानुष्ठानविधानं अयोग्यसेवेयोळु प्रायश्चित्तमुमं वर्णिसुगु । कल्प्यं चाकल्प्यं च कल्प्याकल्प्यं तद्वर्ण्यतेऽस्मिन्निति कल्प्याकल्प्यं । ई कल्प्याकल्प्यशास्त्रं द्रव्यक्षेत्रकाल भावंगलनाश्रयिसि मुनिगलिगु कल्प्यमिदकल्प्यमेदु योग्यायोग्यविभागं वर्णिसुगु ।

महतां कल्प्यमस्मिन्निति महाकल्प्यं । ई महाकल्प्यशास्त्रं जिनकल्पसाधुगळे उत्कृष्टसंहननादिविशिष्टद्रव्यक्षेत्रकालभाववर्तिगळे योग्यमप्य त्रिकालयोगाद्यनुष्ठानं स्थविरकल्परुगल दीक्षाशिक्षागणपोषणात्मसंस्कार सल्लेखनोत्तमार्थस्थानगतोत्कृष्टाराधनाविशेषमुमं वर्णिसुगु । पुण्डरीकमेव शास्त्रं भावनव्यन्तरज्योतिष्ककल्पवासिविमानंगळोत्पत्तिकारणदानपूजातपश्चरणाकामनिर्ज्ज-

दश वैकालिकानि वर्ण्यन्तेऽस्मिन्निति दशवैकालिकं तच्च मुनिजनानां आचरणगोचरविधि पिण्डशुद्धिलक्षणं च वर्णयति । उत्तराणि अधीयन्ते पठ्यन्ते अस्मिन्निति उत्तराध्ययनं तच्च चतुर्विधोपसर्गाणां द्वाविंशतिपरीषहणां च सहनविधानं तत्फलं एवं प्रश्ने एवमुत्तरमित्युत्तरविधानं च वर्णयति । कल्प्यं योग्यं व्यवहियते अनुष्ठीयतेऽस्मिन्ननेनेति वा कल्प्यव्यवहारः, स च साधूनां योग्यानुष्ठानविधानं अयोग्यसेवायां प्रायश्चित्तं च वर्णयति । कल्प्यं चाकल्प्यं च कल्प्याकल्प्यं, तद्वर्ण्यते अस्मिन्निति कल्प्याकल्प्यम् । तच्च द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य मुनीनामिदं कल्प्यं योग्यं इदमकल्प्यं अयोग्यमिति विभागं वर्णयति । महतां कल्प्यमस्मिन्निति महाकल्प्यं शास्त्रं तच्च जिनकल्पसाधूनां उत्कृष्टसंहननादिविशिष्टद्रव्यक्षेत्रकालभाववर्तिनां योग्यं त्रिकालयोगाद्यनुष्ठानं स्थविरकल्पानां दीक्षाशिक्षागणपोषणात्मसंस्कारसल्लेखनोत्तमार्थस्थानगतोत्कृष्टाराधनाविशेषं च वर्णयति । पुण्डरीकं नाम शास्त्रं भावनव्यन्तरज्योतिष्ककल्पवासिविमानेषु उत्पत्तिकारणदानपूजातपश्चरणाकामनिर्ज्जरासम्यक्त्वसंयममादिविधानं तत्तदुपपादस्थानवैभवविशेषं च वर्णयति । महच्च तत्पुण्डरीकं तत्तमहापुण्डरीकं शास्त्रं

बार सिर नमाना, बारह आवर्त आदि रूप नित्य-नैमित्तिक क्रिया-विधानका वर्णन होता है । विशिष्ट कालोंको विकाल कहते हैं, उनमें होनेको वैकालिक कहते हैं । जिसमें दस वैकालिकोंका वर्णन हो, वह दशवैकालिक है । उसमें मुनियोंका आचार, गोचरीकी विधि और भोजन शुद्धिका लक्षण कहा गया है । जिसमें उत्तरोंका अध्ययन हो, वह उत्तराध्ययन है । उसमें चार प्रकारके उपसर्गों और बाईस परीषहोंके सहनेका विधान, उनका फल तथा इस प्रकारके प्रश्नका उत्तर इस प्रकार होता है, इसका कथन होता है । जो कल्प्य अर्थात् योग्यके व्यवहारका कथन करता है, वह कल्प्यव्यवहार है । उसमें साधुओंके योग्य अनुष्ठानके विधानका और अयोग्यका सेवन होनेके प्रायश्चित्तका कथन होता है । जिसमें कल्प्य और अकल्प्यका कथन हो, वह कल्प्याकल्प्य है । वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके आश्रयसे यह मुनियोंके योग्य और यह अयोग्य है, ऐसा कथन करता है । महान् पुरुषोंका कल्प्य जिसमें हो, वह महाकल्प्य शास्त्र है । उसमें जिनकल्पी साधुओंके उत्कृष्ट, संहनन आदि विशिष्ट द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको लेकर त्रिकाल योग आदि अनुष्ठानका तथा स्थविर कल्पी साधुओंकी दीक्षा, शिक्षा, गणका पोषण, आत्मसंस्कार, सल्लेखना, उत्तम स्थानगत उत्कृष्ट आराधना विशेषका कथन होता है । पुण्डरीक नामक शास्त्र भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवोंके विमानोंमें उत्पत्तिके कारण दान, पूजा, तपश्चरण, अकामनिर्जरा, सम्यक्त्व, संयम आदिका विधान तथा उस-उस उपपाद स्थानके वैभव विशेषको कहता है । महान्

रासम्प्रकृत्यसंयमादिविधानमं तत्तदुपपादस्थानवैभवविशेषमुमं वर्णिसुगुं ।

महापुण्डरीकमेव शास्त्रं महद्विकरणप्रेतप्रतीतिदिगलोत्पत्तिकारण तपोविशेषाद्याचारमं वर्णिसुगुं ।

- ५ प्रायश्चित्तशास्त्रमेव बुद्धत्वंमदु प्रमाददोषविशुद्ध्यर्थं बहुप्रकारमप्य प्रायश्चित्तमं वर्णिसुगुं । निशीतिका वा एदितु क्वचित्पाठं काणल्पदुगुं ।

इतु चतुर्दशविधमप्य अंगबाह्यश्रुतं परिभाषितल्पदुगुं । अनंतरं शास्त्रकारं श्रुतज्ञानमहात्म्यमं पेळदं ।

सुदकेवलं च णाणं दोष्णिणावे सरिसाणि होति बोधादो ।

- १० सुदणाणं तु परोक्खं पच्चक्खं केवलं णाणं ॥३६९॥

श्रुतं केवलं च ज्ञानं द्वे अपि सदृशे भवतो बोधात् । श्रुतज्ञानं तु परोक्षं प्रत्यक्षं केवलं ज्ञानम् ।

- १५ श्रुतज्ञानमुं केवलज्ञानमुमं बरडुं ज्ञानंगळु बोधात् अरिर्विनिदं समस्तवस्तुद्रव्यगुणपर्यायपरिज्ञानदिदं समानंगळ्यपुवु । तु मत्ते इदु विशेषमुद्वेतेदोडे परमोत्कर्षपर्यन्तप्राप्तमावुदादोडं सूक्ष्मांशंगळुं विशदत्वदिदं प्रवृत्त्यभावमपुदरिदं । मूर्तंगळु व्यंजनपर्यायंगळप्य स्थूलांशंगळप्य स्वविषयंगळु अवधिज्ञानादियंते साक्षात्करणाभावादिदमुं सकलावरणवोर्ध्यांतराय निरवशेषक्षयो-

- २० तच्च महधिकेषु इन्द्रप्रतीन्द्रादिषु उत्पत्तिकारणतपोविशेषाद्याचरणं वर्णयति । निषेधनं प्रमाददोषनिराकरणं निषिद्धिः संज्ञायां कप्रत्यये निषिद्धिका प्रायश्चित्तशास्त्रमित्यर्थः, तच्च प्रमाददोषविशुद्ध्यर्थं बहुप्रकारं प्रायश्चित्तं वर्णयति । निशीतिका इति क्वचित्पाठो दृश्यते । एवं चतुर्दशविधं अङ्गबाह्यश्रुतं परिभाषनीयम् ॥३६७-३६८॥ अथ शास्त्रकारः श्रुतज्ञानमाहात्म्यं वर्णयति—

श्रुतज्ञानं केवलज्ञानं चेति द्वे ज्ञाने बोधात् समस्तवस्तुद्रव्यगुणपर्यायपरिज्ञानात् सदृशे समाने भवतः तु-पुनः अयं विशेषः । स कः ? परमोत्कर्षपर्यन्तं प्राप्तमपि श्रुतकेवलज्ञानं सकलपदार्थेषु परोक्षं अविशदं अस्पष्टं अमूर्तेषु अर्थपर्यायेषु अन्येषु सूक्ष्मांशेषु विशदत्वेषु विशदत्वेन प्रवृत्त्यभावात् । मूर्तेष्वपि व्यञ्जनपर्यायेषु स्थूलांशेषु

- २५ पुण्डरीक शास्त्रको महापुण्डरीक कहते हैं । उसमें महधिक इन्द्र-प्रतीन्द्र आदिमें उत्पत्तिके कारण तपोविशेष आदि आचरणका कथन होता है । निषेधन अर्थात् प्रमादसे लगे दोषोंका निराकरण निषिद्धि है । संज्ञामें 'क' प्रत्यय करनेपर निषिद्धिका होता है, उसका अर्थ है-प्रायश्चित्त शास्त्र । उसमें प्रमादसे लगे दोषोंकी विशुद्धिके लिए बहुत प्रकारके प्रायश्चित्तोंका वर्णन है । कहींपर 'निशीतिका' पाठ भी देखा जाता है । इस प्रकार चौदह प्रकारका अंग-बाह्य श्रुत ज्ञानना ॥३६७-३६८॥

अब शास्त्रकार श्रुतज्ञानके माहात्म्यको कहते हैं—

- ३५ श्रुतज्ञान और केवलज्ञान ये दोनों ज्ञान समस्त वस्तुओंके द्रव्य-गुण-पर्यायोंको जाननेकी अपेक्षा समान हैं । किन्तु इतना विशेष है कि परम उत्कर्ष पर्यन्तको प्राप्त भी श्रुतज्ञान समस्त पदार्थोंमें परोक्ष होता है, अस्पष्ट जानता है, अमूर्त अर्थ पर्यायोंमें तथा अन्य सूक्ष्म अंशोंमें स्पष्ट रूपसे उसकी प्रवृत्ति नहीं होती । मूर्त भी व्यंजन पर्यायोंको अपने विषयोंके

त्पन्नं केवलज्ञानं प्रत्यक्षं । समस्तत्वादिदं विशदं स्पष्टमवकुं । मूर्तामूर्तार्थव्यञ्जनपर्यायस्थूलसूक्ष्मांश-
गलप्प सर्ववरोऽपि प्रवृत्ति संभविसुगुमपुदरिदं । साक्षात्करणदिदमुं अक्षमात्मानमेव प्रतिनियतं
परानपेक्षं प्रत्यक्षं । उपात्तानुपात्तपरप्रत्ययापेक्षं परोक्षमिति । एदितु प्रत्यक्षपरोक्षशब्दनिरुक्ति-
सिद्धलक्षणभेददिदमा श्रुतज्ञानकेवलज्ञानगच्छो सादृश्याभावमवकुमते समन्तभद्रस्वामिगण्डिदमुं
पेळल्पट्टुदु । “स्याद्वाद केवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने । भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतमं भवे” ९
देदितु । [आप्तमी.]

अनन्तरं शास्त्रकारं पञ्चषष्टिगाथासूत्रंगण्डिदमवधिज्ञानप्ररूपणयं पेळळुपक्रमिसिदपं ।

अवधीयदिति ओही सीमाणाणेति वर्णियं समये ।

भवगुणपञ्चयविहियं जमोहिणाणेति णं वेति ॥३७०॥

अवधीयत इत्यवधिः सीमाज्ञानमिति वर्णितं समये । भवगुणप्रत्ययविहितं यदवधिज्ञान- १०
मितीदं ब्रुवन्ति ।

अवधीयते द्रव्यक्षेत्रकालभावंगण्डिदं परिमीयते पवणिसल्पडुगु मेदितवधि येबुददेकेदोडे
मतिश्रुतकेवलगच्छते द्रव्यादिगण्डिदमपरिमितविषयत्वाऽभावमपुदरिदं सीमाविषयज्ञानमेदु समये
परमागमदोलु भणितं पेळल्पट्टुदु । यत् आवुदोदु तृतीयज्ञानं भवगुणप्रत्ययविहितं भवो तरकादि-
पर्यायः गुणः सम्यग्दर्शनविशुद्धादिः । भवश्च गुणश्च भवगुणौ तावेव प्रत्ययौ ताभ्यां कारणाभ्यां १५

स्वविषयेषु अवधिज्ञानादिव साक्षात्करणाभावाच्च । सकलावरणवीर्यान्तरायनिरवशेषक्षयोत्पन्नं केवलज्ञानं
प्रत्यक्षं समस्तत्वेन विशदं स्पष्टं भवति । मूर्तामूर्तार्थव्यञ्जनपर्यायस्थूलसूक्ष्मांशेषु सर्वेष्वपि प्रवृत्तिसंभवात्
साक्षात्कारणाच्च । अत्र आत्मानमेव प्रतिनियतं परानपेक्षं प्रत्यक्षं, उपात्तानुपात्तपरप्रत्ययापेक्षं परोक्षमिति
निरुक्तिसिद्धलक्षणभेदात्तयोः श्रुतज्ञानकेवलज्ञानयोः सादृश्याभावात् । तथा चोक्तं समन्तभद्रस्वामिभिः—

स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने ! भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतमं भवेत् ॥— [आप्तमी०] २०

॥३६९॥ अथ शास्त्रकारः पञ्चषष्टिगाथासूत्रैः अवधिज्ञानप्ररूपणामुपक्रमते—

अवधीयते—द्रव्यक्षेत्रकालभावैः परिमीयते इत्यवधिमतिश्रुतकेवलवद्द्रव्यादिभिरपरिमितविषयत्वा-
भावात् । यत्तृतीयं सीमाविषयं ज्ञानं समये परमागमे वर्णितं तदिदमवधिज्ञानमित्यर्हदादयो ब्रुवन्ति । तत्कति-

स्थूल अंशको अवधिज्ञानकी तरह साक्षात्कार करनेमें असमर्थ है । किन्तु समस्त ज्ञानावरण
और वीर्यान्तरायके क्षयसे उत्पन्न केवलज्ञान पूर्ण रूपसे स्पष्ट होता है । मूर्त अमूर्त, अर्थ- २५
पर्याय, व्यञ्जनपर्याय, स्थूल अंश, सूक्ष्म अंश सभीमें उसकी प्रवृत्ति है और सभीको साक्षात्
जानता है । अक्ष अर्थात् आत्मासे ही जो ज्ञान होता है, परकी अपेक्षा नहीं करता, उसे
प्रत्यक्ष कहते हैं । उपात्त इन्द्रियादि और अनुपात्त प्रकाशादि परकारणोंकी अपेक्षासे होनेवाला
ज्ञान परोक्ष है । इस प्रकार निरुक्तिसे सिद्ध लक्षणोंके भेदसे श्रुतज्ञान और केवलज्ञानमें समा-
नता नहीं है । स्वामी समन्तभद्रने भी अपने आप्तमीमांसा ग्रन्थमें कहा है— ३०

स्याद्वाद अथात् श्रुतज्ञान और केवलज्ञान दोनों ही सर्व तत्त्वोंके प्रकाशक हैं, किन्तु
भेद यही है कि केवलज्ञान साक्षात् प्रत्यक्ष जानता है और श्रुतज्ञान परोक्ष जानता है । जो
इन दोनों ज्ञानोंमें-से एकका भी विषय नहीं है, वह अवस्तु है ॥३६९॥

अथ शास्त्रकार पैसठ गाथाओंसे अवधिज्ञानका कथन करते हैं—

‘अवधीयते’ अर्थात् द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके द्वारा जिसका परिमाण किया जाता है, ३५
वह अवधि है । अर्थात् जैसे मति, श्रुत और केवलज्ञानका विषय द्रव्यादिकी अपेक्षा

विहितमुक्तं भवगुणप्रत्ययविहितं भवप्रत्ययत्वदिदं गुणप्रत्ययत्वदिदं पेळल्पट्टुदं तदिदमवधिज्ञानमिति । अंतर्पिदनवधिज्ञानमेदितुं ब्रुवंति अहंदादिगळु पेळवह । सीमाविषयमनुळवधिज्ञानं भवप्रत्ययमेव गुणप्रत्ययमेदितुं द्विविधमवकुमेबुदुतात्पर्थ्यं ।

भवपच्चइगो सुरणिरयाणं तित्थेवि सन्वअंगुत्थो ।

५

गुणपच्चइगो णरतिरियाणं संखादिचिण्हंभवो ॥३७१॥

भवप्रत्ययकं सुरनारकाणां तीर्थेपि सव्वंगोत्थं । गुणप्रत्ययकं नरतिरश्चां शंखादिचिह्नभवं ॥

- भवप्रत्ययावधिज्ञानं देववर्कळोळं नारकरोळं चरमभवतीर्थकरोळं संभविगुमदुवुमवरोळु सव्वंगोत्थमवकुं । सव्वत्तिमप्रदेशस्थावधिज्ञानावरणवीर्यान्तरायद्वयक्षयोपशमोत्पन्नमेव बुदर्थं । गुणप्रत्ययावधिज्ञानं पर्याप्तमनुष्यमं संजिपच्चैन्द्रियपर्याप्ततिर्यचमं संभविगुमदुवुमवरोळु शंखादिचिह्नभवं नाभिप्रदेशदिदं मेगण शंखपद्मवज्रस्वस्तिकलशादिशुभचिह्नलक्षितात्मप्रदेशस्थावधिज्ञानावरणवीर्यान्तरायकर्मद्वयक्षयोपशमोत्पन्नमेव बुदर्थं । भवप्रत्ययावधिज्ञानदोळु दर्शनविशुद्ध्यादिगुणसद्भावमादोडमदनपेक्षिसदे भवप्रत्ययत्वमरित्पडुगुं । गुणप्रत्ययावधिज्ञानदोळु तिर्यग्मनुष्यभवसद्भावमादोडमदनपेक्षिसदे गुणप्रत्ययत्वमरित्पडुगुं ।

- १५ विश्वं भवगुणप्रत्ययविहितं—भवः नरकादिपर्यायः, गुणः सम्यग्दर्शनविशुद्ध्यादिः भवगुणौ प्रत्ययौ कारणे ताभ्यां विहितमुक्तं भवगुणप्रत्ययविहितं भवप्रत्ययत्वेन गुणप्रत्ययत्वेन अवधिज्ञानं द्विविधं कथितमित्यर्थः ॥३७०॥

- तत्र भवप्रत्ययावधिज्ञानं सुराणां नारकाणां चरमभवतीर्थकराणां च संभवति । तच्च तेषां सर्वांगोत्थं भवति । सर्वात्मप्रदेशस्थावधिज्ञानावरणवीर्यान्तरायकर्मद्वयक्षयोपशमोत्पन्नमेव भवतीत्यर्थः । गुणप्रत्ययं अवधिज्ञानं नराणां पर्याप्तमनुष्याणां तिरश्चां च संजिपच्चैन्द्रियपर्याप्ततिरश्चां संभवति । तच्च तेषां शङ्खादिचिह्नभवं भवति, नाभेत्परि शङ्खपद्मवज्रस्वस्तिकलशादिशुभचिह्नलक्षितात्मप्रदेशस्थावधिज्ञानावरणवीर्यान्तरायकर्मद्वयक्षयोपशमोत्पन्नमित्यर्थः । भवप्रत्यये अवधिज्ञाने दर्शनविशुद्ध्यादिगुणसद्भावेऽपि तदनपेक्षयैव भवप्रत्ययत्वं ज्ञातव्यम् । गुणप्रत्ययेऽवधिज्ञाने तिर्यग्मनुष्यभवसद्भावेऽपि तदनपेक्षयैव गुणप्रत्ययत्वं ज्ञातव्यम् ॥३७१॥

- अपरिमित है, वैसा इसका नहीं है । परमागममें जो तीसरा सीमा विषयक ज्ञान कहा है उसे अर्हन्त आदि अवधिज्ञान कहते हैं । भव अर्थात् नरकादि पर्याय और गुण अर्थात् सम्यग्दर्शन विशुद्धि आदि ! भव और गुण जिनके कारण हैं वे भवप्रत्यय और गुणप्रत्यय नामक अवधिज्ञान हैं । इस तरह अवधिज्ञानके दो भेद हैं ॥३७०॥

- उनमें-से भवप्रत्यय अवधिज्ञान देवों, नारकियों और चरमशरीरी तीर्थकरोंके होता है । तथा यह समस्त आत्माके प्रदेशोंमें वर्तमान अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्तराय नामक दो कर्मोंके क्षयोपशमसे उत्पन्न होता है, इसलिए इसे सर्वांगसे उत्पन्न कहा जाता है । गुणप्रत्यय अवधिज्ञान पर्याप्त मनुष्योंके और संजी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यचोंके होता है । और वह उनके शंख आदि चिह्नोंसे उत्पन्न होता है । अर्थात् नाभिसे ऊपर शंख, पद्म, वज्र, स्वस्तिक, मच्छ, कलश आदि शुभ चिह्नोंसे युक्त आत्मप्रदेशोंमें स्थित अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्तराय कर्मोंके क्षयोपशमसे उत्पन्न होता है । भवप्रत्यय अवधिज्ञानमें भी सम्यग्दर्शन, विशुद्धि आदि गुण रहते हैं, फिर भी उसकी उत्पत्तिमें उन गुणोंकी अपेक्षा नहीं होती, मात्र भवधारण करनेसे ही अवधिज्ञान होता है, इसीलिए उसे भवप्रत्यय कहते हैं । गुणप्रत्यय अवधिज्ञानमें यद्यपि मनुष्य और तिर्यचका भव रहता है, फिर भी अवधिज्ञानकी उत्पत्तिमें उसकी अपेक्षा

गुणपञ्चङ्गो छद्वा अणुगावटिष्ठदपवड्ढमाणिरा ।

देसोही परमोही सञ्चोहिति य तिधा ओही ॥३७२॥

गुणप्रत्ययकः षोढा अनुगावस्थितप्रवर्द्धमानेतरे । देशावधिः परमावधिः सर्वावधिरिति च त्रिधावधिः ॥

आवुदोदु गुणप्रत्ययावधिज्ञानमदु अनुगमनुगामियेदुमवस्थितमेदु प्रवर्द्धमानमेदु मूस- ५
तेरनपुवु । इतरंगळु अननुगमननुगामियेदुमनवस्थितमेदु हीयमानमुमेदितिवु मूसतेरनपुवु
कूडि अनुगामि अननुगामि अवस्थितमनवस्थित वर्द्धमानहीयमानमेदितु षड्विधमक्कुमल्लि आवु-
दोदवधिज्ञानं तन्न स्वामियप्प जीवनं बळिसलगुमदनुगामियेदुबुदक्कुमावुदोदु क्षेत्रानुगामियेदु भवानु-
गामियेदु उभयानुगामियेदितु त्रिविधमक्कुमल्लि आवुदोदु तां पुट्टिद क्षेत्रदिदमन्यक्षेत्रदोळु
विहारिसुव जीवनं बळिसलगु । भवांतरदोळु बळिसल्लददु क्षेत्रानुगामियेदुबुदक्कुमावुदोदु तां पुट्टिद १०
भवदिदमन्यभवदोळु स्वस्वामियं बळिसलगुमदु भवानुगामियेदुबुदक्कुमावुदोदु तां पुट्टिद क्षेत्र-
भवंगळेरडरत्तणिदमन्यभरतैरावतविदेहादिक्षेत्रदोळु देवमनुष्यादिभवंगळोळु वर्त्तमानजीवमुं बळि-
सलगुमदुभयानुगामियेदुबुदक्कुमावुदोदु तन्न स्वामियप्प जीवनं बळिसल्लुदल्लददनुगामियेदुबुदक्कु-
मदुदु क्षेत्राननुगामियेदु भवाननुगामियेदुमुभयाननुगामियेदु त्रिविधमक्कु । मल्लि आवुदोदु
क्षेत्रांतरमं बळिसल्लुदल्लदु तां पुट्टिद क्षेत्रदोळे किडुगु । भवांतरं बळिसलगु मेष्माण्णे अदु क्षेत्रा- १५

यद्गुणप्रत्ययावधिज्ञानं तदनुगाम्यननुगाम्यवस्थितमनवस्थितं प्रवर्द्धमानं हीयमानं चेति षड्विधम् ।
तत्र यदवधिज्ञानं स्वस्वामिनं जीवमनुगच्छति तदनुगामि । तच्च क्षेत्रानुगामि भवानुगामि उभयानुगामीति
त्रिविधम् । यत् स्वोत्पत्तिक्षेत्रात् अन्यक्षेत्रे विहरन्तं जीवमनुगच्छति भवान्तरं दानुगच्छति तत्क्षेत्रानुगामि
भवति । यत् उत्पत्तिभवादन्यभवे स्वस्वामिनं अनुगच्छति तद्भवानुगामि भवति । यत्स्वोत्पत्तिक्षेत्रभवाभ्यां
अन्यत्र भरतैरावतविदेहादिक्षेत्रे देवमनुष्यादिभवे च वर्त्तमानं जीवमनुगच्छति तदुभयानुगामि भवति । २०
यदवधिज्ञानं स्वस्वामिनं जीवं नानुगच्छति तदनुगामि । तदपि क्षेत्राननुगामि भवाननुगामि उभयाननुगामीति
त्रिविधम् । तत्र यत्क्षेत्रान्तरं न गच्छति स्वोत्पत्तिक्षेत्रे एव विनश्यति भवान्तरं गच्छतु वा मा गच्छतु तत्
क्षेत्राननुगामि । यद्भवान्तरं नानुगच्छति स्वोत्पत्तिभवे एव विनश्यति, क्षेत्रान्तरं गच्छतु वा मा वा गच्छतु

नहीं होती; केवल सम्यदर्शनादि गुणोंके कारण ही अवधिज्ञान प्रकट होता है, इसलिए वह
गुणप्रत्यय कहा जाता है ॥३७१॥

२५

गुणप्रत्यय अवधिज्ञान, अनुगामी, अननुगामी, अवस्थित, अनवस्थित, वर्द्धमान, हीय-
मानके भेदसे छह प्रकारका है । उनमें-से जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीवका अनुगमन
करता है, वह अनुगामी है । वह तीन प्रकारका है—क्षेत्रानुगामी, भवानुगामी और उभयानु-
गामी । जो अवधिज्ञान अपने उत्पत्तिक्षेत्रसे अन्य क्षेत्रमें जानेवाले जीवके साथ जाता है, किन्तु
भवान्तरमें साथ नहीं जाता, वह क्षेत्रानुगामी है । जो उत्पत्तिक्षेत्रसे स्वामीका मरण होनेपर ३०
दूसरे भवमें भी साथ जाता है, वह भवानुगामी है । जो अपने उत्पत्तिक्षेत्र और भवसे अन्यत्र
भरत, ऐरावत, विदेह आदि क्षेत्रमें और देव, मनुष्य आदिके भवमें जीवका अनुगमन
करता है, वह उभयानुगामी है । जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीवका अनुगमन नहीं करता,
वह अननुगामी है । वह भी क्षेत्राननुगामी, भवाननुगामी, उभयाननुगामीके भेदसे तीन
प्रकारका है । जो अवधि अन्य क्षेत्रमें नहीं जाता, अपने उत्पत्तिक्षेत्रमें ही नष्ट हो जाता है, ३५

ननुगामिये बुदक्कुमावुदोदु भवान्तरमं बळिसल्लुदल्लु तां पुट्टिद भवदोळे केडुगुं । क्षेत्रान्तरमं बळिसल्लुगे मेषमाणे अदु भवाननुगामिये बुदक्कुमावुदोदु क्षेत्रान्तरमं भवान्तरमुमं बळिसल्लुदल्लु । स्वोत्पन्नक्षेत्रभङ्गलोळे केडुगुमदुभयाननुगामिये बुदक्कुमावुदोदु हानियुं वृद्धियुं इल्लवे सूर्य-मंडलदंतेकप्रकारमागिरुत्तित्वर्कमदु अवस्थितावधिये बुदक्कुमावुदोदु ओम्मं पेच्चुगुमोम्मं ५ कुंदुगुमोम्मं यवस्थितमागिक्यमदनवस्थितावधिज्ञानमे बुदक्कु । मावुदोदु शुक्लपक्षद चंद्रमंडलदंते स्वोत्कृष्टपर्यंतं पेच्चुगुमदु वर्मानदेशावधिये बुदक्कु । आवुदोदु कृष्णपक्षद चंद्रमंडलदंते स्वक्षय-पर्यंतं कुंदुगुमदु हीयमानदेशावधिये बुदक्कुमंते सामान्यदिंदमवधिज्ञानं देशावधिये दुं दक्के परमाव-धिये दुं सर्वावधियुर्मंदितु त्रिधा त्रिप्रकारमक्कुमिनितु गुणप्रत्ययमप्य देशावधिये षट्प्रकारमक्कुं परमावधिसर्वावधिगळल्लंतेंबुदत्थं ।

१०

भवपच्चङ्गो ओहो देसोही होदि परमसच्चोही ।

गुणपच्चङ्गो णियमा देसोही वि य गुणे होदि ॥३७३॥

भवप्रत्ययावधिद्वैशावधिर्भवति परमसर्वावधिः । गुणप्रत्ययौ नियमाद् भवतः देशावधिरपि च गुणे भवति ॥

आवुदोदु पूर्वोक्तभवप्रत्ययावधियदुनियमादवश्यंभावात् देशावधियेयक्कुं । देवनारकर- १५ गळगं गृहस्थतीर्थकरणेयुं परमावधियुं सर्वावधियुं संभविसवप्पुदरिदं, परमावधियुं सर्वावधियुं नियमादिदं गुणप्रत्ययंलेयप्पुवेकं दोडे संयमलक्षणगुणभवदोळा येरडक्कुभावमप्पुदरिदं देशावधियुं-

तद्भवाननुगामि । यत् क्षेत्रान्तरं भवान्तरं च नानुगच्छति स्वोत्पन्नक्षेत्रभवयोरेव विनश्यति तत् क्षेत्रभवाननु-गामि । यद्वानिवृद्धिभ्यां विना सूर्यमण्डलवत् एकप्रकारमेव तिष्ठति तदवस्थितम् । यत् कदाचिद्वर्धते कदाचिद्व्यथेते कदाचिदवतिष्ठते च तदनवस्थितम् । यत् शुक्लपक्षस्य चन्द्रमण्डलवत् स्थानकृष्टपर्यन्तं वर्धते तद् वर्धमानम् ।

२० यत् कृष्णपक्षचन्द्रमण्डलवत् स्वक्षयपर्यन्तं हीयते तद्धीयमानं देशावधिज्ञानं भवति । तथा सामान्येन अवधिज्ञानं देशावधिः परमावधिः सर्वावधिश्च इति त्रिधा त्रिप्रकारं भवति । एवं गुणप्रत्ययः देशावधिः षोढा न परमावधिसर्वावधी इत्यर्थः ॥३७३॥

यः पूर्वोक्तो भवप्रत्ययावधिः स नियमात्—अवश्यंभावात् देशावधिरिव भवति देवनारकयोगृहस्थ-तीर्थकरस्य च परमावधिसर्वावधोरसंभवात् । परमावधिः सर्वावधिश्च द्वावपि नियमेन गुणप्रत्ययावेव भवतः

२५ भवान्तरमे जाये या न जाये, वह क्षेत्राननुगामी है । जो अन्य भवमें साथ नहीं जाता, अपने उत्पत्तिभवमें ही छूट जाता, अन्य क्षेत्रमें जाये या न जाये, वह भवाननुगामी है । जो न अन्य क्षेत्रमें साथ जाता है और न अन्य भवमें साथ जाता है अपने उत्पत्तिक्षेत्र और भवमें ही छूट जाता है, वह क्षेत्र भवाननुगामी है । जो हानि-वृद्धिके बिना सूर्यमण्डलकी तरह एक रूप ही रहता है, वह अवस्थित है । जो कभी बढ़ता है, कभी घटता है, कभी तदवस्थ रहता ३० है, वह अनवस्थित है । जो शुक्लपक्षके चन्द्रमण्डलकी तरह अपने उत्कृष्टपर्यन्त बढ़ता है, वह वर्धमान है । जो कृष्णपक्षके चन्द्रमण्डलकी तरह अपने क्षयपर्यन्त घटता है, वह हीयमान है । तथा सामान्यसे अवधिज्ञान देशावधि, परमावधि, सर्वावधिके भेदसे तीन प्रकार है । इस प्रकार गुणप्रत्यय देशावधि छह प्रकारका है; परमावधि सर्वावधि नहीं ॥३७३॥

पूर्वोक्त भवप्रत्यय अवधि नियमसे देशावधि ही होता है, क्योंकि देव, नारकी और

३५ गृहस्थ अवस्थामें तीर्थकरके परमावधि, सर्वावधि नहीं होते । परमावधि और सर्वावधि

गुणे दर्शनविशुद्ध्यादिलक्षणगुणमुंटागुत्तिरलेयक्कुं । मितु गुणप्रत्ययगळूमूहमवधिगळुं संभविसुववुं ।
भवप्रत्ययं देशावधि ये दितु निश्चितमायुतु ।

देसोहिस्स य अवरं णरतिरिये होदि संजदम्मि वरं ।

परमोही सव्वोही चरमशरीरस्स विरदस्स ॥३७४॥

देशावधिरवरं नरतिर्यक्षु भवति संयते वरं । परमावधिः सर्वावधिश्चरमशरीरस्य विर- ५
तस्य ॥

देशावधिज्ञानद जघन्यं नररोळं तिथ्यं चरोळं संयतरोळमसंयतरोळमक्कुं । देवनारकरोळपुहु
एकंदोडे देशावधिय सव्वोत्कृष्टं निप्रमदिदं मनुष्यगतिय सकलसंयतरोळेयक्कु- । मितरगतित्रययो-
ळिल्लेके दोडे महाव्रताभावमप्युदरिदं । परमावधिसर्वावधिगळेरडुं जघन्यादिदमुमुत्कृष्टदिदमुं मनुष्य-
गतियोळे चरमांगरप्प महाव्रतिगळग्ये संभविसुववु । चरमं संसारांतवर्तितदभवमोक्षकारणरत्नत्र- १०
याराधकजीवसंबंधिशरीरं वज्रशृषभनाराचसंहननयुक्तं यस्यासौ चरमशरीरः ।

पडिवादी देसोही अप्पडिवादी हवंति सेसा ओ ।

मिच्छतं अविरमणं ण य पडिवज्जंति चरिमदुगे ॥३७५॥

प्रतिपातो देशावधिरप्रतिपातिनौ भवतः शेषौ अहो । मिथ्यात्वमविरमणं न च प्रतिपद्यन्ते १५
चरमद्विके ॥

सम्यक्त्वमुं चारित्रमुभे बो येरडरिदं बळिचे मिथ्यात्वाऽसंयमंगळप्राप्ति प्रतिपातमक्कुमद-
नुळुदं प्रतिपातियक्कुमितप्प प्रतिपाति देशावधियेयक्कुं । शेष परमावधि सर्वावधिगळेरडुम-
संयमलक्षणगुणाभावे तयोरभावात् । देशावधिरपि गुणे दर्शनविशुद्ध्यादिलक्षणे सति भवति । एवं गुणप्रत्ययास्त्र-
योऽप्यवधयः संभवन्ति । भवप्रत्ययस्तु देशावधिरेवेति निश्चितं जातम् ॥३७३॥

देशावधेर्ज्ञानस्य जघन्यं नरतिरश्चोरेव संयतासंयतयोः भवति, न देवनारकयोः । देशावधेः सर्वोत्कृष्टं २०
तु नियमेन मनुष्यगतिसकलसंयते एव भवति नेतरगतित्रये तत्र महाव्रताभावात् । परमावधिसर्वावधि द्वावपि
जघन्येनोत्कृष्टेन च मनुष्यगतावेव चरमाङ्गस्य महाव्रतिन एव संभवतः । चरमं संसारान्तवर्तितद्रूपमोक्ष-
कारणरत्नत्रयाराधकजीवसंबन्धि शरीरं वज्रशृषभनाराचसंहननयुतं यस्यासौ चरमशरीरः ॥३७४॥

सम्यक्त्वचारित्राभ्यां प्रच्युत्य मिथ्यात्वासंयमयोः प्राप्तिः प्रतिपातः, तद्युतः प्रतिपातो स तु देशावधिरेव

नियमसे गुणप्रत्यय ही होते हैं ; क्योंकि संयमगुणके अभावमें वे दोनों नहीं होते । २५
देशावधि भी दर्शनविशुद्धि आदि गुणोंके होनेपर होता है । इस प्रकार गुणप्रत्यय तो तीनों
ही अवधि होते हैं । किन्तु भवप्रत्यय देशावधि ही है, यह निश्चित हुआ ॥३७३॥

देशावधिज्ञानका जघन्य भेद संयमी या असंयमी मनुष्यों और तिर्यचोंके ही होता है;
देवों और नारकियोंके नहीं होता । किन्तु देशावधिका सर्वोत्कृष्ट भेद नियमसे सकलसंयमी
मनुष्यके ही होता है, शेष तीन गतियोंमें नहीं होता; क्योंकि वहाँ महाव्रत नहीं होते । ३०
परमावधि सर्वावधि जघन्य भी और उत्कृष्ट भी मनुष्यगतिमें ही चरमशरीरी महाव्रतीके
ही होते हैं । चरम अर्थात् संसारके अन्तमें होनेवाले उसी भवसे मोक्षके कारण रत्नत्रयकी
आराधना करनेवाले जीवके होनेवाला वज्रशृषभनाराच संहननसे युक्त शरीर जिसका है,
उसीके होते हैं ; वही चरमशरीर है ॥३७४॥

सम्यक्त्व और चारित्रसे च्युत होकर मिथ्यात्व और असंयममें आनेको प्रतिपात
कहते हैं । और जिसका प्रतिपात होता है, वह प्रतिपाती है । देशावधि ही प्रतिपाती है । ३५

प्रतिपातिगच्छेयप्पुवु । चरमद्विके परमावधिसर्वावधिविकदोलु जीवंगलु नियमदिदं मिथ्यात्वमु-
मनविरमणमुमं न च प्रतिपद्यन्ते पोदुदुववरल्लरदु कारणादिदमा येरदुमप्रतिपातिगच्छेयप्पुवदु
कारणादिदं देशावधिज्ञानं प्रतिपातियुमप्रतिपातियुमप्पुदे बुदु सुनिश्चितं ।

द्वयं खेत्तं कालं भावं पडि रूपि जाणदे ओही ।

अवरादुक्कस्सो त्ति य वियप्परहिदो दु सव्वोही ॥३७६॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं प्रति रूपि जानीते अवधिः । अवरादुत्कृष्टपर्यन्तं विकल्परहितस्तु
सर्वावधिः ॥

अवरात् जघन्यविकल्पमोदल्लोडु उत्कृष्टविकल्पपर्यन्तमसंख्यातलोकमात्रविकल्पमनुल्ल-
वधिज्ञानं द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं प्रति प्रति प्रतिनियतसीमेयं माडि रूपि पुद्गलद्रव्यं
तत्संबन्धिसंसारिजीवद्रव्यमुमं जानीते प्रत्यक्षमागिरिगुं । तु मत्त सर्वावधिज्ञानं विकल्परहितं जघन्य-
मध्यमोत्कृष्टविकल्परहितमवस्थितैकरूपमुं हानिवृद्धिरहितमुं परमोत्कर्षप्राप्तमुमे बुदुत्थं ।
अवधिज्ञानावरणक्षयोपशमसर्वोत्कृष्टमुमल्लिये संभविसुगुं । अदुकारणादिदं देशावधि परमावधि-
गच्छे जघन्यमध्यमोत्कृष्टविकल्पंगलु संभविसुगुमे बुदु निश्चितमवकुं ।

णोकम्मुरालसंचं मज्झिमजोगाज्जियं सविस्सचयं ।

लोयविभत्तं जाणदि अवरोही दव्वदो णियमा ॥३७७॥

नोकर्म्मोदारिकसंचयं मध्यमयोगाज्जितं सवित्तसोपचयं । लोकविभक्तं जानाति अवरावधि-
द्रव्यतो नियमात् ॥

भवति । शेषौ परमावधिसर्वावधि द्वावपि अप्रतिपातिनावेव भवतः, चरमद्विके-परमावधिसर्वावधिविके^१ जीवाः
नियमेन मिथ्यात्वं अविरमणं च न प्रतिपद्यन्ते ततः कारणात् तौ द्वावपि अप्रतिपातिनौ, देशावधिज्ञानं प्रतिपाति
अप्रतिपाति च इति निश्चितम् ॥३७५॥

अवरात् जघन्यविकल्पादारम्य उत्कृष्टविकल्पपर्यन्तं असंख्यातलोकमात्रविकल्पं अवधिज्ञानं द्रव्यं क्षेत्रं
कालं भावं च प्रतीत्य—नियतसीमां कृत्वा रूपि पुद्गलद्रव्यं तत्संबन्धि संसारिजीवद्रव्यं च जानीते प्रत्यक्षतया
अवबुध्यते । तु—पुनः सर्वावधिज्ञानं जघन्यमध्यमोत्कृष्टविकल्परहितं अवस्थितं हानिवृद्धिरहितं परमोत्कर्षप्राप्त-
मित्यर्थः, अवधिज्ञानावरणक्षयोपशमसर्वोत्कृष्टस्य तथैव संभवात्, ततः कारणाद् देशावधिपरमावध्योर्जघन्य-

मध्यमोत्कृष्टविकल्पा संभवन्तीति निश्चितं भवति ॥३७६॥

शेष परमावधि सर्वावधि दोनों अप्रतिपाती ही हैं । 'चरिमदुगे' अर्थात् परमावधि सर्वावधि
जिनके होते हैं, वे जीव मिथ्यात्व और अविरतिको प्राप्त नहीं होते । इस कारण वे दोनों
अप्रतिपाती हैं और देशावधिज्ञान प्रतिपाती भी है अप्रतिपाती भी है, यह निश्चित हुआ ॥३७५॥

अवधिज्ञानके जघन्य भेदसे लेकर उत्कृष्ट भेद पर्यन्त असंख्यातलोक प्रमाण भेद हैं ।

वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी मर्यादाके अनुसार रूपी पुद्गल द्रव्य और उससे सम्बद्ध
संसारी जीवोंको प्रत्यक्ष रूपसे जानता है । किन्तु सर्वावधिज्ञान जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेदसे
रहित है, अवस्थित है, उसमें हानि-वृद्धि नहीं होती । इसका अर्थ है कि वह परम उत्कर्षको
प्राप्त है, क्योंकि अवधिज्ञानावरणका सर्वोत्कृष्ट क्षयोपशम वहीं होता है । इससे यह
निश्चित होता है कि देशावधि और परमावधिके जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद होते हैं ॥३७६॥

३५ १. ब. °द्विको जीवः ।

देशावधिजघन्यज्ञानं द्रव्यतः द्रव्यदिदं मध्यमयोगाज्जितमप्य नोकर्मौदारिकसंचयमं द्वचर्द्ध-
गुणहानिप्रमितसमयप्रबद्धसमूहरूपमं स्वयोग्यविस्त्रसोपचयपरमाणुसंयुक्तमं लोकदिदं भागिसत्पट्टदुदं
नियमदिदं तावन्मात्रमने जानाति प्रत्यक्षमागारिगुमर्दिरं किरिदनरियदेबुदत्थं । जघन्ययोगाज्जित-
मप्य नोकर्मौदारिकसंचयकल्पत्वमनरिवदवके सूक्ष्मत्वसंभवादिदं । तदग्रहणदोळु तदज्ञानकके
शक्तिअभावमपुर्दिरं । उत्कृष्टयोगाज्जितनोकर्मौदारिकसंचयवके स्थूलत्वमवकुं तदग्रहणदोळु ५
प्रतिषेधरहितत्वादिदमर्दिरं नियमदिदं मध्यमयोगाज्जितमप्य नोकर्मौदारिकसंचयद्रव्यनियमं

पेळलपट्टदु स ० । १२-१६ ख

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स तदियसमयम्मि ।

अवरोगाहणमाणं जहण्णयं ओहिखेत्तं तु ॥३७८॥

सूक्ष्मनिगोदापध्याप्तकस्य जातस्य तृतीयसमये । अवरावगाहनमानं जघन्यमवधिक्षेत्रं तु ॥ १०

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपध्याप्तकन पुट्टिद तृतीयसमयदोळुबुदोदु पूर्वोक्तजघन्यावगाहनमानमदु
तु मत्ते जघन्यदेशावधिज्ञानविषयमप्य क्षेत्रप्रमाणमवकुं ६ । ८ । २२

०
५ १ ९ । ८ ९ । ८ । २२ । १ ९
० ० ०

देशावधिजघन्यज्ञानं द्रव्यतः मध्यमयोगाजितं नोकर्मौदारिकसंचयं द्वचर्द्धगुणहानिप्रमितसमयप्रबद्धसमूह-
रूपं स्वयोग्यविस्त्रसोप चयपरमाणुसंयुक्तं लोकेन विभक्तं नियमेन तावन्मात्रमेव जानाति-प्रत्यक्षतया अवबुध्यते
न ततोऽल्पमित्यर्थः । जघन्ययोगाजितस्य नोकर्मौदारिकसंचयस्य अल्पत्वं ततोऽस्य सूक्ष्मत्वसंभवात् । तदग्रहणे १५
तज्ज्ञानस्य शक्त्यभावात् । उत्कृष्टयोगाजितनोकर्मौदारिकसंचयस्य स्थूलत्वं भवति तदग्रहणे प्रतिषेधाभावात् ।

तेन नियमान्मध्यमयोगाजितनोकर्मौदारिकसंचयो द्रव्यनियमः कथितः । स ० १२—१६ खं ॥३७७॥

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य उत्पत्तितृतीयसमये यत्पूर्वोक्तजघन्यावगाहनं तत् तु-पुनः जघन्यदेशावधि-

मध्यम योगके द्वारा उपाजित नोकर्म औदारिक शरीरके संचयको, जो डेढ़ गुण हानि
प्रमाण समयबद्धोंका समूहरूप है और अपने योग्य विस्त्रसोपचयके परमाणुओंसे संयुक्त है २०
उसमें लोकराशिसे भाग देनेपर जो एक भाग मात्र द्रव्य होता है, उसे जघन्य देशावधि ज्ञान
जानता है । उससे कमको वह नहीं जानता । जघन्ययोगके द्वारा उपाजित नोकर्म औदारिक
शरीरका संचय उससे अल्प होनेसे सूक्ष्म होता है । उसको जाननेकी शक्ति इस ज्ञानकी नहीं
है । और उत्कृष्ट योगसे उपाजित नोकर्म औदारिकका संचय स्थूल होता है, उसको जाननेका
निषेध नहीं है । तथा विस्त्रसोपचय रहित सूक्ष्म होता है, इसलिए उसको जाननेकी शक्ति २५
नहीं है । इस प्रकार उक्त संचयके घनलोकके प्रदेश प्रमाण खण्ड करके उनमें-से एकखण्डरूप
अतीन्द्रिय पुद्गल स्कन्धको सबसे जघन्य देशावधिज्ञान प्रत्यक्ष जानता है, इस प्रकार
द्रव्यका नियम कहा है ॥३७७॥

सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकके उत्पत्तिके तीसरे समयमें जो जघन्य अवगाहनाका
प्रमाण पहले कहा है, वह जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत क्षेत्रका प्रमाण होता है । इतने ३०

इतितु क्षेत्रदोळु पूर्वोक्तजघन्यद्रव्यगळेनितोळवनितुमं जघन्यदेशावधिज्ञानमरिगुमल्लियं पोरगि-
दुंदुनरियदेदितु क्षेत्रसीमे पेळत्पट्टुदु ।

अवरोहिस्वेतदीहं वित्थारुस्सेहयं ण जाणामो ।

अण्णं पुण समकरणे अवरोगाहणप्रमाणं तु ॥३७९॥

५ अवरावधिक्षेत्रदैर्घ्यं विस्तारोत्सेधकं न जानीमः । अन्यत्पुनः समकरणे अवरावगाहन-
प्रमाणं तु ।

जघन्यावधिविषयक्षेत्रदैर्घ्यविस्तारोत्सेधप्रमाणं नामरियेवु ईगळदरूपदेशाभावमपुदरिदं ।
तु मत्ते परमगुरुपदेशपरंपरायातं मत्तोदुंदु समकरणदोळु भुजकोटिवेदिगळ्ळे हीनाधिकभावमिल्लदे
समीकरणमागुत्तिरलु पुट्टिद क्षेत्रफलं जघन्यावगाहनप्रमाणं घनांगुलासंख्यातैकभागमात्रमक्कुमें-

१० विदने बल्लेवु ।

अवरोगाहणप्रमाणं उत्सेहंगुलअसंखभागस्स ।

सूइस्स य घणपदरं होदि हु तक्खेत्तसमकरणे ॥३८०॥

अवरावगाहनमानमुत्सेधांगुलासंख्यातभागस्य । सूच्याश्च घनप्रतरं भवति खलु तत् क्षेत्र-
समकरणे ।

१५ अंतादोडा सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्याप्तकन जघन्यावगाहनमेंतुट्टेदितु प्रश्नमागुत्तिरलुत्तरवचन-
मिदु तज्जघन्यावगाहनमनियतसंस्थानमक्कुमादोडं क्षेत्रखंडनविधानदिदं भुजकोटि वेदिगळ्ळे सम-
करणमागुत्तिरलुत्सेधांगुलमं परिभाषानिष्पन्नव्यवहारसूच्यंगुलमनावुदानुमोद संख्यातदिदं खंडिसि-

ज्ञानविषयभूतक्षेत्रप्रमाणं भवति ६ । ८ । २२ । एतावति क्षेत्रे पूर्वोक्तजघन्यद्रव्याणि यावन्ति संति तावन्ति

०
५ २९ । ८ । ९ । ८ । २२ । १ ९
० ० ०

जघन्यदेशावधिज्ञानं जानाति न तद्बहिःस्थितानीति क्षेत्रसीमा कथिता ॥३७८॥

२० जघन्यावधिविषयक्षेत्रस्य दैर्घ्यविस्तारोत्सेधप्रमाणं न जानीमः । इदानीं तदुपदेशाभावात् । तु पुनः
परमगुरुपदेशपरंपरायातं जघन्यावगाहनप्रमाणं समकरणे-समीकरणे कृते सति घनाङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रं
भवति इत्यन्यत्पुनर्जानीमः ॥३७९॥

तर्हि तत्सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य जघन्यावगाहनं कीदृग् अस्ति ? इति चेत्, तदवगाहनं अनियत-
संस्थानमस्ति तथापि क्षेत्रखण्डनविधानेन भुजकोटिवेधानां समकरणे सति उत्सेधाङ्गुलपरिभाषानिष्पन्नव्यवहार-

२५ क्षेत्रमें पूर्वोक्त प्रमाणवाले जितने जघन्य द्रव्य होते हैं, उन सबको जघन्य देशावधिज्ञान
जानता है । उस क्षेत्रसे बाहर स्थितको नहीं जानता । इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके
क्षेत्रकी सीमा कही ॥३७८॥

हम जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत क्षेत्रकी लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई नहीं जानते,
क्योंकि इस कालमें उसका उपदेश नहीं प्राप्य है । किन्तु परम गुरुके उपदेशकी परम्परासे
३० इतना जानते हैं कि जघन्य अवगाहनाके प्रमाणका समीकरण करनेपर क्षेत्रफल घनांगुलके
असंख्यातवें भाग मात्र होता है ॥३७९॥

प्रश्न होता है कि वह सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना कैसी है ?
उसका उत्तर यह है कि उस जघन्य अवगाहनाका आकार नियत नहीं है । फिर भी क्षेत्र

देकभागमात्रभुजकोटिवेदिगल अन्योन्यगुणकारोत्पन्नघनक्षेत्रं घनांगुलासंख्यातभागमात्रं खलु परमागमदोलु स्फुटं प्रसिद्धमप्युक्तुं बभूवुः । तत्समानं जघन्यदेशावधिज्ञानक्षेत्रमवकुर्वेदितु तात्पर्यं । तन्मासमिदु २ २ — गुणिसिद्धौ घनांगुलासंख्यातभागमात्रमवकुर्वेदितु ६ च शब्दद्वि ८ ८

२

८

जघन्यावगाहनमुं जघन्यदेशावधिज्ञानक्षेत्रमुमीप्रकारमप्युक्तेदितु समुच्चि- सत्पट्टदुदु ।

अवरं तु ओहिखेत्तं उस्सेहं अंगुलं हवे जम्हा ।

सुहेमोगाहणमाणं उवरि पमाणं तु अंगुलयं ॥३८१॥

जघन्यं त्ववधिज्ञानं उत्सेधांगुलं भवेद्यस्मात् । सूक्ष्मावगाहनमानमुपरि प्रमाणं त्वंगुलं ।

तु मत्ते जघन्यदेशावधिज्ञानविषयक्षेत्रमावुदोदु जघन्यावगाहनसमानं घनांगुलासंख्यात- भागमात्रं पेळत्पट्टदुदुत्सेधांगुलमवकुर्वेदितु । व्यवहारांगुलमनाश्रयिसि ये पेळत्पट्टदुदु । प्रमाणात्मांगुल- मनाश्रयिसि पेळत्पट्टदुदुविल्लदेकदोडे आवुदोदु कारणादिवं सूक्ष्मनिगोदललब्धपट्ट्यामिकजघन्यावगाह- १०

सूच्यङ्गुलं असंख्यातेन भवत्वा तदेकभागमात्रभुजकोटिवेधानां अन्योन्यगुणनोत्पन्नघनाङ्गुलासंख्यातभागमात्रं खलु परमागमे स्फुटं प्रसिद्धमागच्छति । तत्समानजघन्यदेशावधिज्ञानक्षेत्रमित्यर्थः २ । २ । गुणिते घनाङ्गुला- ८ । ८ ।

२

८

संख्यातमात्रं भवति ६ ॥३८०॥

८

तु—पुनः, जघन्यदेशावधिज्ञानविषयक्षेत्रं यजजघन्यावगाहनसमानं घनाङ्गुलासंख्यातभागमात्रमुक्तं तदुत्सेधाङ्गुलं व्यवहाराङ्गुलमाश्रित्योक्तं भवति न प्रमाणाङ्गुलं नाप्यात्माङ्गुलमाश्रित्य । यस्मात्कारणात् १५

खण्डन विधानके द्वारा भुज, कोटि और वेधका समीकरण करनेपर, उत्सेधांगुलको असंख्यातसे भाजित करके एक भाग प्रमाण भुज कोटि और वेधको परस्परमें गुणा करनेपर घनांगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रफल होता है । उसीके समान जघन्य देशावधिज्ञान- का क्षेत्र है ।

विशेषार्थ—आमने-सामने दो दिशाओंमें-से किसी एक दिशा सम्बन्धी प्रमाणको भुज २० कहते हैं । शेष दो दिशाओंमें-से किसी एक दिशा सम्बन्धी प्रमाणको कोटि कहते हैं । ऊँचाई- के प्रमाणको वेध कहते हैं । व्यवहारमें इन्हें ऊँचाई, चौड़ाई, लम्बाई कहते हैं । यहाँ जघन्य क्षेत्रकी लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई एक सी नहीं है; कमती-बढ़ती है । किन्तु क्षेत्रखण्डन विधानके द्वारा समीकरण करनेपर ऊँचाई, चौड़ाई, लम्बाईका प्रमाण उत्सेधांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होता है । उनको परस्परमें गुणा करनेपर घनांगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण घनक्षेत्र-फल होता है । इतना ही प्रमाण जघन्य अवगाहनाका है और इतना ही जघन्य देशावधिके क्षेत्रका है ॥३८०॥ २५

जघन्य देशावधिज्ञानका विषय क्षेत्र जो जघन्य अवगाहनाके समान घनांगुलके असंख्यातवें भागमात्र कहा है, वह उत्सेधांगुल व्यवहार अंगुलकी अपेक्षा कहा है, प्रमाणांगुल

नप्रमाणं जघन्यदेशावधिक्षेत्रमद्वु कारणविदं व्यवहारांगुलमनाश्रयिसिधे पेठल्पट्टदुदु । तज्जघन्याव-
गाहनमुं परमाणमदोळु देहगेहग्रामनगरादिप्रमाणमुत्सेधांगुलविदमे ये विंतु नियमितमपुर्दारिदं
व्यवहारांगुलाश्रितमे यक्कुं । मेले यावुदो देडेयोळंगुलमावळिया एकभागमसंखेज्जमित्यादिगाथा
सूत्रोक्तकाण्डकंगळोळु अंगुलग्रहणमल्लि प्रमाणांगुलमे ग्राह्यमक्कुमुत्तरोत्तर निर्दिश्यमानहस्तगव्यूति-
योजनभरतादिक्षेत्रंगळगे प्रमाणांगुलाश्रितत्वविदं ।

अवरोहिस्वेत्तमज्जे अवरोही अवरदन्वमवगमइ ।

तदन्वस्सवगाहो उस्सेहासंखघणपदरो ॥३८२॥

अवरावधिक्षेत्रमध्ये अवरावधिरवरद्वयमवगच्छति । तद्व्यवस्थावगाहः उत्सेधासंख-
घनप्रतरः ।

१० जघन्यावधिक्षेत्रमध्यदोळिरुतिहं पूर्वोक्तजघन्यद्रव्यं जघन्यदेशावधिज्ञानमरिगुं । तत्
क्षेत्रमध्यदोळिरुतिहं असंख्यातंगळनौदारिकशरीरसंचयलोकभक्तैकभागप्रमितखंडंगळननितुमनरिगु-
मे बुदत्थं । तज्जघन्यपुद्गलस्कन्ध मेले एकद्वयादिप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कन्धंगळनरिगुमे बुदनिर्लि
पेठत्वडेके दोडे सूक्ष्मविषयज्ञानक्के स्थूलावबोधनदोळु सुघटत्वमपुर्दारिदं । द्रव्यावगाहक्षेत्रं जघन्या-
वधिविषयक्षेत्रं नोडलसंख्येयगुणहीनमक्कुमादोडं उत्सेधघनांगुलासंख्यातभागमात्रमक्कुं । सदर

१५ सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तकजघन्यावगाहनप्रमाणं जघन्यदेशावधिक्षेत्रं ततः कारणात्, देहगेहग्रामनगरादिप्रमाणं
उत्सेधाङ्गुलेनैवेति परमाणमे नियमितत्वात् व्यवहाराङ्गुलमेवाश्रितं भवति । उपरि यत्र "अङ्गुलमावळियाए
भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जो, इत्यादिगाथासूत्रोक्तकाण्डकेषु अङ्गुलग्रहणं तत्र प्रमाणाङ्गुलमेव ग्राह्यं, उत्तरोत्तर-
निर्दिश्यमानहस्तगव्यूतियोजनभरतादिक्षेत्राणां प्रमाणाङ्गुलाश्रितत्वात् ॥३८१॥

जघन्यावधिक्षेत्रमध्ये स्थितं पूर्वोक्तं जघन्यद्रव्यं जघन्यदेशावधिज्ञानं जानाति तत्क्षेत्रमव्यस्थितानि
२० औदारिकशरीरसंचयस्य लोकविभक्तैकभागप्रमितखण्डानि असंख्यातानि जानातीत्यर्थः । तज्जघन्यपुद्गलस्कन्ध-
स्योपरि एकद्वयादिप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कन्धान् न जानातीति न वाच्यं, सूक्ष्मविषयज्ञानस्य स्थूलावबोधने
सुघटत्वात् । द्रव्यावगाहक्षेत्रं तु जघन्यावधिविषयक्षेत्रादसंख्यातगुणहीनं भवति, तथाप्युत्सेधघनाङ्गुलासंख्यात-

या आत्मांगुली अपेक्षा नहीं, क्योंकि सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना
प्रमाण जघन्य देशावधिका क्षेत्र है । और परमाणममें यह नियम कहा है कि शरीर, घर,
२५ ग्राम, नगर आदिका प्रमाण उत्सेधांगुलसे ही मापा जाता है । इसलिये व्यवहार अंगुलका ही
आश्रय लिया है । आगे 'अंगुलमावळियाए' आदि गाथासूत्रोंमें कहे गये काण्डकोंमें अंगुलका
प्रमाण प्रमाणांगुलसे लिया है । उससे आगे भी जो हस्त, गव्यूति, योजन भरत आदि प्रमाण
क्षेत्र कहा है, वह सब प्रमाणांगुलसे ही लिया है ॥३८१॥

जघन्य अवधिज्ञानके क्षेत्रके मध्यमें स्थित पूर्वोक्त जघन्य द्रव्यको जघन्य देशावधि-
३० ज्ञान जानता है । अर्थात् उस क्षेत्रके मध्यमें औदारिक शरीरके संचयको लोकसे भाग देनेपर
एक भाग प्रमाण जो असंख्यात खण्ड स्थित हैं, उनको जानता है । उस जघन्य पुद्गल
स्कन्धसे ऊपर एक-दो आदि अधिक प्रदेशवाले स्कन्धोंको वह नहीं जानता, ऐसा नहीं है ।
क्योंकि जो ज्ञान सूक्ष्मको जानता है, वह स्थूलको जाननेमें समर्थ होता है । द्रव्यकी
अवगाहनाका प्रमाण जघन्य अवधिके विषयभूत क्षेत्रके प्रमाणसे असंख्यात गुणाहीन

३५ १. ब, °तन्यसंख्याखण्डानि जा° ।

भुजकोटिवेदिगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळरियल्पडुबुबु २ २ ।
०० ००
२
००

आवलि असंखभाग तीद भविस्सं च कालदो अवरं ।

ओही जाणदि भावे काल असंखेज्जभागं तु ॥३८३॥

आवत्यसंखभागं अतीतं भविष्यं तं च कालतोवरावधिज्जाति भावे कालासंख्येय भागं तु ।

कालविदं जघन्यावधिज्ञानं अतीत भविष्यत्कालमनावत्यसंख्यातभागमात्रमनरिगुं ८

स्वविषयैकद्रव्यगतद्रव्यजनपर्यायंगळनावत्यसंख्यातैकभागमात्रपूर्वोत्तरंगळ नरिगुमे बुदत्थं । एक-
दोडे व्यवहारकालक द्रव्यद पर्यायस्वरूपमल्लद्वयत् स्वरूपांतराभावमण्णुदरिदं । भावे भावदोळु
तु मत्तं कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिविषयकालावत्यसंख्यातैकभागद असंख्येयभागमात्रमन-
रिगुं । इंतु जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावं गळ्णे सीमाविभागमं पेळ्हु तद्देशावधिज्ञान- १०
विकल्पंगळं चतुर्विधविषयभेदविदं पेळ्दपं ।

भागमात्रमेव भवति । तद्भुजकोटिवेधाः सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रा ज्ञातव्याः २ २ ॥३८२॥

०० ००

२

००

कालेन जघन्यावधिज्ञानं अतीतभविष्यत्कालमावत्यसंख्यातभागमात्रं जानाति ८ । स्वविषयैकद्रव्यगत-

०

व्यञ्जनपर्यायान् पूर्वोत्तरान् तावतो जानातीत्यर्थः । व्यवहारकालस्य द्रव्यस्य पर्यायस्वरूपं विनाऽन्यस्वरूपान्त-
राभावात् । भावे तज्जघन्यद्रव्यगतवर्तमानपर्याये तु पुनः कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिविषयकालस्यावत्य-
संख्यातैकभागस्य असंख्यातैकभागमात्रं जानाति ८ । एवं जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावानां सी- १५

००

माविभागं प्ररूप्येदानीं द्वितीयादीन् देशावधिज्ञानविकल्पान् चतुर्विधविषयभेदानाह—

होता है; तथापि घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र ही होता है । उसके भुजा, कोटि और
वेध सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमात्र हैं ॥३८२॥

कालकी अपेक्षा जघन्य अवधिज्ञान आवलीके असंख्यातवें भागमात्र अतीत और
अनागतकालकी जानता है । अर्थात् अपने विषयभूत एक द्रव्यकी अतीत और अनागत २०
व्यञ्जनपर्यायोंको आवलीके असंख्यातवें भागमात्र जानता है, क्योंकि व्यवहारकालके और
द्रव्यके पर्याय स्वरूपके बिना अन्य स्वरूप सम्भव नहीं है । भावकी अपेक्षा उस जघन्य
द्रव्यगत वर्तमान पर्यायोंको कालके असंख्यातवें भाग जानता है अर्थात् जघन्य अवधिका
विषय जो आवलीके असंख्यातवें भागमात्र काल है, उसके असंख्यातवें भागमात्र अर्थपर्यायों-
को जानता है ॥३८३॥

२५

इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके विषय द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी सीमाका
विभाग कहकर अब देशावधिज्ञानके द्वितीय आदि विकल्पोंके विषयभूय द्रव्यादिको
कहते हैं—

अवरद्वाद्भवविपर्ययस्य होदि ध्रुवहारो ।

सिद्धान्तभागो अभवसिद्धान्तगुणो ॥३८४॥

अवरद्वाद्भुवपरितनद्रव्यविकल्पाय भवति ध्रुवहारः । सिद्धान्तैकभागोऽभवसिद्धान्त-
गुणः ॥

५ जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यदिदं मेलणनंतरदेशावधिज्ञानविकल्पविषयद्रव्यविकल्पं तर-
त्वेडि सिद्धान्तैकभागमुभयसिद्धान्तगुणमुस्य ध्रुवभागहारमरियत्पडुं ।

ध्रुवहारकर्मवर्गगणगुणकारं कर्मवर्गगणं गुणिते ।

समयप्रबद्धप्रमाणं जाणिज्जो ओहिविसयम्मि ॥३८५॥

१० ध्रुवहारकर्मवर्गगणगुणकारं कर्मवर्गगणं गुणिते । समयप्रबद्धप्रमाणं ज्ञातव्यमवधि-
विषये ॥

कर्मवर्गवर्गणाया गुणकाराः कर्मवर्गवर्गणागुणकाराः ध्रुवहाराच्चेते कर्मवर्गवर्गणा-
गुणकाराश्च ध्रुवहारकर्मवर्गवर्गणागुणकारास्तान् । कर्मवर्गवर्गणां च गुणितेऽवधिविषये समय-
प्रबद्धप्रमाणं भवतीति ज्ञातव्यं । गुण्यरूपदिनिर्द्दं कर्मवर्गवर्गणं गुणकाररूपदिनिर्द्दं ध्रुवहारगणं
कर्मवर्गवर्गणं गुणिसुत्तिरलु अवधिविषयसमयप्रबद्धप्रमाणमक्कुं ज्ञातव्यमक्कुं ।

१५ जघन्यदेशावधिविषयद्रव्यात् उपरितनद्वितीयावधिज्ञानविकल्पविषयद्रव्याणि आनेतुं सिद्धान्तैकभागः,
अभवसिद्धेभ्योऽनन्तगुणः ध्रुवभागहारः स्यात् ॥३८४॥

द्विरूपोपदेशावधिविकल्पमात्रध्रुवहाराद् गत्युत्पन्नेन कर्मवर्गवर्गणागुणकारेण द्विरूपाधिकपरमावधि-
ज्ञानविकल्पमात्रध्रुवहारसंवर्गसमुत्पन्नकर्मवर्गणा गुणिता सती अवधिविषये समयप्रबद्धमात्रप्रमाणं स्यादिति

२० जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत द्रव्यसे ऊपर द्वितीय आदि अवधिज्ञानके भेदोंके
विषयभूत द्रव्योंको लानेके लिए सिद्ध राशिका अनन्तवाँ भाग और अभव्य राशिसे अनन्त-
गुणा ध्रुवभागहार होता है ॥

विशेषार्थ—पूर्वपूर्व द्रव्यमें जिस भागहारका भाग देनेसे आगेके भेदके विषयभूत
द्रव्यका प्रमाण आता है, वह ध्रुव भागहार है । जैसे जघन्य देशावधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यमें
भाग देनेसे जो प्रमाण आता है, वह उसके दूसरे भेदके विषयभूत द्रव्यका प्रमाण होता
है ॥३८४॥

२५ देशावधिज्ञानके विकल्पोंमें दो घटानेपर जितना प्रमाण रहे, उतनी जगह ध्रुवहारोंको
स्थापित करके परस्परमें गुणा करनेपर जितना प्रमाण होता है, उतना कर्मवर्गवर्गणाका
गुणकार होता है । और परमावधिज्ञानके विकल्पोंमें दो अधिक करनेपर जितना प्रमाण हो,
उतनी जगह ध्रुवहारोंको स्थापित करके परस्परमें गुणा करनेपर जितना प्रमाण हो, वह
कर्मवर्गवर्गणा होती है । कर्मवर्गवर्गणाके गुणकारसे कर्मवर्गवर्गणाको गुणा करनेपर जो प्रमाण
हो, वह अवधिज्ञानका विषय समयप्रबद्ध जानना । अर्थात् जो जघन्य देशावधिका विषय-

१. ध्रुवहारके संदृष्टि नवाकं तत्प्रमाणं मुदे पेळ्पडुगुमीग पेळ्पुदेके दोडे देशावधिय चरमद्रव्याविकल्पगणं
विदुं त्रिचरमदोळ्पुडुगि प्रथमविकल्पपर्यन्तमेकादशकोत्तरक्रमदिनिळिदिळिदु बंदु प्रथमविकल्पदोळ्पु
तावन्मात्रध्रुवहारगणं कर्मवर्गवर्गणं गुणियसिद्ध लब्धप्रमाणसमानं प्रथमद्रव्यं बुद्धय ॥

विशेषदिदं ध्रुवहारप्रमाणं पेळदपं :—

मणद्ववर्गगणान वियप्पाणंतिमसमं खु ध्रुवहारो ।

अवरुक्कस्सविसेसा रुवहिया तव्वियप्पा हु ॥३८६॥

मनोद्रव्यवर्गगणानां विकल्पानामनन्तैकभागसमः स्फुटं ध्रुवहारः । अवरोत्कृष्टविशेषाः
रूपाधिकास्तद्विकल्पाः खलु ॥

ध्रुवहारप्रमाणमरियल्पडुगुमदेते दोडे मनोद्रव्यवर्गगणगळ विकल्पंगळिनितोळवनि ज १
ख

तदनन्तैकभागदोडने ज १ समानमक्कुं । खलु स्फुटमाणि । अंतादोडा मनोद्रव्यवर्गगणविकल्प-
ख ख

गळतामेनितप्पुवेदोडे पेळल्पडुगुं । अवरोत्कृष्टविशेषाः रूपाधिकास्तद्विकल्पाः खलु जघन्यमनो-
द्रव्यवर्गगणयनुत्कृष्टमनोद्रव्यवर्गगणयोळकळेदुळिव शेषदोळेकरूपं कूडुत्तिरला मनोद्रव्यवर्गगणा-

विकल्पंगळप्पुवु । आदी । ज । अन्ते ज ख सुद्धे ज १ वडिद्वहिदे ज १ रुवसंजुदे ठाणा १०
ख ख ख १

ज ई स्थानविकल्पंगळनन्तैकभागदोडने ज समानं ध्रुवहारप्रमाणमक्कुमे बुदर्थमंतादोडा
ख ख

जघन्योत्कृष्टमनोद्रव्यवर्गगणगळ प्रमाणमेनिते दोडे पेळदपं :—

अवरं होदि अणंतं अणंतभागेण अहियमुक्कस्सं ।

इदि मणभेदाणंतिमभागो द्ववग्मि ध्रुवहारो ॥३८७॥

अवरो भवत्यनन्तोऽनंतभागेनाधिक उत्कृष्ट, इति मनोभेदानामनन्तैकभागो द्रव्ये ध्रुवहारः ॥ १५

ज्ञातव्यम् ॥३८५॥ विशेषेण ध्रुवहारप्रमाणमाह—

मनोद्रव्यवर्गगणाय यावन्तो विकल्पास्तेषामनन्तैकभागेन समं संख्यया समानं खलु ध्रुवहारप्रमाणं

स्यात् । ते च विकल्पाः कति ? मनोवर्गगणजघन्यं ज तदुत्कृष्टे ज ख विशोध्य शेषे ज रूपाधिकीकृते एतावन्तः
ख ख

ज खलु स्युः ॥३८६॥ ते जघन्योत्कृष्टे प्रमाणयति—
ख

भूत द्रव्य कहा था, उसे ही यहाँ समयप्रबद्धके रूपमें स्थापित किया है । इसमें ही ध्रुवहारका २०
भाग दे-देकर आगेके विकल्पोंके विषयभूत द्रव्य लायेंगे ॥३८५॥

सामान्य रूपसे ध्रुवहारका प्रमाण सिद्धराशिके अनन्तवें भाग कहा । अब विशेष
रूपसे ध्रुवहारका प्रमाण कहते हैं—

मनोद्रव्यवर्गगणके जितने भेद हैं उनके अनन्तवें भागकी संख्याके बराबर ध्रुवहारका
प्रमाण है । मनोवर्गगणके जघन्यको मनोवर्गगणके उत्कृष्टमें-से घटाकर जो प्रमाण शेष रहे २५
उसमें एक जोड़नेपर मनोवर्गगणके भेदोंका प्रमाण होता है ॥३८६॥

आगे मनोवर्गगणके जघन्य और उत्कृष्ट भेदका प्रमाण कहते हैं—

जघन्यमनोद्रव्यवर्गणाप्रमाणमनंत मदर । ज । अनंतैकभागदिनधिकमुत्कृष्टमनो-

द्रव्यवर्गणाप्रमाणमक्कु ज ख मितु मुपेन्द्र क्रमदिदमादियते सुद्धे इत्यादिविधानदिदं तरल्पदु
ख

मनोद्रव्यवर्गणाविकल्पंगळ ज १ अनंतैकभागदोडने ज १ अवधिविषयद्रव्यविकल्पंगळोळ पुगुव
ख ख

ध्रुवहारप्रमाणं समानमेदु निश्चयिसुबुदु ॥ अथवा :—

५ ध्रुवहारस्स पमाणं सिद्धाणंतिमपमाणमेत्तं पि ।

समयप्रबद्धणिमित्तं कम्मणवग्गणगुणादो दु ॥३८८॥

ध्रुवहारस्य प्रमाणं सिद्धान्तैकभागप्रमाणमात्रमपि । समयप्रबद्धनिमित्तं काम्मणवर्गणा-
गुणात् ॥

होदि अणंतिमभागो तग्गुणगारोवि देसओहिस्स ।

१० दोऊणदव्वमेदपमाणं ध्रुवहारसंवग्गो ॥३८९॥

भवत्यनंतैकभागस्तद्गुणकारोपि देशावधेद्विरूपोनद्रव्यभेदप्रमाणध्रुवहारसंवर्गः ॥

ध्रुवहारप्रमाणं सिद्धान्तैकभागप्रमाणमात्रमादोडमवधिविषयसमयप्रबद्धनिश्चयनिमित्तं
काम्मणवर्गणागुणकारमं नोडलु तु मत्ते अनंतैकभागमक्कुमा काम्मणवर्गणागुणकारमुं देशावधि-
ज्ञानद्विरूपोनद्रव्यविकल्पप्रमितध्रुवहारंगळ संवर्गमक्कुमा देशावधिज्ञानद्रव्यविकल्पंगळेनिते दोडे
१५ पेळल्पडुगु ।

देशावधिद्रव्यविकल्पपरचनेयोळ त्रिचरमदेशावधिद्रव्यविकल्पदोळ गुण्यरूपकाम्मणवर्गणेगे

मनोद्रव्यवर्गणाजघन्यं अनन्तो भवति । तदनन्तैकभागेनाधिकमुत्कृष्टं भवति इत्येवमुक्तीत्या मनोद्रव्य-

ज

वर्गणाविकल्पानामनन्तैकभागः ख ख अवधिविषयद्रव्यविकल्पेषु ध्रुवहारप्रमाणं ज्ञातव्यम् । अथवा—

ध्रुवहारप्रमाणं सिद्धान्तैकभागमात्रमपि अवधिविषयसमयप्रबद्धप्रमाणमानेतुं उक्तस्य काम्मणवर्गणा-

२० गुणकारस्य अनन्तैकभागमात्रं स्यात् । स च गुणकारोऽपि कियान् ! देशावधिज्ञानस्य द्विरूपोनद्रव्यभेदमात्र-

मनोवर्गणाका जघन्य भेद अनन्त प्रमाण है । अर्थात् अनन्त परमाणुओंके स्कन्ध-
रूप जघन्य मनोवर्गणा है । उसमें अनन्तका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे, उसे उस जघन्य
भेदमें जोड़नेपर उसीके उत्कृष्ट भेदका प्रमाण होता है । इस प्रकार मनोद्रव्य वर्गणाके
विकल्पोंके अनन्तवें भाग अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्योंके विकल्पोंमें ध्रुवहारका प्रमाण
२५ है ॥३८७॥

यद्यपि ध्रुवहारका प्रमाण सिद्ध राशिके अनन्तवें भाग है, किन्तु अवधिज्ञानके
विषयभूत समयप्रबद्धका प्रमाण लानेके लिए पहले कहे काम्मणवर्गणाके गुणकारका अनन्तवाँ
भाग है । और वह गुणकार देशावधिज्ञानके द्रव्यकी अपेक्षा भेदोंमें दो घटाकर जो प्रमाण
शेष रहे, उतनी जगह ध्रुवहारोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो, उतना है ।

१० इतना प्रमाण कैसे कहा, सो कहते हैं—देशावधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यकी रचनामें उत्कृष्ट

पोक्क ध्रुवहारगुणकारमोदु तदनंतराधस्तनविकल्पदोळेरडु ध्रुवहारगुणकारंगळप्पुवी क्रमदिवमिळि-
दिळिदु देशावधिजघन्यद्रव्यपय्यंतमविच्छिन्नरूपदिनेकाद्येकोत्तरक्रमदिवं पोक्क ध्रुवहारगुणकारंगळु
सर्वजघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यविकल्पदल्लि कार्मणवर्गणगे पोक्क ध्रुवहारगुणकारंगळनि-
तप्पुवेदोडे देशावधिद्रव्यसर्वविकल्पसंख्येयोळु ॥—६।२ द्विरूपहीनमात्रंगळप्पुवु संदृष्टि—

व अवन्तुमं परस्परसंवर्गं माडिदोडे गुण्यरूपकार्मणवर्गणये गुणकारप्रमाण-

९
व
व ९
व ९ ९
व ९ ९ ९
व ९ ९ ९ ९
० ०
० २
०
व ॥६।२९

० ०

मक्कुमी कार्मणवर्गणागुणकारदनंतैकभागं ध्रुवहारप्रमाणमेबुदर्थमा गुण्यरूपकार्मणवर्गणयेमुसमी
कार्मणवर्गणागुणकारमुमं गुणिसुत्तिरलु जघन्यदेशावधिज्ञानविषयत्वादि पेळल्पट्ट नोकम्मोदारिक-

ध्रुवहारसंवर्गमात्रः स्यात् । कुतः ? तद्द्रव्यरचनायामस्यां—

व त्रिचरमविकल्पादेकाद्येकोत्तरक्रमेण अधोऽधो गत्वा प्रथमविकल्पे कार्मणवर्गणायाः तावतां ध्रुवहाराणां

९
व
व ९
व ९ ९
व ९ ९ ९
व ९ ९ ९ ९
०
० ०
० १— २
व ॥—६।२९
१ ०
०

गुणकारत्वेन सद्भावात् । गुण्यगुणकारे गुणिते प्रागुक्तो लोकविभक्तैकखण्डमात्रनोकर्मोदारिकसंचय एव १०

अन्तिम भेदका विषय कार्मणवर्गणामें एक बार ध्रुवहारका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे,
उतना है । उसके नीचे द्विचरम भेदका विषय कार्मणवर्गणा प्रमाण है । उनके नीचे त्रिचरम
भेदका विषय कार्मणवर्गणाको एक बार ध्रुवहारसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतना है ।
उसके नीचे चतुर्थ चरम भेदका विषय दो बार ध्रुवहारसे कार्मणवर्गणाको गुणा करनेपर जो
प्रमाण हो, उतना है । इस प्रकार एक बार अधिक ध्रुवहारसे कार्मणवर्गणाको गुणा करते-करते १५
दो कम देशावधिके द्रव्यभेद प्रमाण ध्रुवहारोंको परस्परमें गुणा करनेसे जो गुणाकारका प्रमाण
हुआ, उससे कार्मणवर्गणाको गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है, वही जघन्य देशावधिज्ञानके

संचयलोकविभवतैलंडप्रमाणमेयवकुमेदु निश्चयिसुबुदु स ० १२—१६ ख इन्तु देशावधिविषय-

सर्वद्रव्यविकल्पंगळनिते दोडे पेळदपं :—

अंगुल असंखगुणिदा खेत्तवियप्पा य दव्वभेदा हु ।

खेत्तवियप्पा अवरुक्कस्सविसेसं हवे एत्थ ॥३९०॥

५ अंगुलासंख्यातगुणिताः क्षेत्रविकल्पाश्च द्रव्यभेदाः खलु । क्षेत्रविकल्पा अवरोत्कृष्टविशेषो भवेदत्र ।

सूच्यंगुलासंख्यातैकभागगुणितक्षेत्रविकल्पंगळु देशावधिज्ञानविषयसर्वद्रव्यभेदंगळप्पुवु । खलु स्फुटमाणि । अंतादोडा क्षेत्रविकल्पंगळतामनिते दोडे अत्र इल्लि अवधिविषयदोळु क्षेत्रविकल्पाः क्षेत्रविकल्पंगळु अवरोत्कृष्टविशेषो भवेत् । जघन्यदेशावधिज्ञानविषय सूक्ष्मनिगोदलः ध्यपय्यामक-

१० जघन्यावगाहप्रमितजघन्यक्षेत्रमनिद ६ । ८ । २२ नपर्वत्तितमं घनांगुलासंख्या-

५ १९ । ८९ । ८ । २२ । ७९

० ० ०

तैकभागमात्रम ६ नुत्तुक्कदेशावधिज्ञानविषयक्षेत्रलोकप्रमित ॥ मदरोळ्ळुदुळिदुवेनितोळवनि-

प

०

तेयप्पुवु ॥ ६ इव सूच्यंगुलासंख्यातदिदं गुणिसिलब्धराशियोळेकरूपं कूडुत्तिरलु देशावधिद्रव्य-

प

०

विकल्पं गळप्पुवु ॥ - ६ । २ एकदोडे देशावधि जघन्यद्रव्य विकल्पं मोदल्लोडु ध्रुवहारभक्तै-

प

०

स्यात् ।—स ० १२—१६ ख ३।८ ॥३८९॥ देशावधिद्रव्यविकल्पान् प्रमाणयति—

॥

१५ सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागगुणितदेशावधिविषयसर्वक्षेत्रविकल्पाः खलु तद्विषयद्रव्यविकल्पा भवन्ति, ते च क्षेत्रविकल्पाः अत्र देशावधिविषये अवरे जघन्यक्षेत्रे ६ तद्विषयोत्कृष्टक्षेत्रे ॥ विशोधिते शेषमात्रा भवन्ति ॥—६

प

०

प

०

विषयभूत द्रव्यका प्रमाण है जो लोकसे भाजित नो कर्म औदारिक शरीरका संचय प्रमाण है ।

विशेषार्थ—यहाँ उत्कृष्ट भेदसे लेकर जघन्य भेद पर्यन्त रचना कही है, इससे इस प्रकार गुणाकारका प्रमाण कहा है । यदि जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट भेदपर्यन्त रचनाकी जावे, तो क्रमसे ध्रुवहारका भाग देते जाइए । अन्तिम भेदमें कर्मणवर्गणाको एक बार ध्रुवहारसे भाग देनेपर द्रव्यका प्रमाण आ जाता है ॥३८८-३८९॥

२०

अब देशावधिके द्रव्यकी अपेक्षा विकल्प कहते हैं—

देशावधिके विषयभूत क्षेत्रकी अपेक्षा जितने विकल्प हैं, उनको सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर देशावधिके विषयभूत द्रव्यकी अपेक्षा भेद होते हैं ।

कैकभागमात्रद्रव्यविकल्पंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडेनडदेकैकप्रदेशक्षेत्रवृद्धियागुत्तं पोगियुत्कृष्टदेशावधिय सर्वोत्कृष्टद्रव्यक्षेत्रविकल्पं पुट्टिदागळु तदुत्कृष्टक्षेत्रं संपूर्णलोकमादुदु कारण- विदं । आदिक्षेत्रमनंत्यक्षेत्रदोळकळेदु सूच्यंगुलासंख्यातविदं गुणिसि लब्धदोळोदु रूपं कूडिदोडे देशावधिज्ञानविकल्पंगळु द्रव्यविकल्पंगळुमण्णुविवक्कंकसंहृष्टिदेशावधियुत्कृष्टद्रव्यक्षेत्रंगळु इल्लि जघन्यक्षेत्रमनुत्कृष्टक्षेत्रदोळकळेदु शेषम ४ नंगुलासंख्यातकांडकमेर-

४	८
२	७
४	
४२	७
४२२	६
४२२२	६
४२२२२	५
४२२२२२	५
४२२२२२२	४
४२२२२२२२	४
द्रव्य	क्षेत्र

डरिदं गुणिसि एकरूपं कूडिदोडे— ४।२ देशावधिसर्वद्रव्यविकल्पंगळुपुवु । १। 'आदी अंते मुद्धे वडिदहिदे रुवसंजुदे ठाणा' । विदी स्थानविकल्पमं साधिसुव करणसूत्रक्के व्याख्यानं विरोध- मागि बक्कुमे देनल्वेडेके दोडिल्लि चशब्दमनर्थकवचनमण्णुदरिनल्लि किचिदिष्टज्ञापनमक्कुमदे- तेदोडे ग्रंथकारं 'खेत्तवियप्पा अवहक्कस्सविसेसं हवे एत्थ' एदु जघन्योत्कृष्टंगळं शेषेभुत्तिरलल्लि क्षेत्रविकल्पंगळेदु पेळ्ळदोडिल्लि कूडुक्केरूपं बेरिरिसि सूच्यंगुलासंख्यातविदं गुणिसि लब्धदोळारूपं कूडिदोडे द्रव्यविकल्पंगळ प्रमाणमण्णुदे वो विशेषसचकमक्कु ।

रूपयुतक्षेत्रविकल्पंगळं सूच्यंगुलासंख्यातविदं गुणिसिदोडे दृष्टेष्टविरोधमक्कुमदेतेदोडे

अंकसंदृष्टियोळु रूपयुतक्षेत्रविकल्पंगळय्दु ४ इवं कांडकमण्णेरडरिदं गुणिसिदोडे पत्तु १० । इवु

एते एव सूच्यङ्गुलासंख्यातेन गुणयित्वा एकरूपयुताः देशावधिसर्वद्रव्यविकल्पाः स्युः ३-६ । २ कुतः ?

जघन्यद्रव्यं ध्रुवहारेण भक्त्वा भक्त्वा सूच्यङ्गुलासंख्येयभागमात्रद्रव्यविकल्पेषु गतेषु जघन्यक्षेत्रस्योपर्येकप्रदेशो

और वे क्षेत्रकी अपेक्षा विकल्प इस प्रकार हैं—देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रमें जघन्य क्षेत्रको घटानेपर जो प्रदेशका प्रमाण शेष रहता है, उतने क्षेत्रकी अपेक्षा विकल्प हैं । उनको ही सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करके एक जोड़नेपर देशावधिके द्रव्यकी अपेक्षा विकल्प होते हैं । वह कैसे यह कहते हैं—जघन्य द्रव्यको ध्रुवहारसे भाग देते-देते सूच्यंगुल- के असंख्यातवें भाग मात्र द्रव्यके भेद बीतनेपर जघन्य क्षेत्रके ऊपर एक प्रदेश बढ़ता है । इसी प्रकार लोकप्रमाण उत्कृष्ट देशावधिके पर्यन्त जानना । इसका आशय यह है कि सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागपर्यन्त द्रव्यके विकल्प होने तक क्षेत्र वही रहता है जो जघन्य भेदका विषय था । इतने विकल्प बीतनेपर क्षेत्रमें एक प्रदेशकी वृद्धि होती है । पुनः सूच्यंगुलके असंख्यातवें

- द्रव्यविकल्पंगळल्लु द्विरूपहोनद्रव्यविकल्पमात्रध्रुवहारसंवर्गमे वर्गणागुणकारमे बल्लि येळु मावे टक्के प्रसंगमक्कुमंतुमल्लदेयुं रूपयुतमल्लव क्षेत्रविकल्पमं । ४ । कांडकदिदं गुणिसि लब्धदोळेकरूपं कूडिदोडे । ४ । २ । अदु देशावधिद्रव्यविकल्पप्रमाणमल्लु । द्विरूपोनद्रव्यविकल्पमात्र ध्रुवहारसंवर्गमे वर्गणागुणकारमे बल्लि एळुमादारक्के प्रसंगमक्कुमपुदरिदमन्तुमल्लु वृष्टिविरोधमुमागम-
- ५ विरोधमुमपुदरिदं रूपयुतमल्लव क्षेत्रविकल्पमं कांडकदिदं गुणिसि लब्धदोळोडु रूपं कूडिदोडे देशावधिद्रव्यविकल्पमो भत्तेयपुविदुनिर्बाधबोधविषयमक्कुं । अंतादोडा जघन्योत्कृष्टदेशावधिज्ञानविषयजघन्योत्कृष्टक्षेत्रविकल्पंगळावुर्व दोडे पेळवपं ।

अंगुलअसंखभागं अवरं उक्कस्सयं हवे लोगो ।

इदि वर्गणगुणगारो असंख ध्रुवहारसंवर्गो ॥३९१॥

- १० अंगुलासंख्यातभागोऽवरः उत्कृष्टो भवेल्लोकः । इतिवर्गणागुणकारोऽसंख्यध्रुवहारसंवर्गः । अंगुलासंख्यातभागः मुपेळद घनांगुलासंख्यातैकभागमप्य लब्ध्यपर्याप्तकजघन्यावगाहप्रमाणमे अवरः जघन्यक्षेत्रविकल्पप्रमाणमक्कुमुत्कृष्टो भवेल्लोकः । उत्कृष्टक्षेत्रविकल्पं संपूर्णलोकप्रमाणमक्कु- । मितु वर्गणागुणकारमसंख्य ध्रुवहारसंवर्गप्रमितमक्कुं । द्विरूपोनदेशावधिज्ञानविषयसर्वद्रव्यविकल्प प्रमित ध्रुवहारसंवर्गजनितलब्धप्रमितं वर्गणागुणकारप्रमाणमे बुदत्थं ।

- १५ वर्धते अनेन क्रमेण लोकमात्रक्षेत्रोत्पत्तिपर्यन्तं गमनिकासद्भावात् अवशिष्टप्रथमद्रव्यविकल्पस्य पश्चात्त्रि-
क्षेपात् ॥३९०॥ ते जघन्योत्कृष्टक्षेत्रे संख्याति—

अवरं जघन्यदेशावधिषयक्षेत्रं सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकजघन्यावगाहप्रमाणमिदं-

६ । ८ । २२

० १-

५ १९ । ८ । ९ । ८ । २२ । १ । ९

० ० ०

अपवर्तितं घनाङ्गुलासंख्यातभागमात्रं भवति ६ उत्कृष्टं लोकः जगच्छ्रेणिघनो भवति इत्येवं द्विरूपोनदेशावधि-

५

०

- २० सर्वद्रव्यविकल्पमात्रासंख्यध्रुवहारसंवर्ग एव कार्मणवर्गणागुणकारः स्यात् ॥३९१॥ अथ क्रमप्राप्तं वर्गणा-
प्रमाणमाह—

- भाग द्रव्यके विकल्प होने तक क्षेत्र एक प्रदेश अधिक उतना ही रहता है । उसके पश्चात् क्षेत्रमें पुनः एक प्रदेश बढ़ता है । इस तरह प्रत्येक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग द्रव्यके विकल्प होनेपर क्षेत्रमें एक-एक प्रदेशकी वृद्धि उत्कृष्ट क्षेत्र लोक पर्यन्त प्राप्त होने तक होती है । इसीसे क्षेत्रकी अपेक्षा विकल्पोंकी सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर द्रव्यकी अपेक्षा विकल्प कहे हैं । इनमें पहला द्रव्यका भेद पीछेसे मिलाया, वह अवशेष था, अतः एकाको मिलाना कहा ॥३९०॥

अब देशावधिके उन जघन्य और उत्कृष्ट क्षेत्रोंको कहते हैं—

जघन्य देशावधिका विषयभूत क्षेत्र सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना

- ३० प्रमाण घनांगुलका असंख्यातवें भाग मात्र होता है । उत्कृष्ट क्षेत्र जगत् श्रेणिका घनरूप लोक-प्रमाण है । इस प्रकार देशावधिके समस्त द्रव्यकी अपेक्षा विकल्पोंमें दो कम करके

वर्गणराशिप्रमाणं सिद्धाणंतिमप्रमाणमेतंपि ।

दुग्गसहियपरमभेदप्रमाणवहाराणसंवर्गो ॥३९२॥

वर्गणराशिप्रमाणं सिद्धान्तैकभागप्रमाणमात्रमपि । द्विकसहितपरमभेदप्रमाणावहाराणां संवर्गः ॥

वर्गणराशिप्रमाणं इन्ता कार्मणं वर्गणराशिप्रमाणं ताने तुटे दोडे सिद्धान्तैकभागप्रमाण-
मात्रमपि सिद्धराश्यनंतैकभागप्रमाणमप्युदंतादोडं द्विकसहितपरमभेदप्रमाणावहाराणां संवर्गः
द्विरूपयुक्तपरमावधिज्ञानसर्वविकल्पंगळनितु ध्रुवहारंगळ संवर्गसंजनितलब्धप्रमितमकुमंतादोडा
परमावधिज्ञानविकल्पंगळतावेनिते दोडे पेळदपं :—

परमावहिस्स भेदा सगओगाहणवियप्पहदतेऊ ।

इदि ध्रुवहारं वर्गणगुणहारं वर्गणं जाणे ॥३९३॥

परमावधेभेदाः स्वावगाहनविकल्पहततैजसाः । इति ध्रुवहारं वर्गणागुणकारं वर्गणां जानीहि ॥

परमावधेभेदाः परमावधिज्ञानविकल्पंगळं स्वावगाहनविकल्पहततैजसाः मुन्नं जीवसमासा-
धिकारदोळेळपट्ट स्वकीयावगाहनविकल्पंगळिदं गुणिसलपट्ट तेजस्कायिकजीवंगळ संख्यातराशिगु
तदवगाहनविकल्पंगळोळु सर्वजघन्यावगाहनमिदु ६।८।२२ तदुत्कृष्टा-

५१९।७।८।२२।१९
० ० ०

कार्मणवर्गणराशिप्रमाणं सिद्धराश्यनंतैकभागमात्रमपि द्विरूपाधिकपरमावधिसर्वभेदमात्रध्रुवहार-
संवर्गमात्रं स्यात् व ॥३९२॥ ते भेदाः कति ? इति चेदाह—

परमावधिज्ञानस्य भेदा तेजस्कायिकावगाहनविकल्पैर्गुणिततेजस्कायिकजीवराशिः ० मात्रा भवन्ति

०।६।०।ते अवगाहनविकल्पाः प्राग्मत्स्यरचनायां तज्जघन्यमिदं ६।८।२२

प

०

५१९।८।७।८।२२१९।

० ० ०

उतनी बार ध्रुवहारोंको परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है, वही कार्मण वर्गणाका गुणकार होता है ॥३९१॥

अब क्रमानुसार वर्गणाका प्रमाण कहते हैं—

कार्मण वर्गणा राशिका प्रमाण सिद्ध राशिके अनन्तवें भाग है, तथापि परमावधिके समस्त भेदोंमें दो मिलानेपर जितना प्रमाण हो, उतनी बार ध्रुवहारोंको परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतना है ॥३९२॥

वे परमावधिके भेद कितने हैं, वह कहते हैं—

तैजस्कायिककी अवगाहनाके विकल्पोंसे तैजस्कायिक जीवराशिको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतने परमावधिके भेद हैं । तथा अग्निकायिककी जघन्य अवगाहनाके प्रमाण-

५

१०

१५

२०

२५

वगाहमिदु ६।८।८

आदी अंते सुद्धे इत्यादि सूत्राभिप्रायदिदं तरल्पदृष्टवर्तितलब्धाव-

$$\begin{array}{c} \text{०} \quad \text{०} \\ \text{प} \quad ६ \quad ८ \quad ८ \quad १९ \\ \text{०} \quad \text{०} \end{array}$$

गाहविकल्पंगळिनितप्पुवु

$$\begin{array}{c} \text{६} \quad \text{०} \\ \text{प} \\ \text{०} \end{array} \text{ ई तेजस्कायिक सर्वावगाहनविकल्पराराशियिदं गुणिसुत्तिरलावु-}$$

$$\text{दो दु लब्धं तल्लब्धमात्रं परमावधिज्ञानविकल्पंगळप्पुवु} \equiv \begin{array}{c} \text{६} \quad \text{०} \\ \text{प} \\ \text{०} \end{array} \text{ ई परमावधिज्ञानविकल्पराराशियं}$$

द्विरूपयुक्तं माडि विरलिसि प्रतिरूपं ध्रुवहारमनित्तु वर्गितसंश्रमं माडुत्तिरलु आवुदो दु लब्धमदु
५ कान्मर्णवर्गणाराशियक्कुं । व । इदि इंतु ध्रुवहारप्रमाणमुं वर्गणागुणकारप्रमाणमुं वर्गणाप्रमाणमुं
व्यक्तमागि भूसं राशियळुं पेळल्पदुववं नोनु जानीहि अरिये दु शिष्यसंबोधनं माडल्पदुदु ।

देसोहि अवरदन्वं ध्रुवहारेणवहिदे हवे विदियं ।

तदियादिवियप्पेसु वि असंखवारोत्ति एस कमो ॥३९४॥

१० देशावधेरवरद्वयं ध्रुवहारेणापहृते भवेद्वितीयं । तृतीयादिविकल्पेष्वापि असंख्यवारपय्यंत-

देशावधिज्ञानविषयजघन्यद्रव्यं स ० १ २ । १ ६ ख ध्रुवभागहारदिदं भागिसिदेक-

भागं देशावधिज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमक्कुं स ० ० १ २ । १ ६ ख तृतीयविकल्पंगळोळमी

तदुत्कृष्टे ६।८।८

विशोध्य शेषमपवर्त्य $\begin{array}{c} \text{६} \quad \text{०} \\ \text{प} \\ \text{०} \end{array}$ एकरूपे निक्षिप्ते एतावन्तः $\begin{array}{c} \text{६} \quad \text{०} \\ \text{प} \\ \text{०} \end{array}$ इत्येवं

$$\begin{array}{c} \text{०} \quad \text{०} \\ \text{प} \quad ६ \quad ८ \quad ८ \quad १९ \\ \text{०} \quad \text{०} \end{array}$$

ध्रुवहारप्रमाणं वर्गणागुणकारप्रमाणं वर्गणाप्रमाणं च जानीहि ॥३९३॥

१५ यत्प्रागुक्तं देशावधिज्ञानविषयजघन्यद्रव्यं-स ० १ २-१ ६ ख । ध्रुवहारेण एकेन भक्तं द्वितीयदेशावधि-

को अग्निकायिकी उत्कृष्ट अवगाहनाके प्रमाणमें-से घटाकर जो शेष बचे, उसमें एक जोड़ने-पर अग्निकायिकी अवगाहनाके भेद होते हैं । इस प्रकार ध्रुवहारका प्रमाण, वर्गणाके गुणकारका प्रमाण और वर्गणाका प्रमाण जानना ॥३९३॥

जो देशावधिज्ञानका विषय जघन्य द्रव्य पहले कहा था, उसकी ध्रुवहारसे एक बार
२० भाग देनेपर देशावधिके दूसरे भेदका विषयभूत द्रव्य होता है । इसी प्रकार ध्रुवहारका

क्रमदिदमसंख्यातवारंगळरियत्पडुवुवु । इंतसंख्यातवारं ध्रुवहारभवतैकैकभागंगळागुत्तं पोपुवंतु
पोगल्के :—

देसोहिमज्झभेदे सविस्ससोपचयतेजकम्मंगं ।

तेजोभासमणाणं वग्गणयं केवलं जत्थ ॥३९५॥

देशावधिमध्यभेदे सविस्ससोपचयतेजः कार्म्मणां । तेजोभाषामनसां वर्गणां केवलां यत्र ॥ ५

पस्सदि ओही तत्थ असंखेज्जाओ हवंति दीउवही ।

वासाणि असंखेज्जा होंति असंखेज्जगुणितकमा ॥३९६॥

पश्यत्यवधिस्तत्रासंख्येया भवन्ति द्वीपोदधयः । वर्षाण्यसंख्येयानि भवंत्यसंख्येयगुणित-
क्रमाणि ॥

देशावधिमध्यभेदे देशावधिज्ञानमध्यमविकल्पदोळु यत्र आवुदानुमो देडेयोळु विस्ससोपचय- १०
सहितमप्प तैजसशरीरस्कंधमुमं कार्म्मणशरीरस्कंधमुमं विस्ससोपचयरहित केवलं तैजसवर्गणयुमं
भाषावर्गणयुमं मनोवर्गणयुमं पश्यत्यवधिः अवधिज्ञानं प्रत्यक्षमागरिदुमा येडेगळोळु क्षेत्रंगळ-
संख्यातद्वीपोदधिगळपुवु । कालंगळुमा येडेगळोळु असंख्यातवर्षंगळपुवु । द्वीपोदधिगळुं वर्षंगळुम-
संख्यातंगळागुत्तमुं तैजसशरीरस्कंधस्थानं मोदल्गो डुत्तरोत्तरंगळसंख्यातगुणितक्रमंगळुमपुवु ।

तत्तो कम्मइयस्सिगिसमयपबद्धं विविस्ससोपचयं ।

१५

ध्रुवहारस्स विभज्जं सव्वोही जाव ताव हवे ॥३९७॥

ततः कार्म्मणस्यैकसमयप्रबद्धं विविस्ससोपचयं । ध्रुवहारस्य विभाज्यं सर्वाविधिर्यावत्ता-
वद्भवेत् ॥

विषयद्रव्यं भवति—स ७ १२-१६ ख । एवं तृतीयादिविकल्पेष्वपि असंख्यातवारपर्यन्तमेव एव क्रमः

≡ ९

कर्तव्यः ॥३९४॥ तथा सति किं स्यादिति चेदाह—

२०

देशावधिज्ञानमध्यमविकल्पेषु यत्र सविस्ससोपचयं तैजसशरीरस्कन्धं तदग्रे यत्र तादृशं कार्म्मणशरीर-
स्कन्धं तदग्रे यत्र केवलां विविस्सोपचयां तैजसवर्गणां तदग्रे यत्र केवलां भाषावर्गणां तदग्रे केवलां मनोवर्गणां
च अवधिज्ञानं जानाति । तत्र पञ्चसु स्थानेषु क्षेत्राणि असंख्यातद्वीपोदधयः काला असंख्यातवर्षाणि च भवन्ति
तथापि उत्तरोत्तरासंख्यातगुणितक्रमाणि ॥३९५-३९६॥

भाग दूसरे भेदके विषयभूत द्रव्यमें देनेपर तीसरे भेदके विषयभूत द्रव्यका प्रमाण आता है । २५
ऐसा ही क्रम असंख्यात बार पर्यन्त करना चाहिए ॥३९४॥

ऐसा करनेसे क्या होता है यह कहते हैं—

देशावधिज्ञानके मध्यम भेदोंमेंसे जहाँ देशावधिज्ञान विस्ससोपचय सहित तैजस-
शरीररूप स्कन्धको जानता है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचय सहित कार्म्मणस्कन्धको जानता
है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचय रहित तैजस वर्गणाको जानता है, उससे आगे जहाँ १०
विस्ससोपचय रहित भाषावर्गणाको जानता है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचयरहित
मनोवर्गणाको जानता है, वहाँ इन पाँचों स्थानोंमें क्षेत्र असंख्यात द्वीप समुद्र और काल
असंख्यात वर्ष होता है । तथापि उत्तरोत्तर असंख्यात गुणितक्रम होता है । अर्थात् पहलेसे

ततः पश्चात् बलिकमा मनोवर्गणाय ध्रुवहारदिदं भागिसुत पोगलु केवलं विस्त्रसोपचय-
रहितमप्य कार्मणैकसमयप्रबद्धमावुदो देडयोळपुट्टुगुमल्लिदत्तला कार्मणसमयप्रबद्धं ध्रुवहारवके
भाज्यराशियक्कुमन्नेवरमे दोडे सर्वाविधिज्ञानमेन्नेवरमन्नेवरं ।

एदम्मि विभज्जंते दुचरिमदेसावहिम्मि वग्गणयं ।

चरिमे कम्मइयस्सिगिवग्गणमिगिवारभजिदं तु ॥३९८॥

एतस्मिन् विभाज्यंते द्विचरमदेशावधौ वग्गणां । चरमे कार्मणस्यैकवर्गणामेकवारभक्तां तु ।

ई कार्मणसमयप्रबद्ध दोळु सर्वाविधिपर्यंतमवस्थितभाज्यदोळु ध्रुवहार पुगुत्तं पोगलु
द्विचरमदेशावधियोळु कार्मणवर्गणैकवक्कुमा कार्मणवर्गणायं तु सत्ते एकवार भक्तां ओंदु बारि
ध्रुवहारभक्तलब्धमात्रमं चरमे कडेयोळु सर्वोत्कृष्टदेशावधिज्ञानं पश्यति प्रत्यक्षमागि काणुमरिगुं ।

अंगुल असंखभागे दव्ववियप्पे गदे दु खेत्तम्मि ।

एगागासपदेसो वड्ढदि संपुण्णलोगोत्ति ॥३९९॥

अंगुलाऽसंख्यभागे द्रव्यविकल्पे गते तु पुनः क्षेत्रे । एकाकाशप्रदेशो वर्द्धते संपूर्णलोकपर्यंतं ।

सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रद्रव्यविकल्पंगळु सलुत्तं विरळु क्षेत्रदोळेकाकाशप्रदेशं पेच्चुंगुमी
प्रकारदिदमे सर्वोत्कृष्टदेशावधिज्ञानविषयं सर्वोत्कृष्टक्षेत्रं संपूर्णलोकमवकुमेन्नवरमन्नेवरं पेच्चुंगुं ।

आवलि असंखभागो जहण्णकालो कमेण समयेण ।

वड्ढदि देसोहिवरं पल्लं समऊणयं जाव ॥४००॥

आवलयसंख्येयभागो जघन्यकालः क्रमेण समयेन वर्द्धते । देशावधिवरः पत्यं समयोनं
यावत् ।

ततः पश्चात् तां मनोवर्गणां ध्रुवहारेण पुनः पुनर्भक्त्वा यत्र विकल्पे विविस्त्रसोपचयः कार्मणैकसमय-

प्रबद्ध उत्पद्यते, तत उपरि स एव ध्रुवहारस्य भाज्यं भवेत् यावत्सर्वाविधिज्ञानं तावत् ॥३९७॥

एतस्मिन् कार्मणसमयप्रबद्धे विभज्यमाने सति द्विचरमे देशावधिविकल्पे कार्मणवर्गणैवावशिष्यते, तु-
पुनः, चरमे ध्रुवहारेण एकवारभक्ताव अवशिष्यते ॥३९८॥

सूच्यङ्गुलासंख्येयभागमात्रेषु द्रव्यविकल्पेषु गतेषु जघन्यक्षेत्रस्योपर्येकाकाशप्रदेशो वर्द्धते इत्ययं क्रमः
तावद्विधेयः यावत् सर्वोत्कृष्टदेशावधिविषयक्षेत्रं सम्पूर्णलोको भवति ॥३९९॥

दूसरे, दूसरेसे तीसरे, तीसरेसे चौथे और चौथेसे पाँचवें भेद सम्बन्धी क्षेत्र, कालका परिमाण
असंख्यात गुणा है ॥३९५-३९६॥

उसके पश्चात् उस मनोवर्गणाको ध्रुवहारसे बार-बार भाजित करते-करते जिस भेदमें
विस्त्रसोपचयरहित कार्मणशरीरका एक समयप्रबद्ध उत्पन्न होता है । उसीमें आगे भी
ध्रुवहारका भाग तबतक दिया जाता है जबतक सर्वाविधिज्ञानका विषय आता है ॥३९७॥

इस कार्मण समयप्रबद्धमें ध्रुवहारसे भाग देनेपर देशावधिके द्विचरम भेदमें
कार्मणवर्गणारूप द्रव्य उसका विषय होता है । और अन्तिम भेदमें ध्रुवहारसे एक बार
भाजित कार्मणवर्गणा द्रव्य होता है ॥३९८॥

सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यकी अपेक्षा भेदोंके होनेपर जघन्य क्षेत्रके ऊपर
एक आकाशका प्रदेश बढ़ता है । यह क्रम तबतक करना; जबतक सर्वोत्कृष्ट देशावधिज्ञानका

विषयभूत क्षेत्र सम्पूर्ण लोक हो ॥३९९॥

जघन्यदेशावधिज्ञानविषयमप्य जघन्यकालमावत्यसंख्येयभागमात्रमक्कु ८ सो जघन्यकालं

४

क्रमदिद मेकैकसमयदिदं पेच्चुत्तं पोकुमेन्नेवरं मुत्तुकृष्टदेशावधिज्ञानविषयमप्य कालं समयोनपत्यमात्र-
मक्कुमेन्नेवरं । ५-१ । इल्लि जघन्यकालद मेलेकैकसमयवृद्धिक्रममं तोरिदपं ।

अंगुल असंखभागं ध्रुवरूपेण य असंख वारं तु ।

असंखसंख भागं असंखवारं तु अध्रुवगे ॥४०१॥

५

ध्रुवअध्रुवरूपेण य अवरे खेत्तम्मि वडिट्टदे खेत्ते ।

अवरे कालम्मि पुणो एक्केक्कं वडिट्टदे समयं ॥४०२॥

अंगुलासंखभागं ध्रुवरूपेण च असंखवारं तु । असंखसंखभागं असंखवारं तु अध्रुवके ।

ध्रुवाध्रुवरूपेणावरे क्षेत्रे वडित्ते क्षेत्रे । अवरस्मिन् काले पुनरेकैको वडित्ते समयः ।

मुंदे वक्ष्यमाणकांडकंगळं कटाक्षिसि कालवृद्धिविशेषमं ध्रुवाध्रुवरूपदिदं पेच्छदपना कांडकंग- १०

ळोळगे सोदल कांडकदोळु अंगुलासंखभागं ध्रुवरूपेण च घनांगुलासंख्यातैकभागमात्रप्रदेशंगळु
ध्रुवरूपदिदं जघन्यक्षेत्रद मेले क्रमदिदं पेच्चि पेच्चि जघन्यकालद मेलोदोदु समयं पेच्चुत्तं पेच्चुत्तं
प्रथमकांडकचरमविकल्पपर्यंतं असंखवारं तु असंख्यातवारं पेच्चिदोडे असंख्यातसमयंगळु पेच्चुगु-
मदेतेदोडे प्रथमकांडकदोळु जघन्यक्षेत्रमिदु ६ तत्कांडकोत्कृष्टक्षेत्रमिदु ६ आदियनंतदोळु

४

७

कळेदाडा शेषमा कांडकदोळु जघन्यक्षेत्रदमेले पेच्चिद प्रदेशंगळ प्रमाणंगळपुवु ६०-७ सत्तमाकां- १५

७३

जघन्यदेशावधिविषयकालः आवत्यसंख्येयभागः ८ सोऽयं क्रमेण ध्रुवाध्रुववृद्धिरूपेण एकैकसमयेन

४

तावद्वर्धते यावदुत्कृष्टदेशावधिविषयः समयोनं पत्यं भवेत् ५-१ ॥४००॥ अथ तावेव क्रमो एकात्रविंशति-
काण्डकेषु वस्तुमनास्तावत्प्रथमकाण्डके गाथासार्धद्वयेनाह—

घनाङ्गुलासंख्यातैकभागं आवलिभक्तघनाङ्गुलमात्रं ध्रुवरूपेण वृद्धिप्रमाणं स्यात् सा च वृद्धिः

जघन्य देशावधिका विषयभूत काल आवलीका असंख्यातवाँ भाग है । यह क्रमसे २०
ध्रुववृद्धि और अध्रुववृद्धिके रूपसे एक-एक समय करके तबतक बढ़ता है जबतक उत्कृष्ट
देशावधिका विषय एक समय कम पत्य होता है ॥४००॥

आगे क्षेत्र और कालका क्रम उन्नीस काण्डकोंमें कहनेकी भावनासे शास्त्रकार प्रथम
काण्डकको अढ़ाई गाथासे कहते हैं—

घनांगुलको आवलीसे भाग देनेपर घनांगुलका असंख्यातवाँ भाग होता है । उतना ही २५
ध्रुवरूपसे वृद्धिका प्रमाण होता है । यह वृद्धि प्रथमकाण्डके अन्तिम भेद पर्यन्त असंख्यातवार
होती है । पुनः उसी प्रथम काण्डकमें अध्रुववृद्धिकी विवक्षा होनेपर उस वृद्धिका प्रमाण
घनांगुलका असंख्यातवाँ भाग और संख्यातवाँ भाग होता है । अध्रुव वृद्धि भी प्रथम
काण्डकके अन्तिम भेद पर्यन्त असंख्यातवार होती है ॥४०१॥

उक्त ध्रुववृद्धिके प्रमाणसे या अध्रुववृद्धिके प्रमाणसे जघन्य देशावधिके विषयभूत ३०
क्षेत्रके ऊपर क्षेत्रके बढ़नेपर जघन्यकालके ऊपर एक-एक समय बढ़ता है ।

विशेषार्थ—पहले कहा था कि द्रव्यकी अपेक्षा सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग भेद
बीतनेपर क्षेत्रमें एक प्रदेश बढ़ता है । यहाँ कहते हैं कि जघन्य ज्ञानके विषयभूत क्षेत्रके ऊपर

जघन्यकालदोळ पेंचुववो प्रथमकांडकेपरिपाटियंद ध्रुवाध्रुववृद्धिगळु देशावधिय सर्वक्षेत्रकाल-
कांडकगळोळु तत् क्षेत्रकालानुसारदिंद संभविमुववलि क्षेत्रवृद्धिगळु ध्रुवरूपविवक्षीयंद तत्तत्-
कांडकदोळवस्थितरूपमक्कुमाध्रुववृद्धिविवक्षीयंद तत्तत्कांडकदोळ प्रथमकांडक मोदलागि क्षेत्रानु-
सारमागि केलवेडयोळ घनांगुलसंख्यातैकभागमात्रं केलवेडयोळ घनांगुलसंख्यातैकभागमात्रं ५
केलवेडयोळ घनांगुलमात्रं केलवेडयोळ संख्यातघनांगुलमात्रं केलवेडयोळसंख्यातघनांगुलमात्रं
केलवेडयोळ श्रेण्यसंख्येयभागमात्रं केलवेडयोळ श्रेणिसंख्येयभागमात्रं केलवेडयोळ श्रेणिमात्रं
केलवेडयोळ संख्यातश्रेणिमात्रं केलवेडयोळसंख्यातश्रेणिमात्रं केलवेडयोळ प्रतराऽसंख्येयभागमात्रं
केलवेडयोळ प्रतरसंख्येयभागमात्रं केलवेडयोळ प्रतरमात्रं केलवेडयोळसंख्यातप्रतरमात्रं क्षेत्र-
प्रदेशंगळु क्षेत्रदोळ पेंचिदागळोदोळु समयदमधस्तनकालद मेले पेंचुगुमितऽसंख्यातवारं पेंचु
गुमंदु वक्तव्यमक्कुमदुकारणदिंदमुत्कृष्टक्षेत्रकालंगळुत्पत्तिगाळिवरोधिसल्पडवदिनु सिद्धंगळु । १०

संख्यातीदा समया पढमे पव्वम्मि उभयदो वड्ढी ।

खेत्तं कालं असिसय पढमादी कंडये वोच्छं ॥४०३॥

संख्यातीताः समयाः प्रथमे पव्वणि उभयतो वृद्धिः । क्षेत्रं कालमाश्रित्य प्रथमादिकांडकानि
वक्ष्यामि ॥

प्रथमे पव्वणि मोदलकांडकदोळ संख्यातीताः समयाः असंख्यातसमयंगळु पूर्वोक्तप्रमितं- १५
गळु ८०१ उभयतो वृद्धिः ध्रुवाध्रुवरूपदिंद वृद्धिरियल्पडुगुं । क्षेत्रमुमं कालमुमनाश्रयिसि
१०

जघन्यकालस्योपरि एकैकः समयो वर्धते ॥४०२॥

एवं सति प्रथमे पव्वणि काण्डके उभयतः ध्रुवरूपतोऽध्रुवरूपतो वा वृद्धिः क्षेत्रवृद्धिः संख्यातीताः समयाः
जघन्यकालोत्तदुत्कृष्टकालमात्राः स्युः ८ । ०-१ क्षेत्रवृद्धिस्तु तज्जघन्यक्षेत्रोत्तदुत्कृष्टक्षेत्रमात्री ६ । ०-१ इमौ २०
१ । ० । १ । ०
वृद्धिक्षेत्रकालौ जघन्यक्षेत्रकालाभ्यां— ६ । ८ समच्छेदेन ६ । १ । ८ । १ मेलयित्वा ६ । ० । ८ । ० अपवर्तितौ
० ० ० । १ । ० । १ १ । ० । १ । ०
। ६ । ८ प्रथमकाण्डकचरमविकल्पविषयी क्षेत्रकालौ स्यातां । इतः परं क्षेत्रं कालं चाश्रित्य प्रथमादीनि एकात्र-
१ । १

घनांगुलके असंख्यातवें भाग और कभी घनांगुलके संख्यातवें भाग प्रदेशोंकी वृद्धि होनेपर
कालमें एक समयकी वृद्धिके होनेको अध्रुववृद्धि कहते हैं ॥४०२॥

इस प्रकार पहले काण्डकमें ध्रुवरूप और अध्रुवरूपसे एक-एक समय बढ़ते-बढ़ते २५
असंख्यात समयकी वृद्धि होती है । सो प्रथमकाण्डकके उत्कृष्टकालके समयोंमें-से जघन्यकाल-
के समयोंको घटानेपर जो शेष रहे उतने असंख्यात समयोंकी वृद्धि प्रथम काण्डकमें होती
है । इसी तरह प्रथमकाण्डकके उत्कृष्ट क्षेत्रके प्रदेशोंमेंसे उसके जघन्य क्षेत्रके प्रदेशोंको
घटानेपर जो शेष रहे उतने प्रदेशप्रमाण प्रथम काण्डकमें क्षेत्र वृद्धि होती है । इन वृद्धिरूप क्षेत्र
और कालको जघन्य क्षेत्र और जघन्य कालमें जोड़नेपर प्रथम काण्डकके अन्तिम विकल्पके क्षेत्र ३०
और काल होते हैं । अर्थात् वृद्धिरूप प्रदेशोंके परिमाणको जघन्य क्षेत्र घनांगुलके असंख्यातवें
भागमें मिलानेपर प्रथम काण्डकके अन्तिम भेदके क्षेत्रका प्रमाण होता है । इसी प्रकार वृद्धि-
रूप समयोंके परिमाणको जघन्य काल आवलीके असंख्यातवें भागमें जोड़नेपर प्रथम काण्डक-

प्रथमादिकाण्डकं गळं पेळ्ळपेने बुवाचार्यन प्रतिज्ञेयक्कं ।

अंगुलमावलियाए भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जा ।

अंगुलमावलियंतो आवलियं चांगुलपुधत्तं ॥४०४॥

अंगुलमावल्योर्भागोऽसंख्येतोपि संख्येयः । अंगुलमावल्यंतः आवलिकं चांगुलपृथक्त्वं ॥

५ प्रथमकाण्डकदोळु जघन्यक्षेत्र कालंगळु घनांगुलावलिगळु असंख्यातैकभागमात्रं दिवं मेले संख्येयो भागः क्षेत्रमुं कालमुं यथासंख्यमागि घनांगुलसंख्येयभागधुमावलि संख्येयभागमुमक्कु ६८

११

द्वितीयकाण्डकदोळु क्षेत्रं घनांगुलमक्कुं कालमावल्यंतमेयक्कुं । किंचिदूनावलि ये बुदर्थं । ६ । ८-१
तृतीयकाण्डकदोळु आवलिरंगुलपृथक्त्वं घनांगुलपृथक्त्वं मुमावलियमक्कुं । पृथक्त्व ६८ ।

आवलियपुधत्तं पुण हत्थं तह गाउयं मुहूत्तं तु ।

१० जोयणभिण्णमुहूत्तं दिवसंतो पण्णुवीसं तु ॥४०५॥

आवलपृथक्त्वं पुनर्हस्तस्तथा गव्यूतिम्मुहूर्तस्तु । योजनं भिन्नमुहूर्तः दिवसांतः पंच-
विंशतिस्तु ॥

चतुर्थकाण्डकदोळु पृथक्त्वावलियुमेकहस्तमुमक्कुं । हस्त १ । ८ । ५ । पंचमकाण्डकदोळु तथा
१५ गव्यूतिम्मुहूर्तातः एककोशमुसंतम्मुहूर्तमुमक्कुं । को १ । का २१-१ । षष्ठकाण्डकदोळु योजनं भिन्न-
मुहूर्तः एकयोजनमुं भिन्नमुहूर्तमुमक्कुं । यो १ । का = भिन्नमु १ ॥ सप्तमकाण्डकदोळु दिवसांतः
पंचविंशतिस्तु किंचिदूनदिवसमुं पंचविंशतियोजनंगळुमक्कुं । यो २५ का = वि १ ।

विंशतिकाण्डकानि वक्ष्ये इत्याचार्यप्रतिज्ञा ॥४०३॥

प्रथमकाण्डके क्षेत्रकालौ जघन्यौ घनाङ्गुलावत्योरसंख्यातैकभागी ६ । ८ उत्कृष्टौ तयोः संख्येयभागी
८ ८

६ । ८ द्वितीयकाण्डके क्षेत्रं घनाङ्गुलम् । कालः आवल्यन्तः-किंचिदूनावलिरित्यर्थः ६ । ८-१ । तृतीयकाण्डके
१ । १

२० क्षेत्रं घनाङ्गुलपृथक्त्वं कालः आवलिपृथक्त्वं पृ ६ । ८ ॥४०४॥

चतुर्थकाण्डके कालः आवलिपृथक्त्वं । क्षेत्रं एकहस्तः । ह १ । ८ पृ । पञ्चमकाण्डके क्षेत्रं एककोशः ।
कालः अन्तर्मुहूर्तः । को १ । का २१ । षष्ठकाण्डके क्षेत्रमेकयोजनं, कालः भिन्नमुहूर्तः । यो १ का भिन्न
मु० १-१ । सप्तमकाण्डके कालः किंचिदूनदिवसः क्षेत्रं पञ्चविंशतियोजनानि यो २५ का दि १-१ ॥४०५॥

२५ के अन्तिम भेदमें कालका प्रमाण होता है । आगे क्षेत्र और कालको लेकर उन्नीस काण्डक
कहेंगे, ऐसी प्रतिज्ञा आचार्यने की है ॥४०३॥

प्रथम काण्डकमें जघन्य क्षेत्र घनांगुलके असंख्यातवें भाग और जघन्य काल आवलीका
असंख्यातवाँ भाग है । उत्कृष्ट क्षेत्र घनांगुलका संख्यातवाँ भाग और उत्कृष्ट काल आवलीका
संख्यातवाँ भाग है । द्वितीयकाण्डकमें क्षेत्र घनांगुल प्रमाण और काल कुछ कम आवली है ।
तीसरे काण्डकमें क्षेत्र घनांगुल पृथक्त्व प्रमाण है और काल आवली पृथक्त्व प्रमाण है ॥४०४॥

३० चतुर्थ काण्डकमें काल आवली पृथक्त्व और क्षेत्र एकहाथ प्रमाण है । पाँचवें काण्डक-
में क्षेत्र एक कोस प्रमाण काल अन्तर्मुहूर्त है । छठे काण्डकमें क्षेत्र एक योजन और काल भिन्न
मुहूर्त है । सप्तम काण्डकमें काल कुछ कम एक दिन और क्षेत्र पच्चीस योजन है ॥४०५॥

भरहम्मि अद्रमासं साहियमासं च जंबूदीवम्भि ।

वासं च मणुबलोए वासपुधत्तं च रुजगम्भि ॥४०६॥

भरतेर्द्धमासः साधिकमासश्च जंबूद्वीपे । वर्षं च मनुजलोके वर्षपृथक्त्वं च रुचके ॥

अष्टमकाण्डकदोळु भरतक्षेत्रमुमर्द्धमासमक्कुं । भर । अर्द्ध मा । नवमकाण्डकदोळु जंबूद्वीपमं साधिकमासमुमक्कुं । जं मा । १ । दशमकाण्डकदोळु मनुष्यलोकमुमेकवर्षमुमक्कुं । म ४५ ल । ५ वर्ष १ । एकादशकाण्डकदोळु रुचकद्वीपमुच वर्षपृथक्त्वमुमक्कुं । रु । व प ।

संखेज्जपमे वासे दीवसमुदा हवन्ति संखेज्जा ।

वासम्भि असंखेज्जे दीवसमुदा असंखेज्जा ॥४०७॥

संख्येयप्रमे वर्षे द्वीपसमुद्रा भवन्ति संख्येयाः । वर्षे असंख्येये द्वीपसमुद्रा असंख्येयाः ॥

द्वादशकाण्डकदोळु संख्येयमात्र द्वीपसमुद्रंगळु संख्यातवर्षंगळुमप्पुवु । द्वी = स = १ ॥ वर्ष १० १ । मेळे त्रयोदशादि काण्डकंगळोळु तैजसशरीरादि द्रव्यविकल्पंगळोडेयोळु मुं पेळ्दसंख्यातद्वीप-समुद्रंगळु तत्कालंगळुमसंख्यातवर्षंगळुमसंख्यातगुणितक्रमंगळुमप्पुवु । इंतु देशावधिज्ञानविषयंगळुप द्रव्यक्षेत्रकालं भावंगळु एकान्तविशतिकाण्डकंगळोळु चरमकाण्डक चरमद्रव्यक्षेत्रकालभावंगळु मुं पेळ्द ध्रुवहारैकवारभक्तकामर्मणवर्गण्युं व संपूर्णकमुं = समयोनैकपत्यमुं ॥ प १ = १ । यथाक्रम-

दिंदमप्पुवुमाद्यदेशावधिज्ञानविषय द्रव्यक्षेत्रकालभावंगळुगे संदृष्टि—

१५

अष्टमकाण्डके क्षेत्रं—भरतक्षेत्रं, काल अर्धमासः, भर अर्धमा = । नवमकाण्डके क्षेत्रं जम्बूद्वीपः, कालः साधिकमासः, जं = । मा १ । दशमकाण्डके क्षेत्रं मनुष्यलोकः कालः एकवर्षः, ४५ ल वर्ष १ । एकादशे काण्डके क्षेत्रं रुचकद्वीपः, कालः वर्षपृथक्त्वं रु । व प ॥४०६॥

द्वादशे काण्डके क्षेत्रं संख्येयद्वीपसमुद्राः । कालः संख्यातवर्षाणि द्वी = स = १ वर्ष १ । उपरित्रयोदशादिषु काण्डकेषु तैजसशरीरादिद्रव्यविकल्पस्थानेषु क्षेत्राणि असंख्यातद्वीपसमुद्राः कालः असंख्यातवर्षाणि उभयेऽपि असंख्यातगुणितक्रमेण भवन्ति । चरमकाण्डकचरमे द्रव्यं ध्रुवहारभक्तकामर्मणवर्गणा व क्षेत्रं संपूर्ण-

२०

लोकः = कालः समयोनपत्यं प—१ ॥४०७॥

अष्टमकाण्डकमें क्षेत्र भरतक्षेत्र और काल आधामास है । नौवें काण्डकमें क्षेत्र जम्बू-द्वीप काल कुछ अधिक एक मास है । दसवें काण्डकमें क्षेत्र मनुष्य लोक, काल एक वर्ष है । ग्यारहवें काण्डकमें क्षेत्र रुचकद्वीप काल वर्षपृथक्त्व है ॥४०६॥

२५

बारहवें काण्डकमें क्षेत्र संख्यात द्वीप-समुद्र और काल संख्यात वर्ष है । आगे तेरहवें आदि काण्डकोंमें जो तैजस शरीर आदि द्रव्यकी अपेक्षा स्थान कहे हैं, उनमें क्षेत्र असंख्यात द्वीप समुद्र हैं और काल असंख्यात वर्ष है । दोनों ही आगे-आगे क्रमसे असंख्यातगुने असंख्यातगुने होते हैं । अन्तके उन्नीसवें काण्डकमें द्रव्य तो कामर्णावर्गणामें ध्रुवहारका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे, उतना है । क्षेत्र सम्पूर्ण लोक है और काल एक समय कम पत्य प्रमाण है ॥४०७॥

३०

कालविसेसेणावह्निदखेत्तविसेसो ध्रुवा हवे वड्ढो ।

अध्रुववड्ढो वि पुणो अविरुद्धं इट्ठकंडम्मि ॥४०८॥

कालविशेषेणापहतक्षेत्रविशेषो भवेत् ध्रुवा वृद्धिः । अध्रुववृद्धिरपि पुनरविरुद्धमिष्टकांडके ।

कालविशेषेणापहतः क्षेत्रविशेषो ध्रुवा वृद्धिर्भवेत् । प्रथमकांडकदोळ जघन्यकालम् ८

तन्नुत्कृष्टकालदोळ ८ विशेषिसि ८ a-१ अवरिंभं भागिसत्पट्ट क्षेत्रविशेषं जघन्यक्षेत्रम् ६ ५

तन्नुत्कृष्टक्षेत्रदोळ ६ शेषिसिदुर्दानिद ६ a-१ भागिसिद लब्ध ६ a-१ मपवत्तितमिव ६ ८

ध्रुवा भवेत् वृद्धिः । प्रथमकांडकदोळ ध्रुवरूपक्षेत्रवृद्धिप्रमाणमक्कुं । सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्र-
द्रव्यविकल्पंगलवस्थितरूपदिदं नडदोडु प्रदेशं क्षेत्रदोळ पेच्चुंगुमी क्रमादिदमीयावलि भक्तघनांगुल-
प्रमितप्रदेशंगळु जघन्यक्षेत्रदोळ पेच्च कालदोळोडु समयं जघन्यकालद मेले पेच्चुंगुमितु तत्कांडक
चरमपर्यंतं ध्रुवरूपदिदं जघन्यकालद मेले पेच्चिद समयंगळिनितपुवु ८ a-१ इयं जघन्य- १०

कालदोळ ८ समच्छेदं माडि कूडिदोडे प्रथमकांडक चरमदोळ आवलि संख्येयभागमक्कुमे बुदयं ८ १
जघन्य क्षेत्रद मेले ६ पेच्चिद प्रदेशंगळुमिनितपुवु ६ a-१ विषं जघन्यक्षेत्रदोळ कूडिदोडे १ ६
प्रथमकांडकचरमदोळ घनांगुलसंख्येयभागमात्रमक्कुं ६ इतैल्ला कांडकंगळोळं ध्रुववृद्धियं १

विवक्षितकाण्डके जघन्यक्षेत्रं स्वोत्कृष्टक्षेत्रे जघन्यकालं च स्वोत्कृष्टकाले विशोष्य शेषराशी क्षेत्र-
कालविशेषी स्याताम् । तत्र प्रथमकाण्डके कालविशेषेण ८ । a-१ क्षेत्रविशेषः ६ । a-१ भक्त्वा ६ a-१ १५

अपवर्तितः ६ ध्रुवावृद्धिर्भवेत् । सूच्यंगुलासंख्येयभागमात्रद्रव्यविकल्पेषु अवस्थितरूपेण गतेषु एकप्रदेशः क्षेत्रे
वर्धते । अनेकक्रमेण आवलिभक्तघनांगुलप्रमितप्रदेशाः जघन्यक्षेत्रस्योपरि वर्धन्ते । तदा जघन्यकालस्योपरि
एकः समयो वर्धते । एवं तत्काण्डकचरमपर्यन्तं ध्रुवरूपेण जघन्यकालस्योपरि वर्धितसमयप्रमाणमिदम् । ८ a-१ १०

विवक्षित काण्डकके अपने उत्कृष्ट क्षेत्रमें जघन्य क्षेत्रको और अपने उत्कृष्ट कालमें ।
जघन्य कालको घटानेपर जो शेष राशि रहती है, उसको क्षेत्र विशेष और काल विशेष कहते २०
हैं । प्रथम काण्डकके कालविशेषसे क्षेत्रविशेषमें भाग देनेपर ध्रुववृद्धिका प्रमाण होता है ।
सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यके विकल्पोंके बीतनेपर क्षेत्रमें एक प्रदेश बढ़ता है ।
इस क्रमसे जघन्य क्षेत्रके ऊपर आवलीसे भाजित घनांगुल प्रमाणप्रदेश जघन्य क्षेत्रके ऊपर
बढ़ते हैं । इतने प्रदेश जघन्य क्षेत्रके ऊपर बढ़नेपर जघन्यकालके ऊपर एक समय बढ़ता है ।
इस प्रकार प्रथम काण्डकके अन्त पर्यन्त ध्रुववृद्धिसे जितने समय बढ़ें, उन्हें जघन्यकालमें २५
मिलानेपर आवलीका संख्यातवर्षा भाग प्रथम काण्डकका उत्कृष्ट काल होता है । इसी तरह
जितने जघन्य क्षेत्रके ऊपर प्रदेश बढ़ें, उन्हें जघन्य क्षेत्रमें मिलानेपर घनांगुलका संख्यातवर्षा

साधिसुबुद्धि । अध्रुववृद्धिरपि पुनरविरुद्धमिष्टकाण्डकं अध्रुववृद्धिं तन्न विवक्षितकाण्डकदोष-
विरुद्धमाणि ।

अंगुल असंख्यभागं संख्यं वा अंगुलं च तस्सेव ।

संख्यमसंख्यं एवं सेढीपदरस्स अध्रुवगो ॥४०९॥

- ५ अंगुलासंख्यातभागं संख्यं वा अंगुलं च तस्यैव । संख्यमसंख्यं एवं श्रेणीप्रतरस्या ध्रुवके ॥
अध्रुववृद्धिविवक्षितमादौडे तत्काण्डक क्षेत्रकालंगळऽविरुद्धमाणि घनाङ्गुलासंख्यातैकभाग-
मात्रमुं ६ मेणु घनाङ्गुल संख्यातैकभागमात्रमुं ६ मेणु घनाङ्गुलमात्रमुं ६ संख्यातघनाङ्गुलमात्रमुं
६१ । असंख्यातघनाङ्गुलमात्रमुं ६ ० । एवं इंतु श्रेणिगं प्रतरक्कमरियत्पडुगुमदेते दोडे श्रेण्य-
संख्येयभागमात्रमुं श्रेणिय संख्येयभागमात्रमुं श्रेणिमात्रमुं, संख्यातश्रेणिमात्रमुं ॥—१॥ असंख्यात
१० श्रेणिमात्रमुं १-० । असंख्येयभागप्रतरमात्रमुं ० प्रतरसंख्येयभागमात्रमुं १ प्रतरमात्रमुं = संख्यात-
प्रतरमात्रमुं = १ असंख्यातप्रतरमात्रमुं = ० प्रदेशगळु पेचि पेच्चिकालदोळकैक समयं पेच्चुगुमे बुद-
ध्रुववृद्धिक्रमं ।

कम्मइयवग्गणं ध्रुवहारेणिगिवारभाजिदे दव्वं ।

उक्कस्सं खेत्तं पुण लोगो संपुण्णओ होदि ॥४१०॥

- १५ कम्मणवग्गणां ध्रुवहारेणैकवारभाजिते द्रव्यमुत्कृष्टं क्षेत्रं पुनर्लोकः संपूर्णो भवति ॥
अत्र च जघन्यकाले ८ समच्छेदेन ६ । १ । मिलिते प्रथमकाण्डकचरमे घनाङ्गुलसंख्येयभागो भवति ६ एवं
सर्वकाण्डकेषु ध्रुववृद्धि साधयेत् । अध्रुववृद्धिरपि विवक्षितकाण्डकेन तत्तत्क्षेत्रकालाविरोधेन वक्तव्या ॥४०८॥
तद्वथा—

- घनाङ्गुलासंख्यातैकभागमात्राः ६ वा घनाङ्गुलसंख्येयभागमात्राः ६ वा घनाङ्गुलमात्राः ६ वा
संख्यातघनाङ्गुलमात्राः ६ १ वा असंख्यातघनाङ्गुलमात्रा ६ ० एवं श्रेणीप्रतरयोरपि, तथाहि—श्रेण्यसंख्येय-
भागमात्राः ० वा श्रेणिसंख्येयभागमात्राः १ वा श्रेणिमात्राः—वाः संख्यातश्रेणिमात्राः—१ वा असंख्यात-
श्रेणिमात्राः—० वा प्रतरासंख्येयमात्रा = १ वा प्रतरसंख्येयभागमात्राः = वा संख्यातप्रतरमात्रा = १ वा
असंख्यातप्रतरमात्राः = ० प्रदेशा वधित्वा वधित्वा काले एकैकसमयो वर्धते इत्यध्रुववृद्धिक्रमः ॥४०९॥

- भागप्रमाण उत्कृष्टक्षेत्र प्रथमकाण्डकका होता है । इसी प्रकार सब काण्डकोंमें ध्रुववृद्धिका
प्रमाण लाना चाहिए । अध्रुववृद्धि भी विवक्षित काण्डकमें उस-उस क्षेत्रकालका विरोध न
करते हुए लानी चाहिए ॥४०८॥

वही कहते हैं—

- घनाङ्गुलके असंख्यातवें भागमात्र अथवा घनाङ्गुलके संख्यातवें भागमात्र, अथवा
घनाङ्गुलमात्र, अथवा संख्यात घनाङ्गुलमात्र, अथवा असंख्यात घनाङ्गुलमात्र, अथवा श्रेणीके
असंख्यातवें भागमात्र, अथवा श्रेणीके संख्यातवें भागमात्र, अथवा श्रेणिप्रमाण, अथवा
संख्यात श्रेणिमात्र, अथवा असंख्यात श्रेणिमात्र, अथवा प्रतरके असंख्यातवें भाग, अथवा
प्रतरके संख्यातवें भाग अथवा प्रतरमात्र अथवा संख्यात प्रतरमात्र अथवा असंख्यात प्रतरमात्र
प्रदेश बढ़ा-बढ़ाकर कालमें एक-एक समय बढ़ता है । इस प्रकार अध्रुववृद्धिका क्रम है ॥४०९॥

कार्मणवर्गणयनोर्म्मं ध्रुवहारदिदं भागिसिदोडे देशावधिज्ञानदुत्कृष्टद्रव्यमवकुं व ९

तदुत्कृष्टं क्षेत्रं सत्ते लोकदोळेनुं कोरतेयिल्लदे संपूर्णलोकमात्रमवकुं ।

पल्ल समऊणकाले भावेण असंखलोगमेत्ता हु ।

दव्वस्स य पज्जाया वरदेसोहिस्स विसया हु ॥४११॥

पल्यं समयोनं काले भावेन असंख्य लोकमात्राः खलु । द्रव्यस्य च पर्यायाः वरदेशावधे- ५
विषयाः खलु ॥

कालदोळु देशावधिगुत्कृष्टं समयोनपल्यमात्रमवकुं । प १ । भावदिदमसंख्यातलोकमात्रंगळु
स्फुटमागि काल भाव शब्दद्वयवाच्यंगळुमा द्रव्यपर्यायंगळु वरदेशावधिज्ञानवके विषयंगळपुवु ।
स्फुटमागि । = ० ॥

काले चउण्ह उड्ढी कालो भजिदव्व खेत्तउड्ढी य ।

उड्ढीए दव्वपज्जय भजिदव्वा खेत्तकाला हु ॥४१२॥

काले चतुर्णा वृद्धिः कालो भजनीयः क्षेत्रवृद्धिश्च । द्रव्यपर्याययोर्वृद्धौ भक्तव्यौ क्षेत्रकालौ ॥
आवागळोर्म्मं कालवृद्धियक्कुमागळु द्रव्यक्षेत्रकालभावंगळनात्कर वृद्धिगळवकुं क्षेत्रवृद्धिया-
गुत्तं विरलु कालमोदे भजनीयमवकुं । द्रव्यभावंगळ वृद्धियोळु क्षेत्रकालद्वयवृद्धिगळु विकल्पनीय-
गळपुवे बुदु युक्तियुक्तमेयवकुं । १५

कार्मणवर्गणा एकवारं ध्रुवहारेण भक्ता देशावध्युत्कृष्टद्रव्यं भवति व तदुत्कृष्टक्षेत्रं पुनः संपूर्णलोको
भवति ॥४१०॥ ९

काले देशावधेः उत्कृष्टं समयोनपल्यं भवति प—१ । भावेन पुनः असंख्यातलोकमात्रं भवति = ०
कालभावशब्दद्वयवाच्यास्ते द्रव्यस्य पर्याया वरदेशावधिज्ञानस्य स्फुटं विषया भवन्ति ॥४११॥

यदा कालवृद्धिस्तदा द्रव्यादीनां चतुर्णा वृद्धयो भवन्ति । यदा क्षेत्रवृद्धिस्तदा कालवृद्धिः स्याद्वा न
वेति भजनीया । यदा द्रव्यभाववृद्धी तदा क्षेत्रकालवृद्धी अपि भजनीये इत्येतत्सर्वं युक्तियुक्तमेव ॥४१२॥ अथ २०
परमावधिज्ञानप्ररूपणमाह—

कार्मणवर्गणाको एक वार ध्रुवहारसे भाजित करनेपर देशावधिका उत्कृष्ट द्रव्य होता
है और उत्कृष्ट क्षेत्र सम्पूर्ण लोक है ॥४१०॥

देशावधिका उत्कृष्ट काल एक समयहीन पल्य है और भाव असंख्यात लोकप्रमाण है ।
काल और भावशब्दसे द्रव्यकी पर्याय उत्कृष्टदेशावधिज्ञानके विषय होती हैं । ऐसा जानना । २५

विशेषार्थ—एक समयहीन एक पल्य प्रमाण अतीतकालमें हुई और उतने ही प्रमाण
आगामी कालमें होनेवाली द्रव्यकी पर्यायोंको उत्कृष्ट देशावधि जानता है । भावसे
असंख्यात लोकप्रमाण पर्यायोंको जानता है ॥४११॥

अवधिज्ञानके विषयमें जब कालकी वृद्धि होती है, तब द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव चारोंकी
वृद्धि होती है । जब क्षेत्रकी वृद्धि होती है, तब कालकी वृद्धि भजनीय है, हो या न हो । जब ३०
द्रव्य और भावकी वृद्धि होती है, तब क्षेत्र और कालकी वृद्धि भजनीय है । यह सब युक्ति-
युक्त ही है ॥४१२॥

१. स्वविषयस्कंधगतानंतवर्णादिविकल्पो भाव इति राजवार्तिके उक्तत्वात् द्रव्यस्य पर्याया एव कालभाव-
शब्दवाच्या भूतभावि पर्यायाणां वर्तमानपर्यायाणां च कालभावत्वस्थापनात् इति टिप्पण ।

अनंतरं परमावधिज्ञान प्ररूपणमं पेळदपं :—

देसावहिवरदन्वं ध्रुवहारेणवहिदे हवे नियमा ।

परमावहिस्स अवरं दन्वपमाणं तु जिणदिट्ठं ॥४१३॥

देशावधिवरद्रव्यं ध्रुवहारेणापहृते भवेन्नियमात् । परमावधेरवरद्रव्यप्रमाणं तु जिनदिष्टं ॥

५ सर्वोत्कृष्टदेशावधिज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यमं पूर्वोक्त ध्रुवहारैकवार भक्तकामर्मणवर्गणा-
प्रमाणमं व ध्रुवहारदिदं भागिसुत्तिरलु व तु मत्ते परमावधिविषयजघन्यद्रव्यप्रमाणं नियमदिद-
९ ९९

मवकुमेदु जिनरुळिदं पेळल्पट्ठदु । इन्ता परमावधियुत्कृष्टद्रव्यप्रमाणमं पेळदपं :—

परमावहिस्स भेदा सग ओगाहणवियप्पहदतेऊ ।

चरिमे हारपमाणं जेट्ठस्स य होदि दूव्वं तु ॥४१४॥

१० परमावधेर्भेदाः स्वकावगाहनविकल्पहततेजसः । चरमे हारप्रमाणं ज्येष्ठस्य भवेत् द्रव्यं तु ॥

परमावधिज्ञानविकल्पंगळे नितप्पुवेदोडे स्वावगाहनविकल्पंगळिदं गुणिसल्पट्ठ तेजःस्कायिक-

जीवंगळ संख्ये यावतावत्प्रमाणंगळप्पुवुं ॐ ॐ ६ ॐ ई परमावधिज्ञानसर्वविकल्पंगळोळु सर्वो-
प ॐ

त्कृष्टचरमविकल्पदोळु तु मत्ते द्रव्यमुत्कृष्टपरमावधिगे ध्रुवहारप्रमाणमेयक्कुं ॥ ९ ॥

सन्वावहिस्स एक्को परमाणू होदि णिवियप्पो सो ।

१५ गंगामहाणइस्स पवाहोव्व ध्रुवो हवे हारो ॥४१५॥

सर्वावधेरैकः परमाणुः भवेन्निष्कल्पः । सः गंगामहानद्याः प्रवाहवत् ध्रुवो भवेद्धारः ॥

देशावधेरुत्कृष्टद्रव्यमिदं व तु—पुनः ध्रुवहारेण भक्तं तदा व परमावधिविषयजघन्यद्रव्यं नियमेन भव-
९ ९९

तीति जिनैरुक्तं ॥४१३॥ इदानीं परमावधेरुत्कृष्टद्रव्यप्रमाणमाह—

परमावधिज्ञानविकल्पाः स्वावगाहनविकल्पगुणिततेजस्कायिकजीवसंख्या भवन्ति ॐ ॐ ६ ॐ ॐ १ । ॐ १ । तेषु
प ॐ

२० पुनः सर्वोत्कृष्टचरमविकल्पेषु पुनः द्रव्यं ध्रुवहारप्रमाणमेव ९ भवेत् ॥४१४॥

अब परमावधिज्ञानका कथन करते हैं—

देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्यको ध्रुवहारसे भाग देनेपर परमावधिके विषयभूत जघन्य द्रव्यका प्रमाण होता है, ऐसा जिनदेवने कहा है ॥४१३॥

अब परमावधिके उत्कृष्ट द्रव्यका प्रमाण कहते हैं—

२५ तेजस्कायिक जीवोंकी अवगाहनाके भेदोंसे तेजस्कायिक जीवोंकी संख्याको गुणा करनेपर जो प्रमाण आता है, उतने परमावधिज्ञानके भेद हैं । उनमेंसे सबसे उत्कृष्ट अन्तिम भेदके विषयभूत द्रव्य ध्रुवहार प्रमाण ही होता है । अर्थात् ध्रुवहारका जितना परिमाण है, उतने परमाणुओंके समूहरूप सूक्ष्म स्कन्धको जानता है ॥४१४॥

मत्तमा परमावधिसर्वोत्कृष्टद्रव्यमं ध्रुवहारप्रमितमं । ९ । तु मत्तं ध्रुवहारविदं भागिसि-
दोडो दे परमाणवकुमा द्रव्यं सर्वाविधिज्ञानविषयद्रव्यमकुमा सर्वाविधिज्ञानमुं निर्विकल्पमेयकु-
मिनु देशावधिज्ञानविषयमप्य जघन्यद्रव्यपराशिषोऽनु मध्यमयोगार्जितनोक्तमौदारिकशरीरसंचय-
सविस्त्रसोपचयलोकविभक्तप्रमितद्रव्यस्कंधदोऽनु देशावधिज्ञानद्वितीयविकल्पं मोदलोऽनु परमा-
वधिज्ञानसर्वोत्कृष्टद्रव्यपर्यंतमदमोऽनु पोद्दु गंगानदीमहाप्रवाहमे तु हिमाचलदोऽनुपुट्टि पूर्वोदधि- ५
पर्यंतमविच्छिन्नरूपदिदं परिदु पोगि तदुदधिप्रविष्टमादुदंते ध्रुवहारमुमविच्छिन्नरूपदिदं प्रवेशिसि
प्रवेशिसि परमाणुद्रव्यपर्यंतवसानमागि निदुदेकंदोडे विषयभूतपरमाणुवुं विषयिण्यप्यसर्वाविधिज्ञानमुं
निर्विकल्पकंगळपुदरिद ।

परमोद्दिदव्यभेदा जेत्तियमेत्ता हु तेत्तिया होंति ।

तस्मेव खेत्तकालवियप्पा विसया असंखगुणितकमा ॥४१६॥

१०

परमावधिद्रव्यभेदाः यावन्मात्राः खलु तावन्मात्रा भवन्ति । तस्यैव क्षेत्रकालविकल्पाः विषया
असंख्यगुणितक्रमाः ॥

परमावधिज्ञानविषयद्रव्यविकल्पंगळु यावन्मात्रंगळु तावन्मात्रंगळ्येयपुवु । परमावधिज्ञान-
विषयंगळप्य क्षेत्रविकल्पंगळु कालविकल्पंगळु तावन्मात्रविकल्पंगळुगुत्तलुं तंतम्म जघन्यविकल्पं
मोदलोऽनु तंतन्मुत्कृष्टपर्यंतमसंख्यातगुणितक्रमंगळपुवेंतप्यसंख्यातगुणितक्रमंगळपुवेंदोडे १५
पेळवपं ।

पुनस्तत्परमावधिसर्वोत्कृष्टं द्रव्यं ९ ध्रुवहारैकवारं भवतं एकपरमाणुमात्रं सर्वाविधिज्ञानविषयं द्रव्यं
भवति । तज्ज्ञानं निर्विकल्पकमेव स्यात् । स च ध्रुवहारः गङ्गामहानद्याः प्रवाहवद्भवति—यथा गङ्गामहानदी-
प्रवाहः हिमाचलादविच्छिन्नं प्रवह्य पूर्वोदधौ गत्वा स्थितस्तथायं हारोऽपि देशावधिविषयजघन्यद्रव्यात्परमावधि-
सर्वोत्कृष्टद्रव्यपर्यन्तं प्रवह्य परमाणुपर्यवसाने स्थितः विषयस्य परमाणोः, विषयिणः परमावधेश्च निर्विकल्पक- २७
त्वात् ॥४१५॥

परमावधिज्ञानविषयद्रव्यविकल्पा यावन्मात्राः तावन्मात्रा एव भवन्ति तस्य विषयभूतक्षेत्रकाल-
विकल्पाः । तावन्मात्रा अपि स्वस्वजघन्यात् स्वसर्वोत्कृष्टपर्यन्तं असंख्यातगुणितक्रमा भवन्ति ॥४१६॥ कीदृग-
संख्यातगुणितक्रमाः ? इत्युक्ते प्राह—

उस परमावधिके सर्वोत्कृष्ट द्रव्यको एक बार ध्रुवहारसे भाग देनेपर एक परमाणु मात्र २५
सर्वाविधिज्ञानका विषयभूत द्रव्य होता है । यह ज्ञान निर्विकल्प ही होता है । इसमें जघन्य-
उत्कृष्ट भेद नहीं है । वह ध्रुवहार गंगा महानदीके प्रवाहकी तरह है । जैसे गंगा महानदीका
प्रवाह हिमाचलसे अविच्छिन्न निरन्तर बहता हुआ पूर्व समुद्रमें जाकर ठहरता है, वैसे ही
यह ध्रुवहार भी देशावधिके विषयभूत जघन्य द्रव्यसे सर्वावधिके उत्कृष्ट द्रव्य पर्यन्त बहता
हुआ परमाणुपर आकर ठहरता है । सर्वावधिका विषय परमाणु और सर्वावधि ये दोनों ही ३०
निर्विकल्प हैं ॥४१५॥

परमावधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यकी अपेक्षा जितने भेद कहे हैं, उतने ही भेद उसके
विषयभूत क्षेत्र और कालकी अपेक्षा होते हैं । फिर भी अपने-अपने जघन्यसे अपने-अपने
उत्कृष्ट पर्यन्त क्रमसे असंख्यात गुणित क्षेत्र व काल होते हैं ॥४१६॥

किस प्रकार असंख्यात गुणित होते हैं, यह कहते हैं—

३५

आवलिअसंखभागा इच्छिदगच्छधनमाणमेताओ ।

देसावहिस्स खेत्ते काले वि य होति संवग्गे ॥४१७॥

आवत्यसंख्यभागा ईप्सितगच्छधनमानमात्राः । देशावधेः क्षेत्रे कालेऽपि च भवन्ति संवर्गो ॥

परमावधिज्ञानविषयंगळप्प क्षेत्रकालंगळु तंतम्म जघन्यं मोदल्लोडु असंख्यातगणित-

५ क्रमविदं परमावधिज्ञानसर्वोत्कृष्टपद्यंतमविच्छिन्नरूपविदं नडेववंतु नडेव क्षेत्रकालविकल्पंगला-
वेडेपोळु विवक्षितंगळप्पुवल्लि देशावधिज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रकालमात्रगुण्यंगळगे आवत्यसंख्यात-
भागगुणकारंगळु तद्विवक्षितगच्छधनमानमात्रंगळु संवर्गंगळगुत्तिरलु तावन्मात्राऽसंख्यातगुणित-
क्रमंगळेदरियलपडुवदे ते दोडे परमावधिज्ञानप्रथमविकल्पदोळु आवत्यसंख्यातभागगुणकारंगळु
तद्गच्छमोददर संकलितधनमात्रंगळु १२ अप्पुवेदल्लियोदोदे गुणकारमक्कु = ८ प- १ ८
२१ ० ०

१० मंते विवक्षितद्वितीयविकल्पदोळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळप्पुवु २३ मूळ मूळ गुणकारं-
२१ ।

गळप्पुवु = ८८८८ । ५-१८८८ अंते विवक्षिततृतीयविकल्पदोळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळ-
००० ०००

प्पुवु ३ । ४ वेदारारप्पुवु = ८८८८८८ । ५-१८८८८८८ मो प्रकारविदं विवक्षितचतुर्थविकल्प-
२ । १ ०००००० ००००००

दोळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळप्पुवु ४ । ५ वेदु पत्तुं पत्तुं गुणकारंगळप्पुवु
२ । १

= ८ । १० ष-१ । ८ । १० मिते पंचमविकल्पदोळु तद्गच्छसंकलनधनमात्रंगळप्पु २६ वेदु
० ० २१

१५ परमावधेविवक्षितक्षेत्रविकल्पे विवक्षितकालविकल्पे च तद्विकल्पस्य यावत्संकलितधनं तावत्प्रमाणमात्रा
आवत्यसंख्येयभागाः परस्परं संवर्गे देशावधेस्तृष्टक्षेत्रे उत्कृष्टकालेऽपि च गुणकारा भवन्ति । ततस्ते गुणकाराः
प्रथमविकल्पे एकः । द्वितीयविकल्पे त्रयः । तृतीयविकल्पे षट् । चतुर्थविकल्पे दश । पञ्चमविकल्पे पञ्चदश एवं

परमावधिके विवक्षित क्षेत्र और विवक्षित कालके भेदमें उस भेदका जितना संक-
लित धन हो, उतने प्रमाण आवलीके असंख्यातवें भागोंको परस्परमें गुणा करनेपर जो
२० प्रमाण आवे, उतना देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र और उत्कृष्ट कालमें गुणकार होते हैं । वे गुणकार
प्रथम भेदमें एक, दूसरे भेदमें तीन, तीसरे भेदमें छह, चतुर्थ भेदमें दस, पंचम भेदमें पन्द्रह
इस प्रकार अन्तिम भेद पर्यन्त जानना ।

विशेषार्थ—जिस नम्बरके भेदकी विवक्षा हो, एकसे लगाकर उस भेद पर्यन्तके एक-
एक अधिक अंकोंको जोड़नेसे जो प्रमाण आवे, उतना ही उसका संकलित धन होता है । जैसे
२५ प्रथम भेदमें एक ही अंक है, अतः उसका संकलित धन एक जानना । दूसरे भेदमें एक और
दोको जोड़नेपर संकलित धन तीन होता है । तीसरे भेदमें एक, दो तीनको जोड़नेसे संक-
लित धन छह होता है । चौथे भेदमें उसमें चार जोड़नेसे संकलित धन दस होता है ।
पाँचवें भेदमें पाँचका अंक और जोड़नेसे संकलित धन पन्द्रह होता है । सो पन्द्रह जगह
आवलीके असंख्यातवें भागोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे जो परिमाण हो, वही पाँचवें
३० भेदका गुणकार होता है । इस गुणकारसे उत्कृष्ट देशावधिके क्षेत्र लोकको गुणा करनेपर जो

पदिनैदु पदिनैदुं गुणकारंगळप्पुवु ८।१५ ५-१।८।१५ ई प्रकारदिदं षष्ठादिपरमावधि-
 चरमविकल्पपद्यंतं सैकपदाहतपददलचयाहतमात्रगुणकारंगळावल्यसंख्यातंगळु पूर्वोक्तगुण्यंगळग
 गुणकारंगळप्पुवुवे'बी व्याप्तिपरियल्पदुगुं ।

मत्तमी गुणकारंगळुत्पत्तिक्रमं प्रकारांतरदिदं पेळदपर :—

गच्छसमा तवकालियतीदे रूऊणगच्छधनमेत्ता ।

उभये वि य गच्छस्स य धनमेत्ता होति गुणगारा ॥४१८॥

गच्छसमा तात्कालिकातीते रूपोनगच्छधनमात्राः । उभयस्मिन्नपि गच्छस्य च धनमात्राः
 भवन्ति गुणकाराः ॥

अथवा गच्छसमासगुणकाराः विवक्षितपदमात्रा गुणकारंगळुं तात्कालिकातीते तद्विवक्षित-
 स्थानानंतराधस्तनविकल्पदोळु रूपोनगच्छधनमात्राः तद्विवक्षितरूपोनगच्छधनमात्रंगळुं उभय- १०
 स्मिन् मिलिते ई रूपोनगच्छधनमात्रंगळु विवक्षितगच्छमात्रंगळुं कूडुत्तिरलु गच्छस्य च धनमात्रा
 भवन्ति मुं पेळदंते विवक्षितगच्छधनमात्रंगळुप्पुवु । अदे ते'दोडे विवक्षितचतुर्थविकल्पदोळु गुण-
 काराः गुणकारंगळु गच्छसमाः विवक्षितगच्छसमानंगळु ४ तात्कालिकातीते तद्विवक्षितस्थानानंत-

राधस्तनविकल्पदोळु रूपोनगच्छधनमात्राः तद्विवक्षितरूपोनगच्छधन ४।४ मात्रंगळु ६ उभ-
 २ १

यस्मिन्मिलितेषि च ई रूपोनगच्छधनमात्रंगळुं विवक्षितगच्छमात्रंगळुं ४ कूडुत्तिरलु गच्छस्य १५
 धनमात्रा भवन्ति मुं पेळदंते विवक्षितगच्छधनमात्रंगळु पत्तु गुणकारंगळुप्पुवु ८।१०।५-१।८।१०
 ८ ८

अंते पंचमविकल्पदोळु गुणकाराः गुणकारंगळु गच्छसमाः विवक्षितगच्छसमानंगळु ५ तात्कालिका-
 तीते तद्विवक्षितस्थानानंतराधस्तनविकल्पदोळु रूपोनगच्छधनमात्राः तद्विवक्षितरूपोनगच्छधन

५ ५ मात्रंगळु १० । उभयस्मिन्मिलितेषि च ई रूपोनगच्छधनमात्रंगळुं १० । विवक्षितगच्छ
 १ १

मात्रंगळुं ५ कूडुत्तिरलु गच्छस्य च धनमात्रा भवन्ति मुंपेळदंते विवक्षितगच्छधनमात्रंगळु पदिनैदु २०

षष्ठादिचरमपर्यन्तं नेतव्यम् ॥४१७॥ पुनः प्रकारान्तरेण तानेव गुणकारान् उत्पादयति—

गच्छसमाः—गच्छमात्राः यथा चतुर्थविकल्पे चत्वारः, तात्कालिकातीते च तृतीयविकल्पे रूपोनगच्छ-

प्रमाण आने, उतना परमावधिके पाँचवें भेदके विषयभूत क्षेत्रका परिमाण होता है । तथा
 इसी गुणकारसे देशावधिके विषयभूत उत्कृष्ट काल एक समय हीन एक पल्यमें गुणा करनेपर
 पाँचवें भेदमें कालका परिमाण होता है । इसी तरह सब भेदोंमें जानना ॥४१७॥

पुनः प्रकारान्तरसे उन्ही गुणकारोंको कहते हैं—

गच्छके समान धन और गच्छसे तत्काल अतीत जो विवक्षित भेदसे पहला भेद,
 सो विवक्षित गच्छसे एक कम गच्छका जो संकलित धन, इन दोनोंको मिलानेसे गच्छका
 संकलित धन प्रमाण गुणकार होता है । उदाहरण कहते हैं—जितनेवाँ भेद विवक्षित हो,

५

१०

१५

२०

२५

मुणकारंगळप्पुवु अ८।१५।प-१।८।१५। इतल्लेडयोळं व्याप्तिरियल्लपडुगु।

परमावहिवरखेत्तेणवहिदुक्कस्स ओहिखेत्तं तु ।

सन्वावहिगुणगारो काले वि असंखलोगो दु ॥४१९॥

परमावधिवरक्षेत्रेणापहृतोत्कृष्टावधिक्षेत्रं तु । सर्व्वावधिगुणकारः कालेप्यसंख्यातलोकस्तु ।

५ परमावधिज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणदिदं अवधिनिबद्धोत्कृष्टक्षेत्रमं भागिसुत्तिरलाबुदोदु
लब्धमदु तु मत्ते सर्वावधिज्ञानविषयक्षेत्रगुणकारमक्कुमावगुण्यक्किदुगुणकारमक्कुमेदोडे परमाव-
धिज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रबकक्कुमा गुण्यगुणकारंगळं गुणिसिद लब्धं सर्वावधिज्ञानविषयक्षेत्र-
मक्कुमे ब्रुदत्थं । अंतादोडा अवधिनिबद्धोत्कृष्ट क्षेत्रप्रमाणमनितेदोडे ।

घण्टोगुणसत्ताया वग्गट्ठाया कमेण छेदणया ।

१० तेजवकायस्स ठिदी ओहिणिबद्धं च खेतं ॥

अज्ज्ञवसाणणिगोदसरीरे तेसु वि य कायठिदी जोगा ।

अविभागपडिच्छेदो लोकेवग्गे असंखेज्जे ।

१५ एंबो यागमप्रमाणदिदं घनघनाधारियोऽपेऽल्पदृ अवधिनिबद्धोत्कृष्टमसंख्यातलोक-
 संवर्गसंजनितलब्धराशियक्कुमी राशियं परमावधिज्ञानविषयस्वोत्कृष्टक्षेत्रदिदं भागिमुत्तिरलु
 लब्धं यावत्तावत्प्रमाणं गुणकारप्रमाणमक्कुमी

गुणकारिदं परमावधिज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रम् ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ गुणिसिद्धौ सर्वावधि-
ज्ञानविषयक्षेत्रमे अवधिनिबद्धोत्कृष्टक्षेत्रमवकुर्मै बुद्धयै ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ । तु मते

धनमात्राः षट्. ते उभये मिलित्वा गच्छधनमात्रा दशगुणकारा भवन्ति । एवं सर्वविकल्पेषु ज्ञातव्यम् ॥४१८॥

उत्कृष्टावधिक्षेत्रं तत्र द्विरूपधनाधनधारयां लोकगुणकारशलाकावर्गशलाकार्धच्छेदशलाकातेजस्कायिक-

२० स्थित्यवधिनिबद्धोत्कृष्टक्षेत्राणां प्रत्येकमसंख्यातवर्गस्थानानि गत्वा गत्वोत्पन्नत्वात् पञ्चासंख्यातलोकगुणितलोक-
मात्रं तदेव परमावधिज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणेन भक्तं सत्—३ । ॐ अ ॐ अ ॐ अ ॐ अ सर्वावि-
३ । ३ अ ॐ अ ॐ अ

उसके प्रमाणको गच्छ कहते हैं। जैसे विवक्षित भेद चौथा सो गच्छका प्रमाण चार हुआ।

और तत्काल अतीत तीसरा भेद तीन, उसका गच्छ धन छह हुआ। पहला गच्छ चार और यह छह मिलकर दस होते हैं। इतना ही विवक्षित गच्छ चारका संकलित धन होता है।

२५ यही चतुर्थ भेदका गुणकार होता है। इसी प्रकार सब भेदोंमें जानना ॥१८॥

उत्कृष्ट अवधिज्ञानका क्षेत्र कहते हैं। द्विरूपघनाचनधारामें लोक, गुणकारशलाका, वर्गशलाका, अर्धच्छेदशलाका, अग्निकायकी स्थितिका परिमाण और अवधिज्ञानके उत्कृष्ट क्षेत्रका परिमाण, ये स्थान असंख्यात-असंख्यात वर्गस्थान जानेपर उत्पन्न होते हैं। इसलिए पाँच बार असंख्यात लोक प्रमाण परिमाणसे लोकको गुणा करनेपर सर्वावधिज्ञानके

३०. विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्रका परिमाण आता है। उसमें उत्कृष्ट परमावधिज्ञानके विषयभूत क्षेत्रका भाग देनेपर जो परिमाण आवे, वह सर्वावधिज्ञानके विषयभूत क्षेत्रका परिमाण लानेके लिए गुणकार होता है। इससे परमावधिज्ञानके विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्रको गुणा करनेपर सर्वावधिज्ञानके विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्रका परिमाण आता है। तथा सर्वावधिके

सर्वाविधिज्ञानविषयकालदोषः परमाविधिज्ञानविषयोत्कृष्टकालगुण्यक्केयुमसंख्यातलोकः । $\equiv a$ गुणकारमक्कुमा परमाविधिज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रकालंगळ प्रमाणंगळता मनिते'दोडे तदानयन-विधानकरणसूत्रद्वयमं पेळदपं ।

इच्छितराशिच्छेदं दिण्णच्छेदेहि भाजिदे तत्थ ।

लद्धमिददिण्णरासीणम्भासे इच्छिदो रासी ॥४२०॥

ईप्सितराशिच्छेदं देयच्छेदैर्भाजिते तत्र । लद्धमितदेयराशीनामभ्यासे ईप्सितो राशिः ।

इदु साधारणसूत्रमप्युर्दरिदमित्तिलयंकसंदृष्टि मुन्नं तोरिसत्पडुगुमदे ते'दोडे परमाविधिज्ञान-विषयक्षेत्रकालंगळोळावत्यसंख्यातभागगुणकारंगळ पूर्वोक्तकर्मादिदं विवक्षितगच्छधनप्रमितंगळ'व व्याप्तिगुंटप्युर्दरिदं परमाविधिज्ञान तृतीयविकल्पमं विवक्षितं माडिको'डु ईप्सितराशियुमं वेसदछप्पण्णनं माडि २५६ अदक्के गुणकारभूतावत्यसंख्यातक्के चतुःषष्टि चतुर्थाशमं ६४ संदृष्टियं १०

माडिदीयावलियऽसंख्यातगुणकारंगळा तृतीयविकल्पदोषः गच्छधनप्रमितंगळपुवु ३।४ लब्ध-२।१

विषयक्षेत्रज्ञानयने गुणकारो भवति $\equiv a \equiv a$ अनेन परमाविधिज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रे गुणिते सर्वाविधि-ज्ञानविषयक्षेत्रं स्यात् इत्यर्थः । तु—पुनः सर्वाविधिविषयकालानयने परमाविधिविषयसर्वोत्कृष्टकालस्य प-१ $\equiv a \equiv a \equiv a$ असंख्यातलोकः $\equiv a$ गुणकारो भवति ॥४१९॥ तत्परमाविधिविषयोत्कृष्टक्षेत्रकालप्रमाणानयनविधाने करणसूत्रद्वयमाह—

अस्य साधारणसूत्रत्वात् ईप्सितराशेः वेसदछप्पण्णस्य अर्धच्छेदाः अष्टौ ८ । एषु देयस्य आवत्यसंख्येय-भागसंवृष्टिचतुःषष्टिचतुर्थाशस्य ६४ अर्धच्छेदैः भागहारार्धच्छेदन्यूनभाज्यार्धच्छेदमात्रैः ६-२ भाजितेषु ४

सत्सु ८ तत्र यावल्लब्धं २ तावन्मात्रदेयराशीनां ६४ ६४ अभ्यासे परस्परगुणने कृते सति ईप्सितराशिरूपयते । ६-२ ४ ४

२५६ एवं पत्यसूच्यङ्गुलजगच्छे णिलोकानामपीप्सितराशीनामर्धच्छेदेषु देयस्यावत्यसंख्येयभागस्यार्धच्छे-

विषयभूत कालका परिमाण लानेके लिए असंख्यात लोक गुणकार है । इस असंख्यात लोक प्रमाण गुणकारसे परमावधिके विषयभूत सर्वोत्कृष्ट कालको गुणा करनेपर सर्वाविधिज्ञानके विषयभूत कालका परिमाण होता है ॥४१९॥ २०

अब परमावधिके विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र और उत्कृष्ट कालका प्रमाण लानेके लिए दो करणसूत्र कहते हैं—

यह करणसूत्र होनेसे सब जगह लग सकता है । इसका अर्थ—इच्छित राशिके अर्धच्छेदोंको देयराशिके अर्धच्छेदोंसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसको एक-एक करके पृथक्-पृथक् स्थापित करे । और उस एक-एकके ऊपर जिस देयराशिके अर्धच्छेदोंसे भाग दिया था, उसी देयराशिको रखकर परस्परमें गुणा करनेपर इच्छितराशिका प्रमाण आता है । जैसे इच्छित राशि दो सौ छप्पन २५६ के अर्धच्छेद आठ ८ । देयराशि चौंसठका चौथा भाग ४- सोलह । उसके अर्धच्छेद चार । क्योंकि भाज्यराशि चौंसठके अर्धच्छेद छह है । उसमें-से भागहार चारके अर्धच्छेद दो घटानेसे शेष चार अर्धच्छेद बचते हैं । इन चार अर्धच्छेदोंका भाग आठ अर्धच्छेदोंमें देनेसे दो लब्ध आया । सो दोका विरलन करके एक-एकपर देयराशि चौंसठके चतुर्थ भाग सोलह रखकर परस्परमें गुणा करनेसे इच्छितराशि २५

मारु ६। एतावन्मात्र गुणकारंगळपुवु ६४। ६४। ६४। ६४। ६४। ६४ मिल्लि ईप्सित-
४ ४ ४ ४ ४ ४

राशिच्छेदं विवक्षितराशियदु बेसदछप्पणनदर च्छेदराशियेदु ८। इदनु देयच्छेदैः देयमावत्यसं-
ख्यातकंसंदृष्टि ६४ इदरद्वच्छेदंगळनितपुवोदोडे भज्जस्सद्वच्छेदा भाज्यदद्वच्छेदंगळारु ६।
४

५ हारद्वच्छेदणाहि परिहीणा हारदद्वच्छेदंगळिदं परिहीनंगळादोडे । ६। २। नात्कु । लद्धस्सद्वच्छेदा
तल्लब्धराशिगद्वच्छेदशलाकेगळपुवपुदरिदमी देयराशियद्वच्छेदंगळिदं भागंगोळुत्तिरलु १ ८
६-२

लब्धं यावन्मात्रं २ तावन्मात्रदेयरासीणभासे देयराशिगळगन्योन्याभ्यासमागुत्तिरलु ६४। ६४
४ ४

तन्न विवक्षितराशियप्प बेसद छप्पणं पुटदुगुमित । पत्य । सूच्यंगुल । जगच्छेणिलोकंगळोप्सित-
राशिगळादोडं तत्तद्वच्छेदंगळना देयमप्पावत्यसंख्यातदद्वच्छेदंगळिदं भागिसि

पत्यच्छेद सूच्यंगुलच्छेद जगच्छेणीच्छेद लोकच्छेद तत्तल्लब्धमात्रमावत्यसंख्यातंगलं
छे छे छे वि छे छे ९

१६-४ १६-४ १६-छे छे ३ १। ६-४
४

१० गुणिसुत्तिरलु तत्तत्पत्यसूच्यंगुल जगच्छेणिलोकंगळं पुटदुगुमं दरिबुदु ।

दिण्णच्छेदेणवहिदलोगच्छेदेण पदधणे भजिदे ।

लद्धमिदलोगगुणणं परमावहिचरमगुणगारो ॥४२१॥

देयच्छेदनापहृत लोकच्छेदेन पदधने भक्ते । लब्धमितलोगगुणनं परमावधिचरमगुणकारः ।

देयच्छेदंगळिदं भागिसत्पट्ट लोकच्छेदंगळिदं ८ पदधने मुन्नं विवक्षित तृतीयपद
६-२

१५ धनमं ३। ४ भजिदे भागिसुत्तिरलु ३। ४ यल्लब्धं तल्लब्धमपवर्तितं मूर ३। तावन्मात्र
२। १ २। १ ८
६-२

दैर्भक्तेषु—	पत्यच्छेद	सूच्यङ्गुलच्छेद	जगच्छेणिलच्छेद	लोकच्छेद	तत्र यल्लब्धं तत्तन्मात्रा-
	छे	छे छे	वि छे छे ३	वि छे छे ९	
	१६-४	१६-४	१६-४	१६-४	

वत्यसंख्येयभागानामभ्यासे कृते ते पत्यादीप्सितराशयः उत्पद्यन्ते ॥४२०॥

देयच्छेदभक्तलोकच्छेदैः ८ पदधने विवक्षिततृतीयपदस्य धने ३। ४ भक्ते ३। ४
६-२ २। १ २। १। ८
६-२

२५६ उत्पन्न होती है । इसी प्रकार पत्य प्रमाण या सूच्यंगुल प्रमाण या जगतश्रेणी प्रमाण

२० अथवा लोकप्रमाण जो भी इच्छित राशि हो, उसके अर्धच्छेदोंमें देयराशि आवलीके असंख्यातवें भागके अर्धच्छेदोंसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसका एक-एकके रूपमें विरलन करके प्रत्येकके ऊपर आवलीका असंख्यातवाँ भाग रखकर परस्परमें गुणा करनेपर इच्छित राशि पत्य आदि उत्पन्न होती है ॥४२०॥

देयराशिके अर्धच्छेदोंका भाग लोकराशिके अर्धच्छेदोंमें देनेपर जो प्रमाण आवे,

बेसदछप्पणंगळुं संवर्गं माडिद लब्धं तृतीयपददोळु परमावधिकेत्रकालंगळु गुणकारप्रमाण-
मक्कु $\equiv ६५ \mid \equiv २५६ \mid$ प-१ $\mid ६५ = २५६ \mid$ मिते चरमदोळं देयमावत्यसंख्यातभागमक्कु ८

मो राशिगढ्दंछेदंगळनितप्पुवे'दोडे संख्यातरूपहीनावलिच्छेदमात्रंगळप्पुवु १६-४ वदे'त'दोडे—
विरळिज्जमाणराशी दिणस्सद्धच्छिदीहि संगुणिदे ।

अद्धच्छेदसळागा होंति समुप्पणरासिस्स ।

एदितावलिये'बुदु परिमितासंख्यातजघन्यराशियं विरळिसि प्रतिरूपमा राशियने कोट्टु
वर्गितसंवर्गं माडे सजनितराशियप्पुदरिदमा परिमितासंख्यातजघन्यराश्यद्धंछेदंगळु संख्यात-
रूपंगळिदं गुणिसलपट्ट परोतासंख्यातजघन्यराशिप्रमाणमावलियद्धंछेदंगळप्पुवु । १६।-७।
गुणिसिदोडे सव्वधारादि तद्योग्यधारिगळोळु परोतासंख्यातमध्यपतितासंख्यातराशियवकुमदके
संदृष्टि पदितां १६ इदरोळु हारभूतासंख्याताद्धंछेदंगळु संख्यातरूपंगळप्पुवुव ४ कळेदोडे १०
शेषमावत्यसंख्यातराशिगळद्धंछेदंगळप्पुवु १६-४ । इंतु त्रैराशिकं माडल्पडुगुं प्र वि छे ८ वि छे
११६-४

छे ९। फ $\equiv १$ इ $\equiv ०$ ६ ० छे ८ $\equiv ०$ ६ ० ई त्रैराशिकं कटाक्षिसि पेळदपं । देयच्छेदे-
प २ ० पा १ ०

यल्लब्धं तन्मात्र ३ वेमदछप्पणानां गुणने परस्परसंवर्गसंजनितराशिः तृतीयपदे परमावधिकेत्रकालयोर्गुणकार-
प्रमाणं भवति $\equiv ६५ = २५६ \mid$ प-१ $\mid ६५ = २५६$ एवं चरमेऽपि देयमावत्यसंख्येयभागः तस्य अर्धच्छेदाः
भागहारार्धच्छेदनभाज्यार्धच्छेदमात्रत्वात् संख्यातरूपन्यूनपरोतासंख्यातमध्यमभेदमात्राः संदृष्ट्या एता- १५
वन्तः १६-४ एभिः देयार्धच्छेदैर्भवतेन लोकार्धच्छेदराशिना पदघने-परमावधिज्ञानचरमविकल्पसंकलितसर्वधने
भक्ते सति यल्लब्धं तन्मात्रलोकानां परस्परगुणने परमावधिचरमगुणकारो भवति । यद्येतावतां देयरूपावत्य-
संख्येयभागानां दे ८ परस्परगुणने लोक उत्पद्यते फ $\equiv$ तदा एतावतां देयरूपावत्यसंख्येय-
प्र १ वि छे छे ९
१६-४

उससे विवक्षित पदके संकलित धनमें भाग दें । उससे जो प्रमाण आवे, उतनी जगह लोक-
राशिको रखकर परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, वह विवक्षित पद सम्बन्धी क्षेत्र २०
या कालका गुणकार होता है । इसी प्रकार परमावधिके अन्तिम भेदमें गुणकार जानना ।
जैसे देयराशि चौसठका चौथा भाग अर्थात् सोलह, उसके अर्धच्छेद चार, उसका भाग दो
सौ छप्पनके अर्धच्छेद आठमें देनेपर दो लब्ध आया । उसका भाग विवक्षित पद तीनके
संकलित धन छहमें देनेसे तीन आया । सो तीन जगह दो सौ छप्पन रखकर परस्परमें गुणा
करनेसे जो प्रमाण होता है, वही तीसरे स्थानमें गुणकार जानना । इसी तरह यथार्थमें २५
देयराशि आवलीका असंख्यातवां भाग, उसके अर्धच्छेद आवलीके अर्धच्छेदोंमें-से भाजक
असंख्यातके अर्धच्छेदोंको घटानेपर जो प्रमाण रहे, उतने हैं । सो वे संख्यातहीन परोता-
संख्यातके मध्यमभेद प्रमाण होते हैं । इनका भाग लोकराशिके अर्धच्छेदोंमें देनेपर जो
प्रमाण आवे, उसका भाग परमावधिके विवक्षित भेदके संकलित धनमें देनेसे जो प्रमाण

नापहतलोकच्छेदेन पदधने भक्ते । देयच्छेदगर्हितं भागिसत्पट्ट लोकच्छेदराशियिदं प्रमाणराशि-
यप्पुर्दारित्वं पदधने भक्ते इच्छाराशियप्प पदधनसं भागिसुत्तिरल्लु लब्धं यावत्तावत्प्रमितलोकगणं
घणितसंवर्गं माडुत्तिरल्लु संजनितलब्धराशियदु $\equiv a \equiv a \equiv a$ परमावधिज्ञानविषयमप्य
चरमभेदोक्तु गुण्यमागिदं लोककके गुणकारप्रमाणमक्कुं $\equiv a \equiv a \equiv a$ कालदोळं पत्य—१

५ $\equiv a \equiv a \equiv a$ इतिवक्कु ।

आवलि असंखभागा जहणदव्वस्स होंति पज्जाया ।

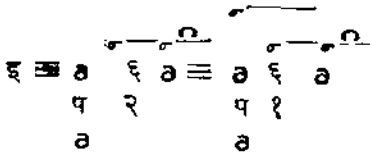
कालस्स जहण्णादो असंखगुणहीनमेत्ता हु ॥४२२॥

आवत्यसंख्यभागाः जघन्यद्रव्यस्य भवन्ति पर्यायाः । कालस्य जघन्यादसंख्यगुणहीनमात्राः
खलु ॥

१० आवत्यसंख्यातभागमात्रांशु देशावधिज्ञानजघन्यद्रव्यद पर्यायंगलपुवादोडमा जघन्य-

भागानां—दे ८

परस्परगुणने कियन्तो लोका उत्पद्यन्ते इति त्रैराशिकलब्धमात्राणां



लोकानां $\equiv a \equiv a \equiv a$ परमावधिविषयचरमक्षेत्रकालानयने लोकसमयोनपत्ययोगुणकारो भवति । $\equiv$
१ $\equiv a$ । $\equiv a$ । $\equiv a$ ५—१ । $\equiv a \equiv a \equiv a$ ॥४२१॥

आवत्यसंख्यातभागमात्राः देशावधिजघन्यद्रव्यस्य पर्याया भवन्ति तथापि तद्विषयजघन्यकालात् ८
a

- १५ आवे, उतनी जगह लोकराशिको स्थापित करके परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, सो उस भेदमें गुणकार होता है । उस गुणकारसे देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र लोकप्रमाणको गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उतना उस भेदमें क्षेत्रका परिमाण होता है । तथा इसी गुणकारसे देशावधिके उत्कृष्ट काल समयहीन पत्यको गुणा करनेपर उसी भेदसम्बन्धी कालका परिमाण आता है । इसी तरह परमावधिज्ञानके अन्तिम भेदमें आवलीके असंख्यातवें भागके
- २० अर्धच्छेदोंका भाग लोकके अर्धच्छेदोंमें देनेसे जो प्रमाण आवे, उसका भाग परमावधिज्ञानके अन्तिम भेदके संकलित धनमें देनेपर जो लब्ध आवे, उतनी जगह लोकराशिको रखकर परस्परमें गुणा करनेपर परमावधिका अन्तिम गुणकार होता है । सो इस प्रकार त्रैराशिक करना—आवलीके असंख्यातवें भागके अर्धच्छेदोंका लोकके अर्धच्छेदोंमें भाग देनेसे जो प्रमाण आता है, उतने आवलीके असंख्यातवें भागोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे यदि
- २५ एक लोक होता है, तो यहाँ अन्तिम भेदके संकलित धन प्रमाण आवलीके असंख्यातवें भागोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे कितने लोक होंगे । ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितना प्रमाण आवे, उतने लोकप्रमाण अन्तिम भेदका गुणकार होता है । इससे देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र लोकको अथवा उत्कृष्टकाल समयहीन पत्यको गुणा करनेपर परमावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र और कालका परिमाण होता है ॥४२१॥

३० जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत द्रव्यकी पर्याय आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण

देशावधिज्ञानविषयजघन्यकालमं नोडलु ८ असंख्यातगुणहीनमात्रंगळप्पुवु ८ स्फुटमाणि ।
a a a

सर्वोहित्तिय कमसो आवलियसंखभागगुणितकमा ।

दव्वाणं भावाणं पदसंखा सरिसगा होंति ॥४२३॥

सर्वाविधिज्ञानपर्यंतं क्रमशः आवल्यसंख्यभागगुणितक्रमाः । द्रव्याणां भावानां पदसंख्याः
सदृशाः भवन्ति ॥

देशावधिज्ञानविषयजघन्यद्रव्यदपर्यायंगळप्प भावंगळु जघन्यदेशावधिज्ञानं मोदल्गोडु
सर्वाविधिज्ञानपर्यंतं क्रमदिदं आवल्यसंख्यातगुणितक्रमंगळप्पुवदु कारणमाणि द्रव्यंगळंग भावंगळंग
स्थानसंख्यंगळु समानंगळयेप्पुवु ।

अनंतरं नरकगतियोलु नारकर्गवधिविषयक्षेत्रमं पेळदपरु—

सत्तमखिदिम्मि कोसं कोसस्सद्धं पवडुठदे ताव ।

जाव य पढमे गिरये जोयणमेक्कं हवे पुण्णं ॥४२४॥

सप्तमक्षितौ क्रोशः क्रोशस्याद्धं प्रवर्धते तावत् । यावत्प्रथमे नरके योजनमेकं भवेत्पूर्णं ॥

सप्तमक्षितिमाघवियोलु नारकर्गवधिविषयमप्प क्षेत्रमेकक्रोशमात्रमवकुं । षष्ठक्षितियोलु
क्रोशाद्धं पेच्चुंगुं । पंचमक्षितियोलु सत्तमदं नोडे क्रोशाद्धं पेच्चुंगुं । चतुर्थक्षितियोलहर मेले
क्रोशाद्धं पेच्चुंगुं । तृतीयक्षेत्रदोळदर मेले क्रोशाद्धं पेच्चुंगुं । द्वितीयपृथिव्योलमंते क्रोशाद्धं
पेच्चुंगुं । प्रथमक्षितियोलु क्रोशाद्धं पेच्चु संपूर्णं योजनप्रमाणमवकुं । मा क्रोश १ ।
म ३ । अ । क्रोश २ । अं क्रोश ५ । मे क्रोश ३ । वं क्रो ७ । घ क्रो ४ ।

२

२

२

असंख्यातगुणहीनभावाः स्फुटं भवन्ति ८ ॥४२२॥

a a

देशावधिजघन्यद्रव्यस्य पर्यायरूपभावाः जघन्यदेशावधितः सर्वाविधिज्ञानपर्यन्तं क्रमेण आवल्यसंख्यात-
गुणितक्रमाः स्युः । तेन द्रव्याणां भावानां च स्थानसंख्या समाना एव ॥४२३॥ अथ नरकगतावधिविषय-
क्षेत्रमाह—

सप्तमक्षितौ अवधिविषयक्षेत्रं एकक्रोशः । तत् उपरि प्रतिपृथिव तावत् क्रोशस्यार्धाद्धं प्रवर्धते यावत्प्रथमे

हैं ; तथापि उसके विषयभूत जघन्य कालसे असंख्यातगुणा हीन हैं ॥४२२॥

देशावधिके विषयभूत द्रव्यके पर्यायरूप भाव जघन्य देशावधिसे सर्वाविधिज्ञान पर्यन्त
क्रमसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाणसे गुणित हैं । अर्थात् देशावधिके विषयभूत द्रव्य-
की अपेक्षा जहाँ जघन्य भेद है, वहाँ ही द्रव्यके पर्यायरूप भावकी अपेक्षा आवलीके
असंख्यातवें भाग प्रमाण भावको जाननेरूप जघन्य भेद है । जहाँ द्रव्यकी अपेक्षा दूसरा
भेद है, वही भावकी अपेक्षा उस प्रथम भेदको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर
जो प्रमाण आवे, उस प्रमाण भावको जानने रूप दूसरा भेद है । इसी प्रकार सर्वाविधिपर्यन्त
जानना । इस तरह अवधिज्ञानके जितने भेद द्रव्यकी अपेक्षा हैं, उतने ही भावकी अपेक्षा हैं ।
अतः द्रव्य और भावकी अपेक्षा स्थान संख्या समान है ॥४२३॥

अब नरकगतिमें अवधिज्ञानका विषयक्षेत्र कहते हैं—

सातवीं पृथ्वीमें अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र एक कोस है । उससे ऊपर प्रत्येक

८३

अनंतरं तिर्यग्मनुष्यगतिगळोवधिविषयक्षेत्रं पेळवपं ।

तिरिण् अवरं ओघो तेजालंबे य होदि उक्कस्सं । ।

मणुए ओघं देवे जहाकमं सुणुह बोच्छामि ॥४२५॥

५ वक्ष्यामि ॥ तिर्यग्दिव्यवरमोघः तेजोऽलंबे च भवत्युत्कृष्टं । मनुजे ओघः देवे यथाक्रमं शृणुत

तिर्यग्गतिय तिर्यग्चरोळु देशावधिज्ञान जघन्यमक्कुं । मेलं तेजः शरीरपर्यंतं सामान्योक्त द्रव्यक्षेत्रकालभावंगळुत्कृष्टदिदमल्लिपर्यंतं विषयमप्पुवु ।

मनुजरोळु देशावधिजघन्यं मोदलोडु सर्वावधिज्ञानपर्यंतं सामान्योक्तसर्व्वमुमप्पुवु । देवगतियोळु देवकर्कळं यथाक्रमदिदं पेळवे केळि :—

१० पणुवीसजोयणाइं दिवसंतं च म कुमारभोम्माणं ।

संखेज्जगुणं खेत्तं बहुगं कालं तु जोइसिगे ॥४२६॥

पंचविंशतिर्योजनानि दिवसस्यांतश्च कुमारभौमानां । संख्येयगुणं क्षेत्रं बहुकःकालस्तु ज्योतिष्के ॥

भावनरोळं व्यंतरोळं जघन्यदिदमिप्पत्तैदु योजनंगळुमोडु दिनदोळगे विषयमक्कुं ।

१५ ज्योतिष्करोळु भवनवासिर्व्यंतरंगळ जघन्यविषयक्षेत्रं नोडलु संख्यातगुणितं क्षेत्रमक्कुं बहु-
कालमक्कुं ।

नरके योजनं संपूर्णं भवति ॥४२४॥ अथ तिर्यग्मनुष्यगत्योराह—

तिर्यग्जीवे देशावधिज्ञानं जघन्यादारम्य उत्कृष्टतः तेजःशरीरविषयविकल्पपर्यन्तमेव सामान्योक्ततद्द्र-
व्यादिविषयं भवति । मनुजे देशावधिजघन्यदारम्य सर्वावधिज्ञानपर्यन्तं सामान्योक्तं सर्वं भवति ॥४२५॥

२० देवगती यथाक्रमं वक्ष्यामि शृणुत—

भावनव्यन्तरयोजन्येन पञ्चविंशतियोजनानि किंचिद्नदिवसश्च विषयो भवति । ज्योतिष्के क्षेत्रं ततः
संख्यातगुणं, कालस्तु बहुकः ॥४२६॥

पृथिवीमें आधा-आधा कोस बढ़ता जाता है । इस तरह प्रथम नरकमें सम्पूर्ण योजन क्षेत्र होता है ॥४२४॥

२५ अब तिर्यग्चगति और मनुष्यगतिमें कहते हैं—

तिर्यग्जीवमें देशावधिज्ञान जघन्यसे लेकर उत्कृष्टसे तेजसशरीर जिस भेदका विषय है, उस भेद पर्यन्त होता है । सामान्य अवधिज्ञानके वर्णनमें वहाँ तक द्रव्यादि विषय जो कहे हैं, वे सब होते हैं । मनुष्यमें देशावधिके जघन्यसे लेकर सर्वावधिज्ञान पर्यन्त जो सामान्य कथन किया है, वह सब होता है । आगे यथाक्रम देवगति में कहूंगा । उसे

३० सुनो ॥४२५॥

अब देवगतिमें कहते हैं—

भवनवासी और व्यन्तरोंमें अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र जघन्यसे पञ्चीस योजन है और काल कुछ कम एक दिन है । तथा ज्योतिषी देवोंमें क्षेत्र तो इससे संख्यातगुणा है और काल बहुत है ॥४२६॥

असुराणमसंखेज्जा कोडीओ सेसजोइसंताणं ।

संखातीदसहरसा उक्कस्सोहीण विसओ दु ॥४२७॥

असुराणमसंखेय्या कोट्यः शेषज्योतिष्कांतानां । संख्यातीतसहस्रमुत्कृष्टावधोनां विषयस्तु ॥

असुररुगळिगुत्कृष्टक्षेत्रमसंख्यातकोटिगळक्कुं । शेषनवविधभावनदेववर्कळं व्यंतरज्योतिष्क- ५
देववर्कळगुं असंख्यातसहस्रमुत्कृष्टावधिज्ञानविषयमक्कुं ।

असुराणमसंखेज्जा वरिसा पुण सेसजोइसंताणं ।

तस्संखेज्जदिभागं कालेण य होदि नियमेण ॥४२८॥

असुराणमसंखेय्यानि वर्षाणि पुनः शेषज्योतिष्कांतानां । तत्संखेय्यभागः कालेन च भवति नियमेन ॥ १०

असुरकुलद भवनामररिगुत्कृष्टकालमसंखेय्यवर्षगळप्पुवु । तु मत्ते शेषनवविधभावनदेववर्कळं व्यंतरज्योतिष्कदेववर्कळं असुरकुलसंभूतग्गे पेळ्ळदकालमं नोडलु संख्यातैकभागमक्कुमुत्कृष्टकालं । व ० ।

१

भवणतियाणमधोधो थोवं तिरिण्ण होदि बहुगं तु ।

उड्ढेण भवणवासी सुरगिरिसिहरोत्ति पस्संति ॥४२९॥

भवनत्रयाणामधोधः स्तोकं तिर्यग्बहुकं भवति तु ऊर्ध्वतो भवनवासिनः सुरगिरिशिखर- १५
पर्यंतं पश्यन्ति ॥

भवनत्रयामरगॅल्लं केळ्ळगे केळ्ळगे अवधिविषयक्षेत्रं स्तोकस्तोकमक्कुं । तिर्यक्काणि बहुक्षेत्रं विषयमक्कुं । तु मत्ते भवनवासिदेववर्कळु तम्मिहँडैयिदंदि मेगे सुरगिरिशिखरपर्यंतम-

असुराणां उत्कृष्टविषयक्षेत्रं असंख्यातकोटियोजनमात्रम् । शेषनवविधभावनव्यन्तरज्योतिष्काणां च असंख्यातसहस्रयोजनानि ॥४२७॥

असुरकुलस्योत्कृष्टकालः असंखेय्यवर्षाणि पुनः शेषनवविधभावनव्यन्तरज्योतिष्काणां तस्य संख्यातैक- भागः व ० ॥४२८॥

१

भवनत्रयामराणामधोधोऽवधिविषयक्षेत्रं स्तोकं भवति । तिर्यग्रूपेण बहुकं भवति । तु-पुनः, भवनवासिनः

असुरकुमार जातिके भवनवासी देवोंके अवधिज्ञानका उत्कृष्ट विषयक्षेत्र असंख्यात कोटि योजन प्रमाण है । शेष नौ प्रकारके भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषीदेवोंके असंख्यात २५
हजार योजन है ॥४२७॥

असुरकुमारोंका उत्कृष्ट काल असंख्यात वर्ष है । शेष नौ प्रकारके भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके उत्कृष्ट अवधिज्ञानका काल उक्त कालके संख्यातवें भाग है ॥४२८॥

भवनवासी, व्यन्तरों और ज्योतिषी देवोंके नीचेकी ओर अवधिज्ञानका विषयक्षेत्र थोड़ा है, किन्तु तिर्यक् रूपसे बहुत है । भवनवासी अपने निवासस्थानसे ऊपर मेरुपर्वतके ३०

वधिदर्शनदिदं काण्वरं ।

जघन्य	जघन्य	उ	उ
भवनव्यंतर	जोधिसि	असुर	भ ९। व्यं। जो
यो २५	२५१	को ०	१०००। ०
वि १	बहुकाल	व ०	व ० १

सक्कीसाणा पढमं विदियं तु सणक्कुमारमाहिंदा ।

तदियं तु बम्ह लांतव सुक्कसहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शक्रेशानौ प्रथमां द्वितीयां तु सनत्कुमारमाहेन्द्रौ । तृतीयां तु ब्रह्मलांतवौ शुक्रसहस्रारजौ

५ तुप्या ॥

सौधर्मेशानकल्पजरुग्ळ प्रथमपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । सनत्कुमारमाहेन्द्रकल्पसंभूतरं तु मत्ते
द्वितीयपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । ब्रह्मलांतवकल्पजरं तृतीयपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । शुक्रशतारकल्पजरं
चतुर्थपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं ।

आणदपाणदवासी आरण तह अच्चुदा य पस्संति ।

१०

पंचमखिदिपेरंतं छड्ढिं गेवेज्जगा देवा ॥४३१॥

आनतप्राणतवासिनः आरणास्तथाऽच्युताश्च पश्यन्ति पंचमक्षितिपर्यन्तं षष्ठिं ग्रैवेयका देवाः ॥

आनतप्राणतवासिगळ् आरणाच्युतकल्पजरुमत्ते पंचमक्षितिपर्यन्तं काण्वरं । नवग्रैवेयकबह-
मिद्रं षष्ठपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं ।

सव्वं च लोयनालिं पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।

१५

सक्खेत्ते य सक्कम्मे रूवगदमणंतभागं च ॥४३२॥

सर्वा च लोकनाडीं पश्यन्त्यनुत्तरेषु ये देवाः । स्वक्षेत्रे स्वकर्मणि रूपगतमनंतभागं च ॥

स्वकीयावस्थितस्थानादुपरि सुरगिरिशिखरपर्यन्तं अवधिदर्शनेन पश्यन्ति ॥४३२॥

सौधर्मेशानजाः प्रथमपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति । सनत्कुमारमाहेन्द्रजाः पुनर्द्वितीयपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति ।

ब्रह्मलान्तवजास्तृतीयपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति । शुक्रशतारजाः चतुर्थपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति ॥४३०॥

२०

आनतप्राणतवासिनः तथा आरणाच्युतवासिनश्च पञ्चमपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति, नवग्रैवेयका देवाः
षष्ठपृथ्वीपर्यन्तं पश्यन्ति ॥४३१॥

शिखरपर्यन्तं अवधिदर्शनके द्वारा देखते हैं ॥४३२॥

सौधर्म और ऐशान स्वर्गोंके देव अवधिज्ञानके द्वारा प्रथम नरक पृथ्वीपर्यन्त देखते
हैं । सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गोंके देव दूसरी पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं । ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर और
लान्तव-कापिष्ठ स्वर्गोंके देव तीसरी पृथ्वी पर्यन्त देखते हैं । शुक्र-महाशुक्र और शतार-
सहस्रार स्वर्गोंके देव चतुर्थ पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं ॥४३०॥

२५

आनत-प्राणत तथा आरण-अच्युत स्वर्गोंके वासी देव पाँचवीं पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं
तथा नौ ग्रैवेयकोंके देव छठी पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं ॥४३१॥

सर्वलोकनाडियं नवानुद्दिशपञ्चानुत्तरविमानवासिगळप्पहमिद्ररु काण्वर अदे ते दोडे सौधर्मादिसमस्तदेवकर्कळु मेगे स्वस्वस्वर्गविमानध्वजदंडशिखरपर्यंत काण्वर । नवानुद्दिशविमान-वासिगळप्पहमिद्ररु पञ्चानुत्तरविमानवासिगळप्पहमिद्ररु मेले तं तम्म विमानशिखरं मोदल्लोडु केळगेल्लियरं बहिव्वातवल्लयमल्लिवरं पञ्चविंशत्युत्तरचतुःशतधनूरहितैकविंशतियोजनरहितमप्यु-दरिदं किंचिदून चतुर्दशरज्ज्वायतरज्जुविस्तारसर्वलोकनाडियनाउडोडु अवधिदर्शनदिदं काण्वर । ५
तदवधिदर्शनदिदं यथासंख्यमाणि साधिकत्रयोदशरज्जुगळं किंचिदूनचतुर्दशरज्जुगळं काण्वर-बुदत्थं । इदुवुं क्षेत्रपरिमाणनियामकमल्लु । तत्र तत्रतननियामकमवकुमेके दोडे अच्युतकल्पपर्यंत-माद देवकर्कळिवहारमात्रदिदमोदानोदडेगे पोदगळगे तावत्क्षेत्रदोळे तदवधिगुत्पत्यम्युपगमदिदं । स्वक्षेत्रे तंतम्म विषयक्षेत्रप्रदेशप्रचयदोळेकप्रदेशं गळेयत्पडुवुदु । स्वकर्मणि तंतम्मवधिज्ञाना-वरणकर्मद्रव्यदोळेकवारं ध्रुवहारं दातव्यमवकुमेन्नेवरं तत्प्रदेशप्रचयं परिसमाप्तिवकुमेन्नेवर- १०
मिदरिदं तदवधिविषयद्रव्यभेदं सूचिसल्लपट्टुदु । ईयत्थमने विशदं माडिदपं :—

नवानुद्दिशपञ्चानुत्तरेषु ये देवाः, ते सर्वा लोकनालि पश्यन्ति अयमर्थः । सौधर्मादिदेवाः उपरि स्वस्व-स्वर्गविमानध्वजदण्डशिखरपर्यन्तं पश्यन्ति । नवानुद्दिशपञ्चानुत्तरदेवास्तु उपरि स्वस्वविमानशिखरमधो यावद्व-हिवत्तवल्लयं तावत् साधिकत्रयोदशरज्ज्वायतां पञ्चविंशत्युत्तरचतुःशतधनूरुनैकविंशतियोजनैर्न्यूनचतुर्दशरज्ज्वायतां च रज्जुविस्तारां सर्वलोकनालि पश्यन्तीति ज्ञातव्यम् । इदं क्षेत्रपरिमाणनियामकं न किन्तु तत्रतत्रतनस्थाननि-यामकं भवति कुतः ? अच्युतान्तानां बिहारमार्गेण अन्यत्र गतानां तत्रैव क्षेत्रे तदवध्युत्पत्यम्युपगमात् । स्वक्षेत्रे स्वस्वविषयक्षेत्रप्रदेशप्रचये एकप्रदेशोऽपनेतव्यः । स्वकर्मणि स्वस्वावधिज्ञानावरणकर्मद्रव्ये एकवारं ध्रुवहारो दातव्यः यावत्प्रदेशप्रचयपरिसमाप्तिः स्यात्तावत्, अनेन तदवधिविषयद्रव्यभेदः सूचितः ॥ ४३२ ॥ १५

नौ अनुदिशों और पाँच अनुत्तरोंमें जो देव हैं, वे समस्त लोकनाली अर्थात् त्रसनाली-को देखते हैं । सौधर्म आदिके देव अपने-अपने स्वर्गके विमानके ध्वजादण्डके शिखरपर्यन्त देखते हैं । नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तरोंके देव ऊपर अपने-अपने विमानके शिखरपर्यन्त और नीचे बाह्य तनुवातवल्लयपर्यन्त देखते हैं । सो अनुदिश विमानवाले तो कुछ अधिक तेरह राजू लम्बी एक राजू चौड़ी समस्त लोकनालीको देखते हैं और अनुत्तर विमानवाले चार सौ पचीस धनुष कम इक्कीस योजनसे हीन चौदह राजू लम्बी एक राजू चौड़ी समस्त त्रसनालीको देखते हैं । यह कथन क्षेत्रके परिमाणका नियामक नहीं है, किन्तु उस-उस स्थानका नियामक है । क्योंकि अच्युत स्वर्ग तकके देव बिहार करके जब अन्यत्र जाते हैं, तो उतने ही क्षेत्रमें उनके अवधिज्ञानकी उत्पत्ति मानी गयी है । अर्थात् अन्यत्र जानेपर भी अवधिज्ञान उसी स्थान तक जानता है, जिस स्थान तक उसके जाननेकी सीमा है ; जैसे अच्युत स्वर्गका देव अच्युत स्वर्गमें रहते हुए पाँचवीं पृथ्वी पर्यन्त जानता है/ वह यदि बिहार करके नीचे तीसरे नरक जावे, तो भी वह पाँचवीं पृथ्वीपर्यन्त ही जानता है ; उससे आगे नहीं जानता । अस्तु, अपने क्षेत्रमें अर्थात् अपने-अपने विषयभूत क्षेत्रके प्रदेशसमूहमें-से एक प्रदेश घटाना चाहिए और अपने-अपने अवधिज्ञानावरण कर्मद्रव्यमें एक बार ध्रुव-हारका भाग देना चाहिए । ऐसा तबतक करना चाहिए, जबतक प्रदेशसमूहकी समाप्ति हो । इससे देवोंमें अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यमें भेद सूचित किया है अर्थात् सब देवोंके अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्य समान नहीं हैं ॥ ४३२ ॥ २०
२५
३०
३५

कल्पसुराणं सगसग ओहीखेत्तं विविस्ससोवचयं ।

ओहीदन्वपमाणं संठाविय ध्रुवहारेण हरे ॥४३३॥

सगसगखेत्तपदेससलायपमाणं समप्पदे जाव ।

तत्थतणचरिमखांडं तत्थतणोहिस्स दव्वं तु ॥४३४॥

५ कल्पसुराणां स्वकस्वकावधिक्षेत्रं विविस्सोपचय—मवधिद्रव्यप्रमाणं संस्थाप्य ध्रुवहारेण हरेत् ॥

स्वस्वक्षेत्रप्रदेशशलाकाप्रमाणं समाप्यते यावत् । तत्रतनचरमखंडं तत्रतनावधेर्द्रव्यं तु ।

कल्पजरप्प देवकर्कळ स्वस्वावधिक्षेत्रमुमं विगतविस्सोपचयावधिज्ञानावरणद्रव्यमुमं स्थापिति—

ॐक्षेत्र३	ॐक्षेत्र	ॐ११	ॐ६	ॐ१५	ॐ१८	ॐ१९	ॐ१०	ॐ११	ॐ१३	ॐ१४-
३४३१२	३४३१	३४३७	३४३	३४३१२	३४३१	३४३१२	३४३	३४३	३४३	३४३
स०१२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२	स०१-२
७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४
द्रव्य	द्रव्य									

१० अमुमेवार्थं विशदयति—

कल्पवासिनां स्वस्वावधिक्षेत्रं विगतविस्सोपचयावधिज्ञानावरणद्रव्यं च संस्थाप्य—

ॐ३	ॐ४	ॐ११	ॐ६	ॐ१५	ॐ१८	ॐ१९	ॐ१०	ॐ११	ॐ१३	ॐ१४-
३४३१२	३४३१	३४३१२	३४३१	३४३१२	३४३१	३४३१२	३४३	३४३१	३४३	३४३
स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-	स०१२-
७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४	७१४

इसी बातको आगे स्पष्ट करते हैं—

कल्पवासी देवोंके अपने-अपने अवधिज्ञानके क्षेत्रको और अपने-अपने विस्सोपचय-रहित अवधिज्ञानावरण द्रव्यको स्थापित करके क्षेत्रमें से एक प्रदेश कम करना और द्रव्यमें एक बार ध्रुवहारका भाग देना । ऐसा तबतक करना चाहिए, जबतक अपने-अपने अवधि-ज्ञानके क्षेत्र सम्बन्धी प्रदेशोंका परिमाण समाप्त हो । ऐसा करनेसे जो अवधिज्ञानावरण कर्मद्रव्यका अन्तिम खण्ड शेष रहता है, उतना ही उस अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यका परिमाण होता है ।

विशेषार्थ—जैसे सौधर्म-पेशान स्वर्गवालोंका क्षेत्र प्रथम नरक पृथ्वीपर्यन्त कहा है । सो पहले नरकसे पहला दूसरा स्वर्ग डेढ़ राजू ऊँचा है । अतः अवधिज्ञानका क्षेत्र उनका एक राजू लम्बा-चौड़ा और डेढ़ राजू ऊँचा हुआ । इस घनरूप डेढ़ राजू क्षेत्रके जितने प्रदेश हों, उन्हें एक जगह स्थापित करें । और जिस देवका जानना हो, उस देवके अवधि-ज्ञानावरण कर्मद्रव्यको एक जगह स्थापित करें । इसमें विस्सोपचयके परमाणु नहीं मिलाना । इस अवधिज्ञानावरण कर्मद्रव्यके परमाणुओंमें एक बार ध्रुवहारका भाग दें और प्रदेशोंमें-से एक कम कर दें । भाग देनेसे जो प्रमाण आया, उसमें दुबारा ध्रुवहारका भाग दें

स्वविषयक्षेत्रदोष ओं दु प्रदेशं तैगदोम्मे ध्रुवहारदिदं भागिसुबुदु । स्वस्वावधिविषयक्षेत्र-
प्रदेशप्रमाणं परिसमाप्तिवक्तुमेवमन्नेवरं ध्रुवहारदिदं द्रव्यं भागिसुबुदुं भागिसुत्तिरलु तत्र-
तन चरमखंडं तत्रतनावधिज्ञानविषयद्रव्यप्रमाणमकुं । स्वस्वावधिविषयक्षेत्रप्रदेशप्रचयप्रमित ध्रुवहा-
रंगिदं स्वस्वावधिज्ञानावरणद्रव्यं विस्रसोपचयं भागिसुत्तिरलु स्वस्वावधिज्ञानविषयद्रव्यमकु-
मे बुदु तात्पर्यार्थं ।

५

सौहर्म्यसाणाणमसंखेज्जा ओ हु वस्सकोडीओ ।

उवरिमकप्पचउक्के पल्लासंखेज्जभागो दु ॥४३५॥

सौधर्म्यज्ञानानां असंखेयाः खलु वर्षकोट्यः । उपरितनकल्पचतुष्के पत्यासंख्यातभागस्तु ।

तत्तो लांतवकप्पप्पहुडी सव्वट्ठसिद्धिपेरंतं ।

किंचूणपल्लमेत्तं कालप्रमाणं जहाजोग्गं ॥४३६॥

१०

ततो लांतवकल्पप्रभृति सर्वार्थसिद्धिपर्यंतं । किंचिदूनपत्यमात्रं कालप्रमाणं यथायोग्यं ।

सौधर्म्यज्ञानकल्पजग्वधिज्ञानविषयकालमसंख्यात वर्षकोटिगण्युवु । वर्ष को ० । खलु
स्फुटमागि । तु मत्ते उपरितनकल्पचतुष्के सनत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-कल्पचतुष्टयवासिदेव-
वर्कळगे कालं यथायोग्यमप्यपत्यासंख्यातभागमात्रमकुं प मेगे लांतवकल्पं मोदल्गो दु सर्वार्थ-

०

सिद्धिपर्यंतं कल्पजगं कल्पातीतजगं कालं यथायोग्यमप्य किंचिदूनपत्यप्रमाणमकुं ।

१५

क्षेत्रे एकप्रदेशमपनीय द्रव्यमेकवारं ध्रुवहारेण भजेत् यावत्स्वस्वावधिक्षेत्रप्रदेशप्रमाणं परिसमाप्यते तावत् ।
तत्रतनचरमखण्डं तत्रतनावधिज्ञानविषयद्रव्यप्रमाणं भवति । स्वस्वावधिविषयक्षेत्रप्रदेशप्रचयप्रमितध्रुवहारभक्तं
विविस्रसोपचयस्वस्वावधिज्ञानावरणद्रव्यं स्वस्वावधिविषयद्रव्यं स्यादित्यर्थः ॥४३३-४३४॥

सौधर्म्यज्ञानानामवधिविषयकालः असंख्यातवर्षकोट्यः खलु वर्षको ० । तु-पुनः, उपरितनकल्पचतुष्क-

और प्रदेशोंमें एक कम कर दें । इस तरह तबतक भाग दें, जबतक सब प्रदेश समाप्त हों । २०
अन्तिम भाग देनेपर जो सूक्ष्म पुद्गलस्कन्ध शेष रहे, उतने प्रमाण पुद्गलस्कन्धको
सौधर्म्य-ऐशान स्वर्गका देव जानता है । इसी प्रकार सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्गके देवोंके घन-
रूप चार राजू प्रमाण क्षेत्रके प्रदेशोंका जितना प्रमाण है, उतनी बार उनके अवधिज्ञानावरण
द्रव्यमें ध्रुवहारका भाग देते-देते जो प्रमाण रहे, उतने परमाणुओंके स्कन्धको उनका अवधि-
ज्ञान जानता है । ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्गके देवोंके साढ़े पाँच राजू, लान्तव-कापिष्ठवालोंके छह २५
राजू, शुक्र-महाशुक्रवालोंके साढ़े सात राजू, शतार-सहस्रारवालोंके आठ राजू, आनत-
प्राणतवालोंके साढ़े नौ राजू, आरण-अच्युतवालोंके दस राजू, ग्रैवेयकवालोंके ग्यारह राजू,
अनुदिशवालोंके कुछ अधिक तेरह राजू, अनुत्तर विमानवालोंके कुछ कम चौदह राजू क्षेत्र-
का परिमाण जानकर पूर्वोक्त विधान करनेपर उन देवोंके अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यका
परिमाण होता है । अर्थात् सबके अवधिज्ञानके विषयभूत क्षेत्रके प्रदेशोंका जो प्रमाण हो, ३०
उतनी बार अवधिज्ञानावरण द्रव्यमें ध्रुवहारका भाग देते-देते जो प्रमाण रहे, उतने पर-
माणुओंके स्कन्धको वे-वे देव अवधिज्ञान द्वारा जानते हैं ॥४३३-४३४॥

सौधर्म्य और ऐशान स्वर्गके देवोंके अवधिज्ञानका विषयभूत काल असंख्यात वर्ष
कोटि है । उनसे ऊपर चार कल्पोंमें अर्थात् सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर स्वर्गोंके

जोइसियंताणोही खेत्ता उता ण होंति घणपदरा ।

कप्पसुराणं च पुणो विसरिस्थं आयदं होदि ॥४३७॥

ज्योतिष्कांतानामवधिक्षेत्राण्युक्तानि न भवन्ति घनप्रतराणि । कल्पसुराणां च पुनर्विसदृश-
मायतं भवति ॥

- ९ ज्योतिष्कांतानामुक्तान्यवधिक्षेत्राणि भावनव्यंतरज्योतिष्करिगेल्लगं पेरगे पेळल्पदृवधि-
विषयक्षेत्रंगलु समचतुरस्र घनक्षेत्रंगल्लु एकंदोडे अवगंगळवधिविषयक्षेत्रंगल्ले सूत्रदोळु विसदृ-
सत्वकथनमुट्ठप्पुदरि । इदरि पारिशेष्यदि तद्योग्यस्थानदोळु नारकतिर्यंगवगळवधिविषयक्षेत्रमे
समघनक्षेत्रमे बुदर्थं । कल्पासरगे ललं पुनः मत्ते तंतम्मवधिज्ञानविषयक्षेत्रं विसदृशमायतमवकुं ।
आयतचतुरस्रक्षेत्रमे बुदर्थमवधिज्ञानं समाप्पमाधु ।

- १० चितियमचितियं वा अद्धं चितियमणेयमेयगयं ।

मणपज्जवं ति उच्चइ जं जाणइ तं खु णरलोए ॥४३८॥

चितितमचितितं वा अद्धं चितितमनेकभेदगतं । मनःपर्यय इत्युच्यते यत् जानाति तत्खलु
नरलोके ।

- ११ चितितं पेरदिदं चितिसल्पदुदुदं । अचितितं वा मुंदे चितिसल्पडुवुदं । मेणु अद्धं चितितं
चित्ताविषयमं संपूर्णमाणि चितिसदे अद्धं चितिसल्प डुवुदुमं । अनेकभेदगतं इतनेकप्रकारदिदं पेरर
मनदोळिदुदुदं यत् आवुदोडु ज्ञानं जानाति अरिगुमा ज्ञानं खलु स्फुटमाणि मनःपर्ययज्ञानमेदितु

जानां यथायोग्यं पल्यासंख्यातभागः प तत उपरि लान्तवादिसर्वार्थसिद्धिपर्यन्तानां यथायोग्यं किंचिदूनपत्यं

a

प-॥४३५-४३६॥

- ज्योतिष्कान्तविविधदेवानां उक्तावधिविषयक्षेत्राणि समचतुरस्रघनरूपाणि न भवन्ति, सूत्रे तेषां
२० विसदृशत्वकथनात् । अनेन पारिशेष्यात् तद्योग्यस्थाने नरनारकतिर्यंगवधिविषयक्षेत्रमेव समघनमित्यर्थः ।
कल्पासुराणां पुनर्विसदृशमायतं आयतचतुरस्रमित्यर्थः ॥४३७॥

चिन्तितं—चिन्ताविषयीकृतं, अचिन्तितं—चिन्तयिष्यमाणं, अर्धचिन्तितं—असंपूर्णचिन्तितं वा इत्यनेक-
भेदगतं अर्थ परमनस्यवस्थितं यज्ज्ञानं जानाति तत् खलु मनःपर्यय इत्युच्यते । तस्योत्पत्तिप्रवृत्ती नरलोके

- देवोंके अवधिज्ञानका विषयभूत काल यथायोग्य पल्यके असंख्यातवें भाग हैं । उनसे
२५ ऊपर लान्तव स्वर्गसे लेकर सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त देवोंके यथायोग्य कुछ कम पल्य प्रमाण
हैं ॥४३५-४३६॥

- ज्योतिषी देव पर्यन्त तीन प्रकारके देवोंके अर्थात् भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क
देवोंके जो अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र कहा है, वह समचतुरस्र अर्थात् बराबर चौकोर
घनरूप नहीं है, क्योंकि आगममें उसकी लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई बराबर एक समान नहीं कही
३० है । इससे शेष रहे जो मनुष्य नारक, तिर्यंच, उनके अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र समान
चौकोर घनरूप है, यह अर्थ निकलता है । कल्पवासी देवोंके अवधिज्ञानका विषयक्षेत्र
विसदृश आयत है अर्थात् लम्बा बहुत और चौड़ा कम है ॥४३७॥

॥ अवधिज्ञान प्ररूपणा समाप्प ॥

- चिन्तित—जिसका पूर्वमें चिन्तन किया था । अचिन्तित—जिसका आगामी कालमें
३५ चिन्तन करेगा, अर्धचिन्तित—जिसका पूर्णरूपसे चिन्तन नहीं किया, इत्यादि अनेक प्रकार-

पेळत्पट्टदु। नरलोके तदुत्पत्तिप्रवृत्तिगळेरडुं मनुष्यक्षेत्रदोळेयकुं। मनुष्यक्षेत्रदिदं पोरणे मनःपर्यय-
यज्ञानवकुत्पत्तियुं प्रवृत्तियुमितले बुदर्थं।

परकीयमनसि व्यवस्थितोऽर्थः मन इत्युच्यते। मनः पर्येति गच्छति जानातीति मनः
पर्ययः एदितु परमनोगतार्थग्राहकं मनःपर्ययज्ञानमवकुमा परमनोगतार्थमुं चितितमचितितमद्धं-
चितितमेदितनेकभेदमप्युददं मनुष्यक्षेत्रदोळु मनःपर्ययज्ञानमरिगुमे बुद तात्पर्यं। ५

मणपज्जवं च दुविहं उजुविउलमदित्ति उजुमदी तिविहा।

उजु मणवयणे काये गदत्थविसयत्ति णियमेण ॥४३९॥

मनः पर्ययश्च द्विविधः ऋजुविपुलमती इति। ऋजुमतिस्त्रिविधः ऋजु मनोवचने काये
गतात्थविषय इति नियमेन।

सामान्यदिदं मनःपर्ययज्ञानमोदु अदं भेदिसिदोड ऋजुमतिमनःपर्ययमेदु विपुलमति- १०
मनःपर्ययमदितु मनःपर्ययज्ञानं द्विविधमवकु-। मल्लि ऋज्वी ऋजुकायवाग्मनस्कृतात्थस्य
परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तिता निष्पन्ना मतिर्यस्य सः ऋजुमतिः स चासौ मनः-
पर्ययश्च ऋजुमतिमनःपर्ययः। विपुला कायवाग्मनस्कृतात्थस्य परकीयमनोगतस्य विज्ञाना
निर्व्वर्त्तिताऽनिर्व्वर्त्तिता कुटिला च मतिर्यस्य सः विपुलमतिः। स चासौ मनःपर्ययश्च
विपुलमतिमनःपर्ययः। एदितु निरुक्तिसिद्धगळप्युवल्लि ऋजुश्च विपुला च ऋजु १५
विपुले। ते मती ययोस्तौ ऋजुविपुलमती। ऋजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमेदु ऋजुवचन-
गतात्थविषयमनःपर्ययमेदु ऋजुकायगतात्थविषयमनःपर्ययमुमेदितु ऋजुमतिमनःपर्ययं नियम-

मनुष्यक्षेत्र एव न तद्वहिः। परकीयमनसि व्यवस्थितोऽर्थः मनः तत् पर्येति गच्छति जानातीति मनः-
पर्ययः ॥४३८॥

स मनःपर्ययः सामान्येनैकोऽपि भेदविवक्षाया ऋजुमतिमनःपर्ययः विपुलमतिमनःपर्ययश्चेति द्विविधः।
तत्र ऋज्वी-ऋजुकायवाग्मनःकृतात्थस्य-परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तिता-निष्पन्ना मतिर्यस्य स ऋजुमतिः स २०
चासौ मनःपर्ययश्च ऋजुमतिमनःपर्ययः। विपुला कायवाग्मनःकृतात्थस्य-परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तिता
अनिर्व्वर्त्तिता कुटिला च मतिर्यस्य स विपुलमतिः स चासौ मनःपर्ययश्च विपुलमतिमनःपर्ययः। अथवा ऋजुश्च
विपुला च ऋजुविपुले ते मती ययोस्तौ ऋजुविपुलमती तौ च तौ मनःपर्ययौ च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययौ।
तत्र ऋजुमतिमनःपर्ययः ऋजुमनोगतार्थविषयः, ऋजुवचनगतार्थविषयः, ऋजुकायगतार्थविषयश्चेति नियमेन

का जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है, उसको जो ज्ञान जानता है, वह मनःपर्यय कहा जाता २५
है। दूसरेके मनमें स्थित अर्थ मन हुआ, उसे जो जानता है, वह मनःपर्यय है। इस ज्ञानकी
उत्पत्ति और प्रवृत्ति मनुष्यक्षेत्रमें ही होती है, उसके बाहर नहीं ॥४३८॥

वह मनःपर्यय सामान्यसे एक होनेपर भी भेदविवक्षासे ऋजुमतिमनःपर्यय विपुल-
मतिमनःपर्यय, इस तरह दो प्रकार है। सरल काय, वचन और मनके द्वारा किया गया जो
अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है, उसको जाननेसे निष्पन्न हुई मति जिसकी है, वह ऋजुमति है ३०
और ऋजुमति और मनःपर्यय ऋजुमतिमनःपर्यय है। तथा सरल अथवा कुटिल काय-
वचन-मनके द्वारा किया गया जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है, उसको जाननेसे निष्पन्न या
अनिष्पन्न मति जिसकी है, वह विपुलमति है। विपुलमति और मनःपर्यय विपुलमति मनः-
पर्यय है। अथवा ऋजु और विपुला मति जिनकी है, वे ऋजुमति, विपुलमति मनःपर्यय
हैं। ऋजुमतिमनःपर्यय नियमसे तीन प्रकारका है—सरल मनके द्वारा चिन्तित मनोगत ३५

दिदं त्रिविधमवकुं ।

विउलमदीवि य छद्वा उजुगाणुजुवयणकायचित्तमयं ।

अत्थं जाणदि जम्हा सदत्थगया हु ताणत्था ॥४४०॥

विपुलमतिरपि च षड्धा ऋज्वनूजुवचनकायचित्तगतमत्थं जानाति यस्मात् शब्दात्थंगताः

५ खलु तयोरत्थीः ।

विपुलमतिमनःपर्ययमुं षट्प्रकारमपुदेते दोडे ऋजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमेदुं ऋजुवचनगतार्थविषयमनःपर्ययमेदुं ऋजुकायगतार्थविषयमनःपर्ययमेदितु । अनूजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमेदुं अनूजुवचनगतार्थविषयमनःपर्ययमेदुं अनूजुकायगतार्थविषयमनःपर्ययमेदितिलि । यस्मात् ऋज्वनूजुमनोवचनकायगतार्थविषयत्वात्कारणात् । तयोरत्थीः आवुदोदु

- १० ऋज्वनूजुमनोवचनकायगतार्थविषयत्वात्कारणदत्तणिदमा ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययंगळ अत्थीः विषयंगळ शब्दगतार्थंगळं दुं खलु स्फुटमागि द्विप्रकारंगळपुवु । अदे ते दोडे ऋजुमतिमनःपर्यय-ज्ञानं वोव्वं ऋजुमनदिदं निर्व्वत्तितमागि निष्पन्नमागि त्रिकालविषयंगळप्य पदार्थंगळं चित्ति-सिदं । ऋजुवचनदिदं निष्पन्नमागि त्रिकालविषयंगळप्यत्थंगळं नुडिदं । ऋजुभूतकायदिदं निष्पन्न-मागि त्रिकालविषयार्थंगळं कायव्यापारदिदं माडिदनवंमरेदु । कालांतरदिदं नेनेयलारदे बंदु बेसगो डोडं बेसगोळदिदो डमरिगुं एंदितु शब्दगतार्थंगळमत्थंगतार्थंगळं मेदु द्विप्रकारंगळपुवु ।
- १५ विपुलमतिमनःपर्ययवक्कमिते ऋज्वनूजुमनोवचनकायगाळिदं निर्व्वत्तितमागि निष्पन्नमागि त्रिकालविषयपदार्थंगळं चित्तिसिदुवं नुडिदुवं माडिदुवं मरेदु कालांतरदिदं नेनेयलारदे बंदु बेसगो-

त्रिविधः ॥४३९॥

- विपुलमतिमनःपर्ययोऽपि यस्मात् ऋज्वनूजुमनोवचनकायगतार्थं जानाति तस्मात्कारणात् ऋजुमनो-
२० गतार्थविषयः ऋजुवचनगतार्थविषयः ऋजुकायगतार्थविषयः अनूजुमनोगतार्थविषयः अनूजुवचनगतार्थविषयः अनूजुकायगतार्थविषयश्चेति षोडा । तयोः ऋजुविपुलमतिमनःपर्यययोः अर्थाः—विषयाः शब्दगता अर्थगताश्च स्फुटं भवन्ति । तद्यथा—कश्चिज्जीवः ऋजुमनसा निर्व्वत्तितः—निष्पन्नः त्रिकालविषयपदार्थान् चिन्तितवान् ऋजुवचनेन निर्व्वत्तितस्तानुक्तवान् ऋजुकायेन निष्पन्नस्तान् कृतवान्, विस्मृत्य कालान्तरेण स्मर्तुमशक्तः, आगत्य पृच्छति वा तूष्णीं तिष्ठति तदा ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति । तथा ऋज्वनूजुमनोवचनकायेनिर्व्वत्तितः

- २५ अर्थको जाननेवाला, सरल वचनके द्वारा कहे गये मनोगत अर्थको जाननेवाला और सरलकायसे किये गये मनोगत अर्थको जाननेवाला ॥४३९॥

विपुलमति मनःपर्यय छह प्रकारका है—क्योंकि वह सरल और कुटिल मन-वचन-कायसे किये गये मनोगत अर्थको जानता है । अतः ऋजु मनोगत अर्थको विषय करनेवाला, ऋजु वचनगत अर्थको विषय करनेवाला, ऋजुकायगत अर्थको विषय करनेवाला तथा कुटिल मनोगत अर्थको विषय करनेवाला, कुटिल वचनगत अर्थको विषय करनेवाला, कुटिल कायगत अर्थको विषय करनेवाला इस तरह छह प्रकारका है । उन ऋजुमति और विपुलमति मनःपर्ययके विषय शब्दगत और अर्थगत होते हैं । यथा—किसी सरलमनसे निष्पन्न व्यक्तिने त्रिकालवर्ती पदार्थोंके विषयमें चिन्तन किया, सरल वचनसे निष्पन्न होते हुए उन पदार्थोंका कथन किया और सरलकायसे निष्पन्न होकर उनको किया । फिर भूल गया, कालका अन्तराल पड़नेपर स्मरण नहीं कर सका । आ करके पूछता है अथवा चुप बैठता है, तब ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जान लेता है । तथा सरल या कुटिल मन-वचन-

डोडं बेसगोळदिहेडिं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमरिगुमे'दितिल्लियुं शब्दगतात्थंगळुमर्थगतात्थंगळु-
मेदितु द्विप्रकारांगळप्पुवु ।

तियकालविसयरुवि चित्तंतं वडुमाणजीवेण ।

उजुमदिणाणं जाणदि भूदभविस्सं च विउलमदी । ४४१॥

त्रिकालविषयरूपिणं चिन्त्यमानं वर्तमानजीवेन । ऋजुमतिज्ञानं जानाति भूतभविष्यंतौ च ५
विपुलमतिः ।

त्रिकालविषयपुद्गलद्रव्यं वर्तमानजीवनिदं चित्तिसत्पडुत्तिवृद्धं ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञान-
मरिगुं । भूतभविष्यद्वर्तमानकालविषयंगळप्प चित्तितमं चिन्तयिष्यमाणं चिन्त्यमानं विपुलमतिः
मनःपर्ययज्ञानमरिगुं ॥

सव्वंगअंगसंभवचिण्हादुप्पज्जदे जहा ओही ।

१०

मणपज्जवं च दव्वमणादो उप्पज्जदे णियमा ॥४४२॥

सर्वांगसंभवचिह्नादुत्पद्यते यथावधिः । मनःपर्ययश्च द्रव्यमनसः उत्पद्यते नियमात् ॥

सर्वांगदोळमंगसंभवशंखादिशुभचिह्नं गळोळं यथा ये'त्तीगळवधिज्ञानं पुट्टुगुमते मनःपर्य-
यज्ञानमुं द्रव्यमनदिदं पुट्टुगुं नियमदिदं । नियमशब्दं द्रव्यमनदोळल्लदे मत्तेल्लियुसंगप्रदेशदोळु
मनःपर्ययं पुट्टुदे'बवधारणात्थंमवकुं ॥

१५

हिदि होदि हु दव्वमणं वियसिय अडुच्छदारविदं वा ।

अंगोवंगुदयादो मणवग्गणखंदो णियमा ॥४४३॥

हृदि भवति खलु द्रव्यमनो विकसिताष्टच्छदारविन्दवत् । अंगोपांगोदयात् मनोवर्गणा-
स्कन्धतो नियमात् ॥

त्रिकालविषयपदार्थान् चिन्तितवान् वा उक्तवान् वा कृतवान् विस्मृत्य कालान्तरेण स्मर्तुमशक्तः आगत्य २०
पृच्छति वा तूष्णीं तिष्ठति तदा विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति ॥४४०॥

त्रिकालविषयपुद्गलद्रव्यं वर्तमानजीवेन चिन्त्यमानं ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति । भूतभविष्यद्वर्त-
मानकालविषयं चिन्तितं चिन्तयिष्यमाणं चिन्त्यमानं च विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति ॥४४१॥

सर्वाङ्गे अङ्गसंभवशङ्खादिशुभचिह्ने च यथा अवधिज्ञानमुत्पद्यते तथा मनःपर्ययज्ञानं द्रव्यमनसि
एवोत्पद्यते नियमेन नाभ्यत्राङ्गप्रदेशेषु ॥४४२॥

२५

कायसे किये गये त्रिकालवर्ती पदार्थोंको विचार किया, कहा या शरीरसे किया । पीछे भूल
गया और समय बीतनेपर स्मरण नहीं कर सका । आकर पूछता है या चुप बैठता है, तब
विपुलमति मनः पर्ययज्ञानी जानता है ॥४४०॥

त्रिकालवर्ती पुद्गल द्रव्य वर्तमान जीवके द्वारा चिन्तनवन किया गया हो, तो उसे ३०
ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जानता है । और त्रिकालवर्ती पुद्गलद्रव्य भूतकालमें चिन्तन
किया गया हो, भविष्यत् कालमें चिन्तन किया जानेवाला हो या वर्तमानमें चिन्तन
किया जाता हो, तो उसे विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान जानता है ॥४४१॥

जैसे भवप्रत्यय अवधिज्ञान सर्वांगसे उत्पन्न होता है और गुणप्रत्यय अवधिज्ञान
शरीरमें प्रकट हुए शंख आदि शुभ चिह्नोंसे उत्पन्न होता है, वैसे ही मनःपर्ययज्ञान द्रव्यमनसे
ही उत्पन्न होता है, ऐसा नियम है, शरीरके अन्य प्रदेशोंमें उत्पन्न नहीं होता ॥४४२॥

३५

अंगोपांगोदयात्कारणात् अंगोपांगनामकर्मोदयकारणदिवं मनोवर्गणास्कन्धगण्डिवं विक-
सिताष्टच्छदारविददन्ते द्रव्यमनं हृदयदोळपुदु खलु स्फुटमाणि ।

नोइंदियत्ति सण्णा तस्स हवे सेसइंदियाणं वा ।

वत्तत्ताभावादो मण मणपज्जं च तत्थ हवे ॥४४४॥

५ नो इन्द्रियमिति संज्ञा तस्य भवेत् शेषेन्द्रियाणामिव व्यक्तत्वाभावात् मनो मनःपर्ययश्च तत्र
भवेत् ॥

मनः आ द्रव्यमनं शेषेन्द्रियाणामिव स्पर्शनादीन्द्रियंगळ्णे तु संस्थाननिर्देशंगळ्णे व्यक्तत्व-
मुदंते । तस्य आ द्रव्यमनक्के व्यक्तत्वाभावात् कर्णनासिकानयनादिवत् व्यक्तत्वाभावादिवं नोइन्द्रिय-
मिति संज्ञा भवेत् । ईषदिन्द्रियं नोइन्द्रियमेतदन्वत्यर्थसंज्ञेयुमक्कुं । तत्र आ द्रव्यमनदोळ मनः भावमनो-
१० ज्ञानमुं मनःपर्ययश्च भवेत् मनःपर्ययज्ञानं पुट्टुगुं ।

मणपज्जवं च णाणं सत्तसु विरदेसु सत्तइड्ढीणं ।

एगादिजुदेसु हवे वड्ढंतविसिद्धचरणेसु ॥४४५॥

मनःपर्ययज्ञानं सप्तसु विरतेषु सप्तर्द्धीनामेकादियुतेषु भवेद् वर्द्धमानविशिष्टाचरणेषु ॥

१५ सप्तसु विरतेषु प्रमत्तसंयतादिक्क्षीणकषायान्तमाद सप्तगुणस्थानवर्त्तिगळप्प विरतरोळु
सप्तर्द्धीनामेकादियुतेषु बुद्धितपोवैकुर्वणौषधरसबलाक्षीणमेवं सप्तऋद्धिगळोळेक द्वित्र्यादियुतरोळु
वर्द्धमानविशिष्टाचरणेषु पेच्चुत्तिर्प्यं विशिष्टाचारमनुळळ महामुनिगळोळु मनःपर्ययश्च ज्ञानं
भवेत् मनःपर्ययज्ञानं पुट्टुदे बुदु तात्पर्यं ।

इंदियनोइंदियजोगादि पेक्खित्तु उजुमदी होदि ।

णिरवेक्खिय विउलमदी ओहिं वा होदि णियमेण ॥४४६॥

२० इन्द्रियनोइन्द्रिययोगादीनपेक्ष्य तु ऋजुमतिर्भवति । निरपेक्ष्य च विपुलमतिरवधिवद्भवति
नियमेन ॥

अङ्गोपाङ्गनामकर्मोदयकारणात् मनोवर्गणास्कन्धैविकसिताष्टच्छदारविन्दसदृशं द्रव्यमनो हृदये उत्पद्यते
स्फुटम् ॥४४३॥

२५ तस्य द्रव्यमनसः शेषस्पर्शनादीन्द्रियाणामिव स्थाननिर्देशाभ्यां व्यक्तत्वाभावात् ईषदिन्द्रियत्वेन
नोइन्द्रियमित्यन्वर्थनाम भवेत् । तत्र द्रव्यमनसि भावमनो मनःपर्ययश्चोत्पद्यते ॥४४४॥

प्रमत्तादिसप्तगुणस्थानेषु बुद्धितपोविकुर्वणौषधरसबलाक्षीणनामसप्तधिमध्ये एकद्वित्र्यादियुतेष्वेव
वर्द्धमानविशिष्टाचरणेषु मनःपर्ययज्ञानं भवति, नान्यत्र ॥४४५॥

अंगोपांग नामकर्मके उदयसे मनोवर्गणारूप स्कन्धोके द्वारा हृदयस्थानमें मनकी
उत्पत्ति होती है । वह खिले हुए आठ पाँखुड़ीके कमलके समान होता है ॥४४३॥

३० उस द्रव्यमनका नो इन्द्रिय नाम सार्थक है, क्योंकि जैसे स्पर्शन आदि इन्द्रियोंका स्थान
और विषय प्रकट है, वैसा मनका नहीं है । इसलिए ईषत् अर्थात् किंचित् इन्द्रिय होनेसे उसका
नाम नोइन्द्रिय है । उस द्रव्यमनमें भावमन और मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न होते हैं ॥४४४॥

४५ प्रमत्तसंयतसे क्षीणकषाय पर्यन्त सात गुणस्थानोंमें, बुद्धि-तप-विक्रिया-औषध-रस-
बल और अक्षीण नामक सात ऋद्धियोंमें-से एक-दो-तीन आदि ऋद्धियोंके धारी तथा जिनका
विशिष्ट चारित्र वर्द्धमान होता है, उन महामुनियोंमें ही मनःपर्ययज्ञान होता है; अन्यत्र
नहीं ॥४४५॥

स्पर्शनादीन्द्रियगलुभं नोइन्द्रियमुमं मनोवचनकाययोगमुमं दिवं तन्न परर संबंधिगलुभन-
पेक्षिसिये ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानं संजनिसुगुं । तु मत्ते इन्द्रियनोइन्द्रिययोगादिगळं स्वपरसंबंधि-
गलुभनपेक्षिसिये विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानं चक्षुरिन्द्रियमोगळंतु रसादिगळं परिहरिसि रूपमोदने
परिच्छेदिसुगुमंते मनःपर्ययज्ञानमुं भवविषयाशेषानंतपर्ययगळं परिहरिसि आवुदोदु कारण-
दिवं भवसंज्ञितद्वित्रिभ्यंजनपर्ययगळं परिच्छेदिसुगुमदु कारणदिवंमिदवधिज्ञानदंते नियमदिवं
संजनिसुगुं । ५

पडिवादी पुण पढमा अप्पडिवादी हु होदि विदिया हु ।

सुद्धो पढमो बोहो सुद्धतरो विदियबोहो दु ॥४४७॥

प्रतिपातो पुनः प्रथमोऽप्रतिपातो खलु भवति द्वितीयः । शुद्धः प्रथमो बोधः शुद्धतरो द्वितीय-
बोधस्तु ॥

१०

प्रथमः मोदल ऋजुमतिमनःपर्ययं प्रतिपातो प्रतिपातियक्कुं । प्रतिपतनं प्रतिपातः
उपशान्तकषायं चारित्रमोहोद्रेकदिवं प्रच्युतसंयमशिखरं प्रतिपातमक्कुं । क्षीणकषायं प्रतिपात-
कारणाभावादिवं अप्रतिपातमक्कुं । तदपेक्षेयं प्रतिपातोऽस्यास्तीति प्रतिपातो । पुनः मत्ते
द्वितीयः विपुलमतिमनःपर्ययं अप्रतिपातो खलु प्रतिपातरहितमक्कुं । न प्रतिपातो अप्रतिपातो ।
शुद्धः प्रथमो बोधः मोदल ऋजुमतिमनःपर्ययं विशुद्धबोधमक्कुं । प्रतिपक्षकर्मक्षयोपशममंडागुत्तिरलु
आत्मन प्रसादमं विशुद्धियं बुदु । तदस्यास्तीति विशुद्धः शुद्धतरो द्वितीयबोधस्तु । तु मत्ते अतिशय-
दिवं विशुद्धमक्कुं विपुलमतिमनःपर्ययं । १५

परमणसिद्धियमद्वं ईहामदिणा उजुद्धियं लहिय ।

पच्छा पच्चक्खेण य उजुमदिणा जाणदे णियमा ॥४४८॥

परमनसि स्थितमर्थं इहामत्या ऋजुस्थितं लब्ध्वा । पश्चात्प्रत्यक्षेण च ऋजुमतिना
जाणीते नियमात् ॥

२०

ऋजुमतिमनःपर्ययः स्पर्शनादीन्द्रियाणि नोइन्द्रियं मनोवचनकाययोगांश्च स्वपरसंबन्धिनोऽपेक्ष्यैवोत्पद्यते ।
विपुलमतिमनःपर्ययस्तु अवधिज्ञानमिव ताननपेक्ष्यैवोत्पद्यते नियमेन ॥४४६॥

प्रथमः ऋजुमतिमनःपर्ययः प्रतिपातो भवति । क्षीणकषायस्याप्यप्रतिपातेऽपि, उपशान्तकषायस्य
चारित्रमोहोद्रेकात्तत्संभवात् । पुनः द्वितीयो विपुलमतिमनःपर्ययः अप्रतिपातो खलु । ऋजुमतिमनःपर्ययो
विशुद्धः, प्रतिपक्षकर्मक्षयोपशमे सति आत्मप्रसादरूपविशुद्धेः संभवात् । तु पुनः विपुलमतिमनःपर्ययः अतिशयेन
विशुद्धो भवति ॥४४७॥ २५

ऋजुमतिमनःपर्यय अपने और अन्य जीवोंके स्पर्शन आदि इन्द्रियाँ, मन, और मन-
वचन-काय योगोंकी अपेक्षासे ही उत्पन्न होता है । और विपुलमतिमनःपर्यय अवधिज्ञानकी
तरह उनकी अपेक्षाके बिना ही उत्पन्न होता है ॥४४६॥

प्रथम ऋजुमति मनःपर्यय प्रतिपातो होता है । जो ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानी क्षपक-
श्रेणीपर आरोहण करके क्षीणकषाय हो जाता है; यद्यपि वह वहाँसे गिरता नहीं है, किन्तु जो
उपशम श्रेणीपर आरोहण करके उपशान्त कषाय नामक ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती होता है,
चारित्रमोहका उद्रेक होनेसे उसका प्रतिपात होता है । किन्तु दूसरा विपुलमतिमनःपर्यय
अप्रतिपातो है । ऋजुमति मनःपर्यय विशुद्ध है, क्योंकि प्रतिपक्षी कर्मका क्षयोपशम होनेपर ३०

पेरर मनदोळिहर्तमं ऋजुस्थितं ऋजु यथा भवति तथा स्थितं इहामतिज्ञान-
दिवं मुन्नं लब्ध्वा पडदु पश्चात् बळिकं ऋजुमतिना ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानदिवं प्रत्यक्षेण च
प्रत्यक्षमाणि मनःपर्ययज्ञानी जानीते अरिगुं नियमात् नियमदिवं ।

चितियमचितियं वा अद्धं चितियमणेयमेयगयं ।

५ ओहिं वा विउलमदी लहिऊण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चितितमचितितं वा अद्धचितितमनेकभेदगतं । अवधिवद्विपुलमतिर्लब्ध्वा विजानाति
पश्चात् ॥

चितितमुमचितितमुमं मेणद्धचितितमुमनितनेकभेदोळिहं परकीयमनोगतार्थमं मुन्नं
पडदु बळिकं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानमेतंतं प्रत्यक्षमागरिगुं ।

१० दव्वं खेत्तं कालं भावं पडि जीवलक्षितं रूपिं ।

उजुविउलमदी जाणदि अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं प्रति जीवलक्षितं रूपिणं । ऋजु-विपुलमती जानीतः अवरवरं
मध्यमं च तथा ॥

१९ द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं जीवनिदं चितिसत्पट्टदुवं
रूपिणं पुद्गलं पुद्गलद्रव्यमं तत्संबन्धिजीवद्रव्यमं । अवरवरं जघन्यमुमनुत्कृष्टमुमं । तथा अंते
मध्यमं च मध्यममुमं ऋजुविपुलमती ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययंगळेरडुं जानीतःअरिबवु ।

परस्य मनसि ऋजुतया स्थितमर्थं ईहामतिज्ञानेन पूर्वं लब्ध्वा पश्चात् ऋजुमतिज्ञानेन प्रत्यक्षतया
मनःपर्ययज्ञानी जानीते नियमात् ॥४४८॥

२० चिन्तितं अचिन्तितं अथवा अर्धचिन्तितं इत्यनेकभेदगतं परमनोगतार्थं पूर्वं लब्ध्वा पश्चाद्विपुलमतिमनः-
पर्ययः अवधिरिव प्रत्यक्षं जानाति ॥४४९॥

द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं-जीवचिन्तितं, रूपि-पुद्गलद्रव्यं
तत्संबन्धिजीवद्रव्यं च जघन्यं उत्कृष्टं तथा मध्यमं च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययौ जानीतः ॥४५०॥

आत्माकी निर्मलता रूप विशुद्धिसे उत्पन्न होता है । किन्तु विपुलमतिमनःपर्यय अतिशय
विशुद्ध होता है ॥४४७॥

२५ दूसरेके मनमें सरलता रूपसे विचार किया गया जो अर्थ स्थित है उसे पहले
ईहामतिज्ञानके द्वारा प्राप्त करके पीछे ऋजुमतिज्ञानसे मनःपर्ययज्ञानी नियमसे प्रत्यक्ष
जानता है ॥४४८॥

चिन्तित, अचिन्तित, अथवा अर्धचिन्तित इत्यादि अनेक भेद रूप दूसरेके मनोगत
अर्थको पहले प्राप्त करके पीछे विपुल मति मनःपर्यय अवधिज्ञानकी तरह प्रत्यक्ष जानता
३० है ॥४४९॥

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको लेकर जीवके द्वारा चिन्तित पुद्गल द्रव्य और उससे
सम्बद्ध जीवद्रव्यको जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदको लिए हुए ऋजुमति और विपुलमति मनः-
पर्यय जानते हैं ॥४५०॥

अवरं द्रव्यमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयबद्धं तु ।

चक्षुर्द्वयनिज्जिण्णं उक्कस्सं उज्जुमदिस्स हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौदारिकशरीरनिज्जिण्णसमयप्रबद्धस्तु । चक्षुरिन्द्रियनिज्जिण्णमुत्कृष्टं ऋजु-
मते भवेत् ।

ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानवक्के विषयमप्य जघन्यद्रव्यमौदारिकशरीरनिज्जिण्णसमयप्रबद्ध ५

मक्कुं । स ० १६ ख । तु मत्ते । उत्कृष्टं द्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिज्जिण्णद्रव्यमक्कुं । अदर
प्रमाणमेनिते दोडे त्रैराशिकदिदं साधिसत्पडुगं ।

अ। त्रैराशिकविधानमेनितेदोडे संख्यातघनांगुलप्रमितमौदारिकशरीरावगाहनप्रदेशंगळोळे-
ल्लमेत्तलानुं सविस्ससोपचयौदारिकशरीरसमयप्रबद्धंगळोळेल्लमेत्तलानुं सविस्ससोपचयौदारिक-
शरीरसमयप्रबद्धंगळेयिसुवागळु चक्षुरिन्द्रियाम्पन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचयमिनितरोळिनि तु द्रव्यंगळेयिसु- १०

गुमेदितु त्रैराशिकमं माडि प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख इ ६ प आद्यंतशहशं त्रैराशिकं

प १ १ ० प
० ०

मध्यम नाम फलं भवेत् एदु बंद लब्धं चक्षुरिन्द्रियनिज्जिण्णद्रव्यमिदु ऋजुमतिमनःपर्ययवक्कुत्कृष्ट-

द्रव्यमक्कुं स ० १६ ख ६ प

०
६ । १ प १ १ प

तत्र ऋजुमतिमनःपर्ययः जघन्यद्रव्यं औदारिकशरीरनिज्जिण्णसमयप्रबद्धं जानाति स ० १६ ख । तु-पुनः,
उत्कृष्टद्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिज्जिण्णमात्रं जानाति । तत्कियत् ? औदारिकशरीरावगाहने संख्यातघनाङ्गुले सविस्ससोप-
चयौदारिकशरीरसमयप्रबद्धो गलति तदा चक्षुरिन्द्रियाम्पन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचये कियदिति त्रैराशिकेन १५

प्र ६ १ । फ स ० १६ ख । इ ६ प लब्धमात्रं भवति-स ० १६ ख । ६ । प ॥४५१॥

० ०
प १ १ प
० ० ६ १ प १ १ प
० ०

ऋजुमति मनःपर्यय औदारिक शरीरके निर्जीर्ण समय प्रबद्धरूप जघन्य द्रव्यको
जानता है और उत्कृष्टद्रव्यके रूपमें चक्षु इन्द्रियके निर्जीर्णद्रव्यको जानता है । वह कितना है
सो कहते हैं—औदारिक शरीरकी अवगाहना संख्यात घनांगुल है । उसके विस्ससोपचय
सहित औदारिक शरीरके समय प्रबद्ध परमाणुओंकी निर्जरा होती है । तब चक्षु इन्द्रियकी
अभ्यन्तर निर्वृत्तिके प्रदेश प्रचयमें कितनी निर्जरा हुई, ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितना २०
परिमाण आवे, उतने परमाणुओंके स्कन्धको ऋजुमति उत्कृष्ट रूपसे जानता है ॥४५१॥

मणद्ववर्गणाणमणंतिमभागेण उजुगउवकस्सं ।

खंडिदमेत्तं होदि हु विउलमदिस्सावरं दव्वं ॥४५२॥

मनोद्रव्यवर्गणानामनन्तैकभागेन ऋजुमतेत्कृष्टं । खंडितमात्रं भवति खलु विपुल-
मतेरवरं द्रव्यं ॥

- ५ मनोद्रव्यवर्गणैकान्तैकभागं ध्रुवहारप्रमाणमक्कु ज १ सो ध्रुवहार भागविदं ऋजुमति-
ख ख
पर्ययज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यं खंडिसुत्तिरलावुदोदेकखंडं तावन्मात्रं खलु स्फुटमागि विपुलमतिमनः-
पर्ययज्ञानविषयजघन्यद्रव्यमक्कु स ० १६ ख ६ प

६ । १ । प १ १ प २ ९
० ०

अट्ठण्हं कम्माणं समयप्रबद्धं विविस्ससोपचयं ।

ध्रुवहारेणिवारं भजिदे विदियं हवे दव्वं ॥४५३॥

- १० अष्टानां कर्मणां समयप्रबद्धो विविस्ससोपचयो । ध्रुवहारेणैकवारं भाजिदे द्वितीयं भवेद्द्रव्यं ।
जानावरणाद्यष्टविधकर्मसामान्यसमयप्रबद्धं विगतवित्तसोपचयमदेकवारं ध्रुवहारविदं
भागिसत्पडुत्तिरलेकखंडमात्रं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमक्कु स ०-ख ख
९ ० ०

मनोद्रव्यवर्गणाविकल्पानामनन्तैकभागेन ध्रुवहारेण ज १ ऋजुमतिविषयोत्कृष्टद्रव्ये खण्डिते यावन्मात्रं
तत्स्फुटं विपुलमतिविषयजघन्यद्रव्यं भवति स ० १६ ख । ६ प ॥४५२॥
०

६ १ प १ १ प । ९
० ०

- १५ अष्टकर्मसामान्यसमयप्रबद्धे विविस्ससोपचये ध्रुवहारेण एकवारं भवते यदेकखण्डं तद्विपुलमतिविषय-
द्वितीयद्रव्यं भवति— स ० ० ० ख ख ॥४५३॥
९

मनोद्रव्य वर्गणाके विकल्पोके अनन्तवै भागरूप ध्रुवहारसे ऋजुमतिके विषय उत्कृष्ट-
द्रव्यमें भाग देनेपर जो प्रमाण आता है, उतना विपुलमतिके विषयभूत जघन्यद्रव्यका परि-
माण होता है ॥४५२॥

- २० आठों कर्मोंके विस्ससोपचय रहित सामान्य समय प्रबद्धमें ध्रुवहारसे एक बार भाग
देनेपर जो एक खण्ड आता है, वह विपुलमतिका विषय द्वितीयद्रव्य होता है ॥४५३॥

तन्विदियं कल्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।

ध्रुवहारेणवहरिदे होदि हु उक्कस्सयं दन्वं ॥४५४॥

तद्वितीयं कल्पानामसंख्यातानां च समयसंख्यासमं ध्रुवहारेणापहृते भवति खलूत्कृष्टं द्रव्यं ।

तं द्वितीयं विपुलमनःपथ्ययज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमं असंख्यातकल्पंगळ समयंगळ संख्यासमानध्रुवहारंगळदं भागिसुत्तं विरलु यावत्प्रमाणं लब्धं तावत्प्रमाणं विपुलमतिमनःपथ्यय- ५
ज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टद्रव्यविकल्पमक्कुं खलु स्फुटमाणि स ० ख ख
९ क ० ९९९

गाउयपुधत्तमवरं उक्कस्सं होदि जोयणपुधत्तं ।

विउलमदिस्स य अवरं तस्स पुधत्तं वरं खु णरलोयं ॥४५५॥

गव्यूतिपृथक्त्वमवरमुत्कृष्टं भवति योजनपृथक्त्वं । विपुलमतेरवरं तस्य पृथक्त्वं खलु १०
नरलोकः ॥

ऋजुमतिमनःपथ्ययज्ञानविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपृथक्त्वमेरडुमूह क्रोशंगळपुवु । क्रो २ ।
३ । मवरुत्कृष्टक्षेत्रं योजनपृथक्त्वसप्ताष्टयोजनप्रमाणमक्कुं । यो ७ । ८ । विपुलमतिमनःपथ्ययज्ञान
विषयजघन्यक्षेत्रं तस्य पृथक्त्वमा योजनंगळ पृथक्त्वमष्टयोजननवयोजनप्रमाणमक्कुं । ८ । ९ ।
तदुत्कृष्टज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रं खलु स्फुटमाणि । नरलोकः मनुष्यलोकमेतितानि तु प्रमाणमक्कुं ।

णरलोएत्ति य वयणं विक्खंभणियामयं ण वडुस्स ।

जम्हा तग्घणपदरं मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्ठं ॥४५६॥

नरलोक इति वचनं विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य । यस्मात्तद्वचनप्रतरं मनःपथ्ययक्षेत्रमुद्दिष्टं ॥
विपुलमतिमनःपथ्ययज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणदोळु नरलोक इति वचनं नरलोकमेवो
शब्दं तन्मनुष्यक्षेत्रवृत्तविष्कंभनियामकमल्लेके दोळे यस्मात् आवुदोदु कारणदिदं तद्वचनप्रतरमा

तस्मिन् विपुलमतिविषयद्वितीयद्रव्ये असंख्यातकल्पसमयसंख्येध्रुवहारैर्भक्ते विपुलमतिविषयं सर्वोत्कृष्ट- २०

द्रव्यं भवति— स ० ० ० ख ख ॥४५४॥

९ । क ० ९ ९ ९

ऋजुमतिविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपृथक्त्वं द्वित्रिक्रोशः २ । ३ । उत्कृष्टं योजनपृथक्त्वं सप्ताष्टयोज-
नानि ७ । ८ । विपुलमतिविषयजघन्यक्षेत्रं योजनपृथक्त्वं अष्टनवयोजनानि । ८ । ९ । उत्कृष्टं स्फुटं
नरलोकः ॥४५५॥

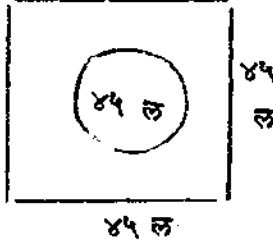
यद्विपुलमतिविषयोत्कृष्टक्षेत्रप्ररूपणे नरलोक इति वचनमुक्तं तत् तदगतविष्कंभस्य नियामकं निश्चायकं २५

विपुलमतिके विषयभूत उस दूसरे द्रव्यमें असंख्यात कल्पकालके समयोंकी संख्या
जितनी है, उतनी बार ध्रुवहारसे भाग देनेपर विपुलमतिके विषयभूत सर्व उत्कृष्टद्रव्य
आता है ॥४५४॥

ऋजुमतिका विषयभूत जघन्य क्षेत्र गव्यूति पृथक्त्व अर्थात् दो-तीन कोस है । और
उत्कृष्ट क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् सात-आठ योजन है । विपुलमतिका विषयभूत जघन्य ३०
क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् आठ-नौ योजन है और उत्कृष्टक्षेत्र मनुष्यलोक है ॥४५५॥

विपुलमतिका विषय उत्कृष्टक्षेत्रका कथन करते हुए जो मनुष्यलोक कहा है, वह

मनुष्यक्षेत्रद समचतुरस्रघनप्रतरप्रमितं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणभेदु
समुद्दिष्टं अनादिनिधनार्थदोळु पेळल्पदुदुदुपुदे कारणमाणि मानुषोत्तरपर्वताभ्यन्तरविष्कभं
नाल्बत्तदुलक्षयोजनप्रमाणमदर समचतुरस्रक्षेत्रघनप्रतरप्रमाणं कैकोळल्पदुदुदेके दोडे आ मानुषो-
त्तरपर्वतविदं धोरगण नाल्कुं कीणंगळोळिर्द तिर्ग्यचरुममरहं चितिसिदुदं विपुलमतिमनःपर्यय-
५ ज्ञानमरिगुमपुदे कारणमाणि ।



दुगतिगभवा हु अवरं सत्तदुभवा हवंति उक्कस्सं ।

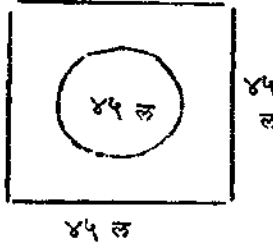
अडणवभवा हु अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्सं ॥४५७॥

द्वित्रिभवाः खलु जघन्यं समाष्ट भवा भवन्ति उत्कृष्टं । अष्टनवभवाः खलु जघन्यमसंख्यातं
विपुलोत्कृष्टं ॥

१० कालं प्रति ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यं द्वित्रिभवंगळु खलु स्फुटमाणि अप्पुवु
उत्कृष्टदिदं समाष्टभवंगळपुवु । विपुलमतिमनःपर्ययक्के जघन्यमष्टनवभवंगळुविषयमप्पुवु
उत्कृष्टमसंख्यातसमयमप्पुदुमादोडं पल्यासंख्यातैकभागमात्रमक्कुं प

०

भवति न तु वृत्तस्य । कुतः ? यतस्तत्पञ्चचत्वारिंशलक्षयोजनप्रमाणं समचतुरस्रघनप्रतरं मनःपर्ययविषयोत्कृष्ट-
क्षेत्रं समुद्दिष्टं ततः कारणात् तदपि कुतः ? मानुषोत्तराद्वहिश्चतुःकोणस्थिततिर्यगमराणां परचिन्तितानां
१५ उत्कृष्टविपुलमतेः परिज्ञानात् ॥४५६॥



कालं प्रति ऋजुमतेविषयजघन्यं द्वित्रिभवाः स्युः । उत्कृष्टं समाष्टभवाः स्युः । विपुलमतेविषयजघन्यं
अष्टनवभवाः स्युः । उत्कृष्टं पल्यासंख्यातैकभागः स्यात् प ॥४५७॥

०

मनुष्यलोकके विष्कम्भका निर्चायक है; गोलाईका नहीं । अर्थात् मनुष्यलोक तो गोलाकार
है; वह नहीं लेना चाहिए । क्योंकि पैतालीस लाख योजन प्रमाण समचतुरस्र घनप्रतर
२० अर्थात् समान चौकोर घनप्रतर रूप मनःपर्ययका उत्कृष्ट विषयक्षेत्र कहा है । अर्थात् पैतालीस
लाख योजन लम्बा उतना ही चौड़ा लेना । क्योंकि मानुषोत्तर पर्वतके बाहर चारों कोनोंमें
स्थित देवों और तिर्यचोंके द्वारा चिन्तित अर्थको भी उत्कृष्ट विपुलमति जानता है ॥४५६॥

कालकी अपेक्षा ऋजुमतिका जघन्य विषय दो-तीन भव होते हैं । और उत्कृष्ट सात-
आठ भव होते हैं । विपुलमतिका जघन्य विषय आठ-नौ भव होते हैं और उत्कृष्ट पल्याका

२५ असंख्यातवां भाग है ॥४५७॥

आवलिअसंखभागं अवरं च वरं च वरमसंखगुणं ।

ततो असंखगुणिदं असंखलोगं तु विउलमदी ॥४५८॥

आवत्यसंख्यभागो अवरश्च वरश्च वरोऽसंख्यगुणः ततोऽसंख्यगुणितः असंख्यलोकस्तु विपुलमतेः ॥

भावं प्रति वक्ति । ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यमावत्यसंख्यातैकभागमक्कुमुत्-
कृष्टमुमंते आवत्यसंख्यभागमक्कुमादोडे जघन्यमं नोडलसंख्यातगुणमक्कुं । ततः आ ऋजुमति-
मनःपर्ययज्ञानविषयोत्कृष्टभावप्रमाणमं नोडलु विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यभावम-
संख्यातगुणितमक्कुमा विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयोत्कृष्टभावं तु मत्ते असंख्यातलोकः असंख्यात-
लोकमात्रमक्कुं । ॐ ॥

मज्झिमदन्वं खेत्तं कालं भावं च मज्झिमं णाणं ।

जाणदि इदि मणपज्जयणाणं कहिदं समासेण ॥४५९॥

मध्यमद्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं च मध्यमज्ञानं जानाति । इतिमनःपर्ययज्ञानं कथितं समासेन ॥

ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानजघन्योत्कृष्टज्ञानंगळुं विपुलमतिमनःपर्ययजघन्योत्कृष्टज्ञानंगळुं
ई पेळल्पट्टं तंतम्मजघन्योत्कृष्टद्रव्यक्षेत्रकालभावंगळनरिववुमा मध्यमज्ञानविकल्पंगळुं तंतम्म
मध्यमद्रव्यक्षेत्रकालं भावंगळनरिववितु मनपर्ययज्ञानं संक्षेपदिदं पेळल्पट्टदुदु । तद्द्रव्यक्षेत्रकाल-
भावंगळगे संदुष्टिः —

भावं प्रति ऋजुमतेविषयजघन्यं आवत्यसंख्यातैकभागः ८ । उत्कृष्टं तदालापमपि जघन्यादसंख्यात-

ॐ ॐ ॐ

गुणं ८ ॐ ॐ । ततः विपुलमतेविषयजघन्यमसंख्यातगुणं ८ ॐ ॐ उत्कृष्टं तु पुनः असंख्यातलोकः । ॐ ॐ ॐ ॥४५८॥

ॐ ॐ ॐ

ॐ ॐ ॐ

ऋजुविपुलमत्योः जघन्योत्कृष्टविकल्पो उत्कृष्टस्वजघन्योत्कृष्टद्रव्यक्षेत्रकालभावान् जानीतः । मध्यम-
विकल्पास्तु स्वस्वमध्यमद्रव्यक्षेत्रकालभावान् जानन्ति इत्येवं मनःपर्ययज्ञानं संक्षेपेणोक्तम् ॥४५९॥

१०

भावकी अपेक्षा ऋजुमतिका जघन्य विषय आवलीका असंख्यातबाँ भाग है । उत्कृष्ट
भी उतना ही है, किन्तु जघन्यसे असंख्यातगुणा है । उससे विपुलमतिका जघन्य विषय
असंख्यातगुणा है और उत्कृष्ट असंख्यात लोक है ॥४५८॥

ऋजुमति और विपुलमतिके जघन्य और उत्कृष्ट भेद अपने-अपने जघन्य और उत्कृष्ट
द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावोंको जानते हैं । तथा मध्यमभेद अपने-अपने मध्यम क्षेत्र-काल-भाव-
को जानते हैं । इस प्रकार मनःपर्ययज्ञानका संक्षेपसे कथन किया ॥४५९॥

२५

स ० ख ख	४५०००००	प	भा ३ ०	उत्कृष्ट विपुलमति
९ क ० ९। ९ ९	०	० ०	०	
० ० ०	०	०	०	
० ० ०	०	०	०	
० ० ०	०	०	०	
स ० ख ख				
स ० १६ ख ६ प	जोयण । ८ । ९	भव । ८ । ९	८ ० ०	जघन्य
०			० ० ०	
६ । १ । प ११ । प ९				
० ०				
स ० १६ ख ६ प	जोयण । ७ । ८	भव । ७ । ८	८ ०	उत्कृष्ट ऋजुमति
०	०	०	० ० ०	
०	०	०	०	
६ । १ । प । ११ प	०	०	०	
० ० ०	०	०	०	
०	०	०	०	
०	०	०	८	जघन्य ॥ ०
स ० १६ ख	गाउय । २ । ३	भव २ । ३	० ० ०	
द्रव्य	क्षेत्र	काल	भाव	॥ ० ॥ ० ॥

१०

संपुण्णं तु समग्रं केवलमसत्तत्त्व सव्वभावगयं ।

लोयालोयवितिमिरं केवलणाणं मुणेदव्वं ॥४६०॥

संपूर्णं तु समग्रं केवलमसत्तत्त्वसव्वभावगतं । लोकालोकवितिमिरं केवलज्ञानं मंतव्यं ॥

जोवद्रव्यद शक्तिगतज्ञानाविभागप्रतिच्छेदंगळ्ळोनितीळवनितुं व्यक्तिगे बंदु (धु) वप्पुदे
कारणमाणि संपूर्णमुं मोहनीयवीर्यान्तरायनिरवशेषक्षयदिदमप्रतिहतशक्तियुक्तत्वादिदंमुं निश्चलत्व-
१५ दिदंमुं समग्रमुं इन्द्रियसहायनिरपेक्षमप्पुदरिदं केवलमुं । सत्तत्त्वंगळ्ळप्प घातिचतुष्टयप्रक्षयदिदं क्रम-
करणव्यवधानरहितमाणि सकलपदार्थगतमप्पुदु कारणदिदमसत्तत्त्वमुं लोकालोकंगळ्ळोनिवगत-
तिमिरमुमितप्पुदु केवलज्ञानमेदु मंतव्युं बगेयत्पडुवुदु ।

२०

जोवद्रव्यस्य शक्तिगतसर्वज्ञानाविभागप्रतिच्छेदानां व्यक्तिगतत्वात्संपूर्णम् । मोहनीयवीर्यान्तरायनिरव-
शेषक्षयादप्रतिहतशक्तियुक्तत्वात् निश्चलत्वाच्च समग्रम् । इन्द्रियसहायनिरपेक्षत्वात् केवलम् । घातिचतुष्टयप्रक्षयात्
क्रमकरणव्यवधानरहितत्वेन सकलपदार्थगतत्वात् असत्तत्त्वम् । लोकालोकयोर्विगततिमिरं तदिदं केवलज्ञानं

२५

जोवद्रव्यके शक्तिरूप जो सब ज्ञानके अविभाग प्रतिच्छेद हैं, वे सब व्यक्त हो जानेसे
केवलज्ञान सम्पूर्ण है । मोहनीय और वीर्यान्तरायका सम्पूर्ण क्षय होनेसे केवलज्ञानकी शक्ति
बेरोक और निश्चल है, इसलिए वह समग्र है । इन्द्रियोंकी सहायता न लेनेसे केवल है । चार
घातिया कर्मोंका अत्यन्त क्षय हो जानेसे तथा क्रम और इन्द्रियोंके व्यवधानसे रहित होनेके
कारण समस्त पदार्थोंको जाननेसे असत्तत्त्व है । लोक और अलोकको प्रकाशित करनेवाला
ऐसा यह केवलज्ञान जानना ॥४६०॥

अनंतरं ज्ञानमार्गणेषोऽलु जीवसंख्येयं पेळदपं ।

चदुगदिमदिसुदबोहा पल्लासंखेज्जया हु मणपज्जा ।

संखेज्जा केवलिनो सिद्धादो होंति अदिरित्ता ॥४६१॥

चतुर्गतिमतिश्रुतबोधाः पल्यासंख्येयमात्राः खलु मनःपर्ययज्ञानिनः संख्येयाः केवलिनः सिद्धेभ्यो भवंत्यतिरित्ताः ॥

चतुर्गतिमतिश्रुतज्ञानिगळुं श्रुतज्ञानिगळुं प्रत्येकं पल्यासंख्यातभागप्रमितर स्फुटभागि । म । प । श्रु । प । मनःपर्ययज्ञानिगळु संख्यातप्रमितरेयणुवु । १ । केवलज्ञानिगळु सिद्धरं नोडे

जिनर संख्येयिदं साधिकरप्पर १ ।

३

ओहिरहिदा तिरिक्खा मदिणाणि असंखभागगा मणुवा ।

संखेज्जा हु तदूणा मदिणाणी ओहिपरिमाणं ॥४६२॥

अवधिरहितास्तिष्ठचो मतिज्ञान्यसंख्यभागप्रमिता मानवाः । संख्येयाः खलु तदूना मतिज्ञानिनो अवधिज्ञानिनः परिमाणं ॥

अवधिज्ञानरहिततिर्यचर मतिज्ञानिगळ संख्येयं नोडलसंख्यातभागप्रमितरप्पर प १ अवधि-

२ २

रहितमनुष्यर संख्यातप्रमितरप्पर- । १ । मो येरडु राशिगळिदं प १ होनमण्ण मतिज्ञानिगळ

२ १

२

संख्ये अवधिज्ञानिगळ परिमाणमवकु प २

२ २

१५

मन्तव्यम् ॥४६०॥ अथ ज्ञानमार्गणायां जीवसंख्यामाह—

चतुर्गतिर्मतिज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्च प्रत्येकं पल्यासंख्यातैकभागमात्राः स्फुः स्फुटं म प श्रु प । मनःपर्यय-

१

२ २

ज्ञानिनः संख्याताः १ । केवलज्ञानिनः जिनसंख्यया समधिकसिद्धराशिः ३ ॥४६१॥

अवधिज्ञानरहिततिर्यचः मतिज्ञानिसंख्याया असंख्येयभागः प १ । अवधिरहितमनुष्याः संख्याताः १

२ २

एतद्वाशिद्वयोना मतिज्ञानसंख्यैव चतुर्गत्यवधिज्ञानपरिमाणं भवति प २-१ ॥४६२॥

२ २

२०

अब ज्ञानमार्गणामें जीवोंकी संख्या कहते हैं—

चारों गतियोंमें मतिज्ञानी पल्यके असंख्यातवें भाग हैं और श्रुतज्ञानी भी पल्यके असंख्यातवें भाग हैं । मनःपर्ययज्ञानी संख्यात हैं । और केवलज्ञानी सिद्धराशिमें तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानके जिनोंकी संख्या मिलानेपर जो प्रमाण हो, उतने हैं ॥४६१॥

अवधिज्ञानसे रहित तिर्यच मतिज्ञानियोंकी संख्यासे असंख्यातवें भाग हैं । अवधिज्ञानसे रहित मनुष्य संख्यात हैं । मतिज्ञानियोंकी संख्यामें ये दोनों राशि घटा देनेपर चारों गतिके अवधिज्ञानियोंका प्रमाण होता है ॥४६२॥

२५

पल्लासंखघणंगुलहृदसेदितिरिखगदिविभंगजुहा ।

णरसहिदा किंचूणाचदुगदीवेभंगपरिमाणं ॥४६३॥

पल्यासंख्यातघनांगुलहतश्रेणि तिर्यंगति विभंगयुताः । नरसहिता किंचिदूना चतुगतिविभंग-
ज्ञानपरिमाणं ॥

५ पल्यासंख्यातघनांगुलगुणित १ जगच्छ्रेणिमात्रं तिर्यंचविभंगज्ञानिगळप्पह -६ प नर-
०

सहिता ई तिर्यंचविभंगज्ञानिगळोळु मनुष्यविभंगज्ञानिगळु संख्यातप्रमितरप्प १ रवर्गाळ संख्येयं
साधिकं माडि - १ प दी राशियसं सम्यग्दृष्टिर्गाळदं किंचिदूनघनांगुलद्वितीयमूलगुणितजग-
६ ०

च्छ्रेणिप्रमितसामान्यनारकर संख्येयमं १-२-१ सम्यग्दृष्टिर्गाळदं किंचिदून ज्योतिष्कर संख्येयं
नोडि साधिकयुप्प देवगतिजर संख्येयुमनितुं नालकुं गतिगळ विभंगज्ञानिगळ संख्येयं कूडिबोडे

१० चतुर्गतिसमस्तविभंगज्ञानिगळ संख्येयक्कुं = १

४।६५-१

सण्णाणरासिपंचयपरिहीणो सच्चजीवरासी हु ।

मदिसुद अण्णाणीणं पत्तेयं होदि परिमाणं ॥४६४॥

सदज्ञानराशिपंचकपरिहीनः सच्चजीवराशिः खलु । मतिश्रुताज्ञानिनां प्रत्येकं भवति
परिमाणं ॥

१५ पल्यासंख्यातघनाङ्गुलहतजगच्छ्रेणिमात्रतिर्यञ्चः-६ प संख्यातमनुष्याः १ सम्यग्दृष्ट्यूनघनाङ्गुलद्वितीय-
०

मूलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रनारकाः-२-सम्यग्दृष्ट्यूनज्योतिष्कसंख्यासाधिकदेवाः १-मिलित्वा चतु-
= १-
४।६५ = १

१॥
रतिविभङ्गज्ञानिसंख्या भवति १-

= १- ॥४६३॥

४।६५ = १

२० पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणित घनांगुलसे जगतश्रेणिको गुणा करनेपर जितना
प्रमाण हो, उतने तिर्यंच, संख्यात मनुष्य तथा घनांगुलके द्वितीय मूलसे जगतश्रेणिको गुणा
करनेपर जितना प्रमाण हो, उतने नारकियोंके प्रमाणमें-से सम्यग्दृष्टि नारकियोंका प्रमाण
घटानेसे जो शेष रहे, उतने नारकी तथा ज्योतिषी देवोंके परिमाणमें भवनवासी, व्यन्तर और
वैमानिक देवोंका प्रमाण मिलानेपर जो सामान्यदेव राशिका प्रमाण होता है, उसमें सम्यक्-
दृष्टि देवोंका परिमाण घटानेपर जो शेष रहे, उतने देव । इन सब तिर्यंच, मनुष्य, नारकी
और देवोंके प्रमाणको जोड़नेपर चारों गतिके विभंगज्ञानियोंकी संख्या होती है ॥४६३॥

२५ १. ब० न साधिकज्यातिष्कसंख्यदेवाः ।

मतिश्रुतावविमनःपथ्ययकेवलज्ञानिगळ संख्येगळनय्दु राशिगळं कूडिदोडे केवलज्ञानिगळ संख्येय मेले साधिकमवकु $\frac{1}{3}$ मो राशियं सर्वजीवराशिथोळु १६ कलेयुत्तिरलुळिद शेवं १३-

प्रत्येकं मत्यज्ञानिगळ संख्येयुं श्रुताज्ञानिगळ संख्येयुमवकु १३।१३ । मितु पेळत्पट्ट संख्येगळ संदृष्टि चतुर्गंतियवकु । मतिज्ञानिगळ १३-। चतुर्गंतियवकु श्रुतज्ञानिगळ १३-। चतुर्गंतिय विभंगज्ञानिगळ

$\frac{111}{= 1}$ चतुर्गंतियमतिज्ञानिगळ ५ चतुर्गंतिय श्रुतज्ञानिगळ ५ चतुर्गंतिय अवधिज्ञानिगळ ५
४।६५ = १

५ ० मनुष्यगतियमनःपथ्ययज्ञानिगळ १ केवलज्ञानिगळ सिद्धरं जिनरं १ तिय्यंगतिय विभंग-
ज्ञानिगळ ६ ५ मनुष्यगतिय विभंगज्ञानिगळ १ नारकविभंगज्ञानिगळ—२—। देवविभंगज्ञानि-

गळ $\frac{1}{81.65} = 1$ संदृष्टिः—
४।६५ = १

कुमति	कुश्रुत	विभंग	मतिश्रुत	अवधिमनः	केवल	तिरि=विभंग ॥
१३-	१३-	$\frac{111}{81.65} = 1$	५ ०	५ ०	५ ०	१ ३
						— ६ ५ ०

मनु=विभंग	नारक=विभंग	देव=विभंग
१	—२—	$\frac{1}{81.65} = 1$

इंतु भगवदहंत्परमेश्वरचारुचरणारविंदद्वंद्वंदनानंदित पुण्यपुंजायमान श्रीमद्रायराजगुरु-
मंडलाचार्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदभयसूरिसिद्धांतचक्र-
वर्त्ति श्रीपादपंकजराजोरजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्ति जीव-
तत्त्वप्रदीपिकेथोळु जीवकांडविंशतिप्ररूपणंगळोळु द्वादशज्ञानमार्गणामहाधिकारं समाप्तमाय्दु ॥

मत्यादिसम्यग्ज्ञानराशिपञ्चकेन साधिककेवलिराशिमात्रेण १ सर्वजीवराशिः १६ हीनस्तदा १३-प्रत्येकं
मतिश्रुताज्ञानिपरिमाणं स्यात् ॥४६४॥

३

मति आदि पाँच सम्यग्ज्ञानियोंकी संख्या केवलज्ञानियोंकी संख्यासे कुछ अधिक है। इसको सर्वजीवराशियों-से घटानेपर मतिअज्ञानी और श्रुतअज्ञानी जीवका परिमाण होता है ॥४६४॥

गंभीररचनेगळ परिरंभणेयं बिडिसि निरिसिदुदनेबुव प्रा-। रंभिसि गोम्मटवृत्ति सुधांभो-
ळियिनोडिगे मोहवज्राचलमं ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्ररचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्ती जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां जीवकाण्डे
विंशतिप्ररूपणासु ज्ञानमार्गणाप्ररूपणानाम द्वादशोऽधिकारः ॥१२॥

- ५ इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अमयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी भूलिसे शोभित ललाटवाले
श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक माषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमें-से ज्ञानमार्गणा प्ररूपणा
नामक बारहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१२॥

१०

संयममार्गणा ॥१३॥

ज्ञानमार्गणा स्वरूपमं पेळदनंतरं संयममार्गणास्वरूपमं पेळत्वेडि मुंदण सूत्रमं पेळदपं—

वदसमितिकषायाणां दंडाण तर्हिंदियाण पंचण्हं ।

धारण-पालणाणिग्गहचागजओ संजमो भणियो ॥४६५॥

व्रतसमितिकषायाणां दंडानां तथेन्द्रियाणां पंचानां । धारणपालननिग्रहत्यागजयः संयमो भणितः ॥

व्रतसमितिकषायदंडेन्द्रियंगळेबी अण्डु यथासंख्यमाणि धारणपालननिग्रहत्यागजयं संयम-
मे बुदु परमागमदोळपेळपट्टदु । व्रतधारणं समितिपालनं कषायनिग्रहं दंडत्यागमिन्द्रियजयमे बी
पंचप्रकारमनुळुदु संयममे बुदत्थं । सम् सम्यग्यमनं संयमः एदिती निरुक्तिगनुरूपलक्षणं संयमक्के
पेळपट्टदुदं बुदु तात्पर्यं ।

बादरसंजलणुदए सुहुमुदए समखए य मोहसस ।

संजमभावो णियमा होदित्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥४६६॥

बादरसंज्वलनोदये सूक्ष्मोदये उपशमे क्षये च मोहस्य । संयमभावो नियमात् भवतीति
जिनैर्निर्दिष्टः ॥

बादरसंज्वलनोदयदोळं सूक्ष्मलोभोदयदोळं मोहनीयकम्मोपशमदोळं क्षयदोळं नियमदिदं
संयमभावमक्कुमे दु अर्हदादिगालिदं पेळपट्टदु ।

विश्वं विमलयन्स्वीयेगुणैर्विश्वातिशायिभिः ।

विमलस्तीर्थकर्ता यो वन्दे तं तत्पदासये ॥१३॥

अथ ज्ञानमार्गणां प्ररूप्येदानीं संयममार्गणामाह—

व्रतसमितिकषायदण्डेन्द्रियाणां पञ्चानां यथासंख्यं धारणपालननिग्रहत्यागजयाः संयमो भणितः ।
व्रतधारणं समितिपालनं कषायनिग्रहः दण्डत्यागः इन्द्रियजयः इति पञ्चधा संयम इत्यर्थः । सं-सम्यक्, यमनं
संयमः ॥४६५॥

बादरसंज्वलनोदये सूक्ष्मलोभोदये मोहनीयोपशमे क्षये च नियमेन संयमभावः स्यात् । तथा हि—प्रमत्ता-

ज्ञानमार्गणाकी प्ररूपणा करके अब संयममार्गणाकी प्ररूपणा करते हैं—व्रत, समिति,
कषाय, मन-वचन-कायरूप दण्ड और इन्द्रियोंका यथाक्रम धारण, पालन, निग्रह, त्याग और
जयको संयम कहा है । अर्थात् व्रतोंका धारण, समितियोंका पालन, कषायोंका निग्रह, दण्डों-
का त्याग और इन्द्रियोंका जय इस प्रकार पाँच प्रकारका संयम है । 'सं' अर्थात् सम्यक् रूपसे
यमको संयम कहते हैं ॥४६५॥

बादर संज्वलन कषायका उदय होते, सूक्ष्म लोभकषायका उदय रहते तथा मोहनीय-
का उपशम और क्षय होनेपर नियमसे संयमभाव होता है; ऐसा जिनदेवने कहा है । इसका

प्रमत्ताप्रमत्तरोळु संज्वलनकषायंगळो सर्वघातिस्पर्द्धकंगळुदयाभावलक्षणक्षयमुं उदय-
निषेकद उपरितननिषेकंगळुदयाभावलक्षणमुपशममुंमिनु चारित्रमोहनीयक्षयोपशममुं बादरसंज्व-
लनदेशघातिस्पर्द्धकक्के संयमाविरोधदिदमदयदोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगळप्पुवुमा गुण-
स्थानद्वयोळो परिहारविशुद्धिसंयममुमक्कुं । सूक्ष्मकृष्टिकरणानिवृत्तिपर्यंतं बादरसंज्वलनोदयदिदम-
५ पूर्वानिवृत्तिकरणदोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगळप्पुवु । सूक्ष्मकृष्टिरूपदिनिद्दं संज्वलन-
लोभोदयदिदं सूक्ष्मसांपरायसंयममक्कुं । चारित्रमोहनीयसर्वोपशमदिदमुं यथाख्यातसंयममक्कुं ।
चारित्रमोहनीयनिरवशेषक्षयदिदं यथाख्यातसंयमं क्षीणकषायादिगुणस्थानत्रयदोळं नियमदिदमक्कु-
मेदितु अहंदादिगळिद निरूपिसत्पट्टुदं बुदर्थमीयर्थमने मुंदणगाथासूत्रद्वयदिदं विशदं माडिदपर ।

बादरसंजलणुदए बादरसंजमतियं खु परिहारो ।

१०

पमदिदरे सुहुमुदए सुहुमो संजमगुणो होदि ॥४६७॥

बादरसंज्वलनोदये बादरसंयमत्रयं खलु परिहारः । प्रमत्तेतरयोः सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः संयम-
गुणो भवति ॥

बादरसंज्वलनसंयमाविरोधिदेशघातिस्पर्द्धकोदयदोळु बादरंगळप्प सामायिकछेदोप-
स्थापनपरिहारविशुद्धिसंयमंगळे ब संयमत्रयमक्कुमल्लि परिहारविशुद्धिसंयमं प्रमत्ताप्रमत्तरोळेयक्कुं
१५ उळिदेरडुमनिवृत्तिपर्यंतमप्पुवु । सूक्ष्मकृष्टिरूपसंज्वलनलोभोदयमागुत्तिरलु सूक्ष्मसांपरायसंयम-

प्रमत्तयोः संज्वलनकषायाणां सर्वघातिस्पर्द्धकानामुदयाभावलक्षणे क्षये उदयनिषेकादुपरितननिषेकाणां उदया-
भावलक्षणे उपशमे बादरसंज्वलनदेशघातिस्पर्द्धकस्य संयमाविरोधेनोदये सति सामायिकछेदोपस्थापनपरिहार-
विशुद्धिसंयमाः भवन्ति, सूक्ष्मकृष्टिकरणानिवृत्तिपर्यन्तं बादरसंज्वलनोदयेनापूर्वानिवृत्तिकरणेऽपि सामायिकछेदो-
पस्थापनसंयमो भवतः । सूक्ष्मकृष्टिगतसंज्वलनलोभोदयेन सूक्ष्मसांपरायसंयमः चारित्रमोहनीयसर्वोपशमेन उप-
२० शान्तकषाये निरवशेषक्षयेन क्षीणकषायादित्रये च यथाख्यातसंयमो भवतीत्यर्थः, इत्येतज्जिनैरेवोद्दिष्टम् ॥४६६॥
अमुमेवार्थं गाथाद्वयेनाह—

बादरसंज्वलनसंयमाविरोधिदेशघातिस्पर्द्धकोदये बादरं सामायिकछेदोपस्थापनपरिहारविशुद्धिसंयमत्रयं
भवति । तत्र परिहारविशुद्धिः प्रमत्ताप्रमत्तयोरेव, शेषद्वयं अनिवृत्तिपर्यन्तं भवति । सूक्ष्मकृष्टिगतसंज्वलनलोभोदये

स्पष्टीकरण इस प्रकार है—प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानमें संज्वलन कषायोंके सर्वघाती
२५ स्पर्द्धकोंके उदयका अभावरूप क्षय, तथा उदयरूप निषेकोंसे ऊपरके निषेकोंका उदयका
अभावरूप उपशम तथा बादर संज्वलनके देशघाती स्पर्द्धकोंका संयमका विरोध न करते हुए
उदय होनेपर सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि संयम होते हैं । किन्तु सूक्ष्म-
कृष्टि करनेरूप अनिवृत्तिकरण गुणस्थान पर्यन्त बादर संज्वलन कषायका उदय होनेसे
अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें भी सामायिक और छेदोपस्थापना संयम होते हैं । सूक्ष्म-
३० कृष्टिको प्राप्त संज्वलन लोभका उदय होनेसे सूक्ष्म सम्पराय संयम होता है । सम्पूर्ण चारित्र-
मोहका उपशम होनेपर उपशान्तकषायमें और क्षय होनेपर क्षीणकषाय, सयोगकेवली और
अयोगकेवली गुणस्थानोंमें यथाख्यातसंयम होता है ॥४६६॥

इसी अर्थको दो गाथाओंसे कहते हैं—

बादर संज्वलन कषायके देशघाती स्पर्द्धकोंका, जो संयमके विरोधी नहीं हैं, उदय
३५ होते हुए सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम होते हैं । इनमेंसे
परिहारविशुद्धि तो प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानमें ही होता है । शेष दोनों अनिवृत्तिकरण

गुणमक्कु' ।

जहखादसंजमो पुण उवसमदो होदि मोहणीयस्स ।

खयदो वि य सो णियमा होदि ति जिणेहि णिदिदुं ॥४६८॥

यथाख्यातसंयमः पुनरुपशमाद्भवति मोहनीयस्य । क्षयतोपि च स नियमाद् भवति इति जिनैर्निर्दिष्टं ॥

यथाख्यातसंयमं मत्ते मोहनीयदुपशमदिदमक्कु' । मोहनीयनिरवशेषक्षयदिदमुं आ यथा-
ख्यातसंयमं नियमदिदमक्कुमेदितु जिनहर्गादिदं पेळ्ळपट्टुदु ।

तदियकसायुदयेण य विरदाविरदो गुणो इवे जुगवं ।

विदियकसायुदयेण य असंजमो होदि णियमेण ॥४६९॥

तृतीयकषायोदयेन च विरताविरतगुणो भवेद्युगपत् । द्वितीयकषायोदयेन च असंयमो भवति १०
नियमेन ॥

प्रत्याख्यानावरणतृतीयकषायोदयदिदं विरताविरतगुणमोम्मो'दलोळ्येयक्कु' । संयमसंयममु-
मोम्मो'दलोळ्येयक्कुमदुकारणमाणि सम्यग्मिथ्यादृष्टिये'तंते देशसंयतनुंमिश्रसंयमियक्कुमे'बुदत्थं ।
द्वितीयकषायोदयदोळप्रत्याख्यातकषायोदयदोळसंयमं नियमदिदं मक्कु' ।

संगहिय सयलसंजममेयजममणुत्तरं दुरवगम्मं ।

जीवो समुव्वहंतो सामाइयसंजदो होदि ॥४७०॥

संगृह्य सकलसंयममेकयममनुत्तरं दुरवगम्यं । जीवःसमुव्वहन् सामायिकसंयमो भवति ॥

संगृह्य सकलसंयमं व्रतधारणादिपञ्चविधमप्यसंयमं युगपत्सर्वसावद्याद्विरतोस्मि ये'दितु
संग्रहिसि संक्षेपिसि एकयमं भेदरहितसकलसावद्यानिवृत्तिस्वरूपमप्य एकयममं अनुत्तरं असदृशं

सूक्ष्मसांपरायसंयमगुणो भवति ॥४६७॥

स यथाख्यातसंयमः पुनः मोहनीयस्योपशमतः निरवशेषक्षयतश्च नियमेन भवतीति जिनैरुक्तम् ॥४६८॥

प्रत्याख्यानकषायोदयेन विरताविरतगुणो युगपद् भवति, संयमोसंयमयोर्युगपत्संभवात् । सम्यग्मिथ्या-
दृष्टिबद्देशसंयतोऽपि मिश्रसंयमोत्यर्थः । अप्रत्याख्यानकषायोदये असंयमो नियमेन भवति ॥४६९॥

सकलसंयमं—व्रतधारणादिपञ्चविधं युगपत्सर्वसावद्याद्विरतोऽस्मीति संगृह्य—संक्षिप्य, एकयमं—भेदरहित-

पर्यन्त होते हैं । सूक्ष्मकृष्टिको प्राप्त संज्वलन लोभका उदय होते हुए सूक्ष्म साम्पराय नामक २५
संयमगुण होता है ॥४६७॥

यथाख्यात संयम नियमसे मोहनीयके उपशमसे अथवा सम्पूर्ण क्षयसे होता है, ऐसा
जिनदेवने कहा है ॥४६८॥

तीसरी प्रत्याख्यान कषायके उदयसे एक साथ विरतअविरतरूप गुण होता है,
क्योंकि संयम और असंयम एक साथ होते हैं । अर्थात् जैसे तीसरे गुणस्थानमें सम्यक्त्व ३०
और मिथ्यात्व मिले-जुले होते हैं, वैसे ही देशसंयत नामक पंचम गुणस्थानमें संयम और
असंयम मिला हुआ होता है । दूसरी अप्रत्याख्यान कषायके उदयमें नियमसे असंयम
होता है ॥४६९॥

व्रतधारण आदि रूप पाँच प्रकारके सकल संयमको एक साथ 'मैं समस्त सावद्यसे
विरत हूँ', इस प्रकार संगृहीत करके एक यम रूपसे धारण करना सामायिक संयम है । ३५

मिगिलिनिल्लदुदं दुग्म्यं दुःखेन महता कण्ठेन गम्यं प्राप्यं एवंविधमप्य सामायिकं समुद्बहन् जीवः कैकोडु नडसुवंतप्पासन्नभयजीवं सामायिकसंयमो भवति । सामायिकः संयमोऽस्यास्मिन्वा सामायिकसंयमः सामायिकसंयममनुळ्ळ सामायिकसंयमनेवनक्कुं ।

छेत्तूण य परियायं पोरणं जो ठवेइ अप्पाणं ।

५ पंचजमे धम्मे सो छेदोवट्ठावगो जीवो ॥४७१॥

छित्त्वा च पट्यार्यं पुराणं यः स्थापयति आत्मानं । पंचयमे धम्मे स छेदोपस्थापको जीवः ॥

१० छित्त्वा पुराणं पट्यार्यं सामायिकसंयतनागिदुदं बळिच्चि सावद्यव्यापारंगळगे संदिद्धं तत्पज्जोवं प्राक्तनसावद्यव्यापारपट्यार्यमं प्रायश्चित्तंगळिदं छित्त्वा छेदिसि यः आवनोव्वं आत्मानं तन्नं पंचयमे धम्मे व्रतधारणादिपंचप्रकारसंयमरूपधम्मंदोलु स्थापयति तेल्लेगोलिसुगुं सः जीवः आ जीवं छेदोपस्थापकः छेदोपस्थापनासंयतनक्कुं । छेदेनोपस्थापनं छेदोपस्थापनं । प्रायश्चित्ताचरणेनोपस्थापनं छेदोपस्थापनं यस्य स छेदोपस्थापकः एदिनु निरुत्तिलक्षणसिद्धमक्कुं । अथवा प्रायश्चित्तंगळिदं ता माडिद दोषं पोगदोडे मुन्नं ता माडिद तपमनादोषक्केतक्कुदं छेदिसि किरियनागि तन्नं मत्ता निरवद्यसंयमदोलु स्थापिसुवातनुं छेदोपस्थापनसंयतनक्कुं । स्वतपसि छेदे सति उपस्थापनं यस्यासौ छेदोपस्थापकः एदितिल्लि अधिकरणव्युत्पत्तियक्कुं ।

१५ पंचसमिदो तिगुत्तो परिहरइ सदा वि जो हु सावज्जं ।

पंचैक्कजमो पुरिसो परिहारयसंजदो सो हु ॥४७२॥

पंचसमितस्त्रिगुप्तः परिहरति सदापि यः खलु सावद्यं । पंचैकयमः पुरुषः परिहारसंयतः स खलु ॥

२० सकलसावद्यनिवृत्तिरूपं, अनुत्तरं-असदृशं, संपूर्णं, दुरवगम्यं-दुःखेन प्राप्यं तत्सामायिकं समुद्बहन् जीवः सामायिकसंयमः-सामायिकसंयमसंयुक्तो भवति ॥४७०॥

२५ सामायिकसंयतो भूत्वा प्रच्युत्य सावद्यव्यापारप्रतिपन्नो यो जीवः पुराणं-प्राक्तनं सावद्यव्यापारपर्यायं प्रायश्चित्तैश्छित्त्वा आत्मानं व्रतधारणादिपञ्चप्रकारसंयमरूपधर्मे स्थापयति स छेदोपस्थापनसंयतः स्यात् । छेदेन प्रायश्चित्ताचरणेन उपस्थापनं यस्य स छेदोपस्थापन इति निरुक्तेः । अथवा प्रायश्चित्तेन स्वकृतदोषपरिहाराय पूर्वकृततपस्तपोषानुसारेण छित्त्वा आत्मानं तन्निरवद्यसंयमे स्थापयति स छेदोपस्थापकसंयतः, स्वतपसि छेदे सति उपस्थापनं यस्य स छेदोपस्थापन इत्यधिकरणव्युत्पत्तेः ॥४७१॥

अर्थात् सामायिक संयम भेदरहित सकल पापोंसे निवृत्तिरूप है । यह अनुत्तर है अर्थात् इसके समान अन्य नहीं है, सम्पूर्ण है और दुरवगम्य है अर्थात् बड़े कष्टसे यह प्राप्त होता है । उस सामायिकको धारण करनेवाला जीव सामायिक संयमी होता है ॥४७०॥

३० सामायिक संयमको धारण करनेके पश्चात् उससे च्युत होकर सावद्य क्रियामें लगा जो जीव इस पुराने सावद्यव्यापाररूप पर्यायका प्रायश्चित्तके द्वारा छेदन करके अपनेको व्रतधारण आदि पाँच प्रकारके संयमरूप धर्ममें स्थापन करता है, वह छेदोपस्थापना संयमवाला होता है । छेद अर्थात् प्रायश्चित्त करनेके द्वारा जिसका उपस्थापन होता है, वह छेदोपस्थापन है, ऐसी निरुक्ति है । अथवा प्रायश्चित्तके द्वारा अपने किये हुए दोषोंको दूर करनेके लिए पूर्वकृत तपको उसके दोषोंके अनुसार छेदन करके जो आत्माको निर्दोष संयममें स्थापित करता है, वह छेदोपस्थापक संयमी है । अपने तपका छेद होनेपर जिसका उपस्थापन होता है, वह छेदोपस्थापन है । इस प्रकार अधिकरणपरक व्युत्पत्ति है ॥४७१॥

पञ्चसमितयोऽस्यसंतीति पञ्चसमितः । पञ्चसमितियुक्तं तिलो गुप्तयोऽस्मिन्निति त्रिगुप्तः त्रिगुप्तिगळोऽकूडिदनु सदापि सर्वदापि एल्ला कालम् सावधं प्राणिवधं परिहरति परिहरिसुम् । यः आवनोवर्षं पञ्चैकयमः पञ्चैकयमनुळ पुरुषः पुरुषनु सः आतं परिहारकसंयतः खलु परिहार-विशुद्धिसंयतनक्कुं स्फुटमाणि ।

तीसं वासो जन्मे वासपुधत्तं खु तित्थयरमूले ।

पञ्चवखाणं पट्टिदो संज्ञणदुगाउयविहारो ॥४७३॥

त्रिगुप्तो जन्मनि वर्षपृथक्त्वं खलु तीर्थंकरमूले । प्रत्याख्यानं पठितः संध्योनद्विगवृत्ति-विहारः ॥

जन्मबोळु त्रिगुप्तमनुळं सर्वदा सुखियपं बंदु दीक्षेगोडु वर्षपृथक्त्वं वरं तीर्थंकर श्रीपादमूलबोळु प्रत्याख्यानमेवो भत्तनय पूर्वमं पठियिसिदातं परिहारविशुद्धिसंयममं कैकोडु १० संध्यात्रयन्यूनसर्वकालबोळरडु क्रोशप्रमाणविहारमनुळं रात्रियोळ्विहाररहितनुं प्रावृत्काल-नियममिल्लवन्तुं परिहारविशुद्धिसंयमनक्कुं । परिहरणं परिहारः प्राणिवधान्निवृत्तिस्तेन परि-हारेण विशिष्टा शुद्धिर्यस्मिन् स परिहारविशुद्धिसंयमो यस्य स परिहारविशुद्धिसंयमः एदितु परिहारविशुद्धिसंयमं जघन्यकालमंतर्मुहूर्तमक्कुमेकेदोडे परिहारविशुद्धिसंयममं पोहि जघन्य-कालपथ्यंतमिदं न्यगुणस्थानमं पोहिदं तदंतर्मुहूर्तकालसंभवमक्कुमप्युदरिदं । उत्कृष्टादिवमष्ट- १५ त्रिगुप्तमनुळं पूर्वकोटिवर्षमक्कुमेकेदोडे पुट्टिदितं मोदल्लोडु भूषतु वर्षवरं सर्वदा सुखियाणि कालमं कळेदु संयममं पोहि मेले वर्षपृथक्त्वं वरं तीर्थंकरश्रीपादमूलबोळु प्रत्याख्याननामधेय-

पञ्चसमितिसमेतः त्रिगुप्तिपुतः सदापि प्राणिवधं परिहरति, यः पञ्चानां सामायिकादीनां मध्ये परिहार-विशुद्धिनामैकसंयमः पुरुषः सः परिहारविशुद्धिसंयतः स्फुटं भवति ॥४७२॥

जन्मनि त्रिशद्वाषिकः सर्वदा सुखी सन्नागत्य दीक्षां गृहीत्वा वर्षपृथक्त्वपर्यन्तं तीर्थंकरश्रीपादमूले २० प्रत्याख्यानं नवमपूर्वं पठितः स परिहारविशुद्धिसंयमं स्वीकृत्य संध्यात्रयोनसर्वकाले द्विक्रोशप्रमाणविहारी रात्रौ विहाररहितः प्रावृत्कालनियमरहितः परिहारविशुद्धिसंयतो भवति । परिहरणं परिहारः, प्राणिवधान्निवृत्तिः, तेन विशिष्टा शुद्धिर्यस्मिन् स परिहारविशुद्धिः, स संयमो यस्य स परिहारविशुद्धिसंयमः, तस्य जघन्यकालोन्त-मुहूर्तः, जघन्येन तावत्कालमेव तत्र स्थित्वा गुणस्थानान्तरश्रयणात् । उत्कृष्टः अष्टत्रिशद्वाषीनपूर्वकोटिः, उत्पत्ति-

जो पाँच समिति और तीन गुप्तियोंसे युक्त होकर सदा ही प्राणिवधसे दूर रहता है, २५ वह सामायिक आदि पाँच संयमोंमें-से परिहारविशुद्धि नामक एक संयमको धारण करनेसे परिहारविशुद्धि संयमी होता है ॥४७२॥

जन्म से तीस वर्ष तक सर्वदा सुखपूर्वक रहते हुए उसे त्याग दीक्षा ग्रहण करके वर्षपृथक्त्वपर्यन्त तीर्थंकरके पादमूलमें जिसने प्रत्याख्यान नामक नौवें पूर्वको पढ़ा है, वह परिहारविशुद्धि संयमको स्वीकार करके सदा काल तीनों संध्याओंको छोड़कर दो कोस ३० प्रमाण विहार करता है, रात्रिमें विहार नहीं करता, वर्षाकालमें उसके विहार न करनेका नियम नहीं रहता, वह परिहारविशुद्धि संयमी होता है । परिहरण अर्थात् प्राणिहिसासे निवृत्तिको परिहार कहते हैं । उनसे विशिष्ट शुद्धि जिसमें है, वह परिहारविशुद्धि है । वह संयम जिसके होता है, वह परिहारविशुद्धि संयमी है । उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है; क्योंकि कमसे कम इतने काल पर्यन्त ही उस संयममें रहकर अन्य गुणस्थानोंमें चला जाता ३५ है । उत्कृष्ट काल अड़तीस वर्ष कम एक पूर्व कोटि है; क्योंकि उत्पत्ति दिनसे लेकर तीस वर्ष

मनोभक्तनेय पूर्व्वं पठिष्यति मत्ते परिहारविशुद्धिसंयममं पोद्दिदं तदुत्कृष्टकालं संभविषुगु-
मप्युदरिदं । 'परिहारद्विसमेतः षड्जीवनिकायसंकुले विहरन् । पयसेव पद्मपत्रं न लिप्यते पाप-
निवहेन' ।

अणुलोहं वेदंतो जीवो उवसामगो व खवगो वा ।

५

सो सुहुमसंपराओ जहखाएणूणवो किंचि ॥४७४॥

अणुलोभं वेदयमानो जीवः उपशमको वा क्षपको वा । स सूक्ष्मसांपरायो यथाख्यातेनोनः
किंचित् ॥

सूक्ष्मलोभकृष्टिगतानुभागमनावनोर्व्वननु भविसुत्तं जीवनु उपशमकनागलि मेणु क्षपक-
नागलि मेणु सः आ जीवं सूक्ष्मसांपरायने बन्वकुं । सूक्ष्मः सांपरायः कषायो यस्य स सूक्ष्मसांपरायः

१० एंदी यन्वत्थनामविशिष्टमहामुनि यथाख्यातसंयमिगलोडने किंचिदूनवकुं ।

उवसंते खीणे वा असुहे कम्मम्मि मोहणीयम्मि ।

छदुमट्टो व जिणो वा जहखादो संजदो सो दु ॥४७५॥

उपशान्ते क्षीणे वा अशुभे कर्मणि मोहनीये छद्मस्थो वा जिनो वा यथाख्यातसंयतः स तु ॥

१५ अशुभमप्य मोहनीयकर्ममुपशान्तमागुत्तिरलु मेणु क्षीणमागुत्तं विरलावनोर्व्वं छद्मस्थं
उपशान्तकषायनागलि मेणु क्षीणकषायछद्मस्थनागलि मेणु जिनो वा सयोगकेवलियुमयोगकेवलियुं
मेणागलि सः आ जीवं तु मत्ते यथाख्यातसंयतने बन्वकुं । मोहस्य निरवशेषस्योपशमात्क्षयाच्चा-

दिवसादारभ्य त्रिशद्वर्षाणि सर्वदा सुखेन नीत्वा संयमं प्राप्य वर्षपृथक्त्वं तीर्थंकरपादमूले प्रत्याख्यानं पठितस्य
तदङ्गीकरणात् ॥

उक्तं च—

परिहारद्विसमेतः षड्जीवनिकायसंकुले विहरन् ।

२०

पयसेव पद्मपत्रं न लिप्यते पापनिवहेन ॥४७३॥

सूक्ष्मलोभकृष्टिगतानुभागमनुभवन् यः उपशमकः क्षपको वा स जीवः सूक्ष्मसांपरायः स्यात् । सूक्ष्मः-
सांपरायः कषायो यस्येत्यन्वर्थनामा महामुनिः यथाख्यातसंयमिन्म्यः किंचिन्पूतो भवति ॥४७४॥

अशुभमोहनीयकर्मणि उपशान्ते क्षीणे वा यः उपशान्तक्षीणकषायछद्मस्थः सयोगायोगजिनो वा, सः,
तु—पुनः, यथाख्यातसंयतो भवति । मोहस्य निरवशेषस्य उपशमात् क्षयाद्वा आत्मस्वभावावस्थापेक्षालक्षणं

२५

सदा सुखसे वित्ताकर संयम धारण करके वर्षपृथक्त्वं तक तीर्थंकरके पादमूलमें प्रत्याख्यान
पढ़नेके पश्चात् परिहारविशुद्धि संयम स्वीकार करना होता है । कहा है—'परिहारविशुद्धि
ऋद्धिसे संयुक्त जीव छह कायके जीवोंसे भरे स्थानमें विहार करते हुए भी पाप समूहसे वैसे
ही लिप्त नहीं होता, जैसे कमलका पत्ता पानीमें रहते हुए भी पानीसे लिप्त नहीं होता' ॥४७३॥

३० सूक्ष्म कृष्टिको प्राप्त लोभ कषायके अनुभागको अनुभव करनेवाला उपशमक या
क्षपक जीव सूक्ष्म साम्पराय होता है । सूक्ष्म साम्पराय अर्थात् कषाय जिसकी है वह सार्थक
नामवाला महामुनि यथाख्यात संयमियोंसे किंचित् ही हीन होता है ॥४७४॥

अशुभ मोहनीय कर्मके उपशान्त या क्षय हो जानेपर उपशान्त कषाय और क्षीण
कषाय गुणस्थानवर्ती छद्मस्थ अथवा सयोगी और अयोगी जिन यथाख्यात संयमी होते हैं ।

१. कं गलितं किं ।

तत्स्वभाववस्थापेक्षालक्षणं यथाख्यातं चारित्रमित्याख्यायते ।

पंचतिहिचउविहेहि य अणुगुणमिक्खावएहि संजुत्ता ।

उच्चंति देसविरया सम्माइद्धी झलियकम्मा ॥४७६॥

पंचत्रिचतुर्विधैश्च अणुगुणशिक्षाव्रतैः संयुक्ताः । उच्यन्ते देशविरताः सम्यग्दृष्टयो हृदित-
कम्माणिः ॥

पंचविधाणुव्रतंगळिदं त्रिविधगुणव्रतंगळिदं चतुर्विधशिक्षाव्रतंगळिदं संयुक्तरूप्य सम्यग्दृष्टि-
गळु कम्मनिज्जरेयोळ्ळकूडिदवगळु देशविरतरं दु परमागमदोळ्ळपेट्टुह ।

दंसणवदसामायियपोसहसच्चित्तराइभत्ते य ।

बम्हारंभपरिग्गह अणुमणमुद्दिदु देसविरदेदे ॥४७७॥

दर्शनिकव्रतिकासामायिकप्रोषधोपवाससच्चित्तविरत-रात्रिभक्तविरतब्रह्मचार्यारंभविरतपरि-
ग्रहविरतानुमतिविरतोद्दिष्टविरताः देशविरता एते ॥

इल्लि नामैकदेशो नाम्नि वर्तते एंबी न्यायदिदं छाये माडलपट्टुहु । आ देशविरतभेदंगळपंनो
वप्पुवदे ते दोडे दर्शनिकनुं व्रतिकनुं सामायिकनुं प्रोषधोपवासनुं सच्चित्तविरतनुं रात्रिभक्तविर-
तनुं ब्रह्मचारियुं आरंभविरतनुं परिग्रहविरतनुमनुमतिविरतनुमुद्दिष्टविरतनुमेवितिल्लि
दर्शनिकनेंबं ।

“पंचुंबरसहियाइं सत्तइं वसणाइं जो विवज्जेइ ।

सम्मत्तविसुद्धमई सो दंसणसावयो भणिओ ॥” [वसु. श्रा. ५७]

यथाख्यातचारित्रमित्याख्यायते ॥४७५॥

पञ्चत्रिचतुरणुगुणशिक्षाव्रतैः संयुक्तसम्यग्दृष्टयः कर्मनिर्जराव्रतः ते देशविरताः इति परमागमे
उच्यन्ते ॥४७६॥

अत्र नामैकदेशो नाम्नि वर्तते इति नियमाद् गाथार्थो व्याख्यायते । दर्शनिको, व्रतिकः, सामायिकः,
प्रोषधोपवासः, सच्चित्तविरतः, रात्रिभक्तविरतः, ब्रह्मचारी, आरंभविरतः, परिग्रहविरतः, अनुमतिविरतः,
उद्दिष्टविरतश्चेत्येकादशैते विरतभेदाः । तत्र—“पंचुंबरसहियाइं सत्तइं वसणाणि जो विवज्जेइ । सम्मत्तविसुद्धमई
सो दंसणसावओ भणिओ ।” (वसु. श्रा. ५७) इत्यादिलक्षणानि ग्रन्थान्तरेऽवगन्तव्यानि ॥४७७॥

समस्त मोहनीय कर्मके उपशम अथवा क्षयसे आत्मस्वभावकी अवस्थारूप लक्षणवाला
यथाख्यात चारित्र कहलाता है ॥४७५॥

पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतोंसे संयुक्त सम्यग्दृष्टि जो कर्मोंकी
निर्जरा करते हैं, उन्हें परमागममें देशविरत कहते हैं ॥४७६॥

यहाँ नामका एकदेश नामका वाचक होता है, इस नियमके अनुसार गाथाका अर्थ
कहते हैं—दर्शनिक, व्रतिक, सामायिक, प्रोषधोपवास, सच्चित्तविरत, रात्रिभक्तविरत,
ब्रह्मचारी, आरंभविरत, परिग्रहविरत, अनुमतिविरत और उद्दिष्टविरत ये ग्यारह देश-
विरतके भेद हैं । पाँच उदुम्बरादिकके साथ सात व्यसनोंको जो छोड़ता है, उस विशुद्ध
सम्यक्त्वधारीको दर्शनिक श्रावक कहते हैं । इत्यादि इन भेदोंके लक्षण अन्य ग्रन्थोंसे
जानना ॥४७७॥

इत्यादिलक्षणंगळु देशविरतरुगळो ग्रंथांतरदोळरियल्पडुवुवु ।

जीवा चोद्दसभेया इंदियविसया तहडुवीसं तु ।

जे तेसु णेव विरया असंजदा ते मुणेयन्वा ॥४७८॥

जीवाश्चतुर्दशभेदाः इन्द्रियविषयास्तथाष्टाविंशतिः तु । ये तेषु नैव विरताः असंयतास्ते

५ मंतव्याः ॥

पदिनालकं जीवभेदंगळोळं तु मत्ते इन्द्रियविषयंगळिप्पत्ते दुभेदं गळोळमावकलंबरु विरतरल-
दवर्गळु असंयतरे दरियल्पडुवरु ।

पंचरस पंचवण्णा दो गंधा अडुफाससत्तसरा ।

मणसहिदट्ठावीसा इंदियविसया मुणेदन्वा ॥४७९॥

१० पंचरसाः पंचवर्णाः द्वौ गंधौ अष्टस्पर्शाः सप्तस्वराः । मनः सहिताष्टविंशतिरिन्द्रियविषया
मंतव्याः ॥

तिक्तकटुकषायाम्लमधुरमेव पंचरसंगळुं श्वेतपीतहरितारुणकृष्णमेव पंचवर्णंगळुं सुगंध-
दुर्गंधमेवबरु गंधमुं मृदुकर्कशगुलघुशीतोष्णस्निग्धरुक्षाः अष्टस्पर्शंगळुं षड्जऋषभागांधार
मध्यम-पंचमधैवतनिषादभेवं सरिगमपद निगळप्पसप्तस्वरंगळुं कूडिर्वतिन्द्रियविषयंगळिप्पत्तेळु

१५ मनोविषयमोदितु इन्द्रियनोइन्द्रियविषयंगळष्टाविंशतिप्रमितंळुं मंतव्यंगळ्वकुं ।

अनंतरं संयममार्गणेयोळु जीवसंख्यायं पेळदपं :—

पमदादिचउण्हजुदी सामाह्यदुगं कमेण सेसतियं ।

सत्तसहस्सा णवसय णवलक्खा तीहि परिहीणा ॥४८०॥

प्रमत्तादिचतुर्णां युतिः सामायिकद्विकं क्रमेण शेषत्रयं । सप्तसहस्रं नवशतं नवलक्षं त्रिभिः

२० परिहीनानि ॥

चतुर्दशजीवभेदाः, तु—पुनः इन्द्रियविषयाः अष्टाविंशतिः तेषु ये नैव विरतास्ते असंयता इति
मन्तव्याः ॥४७८॥

रसाः—तिक्तकटुकषायाम्लमधुराः पञ्च । वर्णाः—श्वेतपीतहरितारुणकृष्णाः पञ्च । गन्धौ सुगन्धदुर्गन्धौ
द्वौ । स्पर्शाः मृदुकर्कशगुलघु-शीतोष्णस्निग्धरुक्षाः अष्टौ । स्वराः—षड्जऋषभ-गान्धार-मध्यम-पञ्चम-धैवत-
२५ निषादा सरिगमपधनिरूपाः सप्त एते इन्द्रियविषयाः सप्तविंशतिः । मनोविषय एका, एवमष्टाविंशतिर्म-
न्तव्यः ॥४७९॥ अथ संयममार्गणायां जीवसंख्यामाह—

चौदह प्रकारके जीव और अट्ठाईस इन्द्रियोंके विषय, इनमें जो विरत नहीं हैं, वे
असंयमी जानना ॥४७८॥

३० तीता, कटुक, कसैला, खट्टा, मीठा ये पाँच रस हैं । श्वेत, पीला, हरा, लाल, काला ये
पाँच वर्ण हैं । सुगन्ध, दुर्गन्ध ये दो गन्ध हैं । कोमल, कठोर, भारी, हल्का, शीत, उष्ण,
चिकना, रुखा ये आठ स्पर्श हैं । षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद ये
पा रे ग म प ध नि रूप सात स्वर हैं । ये सत्ताईस इन्द्रियविषय हैं और एक मनका विषय
है । इस प्रकार अट्ठाईस विषय जानना ॥४७९॥

अब संयम मार्गणामें जीवोंकी संख्या कहते हैं—

प्रमत्तादिचतुर्णायुतिः सामायिकद्विकं प्रमत्तर संख्ये ५९३९८२०६ । अप्रमत्तरसंख्ये २९६९९१०३ । उपशमकापूर्वकरणरु २९९ । उपशमकानिवृत्तिकरणरु २९९ । क्षपकापूर्वकरणरु ५९८ । क्षपकानिवृत्तिकरणरु ५९८ । इंतु प्रमत्तादिचतुर्गुणस्थानवृत्तिगळ युति प्रत्येकसामायिक-संयमिगळसंख्येयुं छेदोपस्थापनसंयमिगळ संख्येयुं कुमेके'दोडे सामायिकसंयमिगळेनिबरनिबरे छेदोपस्थापनसंयमिगळपुदरिदं । ८२०९९१०३ । ८९०२९१०३ । क्रमदिद शेषत्रयं परिहार-विशुद्धिसंयमिगळ संख्येयुं सूक्ष्मसांपरायसंयमिगळ संख्येयुं यथाख्यातसंयमिगळ संख्येयुं त्रिरूपोन-सप्तसहस्रमुं ६९९७ । त्रिरूपोननवशतमुं ८९७ । त्रिरूपोननवलक्षमुमकुं । ८९९९७ ।

पल्लासंखेज्जदिमं विरदाविरदाण दव्वपरिमाणं ।

पुव्वुत्तरासिहीणो संसारी अविरदाण पमाणं ॥४८१॥

पल्यासंख्येयभागो विरताविरतानां द्रव्यप्रमाणं । पुव्वोक्तराशिहीनः संसारी अविरतानां प्रमा ॥ १०

पल्यासंख्यातैकभागं देशसंयतजीवद्रव्यप्रमाणमवकु प मी पुव्वोक्तषट्पराशिविहीन-
३ ३ ४ ३

प्रमत्ताः ५, ९३, ९८, २०६ अप्रमत्ताः २, ९६, ९९, १०३, उपशमकापूर्वकरणाः २९९, उपशम-कानिवृत्तिकरणाः २९९, क्षपकापूर्वकरणाः ५९८, क्षपकानिवृत्तिकरणाः ५९८, एषां चतुर्णां युतिः प्रत्येकं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमिसंख्या भवति उभयत्र समसंख्यात्वात् ८, ९०, ९९, १०३ । ८, ९०, ९९, १०३ । परिहारविशुद्धिसूक्ष्मसांपराययथाख्यातसंयमिसंख्या क्रमेण त्रिरूपोनसप्तसहस्रं ६९९७ त्रिरूपोननवशतं ८९७, त्रिरूपोननवलक्षं ८९९९७ भवति ॥४८०॥ १५

पल्यासंख्यातैकभागो देशसंयतजीवद्रव्यप्रमाणं भवति प एतत्पुव्वोक्तषट्पराशिविहीनसंसारिराशिरेव
३ ३ ४ ३

प्रमत्तादि चार गुणस्थानवर्ती जीवोंका जितना जोड़ है, उतने ही सामायिक और छेदोपस्थापना संयमी होते हैं । सो प्रमत्तसंयत पाँच करोड़ तिरानवे लाख, अट्टानवे हजार दो सौ छह ५९३ ९८ २०६, अप्रमत्तसंयत दो करोड़ छियानवे लाख, निन्यानवे हजार एक सौ तीन २९६९९१०३, उपशम श्रेणीवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, उपशम श्रेणीवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, उपशम श्रेणीवाले अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, क्षपक श्रेणीवाले अपूर्वकरण पाँचसौ अठानवे, क्षपक-श्रेणीवाले अनिवृत्तिकरण पाँचसौ अट्टानवे ५९८ इन सबका जोड़ आठ करोड़, नब्बे लाख, निन्यानवे हजार एक सौ तीन ८९०२९१०३ इतने जीव सामायिक संयमी और इतने ही छेदोपस्थापना संयमी होते हैं । दोनोंकी संख्या समान होती है । परिहार विशुद्धि संयतोंकी संख्या तीन कम सात हजार ६९९७ है । सूक्ष्मसाम्पराय संयमियोंकी संख्या तीन कम नौ सौ ८९७ है । यथाख्यात संयतोंकी संख्या तीन कम नौ लाख ८९९९७ है ॥४८०॥ २०

पल्यके असंख्यातवै भाग देश संयमी जीवोंका प्रमाण है । इन छहों राशियोंको

संसारिराशिअविरतप्रमाणसङ्कः—

सामायिक	छेदोपस्थापन	परिहार	सूक्ष्म	यथाख्यात	देशसंय =	संय =
८९०९९१०३	८९०९९१०३	६९९७	८९७	८९९९९७	प	१३ -
					a a ४ a	

इंतु भगवदहंत्परमेश्वरचारुचरणारविंदद्वंद्वंदनानंदित पुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरु
मंडलाचार्यमहावादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरिसिद्धान्त-
चक्रवर्त्तिश्रीपादपंकजरजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्णविरचितमण्य गोम्मटसारकर्णाटवृत्तिजीव-
५ तत्वप्रदीपिकेयोळु जीवकांडविंशतिप्ररूपणंगळोळु त्रयोदशं संयममार्गणाधिकारं निगदितमाप्नु ॥

अविरत्तानां प्रमाणं भवति । १३-॥४८१॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ तत्वप्रदीपिकाख्यायां
जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणासु संयममार्गणाप्ररूपणा नाम त्रयोदशोऽधिकारः ॥१३॥

संसारी जीवोंकी राशिमें भाग देनेपर जो शेष रहे, उतना ही असंयमियोंका प्रमाण
१० होता है ॥४८१॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अहन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले
श्री केशववर्णके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोदरमल रचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमेंसे संयममार्गणा प्ररूपणा
नामक तेरहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१३॥

दर्शन-मार्गणा ॥१४॥

संयममार्गणानंतरं दर्शनमार्गणं पेच्छदपं :—

जं सामण्णं ग्रहणं भावाणं णेव कट्ठुमायारं ।

अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णये समये ॥४८२॥

यत्सामान्यग्रहणं भावानां नैव कृत्वाऽऽकारमविशेष्यार्थान्दर्शनमिति भण्यते समये ॥

भावानां सामान्यविशेषात्मकबाह्यपदार्थगळ आकारं नैव कृत्वा भेदग्रहणं माडवे ५
यत्सामान्यग्रहणं आवुदोदु स्वरूपमात्रं कैकोळुवुदु दर्शनमेदितु परमागमदोळु पेळल्पटुदु ।

वस्तुस्वरूपमात्रग्रहणमेतदोडे अर्थाविशेष्य बाह्यार्थगळ जातिक्रियागुणप्रकारंगळिदं
विकल्पसवे स्वपरसत्तावभासनं दर्शनमेदितु पेळल्पटुदु बुदर्थं । मत्तमीयर्थमने विशदं माडिदपं—

भावाणं सामण्णविसेसयाणं सरूवमेत्तं जं ।

वण्णणहीणग्रहण जीवेण य दंसणं होदि ॥४८३॥

१०

भावानां सामान्यविशेषात्मकानां स्वरूपमात्रं यद्वर्णनहीनग्रहणं जीवेन च दर्शनं भवति ॥

सामान्यविशेषात्मकगळप्प पदार्थगळ आवुदोदु स्वरूपमात्रं विकल्परहितमाणि जीर्वनिदं
स्वपरसत्तावभासनमदु दर्शनमेबुदक्कुं । पश्यति दृश्यतेऽनेन दर्शनमात्रं वा दर्शनमेदितु कर्तृकरण-

अनन्तानन्दसंसारसागरोत्तारसेतुकम् ।

अनन्तं तीर्थकर्तारं वन्देऽनन्तमुदे सदा ॥१४॥

१५

अथ संयममार्गणां व्याख्याय दर्शनमार्गणां व्याख्याति—

भावानां सामान्यविशेषात्मकबाह्यपदार्थानां आकारं-भेदग्रहणं, अकृत्वा यत्सामान्यग्रहणं-स्वरूपमात्रा-
वभासनं तद् दर्शनमिति परमागमे भण्यते । वस्तुस्वरूपमात्रग्रहणं कथम् ? अर्थात्-बाह्यपदार्थान् अविशेष्य-
जातिक्रियाग्रहणविकारैरविकल्प्य स्वपरसत्तावभासनं दर्शनमित्यर्थः ॥४८२॥ अमुमेवार्थं विशदयति—

भावानां सामान्यविशेषात्मकपदार्थानां यत्स्वरूपमात्रं विकल्परहितं यथा भवति तथा जीवेन स्वपर-

२०

संयममार्गणाको कहकर दर्शन मार्गणाको कहते हैं—

भाव अर्थात् सामान्य विशेषात्मक पदार्थोंके आकार अर्थात् भेदग्रहण न करके जो
सामान्य ग्रहण अर्थात् स्वरूपमात्रका अवभासन है, उसे परमागममें दर्शन कहते हैं । वस्तु-
स्वरूपमात्रका ग्रहण कैसे करता है ? अर्थात् पदार्थोंके जाति, क्रिया, गुण आदि विकारों-
का विकल्प न करते हुए अपना और अन्यका केवल सत्तामात्रका अवभासन दर्शन २५
है ॥४८२॥

इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं—

सामान्य विशेषात्मक पदार्थोंका विकल्परहित स्वरूपमात्र जैसा है, वैसा जीवके साथ
स्वपर सत्ताका अवभासन दर्शन है । जो देखता है, जिसके द्वारा देखा जाता है या देखना

भावसाधनं दर्शनमरियत्पडुवुदु ।

अनंतरं चक्षुर्दर्शनं अचक्षुदर्शनंगळ स्वरूपमं पेळदपं :—

चक्खूणं जं पयासइ दिस्सइ तं चक्खुदंसणं वेति ।

सेसिंदियप्पयासो णायवो सो अचक्खु ति ॥४८४॥

५ चक्षुषा यत्प्रकाशते दृश्यते तच्चक्षुर्दर्शनं भवति । यः शेषेन्द्रियप्रकाशो जातव्यः सोऽचक्षु-
दर्शनमिति ॥

नयनंगळावुदोदु प्रतिभासिसुतमिदुपुदु काणत्पडुत्तिदुपुदु तद्विषयप्रकाशनमे चक्षुर्दर्शन-
मेदितु गणधरदेवादिविषयज्ञानिगळ पेळवर । शेषेन्द्रियंगळावुदोदु तोरुत्तिदुपुदु अचक्षुदर्शनमेदितु
जातव्यमवकुं ।

१० परमाणु आदियाइं अंतिमखंधंति मुत्तिदव्वाइं ।
तं ओहिदंसणं पुणं जं पस्सइ ताइ पच्चक्खं ॥४८५॥

परमाण्वादिकान्यंतिमस्कंधपर्यंतानि मूर्तद्रव्याणि । तदवधिदर्शनं पुनर्यत्पश्यति तानि
प्रत्यक्षं ॥

परमाण्वादियाणि महास्कंधपर्यंतमप्य मूर्तद्रव्यंगळवेनितितुमनावुदोदु दर्शनं मत्ते
१५ प्रत्यक्षमाणि काणुमदवधिदर्शनमेवुदवकुं ।

बहुविहवहुप्पयारा उज्जोवा परिमियम्मि खेत्तम्मि ।

लोगालोगवितिमिरो जो केवलदंसणुज्जोओ ॥४८६॥

बहुविधबहुप्रकारा उद्योताः परिमिते क्षेत्रे । लोकालोकवितिमिरो यः केवलदर्शनोद्योतः ॥

सत्तावभासनं तद्दर्शनं भवति । पश्यति दृश्यते अनेन दर्शनमात्रं वा दर्शनम् ॥४८३॥ अथ चक्षुरचक्षुर्दर्शने
२० लक्षयति—

चक्षुषोः—नयनयोः संबन्धि यत्सामान्यग्रहणं प्रकाशते पश्यति तद्वा दृश्यते जीवेनानेन कृत्वा तद्वा
तद्विषयप्रकाशनमेव तद्वा चक्षुर्दर्शनमिति गणधरदेवादयो भवन्ति । यच्च शेषेन्द्रियप्रकाशः स अचक्षुर्दर्शन-
मिति ॥४८४॥

परमाणोरारभ्य महास्कन्धपर्यन्तं मूर्तद्रव्याणि पुनः यद्दर्शनं प्रत्यक्षं पश्यति तदवधिदर्शनं भवति ॥४८५॥

२५ मात्र दर्शनं है ॥४८३॥

अब चक्षुर्दर्शन और अचक्षुर्दर्शनके लक्षण कहते हैं—

दोनों नेत्र सम्बन्धी सामान्य ग्रहणको जो देखता है अथवा इस जीवके द्वारा देखा
जाता है अथवा सामान्य मात्रका प्रकाशन दर्शन है, यह गणधरदेव आदि कहते हैं । शेष
इन्द्रियोंका जो प्रकाश है, वह अचक्षु दर्शन है ॥४८४॥

३० परमाणुसे लेकर महास्कन्ध पर्यन्त सब मूर्तिक द्रव्योंको जो प्रत्यक्ष देखता है, वह
अवधिदर्शन है ॥४८५॥

बहुविधंगुलु बहुप्रकारंगुलुमप्यबेळगुगलु चंद्रसूर्यरत्नादिप्रकाशंगुलु लोकदोळपरिमितक्षेत्र
दोळेयप्पुवाव बेळगुगळिदं पवणिसल्पडद लोकालोकंगळोळावुदोदु विगततिमिरमप्पुदु केवल-
दर्शनोद्योतमक्कु ।

अनंतरं दर्शनमार्गणयोळु जीवसंख्येयं गाथाद्वयादिदं पेळदपं :—

जोगे चउरक्खाणं पच्चक्खाणं च खीणचरिमाणं ।

चक्खुणमोहिकेवलपरिमाणं ताण जाणं व ॥४८७॥

योगे चतुरक्षाणां पंचाक्षाणां च क्षीणकषायचरमाणां । चक्षुषामवधिकेवलपरिमाणं
तयोर्जानवत् ।

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि क्षीणकषायावसानमाद गुणस्थानवर्तितगुलु शक्तिचक्षु-
र्दृशंगिळं दुं व्यक्तिचक्षुर्दृशंगिळं दुं । चक्षुर्दृशंगिळुसंख्येयोळु । द्विप्रकारमप्परल्लि लब्ध्य- १०
पर्याप्तकचतुरिन्द्रियजीवंगळु संख्येयोळु पंचेन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तजीवंगळु संख्येगे संयोगमागुत्तिरळु
शक्तिगतचक्षुर्दृशंगिळु संख्येयक्कु । पर्याप्तकचतुरिन्द्रियजीवंगळुसंपर्याप्तकपंचेन्द्रियजीवंगळु
संख्येयुमं संयोगमं माडुत्तिरळु व्यक्तिगतचक्षुर्दृशंगिळु संख्येयक्कु । तच्छक्तिव्यक्तिगतचक्षुर्दृशंगिळु
संख्येयंतप्पल्लि त्रैराशिकं माडल्पडुवुददे ते दोडे द्विचतुःपंचेन्द्रियजीवंगळुल्लमीयावलयसंख्यातभक्त-
प्रतरांगुलभाजितजगत्प्रतरमात्रं फलराशियागुत्तिरळु चतुःपंचेन्द्रियद्वयक्केनितु जीवंगळक्कुमेदु १५

बहुविधाः—तीव्रमन्दमध्यमादिभावेन अनेकविधाः बहुप्रकाराश्चोद्योताः चन्द्रसूर्यरत्नादिप्रकाराः लोके-
परिमितक्षेत्रे एव भवन्ति तैः प्रकाशैरनुपमेयः लोकालोकयोर्विगततिमिरो यः स केवलदर्शनोद्योतो भवति ॥४८६॥
अथ दर्शनमार्गणायां जीवसंख्यां गाथाद्वयेनाह—

मिथ्यादृष्ट्यादयः क्षीणकषायान्ताः शक्तिगतचक्षुर्दृशंगिनिः व्यक्तिगतचक्षुर्दृशंगिनिश्च । तत्र लब्ध्यपर्याप्त-
चतुरिन्द्रियपञ्चेन्द्रियाः शक्तिगतचक्षुर्दृशंगिनिः, पर्याप्तकचतुरिन्द्रियपञ्चेन्द्रियाः व्यक्तिगतचक्षुर्दृशंगिनिः । तथा— २०
द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियप्रमाणं सर्वं यद्यावलयसंख्यातभक्तप्रतराङ्गुलभाजितजगत्प्रतरं तदा चतुःपञ्चेन्द्रियप्रमाणं

तीव्र, मन्द, मध्यम आदिके भेदसे अनेक प्रकारके चन्द्र, सूर्य, रत्न आदि सम्बन्धी
उद्योत परिमित क्षेत्रको ही प्रकाशित करनेवाले हैं । उन प्रकाशोंकी उपमा जिसे नहीं दी जा
सकती, ऐसा जो लोक-अलोक दोनोंको प्रकाशित करता है, वह केवल दर्शनरूप उद्योत २५
है ॥४८६॥

अब दर्शन मार्गणामें जीवोंकी संख्या दो गाथाओंसे कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यन्त जीव दो प्रकारके हैं, शक्तिरूप
चक्षुर्दर्शनवाले और व्यक्तिरूप चक्षुर्दर्शनवाले । उनमेंसे लब्ध्यपर्याप्तक चतुरिन्द्रिय और
पंचेन्द्रिय तो शक्तिरूप चक्षुर्दर्शनवाले हैं और पर्याप्तक चतुरिन्द्रिय व्यक्तिरूप चक्षुर्दर्शन वाले ३०
हैं । यदि दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीवोंका प्रमाण आवलीके असंख्या-
तवें भागसे भाजित प्रतरांगुल और उससे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण है, तो चतुरिन्द्रिय

१. भेदेनानेकप्रकारा उद्योताः प्रकाशविशेषा लोके परिमितक्षेत्रे एव प्रकाशते । यो लोकालोकयोः सर्वसामान्याकारे
वितिमिरः क्रमकरणव्यवधानराहित्येन सदावभासमानः स केवलदर्शनाख्य उद्योतो भवति इतोऽग्रेऽप्यमपि
पाठो दृश्यते बभूवस्तके ।

त्रैराशिकं माडि प्र ४। प = इ। २ बंदलब्धदोळु पर्याप्तकरं किंचिदूनं माडिदोडु शक्तिगतचक्षु-

$$\begin{array}{c} ४ \\ २ \\ a \end{array}$$

दृशनिगळ संख्येयक्कु = १२— मिते व्यक्तिगतचक्षुर्दृशनिगळं त्रैराशिकं माळपागळोडु

$$\begin{array}{c} ४। \\ २ \\ a \end{array}$$

विशेषमुंटावुदे दोडे फलराशि त्रसपर्याप्तराशियक्कु प्र = ४ प = इ। २। मो बंद लब्धं व्यक्ति-

$$\begin{array}{c} ४ \\ ५ \end{array}$$

गतचक्षुर्दृशनिगळ संख्येयक्कु = १२ अवधिदर्शनिगळ संख्येयवधिज्ञानिगळ प्रमाणमेनितनिते-

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ ५ \end{array}$$

५ यक्कुं $\frac{प a}{a a}$ केवलदर्शनिगळसंख्ये केवलज्ञानिगळसंख्येयेनितनितेयक्कुं १।

$$\frac{२}{३}$$

कियत् ? इति त्रैराशिके कृते प्र ४। फ = १। इ २ लब्धं पर्याप्तकसंख्यया किंचिदूनं शक्तिगतचक्षुर्दृशनिसंख्या

$$\begin{array}{c} ४ \\ २ \\ a \end{array}$$

भवति = १२ = द्वितीयत्रैराशिके फलराशिः त्रसपर्याप्तराशिः प्र ४। फ = १। इ २ लब्धं व्यक्तिगतचक्षुर्दृशनिसंख्या

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ २ \\ a \end{array} \quad \begin{array}{c} ४ \\ ५ \end{array}$$

भवति = २—अवधिदर्शनराशिरवधिज्ञानराशिवत् $\frac{प a}{a a}$ —१ केवलदर्शनिसंख्या केवलज्ञानिसंख्यावत् १॥४८७॥

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ ५ \end{array} \quad \begin{array}{c} a a \\ ३ \end{array}$$

- पंचेन्द्रियका कितना परिमाण है, ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाण राशि चार, फलराशि त्रसजीवोंका प्रमाण, इच्छाराशि दो। सो इच्छाराशिको फलराशिसे गुणा करके प्रमाणराशिसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उतने चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जीवराशि है। उसमें-से पर्याप्त जीवोंके प्रमाणको घटानेपर जो प्रमाण आवे, उसमें-से कुछ घटानेपर, क्योंकि दोइन्द्रिय आदि क्रमसे घटते हुए शक्तिगत चक्षुर्दर्शनवालोंका प्रमाण जानना। इसी तरह त्रसपर्याप्त जीवोंके प्रमाणको चारसे भाग देकर दोसे गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उसमें-से कुछ कम करनेपर व्यक्तिरूप चक्षुर्दर्शनवालोंका प्रमाण होता है। अवधिदर्शनी जीवोंका प्रमाण अवधिज्ञानियोंके प्रमाणके समान जानना। और केवलदर्शनी जीवोंका प्रमाण केवलज्ञानी जीवोंके परिमाणके समान जानना॥४८७॥

एइंदियपहुडोणं खीणकसायंतणंतरासीणं ।

जोगो अचक्षुदंसणजीवाणं होदि परिमाणं ॥४८८॥

एकेंद्रियप्रभृतीनां क्षीणकषायांताऽनंतरासीनां योगो चक्षुर्दर्शनजीवानां भवति परिमाणं ।

एकेंद्रियप्रभृति क्षीणकषायांताऽनंतानंतजोवंगलयोगं अचक्षुर्दर्शनजीवंगळ प्रमाणमक्कुं ॥१३॥

शक्तिचक्षु	व्यक्तिचक्षु	अचक्षु	अवधिदर्शन	केवलदर्शन
=	२	१	५	७
४ २—	४	०	० ०	३
२ ४	५		०	
०				

इंतु भगवदहंत्परमेश्वरचारुवरणारविदद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरु मंड- ५
लाध्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्तिश्रीमदभयसूरि सिद्धांतचक्रवर्ति
श्रीपादपंकजरजोरजित ललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचित गोम्मटसारकर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपि-
पिकेयोळु जीवकांडविंशतिप्ररूपणंगळोळु चतुर्दशं दर्शनमार्गणाधिकारं निगदितमायु ।

एकेन्द्रियप्रभृतिक्षीणकषायान्तानन्तानन्तजीवानां योगः अचक्षुर्दर्शनजीवप्रमाणं भवति १३-॥४८८॥

एकेन्द्रियसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यन्त अनन्त जीवोंका जो योग है, उतना १०
अचक्षुदर्शनी जीवोंका प्रमाण है ॥४८८॥

इस प्रकार सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य नेमिचन्द्र रचित गोम्मटसार अपर नाम

पंचसंग्रहकी केशववर्णी रचित कर्णाटक वृत्ति अनुसारिणी हिन्दी टीकामें

जीवकाण्डके अन्तर्गत दर्शन मार्गणा प्ररूपणा नामक चौदहवाँ

अधिकार समाप्त हुआ ॥१४॥

लेश्या-मार्गणा ॥१५॥

दर्शनमार्गणानंतरं लेश्यामार्गणेयं पेठलुपक्रमसि निरक्षितपूर्वकं लेश्येसे लक्षणं पेठदप—

लिपइ अप्पीकीरई एदीए नियअप्पुण्णपुण्णं च ।

जीवोत्ति होदि लेस्सा लेस्सागुणजाणयक्खादा ॥४८९॥

- १ लिपत्यात्मीकरोत्येतया निजाऽपुण्यं पुण्यं च जीव इति भवति लेश्या लेश्यागुणजायका-
ख्याता ।

- द्रव्यलेश्येयं दुं भावलेश्येयं दुं लेश्ये द्विप्रकारमप्युदलित । भावलेश्यापेक्षेयिदं लिपत्यात्मीकरोति
निजापुण्यं पुण्यं च जीव एतयेति लेश्या । लेश्यागुणजायकाऽऽख्याता भवति । जीवं निजपापमुमं
पुण्यमुमं लिपति तन्नं पोरेगुं आत्मीकरोति तन्नवागि माळपनिदरिदमेदितु लेश्या लेश्ये दुं लेश्या-
१० गुणमनरिव श्रुतज्ञानिगळप्य गणधरदेवादिगळिदं पेठलपट्टदक्कुं । अनया कम्मंभिरात्मानं लिपतीति
लेश्या । कषायोदयानुरंजिता योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या । कषायाणामुदयेनानुरंजिता कमप्यतिशयान्तरमु-
पनीता भवतीत्यर्थः । ई यत्थमने विजदमागि माडिदपरु ।

यः सद्धर्मसुधावर्षे भव्यसस्यानि प्रीणयन् ।

नीतवान् स्वेष्टसिद्धिं तं धर्मनाथघनं भजे ॥१५॥

- १९ अथ लेश्यामार्गणां वक्तुमना निरुक्तिपूर्वकं लेश्यालक्षणमाह—

लेश्या द्रव्यभावभेदाद् द्वेधा । तत्र भावलेश्यां लक्षयितुं इदं सूत्रम् । लिम्पति—आत्मीकरोति निजमपुण्यं
पुण्यं च जीव एतयेति लेश्या लेश्यागुणजायकैर्गणधरदेवादिभिराख्याता । अनया कर्मभिरात्मानं लिम्पतीति
लेश्या । कषायोदयानुरंजिता योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या कषायाणामुदयेन अनुरंजिता कमप्यतिशयान्तरमुपनीता
योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या ॥४८९॥ अमुमेवार्थं स्पष्टयति—

- २० लेश्या मार्गणाको कहनेकी भावनासे निरुक्तिपूर्वक लेश्याका लक्षण कहते हैं—

- लेश्या द्रव्य और भावके भेदसे दो प्रकारकी है । उनमें-से भावलेश्याका लक्षण कहनेके
लिए यह सूत्र है । ‘लिम्पति’ अर्थात् इसके द्वारा जीव अपने पुण्य-पापको अपनाता है, लेश्या-
का यह लक्षण लेश्याके गुणोंके ज्ञाता गणधर देव आदिने कहा है । जिसके द्वारा जीव
आत्माको कर्मोंसे लिप्त करती है, वह लेश्या है । कषायके उदयसे अनुरंजित मन वचन
२५ कायकी प्रवृत्ति लेश्या है । अथवा कषायोंके उदयसे अनुरंजित अर्थात् किसी भी अतिशया-
न्तरको प्राप्त योग-प्रवृत्ति लेश्या है ॥४८९॥

इसीको स्पष्ट करते हैं—

जोगपउत्ती लेस्सा कसायउदयाणुरंजिया होइ ।

तत्तो दोण्णं कज्जं बंधचउक्कं समुद्धिदं ॥४९०॥

योगप्रवृत्तिलेश्या कषायोदयानुरंजिता भवति । ततो द्वयोः कार्यं बंधचतुष्कं समुद्धिदं ॥

कायवाङ्मनःप्रवृत्तियं लेश्ये ये बुद्धुं कषायोदयानुरंजितमक्कुं । ततः अदु कारणदत्तणिदं
द्वयोः कार्यं योगकषायंगळ कार्यमप्य बंधचतुष्कं प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशरूपबंधचतुष्टयं लेश्येय ५
कार्यमक्कुमेदु समुद्धिदं परमागमदोळपेळत्पट्टु । योगदिदं प्रकृतिप्रदेशबंधमक्कुं । कषायदिदं
स्थित्यनुभागबंधमक्कुमपुदरिदं कषायोदयानुरंजितयोगप्रवृत्तिये लेश्येयपुदरिदमा लेश्येयिदं
चतुर्विधबंधं युक्तियुक्तमेयक्कुमेदु तात्पर्यं ।

लेश्यामारगणधिकारनिर्देशं माडिदं गाथाद्वयदिदं :—

णिद्वेसवण्णपरिणामसंक्रमो कम्मलखणगदी य ।

१०

सामी साहणसंखा खेत्तं फासं तदो कालो ॥४९१॥

अंतरभावप्पवहू अहियारा सोलसा हवंतित्ति ।

लेस्साण साहणदुं जहाकमं तेहि वोच्छामि ॥४९२॥

निर्देशवर्णपरिणामसंक्रमकर्मलक्षणगतयदच । स्वामी साधनसंख्याक्षेत्रं स्पर्शं ततः कालः ॥

अंतरभावाल्लबहवोऽधिकाराः षोडश भवन्तीति । लेश्यानां साधनात्थं यथाक्रमं तैर्वक्ष्यामि ॥ १५

निर्देशं वर्णं परिणामं संक्रमं कर्मं लक्षणं गतियुं स्वामियुं साधनमुं
संख्येयुं क्षेत्रं स्पर्शं बलिक्कं कालं अंतरं भावं अल्पबहुत्वमुमेदितु अधिकारंगळपदि-

कायवाङ्मनःप्रवृत्तिः लेश्या, सा च कषायोदयानुरंजितास्ति ततः कारणात् द्वयोः—योगकषाययोः कार्यं
बन्धचतुष्कं प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशरूपं तद् लेश्याया एव स्यादिति परमागमे समुद्धिष्टम् । योगात् प्रकृतिप्रदेश-
बन्धो कषायस्योदयाच्च स्थित्यनुभागबन्धो स्याताम् । तेन कषायोदयानुरंजितयोगप्रवृत्तिलक्षणया लेश्यया २०
चतुर्विधबन्धो युक्तियुक्त एवेत्यर्थः ॥४९०॥ अथ गाथाद्वयेन अधिकाराभिदिशति—

निर्देशः वर्णः परिणामः संक्रमः कर्मलक्षणं गतिः स्वामी साधनं संख्या क्षेत्रं स्पर्शः ततः कालः

काय, वचन और मनकी प्रवृत्ति लेश्या है । वह मन, वचन, कायकी प्रवृत्ति कषायके
उदयसे अनुरंजित है । इस कारणसे दोनों योग और कषायोंका कार्य प्रकृति, स्थिति, अनु-
भाग और प्रदेशरूप चार बन्ध लेश्याके ही कार्य परमागममें कहे हैं । योगसे प्रकृतिबन्ध, २५
प्रदेशबन्ध और कषायके उदयसे स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध होते हैं । इसलिए कषायके उदयसे
अनुरंजित योगप्रवृत्ति जिसका लक्षण है, उस लेश्यासे चार प्रकारका बन्ध कहना युक्तियुक्त
ही है ॥४९०॥

दो गाथाओं से अधिकारोंको कहते हैं—

निर्देश, वर्ण, परिणाम, संक्रम, कर्म, लक्षण, गति, स्वामी, साधन, संख्या, क्षेत्र, स्पर्श, ३०

१. म ततः आलेश्येयिदं । २. म चतुष्टयमक्कुमेदु ।

नारप्पुवेके दोडे लेश्यानां साधनात्थं लेश्येगळ भेदप्रभेदंगळं साधिससत्वेडि अदुकारणमागि तैरधि-
कारैः आपदिनासमधिकारंगळिदं यथाक्रमं क्रममनतिक्रमिसवे लेश्येयं वक्ष्यामि पेळ्वें ॥

किण्हा णीला काऊ तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य ।

लेस्साणं णिद्देसा छच्चेव हवंति णियमेण ॥४९३॥

- १ कृष्णा नीला कापोती तेजः पद्मा च शुक्ललेश्या च । लेश्यानां निर्देशाः षट् चैव भवन्ति
नियमेन ॥

कृष्णलेश्येयं दुं नीललेश्येयं दुं कपोतलेश्येयं दुं तेजोलेश्येयं दुं पद्मलेश्येयं दुं शुक्ललेश्ये-
यं दुमित्तु लेश्येगळ निर्देशंगळारेयप्पुवु । नियमदिदं । इत्थि षट्चैव एदित्तु नैगमनयाभिप्रायदिदं
पेळल्पट्टुदु । पर्यायवृत्तिदिदं मत्तमसंख्येलोकमात्रंगळु लेश्येगळप्पुवेदित्तु नियमशब्ददिदं सूचि-

- १० सत्पट्टुदु । निर्देशं निगदित्तमाय्तु ॥

वर्णोदयेण जणिदो शरीरवर्णो दु दव्वदो लेस्सा ।

सा सोढा किण्हादी अणेयमेया सभेयेण ॥४९४॥

वर्णोदयेन जनितः शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या । सा षोढा कृष्णादयोऽनेकभेदाः स्वभेदेन ॥

- ११ वर्णनामकर्म्मोदयदिदं जनितः पुट्टल्पट्टु शरीरवर्णस्तु शरीरवर्णं द्रव्यतो लेश्या द्रव्यदिदं
लेश्येयक्कुमा द्रव्यलेश्येयं षोढा षट्प्रकारमक्कुमा षट्प्रकारंगळं कृष्णादयः कृष्णादिगळक्कुं ।
अनेकभेदाः स्वभेदेन स्वस्वभेदाः स्वभेदाः तैः स्वभेदैरनेकभेदाः स्युः तंतम्म भेददिदमनेकभेदंगळप्पु-
वदेते दोडे ॥

अन्तरं भावः अल्पबहुत्वं चेति षोडशाधिकाराः लेश्याभेदप्रभेदसाधनार्थं भवन्तीति तैर्यथाक्रमं लेश्यां
वक्ष्यामि ॥४९१-४९२॥

- २० कृष्णलेश्या नीललेश्या कपोतलेश्या तेजोलेश्या पद्मलेश्या शुक्ललेश्या चेति लेश्यानिर्देशाः—लेश्यानामानि
षडैव भवन्ति नियमेन । अत्र एवकारेणैव नियमस्य अवगमान् पुनरन्तर्यकं नियमशब्दोपादानं नैगमनयेन लेश्या
षोढा पर्यायार्थिकनयेन असंख्यातलोकधेत्याचार्यस्य अभिप्रायं ज्ञापयति ॥४९३॥ इति निर्देशाधिकारः ।

वर्णनामकर्म्मोदयजनितशरीरवर्णस्तु द्रव्यलेश्या भवति । सा च षोढा—षट्प्रकाराः । ते च प्रकाराः
कृष्णादयः स्वस्वभेदैरनेकभेदाः स्युः ॥४९४॥ तथाहि—

- २५ काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व ये सोलह अधिकार लेश्याके भेद-प्रभेदोंके साधनके लिए
हैं । उनके द्वारा क्रमानुसार लेश्याको कहूंगा ॥४९१-९२॥

कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या ये छह ही
लेश्याओंके नाम नियमित हैं । यहाँ एवकार (ही) से ही नियमका ज्ञान हो जानेसे पुनः
नियम शब्दका ग्रहण निरर्थक ही है । अतः वह नैगम नयसे लेश्या छह हैं और पर्यायार्थिक-
नयसे असंख्यातलोक हैं, इस आचार्यके अभिप्रायको सूचित करता है ॥४९३॥ निर्देशाधिकार

- ३० समाप्त हुआ ।

वर्णनाम कर्मके उदयसे उत्पन्न शरीरका वर्ण तो द्रव्य लेश्या है । उसके भी छह भेद
हैं । वे कृष्ण आदि भेद अपने-अपने अवान्तर भेदोंसे अनेक भेद वाले हैं ॥४९४॥

छप्पयणीलकपोतसुहेमंबुजसंखसंणिहा वण्णे ।

संखेज्जासंखेज्जा। अणंतवियप्पा य पत्तेयं ॥४९५॥

षट्पदनीलकपोतसुहेमंबुजशंखसंनिभा वर्णे । संखेयासंखेया अनंतविकल्पाश्च प्रत्येकं ॥

तुंबिय, नीलरत्नद, कपोतपक्षिय, सुहेमद, अंबुजद, शंखद सन्निभंगळु यथाक्रमदिदमप्पुवु ।
कृष्णलेइयादिगळु वर्णदोळु यिद्रियव्यक्तिगळिदं प्रत्येकं संख्यातंगळप्पुवु । कृ १ नी १ क १ ते १
प १ शु १ ॥ स्कंधभेदिदं प्रत्येकमसंख्यातंगळप्पुवु । कृ २ नील २ क २ ते २ प २ शु २ ॥ परमाणु-
भेदिदं प्रत्येकमनंतानंतगळप्पुवु । कृ ख नी ख क ख ते ख प ख शु ख ॥

णिरया किण्हा कप्पा भावाणुगया हु तिसुरणरतिरिये ।

उत्तरदेहे छक्कं भोगे रविचंद्रहरिदंगा ॥४९६॥

नारकाः कृष्णाः कल्पजा भावानुगता खळु त्रिसुरनरतिर्यक्षु । उत्तरदेहे षट्कं भोगे
रविचंद्रहरितांगाः ॥

नारकरेल्लरं कृष्णरुगळेयप्पर कल्पजरेल्लरं भावलेइयानुगतरप्पर । भवनत्रयदेवकर्कळं
मनुष्यरं तिर्य्यचरुगळं उत्तरदेहंगळु देवकर्कळं वैकुण्ठं शरीरंगळु अंबु षड्वर्णंगळप्पुवु यथाक्रम-
मुत्तममध्यमजघन्यभोगभूमिजरप्प नरतिर्य्यचरुगळ शरीरंगळु रविचंद्रहरिद्वर्णंगळप्पुवु ॥

कृष्णादिलेइयाः वर्णे षट्पद-नीलरत्न-कपोत-सुहेम-अम्बुज-शङ्खसंनिभा भवन्ति । पुनस्ता इन्द्रिय-
व्यक्तिभिः प्रत्येकं संख्याताः कृ १ । नी १ । क १ । ते १ । प १ । शु १ । स्कन्धभेदेनासंख्याताः कृ २ । नी २
क २ । ते २ । प २ । शु २ । परमाणुभेदेन अनन्तानन्ताश्च भवन्ति । कृ ख । नी ख । क ख । ते ख । प ख ।
शु ख ॥४९५॥

नारकाः सर्वे कृष्णा एव, कल्पजाः सर्वे स्वस्वभावलेइयानुगा एव । भवनत्रयदेवाः मनुष्यास्तिर्य्यञ्चो
देवविकुर्वणदेहाश्च सर्वे षड्वर्णाः । उत्तममध्यमजघन्यभोगभूमिजनरतिर्य्यञ्चः क्रमशः रविचन्द्रहरिद्वर्णा
एव ॥४९६॥

वर्णके रूपमें कृष्ण आदि लेइया भौरे, नीलम, कबूतर, स्वर्ण, कमल और शंखके
समान होती हैं । अर्थात् भौरेके समान जिनके शरीरका रंग काला है, उनके द्रव्यलेइया कृष्ण
है । नीलमके समान नील रंग वालोंकी द्रव्यलेइया नील होती है । कबूतरके समान शरीरके
वर्णवालोंकी द्रव्यलेइया कापोत होती है । स्वर्णके समान पीत वर्ण वालोंकी द्रव्यलेइया पीत
होती है । कमलके समान शरीरके वर्णवालोंकी द्रव्यलेइया पद्म होती है । और जिनका शरीर-
का रंग शंखके समान सफेद होता है, उनकी द्रव्यलेइया शुक्ल होती है । इन्द्रियोंके द्वारा प्रतीत
होनेकी अपेक्षा प्रत्येक लेइयाके संख्यात भेद होते हैं । स्कन्धोंके भेदसे असंख्यात भेद हैं और
परमाणुओंके भेदसे अनन्त भेद हैं ॥४९५॥

सब नारकी कृष्णवर्ण ही होते हैं । सब कल्पवासी देव अपनी-अपनी भावलेइयाके
अनुसार ही द्रव्यलेइयावाले होते हैं । अर्थात् जैसी उनकी भावलेइया होती है, उसीके
अनुसार उनके शरीरका वर्ण होता है । भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषीदेव, मनुष्य, तिर्य्यच
और देवोंकीविक्रियासे बना शरीर ये सब लहो वर्णवाले होते हैं । उत्तम, मध्यम और जघन्य

बादरआऊतेऊ सुक्कातेऊ य वातकायाणं ।

गोमूत्रमुद्गवर्णा कमसो अन्वत्तवर्णा य ॥४९७॥

बादराष्कायिकतेजस्कायिकाः शुक्लास्तेजसश्च वातकायानां । गोमूत्रमुद्गवर्णो क्रमशोऽव्य-
क्तवर्णाश्च ॥

- ५ बादराष्कायिकतेजस्कायिकंगळुं यथाक्रमं दिवं शुक्लाः शुक्लवर्णंगळु तेजसश्च पीतवर्णंगळु-
मप्पुवु । वातकायंगळु शरीरवर्णंगळु घनोदधिघनानिलंगळु गोमूत्रमुद्गवर्णंगळु यथाक्रमं दिवं-
मप्पुवु । तनुवातकायिकंगळु शरीरवर्णमव्यक्तवर्णमवकुं ॥

सर्व्वेसिं सुहुमाणं कावोदा सर्व्वविग्रहे सुक्का ।

सर्व्वो मिस्सो देहो कवोदवर्णो हवे णियमा ॥४९८॥

- १० सर्व्वेषां सूक्ष्माणं कापोताः सर्व्वविग्रहे शुक्लाः । सर्व्वो मिश्रो देहः कपोतवर्णो भवे-
न्नियमात् ॥

सर्व्वसूक्ष्मजीवंगळु देहंगळु कपोतवर्णदेहंगळेयप्पुवु सर्व्वजीवंगळु विग्रहगतियोळु शुक्ल-
वर्णंगळेयप्पुवु । सर्व्वजीवंगळु शरीरपर्याप्तित्तिरेवन्नैव कपोतवर्णरेयप्परु नियमं दिवं ॥ वर्णाधिकारं
द्वितीयं ॥ अनंतरं लक्ष्यापरिणामाधिकारं गाथापञ्चकं दिवं पेळ्वपं—

- १५ लोमाणमसंखेज्जा उदयद्वाणा कसायगा होति ।

तत्थ किलिट्ठा असुहा सुहा विसुद्धा तदालावा ॥४९९॥

लोकानामसंख्येयान्युदयस्थानानि कषायगाणि भवन्ति । तत्र किलिष्टान्यशुभानि शुभानि
विशुद्धानि तदालापानि ।

- बादरास्तेजस्कायिको क्रमेण शुक्लपीतवर्णविव, वातकायिकेषु घनोदधिवातघनवातशरीराणि क्रमेण
२० गोमूत्रमुद्गवर्णानि तनुवातशरीराणि अव्यक्तवर्णानि ॥४९७॥

सर्व्वसूक्ष्मजीवदेहाः कपोतवर्णा एव । सर्व्वे जीवा विग्रहगता शुक्लवर्णा एव । सर्व्वे जीवाः स्वस्वपर्याप्ति-
प्रारम्भप्रथमसमयाच्छरीरपर्याप्तिनिष्पत्तिपर्यन्तं कपोतवर्णा एव नियमेन ॥४९८॥ इति वर्णाधिकारः ।
अथ परिणामाधिकारं गाथापञ्चकेनाह—

- भोगभूमिके मनुष्य और तिर्यच क्रमसे सूर्यके समान, चन्द्रमाके समान तथा हरित वर्णवाले
२५ होते हैं ॥४९६॥

बादर तैजस्कायिक और बादर जलकायिक क्रमसे पीतवर्ण और शुक्लवर्ण ही होते हैं ।
बादरवायुकायिकोंमें घनोदधि वातका शरीर गोमूत्रके समान वर्णवाला है । घनवातका शरीर
मूँग के समान वर्णवाला है और तनुवातके शरीरका वर्ण अव्यक्त है ॥४९७॥

- सब सूक्ष्मजीवोंका शरीर कपोतके समान वर्णवाला ही होता है । सब जीवोंका
३० विग्रहगतिमें शुक्लवर्ण ही होता है । सब जीव अपनी-अपनी पर्याप्तिके प्रारम्भ होनेके प्रथम
समयसे लेकर शरीरपर्याप्तिकी पूर्णता पर्यन्त कपोतवर्ण ही नियमसे होते हैं ॥४९८॥

वर्णाधिकार समाप्त हुआ । आगे पाँच गाथाओंसे परिणामाधिकार कहते हैं—

कषायगतोदयस्थानंगळु असंख्यातलोकमात्रंगळुपुववरोळु संक्लेशस्थानंगळुपु अशुभलेश्या-
स्थानंगळु तद्योग्यासंख्यातलोकभक्तबहुभागंगळुगुत्तलुमसंख्यातलोकमात्रंगळुपुवु । तदेकभागमात्रं
गळुमवुंड शुभलेश्याविशुद्धिस्थानंगळुमसंख्यातलोकमात्रंगळुपुवु । संक्ले । $\equiv a \mid \angle$ विशु $\equiv a \mid 1$
९ ९

तिव्वतमा तिव्वतरा तिव्वा असुहा सुहा तहा मंदा ।

मंदतरा मंदतमा छट्टाणगया हु पत्तेयं ॥५००॥

तीव्रतमानि तीव्रतराणि तीव्राण्यशुभानि शुभानि तथा मंदानि । मंदतराणि मंदतमानि
षट्स्थानगतानि खलु प्रत्येकं ।

मुन्नं पेळद असंख्यातलोकबहुभागमात्रंगळुपु अशुभलेश्या संक्लेशस्थानंगळु कृष्णनील-
कपोतभेदादिदं त्रिप्रकारं गळुपुवल्लि कृष्णलेश्यातीव्रतमसंक्लेशस्थानंगळु सामान्याशुभसंक्लेश
स्थानंगळु $\equiv a \mid \angle$ निव्वं मत्तं तद्योग्यासंख्यातलोकदिदं खंडिसिदल्लि बहुभागमात्रस्थानं- १०
९

गळुपुवु $\equiv a \mid \angle \mid \angle$ नीललेश्यातीव्रतरसंक्लेशस्थानंगळु तदेकभागबहुभागमात्रंगळु-
९ १९

पुवु $\equiv a \mid \angle \angle$ कपोतलेश्यातीव्रसंक्लेशस्थानंगळु तदेकभागमात्रंगळुपुवु $\equiv a \mid \angle \mid 1$
९ ९ ९ ९ ९ १

मत्तं शुभलेश्याविशुद्धिस्थानंगळु मुपेळद असंख्यातलोकभक्तैकभागमात्रंगळु $\equiv a \mid 1$ तेजोलेश्या-
९

कषायगतोदयस्थानानि असंख्यातलोकमात्राणि भवन्ति । तेषु संक्लेशस्थानानि अशुभलेश्यास्थानानि
तद्योग्यासंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्राण्यपि असंख्यातलोकमात्राण्येव । तदेकभागमात्राणि शुभलेश्याविशुद्धिस्था- १५
नान्यसंख्यातलोकमात्राण्येव । संक्ले $\equiv a \mid \angle$ विशु ७ $\equiv a \mid 1$ ॥४९९॥
९ ९

प्रागुक्तासंख्यातलोकबहुभागमात्राणि अशुभलेश्यासंक्लेशस्थानानि कृष्णनीलकपोतभेदास्त्रिविधानि । तत्र
कृष्णलेश्यातीव्रतमसंक्लेशस्थानानि सामान्याशुभसंक्लेशस्थानेषु $\equiv a \mid \angle$ तद्योग्यासंख्यातलोकभक्तेषु बहुभाग-
९

मात्राणि $\equiv a \mid \angle \mid \angle$ नीललेश्यातीव्रतरसंक्लेशस्थानानि तदेकभागबहुभागमात्राणि $\equiv a \mid \angle \mid \angle$ कपोत-
९ ९ ९ १ १ १ ९

लेश्यातीव्रसंक्लेशस्थानानि तदेकभागमात्राणि $\equiv a \mid \angle \mid 1$ पुनः शुभलेश्याविशुद्धिस्थानेषु पूर्वोक्तासंख्यात- २०
९ १ १ ९

कषायोंके अनुभागरूप उदय स्थान असंख्यात लोक मात्र होते हैं । उनमें यथायोग्य
असंख्यात लोकसे भाग देनेपर बहुभाग प्रमाण संक्लेश स्थान हैं, वे भी असंख्यात लोक
प्रमाण ही हैं । और शेष एक भाग प्रमाण विशुद्धिस्थान हैं, वे भी असंख्यात लोक मात्र हैं ।
संक्लेशस्थान तो अशुभ लेश्याओंके स्थान हैं और विशुद्धि स्थान शुभ लेश्याओंके स्थान
हैं ॥४९९॥

पहले कहे असंख्यात लोकके बहुभाग मात्र अशुभ लेश्या सम्बन्धी स्थान कृष्ण, नील,
कापोतके भेदसे तीन प्रकारके हैं । उन सामान्य अशुभ लेश्या सम्बन्धी स्थानोंमें यथायोग्य
असंख्यातलोकसे भाग देनेपर बहुभाग प्रमाण कृष्णलेश्या सम्बन्धी तीव्रतम कषायरूप
संक्लेश स्थान हैं । शेष रहे एक भागमें पुनः असंख्यात लोकसे भाग देनेपर बहुभाग मात्र

- मंदसंक्लेशस्थानंगळु तदसंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्रंगळुपुवु $\equiv a \text{ } ८$ पद्मलेश्याविशुद्धिस्थानंगळु
९९
मन्दतरसंक्लेशस्थानंगळु तदेकभागबहुभागमात्रंगळुपुवु $\equiv a \text{ } ८$ शुक्ललेश्याविशुद्धिस्थानंगळु
९९९
मन्दतमसंक्लेशस्थानंगळु शेषैकभागमात्रंगळुपुवु $\equiv a \text{ } १$ ई कृष्णलेश्यादिषट्स्थानंगळु
९९९
प्रत्येकमशुभंगळुत्कृष्टदिदं जघन्यपर्यन्तं शुभंगळुत्कृष्टदिदमुत्कृष्टपर्यन्तमसंख्यातलोकमात्र-
५ षट्स्थानपतितहानिवृद्धिपुक्तस्थानंगळुपुवु खलु नियमदिदं ।

असुहाणं वरमज्झिमअवरंसे किण्हणोलकाउतिए ।

परिणमदि क्रमेणप्पा परिहाणीदो किलेसस्स ॥५०१॥

अशुभानां वरमध्यमावरांशे कृष्णनीलकपोतत्रये परिणमति क्रमेणात्मा परिहानितः संक्लेशस्य ।

- १० कृष्णनीलकपोतत्रिस्थानंगळु अशुभंगळुपुत्कृष्टमध्यमजघन्यांशंगळु जीवं संक्लेशहानि-
यिदं क्रमदिदं परिणमिसुभुं ।

लोकभर्त्तकभागमात्रेषु $\equiv a \text{ } १$ तेजोलेश्यामन्दसंक्लेशस्थानानि तदसंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्राणि $\equiv a \text{ } ८$
९ ९१९

पद्मलेश्याविशुद्धिस्थानानि मन्दतरसंक्लेशस्थानानि तदेकभागबहुभागमात्राणि $\equiv a \text{ } ८$ शुक्ललेश्याविशुद्धि-
९१९१९

स्थानानि मन्दतमसंक्लेशस्थानानि शेषैकभागमात्राणि $\equiv a \text{ } १$ । एतेषु कृष्णलेश्यादिषट्स्थानेषु प्रत्येकमशुभेषु
९१९१९

- १५ उत्कृष्टाज्जघन्यपर्यन्तं शुभेषु च जघन्यादुत्कृष्टपर्यन्तं असंख्यातलोकमात्रषट्स्थानपतितहानिवृद्धिस्थानानि भवन्ति
खलु-नियमेन ॥५००॥

कृष्णनीलकपोतत्रिस्थानेषु अशुभरूपोत्कृष्टमध्यमजघन्यांशेषु जीवः संक्लेशहानितः क्रमेण परिण-
मति ॥५०१॥

- २० नीललेश्या सम्बन्धी तीव्रतर संक्लेश स्थान हैं । शेष रहे एक भाग प्रमाण कापोतलेश्या सम्बन्धी तीव्र संक्लेश स्थान हैं । पहले कषायोंके उदय स्थानोंमें असंख्यात लोकसे भाग देकर जो एक भाग प्रमाण शुभ लेश्या सम्बन्धी स्थान कहे थे, वे तेज, पद्म और शुक्लके भेदसे तीन प्रकारके हैं । उनमें असंख्यात लोकसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण तेजोलेश्या सम्बन्धी मन्द संक्लेश स्थान हैं । शेष बचे एक भागमें पुनः असंख्यात लोकसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण पद्मलेश्या सम्बन्धी मन्दतर संक्लेशस्थान हैं । शेष रहे एक भाग प्रमाण शुक्ल लेश्या सम्बन्धी मन्दतम संक्लेश स्थान हैं । इन कृष्णलेश्या आदि सम्बन्धी छह स्थानोंमें-से २५ प्रत्येकमें अशुभमें वो उत्कृष्टसे जघन्य पर्यन्त और शुभ लेश्याओंमें जघन्यसे उत्कृष्ट पर्यन्त असंख्यात लोकमात्र षट्स्थान पतित हानि-वृद्धि स्थान नियमसे होते हैं ॥५००॥

- यदि जीवके संक्लेश परिणामोंमें हानि होती है, तो वह अशुभ कृष्ण नील और कापोत लेश्याओंके उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य अंशोंमें क्रमसे परिणमन करता है अर्थात् उस लेश्याके ३० उत्कृष्ट अंशसे मध्यममें और मध्यमसे जघन्यरूप परिणमन करता है ॥५०१॥

काऊ णीलं किण्हं परिणमदि किलेसवड्ढीदो अप्पा ।

एवं किलेसहाणीवड्ढीदो होदि असुहतियं ॥५०२॥

कपोतं नीलं कृष्णं परिणमति क्लेशवृद्धित आत्मा । एवं क्लेशहानिवृद्धितोऽशुभत्रयं भवति ।

संकलेशवृद्धियिदमात्मं कपोतनीलकृष्णलेश्यारूपमेतत्पुनरुदन्ते परिणमदि परिणमिसुगुमितु संक्लेशहानिवृद्धिर्गात्रिदमशुभत्रयरूपनवकुं । ५

तेऊ पम्मे सुक्के सुहाणमवरादि असंगे अप्पा ।

सुद्धिस्स य वड्ढीदो हाणीदो अण्णहा होदि ॥५०३॥

तेजसि पद्ये शुक्ले शुभानामवराद्यंशके आत्मा विशुद्धेश्च वृद्धितो हानितोज्यथा भवति ।

शुभंगलप तेजःपद्यशुक्ललेश्येयल जघन्याद्यंशंगळोळात्मं विशुद्धिवृद्धियं भवति परिणमि- १०
सुगुं । हानितोज्यथा भवति विशुद्धिय हानियंदि शुक्ललेश्योत्कृष्टं मोदल्लोडु तेजोलेस्याजघन्यांश-
पर्यन्तं भवति परिणमिसुगुं । संदृष्टिः—

अशुभलेश्या	स्थानानि ९०८	सम्बन्धनं ३०	शुभलेश्या	स्थानानि	९०८१
तीव्रतमकृष्ण	तिव्वतरणीळ	तिव्वकओत	मंदतेज	मंदतरपद्य	मंदतमशुक्ल
उ ००००००ज	उ ००००००ज	उ ००००००ज	ज०००००० उ	ज०००००० उ	ज०००००० उ
३०८८	३०८८८	३०८८१	३०८८	३०८८	३०८८
९९	९९९	९९९	९९	९९९	९९९

१५

परिणामाधिकारं तृतीयं समाप्तमायतु ।

अनंतरं संक्रमणाधिकारं गाथात्रयदिदं स्वस्थानपरस्थानसंक्रमणमनि परिणामपरावृत्ति-
रचनेयं कटाक्षिसिकोडु पेळदपं ।

संकलेशवृद्ध्यात्मा कपोतनीलकृष्णलेश्यारूपेण परिणमति इति संक्लेशहानिवृद्धिम्यामशुभत्रयरूपो २०
भवति ॥५०२॥

शुभानां तेजःपद्यशुक्ललेश्यानां जघन्याद्यंशेषु आत्मा विशुद्धिवृद्धितो भवति परिणमति, हानितोज्यथा
शुक्लोत्कृष्टात्तेजो जघन्यांशपर्यन्तं परिणमति ॥५०३॥ इति परिणामाधिकारः । उक्तपरिणामपरावृत्तिरचनां
मनसिकृत्य संक्रमणाधिकारं गाथात्रयेणाह—

तथा संक्लेश परिणामोमें वृद्धि होनेसे कापोत, नील और कृष्ण लेश्यारूपसे परिणमन
करता है । इस प्रकार संक्लेश परिणामोमें हानि, वृद्धि होनेसे तीन अशुभ लेश्या रूपसे २५
परिणमन करता है ॥५०२॥

शुभ तेज, पद्य और शुक्ल लेश्याओंके जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अंशोंमें आत्मा विशुद्धि-
की वृद्धिसे परिणमन करता है । और विशुद्धिकी हानिसे अन्यथा अर्थात् शुक्ल लेश्याके
उत्कृष्ट अंशसे तेजोलेस्याके जघन्य अंश तक परिणमन करता है ॥५०३॥

इस प्रकार परिणामाधिकार समाप्त हुआ । ३०

उक्त परिणामोंके परिवर्तनकी रचनाको मनमें रखकर तीन गूथाओंसे संक्रमण
अधिकारको कहते हैं—

संक्रमणं सट्ठाणपरट्ठाणं होदित्ति किण्हसुक्काणं ।
वड्ढीसु हि सट्ठाणं उभयं हाणिम्मि सेसउभयेवि ॥५०४॥

संक्रमणं स्वस्थानं परस्थानं भवति । कृष्णशुक्लयोः । वृद्धयोः खलु स्वस्थानमुभयं हानौ शेषोभयेपि ॥

५ संक्रमणं स्वस्थानसंक्रमणमेतदुं परस्थानसंक्रमणमेतदुं द्विप्रकारमवकुमल्लि कृष्णशुक्लयोः कृष्णशुक्ललेश्याद्वयं वृद्धयोः वृद्धिगळोळु स्वस्थानसंक्रमणमेयवकुं खलु नियमदिदं । आकृष्णशुक्ल-
लेश्येगळु हानौ हानियोळु उभयं स्वस्थानसंक्रमणमुं परस्थानसंक्रमणमुमे'बेरडुमवकुं । शेषोभयेपि
शेषनीलपद्मकपोततेजोलेश्याचतुष्टयंगळु हानियोळं वृद्धियोळं अपि अपिशब्ददिदं स्वस्थानसंक्रमणमुं
परस्थानसंक्रमणमुमे'बेरडुमवकुं ॥

१० लेस्सानुक्कस्सादो वरहाणी अवरगादवरवड्ढी ।
सट्ठाणे अवरादो हाणी णियमा परट्ठाणे ॥५०५॥

लेश्यानामुत्कृष्टादवरहानिरवरस्मादवरवृद्धिः, स्वस्थाने अवरस्माद्वानिघ्नियमात्परस्थाने ॥

संक्रमणं—स्वस्थानसंक्रमणं परस्थानसंक्रमणं चेति द्विविधम् । तत्र कृष्णशुक्ललेश्याद्वयस्य वृद्धौ स्वस्थान-
संक्रमणमेव खलु—नियमेन, हानौ पुनः स्वस्थानसंक्रमणं परस्थानसंक्रमणं 'चेत्युभयं भवति । शेषनीलपद्मकपोत-
१५ तेजोलेश्याचतुष्टयस्य हानौ वृद्धौ च अपिशब्दादुभयसंक्रमणं भवति ॥५०४॥

संक्रमणके दो प्रकार हैं—स्वस्थान संक्रमण और परस्थान संक्रमण । उनमें-से कृष्ण-
लेश्या और शुक्ल लेश्याका वृद्धिमें नियमसे स्वस्थान संक्रमण ही होता है । हानिमें स्वस्थान
और परस्थान दोनों होते हैं । शेष नील, कापोत, तेज, पद्म लेश्याओंमें हानि और वृद्धिमें
दोनों संक्रमण होते हैं ॥५०४॥

२० विशेषार्थ—एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानेको संक्रमण कहते हैं । यदि वह उसी
लेश्यामें होता है, तो स्वस्थान संक्रमण है और यदि एक लेश्यासे दूसरीमें होता है, तो पर-
स्थान संक्रमण है । वृद्धिमें कृष्ण और शुक्ल लेश्यामें स्वस्थान संक्रमण ही होता है; क्योंकि
संक्लेशकी वृद्धि कृष्ण लेश्याके उत्कृष्ट अंश पर्यन्त ही होती है तथा विशुद्धिकी वृद्धि शुक्ल
लेश्याके उत्कृष्ट अंश तक ही होती है । अतः जो जीव कृष्ण लेश्या या शुक्ल लेश्यामें वर्तमान
है, वह संक्लेश या विशुद्धिकी वृद्धिमें उन्हीं लेश्याओंके उत्कृष्ट अंशमें जायेगा । किन्तु
२५ हानिमें दोनों संक्रमण होते हैं । क्योंकि उत्कृष्ट कृष्ण लेश्यासे संक्लेशकी हानि होनेपर उसी
लेश्याके उत्कृष्टसे मध्यममें और मध्यमसे जघन्य अंशमें आता है और जघन्य अंशसे भी
हानि होनेपर नील लेश्यामें चला जाता है । इसी तरह विशुद्धिकी हानि होनेपर शुक्ल
लेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मध्यममें और मध्यमसे जघन्य अंशमें आता है । तथा और भी हानि
होनेपर पद्म लेश्यामें जाता है । इस तरह हानिमें दोनों संक्रमण होते हैं । शेष मध्यकी चारों
१० ही लेश्याओंमें हानि-वृद्धि दोनोंमें ही दोनों संक्रमण होते हैं ॥५०४॥

लेश्यानां कृष्णादिसर्वलेश्येगळ उत्कृष्टात् उत्कृष्टदत्तणिदं अनंतरस्वलेश्यास्थानविकल्पदोळु
अवरहानिः अनन्तैकभागहानियक्कुं । एकदोळुत्कृष्टलेश्योदयस्थानकमप्युदरिदमनंतरोर्वकस्थान-
दोळनंतैकभागहानियक्कुमप्युदरिदं । अवरस्मात् सर्वलेश्येगळ जघन्यस्थानदत्तणिदं स्वस्थाने स्वस्था-
नदोळु अवरवृद्धिः अनंतभागवृद्धिये अक्कुमेकदोडे लेश्याजघन्यस्थानंगळनितुमष्टांकंगळपुदरिदमनं-
तरस्थानंगळोळु अनंतभागवृद्धिये नियमदिदमक्कुमेकदोडा जघन्यमा षट्स्थानादियप्युदरिदं । ५
उत्तरस्थानमनंतैकभागवृद्धिस्थानमक्कुमप्युदरिदं । अवरस्मात् सर्वलेश्येगळ जघन्यस्थानदत्तणिदं
परस्थाने परस्थानसंक्रमणदोळु अनंतरस्थानदोळु हानिः अनंतगुणहानिये नियमाद् भवति नियमदि-
मक्कुमेकदोडे शुक्ललेश्याजघन्यदिदमनंतरपद्मलेश्यास्थानदोळनंतगुणहानि नियमदिमे तक्कुमंते
कृष्णालेश्याजघन्यदिदमनंतरनीललेश्यास्थानदोळमनंतगुणहानियक्कुमितेला लेश्येगळामक्कुं ॥

संक्रमणे छठ्ठाणा हाणिषु षड्ढीसु द्वांति तण्णामा ।

१०

परिमाणं च य पुर्वं उत्तकमं होदि सुदणाने ॥५०६॥

संक्रमणे षट्स्थानानि हानिषु वृद्धिषु भवन्ति तन्नामानि । परिमाणं च पूर्वमुत्तकमो भवति
श्रुतज्ञाने ॥

ई संक्रमणदोळु हानिगळोळं वृद्धिगळोळं षड्वृद्धिगळं षड्हानिगळं मप्युवु । तद्वृद्धिहानिगळ
पेसर्गळुमवर प्रमाणंगळुमं मुन्नं श्रुतज्ञानमार्गण्योळपेळव क्रममेयक्कुमे दरिवुदवे ते दोडे अनंत- १५

कृष्णादिसर्वलेश्योत्कृष्टादनन्तरस्वलेश्यास्थानविकल्पे अवरहानिः अनन्तैकभागहानिर्भवति, कुतः ?
तदनन्तरस्योर्वङ्कारमकत्वात् । सर्वलेश्यानां जघन्यात्पुनः स्वस्थाने अवरवृद्धिः अनन्तैकभागवृद्धिरेव भवति ।
कुतः ? तज्जघन्यानामष्टांकरूपत्वात् । सर्वलेश्याजघन्यस्थानात् परस्थानसंक्रमणेऽनन्तरस्थाने अनन्तगुणहानिरेव
नियमाद्भवति । कुतः ? शुक्ललेश्याजघन्यादनन्तरपद्मलेश्यास्थानवत्कृष्णलेश्याजघन्यादनन्तरनीललेश्यास्थानेऽपि
तद्वानरेव संभवात् । एवं सर्वलेश्यानां भवति ॥५०५॥ २०

अस्मिन् संक्रमणे हानिषु वृद्धिषु च षड्वृद्धयः षड्वृद्धयश्च भवन्ति । तासां नामानि प्रमाणानि च पूर्व

कृष्ण आदि सब लेश्याओंके उत्कृष्ट स्थानमें जितने परिणाम होते हैं, उनसे उत्कृष्ट
स्थानके समीपवर्ती उसी लेश्याके स्थानमें 'अवरहानि' अर्थात् उत्कृष्ट स्थानसे अनन्त भाग
हानिको लिये हुए परिणाम होते हैं, क्योंकि उत्कृष्टके अनन्तरवर्ती परिणाम उर्वकरूप होता है
और अनन्त भागकी संवृष्टि उर्वक है । तथा सब लेश्याओंके जघन्य स्थानसे उसी लेश्यामें २५
उसके समीपवर्ती स्थानमें अनन्तवर्त भागवृद्धि ही होती है, क्योंकि उनके जघन्य अष्टांकरूप
होते हैं । सब लेश्याओंके जघन्य स्थानसे परस्थानसंक्रमण होनेपर उसके अनन्तरवर्ती
स्थानमें अनन्त गुणहानि ही नियमसे होती है । क्योंकि शुक्ललेश्याके जघन्य स्थानके
अनन्तर जो पद्मलेश्याका उत्कृष्ट स्थान है, उसीकी तरह कृष्णलेश्याके जघन्य स्थानके
अनन्तर जो नीललेश्याका उत्कृष्ट स्थान है, उनमें भी अनन्त गुणहानि ही सम्भव है । इसी ३०
प्रकार सब लेश्याओंमें जानना ॥५०५॥

इस संक्रमणमें हानि और वृद्धिमें छह हानियाँ और छह वृद्धियाँ होती हैं । उनके

१. म अकस्मात् अवरवृद्धि स. । २. म हानिः हानिये ।

भागमसंख्यातभागं संख्यातभागं संख्यातगुणमसंख्यातगुणमनंतगुणमेव हानिवृद्धिगळ नामंगळ-
मुत्कृष्टसंख्यातमुमसंख्यातलोकमुं सर्वजीवराशियुमेव प्रमाणंगळु भागक्रमदोळं गुणितक्रमदोळ-
मिवेयपुर्वेदु श्रुतज्ञानमार्गणेयोळु पेळ्व क्रममिल्लियुमरियत्पडुगुमेवु बुदु तात्पर्यं ॥ नाल्कनेय
संक्रमणाधिकारंतिदुदु ॥ अनंतरं कर्माधिकारं गाथाद्वयदिवं पेळ्वपं :—

- ५ श्रुतज्ञानमार्गणायां उत्कृष्टमेणैव भवन्ति । तत्र अनन्तभागः असंख्यातभागः संख्यातभागः संख्यातगुणः असंख्यात-
गुणः अनन्तगुणश्चेति नामानि । उत्कृष्टसंख्यातमसंख्यातलोकः सर्वजीवराशिश्चेति भागक्रमे गुणितक्रमे च
प्रमाणानि भवन्ति ॥५०६॥ इति संक्रमणाधिकारश्चतुर्थः ॥ अथ कर्माधिकारं गाथाद्वयेनाह—

- नाम और उनका प्रमाण पहले श्रुतज्ञानमार्गणामें जैसा कहा है, वैसा ही जानना । उनके
नाम अनन्तभाग, असंख्यात भाग, संख्यात भाग, संख्यात गुण, असंख्यात गुण और अनन्त
१० गुण हैं । उनका प्रमाण जीवराशि, असंख्यात लोक और उत्कृष्ट संख्यात क्रमसे हैं । यह भाग
और गुणका प्रमाण है ॥५०६॥

- विशेषार्थ—अनन्त भाग, असंख्यात भाग, संख्यात भाग, संख्यात गुण, असंख्यात
गुण, अनन्त गुण ये छह स्थानोंके नाम हैं । इनका प्रमाण गुणकार और भागहारमें पूर्ववत्
जानना । पूर्वमें वृद्धिका अनुक्रम कहा है, हानिमें उससे उलटा अनुक्रम है ; वही कहते हैं ।
१५ कापोतलेश्याके जघन्यसे लगाकर कृष्णलेश्याके उत्कृष्ट पर्यन्त विवक्षा हो, तो क्रमसे संक्लेशकी
वृद्धि होती है । यदि कृष्णलेश्याके उत्कृष्टसे लगाकर कापोतलेश्याके जघन्य पर्यन्त विवक्षा हो,
तो संक्लेशकी हानि होती है । तथा पीतके जघन्यसे लगाकर शुक्लके उत्कृष्ट पर्यन्त विवक्षा
हो, तो क्रमसे विशुद्धिकी वृद्धि होती है । यदि शुक्लके उत्कृष्टसे लगाकर पीतके जघन्य पर्यन्त
विवक्षा हो, तो क्रमसे विशुद्धिकी हानि होती है । सो वृद्धिमें षट्स्थानपतित वृद्धि और
२० हानिमें षट्स्थानपतित हानि जानना ।

- पूर्वमें कहा था कि सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र बार अनन्त भागवृद्धि होने-
पर एक बार अनन्त गुणवृद्धि होती है । उसमें अनन्त गुणवृद्धिरूप स्थान नवीन षट्स्थान
पतित वृद्धिका प्रारम्भरूप प्रथम स्थान है । उसके पहले जो अनन्त भाग वृद्धिरूप स्थान है,
वह विवक्षित षट्स्थानपतित वृद्धिका अन्तस्थान है । नवीन षट्स्थानपतित वृद्धिके अनन्त
२५ गुणवृद्धिरूप प्रथम स्थानके आगे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र अनन्त भागवृद्धिरूप
स्थान होते हैं, उसके आगे पूर्वोक्त अनुक्रम जानना ।

- यहाँपर कृष्णलेश्याका उत्कृष्ट स्थान षट्स्थानपतितका अन्त स्थानरूप होनेसे पूर्व-
स्थानसे अनन्तभाग वृद्धिरूप है । और कृष्णलेश्याका जघन्य स्थान षट्स्थान पतितका
प्रारम्भरूप प्रथम स्थान है । उसके पूर्व नीललेश्याका उत्कृष्ट स्थान, उससे अनन्त गुण वृद्धि-
३० रूप है । तथा कृष्णलेश्याके जघन्यका समीपवर्ती स्थान उस जघन्य स्थानसे अनन्त भाग
वृद्धिरूप है । हानिकी अपेक्षा कृष्णलेश्याके उत्कृष्ट स्थानसे उसके समीपवर्ती स्थान अनन्त
भाग हानिको लिये है । कृष्णलेश्याके जघन्य स्थानसे नीललेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्त
गुण हानिको लिये है । इसी प्रकार अन्य स्थानोंमें भी जानना ॥५०६॥

चतुर्थ संक्रमण अधिकार समाप्त हुआ । अब कर्माधिकार दो गाथाओंसे कहते हैं—

पहिया जे छप्पुरिसा परिभट्टारणमज्झदेसम्मि ।

फलभरियरुक्खमेगं पेक्खित्ता ते विचितंति ॥५०७॥

पथिका ये षट्पुरुषाः परिभ्रष्टाः अरण्यमध्यदेशे, फलभरितमेकं वृक्षं प्रेक्ष्य ते विचितयन्ति ॥

णिम्मूलखंधसाहुवसाहं छित्तुं चिणित्तु पडिदाहं ।

खाउं फलाइ इदि जं मणेण वयणं हवे कम्मं ॥५०८॥

निम्मूलस्कंधशाखोपशाखादिछित्वा उच्छित्य पतितानि । खावितुं फलानीति यन्मनसा वचनं भवेत्कर्म ॥

मुपेच्छ पथिकरवहं तोळळुत्तमरण्यमध्यदोळो'वु फलभरितमाकंदवृक्षमं कंडु तत्फलभक्षणो-
पायमं कृष्णलेश्यादिपरिणामजीवंगळिते'दु चित्तिसिदपर । मरनं निम्मूलमप्यंतु कडिदु, स्कंधमने
कडिदु, शाखेयने कडिदु, उपशाखेयने कडिदु, मरनं नोयिसदे पणाळने तिरिबु, इल्लि बिहिदं'वने
मेलुवेमं बितावुदो'दु मनदिनाळापमदा कृष्णलेश्यादि षट्प्रकारव जीवंगळणे यथाक्रमविदं कम्ममं'बु-
दकुं । अयिदनयक कम्ममधिकारं तीदुदु ॥

अनंतरं लक्षणाधिकारमं गाथानवकादिदं पेळदपं ॥

चंडो ण मुंचइ वैरं भंडणसीलो य धम्मदयरहिओ ।

दुट्ठो ण य एदि वसं लक्खणमेयं तु किण्हस्स ॥५०९॥

चंडो न मुंचति वैरं भंडनशीलश्च धर्मदयारहितः । दुष्टः न चैति वशं लक्षणमेतत्तु
कृष्णस्य ॥

चंडः तोत्रकोपनं न मुंचति वैरं वैरमं बिडुवनल्लं । भंडनशीलश्च युद्धशीलनुं धर्मदयारहितः
धम्मसं दयेयुमिल्लवनं दुष्टः दुष्टनुं न चैति वशं वशवर्त्तियप्पनुमल्लं । एतल्लक्षणं इंतप्प लक्षणमनुळं तु

कृष्णाद्येकैकलेश्यायुक्तषट्पथिकाः पुरुषाः पथः परिभ्रष्टाः अरण्यमध्यदेशे फलभरितमेकं वृक्षं दृष्ट्वा ते
विचिन्तयन्ति । तत्र आद्यः—वृक्षं निर्मूलं छित्वा, अन्यः स्कन्धं छित्वा, परः शाखां छित्वा, अन्यः उपशाखां
छित्वा, परो वृक्षाबाधं फलान्येव छित्वा, अन्यः पतितान्येव गृहीत्वा च फलान्यधीति यन्मनःपूर्वकं वचः
तत्क्रमशस्तासां कर्म भवति ॥५०७-५०८॥ इति कर्माधिकारः ॥ अथ लक्षणाधिकारं गाथानवकेनाह—

चण्डनस्तीव्रकोपनः वैरं न मुञ्चति, भण्डनशीलश्च युद्धशीलश्च धर्मदयारहितः दुष्टः निर्दयो वशं नैति

कृष्ण आदि एक-एक लेश्यावाले छह पथिक मार्ग भूल गये । वनके मध्यमें फलोंसे
लदे हुए एक वृक्षको देखकर वे विचार करते हैं—कृष्णलेश्यावाला विचारता है कि वृक्षको
जड़से उखाड़कर इसके फल खाऊँगा । नीललेश्यावाला विचारता है कि इस वृक्षके स्कन्धको
काटकर फल खाऊँगा । कापोतलेश्यावाला विचारता है, इसकी बड़ी डाल काटकर फल
खाऊँगा । तेजो लेश्यावाला विचारता है, इसकी छोटी डाल काटकर फल खाऊँगा । पद्म-
लेश्यावाला विचारता है वृक्षको हानि न पहुँचाकर केवल फल ही तोड़कर खाऊँगा । शुक्ल-
लेश्यावाला विचारता है, गिरे हुए फलोंको ही खाऊँगा । इस प्रकार मनपूर्वक जो वचन
होता है, वह क्रमसे उन लेश्याओंका कार्य होता है ॥५०७-५०८॥

अब नौ गाथाओंसे लक्षणाधिकार कहते हैं—

तोत्र क्रोधी हो, वैर न छोड़े, लड़ाई-झगड़ा करनेका स्वभाव हो, दया-धर्मसे रहित

मत्ते कृष्णलेश्येयनुल जीवनवक्तुं ॥

मंदो बुद्धिविहीणो निर्विज्ज्ञानी य विसयलोलो य ।

माणी माई य तद्वा आलस्यो चैव भेज्जो य ॥५१०॥

मंदो बुद्धिविहीनो निर्विज्ज्ञानी च विषयलोलश्च । मानी मायी च तथा आलस्यश्चैव

५ भेज्जश्च ॥

मंदः स्वच्छन्दसंज्ञिकनुं क्रियेगळोळुमंदं मेणु बुद्धिविहीनः वर्तमानकार्यानिभिज्ञनुं । निर्विज्ज्ञानी च विज्ञानविहीननुं । विषयलोलश्च विषयगळोळु स्पर्शादिबाह्येन्द्रियात्थंगळोळु लंपटनुं । मानी अहंकारियुं । मायी च कुटिलवृत्तियुं तथा आलस्यश्चैव क्रियेगळोळु कर्तव्यगळोळु कुंठनुं । भेज्जश्च परेरिदमोळगरियत्पडुवनुमेदिनितुं कृष्णलेश्येय जीवलक्षणमवक्तुं ॥

१०

णिद्दावंचणबहुलो धणधण्णे होदि तिब्बसणा य ।

लक्खणमेयं भणियं समासदो नीललेस्सस्स ॥५११॥

निद्रावंचनाबहुलः धनधान्ये भवति तीव्रसंज्ञश्च । लक्षणमेतद् भणितं समासतो नीललेश्यस्य ॥

निद्राबहुलनुं वंचनाबहुलनुं धनधान्यगळोळु तीव्रसंज्ञेयनुळनुं धनधान्यगळोळुतीव्रसंज्ञेयनुळनुं एदिती लक्षणं संक्षेपदिवं नीललेश्येयनुळ जीवंगे पेळत्पटुदु ॥

१५

रुसइ णिदइ अण्णे दूसइ बहुसो य सोयभयबहुलो ।

असुयइ परिभवइ परं पसंसये अप्पयं बहुसो ॥५१२॥

रोषति निदत्यन्यान् दुष्यति बहुशश्च शोकभयबहुलः । असूयति परिभवति परं प्रशंसये-
दात्मानं बहुशः ।

एतल्लक्षणं तु—पुनः कृष्णलेश्यस्य भवति ॥५०९॥

२०

मन्दः—स्वच्छन्दक्रियासु मन्दो वा, बुद्धिविहीनः वर्तमानकार्यानिभिज्ञः, निर्विज्ज्ञानी च—विज्ञानरहितश्च विषयलोलश्च—स्पर्शादिबाह्येन्द्रियार्थेषु लम्पटश्च, मानी—अभिमानी, मायी च—कुटिलवृत्तिश्च तथा आलस्यश्चैव—क्रियासु कर्तव्येषु कुण्ठश्चैव भेज्जश्च परेणानवबोद्ध्याभिप्रायश्च एतदपि कृष्णलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१०॥

निद्राबहुलः वञ्चनबहुलः धनधान्येषु तीव्रसंज्ञश्च इत्येतल्लक्षणं संक्षेपेण नीललेश्यस्य भणितम् ॥५११॥

२५ हो, दुष्ट और निर्दय हो, किसीके वशमें न आता हो, ये कृष्णलेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५०९॥

स्वच्छन्द अथवा कार्य करनेमें मन्द हो, बुद्धिहीन हो—वर्तमान कार्यको न जानता हो, अज्ञानी हो, स्पर्शन आदि इन्द्रियोंके विषयमें लम्पट हो, अभिमानी हो, कुटिल वृत्तिवाला मायाचारी हो, कर्तव्य कर्ममें आलसी हो, दूसरोंके द्वारा जिसका अभिप्राय न जाना जा सके, ये सभी । कृष्ण लेश्याके लक्षण हैं ॥५१०॥

३०

बहुत सोता हो, दूसरोंको खूब ठगता हो, धन्य-धान्यकी तीव्र लालसा हो, ये संक्षेपसे नीललेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५११॥

पेररं कोपिसुगुं बहुप्रकारविदं पेररं निदिसुगुं । बहुप्रकारविदं पेररं द्वेषिसुगुं । शोकबहुलनुं भयबहुलनुं परनं सैरिसनुं परनं परिभविसुगुं तन्न बहुप्रकारविदं प्रशंसये माडिकोळुं ।

ण य पत्तियइ परं सो अप्पाणं मिव परं पि मण्णंतो ।

थूसइ अभित्थुवंतो ण य जाणइ हाणि वडिंठ वा ॥५१३॥

न च विदवसिति परं सः आत्मानमिव परमपि मन्यमानः । तुष्यत्यभिष्टुवतो न च जानाति हानिं वृद्धिं वा । ५

सः अंतप्प जीवं परनं नंबुवतल्लं तन्नंतये एंदु परनं बणेगुं । तन्न पोगळुत्तिरलु संतोषिसुगुं तनमं परंगं हानियुमं वृद्धियुमं न जानाति अरियं ।

मरणं पत्थेइ रणे देइ सुबहुगंपि थुव्वमाणो दु ।

ण गणइ कज्जाकज्जं लक्खणमेयं तु काउस्स ॥५१४॥

१०

मरणं प्रार्थयति रणे ददाति सुबहुकमपि स्तुतः । न गणयति कार्याकार्यं लक्षणमेतत्कपोतलेश्यस्य ।

काळगदोळु मरणमं वयसुगुं स्तुतिमाळ्पणे बहुधेनमनोगुं । कार्यमुमनकार्यमुमं गणिइसुव-
नल्लनिंतिदु कपोतलेश्येयमनुळ्ळंगे लक्षणमक्कुं ।

जाणइ कज्जाकज्जं सेयमसेयं च सव्वसमंपासी ।

१५

दयदाणरदो य मिदू लक्खणमेयं तु तेउस्स ॥५१५॥

जानाति कार्याकार्यं सेव्यमसेयं च सर्वसमवर्गो । दयादानरतश्च मृदुल्लक्षणमेतत्तेजो-
लेश्यस्य ।

परस्मै कुप्यति, बहुधा परं निन्दति, बहुधा परं दुष्यति, च शोकबहुलः, भयबहुलः, परं न सहते परं परिभवति आत्मानं बहुधा प्रशंसति ॥५१२॥

२०

स परं न प्रत्येति—न विश्वसिति आत्मानमिव परमपि मन्यमानः अभिष्टुवतः परस्योपरि तुष्यति स्वपरयोर्हानिवृद्धी न च—नैव जानाति ॥५१३॥

रणे मरणं प्रार्थयते, स्तुतिं कुर्वतो बहुधनं (स्तूयमानस्तु बहुकमपि धनं) ददाति, कार्यमकार्यं च न गणयति इत्येतत्कपोतलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१४॥

दूसरोंपर बहुत क्रोध करता हो, दूसरोंकी बहुत निन्दा करता हो, दूसरोंको बहुधा दोष लगाता हो, बहुत शोक करता हो, बहुत डरता हो, दूसरोंको अच्छा न देख सकता हो, अन्यकी निन्दा और अपनी बहुत प्रशंसा करता हो, दूसरोंका विश्वास न करता हो, दूसरोंको भी अपनी ही तरह अविश्वास करनेवाला मानता हो, प्रशंसा करनेवालेपर परम प्रसन्न हो, अपनी और परकी हानि-वृद्धिकी परवाह न करता हो, युद्धमें मरनेको तैयार हो, अपनी स्तुति करनेवालेको बहुत कुछ दे डालता हो, कार्य-अकार्यको न जाने, ये सब कपोत-
लेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५१२-५१४॥ २५ ३०

१. म. धनमं कुहुगं । २. म. समदंसी । ३. व. अन्यस्मै रुप्यति ।

कार्यमुमनकार्यमुमं सेव्यमुमनसेव्यमुमनरिगुं । सर्व्वसमदर्शियुं दयेयोळं दानदोळं प्रीतिय-
नुळळनुं मनोवचनकायंगळोळु मृदुवुं एंबिदु तेजोलेश्येयनुळळंगे लक्षणमक्कुं ।

चागी भद्दो चोक्खो उज्जुवक्कमो य खमदि बहुगंपि ।

साहुगुरुपूजणरदो लक्खणमेयं तु पम्मस्स ॥५१६॥

५ त्यागी भद्रः सौकर्यशीलः उद्युक्तकर्मा च क्षमते बहुकमपि साधुगुरुपूजारतो लक्षणमेतत्पद्म-
लेश्यस्य ।

त्यागियुं भद्रपरिणामियुं सौकर्यशीलनुं शुभोद्युक्तकर्मनुं कष्टानिष्टंगळं पलवं सैरिसुवनुं
मुनिजनगुरुजनपूजाप्रीतनुमेंबिदु पद्मलेश्येयनुळळंगे लक्षणमक्कुं ।

ण य कुणइ पक्खवायं णवि य णिदाणं समो य सव्वेसिं ।

१० णत्थि य रायद्दोसा गेहोवि य सुक्कलेस्सस्स ॥५१७॥

न च करोति पक्षपातं नापि निदानं समश्च सर्व्वेषां न स्तश्च रागद्वेषौ स्नेहोपि च
शुक्ललेश्यस्य ।

पक्षपातमं माडं । निदानमुमं माडं । सर्व्वजनंगळगे समनप्पं । रागद्वेषमे बरडुमिष्टानिष्टंगे-
ळोळिल्लदनुं । पुत्रकलत्रादिगळोळु स्नेहमुमिल्लेदनुं इदु शुक्ललेश्येय जीवंगे लक्षणमक्कुं । आरनेय
१५ लक्षणाधिकारं तिदुहुं । अनंतरं गत्यधिकारं येकादशगाथासूत्रंगळिदं पेळदं ।

कार्यमकार्यं च सेव्यमसेव्यं च जानाति, सर्व्वसमदर्शी दयायां दाने च प्रीतिमान्, मनोवचनकायेषु मृदुः
इत्येतत्तेजोलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१५॥

त्यागी भद्रपरिणामी सौकर्यशीलः शुभोद्युक्तकर्मा च कष्टानिष्टोपद्रवौ सहते, मुनिजनगुरुजनपूजाप्रीति-
मान् इत्येतत्पद्मलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१६॥

२० पक्षपातं निदानं च न करोति सर्व्वजनानां समानश्च इष्टानिष्टयोः रागद्वेषरहितः पुत्रमित्रकलत्रादिषु
स्नेहरहितः इत्येतत् शुक्ललेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१७॥ इति लक्षणाधिकारः षष्ठः ॥ अथ गत्यधिकारं
एकादशभिः गाथासूत्रैराह—

२५ कार्य-अकार्यको तथा सेवनीय-असेवनीयको जानता हो, सबको समान रूपसे देखता
हो, दया और दानमें प्रीति रखता हो, मन-वचन-कायसे कोमल हो, ये तेजोलेश्याके
लक्षण हैं ॥५१५॥

त्यागी हो, भद्र परिणामी हो, सरल स्वभावी हो, शुभ कार्यमें उद्यमी हो, कष्ट तथा
अनिष्ट उपद्रवोंको सह सकता हो, मुनिजन और गुरुजनकी पूजामें प्रीति रखता हो, ये पद्म-
लेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५१६॥

३० न पक्षपात करता हो, न निदान करता हो, सबमें समान भाव रखता हो, इष्ट-
अनिष्टमें राग-द्वेष न करता हो, पुत्र, मित्र, स्त्रीमें रागी न हो, ये सब शुक्ललेश्यावालेके
लक्षण हैं ॥५१७॥

छठा लक्षणाधिकार समाप्त ।

१. म गलोलेल्लवुं । २. म लं यिदु । ३. ब. नपि क्षमते ।

लेस्साणं खलु अंसा छन्वीसा ह्येति तत्थ मज्झिमया ।

आउगवंधणजोग्गा अट्ठडुवगरिसकालभवा ॥५१८॥

लेश्यानां खल्वंशाः षड्विंशतिर्भवन्ति तत्र मध्यमगाः । आयुर्वन्धनयोग्याः अष्टाऽष्टापकर्ष-
कालभवाः ।

शिला भेदसमान	पृथ्वी भेदसमान	धूळीरेखासमान	जल रेखासमान
उ ००००००० ज	उ ००००००००० ज	उ ००००००००००० ज	उ ००००००० ज
कु १ ० ११	कउ ११२३४५६ ११११४४४ २ ३	तेउ ६५४३२११ ४११११०१ ३ २० ज ८	शु १ ०

५

आरं लेश्येगळगे अंशंगठनितुं कूडि षड्विंशतिगळप्पुवु २६ । अवेत्ते बोडे कृष्णाद्यशुभलेश्या-
त्रयकं जघन्यमध्यमोत्कृष्टंगठु प्रत्येकं मूरमूरागलौभतंशंगळप्पुवु । शुक्ललेश्यादि शुभलेश्यात्रय-
वकमंतयो भतंशंगठप्पुवु—। मा कपोतलेश्येय उत्कृष्टांशदिवं मुंदे तेजोलेश्येय उत्कृष्टांशदिवं पिंदे
कषायोदयस्थानंगठ नडु

लेश्या
४५६६५५४
४४४४४४४
स्थिति

वणारं लेश्येगल यथासंभवंगळायुर्वन्धयोग्यमध्यमां- १०

षड्लेश्यानामंशा जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदादष्टादश । पुनः कपोतलेश्योत्कृष्टांशादग्रे तेजोलेश्योत्कृष्टांशात्प्राक्-
कषायोदयस्थानेषु मध्यमांशा आयुर्वन्धयोग्या अष्टौ । एवं षड्विंशतिर्भवन्ति । तेषु—

शिला	पृथ्वी	धूलि	जल
उ ०००००० ज	उ ०००००० ज	उ ०००००० ज	उ ०००००० ज
कु १	१ २ ३ ४ ५ ६	६ ५ ४ ३ २ १	शु १
० १	१ १ १ ४ ४ ४	४ १ १ १ ० ०	०
	२	३	
	३	२	
	० ० ० ०	० ० ० ०	

मध्यमांशाः

मध्यमा अष्टौ अष्टापकर्षकाले संभवन्ति । तद्यथा—भुज्यमानायुरपकृष्यापकृष्य परभवायुर्वन्धयते इत्यपकर्षः ।
अपकर्षाणां स्वरूपमुच्यते—कर्मभूमितिर्यग्मनुष्याणां भुज्यमानायुर्जघन्यमध्यमोत्कृष्टं विवक्षितमिदं ६५६१ अत्र

छह लेश्याओंके उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्यके भेदसे अठारह अंश होते हैं । पुनः १५
कपोतलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे आगे और तेजोलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे पहले कषायके
उदयस्थानोंमें आठ मध्यम अंश हैं जो आयुर्वन्धके योग्य होते हैं । इस प्रकार छन्वीस अंश
होते हैं । आठ मध्यम अंश अपकर्ष कालमें होते हैं । जो इस प्रकार हैं—भुज्यमान अर्थात्
वर्तमानमें जिसे भोग रहे हैं, उस आयुका अपकर्षण कर-करके परभवकी आयुका बन्ध

२०

- शंगळे' दु । ८ । अंतु लेइयांशंगळनितुं षष्टिशत्यंशंगळप्पुववरोळा मध्यमांशंगळप्पायुब्बंध्ययोग्यांशंगळे' दुमष्टापकर्षकालसंभवंगळप्पुववे' ते' दोडे भुज्यमानायुध्यमनपकषिसियपकषिसि परायुध्यमं कट्टुवुदनपकर्षमे' बुदु पुवायुरपकष्यापकष्यैव परायुब्बंध्यत इति अपकर्षः ए'द्विती निरुक्तिलक्षण-सिद्धमप्पुदरिदमी ये'दुमपकर्षंगळगे स्वरूपमे' ते' दोडोव्वं कम्मभूमिजं मनुष्यनागलेणितव्यं च नागलु
- ५ भुज्यमानायुध्यं जघन्यमध्यमोत्कृष्टं विवक्षितमनदं ६५६१ त्रिभागं माडिदेकभागद २१८७ प्रथम-समयं मोदल्लो' डंतम्मुहूर्त्तकालमायुब्बंध्योरयमवकुमल्लि परभवायुध्यमं कट्टुगुमल्लि कट्टिदोडे अवे त्रिभागं माडिदेकभागद ७२९ प्रथमकालदंतम्मुहूर्त्तदोळु बंधमिल्लदोडदं त्रिभागं माडिदेकभागद २४३ प्रथमकालांतम्मुहूर्त्तदोळुकट्टुदोडदं त्रिभागं माडिदेकभागद ८१ प्रथमकालदोळुबंधमिल्लिदोडदं त्रिभागं माडिदेकभागद २७ प्रथमसमयदोळु परभवायुध्यमं कट्टुलोदल्लोळुदिव्दो' डदं त्रिभागं
- १० माडिदेकभागद ९ प्रथमांतम्मुहूर्त्तकं परभवायुध्यमं कट्टुदोडदं त्रिभागं माडिदेकभागदोळु ३ । प्रथमकालदोळुकट्टुदिव्दो' डदं त्रिभागं माडिदेकभागद १ प्रथमकालदोळु परभवायुध्यमं कट्टुगुमितुंटे-यपकर्षंगळुप्पुवा ए'दनेय अपकर्षदोळायुब्बंध्यमवकुमे'व नियममुमिल्लं । मत्तपकर्षमुमिल्लमंतादोडायु-बंधमे' तवकुमे' दोडे आ आ संक्षेपाद्धे भुज्यमानायुध्यदोळुळिदुवे' बागळपरभवायुध्यमंतम्मुहूर्त्तमात्रसमय-प्रबद्धंगळनियमविदं कट्टि समाप्तमागले वेळकुमे' बिदु नियममवकुमे' वरिवुदु । आ संक्षेपाद्धि ये' वदुं
- १५ भुज्यमानायुध्यद कडेयोळावल्यसंख्यातैकभागमवकुं ।

- भागद्वयेति क्रान्ते तृतीयभागस्य २१८७ प्रथमान्तर्मुहूर्तः परभवायुर्बन्धयोग्यः, तत्र न बद्धं तदा, तदेकभागतृतीय-भागस्य ७२९ प्रथमान्तर्मुहूर्तः । तत्रापि न बद्धं तदा तदेकभागतृतीयभागस्य २४३ प्रथमान्तर्मुहूर्तः । एवमग्रे नेतव्यमष्टवारं यावत् । इत्यष्टैवापकर्षाः । नाष्टमापकर्षेऽप्यायुर्बन्धनियमः, नाप्यन्योऽपकर्षः तर्हि आयुर्बन्धः कथं ? असंक्षेपाद्धा भुज्यमानायुषोऽन्त्यावल्यसंख्येयभागः तस्मिन्नवशिष्टे प्रागेव अन्तर्मुहूर्त्तमात्रसमयप्रबद्धान् परभवायु-
- २० नियमेन बद्ध्वा समाप्नोतीति नियमो ज्ञातव्यः—

- होता है, इसे ही अपकर्ष कहते हैं । अपकर्षोंका स्वरूप कहते हैं—किसी कर्मभूमिके तिर्यंच या मनुष्योंकी भुज्यमान आयु जघन्य अथवा मध्यम अथवा उत्कृष्ट ६५६१ पैसठ सौ इकसठ वर्ष है । इसमें-से दो भाग बीतनेपर तृतीय भाग इक्कीस सौ सत्तासी २१८७ का प्रथम अन्तर्मुहूर्त परभवकी आयुबन्धके योग्य है । यदि उसमें बन्ध नहीं हुआ, तो उस इक्कीस सौ
- २५ सत्तासीके दो भाग बीतनेपर तृतीय भाग सात सौ उनतीस ७२९ का प्रथम अन्तर्मुहूर्त पर-भवकी आयुबन्धके योग्य होता है । उसमें भी यदि बन्ध नहीं हुआ, तो सात सौ उनतीसमें-से दो भाग बीतनेपर तीसरे भाग दो सौ तैंतालीसका प्रथम अन्तर्मुहूर्त आयुबन्धके योग्य है । इसी प्रकार आगे-आगे आठ बार तक ले जाना चाहिए । इस प्रकार आठ ही अपकर्ष होते हैं । आठवें अपकर्षमें भी आयुबन्ध नियमसे नहीं होता और अन्य अपकर्ष भी नहीं होता ।
- ३० तब आयुबन्ध कैसे होता है ? उत्तर है—'आसंक्षेपाद्धा' अर्थात् भुज्यमान आयुके अन्तिम आचलीका असंख्यातवाँ भाग अवशेष रहनेसे पहले ही अन्तर्मुहूर्त मात्र समयप्रबद्धोंको लेकर परभवकी आयु नियमसे बाँधकर समाप्त करता है, यह नियम जानना । यहाँ विशेष

२	d
१	
३	
९	
२७	
८१	
२४३	
७२९	
२१८७	
६५६१ सञ्ख्यायु :	

इल्लि बिशेषनिर्णयं माडल्पडुगुमदे ते दोडे आवनोळ्व सोपक्रमायुष्यनप्प जीवं सोपक्रमायुष्यने दे बुदेने दोडे कदलीघातायुष्यमनुळ्ळने बद्धर्थमदु कारणमागि देवनारकरं भोगभूमिजरुमनुपक्रमायुष्यरे बुद्धर्थ । आ सोपक्रमायुष्यजीवंगळु तैतम्म भुज्यमानायुष्यस्थितियोळु द्वित्रिभागमतिक्रांतमागुत्तिरल्लु शेषत्रिभागद प्रथमसमयं मोवल्गोडु अंतम्महुत्तंपर्यंतं परभवायुब्बंधप्रायोग्यरप्पसु । मुपेळ्ळा संक्षेपाद्विपर्यंतमल्लि आयुस्तोकबंधाद्धा कालाभ्यंतरदोळायुब्बंधप्रायोग्यपरिणामंगळिद केलवु जीवंगळु अष्टवारंगळं केलवु जीवंगळु सप्तवारंगळं केलवु जीवंगळु षड्वारंगळं केलवु जीवंगळु पंचवारंगळं केलवु जीवंगळु चतुर्वारंगळं केलवु जीवंगळु त्रिवारंगळं केलवु जीवंगळु द्विवारंगळं केलवु जीवंगळु एकवारंगळं परिणमिसुववेके दोडे स्वभावदिदमेतद्बंधप्रायोग्यपरिणमनमा जीवंगळुगे कारणांतरनिरपेक्षमे बुद्धर्थ । संवृष्टिरचने ॥

२
७
१
३
९
२७
८१
२४३
७२९
२१८७
६५६१

अत्र विशेषनिर्णयः क्रियते । सोपक्रमायुष्काः कदलीघातायुष्काः तेन देवनारकभोगभूमिजा अनुपक्रमायुष्का भवन्ति । सोपक्रमायुष्का उत्तरीत्या आयुर्बध्नन्ति । तत्रायुस्तोकबन्धाद्धाभ्यन्तरे तद्योग्यपरिणामैः केचिदष्टवारं केचित्सप्तवारं केचित् षड्वारं केचित्पञ्चवारं केचित् चतुर्वारं केचित्त्रिवारं केचिद् द्विवारं केचिदेकवारं परिणमन्ति । स्वभावादेव तद्बन्धप्रायोग्यपरिणमनं जीवानां कारणान्तरनिरपेक्षमित्यर्थः । संवृष्टिः—

१०

१५

निर्णय करते हैं । जिनका विषादिके द्वारा कदलीघातमरण होता है, वे सोपक्रम आयुवाले होते हैं । अतः देव, नारकी और भोगभूमिया निरुपक्रम आयुवाले होते हैं । सोपक्रम आयुवाले उक्त रीतिसे आयुबन्ध करते हैं । उन अपकर्षोंमें आयुबन्धके कालमें आयुबन्धके योग्य परिणामोंसे कोई आठ बार, कोई सात बार, कोई छह बार, कोई पाँच बार, कोई चार बार, कोई तीन बार, कोई दो बार, कोई एक बार परिणमन करते हैं । अपकर्ष कालमें ही जीवोंके आयुबन्धके योग्य परिणमन स्वभावसे होता है । उसका कोई अन्य कारण नहीं है । आयुके

२०

अष्टापकं							
ज००उ ८१८८	सप्तापकं						
ज००उ ८१७७	ज००उ ७१७७	षडपकं					
ज००उ ८१६६	ज००उ ७१६६	ज००उ ६१६६	पंचापकं				
ज००उ ८१५५	ज००उ ७१५५	ज००उ ६१५५	ज००उ ५१५५	चतुरपकं			
ज००उ ८१४४	ज००उ ७१४४	ज००उ ६१४४	ज००उ ५१४४	ज००उ ४१४४	त्रिकापकं		
ज००उ ८१३३	ज००उ ७१३३	ज००उ ६१३३	ज००उ ५१३३	ज००उ ४१३३	ज००उ ३१३३	द्विकापकं	
ज००उ ८१२२	ज००उ ७१२२	ज००उ ६१२२	ज००उ ५१२२	ज००उ ४१२२	ज००उ ३१२२	ज००उ २१२२	एकापकं
ज००उ ८१११	ज००उ ७१११	ज००उ ६१११	ज००उ ५१११	ज००उ ४१११	ज००उ ३१११	ज००उ २१११	ज००उ ११११

तृतीयभागप्रथमसमयदोळाकॅलंबरिदं परभवायुध्यबंधप्रारब्धमादोडवर्गळंतर्म्महूर्तदोळं
बंधमं निष्ठापिसुवर अल्लदोडे द्वितीयवारदोळु सर्वायुष्यदोळु नवमांशमवशेषमादल्लियुं परभवायुबंध-
प्रायोग्यरप्परह । अथवा तृतीयवारदोळु सर्वायुस्थितियोळु सप्तविंशतिभागावशेषमादल्लियुं परभवा-
युब्बंधप्रायोग्यरप्परितु शेषत्रिभागत्रिभागावशेषमागुत्तिरलु परभवायुब्बंधप्रायोग्यरप्परेंदितु नड-

अष्टापकर्थ	सप्तापकर्थ	षष्ठापकर्थ	पंचापकर्थ	चतुरपकर्थ	त्र्यपकर्थ	द्व्यपकर्थ	एकापकर्थ
ज. उ	ज. उ	ज. उ	ज. उ	ज. उ	ज. उ	ज. उ	ज. उ
८ ८ ८	७ ७ ७	६ ६ ६	५ ५ ५	४ ४ ४	३ ३ ३	२ २ २	१ १ १
८ ७ ७	७ ६ ६	६ ५ ५	५ ४ ४	४ ३ ३	३ २ २	२ १ १	१ ० ०
८ ६ ६	७ ५ ५	६ ४ ४	५ ३ ३	४ २ २	३ १ १	२ ० ०	१ ० ०
८ ५ ५	७ ४ ४	६ ३ ३	५ २ २	४ १ १	३ ० ०	२ ० ०	१ ० ०
८ ४ ४	७ ३ ३	६ २ २	५ १ १	४ ० ०	३ ० ०	२ ० ०	१ ० ०
८ ३ ३	७ २ २	६ १ १	५ ० ०	४ ० ०	३ ० ०	२ ० ०	१ ० ०
८ २ २	७ १ १	६ ० ०	५ ० ०	४ ० ०	३ ० ०	२ ० ०	१ ० ०
८ १ १	७ ० ०	६ ० ०	५ ० ०	४ ० ०	३ ० ०	२ ० ०	१ ० ०

२५ तृतीयभागप्रथमसमये यैः परभवायुर्वन्धः ते अन्तर्मुहूर्ते एव बन्धं निष्ठापयन्ति । अथवा द्वितीयवारे सवयुर्नवमांशावशेषेऽपि तद्वन्धप्रायोग्या भवन्ति । अथवा तृतीयवारे सवयुःसप्तविंशतिभागावशेषेऽपि प्रायोग्या

तीसरे भागके प्रथम समयमें जिन्होंने परभवकी आयुके बन्धका प्रारम्भ किया, वे अन्तर्मुहूर्तमें ही बन्धकी पूर्ण करते हैं। अथवा दूसरी बार पूरी आयुका नौवाँ भाग शेष रहनेपर भी आयुबन्धके योग्य होते हैं। अथवा तीसरी बार पूरी आयुका सत्ताईसवाँ भाग शेष रहनेपर भी आयुबन्धके योग्य होते हैं। इस प्रकार आठ अपकर्ष पर्यन्त जानना। किन्तु प्रत्येक

4

10

१५

20

34

40

मत्तैपकर्षगळिदमायुर्बन्धमं माळपंगे अष्टमापकर्षदोळायुर्बन्धाद्धि जघन्यं स्तोकमक्कु २१।
मदरुत्कृष्टबन्धाद्धि विशेषाधिकमक्कु २१।५ मदं नोडलं मत्तैपुमष्टापकर्षगळिदमायुर्बन्धमं
माळपंगे सप्तमापकर्षदोळायुर्बन्ध जघन्याद्धि संख्यातगुणमक्कु २१।४ मदं नोडलदरुत्कृष्टबन्धाद्धि
विशेषाधिकमक्कु २१।५।४।५। मदं नोडलु सप्तापकर्षदोळायुर्बन्धमं माळपंगे सप्तमापकर्ष-
दोळायुर्बन्धजघन्याद्धि संख्यातगुणमक्कु २१।५।४।५।४ मदं नोडलदरुत्कृष्टं विशेषाधिकमक्कु
२१।५।४।५।४।५ मदं नोडलुमष्टापकर्षगळिद मायुर्बन्धमं माळपन षष्ठापकर्षदोळायुर्बन्धाद्धि
जघन्यं संख्यातगुणमक्कु २७।५।४।५।४।५।४ मदं नोडलदरुत्कृष्टं विशेषाधिकमक्कु
२१।५।४।५।४।५।४।५ मदं नोडलु सप्तापकर्षगळिदमायुर्बन्धमं माळपन षष्ठापकर्षदोळ
४४४४

- १० षडपकर्षैः कुर्वाणाः संख्यातगुणाः । ततः पञ्चापकर्षैः कुर्वाणाः संख्यातगुणाः । ततश्चतुरपकर्षैः कुर्वाणाः
संख्यातगुणाः । ततस्त्रयपकर्षैः कुर्वाणाः संख्यातगुणाः । ततो द्वयपकर्षाभ्यां कुर्वाणाः संख्यातगुणाः । ततः
एकापकर्षेण कुर्वाणाः संख्यातगुणाः । संदिष्टः—

१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१	१३—१—१
१११११११	१११११११	११११११	१११११	११११	१११	११	१
८	७	६	५	४	३	२	१

पुनरष्टापकर्षैरायुर्बन्धतोऽष्टमापकर्षे आयुर्बन्धाद्वाजघन्यं स्तोकं २१। ततस्तदुत्कृष्टं विशेषाधिकं २१।५।

ततोऽष्टापकर्षैरायुर्बन्धतः सप्तमापकर्षे आयुर्बन्धाद्वाजघन्यं संख्यातगुणं २१।५।४। ततस्तदुत्कृष्टं विशेषा-

धिकं २१।५।४।५। ततः सप्तापकर्षैरायुर्बन्धतः सप्तमापकर्षे आयुर्बन्धाद्वा जघन्यं संख्यातगुणं २१।५।४।५।४

- १५ ततस्तदुत्कृष्टं विशेषाधिकं २१।५।४।५।४।५। ततोऽष्टापकर्षैरायुर्बन्धतः षष्ठापकर्षे आयुर्बन्धाद्वा
४।४।४

- २० हैं । सात अपकर्षोंमें आयुर्बन्ध करनेवाले उनसे संख्यात गुणे हैं । छह अपकर्षोंमें करनेवाले
उनसे भी संख्यातगुणे हैं । पाँच अपकर्षोंमें करनेवाले उनसे भी संख्यातगुणे हैं । चार
अपकर्षोंमें करनेवाले उनसे संख्यातगुणे हैं । तीन अपकर्षोंमें करनेवाले उनसे संख्यातगुणे
हैं । दो अपकर्षोंमें करनेवाले उनसे संख्यातगुणे हैं और एक अपकर्षमें करनेवाले उनसे
संख्यातगुणे हैं । आठ अपकर्षोंके द्वारा आयुका बन्ध करनेवाले जीवके आठवें अपकर्षमें
आयुर्बन्धका जघन्यकाल थोड़ा है । उससे उसका उत्कृष्ट काल विशेष अधिक है । आठ
अपकर्षोंके द्वारा आयुर्बन्ध करनेवाले जीवके सातवें अपकर्षमें आयुर्बन्धका जघन्य
काल उससे संख्यातगुणा है । उससे उसका उत्कृष्ट काल विशेष अधिक है । उससे सात
अपकर्षोंके द्वारा आयुर्बन्ध करनेवाले जीवके सातवें अपकर्षमें आयुर्बन्धका जघन्य काल
२५ संख्यातगुणा है । उससे उसका उत्कृष्ट काल विशेष अधिक है । उससे आठ अपकर्षों

२१।५।४।५।४।५।४।५।४।५।४।५ श्री प्रकारिदमेकापकष्वुत्तृष्टपद्यंतं
४।४।४।४।४।४।

आयुर्वेधाद्धा जवन्यं संख्यातगुणं—२१ । ५ । ४ । ५ । ४ । ५ । ४ । ५ । ४ । ५ । ४ ततस्तदुत्कृष्टं विशेषा-
४ । ४ । ४ । ४ । ४

विशेषार्थ—ऊपर टीकामें इन बहत्तर भेदोंकी रचना दिखायी है। उसमें आठ अपकर्षों-के द्वारा आयुबन्धकी रचनामें पहली पंक्तिके कोठोंमें जो आठ-आठका अंक रखा है, वह यह बतलाता है कि यहाँ आठ अपकर्षोंके द्वारा आयु बाँधनेवालोंका ग्रहण जानना। दूसरी-तीसरी पंक्तिमें जो आठसे लेकर एक तक अंक लिखे हैं, उनसे यह बतलाया है कि आठ अपकर्षोंके द्वारा बन्ध करनेवाले जीवके आठवें आदि अपकर्षोंका ग्रहण किया गया है। जिसमें-से दूसरी पंक्तिमें जघन्य कालको लेकर और तीसरी पंक्तिमें उत्कृष्ट कालको लेकर ग्रहण किया है। इसी प्रकार सातसे लेकर एक अपकर्ष तक आयुबन्धकी रचनाका अर्थ जानना। आठों रचनाओंके दूसरी और तीसरी पंक्तिके सब कोठे जिनके ऊपर ज और उ लिखा है वहत्तर हैं। इन बहत्तर स्थानोंमें आयुबन्धके कालका अल्पबहुत्व इस प्रकार जानना। विवक्षित जघन्यमें संख्यातका भाग देनेपर जो प्राप्त हो, उतना विशेषका प्रमाण जानना। उसको जघन्यमें जोड़नेपर उत्कृष्टका प्रमाण होता है, उत्कृष्टसे आगेका जघन्य संख्यातगुणा जानना। सामान्यसे सबका काल अन्तर्मूर्त है।

पद्मलेश्योत्कृष्टांशदिदं मृतराद जीवंगळु सहस्रारमुपयांति सहस्रारकल्पदोळु पुटदुवर खलु स्फुटमागि । पद्मलेश्याजघन्यांशदिदं मृतराद जीवंगळु सन्तकुमारं च माहेन्द्रमुपयांति सन्तकुमार कल्पदोळ माहेन्द्रकल्पदोळ पुटदुवर ।

मज्झिमअंसेण मुदा तम्मज्झं जांति तेउजेट्ठमुदा ।

साणक्कुमारमाहिंदंतिमचक्किदसेट्ठिमि ॥५२२॥

मध्यमांशेन मृताः तन्मध्यं यांति तेजोज्येष्ठमृताः सानत्कुमारमाहेन्द्रांतिमचक्रैद्रकश्रेण्यां ।

पद्मलेश्यामध्यमांशदिदं मृतराद जीवंगळु तन्मध्यं यांति सहस्रारकल्पदिदं केळणे सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पंगळिदं मेले यथासंभवागि पुटदुवर । तेजोलेश्योत्कृष्टांशदिदं मृतराद जीवंगळु सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पंगळ चरमपटलचक्रैद्रकप्रणिधिगतश्रेणीबद्धविमानंगळोळपुटदुवर ।

अवरंसमुदा सोहम्मीसाणादिमउडुम्मि सेट्ठिमि ।

मज्झिम अंसेण मुदा विमलविमानादिवलभद्दे ॥५२३॥

अवरांशमृताः सौधर्मैशानादिभूतऋत्वींद्रके श्रेण्यां । मध्यमांशेन मृताः विमलविमानादिवलभद्रे ।

तेजोलेश्याजघन्यांशदिदं मृतराद जीवंगळु सौधर्मैशानकल्पंगळादिभूतऋत्वींद्रकदोळं श्रेणीबद्धदोळं पुटदुवर । तेजोलेश्यामध्यमांशदिदं मृतराद जीवंगळु सौधर्मैशानकल्पद्वितीयपटलदिद्रकं विमलविमानमवु मोदलागि सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पंगळ द्विचरमपटलदिद्रकं बलभद्रविमानमवकु मल्लि पर्यंतं पुटदुवर ।

पद्मलेश्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः सहस्रारकल्पमुपयान्ति खलु स्फुटम् । पद्मलेश्याजघन्यांशेन मृता जीवाः सानत्कुमारं माहेन्द्रं चोपयान्ति ॥५२१॥

पद्मलेश्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सहस्रारकल्पादधः सानत्कुमारमाहेन्द्रद्वयादुपरि यथासंभवमुत्पद्यन्ते । तेजोलेश्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पयोश्चरमपटलचक्रैद्रकप्रणिधिगतश्रेणीबद्धविमाने-
वत्पद्यन्ते ॥५२२॥

तेजोलेश्याजघन्यांशेन मृता जीवाः सौधर्मैशानकल्पयोरादिभूतऋत्विन्द्रके श्रेणीबद्धे चोत्पद्यन्ते । तेजोलेश्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सौधर्मैशानकल्पद्वितीयपटलस्येन्द्रकं विमलनामकमादि कृत्वा सानत्कुमारमाहेन्द्रद्विचरमपटलस्येन्द्रकं बलभद्रनामकं तत्पर्यन्तम् उत्पद्यन्ते ॥५२३॥

पद्मलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सहस्रारकल्पमें उत्पन्न होते हैं । पद्मलेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्गोंमें उत्पन्न होते हैं ॥५२१॥

पद्मलेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव सहस्रारकल्पसे नीचे और सानत्कुमार-माहेन्द्रसे ऊपर यथासंभव उत्पन्न होते हैं । तेजोलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सानत्कुमार-माहेन्द्र कल्पके अन्तिम पटल चक्रैन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंमें उत्पन्न होते हैं ॥५२२॥

तेजोलेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव सौधर्म-ऐशान कल्पके प्रथम ऋतु नामक इन्द्रकके श्रेणिबद्ध विमानोंमें उत्पन्न होते हैं । तेजोलेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव सौधर्म-ऐशान कल्पके द्वितीय पटलके विमल नामक इन्द्रकसे लेकर सानत्कुमार-माहेन्द्रके द्विचरम पटलके बलभद्र नामक इन्द्रक पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५२३॥

किण्वरंसेण मुदा अवधिट्ठाणम्मि अवरअंसमुदा ।

पंचमचरिमतिमिस्से मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२४॥

कृष्णवरांशेन मृताः अवधिस्थाने अवरांशमृताः । पंचमचरमतिमिश्रे मध्ये मध्येन जायंते ॥५२४॥

- ५ कृष्णलेश्योत्कृष्टांशदिदं मृतराद जीवंगळु सप्तमपृथ्व्योळोदे पटलमक्कुमदरवधिस्थानेद्रक-
बिलदोळु जायंते पुट्टुवर । कृष्णलेश्याजघन्यांशदिदं मृतराद जीवंगळु पंचमपृथ्व्य चरमपटलद
तिमिश्रेद्रकबिलदोळु जायंते पुट्टुवर । कृष्णलेश्यामध्यमांशदिदं मृतराद जीवंगळु सप्तमपृथ्व्य
अवधिस्थानेद्रकदे चतुःश्रेणिबद्धंगळोळं आ बिलदिदं मेलण षष्ठपृथ्विमघवियेबुददर पटलत्रय-
गलोळु तत्तद्योग्यमाणि जायंते पुट्टुवर ।

१० नीलुकसंसमुदा पंचमअंधिदयम्मि अवरमुदा ।

बालुकसंपज्जलिदे मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२५॥

नीलोत्कृष्टांशमृताः पंचम अंध्रेद्रके अवरमृताः । बालुकासंप्रज्वलिते मध्ये मध्येन जायंते ॥

- नीललेश्योत्कृष्टांशदिदं मृतराद जीवंगळु पंचमपृथ्व्यपटलपंचकदोळु द्विचरमपटलद
अंध्रेद्रकबिलदोळु जायंते पुट्टुवर । पंचमपटलदोळं केलंबर पुट्टुवरदु कारणमाणि पंचमारिष्टेयोळु
१५ चरमपटलदोळु कृष्णलेश्याजघन्यांशदिदं नीललेश्योत्कृष्टांशदिदं, मृतराद केलवु जीवंगळु
पुट्टुवरें बी विशेषपरियत्पडुगुं । नीललेश्याजघन्यांशदिदं मृतराद जीवंगळु बालुकाप्रभेयनपटलं-

कृष्णलेश्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः सप्तमपृथ्व्यामेकमेव पटलं तस्यावधिस्थानेन्द्रके जायन्ते । कृष्णलेश्या-
जघन्यांशेन मृता जीवाः पञ्चमपृथ्वीचरमपटलस्य तिमिश्रेन्द्रके जायन्ते । कृष्णलेश्यामध्यमांशेन मृता जीवाः
तदवधिस्थानेन्द्रकस्य चतुःश्रेणिबद्धेषु षष्ठपृथ्वीपटलत्रये पञ्चमपृथ्वीचरमपटले च तत्तद्योग्यतया जायन्ते ॥५२४॥

- २० नीललेश्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः पञ्चमपृथ्वीद्विचरमपटलस्यान्ध्रेन्द्रके जायन्ते । केचित् पञ्चमपटलेऽपि
जायन्ते । ततोऽरिष्टाचरमपटले कृष्णलेश्याजघन्यांशेन नीललेश्योत्कृष्टांशेनापि मृताः केचिज्जीवाः उत्पद्यन्ते ।

- कृष्णलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सातवीं पृथिवीमें एक ही पटल है, उसके
अवधिस्थान नामक इन्द्रक बिलमें उत्पन्न होते हैं । कृष्णलेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव
पाँचवीं पृथ्वीके अन्तिम पटल सम्बन्धी तिमिस्स नामक इन्द्रक बिलमें उत्पन्न होते हैं ।
२५ कृष्णलेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव अवधिस्थान नामक इन्द्रकके चारों दिशा सम्बन्धी
श्रेणीबद्ध बिलोंमें, छठी पृथ्वीके तीनों पटलोंमें और पाँचवीं पृथ्वीके अन्तिम पटलमें अपनी-
अपनी योग्यतानुसार उत्पन्न होते हैं ॥५२४॥

- नीललेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव पाँचवीं पृथ्वीके द्विचरम पटलके आन्ध्रेन्द्रकमें
उत्पन्न होते हैं । कोई-कोई पाँचवें पटलमें भी उत्पन्न होते हैं । अरिष्ट पृथ्वीके अन्तिम
३० पटलमें कृष्णलेश्याके जघन्य अंशसे और नीललेश्याके उत्कृष्ट अंशसे भी मरे कोई-कोई जीव
उत्पन्न होते हैं, इतना विशेष जानना । नीललेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव बालुकाप्रभा
नामक तीसरी पृथ्वीके नौ पटलोंमें-से अन्तिम पटल सम्बन्धी संप्रज्वलित इन्द्रकमें उत्पन्न

१. म^० क बिलदिदं मेले षष्ठपृथ्वि मघवियोलु पंचमपृथ्वि, अरिष्टेयेंबुददर पटल पंचकदोलु चरमपटलदिदं
केलमे षष्ठ ।

गळोळु चरमपटलद संप्रज्वलितेंद्रकबिलबदोळु जायंते पुट्टुवर । नीललेश्यामध्यमांशदोळु मृतराद जीवंगळु तृतीयपृथ्विमेघेयनवपटलद संप्रज्वलितेंद्रकबिलदिदं केलगे चतुर्थपृथ्वि अंजनेय पटल- सप्तकंगळोळु पंचमपृथ्विअरिष्टेय पटलपंचकंगळोळु चतुर्थपटलद अंधेंद्रकबिलदिलदिदं मेलें मध्यदोळु यथायोग्यमागि जायंते पुट्टुवर ।

वरकाओदंसमुदा संजलिदं जांति तदियणिरयस्स ।

सीमंतं अवरमुदा मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२६॥

उत्कृष्टकपोतांशमृताः संज्वलितं यांति तृतीयनरकस्य । सीमंतं अवरमृताः मध्ये मध्येन जायंते ॥

कपोतलेश्योत्कृष्टांशदिदं मृतराद जीवंगळु तृतीयपृथ्विमेघेय नवपटलंगळोळु द्विचरमा- ष्टमपटलद संज्वलितेंद्रकबिलदोळुपुट्टुवर । केलंबरुगळु चरमसंप्रज्वलितेंद्रकबिलदोळं पुट्टुवरेंबी १० विशेषमरियल्पडुगुं । कापोतलेश्याजघन्यांशदिदं मृतराद जीवंगळु सीमंतं यांति घर्मेय प्रथम- पटलद सीमंतेंद्रकबिलदोळुपुट्टुवर ।

कापोतलेश्यामध्यमांशदिदं मृतराद जीवंगळु सीमंतेंद्रकदिदं कैळगण पन्नैरडु पटलंगळोळं मेघेय द्विचरमसंज्वलितेंद्रकबिलदिदं मेलण पटलंगळोळोळोळोळु द्वितीयपृथ्विवंशेय पन्नोडु पटल- गळोळं यथायोग्यमागि पुट्टुवर । १५

इति विशेषो ज्ञातव्यः । नीललेश्याजघन्यांशेन मृता जीवाः बालुकाप्रभानवपटलेषु चरमपटलस्य संप्रज्वलितेन्द्रके जायन्ते । नीललेश्यामध्यांशेन मृताः जीवाः तृतीयपृथ्वीनवमपटलस्य संप्रज्वलितेन्द्रकादधश्चतुर्थपृथ्वीपटलसप्तके पञ्चमपृथ्वीचतुर्थपटलस्यान्धेन्द्रकादुपरि यथायोग्यं जायन्ते ॥५२५॥

कापोतलेश्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः तृतीयपृथ्वीनवपटलेषु द्विचरमाष्टमपटलस्य संज्वलितेन्द्रके उत्पद्यन्ते । केचित् चरमसंप्रज्वलितेन्द्रकेऽपि विशेषोऽवगन्तव्यः । कापोतलेश्याजघन्यांशेन मृता जीवाः घर्माप्रथमपटलस्य २० सीमन्तेन्द्रके उत्पद्यन्ते । कापोतलेश्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सीमन्तेन्द्रकादधस्ततद्वादशपटलेषु मेघाया द्विचरमसंज्वलितेन्द्रकादुपरितनसप्तमपटलेषु द्वितीयपृथ्व्येकादशपटलेषु च यथायोग्यमुत्पद्यन्ते ॥५२६॥

होते हैं । नीललेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव तीसरी पृथ्वीके नौवें पटलके संप्रज्वलित इन्द्रक बिलेसे नीचे और चतुर्थ पृथ्वीके सातों पटलोंमें तथा पंचम पृथ्वीके चतुर्थ पटल सम्बन्धी आन्धेन्द्रकसे ऊपर यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥५२५॥ २५

कापोतलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव तीसरी पृथ्वीके नौ पटलोंमेंसे द्विचरम आठवें पटलके संज्वलित इन्द्रक बिलमें उत्पन्न होते हैं । कोई-कोई अन्तिम संप्रज्वलित इन्द्रकमें भी उत्पन्न होते हैं, यह विशेष जानना । कापोतलेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव घर्मा नामक प्रथम पृथ्वीके प्रथम पटल सम्बन्धी सीमन्त इन्द्रकमें उत्पन्न होते हैं । कापोतलेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव सीमन्त इन्द्रकसे नीचेके बारह पटलोंमें मेघा नामक तीसरी पृथ्वीके ३० द्विचरम संज्वलित इन्द्रकसे ऊपरके सात पटलोंमें और दूसरी पृथ्वीके ग्यारह पटलोंमें यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥५२६॥

१. म°लेगलेलरोलं । २. जघन्यांशेनापि मृता. । मु. । ३. ल. संप्रज्व° ।

किण्वचउक्काणं पुण मज्झंसमुदा हु भवणगादितिये ।

पुढवी-आउवणप्फइजीवेसु हवन्ति खलु जीवा ॥५२७॥

कृष्णचतुष्काणां पुनः मध्यमांशमृताः खलु भवनगादित्रये । पृथिव्यपवनस्पतिजीवेषु भवन्ति खलु जीवाः ॥

- ५ कृष्णनीलकापोततेजोलेश्याचतुष्टयद मध्यमांशगण्डिदं मृतराद कर्मभूमितिर्गन्मनुष्यहं भोगभूमितिर्गन्मनुष्यहं भवनत्रयदोळु भवन्ति परिणमन्ति पुट्टुवर । खलु यथायोग्यमाणि भोगभूमिजित्तिर्गन्मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळु तेजोलेश्यामध्यमांशदिदं मृतरादवर्गळु भवनत्रयदोळु पुट्टुवर कारणदिदं तेजोलेश्यासंभवमुमरियल्पडुगुं । तु मत्ते कृष्णादिचतुर्लेश्यामध्यमांशगण्डिदं मृतराद तिर्यग्गन्मनुष्यहं भवनवानज्योतिषिकहं सौधर्मेशानकल्पजलगळुमप्य मिथ्यादृष्टिजीवंगळु
- १० बादरपर्याप्तपृथ्वीकायिकजीवंगळोळं बादरपर्याप्तकायिकजीवंगळोळं पर्याप्तवनस्पति-कायिकजीवंगळोळं भवन्ति—परिणमन्ति पुट्टुवर । भवनत्रयादि जीवंगळपेक्षेइनिल्लियुं तेजोलेश्यासंभवमरियल्पडुगुं ।

किण्वतियाणं मज्झिमअसंमुदा तेउवाउवियलेसु ।

सुरणिरया सगलेस्सहि णरतिरियं जांति सगजोगं ॥५२८॥

- १५ कृष्णत्रयाणां मध्यमांशमृताः तेजोवायुविकलेषु । सुरनारकाः स्वलेश्याभिन्नैरतिरश्चो यांति स्वयोग्यं ॥

कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयंगळ मध्यमांशदिदं मृतराद तिर्यग्गन्मनुष्यहगळु तेजस्कायिकवायु-कायिकविकलत्रय असंज्ञिपंचेद्विषसाधारणवनस्पतिगळेबी जीवंगळोळु जांति जायन्ते पुट्टुवर ।

अत्र पुनःशब्दो विशेषप्ररूपकोऽस्ति । तेन कृष्णादित्रिलेश्यामध्यमांशमृताः कर्मभूमितिर्गन्मनुष्यमिथ्यादृष्टयः

- २० तेजोलेश्यामध्यमांशमृताः भोगभूमितिर्गन्मनुष्यमिथ्यादृष्टयश्च भवनत्रये खलु उत्पद्यन्ते इति ज्ञातव्यम् । तु पुनः, कृष्णादिचतुर्लेश्यामध्यमांशमृतातिर्गन्मनुष्यभवनत्रयसौधर्मेशानमिथ्यादृष्टयः बादरपर्याप्तपृथ्वीकायिकेषु पर्याप्त-वनस्पतिकायिकेषु चोत्पद्यन्ते । भवनत्रयाद्यपेक्षया अत्रापि तेजोलेश्यासंभवो बोद्धव्यः ॥५२७॥

कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयस्य मध्यमांशमृतातिर्गन्मनुष्याः तेजोवायुविकलत्रयासंज्ञिसाधारणवनस्पतिजीवेषु

- इस गाथामें 'पुनः' शब्द विशेष कथनका सूचक है । अतः कृष्ण आदि तीन लेश्याओं-
 २५ के मध्यम अंशसे मरे कर्मभूमिके मिथ्यादृष्टि तिर्यच और मनुष्य तथा तेजोलेश्याके मध्यम अंशसे मरे भोगभूमि या मिथ्यादृष्टि तिर्यच और मनुष्य भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी-देवोंमें उत्पन्न होते हैं, यह जानना । तथा कृष्ण आदि चार लेश्याके मध्यम अंशसे मरे तिर्यच, मनुष्य, भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान स्वर्गके देव, ये सब मिथ्यादृष्टि बादर पर्याप्तक पृथ्वीकायिक, जलकायिक और वनस्पतिकायिकोंमें उत्पन्न होते हैं । भवन-
 ३० त्रिककी अपेक्षा यहाँ भी तेजोलेश्या सम्भव है, यह जानना ॥५२७॥

कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्याओंके मध्यम अंशसे मरे तिर्यच और मनुष्य तेजः-

१. क पर्याप्तबादरप्रत्येकवन । २. म त्रयंगलेंबी । ३. ब. अत्रापि तेजोलेश्या भवनत्रयाद्यपेक्षयैव ।
 ४. ब वयम् ।

भवनत्रयं मोदलागि सर्वार्थसिद्धिजखसानमाद सुरहं घर्मे मोदलागि अवधिस्थानावसानमाद नारकहं स्वस्वलेश्यानुगमप्य नरत्वमुमं तिर्यक्त्वमुमं याति येरदुवरु । एलनेय गत्यधिकारं तद्वुं ॥

अनंतरं स्वाम्याधिकारं गाथासप्तकदिदं पेळदपं—

काऊ काऊ काऊ नीला नीला य नीलकिण्हा य ।

किण्हा य परमकिण्हा लेस्सा पढमादिपुढवीणं ॥५२९॥

कापोती कापोती तथा कापोती नीले नीला च नीलकृष्णे च । कृष्णा च परमकृष्णा लेस्याः प्रथमादिपृथ्वीनां ॥

घर्मादिसप्तपृथ्विगल नारकगो यथासंख्यमागि घर्मे य नारकगो कपोतलेस्याजघन्यमक्कुं । वंशेयनारकगो कपोतलेस्यामध्यमांशमक्कुं । मेघेय नारकगो कपोतलेस्योत्कृष्टमुं नीललेस्याजघन्यांशमुमक्कुं । अंजनेय नारकगो नीललेस्यामध्यमांशमक्कुं । अरिष्टेय नारकगो नीललेस्योत्कृष्टमुं कृष्णलेस्याजघन्यांशमुमक्कुं । मघविय नारकगो कृष्णलेस्यामध्यांशमक्कुं । माघविय नारकगो कृष्णलेस्योत्कृष्टांशमुमक्कुं ।

नरतिरियाणं ओघो इगिविगले तिणिण चउ असणिस्स ।

सणिण-अपुण्णमिच्छे सासणसम्मे वि असुहतिं ॥५३०॥

नरतिरश्चामोघ एकविकले तिस्रः चतस्रोऽसंज्ञिनः संज्ञयपूर्णमिथ्यादृष्टौ सासावनसम्पद्दृष्टावप्यशुभत्रयी ॥

नरतिरश्चामोघः नरतिर्यचरुगळगे प्रत्येकं सामान्योक्त षड्लेश्येगळप्पुववरोळु तिर्यचरोळु एकविकलेषु एकैन्द्रियजीवंगळगं विकलत्रयजीवंगळगं तिस्रः कृष्णाद्यशुभलेस्यात्रयमेयक्कुं ।

उत्पद्यन्ते । भवनत्रयादि सर्वार्थसिद्धयन्तमुराः घर्माद्यवधिस्थानान्तनारकाश्च स्वस्वलेश्यानुगं नरतिर्यक्त्वं यान्ति ॥५२८॥ इति गत्यधिकारः ॥ अथ स्वाम्याधिकारं गाथासप्तकेनाह—

प्रथमादिपृथ्वीनारकाणां च लेस्योच्यते—तत्र घर्मायां कापोतजघन्यांशः । वंशायां कापोतमध्यमांशः । मेघायां कापोतोत्कृष्टांशनीलजघन्यांशौ । अंजनायां नीलमध्यमांशः । अरिष्टायां नीलोत्कृष्टांशकृष्णजघन्यांशौ । मघव्यां कृष्णमध्यमांशः । माघव्यां कृष्णोत्कृष्टांशः ॥५२९॥

नरतिरश्चां प्रत्येकं ओघः सामान्योत्कृष्टषट्लेश्याः स्युः । तत्र एकेन्द्रियविकलत्रयजीवेषु तिस्रः कृष्णा-

कायिक, वायुकायिक, विकलत्रय, असंज्ञिपंचेन्द्रिय और साधारण वनस्पति जीवोंमें उत्पन्न होते हैं । भवनत्रिकसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त देव और घर्मा पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथ्वी तकके नारकी अपनी-अपनी लेस्याके अनुसार मनुष्य और तिर्यच होते हैं ॥५२८॥

गतिअधिकार समाप्त हुआ ।

आगे सात गाथाओंसे स्वामी अधिकार कहते हैं—

प्रथम पृथ्वी आदिके नारकियोंको लेस्या कहते हैं—घर्मा में कपोतलेस्याका जघन्य अंश है । वंश में कपोतका मध्यम अंश है । मेघ में कपोतका उत्कृष्ट अंश और नीलका जघन्य अंश है । अंजना में नीलका मध्यम अंश है । अरिष्टा में नीलका उत्कृष्ट अंश और कृष्णका जघन्य अंश है । मघवी में कृष्णका मध्यम अंश है । माघवी में कृष्णका उत्कृष्ट अंश है ॥५२९॥

मनुष्यों और तिर्यचों में—से प्रत्येकमें 'ओघ' अर्थात् सामान्यसे छहों लेस्या होती हैं ।

चतस्रोऽसंज्ञिनः असंज्ञिपंचैन्द्रियपर्यापजीवंगे कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयमुं तेजोलेश्येयुमक्कुमेकं दाडा
असंज्ञिजीवं कपोतलेश्येयिदं मृतनागि धमे'योऽपुटदुगुं । तेजोलेश्येयिदं मृतनागि भवनव्यंतरदेवगति-
द्वयोऽपुटदुगुमशुभलेश्यात्रयदिदं मृतनागि नरतिर्यग्गतिद्वयोऽपुटदुवनपुदरिदं । संशयपूर्ण-
मिथ्यादृष्टौ संज्ञिपंचैन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तकनोऽं मनुष्यलब्ध्यपर्याप्तकनोऽं अपि शब्दविदमसंज्ञिपंचैन्द्रिय-
लब्ध्यपर्याप्तकनोऽं सासादनसम्यग्दृष्टौ निवृत्यपर्याप्तकसासादननोलमासासादननु ।

['गिरयं सासनसम्मो ण गच्छदित्ति य ण तस्स गिरयाणू । एदु,
"णहि सासादणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे ॥" एदितु]

लब्ध्यपर्याप्तकरोऽं साधारणजीवंगलोऽं नारकरोऽं सूक्ष्मजीवंगलोऽं तेजस्कायिकंग-
लोऽं वातकायिकंगलोऽं संभविसनपुदरिदं भवनत्रयापर्याप्तकरोऽं शेषतिर्यग्मनुष्यरोऽं
संभविसुगुमा निवृत्यपर्याप्तकसासादननोऽं अशुभत्रयो कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयमेयकुं । तिर्यग्-
१० मनुष्योपशमसम्यग्दृष्टिगत् तत्कालाम्पंतररोऽं सुष्ठु संकिलष्टरादोडमवर्गलोऽं देशसंयतरोऽं तं
कृष्णनोलकपोतलेश्यात्रयंगलागवेदितु तद्विराधकसासादननोऽं पर्याप्तविषयदोऽं अशुभलेश्यात्रय-
मेयक्कुमेदरिदु ।

भोगापुष्पगसम्मे काउस्स जहणियं हवे णियमा ।

सम्मे वा मिच्छे वा पज्जत्ते तिण्णि सुहलेस्सा ॥५३१॥

१५ भोगापूर्णसम्यग्दृष्टौ कापोतस्य जघन्यं भवेन्नियमात् । सम्यग्दृष्टौ वा मिथ्यादृष्टौ वा
पर्याप्ते तिस्रः शुभलेश्याः ॥

अशुभलेश्या एव । असंज्ञिपर्याप्तस्य तत्रयं तेजोलेस्या च, कुतः ? तस्य कपोतमृतस्य घर्मायां तेजोमृतस्य
भवनव्यन्तरयोरशुभत्रयमृतस्य संज्ञिनरतिर्यग्गत्योश्च उत्पादात् । संज्ञिलब्ध्यपर्याप्तकतिर्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टौ
अपिशब्दादसंज्ञिलब्ध्यपर्याप्तके तिर्यग्मनुष्यभवनत्रयनिवृत्यपर्याप्तकसासादने च कृष्णाद्यशुभत्रयमेव । तिर्यग्मनुष्यो-
२० पशमसम्यग्दृष्टौनां सम्यक्त्वकालाम्पन्तरं सुष्ठु संकलेशेऽपि देशसंयतवत् तत्रयं नास्ति तथापि तद्विराधकसासा-
दनापर्याप्तानामस्तीति ज्ञातव्यम् ॥५३०॥

उनमें-से एकेन्द्रिय और विकलत्रय जीवोंमें कृष्णादि तीन अशुभ लेश्या ही होती हैं । असंज्ञी
पंचेन्द्रिय पर्याप्तके कृष्णादि तीन और तेजोलेस्या होती है । क्योंकि यदि वह कापोतलेश्यासे
मरता है, तो घर्मा नरकमें उत्पन्न होता है । तेजोलेस्यासे मरता है, तो भवनवासी और
२५ व्यन्तरोंमें उत्पन्न होता है । और यदि तीन अशुभ लेश्याओंसे मरता है, तो मनुष्यगति, तिर्यच
गतिमें उत्पन्न होता है । संज्ञी लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यच और मनुष्य मिथ्यादृष्टिमें 'अपि' शब्दसे
असंज्ञी लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यचमें तथा सासादन गुणस्थानवर्ती निवृत्यपर्याप्त तिर्यच, मनुष्य
और भवनत्रिकमें कृष्णादि तीन अशुभलेश्या ही होती हैं । उपशम सम्यग्दृष्टि तिर्यच और
मनुष्योंके सम्यक्त्वकालके भीतर अतिसंकलेशमें भी देशसंयतकी तरह तीन अशुभ लेश्या नहीं
३० होती है । तथापि उपशम सम्यक्त्वके विराधक सासादन सम्यग्दृष्टिके अपर्याप्त अवस्थामें
अशुभ लेश्या होती है ॥५३०॥

१. म प्रती कोष्ठान्तर्गतपाठो नास्ति ।

निर्वृत्यपर्याप्तकनप्प भोगभूमिजसम्यग्दृष्टियोऽनु कापोतस्य जघन्यं कापोतलेश्याजघन्यांश-
मक्कुमेकेदोडे कर्मभूमिजरप्प नरतिर्य्यचरु प्राग्बद्धायुष्यरु पश्चात् क्षायिकसम्यक्त्वमनागलु
वेदकसम्यक्त्वमनागलु स्वीकरिसि तदत्यजनदिदं तत्रोत्पत्तिसंभवमपुर्दारिदं तद्योग्यसंकलेशपरि-
णामपरिणतरे बुदत्थं ।

आ भोगभूमियोऽनु पर्याप्तियिदं मेले सम्यग्दृष्टियोऽनु मेण्मिथ्यादृष्टियोऽनु मेणु शुभलेश्या-
त्रयमेयक्कुं ।

अयदोत्तिछलेस्साओ सुहतियलेस्सा हु देसविरदतिथे ।

तत्तो सुक्का लेस्सा अजोगिठाणं अलेस्सं तु ॥५३२॥

असंयतपर्यन्तं षड्लेश्याः शुभत्रयलेश्याः खलु देशविरतत्रये ततः शुक्ललेश्याऽयोगिस्थान-
मलेश्यं तु ।

असंयतपर्यन्तं दोलुं, नाल्कुं गुणस्थानंगळोळां लेश्येगळप्पुवु । देशविरतादित्रयदोऽनु शुभ- १०
लेश्यात्रयमक्कुं । ततः मेले सयोगकेवलिपर्यन्तमाहं गुणस्थानंगळोऽनु शुक्ललेश्येयो देयक्कुं । अयोगि-
गुणस्थानं लेश्यारहितमक्कुमेकेदोडे योगकषायरहितमपुर्दारिदं ।

णट्टकसाये लेस्सा उच्चदि सा भूदपूव्वगदिणाया ।

अहवा जोगपउत्ती सुक्खोत्ति तहिं हवे लेस्सा ॥५३३॥

नष्टकषाये लेश्या उच्यते सा भूतपूर्वगतिन्यायात् । अथवा योगप्रवृत्तिर्मुख्येति तस्मिन्भ- १५
वेलेलेश्या ।

भोगभूमौ निर्वृत्यपर्याप्तकसम्यग्दृष्टौ कपोतलेश्याजघन्यांशो भवति । कुतः ? कर्मभूमिनरतिरश्चां
प्राग्बद्धायुषां क्षायिकसम्यक्त्वे वा वेदकसम्यक्त्वे वा स्वीकृते तदन्यजघन्येन तत्रोत्पत्तिसंभवात्—तद्योग्यसंकलेश-
परिणामपरिणता इत्यर्थः । तस्यां पर्याप्तिरूपरि सम्यग्दृष्टौ मिथ्यादृष्टौ वा शुभलेश्यात्रयमेव ॥५३१॥

असंयतान्तचतुर्गुणस्थानेषु षड्लेश्याः खलु । देशविरतादित्रये शुभलेश्यात्रयमेव । ततः उपरि २०
सयोगपर्यन्तं षड्गुणस्थानेषु एका शुक्ललेश्यैव । अयोगिगुणस्थानं अलेश्यं लेश्यारहितं तत्र योगकषाययोरभा-
वात् ॥५३२॥

भोगभूमिमें निर्वृत्यपर्याप्तक सम्यग्दृष्टिमें कापोतलेश्याका जघन्य अंश होता है ।
क्योंकि जिस कर्मभूमिया तिर्यच अथवा मनुष्यने पहले तिर्यच या मनुष्य आयुका बन्ध
किया, पीछे क्षायिक सम्यक्त्व या वेदक सम्यक्त्वको स्वीकार करके मरा, तो उसकी उत्पत्ति २५
वहाँ कापोतलेश्याके जघन्य अंशसे होती है । अर्थात् उसके योग्य संकलेश परिणाम होते हैं ।
पर्याप्त होनेपर भोगभूमिमें सम्यग्दृष्टि हो अथवा मिथ्यादृष्टि, तीन शुभ लेश्या ही
होती हैं ॥५३१॥

असंयत पर्यन्त चार गुणस्थानोंमें छहों लेश्या होती हैं । देशविरत आदि तीन गुण-
स्थानोंमें तीन शुभ लेश्या ही होती हैं । उससे ऊपर सयोगकेवली पर्यन्त छह गुणस्थानोंमें ३०
एक शुक्ललेश्या ही होती है । अयोगि गुणस्थानमें लेश्या नहीं होती, क्योंकि वहाँ योग और
कषायका अभाव है ॥५३२॥

१. ब. 'जनेन । 'तदत्यजन'—कर्णाटवृत्ती ।

उपशान्तकषायादिगुणस्थानत्रयदोळ कषायोदयरहितमागुत्तिरलुनवरोळ पेळलपट्ट आवुदो'दु
लेश्येयदु । तु मर्त्त भूतपूर्वगतिन्यायात् उपशान्तकषायवीतरागछन्नस्थनोळं क्षीणकषायवीतरागछ-
न्नस्थनोळं सयोगिकेवलजिननोळं भूतपूर्वगतिन्यायदिदमेयकुमथवा योगप्रवृत्तिर्मुल्येति
योगप्रवृत्तिलेश्या ये'दितु योगप्रवृत्तिप्रधानत्वदिदं तस्मिन्भवे लेश्यातदकषायरोळमितु
५ लेश्यासंभवमक्कुं ।

तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य चोद्दसण्हं लेस्सा भवणादिदेवानं ॥५३४॥

त्रयाणां द्वयोर्द्वयोः, षण्णां द्वयोश्च त्रयोदशानां च इतश्चतुर्दशानां लेश्या भावनादिदेवानां ।

तेऊ तेऊ तह तेऊपम्मा पम्मा य पम्मसुक्का य ।

१० सुका य परमसुका भवणतिया पुण्णगे असुहा ॥५३५॥

तेजस्तेजस्तथा तेजःपद्मे पद्मा च पद्मशुक्ले च । शुक्ला च परमशुक्ला भवनत्रया पूर्णके
अशुभाः ।

भवनत्रयद भवनादित्रिधामरग्गी पर्याप्तापेक्षेयि तेजोलेश्याजघन्यमक्कुं । सौधर्मेशानद्वयद
वैमानिकग्गे तेजोलेश्यामध्यमांशमक्कुं । सनत्कुमारमाहेन्द्रद्वयद कल्पजग्गे तेजोलेश्योत्कृष्टांशं
१५ पद्मलेश्याजघन्यमुमक्कुं । ब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतवकापिष्ठशुकमहाशुक्रंगळे बारुकल्पंगळ कल्पजग्गे पद्म-
लेश्यामध्यमांशमक्कुं । शतारसहस्रारकल्पद्वयद वैमानिकग्गे पद्मलेश्योत्कृष्टं शुक्ललेश्याजघन्य-
मुमक्कुं । आनतप्राणत आरणाच्युतंगळं नवप्रैवेयकंगळुर्म'दितु पदिमूरर सुरग्गे शुक्ललेश्यामध्य-
मांशमक्कुमिल्लिदं मेले अनुदिशानुत्तरविमानंगळपदिनाल्कर कल्पातीतजग्गे शुक्ललेश्योत्कृष्टांश-

उपशान्तकषायादिनष्टकषायगुणस्थानत्रये कषायोदयाभावेऽपि या लेश्या उच्यते सा भूतपूर्वगतिन्या-
२० यादेव । अथवा योगप्रवृत्तिलेश्येति योगप्रवृत्तिप्राधान्येन तत्र लेश्या भवति ॥५३३॥

भवनत्रयादिदेवानां लेश्योच्यते । तत्र पर्याप्तापेक्षया भवनत्रयस्य तेजोवर्णमांशः । सौधर्मेशानयोः
तेजोमध्यमांशः । सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः तेजोत्कृष्टांशपञ्चजघन्यांशौ । ब्रह्मब्रह्मोत्तरादिषट्कस्य पद्ममध्यमांशः ।
शतारसहस्रारयोः पद्मोत्कृष्टांशशुक्लजघन्यांशौ । आनतादिचतुर्णां नवप्रैवेयकाणां च शुक्लमध्यमांशः । अत उपरि

उपशान्त कषाय आदि तीन गुणस्थानोंमें यद्यपि कषायका उदय नहीं है और बारहवें-
२५ तेरहवेंमें तो कषाय नष्ट ही हो गयी है । फिर भी वहाँ जो लेश्या कही जाती है, वह भूतपूर्व
गतिन्यायसे ही कही जाती है । अथवा योगकी प्रवृत्तिको लेश्या कहते हैं और योगकी
प्रवृत्तिकी प्रधानता है, इसलिये वहाँ लेश्या है ॥५३३॥

भवनत्रय आदि देवोंके लेश्या कहते हैं । पर्याप्तकी अपेक्षा भवनवासी, व्यन्तर और
ज्योतिषी देवोंके तेजोलेश्याका जघन्य अंश है । सौधर्म-ऐशानमें तेजोलेश्याका मध्यम अंश
३० है । सानत्कुमार-माहेन्द्रमें तेजोलेश्याका उत्कृष्ट अंश और पद्मलेश्याका जघन्य अंश है ।
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर आदि छह स्वर्गोंमें पद्मलेश्याका मध्यम अंश है । शतार-सहस्रारमें पद्मका
उत्कृष्ट अंश और शुक्लका जघन्य अंश है । आनत आदि चार स्वर्गोंमें और नौ प्रैवेयकोंमें
शुक्लका मध्यम अंश है । उससे ऊपर अनुदिश और अनुत्तर सम्बन्धी चौदह विमानोंमें

मवकुं । भवनत्रयद निर्वृत्यपर्याप्तकर्मा अशुभलेश्यात्रयमेवकुमिदरिदमे शेषवैमानिकनिर्वृत्यपर्याप्त-
कर्मा पर्याप्तकर्मा तंतम्म लेश्यगलेयपुवेदु सूचितमरियत्पडुगुं । एतनेय स्वाम्यधिकारं तीदुदुदु ।
अनंतरं साधनाधिकारमनो दे गाथासूत्रादिदं पेळदपं ।

वण्णोदयसंपादित शरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।

मोहोदयखओवसमोवसमरखयजजीवफंदणं भावो ॥५३६॥

५

वर्णोदयसंपादितशरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या । मोहोदयक्षयोपशमोपशमक्षयजीवस्पंदनं
भावः ॥

वर्णनामकर्मोदयसंपादितसंजनितशरीरवर्णमदु द्रव्यलेश्येयवकुं । असंयतरोळु मोहोदयादिदं
देशविरतत्रयदोळु मोहक्षयोपशमदिदं उपशमकरोळु मोहोपशमदिदं क्षपकरोळु मोहक्षयादिदं
संजनितसंस्कारं जीवस्पंदमेंदु जेयमवकुमदु भावलेश्येयवकु । मा जीवनपरिणामप्रदेशस्पंदनदिदं १०
भावलेश्ये माडलपट्टुदं बुदत्थं । अदु कारणदिदं योगकषायंगीळिदं भावलेश्ये एदिदु पेळलपट्टु-
दवकुं । ओ भत्तनेय साधनाधिकारं तिदुदुदु ॥

अनंतरं संख्याधिकारमं गाथा षट्कदिदं पेळदपं :—

अनुदिशानुत्तरचतुर्दशविमानानां शुक्लोत्कृष्टांशो भवति । भवनत्रयदेवाः अपर्याप्तकाले अशुभत्रिलेश्या एव, अनेन
वैमानिकाः अपर्याप्तकाले स्वस्त्रिलेश्या एवेति सूचितं ज्ञातव्यम् ॥५३४-५३५॥ इति स्वाम्यधिकारोऽष्टमः ॥ १५
अथ साधनाधिकारमाह—

वर्णनामकर्मोदयेन संपादितः संजनितः शरीरवर्णो द्रव्यलेश्या भवति । असंयतान्तगुणस्थानचतुष्के
मोहस्य उदयेन, देशविरतत्रये क्षयोपशमेन, उपशमके उपशमेन, क्षपके क्षयेण च संजनितसंस्कारो जीवस्पन्दन-
संज्ञः स भावलेश्या जीवपरिणामप्रदेशस्पन्दनेन कृतेत्यर्थः । तेन कारणेन योगकषायाम्यां भावलेश्येत्युक्तम् ॥५३६॥
इति साधनाधिकारो नवमः ॥ अथ संख्याधिकारं गाथाषट्केनाह—

२०

शुक्ललेश्याका उत्कृष्ट अंश होता है । भवनत्रिकके देव अपर्याप्त अवस्थामें तीन अशुभ
लेश्यावाले ही होते हैं । इससे यह सूचित किया जानना कि वैमानिक देवोंके अपर्याप्तकालमें
अपनी-अपनी लेश्या ही होती है ॥५३४-५३५॥

आठवाँ स्वामिअधिकार समाप्त हुआ ।

अब साधनाधिकार कहते हैं—

२५

वर्णनाम कर्मके उदयसे उत्पन्न हुआ शरीरका वर्ण द्रव्यलेश्या है । असंयत पर्यन्त
चार गुणस्थानोंमें मोहके उदयसे, देशविरत आदि तीन गुणस्थानोंमें मोहनीयके क्षयोपशम-
से, उपशम श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें मोहनीयके उपशमसे, क्षपक श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें
मोहनीयके क्षयसे जो संस्कार उत्पन्न होता है, जिसे जीवका स्पन्द कहते हैं, वह भावलेश्या
है । अर्थात् जीवके परिणामों और प्रदेशोंका चंचल होना भावलेश्या है । परिणामोंका ३०
चंचल होना कषाय है और प्रदेशोंका चंचल होना योग है । इसीसे योग और कषायसे
भावलेश्या कही है ॥५३६॥

नौवाँ साधनाधिकार समाप्त हुआ ।

आगे छह गाथाओंसे संख्याअधिकार कहते हैं—

किण्हादिरासिमावलिअसंखभागेण भजिय पविभत्ते ।

हीणकमा कालं वा अस्मिन् दत्त्वा तु भजिदत्त्वा ॥५३७॥

कृष्णादिराशिमावृत्यसंख्यातभागेन भक्त्वा प्रविभक्ते । होनक्रमात् कालं वा आश्रित्य द्व्य्याणि
तु भक्तव्यानि ॥

५ कृष्णादिराशि कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयजीवसामान्यराशियं शुभलेश्यात्रयजीवराशिहीन-
संसारिराशियं १३-१ आवल्यसंख्यातभागेन भक्त्वा आवल्यसंख्यातैकभागदिदं भागिसि १३-१

बहुभागम् १३-८ प्रविभक्ते मूहं लेख्येगळगे समानमागि मूररिदं भागिसिकोट्टु १३-८।१३-८।१३-८
९ १३ १३ १३

शेषैकभागं मत्तमावृत्यसंख्यातदिदं खंडिसि बहुभागं कृष्णलेश्येण कोटदु शेषैकभागं
मत्तमावृत्यसंख्यातदिदं भागिसि बह्वभागं नीललेश्येण कोटदु शेषैकभागं कपोतलेश्येण कोट्रोडा

१० मूढ राशिगणितिकुं	१३-८ ९।३ १३-८ ९।९	१३-८ ९।३ १३-८ ९।९	१३-८ ९।३ १३-८ ९।९	११ मूढ राशिगणितिकुं समच्छेदं माडिदोडितिकुं

कृष्ण १३-८६४ नील १३-६७२ कपोत १३-६५१ ई मूरु राशिगण्डु किञ्चिदूनत्रिभागं-
९।९।९।३ ९।९।९।३ ९।९।९।३

गलागुत्तं किञ्चिद्गुणक्रममप्युक्तं कृ १३-३- नो १३-३- क १३-३- इतु कृष्णलेश्याद्यशुभलेश्या-

अथजीवंगळ्यो द्रव्यतः प्रमाणं पेळल्पट्टुदु । मत्तं वा अथवा कालं वा आश्रित्य द्रव्याणि भक्तव्यानि

१५ कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयजीवसामान्यराशि शुभलेश्यात्रयजीवराशिहीनसंसारिराशिमात्रं १३- आवृत्य-
संख्यातेन भवत्वा १३-बहुभागः १३- ८ त्रिभिर्भक्तः त्रिस्थाने देयः- १३- ८, १३- ८, १३- ८, शेषैकभागे
९ ९ ९ १३, ९ १३, ९ १३,

पुनरावल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागः कृष्णलेश्यायां देयः । शेषैकभागे पुनरावल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागो नील-
लेश्यायां देयः । शेषैकभागे कपोतलेश्यायां दत्ते त्रयो राशयः समी—१३-८, १३-८, १३-८,

१ १ ३, १ १ ३, १ १ ३,
१३-८, १३-८। १३-१
१ १ १। १ १ १ १ १। १११

समन्वयेन मिलिताः—क १३-८६४, नी १३-१६७२, क १३-१६५१, किञ्चिदूनक्रमा
९१९१९१३, ९१९१९३, ९१९१९१३,

भवन्ति- कृ १३- । नी १३- । क १३- इति कृष्णादित्रिलेश्याजीवानां द्रव्यतः प्रमाणमुक्तम् । पुनः-वा अथवा
 । ॥
 ३- ३- ३-

२० संसारी जीवराशिमें-से तीन शुभलेश्यावाले जीवोंकी राशि घटानेपर जो शेष रहे, उतना कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्यावाले जीवोंकी सामान्यराशि होती है। उस राशिको आवलीके असंख्यातवें भागसे भाजित करके बहुभागको तीन समान भागोंमें विभाजित करके एक-एक भाग तीनों लेश्यावालोंको दे दो। शेष एक भागमें पुनः आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग कृष्णलेश्याको दो। शेष एक भागमें पुनः आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग नीललेश्याको दो। शेष एक भाग कपोतलेश्याको दो। अपने-अपने

२५

कालसंचयदिदं द्रव्यतः प्रमाणमरियत्पडुगुमदेतेदोडे ई मूरमशुभलेश्येगळ कालं कूडि सामान्य-
दिदमंतर्मुहूर्तमात्रमवकु ॥ २१ ॥ मिदनावल्यसंख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं समभागं माडि
मूररिदं भागिसि कृष्णनीलकपोतगळमे कोट्टु मिक्केक कालभागमं मतमावल्यसंख्यातदिदं
भागिसि बहुभागमं कृष्णलेश्येगे कोट्टु शेषैकभागमं मतमावल्यसंख्यातभागदिदं खंडिसि
बहुभागमं नीललेश्येगे कोट्टु शेषैकभागमं कपोतलेश्येगे कोट्टोडा मूरं कालगळितिप्पुवु । ५

कृ	नी	कपोत	प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड इत्यादियि
२१।८६४	२१६७२	२१६५१	
९।९।९।३	९।९।९।३	९।९।९।३	

मूरं राशिगळं कूडिदोडिदु २।१।२।८७ इदर भाज्यभागहारंगळं सरियेदपत्तिसिदोडिदु २१ इंतु
९।९।९।३

त्रैराशिकं माडत्पडुगुं प्र २१ फ १३-। इ २१८६४ बंद लब्धं कृष्णलेश्याजीवंगळ प्रमाणमवकुं
९।९।९।३

१३-८६४ इदनपवत्तिसिदोडे किचिदूनत्रिभागमवकुं कृ १३- नी १३-कपो १३ इंतु काल-
९।९।९।३ ३- ३ ३

कालमाश्रित्य द्रव्याणि भक्तव्यानि । तद्यथा—कृष्णनीलकपोतलेश्याः संस्थाप्य तासां कालो मिलित्वापि १०
अन्तर्मुहूर्तः २१ आवल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागः त्रिभिर्भवत्वा प्रत्येकं देयः । शेषैकभागे पुनरावल्यसंख्यातेन
भक्ते बहुभागः कृष्णलेश्यायां देयः । शेषैकभागे पुनः आवल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागो नीललेश्यायां देयः ।
शेषैकभागे कपोतलेश्यायां दत्ते त्रयो राशय एव— कृ २१।८६४, नी २१।६७२,
९।९।९।३, ९।९।९।३,

क २१।६५१, एषां योगः २१ २१८७ अपवर्तितः २१। अधुना त्रैराशिकं प्र २१।फ १३-
९।९।९।३, ९।९।९।३

इ २१।८६४ लब्धं कृष्णलेश्याजीवप्रमाणं १३-८६४ अपवर्तिते किचिदूनत्रिभागो भवति एवं नील- १५
९।९।९।३ ९।९।९।३

समान भागोंमें इन भागोंको जोड़नेपर कृष्ण आदि लेश्यावाले जीवोंकी संख्या होती है ।
यह क्रमसे कुछ-कुछ कम होती है । इस प्रकार कृष्ण आदि तीन लेश्यावाले जीवोंका द्रव्यकी
अपेक्षा प्रमाण कहा । अथवा कालका आश्रय लेकर द्रव्योंका विभाग करना चाहिए । वह
इस प्रकार है—कृष्ण, नील और कापोतलेश्याको स्थापित करो । उनका काल मिलकर भी
अन्तर्मुहूर्त है । उस कालको आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभागको तीनसे २०
विभाजित करके प्रत्येक लेश्यामें एक-एक भाग दो । शेष एक भागमें पुनः आवलीके
असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग कृष्णलेश्यामें दो । पुनः शेष एक भागमें आवलीके
असंख्यातवें भागसे भाग दो । बहुभाग नीललेश्यामें दो । शेष एक भागकापोतलेश्याको दो ।
तीनोंको मिले दोनों भागोंको जोड़नेपर प्रत्येक लेश्याका अपना-अपना कालका प्रमाण होता
है । अब त्रैराशिक करो । तीनों लेश्याओंका सम्मिलित काल तो प्रमाण राशि । अशुभ लेश्या- २५
वाले जीवोंका प्रमाण कुछ कम संसारी जीवराशि मात्र फलराशि । कृष्णलेश्याके कालका
प्रमाण इच्छाराशि । फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके प्रमाणराशिसे भाग देनेपर लब्ध-
राशि प्रमाण कृष्णलेश्यावालोंकी राशि जानना । सो कुछ कम तीनका भाग अशुभ लेश्यावाले

संचयमनाश्रयिसि द्रव्यतः प्रमाणं पेठल्पदुदु ।

खेत्तादो असुहतिया अणंतलोगा कमेण परिहीणा ।

कालादोतीदादो अणंतगुणिदा कमा हीणा ॥५३८॥

क्षेत्रतोऽशुभत्रयाः अनंतलोकाः क्रमेण परिहीनाः । कालादतीतादनंतगुणाः क्रमाद्धीनाः ॥

५ क्षेत्रप्रमाणविदं अशुभत्रया जीवाः अशुभलेश्यात्रयद जीवंगळु अणंतलोगा अनंतलोक

प्रमितंगळुगुत्तं क्रमविदं परिहीनंगळुप्पुवु किञ्चिदूनक्रमंगळुप्पुवु क्षेत्र कृ = ख नी ख - क ख =
इल्लियुं त्रैराशिकं माडल्पडुगुं प्र = फ श १ । इ १३ लब्ध शला । ख । प्रमा श १ । फ = इ ख ।

३

लब्ध = व । कालादतीतात् कालप्रमाणविदं अशुभलेश्यात्रय जीवंगळु अतीतकालमं नोडलु अनंत-
गुणिताः अनंतगुणितंगळुगुत्तलं क्रमाद्धीनाः क्रमहीनंगळुप्पुवु । का । कृ । अ ख । नी अ ख - का
१० अ ख = इल्लियुं त्रैराशिकं माडल्पडुगुं । प्र अ । फ अ १ । इ १३ - लब्ध शलाका । ख । मत्तं
३ -

प्र श १ । फ अ । इ । श ख । लब्ध अ ख ।

कपोतयोरपि ज्ञातव्यम् । कृ १३- । नी १३- । क १३- । इति कालसंचयमाश्रित्य द्रव्यतः प्रमाणमुक्तम् ॥५३७॥

१- ३- ३-

क्षेत्रप्रमाणेन अशुभत्रिलेश्याजीवाः अनंतलोका अपि क्रमेण परिहीनाः किञ्चिदूनक्रमा भवन्ति ।
कृ = ख । नी = ख- । क = ख = । अत्र त्रैराशिकं प्र = फ श १ । इ १३- लब्धशलाकाः ख । पुनः प्र । श १ ।
३-

१५ फ = इ श ख । लब्ध = ख । कालप्रमाणेनाशुभत्रिलेश्या जीवा अतीतकालादनंतगुणिता अपि क्रमहीना
भवन्ति । का कृ अ ख । नी अ ख- । क अ ख = । अत्रापि त्रैराशिकं-प्र अ फ श । १ इ १३- लब्धशलाकाः
३-

ख । पुनः प्र श १ । फ अ । इ श ख । लब्ध अ ख ॥५३८॥

जीवोंके प्रमाणमें देनेपर जो लब्ध आवे, उतना है । इसी तरह नील और कापोतलेश्यावालोंका
प्रमाण लाना चाहिए । इस तरह कालकी अपेक्षा अशुभलेश्यावाले जीवोंका प्रमाण

२० कहा ॥५३७॥

क्षेत्रप्रमाणकी अपेक्षा तीन अशुभलेश्यावाले जीव अनंतलोक प्रमाण हैं किन्तु क्रमसे
कुछ-कुछ हीन हैं । यहाँ प्रमाणराशि लोक, फलराशि एक शलाका, इच्छा राशि अपने-अपने
जीवोंका प्रमाण । ऐसा करनेपर लब्धराशि मात्र अनन्त शलाका हुई । तथा प्रमाण एक
शलाका, फल एक लोक, इच्छा अनन्त शलाका । ऐसा करनेपर लब्धराशि अनन्त लोकमात्र

२५ कृष्णादि लेश्यावाले जीवोंका प्रमाण होता है । तथा काल प्रमाणसे तीन अशुभ लेश्यावाले
जीव अतीतकालके समयोंसे अनन्तगुणे हैं । किन्तु क्रमसे हीन हैं । यहाँ भी त्रैराशिक करना ।
प्रमाणराशि अतीतकाल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि अपने-अपने जीवोंका प्रमाण ।
ऐसा करनेपर लब्धराशिमात्र अनन्त शलाका हुई । फिर प्रमाण एक शलाका, फल एक अतीत
काल, इच्छा अनन्त शलाका । ऐसा करनेपर लब्धराशि अनन्त अतीतकाल प्रमाण कृष्णादि

३० लेश्यावाले जीव होते हैं ॥५३८॥

केवलणाणांतिमभागा भावादु किण्वतियजीवा ।
तेउतियासंखेज्जा संखासंखेज्जभागकमा ॥५३९॥

केवलज्ञानान्तैकभागाः भावात् कृष्णत्रयजीवाः । तेजस्त्रयोऽसंख्येयाः संख्यासंख्यातभाग-
क्रमाः ॥

भावप्रमाणदिदं कृष्णादित्रयलेश्याजीवंगळु प्रत्येकं केवलज्ञानान्तैकभागमात्रंगळुपुर्वता-
गुत्तलं किंचिदूनक्रमंगळ्येषु । भा । कृ । के । नी ख । क । के = इलियुं त्रैराशिकं माडल्पडुगुं
ख ख

प्र १३ - फ श १ । इ के । लब्ध श के मत्तं प्र के फ के । इ श १ लब्ध के । तेजोलेश्यादि-
३ - १३ - १३ - ख
३ ३ -

त्रयजीवंगळु द्रव्यप्रमाणदिदमसंख्यातंगळुपुर्वतागुत्तं संख्यातभागमुमसंख्यातभागक्रममुमपुवु ।

ते = ० ० १ । प ० ० । शु ० ।

जोइसियादो अहिया तिरिक्खसण्णिस्स संखभागो दु ।
सूइस्स अंगुलस्स य असंखभागं तु तेउतियं ॥५४०॥

ज्योतिषिकादधिकास्तिर्घ्यक्संज्ञितः संख्यभागस्तु । सूच्यंगुलस्य चासंख्यभागस्तु तेजस्त्रयः ॥

भावप्रमाणेन कृष्णादिशेषा जीवाः प्रत्येकं केवलज्ञानान्तैकभागमात्राः अपि किंचिदूनक्रमा भवन्ति ।
भा कृ के । नी के - । क के = । अत्रापि त्रैराशिकं प्र १३ - । फ श १ । इ के । लब्ध के अपर्वतिते ख । पुनः
ख ख ख ३ - १३ -
३ -

प्र श ख । फ के । इ श १ । लब्ध के । तेजोलेश्यादित्रयजीवाः द्रव्यप्रमाणेन असंख्याता अपि संख्यातासंख्यात-
ख
भागक्रमा भवन्ति । ते ० ० १ । प ० ० । शु ० ॥५३९॥

भावप्रमाणकी अपेक्षा प्रत्येक कृष्णादि लेश्यावाले जीव केवलज्ञानके अनन्तवें भाग-
मात्र होनेपर भी क्रमसे कुछ हीन होते हैं । यहाँ भी त्रैराशिक करना । प्रमाणराशि अपने-
अपने लेश्यावाले जीवोंका प्रमाण, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि केवलज्ञान । ऐसा
करनेपर लब्धराशिमात्र अनन्त प्रमाण हुआ । पुनः इसीको प्रमाणराशि, फलराशि एक
शलाका, इच्छाराशि केवलज्ञान करनेपर केवलज्ञानके अनन्तवें भाग मात्र कृष्णादि लेश्या-
वाले जीवोंका प्रमाण होता है । तेजोलेश्या आदि तीन शुभ लेश्यावाले जीवोंका प्रमाण २०
असंख्यात होनेपर भी तेजोलेश्यावालोंके संख्यातवें भाग पद्मलेश्यावाले और पद्मलेश्या-
वालोंके असंख्यातवें भाग शुक्ललेश्यावाले हैं ॥५३९॥

तेजोलेश्याजीवंगळु ज्योतिषिकजीवराशियं नोडलु साधिकमप्परदेतेदोडे ज्योतिषिकरं भवनवासिगळु व्यंतररं सौधम्मद्वयकल्पजरं संज्ञिपंचेंद्रियजीवंगळोळु केलवु जीवंगळु मनुष्यरोळु-
केलवु जीवंगळु एंदितारुप्रकारद जीवराशिगळं कूडिदोडे तेजोलेश्या जीवंगळुपुवलि ज्योतिषिकर
पण्णट्टिप्रमितप्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरप्रमितरप्पर ४। ६५ = भवनवासिगळु घनांगुलप्रथममूल-
५ गुणितजगच्छेणिमात्ररप्पर १-१। व्यंतररं त्रिशतयोजनभक्तजगत्प्रतरप्रमितरप्पर ४। ६५ = ८१ = १०
सौधम्मद्वयद कल्पजरं घनांगुलतृतीयमूलगुणितजगच्छेणिप्रमितरप्पर १-१॥ संज्ञिपंचेंद्रियतेजो-
लेश्याजीवंगळु :-

“जोइसियवाजजोणिणितिरिक्खपुरिसा य सण्णिणो जीवा ।
तत्तेउपम्मलेस्सा संखगुण्णा कमेणेदे ॥”

१० एंदितु पंचेंद्रियसंज्ञिजीवराशियं नोडलु संख्यातगुणहीनरप्पर ४। ६५ = १ १ १ १ १ मनुष्यरं
संख्यातरप्परितीयां राशिगळु कूडिदोडे ज्योतिषिकरं नोडलु साधिकमक्कु ३ १ विनु-
४। ६५ = १
क्षेत्रप्रमाणदिदं तेजोलेश्याजीवंगळुपेठेपट्टवु । पञ्चलेश्येय जीवंगळुमा तेजोलेश्याजीवंगळं नोडलु
संख्यातगुणहीनमागियुं संज्ञितेजोलेश्याजीवंगळं नोडलु संख्यातगुणहीनरप्परमा राशियोळु पञ्च-
लेश्येय कल्पजरं मनुष्यरं साधिकं माडिदोडे प्रतरासंख्येयभागमेयक्कु । संदृष्टि—

१५ तेजोलेश्याजीवाः ज्योतिषिकजीवराशितः साधिका भवन्ति । = = = १ । कथं ? पण्णट्टिप्रतराङ्गुल-
४। ६५ = १
भक्तजगत्प्रतरमात्रज्योतिषिक- = घनाङ्गुलप्रथममूलगुणितजगच्छेणिभावनाः-१ त्रिशतयोजन-
४। ६५ =
कृतिभक्तजगत्प्रतरमात्रव्यन्तराः = ० घनाङ्गुलतृतीयमूलगुणितजगच्छेणिमात्रसौधर्मद्वयजाः-
४। ६५ = ८१ । १ ०
३ पञ्चसंख्यातपण्णट्टिप्रतराङ्गुलभक्तजगत्प्रतरमात्रतादृक्संज्ञितिर्यंच = तादृशसंख्यातमनुष्या
४। ६५ = १११११
एतेषां मिलितत्वात् । पञ्चलेश्याजीवाः तेजोलेश्येभ्यः संख्यातगुणहीनत्वेऽपि संज्ञितिर्यक्तेजोलेश्येभ्योपि

२० तेजोलेश्यावाले जीव ज्योतिषी देवोंकी राशिसे कुछ अधिक होते हैं । इसका हेतु यह
है कि पैंसठ हजार पाँच सौ छत्तीस प्रतरांगुलका भाग जगत्प्रतरमें देनेसे जो लब्ध आवे,
उतने तो ज्योतिषी देव हैं । घनांगुलके प्रथम वर्गमूलसे गुणित जगत्प्रतराणि प्रमाण भवनवासी
देव हैं । तीन सौ योजनके वर्गका भाग जगत्प्रतरमें देनेसे जो लब्ध आवे, उतने व्यन्तर देव
हैं । घनांगुलके तृतीय वर्गमूलसे गुणित जगत्प्रतराणिमात्र सौधर्म-ऐशान स्वर्गके देव हैं ।
२५ पाँच बार संख्यातसे गुणित पण्णट्टि (६५५३६) प्रमाण प्रतरांगुलसे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण
तेजोलेश्यावाले संज्ञी तिर्यंच हैं । तथा संख्यात तेजोलेश्यावाले मनुष्य । इन सबको जोड़नेसे
जो प्रमाण हो, उतने तेजोलेश्यावाले जीव हैं । पञ्चलेश्यावाले जीव तेजोलेश्यावाले जीवोंसे

१. म^० रोलेल्लवु । २. ब. संख्याततादृग्मं । ३. ब. हीना अपि ।

॥

इंतु क्षेत्रप्रमाणदिदं पद्मलेश्येय जीवंगळु पेळत्पट्टु । शुक्ल-

४।६५ = १ १ १ १ १ १

लेश्याजीवंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रमप्यर २ सू । इंतु तेजोलेश्याविशुभलेश्याजीवंगळु

०

क्षेत्रप्रमाणदिदं पेळत्पट्टु ।

वेसदछप्पणंगुल कदिहिद पदरं तु जोहसियमाणं ।

तस्स य संखेज्जदिमं तिरिक्खसण्णीण परिमाणं ॥५४१॥

५

षट्पंचाशदधिकद्विशतांगुलकृतिहृतप्रतरस्तु ज्योतिष्काणां मानं । तस्य च संख्येयं तिर्य्यक्-
संज्ञिनां मानं ॥

इल्लि तेजोलेश्याजीवंगळु प्रमाणमं पद्मलेश्याजीवंगळु प्रमाणमं वेरगणनंतरसूत्रदोळपेळदुदं
विशदं माडल्वेडि ज्योतिष्कर प्रमाणुमं संज्ञिजीवंगळु प्रमाणमुमनी सूत्रदि पेळदपरल्लि ज्योतिष्क
प्रमाणमं षट्पंचाशदुत्तरद्विशतांगुलकृतिहृतजगत्प्रतरप्रमितमक्कु ।

१०

संज्ञिजीवंगळु प्रमाणमुमदर संख्येय भागमक्कु ॥ ४।६५ = ४।६५ = १

तेउदु असंखकप्पा पल्लासंखेज्जभागया सुक्का ।

ओहि असंखेज्जदिमा तेउतिया भावदो होंति ॥५४२॥

तेजोद्वयमसंख्यकल्पाः पत्यासंख्येयभागाः शुभलाः । अवधेरसंख्यभागास्तेजस्त्रयो भावतो
भवन्ति ॥

१५

संख्यातगुणहीना भवन्ति । पद्मलेश्यातिर्यग्रासौ स्वकल्पजमनुष्यैः साधिकमात्रत्वात्-

संदृष्टिः== ॥ शुक्ललेश्या जीवाः सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रा भवन्ति ।

४।६५ = १ १ १ १ १ १

२ सू इति तेजस्त्रयजीवाः क्षेत्रप्रमाणेनोक्ताः ॥५४०॥

० १

प्रागुक्तं तेजःपद्मलेश्याजीवप्रमाणं स्पष्टीकर्तुमाह—ज्योतिष्कप्रमाणं वेसदछप्पणङ्गुलकृतिभक्तजगत्प्रतर-
मात्रं = संज्ञितिर्य्यक्प्रमाणं च तत्संख्येयभागः = ॥५४१॥

२०

४।६५ = ४।६५ = १

संख्यातगुणा हीन होनेपर भी तेजोलेश्यावाले संज्ञी तिर्यचौसे भी संख्यातगुणा हीन होते हैं,
क्योंकि पद्मलेश्यावाले तिर्यचौकी राशिमें पद्मलेश्यावाले कल्पवासीदेव और मनुष्योंका प्रमाण
मिलनेसे पद्मलेश्यावाले जीवोंका प्रमाण होता है । शुक्ललेश्यावाले जीव सूच्यंगुलके
असंख्यातवें भागमात्र होते हैं । इस प्रकार क्षेत्र प्रमाणसे तीन शुभलेश्यावाले जीवोंका
प्रमाण कहा ॥५४०॥

२५

पहले जो तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावाले जीवोंका प्रमाण कहा, उसे स्पष्ट करते हैं—
ज्योतिष्कदेवोंका प्रमाण दो सौ छप्पन अंगुलके वर्गसे अर्थात् पण्णही प्रमाण प्रतरांगुलका
भाग जगत्प्रतरमें देनेसे जो प्रमाण आवे, उतना है और इनके संख्यातवें भाग संज्ञी तिर्यचौ-
का प्रमाण है ॥५४१॥

५ प्रत्येकमागुत्तमा मूह लेश्येगळ जीवंगळ संख्यातगुणहीनंगळुमसंख्यातगुणहीनंगळुमप्यु । ते ओ(१)।

[illegible]

अनंतरं क्षेत्राधिकारमं पेळदपं :—

2

अथ क्षेत्राधिकारमाह—

इस प्रकार संख्याधिकार समाप्त हुआ। अब क्षेत्राधिकार कहते हैं—

www.jainelibrary.org

सद्गुणममुग्धादे उववादे सव्वलोक्यमसुहाणं ।

लोक्यसासंखेज्जदिभागं खेत्तं तु तेउतिये ॥५४३॥

स्वस्थाने समुद्धाते उपपादे सर्वलोकोऽशुभानां । लोकस्यासंख्येयभागं क्षेत्रं तु तेजस्त्रितये ॥

अशुभानां कृष्णनीलकापोताशुभलेश्यात्रयद स्वस्थानदोळं समुद्धातदोळं उपपाददोळमितु त्रिस्थानकदोळं क्षेत्रं सव्वलोकमेयं कुं ॥ तेजस्त्रितये तेजःपद्मशुक्लशुभलेश्यात्रयद स्वस्थानदोळं समुद्धातदोळं उपपाददोळमितु त्रिस्थानदोळं तु मत्तं क्षेत्रं क्षेत्रवु लोकस्यासंख्येयभागः सव्वलोकव असंख्यातैकभागमवकुमितु सामान्यदिदमशुभलेश्येगळं शुभलेश्येगळं त्रिस्थानकदोळु क्षेत्रं पेळल्पदुदु । विशेषदिदं षड्लेश्येगळं दशस्थानगळोळु क्षेत्रं पेळल्पदुगुमतिल क्षेत्रमंबुदेनेदोडे विवक्षितलेश्याजीवगळं वर्तमानकालदोळु विवक्षितपदविशिष्टत्वादिसवष्टधाकाशप्रदेशगळं क्षेत्र- मंबुदर्थमंबुदिल्लि सामान्यदिदं स्वस्थानमं समुद्धातमुपपादमुमं दु त्रिपदगळोळु लेश्येगळं क्षेत्रं पेळल्पदुदु । विशेषदिदं दशस्थानगळोळु षड्लेश्येगळं क्षेत्रं पेळल्पदुगुमतिल स्वस्थानं सामान्य- दिदमोऽदं भेदिसिदोडे स्वस्थानस्वस्थानमं दुं विहारवत्स्वस्थानमं दुं द्विविधमवकुं ।

सामान्यदिदं समुद्धातमोदं भेदिसिदोडे वेदनासमुद्धातमं दुं कषायसमुद्धातमं दुं वैक्रियिकसमुद्धातमं दुं मारणान्तिकसमुद्धातमं दुं तेजःसमुद्धातमं दुमाहारकसमुद्धातमं दुं केवलिसमुद्धातमं दिनु समुद्धातं सप्तविधमवकुमुपपादमेकप्रकारमेयकुं ।

विवक्षितलेश्याजीववर्तमानकाले विवक्षितपदविशिष्टत्वेनावष्टधाकाशः क्षेत्रम् । तच्च स्वस्थाने समुद्धाते उपपादे च व्यशुभलेश्यानां सर्वलोकः ॥ तेजोलेश्यादित्रयस्य तु पुनः लोकस्यासंख्यातैकभागः सामान्येन भवति विशेषेण तु तत्र दशपदेषूच्यते । तत्र तावत् उत्पन्नपुरस्त्रामादिक्षेत्रं तत् स्वस्थानस्वस्थानं, विवक्षितपर्यायपरिणतेन परिभ्रमितुमुचितक्षेत्रं तद्विहारवत्स्वस्थानमिति स्वस्थानं द्वेधा । वेदनादिवशेन निजशरीराज्जीवप्रदेशानां बहिःप्रदेशे तत्प्रायोग्यविसर्पणं समुद्धातः । स च वेदनाकषायवैक्रियिकमारणान्तिकतैजसाहारककेवलिभेदात् सप्तधा । परित्यक्तपूर्वभवस्य उत्तरभवप्रथमसमये प्रवर्तनमुपपाद इति दशपदानि । तेषु स्वस्थानस्वस्थाने वेदनासमुद्धाते कषायसमुद्धाते मारणान्तिकसमुद्धाते उपपादे चेति पञ्चपदेषु कृष्णलेश्याजीवक्षेत्रं सर्वलोकः ॥

विवक्षित लेश्यावाले जीव वर्तमान कालमें विवक्षित स्वस्थानादि पदसे विशिष्ट होते हुए जितने आकाशमें पाये जाते हैं, उसका नाम क्षेत्र है । वह क्षेत्र स्वस्थान, समुद्धात और उपपादमें तीन अशुभ लेश्यावालोंका सर्वलोक है । तेजोलेश्या आदि तीनका क्षेत्र सामान्यसे लोकका असंख्यातवाँ भाग है । विशेष रूपसे दस स्थानोंमें कहते हैं—स्वस्थानके दो भेद हैं—स्वस्थानस्वस्थान और विहारवत्स्वस्थान । उत्पन्न होनेके ग्राम-नगर आदि क्षेत्रको स्वस्थानस्वस्थान कहते हैं । और विवक्षित पर्यायसे परिणत होते हुए परिभ्रमण करनेके उचित क्षेत्रको विहारवत्स्वस्थान कहते हैं । वेदना आदिके कारणसे अपने शरीरसे जीवके प्रदेशोंके उसके योग्य बाह्य प्रदेशमें फैलनेको समुद्धात कहते हैं । उसके सात भेद हैं—वेदना, कषाय, वैक्रियिक, मारणान्तिक, तैजस, आहारक और केवली समुद्धात । पूर्वभवको छोड़कर उत्तरभवके प्रथम समयमें प्रवर्तनको उपपाद कहते हैं । इस प्रकार ये दस स्थान हैं । उनमें-से स्वस्थानस्वस्थान, वेदना समुद्धात, कषाय समुद्धात, मारणान्तिक समुद्धात और उपपाद इन पाँच पदोंमें कृष्णलेश्यावाले जीवोंका क्षेत्र सर्वलोक है । अब

- इतु विशेषदिदं दशपदंगळपुवलि स्वस्थानस्वस्थानमे'बुदेने'दोडे उत्पन्नपुरग्रामादि क्षेत्रं स्वस्थानस्वस्थानमे'बुदु, विवक्षितपर्यायपरिणतिनंदं परिभ्रमिसत्कुचितक्षेत्रं विहारवत्स्वस्थानमे'-बुदु । वेदनादिवशदिदं निजशरीरदत्तणिदं जीवप्रदेशंगळमे बहिःप्रदेशदोळु तत्प्रायोग्यविसर्पणं समुद्धातमे'बुदु । परित्यक्तपूज्यंभवंगे उत्तरभवप्रथमसमयदोळु प्रवर्तनमनुपपादमे'बुदु । इतो
- ५ स्वस्थानस्वस्थानादिवशपदंगळोळु स्वस्थानस्वस्थानदोळं वेदनासमुद्धातदोळं कषायसमुद्धातदोळं मारणान्तिकसमुद्धातदोळमुपपाददोळमिती पंचपदंगळोळं कृष्णलेश्याजीवंगळमे क्षेत्रं सर्वलोक-मेयवकु=मीयधु पदंगळोळं मुन्नं संख्याधिकारदोळपेळद कृष्णलेश्याजीवंगळु सर्वसंसारिजीव-राशिय किंचिदूनत्रिभागंगळपुववं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागंगळु स्वस्थानस्वस्थानदोळपुवे'दु कोट्टु शेषैकभागमं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं वेदनासमुद्धातदोळपुवे'दु कोट्टु
- १० शेषैकभागमं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं कषायसमुद्धातपददोळित्तु शेषैकभागमं फलराशियं माडि एकनिगोदजीवन एकभवायुःस्थितिप्रमाणमुच्छ्वासाष्टादशैकभागमक्कुमदुवुमंत-र्महूर्तमेयवकु २१ ॥ मा कालमं प्रमाणराशियं माडिवो'दु समयमनिच्छाराशियं माडि प्र २१ । प १३-१ । इ स १ बंद लब्धमात्रं कृष्णलेश्याजीवंगळु उपपादपददोळपुवु १३
- ३-५ । ५ । ५ ३-५ । ५ । २१

तत्र कृष्णलेश्याजीवराशि १३- संख्यातेन भक्त्वा बहुभागः १३-४ स्वस्थानस्वस्थाने देयः । शेषैकभागस्य ३- ३- ५ ।

- १५ संख्यातभक्तबहुभागः १३- । ४ वेदनासमुद्धाते देयः । शेषैकभागस्य संख्यातभक्तबहुभागः -१३- । ४ कषा- ३-५ । ५ । ५ ३- ५ । ५ । ५ ।

यसमुद्धाते देयः । शेषैकभागं फलराशि कृत्वा, एकनिगोदभवायुरुच्छ्वासाष्टादशैकभागान्तर्मुहूर्तं २ १ प्रमाणराशि कृत्वा एल समयमिच्छाराशिकृत्वा प्र २ १ फ १३-१ । इ स १ लब्धमुपपादपदे देयं १३ एतस्मिन्नेव ३-५ । ५ । ५ ३-५ । ५ । ५ । २१

पुनः मारणान्तिकसमुद्धातकालान्तर्मुहूर्तं गुणिते प्र स १ । फ १३-१ । इ २ १ । लब्धं मूलराशिसंख्यात- ३-५ । ५ । ५ । २१

कभागं मारणान्तिकसमुद्धाते दद्यात् १३-पुनःकृष्णलेश्यात्रयं सपर्याप्तराशि ४ । ३- संख्यातेन भक्त्वा बहु- ३-१ ५-

- २० इन जीवोंका प्रमाण कहते हैं—कृष्णलेश्यावाले जीवोंकी पूर्वोक्त संख्यामें संख्यातसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थानवाले हैं । शेष एक भागमें संख्यातसे भाग देनेपर जो बहुभाग आवे, उतने वेदना समुद्धातवाले हैं । शेष एक भागमें पुनः संख्यातसे भाग देनेपर जो बहुभाग आवे, उतने कषाय समुद्धातवाले जीव हैं । शेष एक भागको फलराशि बनाकर और एक निगोदियाकी आयु उच्छ्वासके अठारहवें भाग प्रमाण अन्तर्मुहूर्त, उसके
- २५ समयोंको प्रमाणराशि बनाकर तथा एक समयको इच्छाराशि करके फलको इच्छाराशिसे गुणा कर उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेसे जितना प्रमाण आवे, उतने जीव उपपादवाले हैं । उपपादवाले जीवोंके इस प्रमाणको मारणान्तिक समुद्धातके काल अन्तर्मुहूर्तसे गुणा करने-पर जो प्रमाण आवे, उतने मूलराशिके संख्यातवें भाग जीव मारणान्तिक समुद्धातवाले हैं । ये जीव सर्वलोकमें पाये जाते हैं, इससे इनका क्षेत्र सर्वलोक है । पुनः कृष्णलेश्यावाले पर्याप्त-

मीयुपपादपद कृष्णलेश्याजीवंगळ संख्येयं फल राशियं माडि मारणांतिकसमुद्धातकालप्रमाणसंत-
र्महूत्समवनिच्छाराशियं माडि गुणियसुत्तं विरलु प्र स १ फ = १३ - इच्छे २७। लब्ध-
३-५। ५५। २१

राशियं मूलराशिय संख्यातैकभागमक्कुमा मारणांतिकसमुद्धातपददोळु कृष्णलेश्याजीवंगळपुवु
१३ मत्तं कृष्णलेश्यात्रसपर्याप्ताराशियं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं = ४ स्वस्थान-
३-१ ३-४। ५
५

स्वस्थानदोळित्तु शेषैकभागमं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं = ४ विहारवत्स्वस्थान- ५
३-४। ५। ५
५-

पददोळित्तु शेषैकभागमं ४। ३-५। ५ शेषपदंगळोळु यथायोग्यमागि दातव्यमप्युदु।
५

त्रसपर्याप्तमध्यमावगाहनजनितसंख्यातघनांगुलंगळं फलराशियंमाडि विहारवत्स्वस्थानकृष्णलेश्या-
जीवराशियनिच्छाराशियं माडि प्र १ फ ६१ इ = ४ लब्धराशियनपर्वतिसिदोडे संख्यात-
३-४। ५। ५

सूच्यंगुलगुणितजगत्प्रतरमात्रं विहारवत्स्वस्थानदोळु क्षेत्रमक्कुं। = सू २१। मत्तं पत्यासंख्यात-

= ४ भागः-४। ३-५। स्वस्थानस्वस्थानेस्तीति^३ देयः। शेषैकभागस्य संख्यातभक्तबहुभागो ४। ३-५। ५ विहार- १०
५-

= १ वत्स्वस्थाने देयः। शेषैकभागः ४। ३ ५। ५ शेषपदेषु यथायोग्यं पतितोस्तीति ज्ञातव्यः। त्रसपर्याप्तमध्य-
५-

मावगाहनं संख्यातघनाङ्गुलं फलराशिं कृत्वा विहारवत्स्वस्थानकृष्णलेश्याजीवराशिमिच्छां कृत्वा—

प्र १। फ ६ १। इ = ४

४। ३-५। ५ लब्धमपर्वतितं संख्यातसूच्यङ्गुलगुणितजगत्प्रतरो विहारवत्स्वस्थाने क्षेत्रं
५-

त्रस जीवोंके प्रमाणको संख्यातसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थानवाले जीव
हैं। शेष एक भागमें संख्यातका भाग देकर बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थानवाले जीव १५
हैं। शेष एक भाग रहा सो शेष स्थानोंमें यथायोग्य जानना। त्रसपर्याप्त जीवोंकी मध्यम
अवगाहनाके अनेक प्रकार हैं। उसे बराबर करनेपर एक त्रसपर्याप्त जीवकी मध्यम अव-
गाहना संख्यात घनांगुल है। उसे फलराशि करके और विहारवत्स्वस्थान की अपेक्षा कृष्ण-
लेश्यावाले जीवोंकी राशिको इच्छाराशि करो। तथा एक जीवको प्रमाणराशि करो। फलसे
इच्छाको गुणा करके प्रमाण राशिका भाग देनेपर संख्यात सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर २०
प्रमाण विहारवत्स्वस्थानका क्षेत्र आता है।

१. म^० भागसंख्यात पदभाग^०। २. म^० व्यंगलप्युदु। ३. व. ^०ति ज्ञातव्यः।

क्षे	स्वस्थान स्वस्थान	विहार	वेदना- समुद्घात	कषाय समुद्घात	वैक्रियिक समुद्घात	मारणांति समुद्घात	तेज	आ के	उपपाद	सामान्यलोक=
कृ	॥१३-४॥ ३-५	॥४१६७॥ ४१५५ ५-	॥१३-४॥ ३-५५	॥१३-४॥ ३-५५५	-६पा६७ ०	॥१३-॥ ३-७	०	०	३-२७।७	अधोलोक=४ ७
नी	॥१३-४॥ ३ ५	॥४१६७॥ ३४।५५ ५-	॥१३-४॥ ३।५।५	॥१३-४॥ ३-५५५	-६पा६७ ०	॥३-॥ ३ ७	०	०	३२७।७	ऊर्ध्वलोक=३ ७
क	॥१३-४॥ ३-५	॥४१६७॥ ३४५५ ५-	॥१३-४॥ ३।५५	॥१३-४॥ ३-५५५	-६पा६७ ०	॥१३-॥ ३ ७	०	०	३२७।७	तिर्यग्लोक=१३ ४९
										मनुष्यलोक

मत्तं सामान्यलोकं अधोलोकं मुमनूष्वलोकं मुमं तिर्यग्लोकं मुमं मनुष्यलोकं मुमं संस्थापिसि-
बलिक मात्तापं भाडल्पदुग्मदेते दोडे स्वस्थानस्वस्थान - वेदनाकषाय - मारणांतिकोपपादंगळे ब
पंचपदंगळोळु कृष्णलेश्याजीवंगळु कियत्क्षेत्रदोळिरुत्तिर्पुर्वेदोडुत्तरं कुडल्पदुगुं सर्वलोकदोळि-
रुत्तिर्पुर्वु विहारवत्स्वस्थानदोळु कृष्णलेश्याजीवंगळु कियत्क्षेत्रदोळिरुत्तिर्पुर्वेदोडुत्तरं पेडल्पदुगुं
सामान्यदि मूरुं लोकंगळ असंख्यातैकभागदोळं तिर्यग्लोकद संख्येयभागदोळंमिरुत्तिर्पुर्वेके दोडे
एकलक्षयोजनोत्सेधमं नोडलेकजीवशरीरोत्सेधकं संख्यातगुणहीनत्वादिदं मनुष्यलोकं नोडलुम-
संख्यातगुणक्षेत्रदोळिरुत्तिर्पुर्वु । वैक्रियिकपददोळु कृष्णलेश्येय जीवंगळु एनितु क्षेत्रंगळोळिरुत्तिर्पु-
र्वेदोडे सामान्यदि नात्कुं लोकंगळसंख्यातैकभागदोळं मनुष्यलोकं नोडलुमसंख्यातगुणक्षेत्रदोळि-

तद्यथा—कृष्णलेश्याजीवाः स्वस्थानस्वस्थानवेदनाकषायमारणान्तिकोपपादपदेषु कियत्क्षेत्रे तिष्ठन्ति ?
सर्वलोके तिष्ठन्ति । विहारवत्स्वस्थानपदे पुनः सामान्यादिलोकत्रयस्यासंख्यातैकभागे तिर्यग्लोकस्य लक्षयोजनो-
त्सेधादेकजीवशरीरोत्सेधस्य संख्यातगुणहीनत्वात् संख्यातैकभागे मनुष्यलोकादसंख्यातगुणे च क्षेत्रे तिष्ठन्ति ।
वैक्रियिकसमुद्घातपदे च सामान्यादिचतुर्लोकानामसंख्यातैकभागे मनुष्यलोकादसंख्यातगुणे च क्षेत्रे तिष्ठन्ति ।

पुनः सामान्य लोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यग्लोक और मनुष्यलोक इन पांचकी
स्थापना करके कथन करते हैं—कृष्णलेश्यावाले जीव स्वस्थानस्वस्थान, वेदना, कषाय,
मारणान्तिक और उपपाद स्थानोंमें कितने क्षेत्रमें रहते हैं ? सर्वलोकमें रहते हैं । किन्तु
विहारवत्स्वस्थानमें सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोकके असंख्यातवें भागमें रहते हैं ।
तिर्यग्लोक एक लाख योजन ऊँचा होनेसे तथा एक जीवके शरीरकी ऊँचाई उससे संख्यात-
गुणा हीन होनेसे तिर्यग्लोकके संख्यातवें भागमें रहते हैं । तथा मनुष्यलोकसे असंख्यातगुणे
क्षेत्रमें रहते हैं । वैक्रियिक समुद्घात स्थानमें जीव सामान्य आदि चार लोकोंके असंख्यातवें

१. म दोलिर्पुर्वेकेदोडे ।

रतिर्पुर्वेके दोडसंख्यातघनांगुलवर्गमात्रजगच्छ्रेणीमात्रं तज्जीवक्षेत्रमप्युदरिदं । ई प्रकारदिं नीललेइयेगं कापोतलेइयेगं वक्तव्यमक्कुं ।

मत्तं तेजोलेइया राशिं $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{(9)}$ संख्यातदिदं भागिसि बंद बहुभागं स्वस्थानस्व-

$$४६५ = ९$$

स्थानदोळित्तु शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं विहारवत्स्वस्थानदोळित्तु

$$\frac{1}{(9)}$$

५ $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$ शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं वेदनासमुद्घातदोळित्तु—

$$४६५ = ९५५$$

$$\frac{1}{(9)}$$

$$\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$$

शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं कषायसमुद्घातदोळित्तु—

$$४६५ = ९५५५$$

$$\frac{1}{(9)}$$

$\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$ शेषैकभागं वैक्रियिकपददोळीवुडु ।—

$$४६५ = ९५५५५$$

कुतः ? असंख्यातघनाङ्गुलवर्गमात्रजगच्छ्रेणीनां तत्क्षेत्रत्वात् । एवं नीलकपोतधोरति वक्तव्यम् । पुनस्तेजोलेइया

जीवराशिं $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$ संख्यातेन भक्त्वा भक्त्वा बहुभागं स्वस्थानस्वस्थाने—
४ । ६५ = ९

१० $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$ विहारवत्स्वस्थाने $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$ वेदनासमुद्घाते— $\frac{1}{111} \frac{1}{9} \frac{1}{४}$
४ । ६५ = ९५ ४ । ६५ = ९५५५५ ४ । ६५ = ९५५५५५

भागमें और मनुष्यलोकसे असंख्यातगुणे क्षेत्रमें रहते हैं । क्योंकि वैक्रियिक समुद्घातवालों-का क्षेत्र असंख्यात घनांगुलके वर्गसे गुणित जगतश्रेणि प्रमाण है । इसी प्रकार नील और कापोतलेइयाका भी कहना चाहिए ।

१५ अब तेजोलेइयाका क्षेत्र कहते हैं—तेजोलेइयावाले जीवोंकी राशिमें संख्यातसे भाग देकर बहुभाग विहारवत्स्वस्थानमें जानना । शेष रहे एक भागमें संख्यातसे भाग देकर बहुभाग वेदना समुद्घातमें जानना । पुनः शेष रहे एक भागमें संख्यातसे भाग देकर बहुभाग कषाय समुद्घातमें जानना । शेष रहा एक भाग सो वैक्रियिक समुद्घातमें जानना । इस

$\frac{1}{(७)}$

III १ इल्लि सप्तधनुस्तसेधमं ७ तद्दशमभागमुखविस्तारमुं ७ अप्प देवावगाहनंगळोळुः—
= १०

४।६५ = ७५५५५

“वासो तिगुणो परिही वासचउत्थाहदो दु खेत्तफळं, ७।३।७।७ खेत्तफळं वेहगुणं
१०।१०।४

७।३।७।७ खादफळं होइ सव्वत्थ ।”

१०।१०।४

एवो देवावगाहेनमं घनात्मकंगळप्प धनुगळमंगुळंगळं माडल्वेडि तो भत्तारर घनात्मकदिदं
गुणिसि मत्तमायंगुलंगळं प्रमाणांगुलंगळं माडल्वेडि पंचशतदिदं घनात्मकदिदं भागिसि स्थापिसि—
७।३।७।७।९६।९६।९६ अपवर्त्तिसिदोडे देवावगाहनं प्रमाणघनांगुलसंख्यातैकभाग-
१०।१०।४।५००।५००।५००

$\frac{1}{(७)}$

मक्कुमदरिदं स्वस्थानस्वस्थानराशियं गुणियिसि III $\frac{1}{(७)}$
= १।४।६। मत्तमी येकावगाहनद एकादि-
४।६५। = ७५७

1

कषायसमुद्घाते च दत्त्वा III १—
= ७४ शेषैकभागो वैक्रियिकसमुद्घाते देयः
४।६५ = ७।५।५।५।५

1

III १—
= ७१ तत्र स्वस्थानस्वस्थानराशिः सप्तधनुस्तसेध ७ तद्दशांशमुखविस्तारविस्तार ७
४।६५ = ७५।५।५।५।५

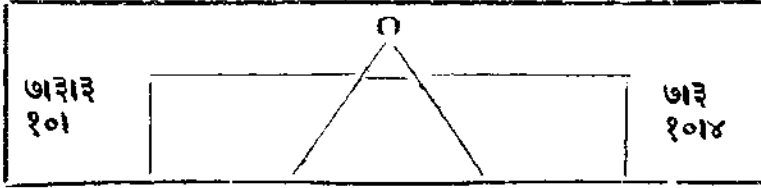
देवावगाहेन वासोत्तिगुणेत्याद्यानीतधनरूपखातफलेन ७।३।७।७ घनाङ्गुलीकतुं घणवतिघनगुणितेन पुनः १०
१०।१०।४

प्रमाणाङ्गुलीकतुं पञ्चशतघनभक्तेन ७।३।७।७।९६।९६।९६ अपवर्तिते जातघनाङ्गुल-
१०।१०।४। ५००।५००।५००

प्रकार जीवोंका प्रमाण कहा। स्वस्थानस्वस्थान अपेक्षा क्षेत्रका प्रमाण लानेके लिए कहते हैं—तेजोलेश्या मुख्य रूपसे भवनत्रिक आदि देवोंमें होती है। उनमें एक देवकी अवगाहना-
का प्रमाण सात धनुष ऊँचा और सात धनुषके दसवें भाग चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल लानेके लिए सात धनुषके दसवें भाग चौड़ाईको तिगुना करनेपर परिधि होती है, क्योंकि चौड़ाईसे तिगुनी परिधि कही है। इस परिधिको चौड़ाईके चतुर्थ भागसे गुणा करनेपर क्षेत्रफल होता है। इसकी ऊँचाई सात धनुषसे गुणा करनेपर घनरूप क्षेत्रफल होता है। घनरूप राशिके गुणकार भागहार घनरूप ही होते हैं। सो यहाँ घनांगुल करनेके लिए एक धनुषके छियानवे अंगुल होते हैं, अतः घनरूप क्षेत्रफलको छियानवेके घनसे गुणा करना। यहाँ कथन प्रमाणांगुलसे है और देवोंके शरीरका प्रमाण उत्सेधांगुलसे होता है, अतः पाँच सौके घनसे भाग २०

१. म°गुलमनंगुल° ।

प्रदेश विसर्पणक्रमदिदं वृद्धियुत्कृष्टदिदं त्रिगुणितविस्तारदिदं पुट्टिदं राशि' मूलराशियं नोडलु नवगुण-
 ११२
 मक्कु ६।६।६।००।६।९ मा' नवगुणमूलराशियं मुखभूमि समासाद्धं मध्यफलमे—
 ७ ७७ ७



दु मुखं शून्यमक्कुमेके दोडे द्वितीयविकल्पं मोदलो' दु प्रदेशवृद्धिक्रममप्युर्दिरंमा शून्यमं कूडिद-
 लियिसिदोडे समीकरणदि पुट्टिद मध्यमावगाहनं नवादार्धघनांगुलसंख्यातैकभागमक्कुमर्दिरं वेदना-

५ समुद्धातराशियं कषायसमुद्धातराशियुं गुणिसुबुदु वेद $\frac{111 \times 1}{81 \times 64} = 9 \times 6 \times 9$ कषाय
 $81 \times 64 = 5184$

$\frac{111 \times 1}{81 \times 64} = 9 \times 6 \times 9$ मतं संख्यातयोजनायाममुं सूच्यंगुलसंख्यातभागविकंभोत्सेधमुमागि मूल-
 $81 \times 64 \times 5184 \times 2$

संख्येयभागेन ६ हृतस्तत्क्षेत्रं स्यात् । वेदनाकषायराशी द्वौ तत्समुद्धातयोर्मूलशरीरात्प्रदेशोत्तरवृद्ध्या उत्कृष्ट-

विकल्पस्य त्रिगुणितव्यासस्य वासो त्रिगुणो परिहीत्याद्यानीत—७।३।३।७।३।७ घनफलस्य नव-
 १०।१०।४

देना । ऐसा करनेसे प्रमाणरूप घनांगुलके संख्यातवें भाग एक देवके शरीरकी अवगाहना
 १० हुई । इस अवगाहनासे पहले जो स्वस्थानस्वस्थानमें जीवोंका प्रमाण कहा था, उसे गुणा
 करनेपर जो प्रमाण हो, उतना स्वस्थानस्वस्थानका क्षेत्र जानना ।

वेदना समुद्धात और कषाय समुद्धातमें आत्माके प्रदेश मूल शरीरसे बाहर निकल-
 कर एक प्रदेश क्षेत्रको रोकें या एक-एक प्रदेश बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट क्षेत्रको रोकें, तो चौड़ाईमें
 मूल शरीरसे त्रिगुने क्षेत्रको रोकते हैं और ऊँचाई मूल शरीर प्रमाण ही है । इसका घनरूप
 १५ क्षेत्रफल करनेपर मूल शरीरके क्षेत्रफलसे नौगुणा क्षेत्रफल होता है । सो जघन्य एक प्रदेश
 और उत्कृष्ट मूल शरीरसे नौगुणा क्षेत्र हुआ । इनका समीकरण करनेसे एक जीवके मूल-
 शरीरसे साढ़े चार गुणा क्षेत्र हुआ । शरीरका प्रमाण पहले घनांगुलके संख्यातवें भाग कहा
 था । सो उसे साढ़े चार गुणा करनेपर एक जीव सम्बन्धी क्षेत्र होता है । उससे वेदना
 समुद्धातवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर वेदना समुद्धात सम्बन्धी क्षेत्र आता है ।

२० तथा कषाय समुद्धातवाले जीवोंके प्रमाणसे गुणा करनेपर कषाय समुद्धात सम्बन्धी क्षेत्र
 आता है । विहार करते हुए देवोंके मूलशरीरसे बाहर आत्माके प्रदेश फैलें, तो वे प्रदेश एक
 जीवकी अपेक्षा संख्यात योजन तो लम्बे और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण चौड़े व
 ऊँचे क्षेत्रको रोकते हैं । उसका क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण होता है । इससे पूर्वमें कहे
 विहारवत्स्वस्थानवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर सब जीवोंके विहारवत्स्वस्थान

२५ १. म राशि ७।३।३।७।३।७ मूल° । २. म मा मूल° ।
 १०।१०।४

शरीरविदं पोरमट्टु निमिद्धात्मप्रदेशावष्टब्धक्षेत्रजनित २।२ संख्यातघनांगुलविदं विहारवत्स्व-
१।१
यो १

स्थान-राशियं गुणिसुदु $\frac{11}{1} \frac{1}{1}$ = १४।६७ स्वस्वेच्छावशादिदं विगुर्विसिद
४।६५ = ७५५

गजादिशरीरावगाहनोपलब्धसंख्यातघनांगुलविदं वैक्रियिक समुद्धातराशियं गुणिसुदु—
 $\frac{111}{1} \frac{1}{1}$
= १।६।७ इंतु गुणिसुतं विरलु तंतम्म क्षेत्रावकुं। मत्तं व्यंतरराशियं
४६५ = ७५५५५

एकदेवस्थितिप्रमाणसंख्यातवर्ष १००००। शुद्धशलाकेगळपूर्वोक्तंगळिदं ० ११ भा १२ = ५
गि सुवदंतु भागिसुतं विरलेकसमयदोळु म्रियमाणराशियक्कु = मवरोळु
४६५ = ८१।१०।०११

ऋजुगतिय जीवंगळ तेगेयत्वेडि पत्यासंख्यातैकभागविदं भागिसि एकभागमं कळेदोडे बहुभागं
विग्रहगतिय जीवंगळपुवु $\frac{11}{1} \frac{1}{1}$ ४६५ = ८१।१०।०११ प अवरोळु मारणांतिकसमुद्धातरहित-
०
५
०

गुणितमात्रत्वात् सर्वविकल्पसमीकरणलब्धेन तदर्धमात्रेण ६।१ हती तत्क्षेत्रे स्याताम्। विहारवत्स्वस्थानराशिः
१।२

संख्यातयोजनायामसूच्यङ्गुलसंख्येयभागविक्रंभोत्सेधक्षेत्र २।२ जनितसंख्यातघनाङ्गुलैः ६१ हतस्तक्षेत्रं १०
१ १
यो १

स्यात्। वैक्रियिकसमुद्धातराशिः स्वस्वेच्छावशाद्विक्रितगजादिशरीरावगाहनोत्पन्नसंख्यातघनाङ्गुलैः ६१ हतस्त-
क्षेत्रं स्यात्। व्यन्तरराशिः एकदेवस्थितिप्रमाणसंख्यातवर्ष-१०००० शुद्धशलाकाभिः ० १ १ भक्तः एकसमये
म्रियमाणराशिः स्यात् = ० अत्र ऋजुगतिजीवानपनेतुं पत्यासंख्यातेन भवत्वेकभागं
४।६५ = ८१।१०।०११

सम्बन्धी क्षेत्रका प्रमाण आता है। वैक्रियिक समुद्धातके सम्बन्धमें यह ज्ञातव्य है कि १५
देवोंके मूलशरीर तो अन्य क्षेत्रमें रहते हैं और विहार करते हुए विक्रियारूप शरीर अन्य
क्षेत्रमें होते हैं। दोनोंके बीचमें आत्माके प्रदेश सूच्यंगुलके संख्यातवें भागमात्र ऊँचे चौड़े
फैले हैं। और ऊपर मुख्यताकी अपेक्षा संख्यात योजन लम्बे कहे हैं। तथा देव अपनी
इच्छावश हाथी, घोड़ा इत्यादि रूप विक्रिया करते हैं। उसकी अवगाहना एक जीवकी
अपेक्षा संख्यात घनांगुल प्रमाण है। इससे पूर्वमें कहे वैक्रियिक समुद्धात करनेवाले जीवों-
के प्रमाणको गुणा करनेपर सर्वजीव सम्बन्धी वैक्रियिक समुद्धातमें क्षेत्रका परिमाण आता २०
है। पीतलेस्यावालोंमें व्यन्तर देवोंका मरण अधिक होता है, अतः उनकी मुख्यतासे यहाँ
मारणान्तिक समुद्धात सम्बन्धी कथन करते हैं। व्यन्तर देवोंकी संख्यामें एक व्यन्तर देवकी

१. ब. °त्सेधमूलशरीराद् बहिर्निसृतात्मप्रदेशावष्टब्धक्षेत्र २ २ जनितसंख्यातघनाङ्गुलैः ६१ हतस्तक्षेत्रं।

जीवंगळं तेग्यल्वेडि पल्यासंख्यातदिदं भागिसि एकभागमं कळ्हे बहुभागं मारणांतिकसमुद्धात-

प प

= ० ० ०

सहितजीवंगळप्पुवु ४१६५ = १ ८१ १० १ ०११ प प मत्तं वरोळु समीपमारणांतिकसमुद्धातजीवंग-

० ०

गळं कळ्हेयल्वेडि पल्यासंख्यातदिदं भागिसि बहुभागमं कळ्हे शेषैकभागं दूरमारणांतिकसमुद्धात-

प प १

जीवंगळप्पुवु ४१६५ = १ ८१ १ ० १ ०११ ० ० ई राशियं मारणांतिकसमुद्धातकालांतम्मुं.

प प प
० ० ०

५ हर्तदोळु संभविसुव शुद्धशलाकेगळनिच्छाराशियं माडि मारणांतिकसमुद्धातजीवंगळं

फलराशियं माडि एकसमयमं प्रमाणराशियं माडि प्र स १ । फ = ० प प १
४१६५१ = ८ १ १ ० १ ० १ १ प प प
० ० ०

इ २१ बंद लब्धं समस्तमारणांतिकसमुद्धातजीवंगळप्पुवु ४६५१८११०१३१११ प प १ १ ० १
० ० ०
प प प
० ० ०

त्यक्त्वा शेषबहुभागो विप्रहृगतिजीवराशिर्भवति = ० प अत्र मारणान्तिकसमु-
० ०
४१६५ = ८१ १ ० १ ० १ १ प
०

द्धातरहितानपनेतुं पल्यासंख्यातेन भक्त्वैकभागं त्यक्त्वा शेषबहुभागो मारणान्तिकसमुद्धातजीवराशिर्भवति—

१० = ० प प अत्र समीपमारणान्तिकसमुद्धातजीवानपनेतुं पल्यासंख्यातेन भक्त्वा
० ० ०
४१६५ = ८१ १ ० १ ० १ १ प प
० ०

संख्यात वर्ष—दस हजार वर्षकी स्थितिके समयोंकी संख्यासे भाग देनेपर जितना प्रमाण आवे, उतने जीव एक समयमें मरते हैं। इन मरनेवाले जीवोंकी संख्यामें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर एक भाग प्रमाण जीवोंकी ऋजुगति होती है और शेष बहुभाग प्रमाण जीव विप्रहृ गतिवाले होते हैं। विप्रहृगतिवाले जीवोंके प्रमाणमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। एक भाग प्रमाण जीवोंके मारणान्तिक नहीं होता, बहुभाग प्रमाण जीवोंके मारणान्तिक समुद्धात होता है। मारणान्तिक समुद्धातवाले जीवोंके प्रमाणमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। बहुभाग प्रमाण समीप क्षेत्रमें मारणान्तिक समुद्धात करने-

१. म. सर्वमा^० ।

ई राशियं रज्जुसंख्यातैकभागायामसूच्यंगुलसंख्यातैकभागविष्कंभोत्सेधक्षेत्रद २ २ घनफलभूत-
१ १
१

प्रतरांगुलसंख्यातैकभागगुणितजगच्छ्रेणिसंख्यातैकभागदिदं गुणिसुतं विरलु मारणान्तिकसमुद्धात-

क्षेत्रमवकुं ४। ६५ = १८१। १००। ११ प प ०१-४ मतं द्वादश योजनायामनवयोजनविष्कंभ-
० ०
प प प १११
० ० ०

सूच्यंगुलसंख्यातैकभागोत्सेध २ ९ क्षेत्रघनफलमसंख्यातघनांगुलप्रमितमं संख्यातजीवगालिदगुणि-
१
यो १२

बहुभागं त्यक्त्वा एकभागो दूरमारणान्तिकजीवराशिर्भवति—= $\frac{१}{५} \frac{१}{५} \frac{१}{१}$
० ० ०
४। ६५=८१। १०। ० १ १ प प प
० ० ०

अस्मिन्मारणान्तिकसमुद्धातकालान्तर्मुहूर्तसंभविशुद्धशलाकाभिः ० १ संगुण्य एकसमयेन भक्ते सर्वदूरमारणान्ति-
कसमुद्धातजीवप्रमाणं भवति ।= $\frac{१}{५} \frac{१}{५} \frac{१}{१} \frac{१}{०} \frac{१}{१}$ अस्मिन् रज्जुसंख्यातैकभागाया-
० ० ०
४। ६५=८१। १०। ० १ १ प प प
० ० ०

मसूच्यङ्गुलसंख्यातैकभागविष्कंभोत्सेधक्षेत्रस्य २। २ घनफलेन प्रतराङ्गुलसंख्यातैकभागगुणितजगच्छ्रेणि-
१। १
७। १

संख्यातैकभागेन— ४ गुणिते दूरमारणान्तिकसमुद्धातस्य क्षेत्रं भवति—
७। १। १

वाले जीव हैं और एक भाग प्रमाण दूरवर्ती क्षेत्रमें समुद्धात करनेवाले जीव हैं । मारणा- १०
न्तिक समुद्धातका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र है । दूर मारणान्तिक समुद्धात करनेवाले जीवोंकी
राशिमें अन्तर्मुहूर्तके समयोंसे गुणा करनेपर सब दूर मारणान्तिक समुद्धात करनेवाले
जीवोंका प्रमाण होता है । दूर मारणान्तिक समुद्धात करनेवाले एक जीवके प्रदेश शरीरसे
बाहर फैलें, तो मुख्य रूपसे एक राजूके संख्यातवें भाग लम्बे और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग
प्रमाण चौड़े व ऊँचे क्षेत्रको रोकते हैं । इसका घनक्षेत्रफल प्रतरांगुलके संख्यातवें भागसे १५
जगत्श्रेणिके संख्यातवें भागको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतना है । इससे दूर मारणा-
न्तिक समुद्धात करनेवाले सब जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर सब जीवोंके दूर मारणा-
न्तिक समुद्धातका क्षेत्र होता है । अन्य मारणान्तिक समुद्धातका क्षेत्र थोड़ा होनेसे मुख्य
रूपसे इसीका ग्रहण किया है । तैजस समुद्धातमें आत्मप्रदेश शरीरसे बाहर निकलनेपर
बारह योजन लम्बे, नौ योजन चौड़े और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण ऊँचे क्षेत्रको २०
रोकते हैं । इसका घनक्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण होता है । इससे तैजस समुद्धात

मुत्तिरलु तेजःसमुद्घातक्षेत्रमक्कुं ६२।७। मत्तं सूच्यंगुलसंख्यातैकभागविष्कंभोत्सेधमुं संख्यात-
योजनायामक्षेत्रघनफलं २ २ लब्धसंख्यातघनांगुलप्रमितं संख्यातजीवगुणितं गुणिसुत्तं विरलु

१ १

यो १

आहारसमुद्घातक्षेत्रमक्कुं ६।१।१।

मरदि असंखेज्जदिमं तस्सासंखाय विग्गहे होति ।

५

तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स खु असंखं ॥५४४॥

ई सूत्राभिप्रायमेते दोहे उपपादक्षेत्रं तरत्वेडि सौधर्मज्ञानकल्पद्वयद जीवराशिघनांगुल-
तृतीयमूलगुणितजगच्छ्रेणिप्रमितमक्कुं ३ ॥

ई राशियं पत्यासंख्यातदिदं खंडिसिदेकभागं प्रतिसमयं म्रियमाणराशियक्कुं -३ मत्तमदं

५

०

— $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$
५। ५। १। ०। १। — ४ पुनर्द्विसंयोजनायामनवयोजनविष्कंभसूच्यङ्गुल-
० ० ७। १। १

१० ४। ६५ = ८१ । १०। ०। १। १। ५। ५। ५
० ० ०

संख्यातैकभागोत्सेध २।१ यो क्षेत्रघनफलं संख्यातघनाङ्गुलप्रमितं ६ १ संख्यातजीवगुणितं तैजससमुद्घातक्षेत्रं
१।

यो १२

भवति । ६। १। १। पुनः सूच्यङ्गुलसंख्यातैकभागविष्कंभोत्सेधसंख्यातयोजनायामक्षेत्रस्य २।२ घनफलं

१।१

यो १

संख्यातघनाङ्गुलप्रमितं ६ १ संख्यातजीवगुणितं आहारकसमुद्घातक्षेत्रं भवति ६ १। १ ॥५४३॥

अस्यार्थः उपपादक्षेत्रमानेतुं सौधर्मद्वयजीवराशौ घनाङ्गुलतृतीयमूलगुणितजगच्छ्रेणिप्रमिते - ३ पत्या-

१५ करनेवालोंके प्रमाण संख्यातको गुणा करनेपर तैजस समुद्घात सम्बन्धी क्षेत्र आता है।
आहारक समुद्घातमें एक जीवके प्रदेश शरीरसे बाहर निकलनेपर संख्यात योजन प्रमाण
लम्बे और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे क्षेत्रको रोकते हैं। इसका घनक्षेत्रफल
संख्यात घनांगुल होता है। इससे आहारक समुद्घातवाले जीवोंके प्रमाण संख्यातको गुणा
करनेपर आहारक समुद्घातका क्षेत्र होता है ॥५४३॥

२० इस गाथाका अभिप्राय उपपादक्षेत्र लाना है। पीतलेश्यावाले सौधर्म ईशानवर्ती जीव
मध्यलोकसे दूर क्षेत्रवर्ती हैं। अतः उनके कथनमें क्षेत्रका परिमाण बहुत आता है। अतः

पल्यासंख्यातदिदं खंडिसिद बहुभागं विग्रहगतियोळप्पुवु -३ प मत्तमिदं पल्यासंख्यातदिदं
प प
० ०

भागिसिद बहुभागंगळु मारणांतिकसमुद्धातमुळळवप्पुवु -३ प प इवर पल्यासंख्यातैकभाग-
० ०
प प प
० ० ०

मात्रंगळु दूरमारणांतिकसमुद्धातजीवंगळप्पुवु -३ प प ई दूरमारणांतिकसमुद्धातजीव-
० ०
प प प प
० ० ० ०

राशिय द्वितीयदीर्घदंडस्थितमारणांतिकपूर्वोपपादजीवगमनार्थं पल्यासंख्यातदिदं भागिसिदेक-
भागमुपपादजीवंगळप्पुवु -३ प प ईयुपपादजीवराशियं समीकरणकृततिथ्यंगजीवमुखप्रमाण-
० ०
प प प प प
० ० ० ० ०

संख्यातेन भवते एकभागः प्रतिसमयं म्रियमाणराशिर्भवति—३ तस्मिन् पल्यासंख्यातेन भवते बहुभागो विग्रहगती
प
०

भवति—३ प तस्मिन् पल्यासंख्यातेन भवते बहुभागो मारणान्तिकसमुद्धाते भवति
प प ०
० ०

—३ प प अस्य पल्यासंख्यातैकभागो दूरमारणान्तिके जीवा भवन्ति —३ प प १
प प प ० ० प प प प ० ०
० ० ० ० ० ० ० ०

अस्मिन् द्वितीयदीर्घदंडस्थितमारणान्तिकपूर्वोपपादजीवानानेतुं पल्यासंख्यातेन भवते एकभाग उपपादजीव-

उनकी मुख्यतासे कहते हैं। सो सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंकी राशि घनांगुलके तीसरे १०
वर्गमूलसे गुणित जगतश्रेणि प्रमाण है। इसमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर एक
भाग प्रमाण प्रतिसमय मरनेवाले जीवोंकी राशि होती है। उसमें पल्यके असंख्यातवें भागसे
भाग देनेपर बहुभाग प्रमाण विग्रहगतिवाले जीवोंका प्रमाण होता है। उस प्रमाणमें पल्यके
असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर बहुभाग प्रमाण मारणान्तिक समुद्धात करनेवाले जीवोंका
प्रमाण होता है। उसमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर एक भाग प्रमाण दूर १५
मारणान्तिक करनेवाले जीव होते हैं। इसमें द्वितीय दीर्घदंडमें स्थित मारणान्तिक समुद-
घातसे पूर्व होनेवाले उपपादसे युक्त जीवोंका प्रमाण लानेके लिए पल्यके असंख्यातवें भागसे
भाग देनेपर एक भाग प्रमाण उपपाद जीवोंका प्रमाण होता है। यहाँ तिर्यचोंके उत्पन्न होने-

संख्यातसूच्यंगुलविष्कम्भोत्सेधद्वयर्ज्ज्वायतक्षेत्र २१ २१ घनफलदिदं संख्यातप्रतरांगुलगुणित-
३
२

द्वयर्ज्ज्जुगलिदं - ३।४१ गुणिसुत्तं विरलु उपपादक्षेत्रमक्कुं - ३ प प - ३।४१ पय-
७ २
० ० ० ० ०
प प प प प ७ २
० ० ० ० ०

लेश्येयोळु पद्मलेश्याजीवराशियं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं स्वस्थानस्वस्थानपददोलित्तु
= ४ शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं विहारवत्स्वस्थानदोलित्तु

४।६५ = १।६।५

५ = ४। शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिदं भागिसि बहुभागं वेदनासमुद्घातपद-
४।६५ = १।६।५।५

दोलित्तु = ४

शेषैकभागं कषायसमुद्घातपददोलित्तु = १

४।६५ = १६।५।५।५

४।६५ = १६।५।५।५

बलिकमल्लि प्रथमराशियं द्वितीयं द्वितीयराशियुं क्रोशायाम तन्नवमभागमुखविष्कम्भतिर्य्यजीवा-

राशिर्भवति—३।प प १ १ अस्मिन् समोकरणकृततिर्य्यजीवमुखप्रमाणसंख्यातसूच्यङ्गुलविष्कम्भोत्से-
० ०
प प प प प
० ० ० ० ०

ध्वयर्ध्वरज्ज्वायतक्षेत्रघनफलेन २ १।२ २ संख्यातप्रतराङ्गुलगुणितद्वयर्ध्वरज्जुप्रमितेन — ३।४।१ गुणिते
— ३
७।२

१० उपपादक्षेत्रं भवति—३ प प - ३।४।१ पद्मलेश्यायां तज्जीवराशे संख्यातभक्तबहुभागः स्वस्थान-
० ० ७ २
प प प प प
० ० ० ० ०

॥
स्वस्थाने देयः= ४ शेषैकभागस्य संख्यातभक्तबहुभागो विहारवत्स्वस्थाने देयः—
४।६५ = १६।५

॥
= ४ शेषैकभागस्य संख्यातभक्तबहुभागो वेदनासमुद्घाते देयः= ४
४।६५ = १६।५।५।५ ४।६५ = १६।५।५।५

की मुख्यतासे एक जीव सम्बन्धी प्रदेश फैलनेकी अपेक्षा डेढ़ राजू लम्बा संख्यात सूच्यंगुल प्रमाण चौड़ा ऊँचा क्षेत्र है। इसका घनक्षेत्रफल संख्यात प्रतरांगुलसे डेढ़ राजूको गुणा करने पर जो प्रमाण है, उतना है। इससे उपपाद जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर उपपाद सम्बन्धी क्षेत्र आता है। यह पीतलेश्यामें क्षेत्रका कथन किया। अब पद्मलेश्यामें करते हैं—

पद्मलेश्यावाले जीवोंकी संख्यामें संख्यातका भाग देकर बहुभाग स्वस्थानस्वस्थानमें जानना। एक भागमें पुनः संख्यातसे भाग देकर बहुभाग विहारवत्स्वस्थानमें जानना। शेष एक भागमें संख्यातसे भाग देकर बहुभाग वेदना समुद्घातमें जानना। शेष रहा एक

www.jainelibrary.org

वेदनासमुद्घातपददोळं दरिवुवु - ४ शेषैकभाग संख्यातबहुभागं कषायसमुद्घातपददोळं -
११।५।५।५।

दरिवुवु - ४ शेषैकभागं वैक्रियिकसमुद्घातपददोळं कु - १ मा राशि-
११।५।५।५।५ ११।५।५।५।५

यना जीवंगळु विगुव्विसिद गजादिशरीररावगाहनसंख्यातघनांगुलंगळि गुणिसुत्तं विरलु वैक्रियिक-
समुद्घातपददोळु क्षेत्रमक्कु - ६१ मी राशियने "मरदि असखेज्जदिमं तस्सासंखाय
११।५।५।५।५

५ विगहे होंति तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स खु असंखं ॥" एदिंतु पल्यासंख्यातभागादिदं भागिसुत्तं
विरलैकभागं प्रतिसमयं म्रियमाणजीवप्रमाणमक्कु = १ मत्तं पल्यासंख्यातदिदं भागिसिद बहु-
११।५
०

भागं विग्रहगतिथ जीवप्रमाणमक्कु - ५ मत्तमिदं पल्यासंख्यातदिदं भागिसिद बहुभागं मारणां-
०
११ ५ ५
० ०

—४

—४

वेदनासमुद्घाते ११।५।५।५।५ कषायसमुद्घाते च पतितोऽस्तीति ज्ञात्वा ११।५।५।५।५ शेषैकभागो
—१

वैक्रियिकसमुद्घाते देयः ११।५।५।५।५ अस्मिन् तज्जीवविकुर्वितगजादिशरीरावगाहनसंख्यातघनाङ्गुलैर्गुणिते
—६१

१० तत्समुद्घातक्षेत्रं भवति ११।५।५।५।५ पुनस्तस्मिन्नेव सनत्कुमारमाहेन्द्रदेवराशौ—

मरदि असखेज्जदिमं तस्सासंखा य विगहे होंति । तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स खु असंखं ॥

—१

इति पल्यासंख्यातभक्तैकभागः प्रतिसमयं म्रियमाणजीवप्रमाणं भवति ११।५। पुनः पल्यासंख्यातभक्त-

बहुभागो विग्रहगतिजीवप्रमाणं भवति — ५ पुनः पल्यासंख्यातभक्तबहुभागो मारणान्तिकसमुद्घातजीवप्रमाणं
११ ० ।
५ ५
० ०

१५ ग्यारहवें वर्गमूलसे जगतश्रेणिको भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उतनी है। इस राशिमें
संख्यातसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थानमें जीव जानना। शेष रहे एक भागमें
पुनः संख्यातसे भाग देकर बहुभाग विहारवत्स्वस्थानमें जीव जानने। शेष रहे एक भागमें
पुनः संख्यातसे भाग देकर बहुभाग वेदना समुद्घातमें जानना। शेष रहे एक भागमें पुनः
संख्यातसे भाग देकर बहुभाग कषाय समुद्घातमें जानना। शेष रहे एक भाग प्रमाण
वैक्रियिक समुद्घातमें जीव जानना। इतने-इतने जीव इनमें होते हैं। इन वैक्रियिक समुद्-
२० घातवाले जीवोंके प्रमाणको एक जीव सम्बन्धी हाथी-घोड़ेरूप विक्रियाकी अवगाहना
संख्यात घनांगुलसे गुणा करनेपर वैक्रियिक समुद्घातका क्षेत्र आता है। मारणान्तिक
समुद्घात और उपपादमें भी क्षेत्र सानत्कुमार-माहेन्द्रकी अपेक्षासे बहुत है, अतः इनका
कथन भी उनकी ही अपेक्षा करते हैं—

तिकसमुद्घातमुल्ल जीवप्रमाणमक्कुं — प प मत्तमिदं पल्यासंख्यातदिदं भागिसिदेकभागं
 ११ १ प प प
 ० ० ०

दूरमारणांतिकसमुद्घातजीवप्रमाणमक्कुं — प प मत्तं पल्यासंख्यातदिदमीराशियं भागि-
 ११ प प प प
 ० ० ० ०

सुत्तंविरलु तदेकभागमुपपाददं स्थितजीवप्रमाणमक्कुं — प प मी येरडु राशिगळं त्रिर-
 ११ १ प प प प प
 ० ० ० ० ०

ज्वायत सूच्यंगुलसंख्यातभागविष्कंभोत्सेधद सनत्कुमारमाहेन्द्रकल्पजदेवर्काळिदं क्रियमाणमारणां-
 तिकदंडक्षेत्रघनफलदिदं प्रतरांगुलसंख्यातैकभागगुणितरज्जुत्रयमात्रदिदं मारणांतिकसमुद्घातजीव- ९

० ० ० ० ० पुनः पल्यासंख्यातभवतैकभागो दूरमारणान्तिकसमुद्घातजीवप्रमाणं— प प १ पुनः
 ११ ० ० ११ ० ०
 प प प प
 ० ० ० ०

पल्यासंख्यातभवतैकभाग उपपाददण्डस्थितजीवप्रमाणं— प प अत्र दूरमारणान्तिकराशी त्रिरज्ज्वा-
 ११ ० ०
 प प प प प
 ० ० ० ० ०

यतसूच्यङ्गुलसंख्यातभागविष्कंभोत्सेधस्य सनत्कुमारद्वयदेवैः क्रियमाणमारणान्तिकदण्डस्थ घनफलेन प्रतराङ्गुल-

‘मरदि असंखेज्जदिमं’ इत्यादि गाथासूत्रके अनुसार सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्गके देवोंके प्रमाणमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। एक भाग प्रमाण देव प्रतिसमय मरते हैं। इस राशिमें भी पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। बहुभाग प्रमाण विप्रहगतिवाले जीव होते हैं। इस राशिको पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। बहुभाग प्रमाण मारणान्तिक समुद्घातवाले जीव हैं। इस राशिको भी पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। एक भाग प्रमाण दूर मारणान्तिक समुद्घात करनेवाले जीव हैं। इस राशिको भी पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग दें। एक भाग प्रमाण उपपाददण्डस्थित जीवोंका प्रमाण है। सानत्कुमार माहेन्द्रके देवोंके द्वारा किये गये मारणान्तिक दण्डका क्षेत्र तीन राजू लम्बा और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग चौड़ा व ऊँचा है। उसका घनक्षेत्रफल प्रतरांगुलके संख्यातवें भागसे तीन राजूको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतना है। इस घनक्षेत्रफलसे दूर मारणान्तिक समुद्घातवाले जीवोंकी राशिमें गुणा करनेपर मारणान्तिक समुद्घातमें क्षेत्रका प्रमाण होता १० १५

राशियं गुणिसिदोडे तन्मारणांतिकसमुद्धातपददोळु क्षेत्रमक्कं — प प १ ३ १ ४ मत्तं
 ११ प प प प
 ० ० ० ०

त्रिरज्जायतसंख्यातसूच्यंगुलविष्कंभोत्सेधद सनत्कुमारद्वयं कुरुत्तु तिर्यंगजीवंगलिदं मुक्तोपपाददंड-
 क्षेत्रघनफलदिदं संख्यातप्रतरांगुलहतत्रिरज्जुमात्रंगलिदं गुणिसिदोडे उपपाददोळु क्षेत्रमक्कं

— प प १ १ ३ १ ४ १ तैजससमुद्धातदोळं आहारकसमुद्धातदोळं—क्षेत्रंगळु तेजो-
 ११ प प प प प
 ० ० ० ० ०

५ लेश्येययोळं वेळदंते संख्यातघनांगुलगुणितसंख्यातजीवप्रमाणराशिगळपुवु तै १ ६ १ १ आहार
 १ ६ १ १ मत्तं शुक्ललेश्येयोळु—शुक्ललेश्याजीवराशियं पल्यासंख्यातप्रमितं संख्यातदिदं

संख्यातैकभागगुणितरज्जुत्रयेण — ३ १ ४ गुणिते तत्क्षेत्रं स्यात्— प प ७ १ ३ १ ४ पुनः उपपाददण्डराशो
 ७ १ ११ ० ० १
 प प प प
 ० ० ० ०

त्रिरज्जायतसंख्यातसूच्यंगुलविष्कंभोत्सेधस्य सनत्कुमारद्वयं प्रति तिर्यंगजीवमुक्तोपपाददण्डस्य घनफलेन

संख्यातप्रतराङ्गुलहतत्रिरज्जुमात्रेण—३ १ ४ १ गुणिते तत्क्षेत्रं भवति— प प — ३ १ ४ १
 ७ ११ ० ० ७
 प प प प प
 ० ० ० ० ०

१० तैजसाहारकसमुद्धातयोः क्षेत्रं तेजोलेश्यावत्संख्यातघनाङ्गुलगुणितसंख्यातजीवराशिर्भवति—

१ ६ १ १ ६ १ पुनः शुक्ललेश्यायां तज्जीवराशिं पल्यासंख्यातभागं संख्यातेन भक्त्वा भक्त्वा बहुभागबहुभागं
 स्वस्थानस्वस्थाने प ४ विहारवत्स्वस्थाने प ४ वेदनासमुद्धाते प ४ कषायसमुद्धाते च प ४ दत्त्वा शेषैकभागं
 ० ५ ० ५ ५ ० ५ ५ ५ ५ ० ५ ५ ५ ५

है। उपपादमें तिर्यच जीवोंके द्वारा सानत्कुमार-माहेन्द्रमें उत्पन्न होनेके लिए किया गया

उपपादरूप दण्ड तीन राजू लम्बा और संख्यात सूच्यंगुल प्रमाण चौड़ा व ऊँचा है। इसका

१५ घनक्षेत्रफल संख्यात प्रतरांगुलसे गुणित तीन राजू मात्र होता है। इससे उपपादवाले

जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर उपपाद सम्बन्धी क्षेत्रका प्रमाण होता है। तैजस और

आहारक समुद्धातमें क्षेत्र जैसे तेजोलेश्याके कथनमें कहा है, वैसे ही यहाँ भी संख्यात

घनांगुलसे गुणित संख्यात जीव राशि प्रमाण जानना। आगे शुक्ललेश्यामें क्षेत्र कहते हैं—

शुक्ललेश्यावाले जीवोंकी राशिमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग स्वस्थान-

२० स्वस्थानवाले जीव हैं, शेष एक भागमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण

विहारवत्स्वस्थानमें जीव हैं। इस तरह शेष रहे एक-एक भागमें पल्यके असंख्यातवें भागसे

भाग देकर बहुभाग प्रमाण जीव क्रमसे वेदना समुद्धात, कषाय समुद्धातमें जानना।

१. म. कृष्ण ।

भागिसि भागिसि बहुभागबहुभागगळं स्वस्थानस्वस्थानदोळं प ४ विहारवत् स्वस्थानदोळं
० ५

प ४ वेदनासमुद्घातदोळं प ४ कषायसमुद्घातदोळं प ४ कोट्टु शेवैकभागमं
० ५५ ० ५५५ ० ५५५५

वैक्रियिकसमुद्घातदोळीबुदु प १ बळिक्कमो पंचराशिगळोळु प्रथमराशियं तृतीयराशियं
० ५५५५

चतुर्थराशियुमं यथासंख्यमाणि त्रिहस्तोत्सेध तद्दशमभागमुखव्यासदिदं “व्यासत्रिगुणः
परिधिर्व्यासचतुर्थाहृतस्तु क्षेत्रफलम् । क्षेत्रफलं वेदगुणं खातफलं भवति सर्वत्र ।” एदी ५

सूत्राभिप्रायदिदं ह । ३ । ३ । ह ३ । ह ३ जनितदेवावगाहनप्रमाणवृंदांगुलसंख्यातैकभागदिदं
१० । १० । ४

मत्तं नवार्द्धघनांगुलसंख्यातभागदिदं मत्तं तावन्मात्रदिदं गुणिसिदोडे यथाक्रमदि
स्वस्थानपरस्थानवेदनासमुद्घातकषायसमुद्घातक्षेत्रगळप्पुवु । स्व = स्व = प ४ । ६ वेद
० ५ । १

प ४ । ६ । ९ कषाय— प ४ । ६ । ९ मत्तं विहारवत्स्वस्थानद्वितीयपदजीवराशियसंख्यात-
० ५५५१२ ० ५५५५१ । २

योजनागमसूच्यंगुलसंख्यातभागविष्कंभोत्सेध २ १ २ १ क्षेत्रघनफलं संख्यातघनांगुलगळिदं गुणिसि-
यो १ १०

वैक्रियिकसमुद्घाते दद्यात्—प १ अत्र प्रथमराशौ त्रिहस्तोत्सेधतद्दशमभागमुखव्यासैकदेवावगाहनस्य
० ५ ५ ५ ५

वासो तिगुणो परिहीत्यादानीत ह ३ । ३ ह ३ ह ३ घनफलेन घनाङ्गुलसंख्यातैकभागेन ६ पुनस्तृतीयराशौ
१० । १० । ४ । १

नवार्द्धघनाङ्गुलसंख्यातभागेन ६ । ९ पुनश्चतुर्थराशौ तावत्तैव च ६ । ९ गुणिते सति क्रमेण
१ । २ १ । २

स्वस्थानस्वस्थानवेदनासमुद्घातक्षेत्राणि भवन्ति—स्व = प । ४ । ६ वेद = प ४ । ६ । ९ कषा
० ५ । १ ० ५ ५ ५ १ । २

= प ४ ६ । ९ पुनः द्वितीयराशौ संख्यातयोजनागमसूच्यङ्गुलसंख्यातभागविष्कम्भोत्सेध—२ १ । २ १
१ ५ ५ ५ ५ १ २ यो १ १५

शेष एक भाग प्रमाण जीव वैक्रियिक समुद्घातमें जानना । शुक्ललेश्यावाले देवोंकी मुख्यता होनेसे एक देवकी अवगाहना तीन हाथ ऊँची और उसके दसवें भाग मुखकी चौड़ाई है । ‘वासो तिगुणो परिही’ इत्यादि सूत्रके अनुसार क्षेत्रफल घनांगुलका संख्यातवाँ भाग होता है । इससे स्वस्थानस्वस्थानवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर स्वस्थानस्वस्थान सम्बन्धी क्षेत्रका परिमाण होता है । एक जीवका मूलशरीरकी अवगाहनासे साढ़े चार गुणा क्षेत्र वेदना तथा कषाय समुद्घातमें होता है । इस साढ़े चार गुणा घनांगुलके संख्यातवें भागसे वेदना और कषाय समुद्घातवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर वेदना और कषाय समुद्घातमें क्षेत्र होता है । एक देवके विहार करते हुए अपने मूलशरीरसे बाहर निकल उत्तर विक्रियासे उत्पन्न हुए शरीर पर्यन्त आत्माके प्रदेश संख्यात योजन लम्बे और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग चौड़ा व ऊँचा क्षेत्र रोकते हैं । इसका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल होता है । इससे विहारवत्स्वस्थान जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर २५

दोडे द्वितीयपददोळु क्षेत्रमक्कुं प ४।६।१ वैक्रियिकसमुद्धातपंचमजीवराशियं स्वस्वयोग्य-
० ५५

भागिविगुण्विसिद शरीरावगाहनंगळिदं लब्धसंख्यातघनांगुलंगळिदं गुणिसिदोडे वैक्रियिकसमुद्धात-
पददोळु क्षेत्रमक्कुं प ६१ मतं मारणान्तिकसमुद्धातषष्ठपददोळु रज्जुषट्कायामसूच्यंगुल-
० ५५५५

संख्यातभागविष्कंभोत्सेध २ २ क्षेत्रघनफलमिदे —६।४ कजीवप्रतिबद्धमक्कुमी क्षेत्रमु-
१ १ ७।१
७ ६

५ मानतादिदेवराग्लो मनुष्यरोळेंयुत्पत्तिनियममप्पुदरिदं च्युतकल्पदोळु संख्यातजीवंगळे मरण-
मनेयुवुवुदु कारणमागि संख्यातजीवंगळिदं गुणिसिदोडे मारणान्तिकसमुद्धातक्षेत्रपदमक्कुं
१ ७।६।४ तैजससमुद्धातपददोळं आहारकसमुद्धातपददोळं पद्मलेदयेयोळपेळदंते क्षेत्रंगळपुवु
१ १
तै १।६।१।आ १।६।१। केवलिसमुद्धातपददोळु क्षेत्रं पेळलपडुगु मदें तें दोडल्लि दंडसमु-

क्षेत्रघनफलसंख्यातघनाङ्गुलैः ६ १ गुणिते विहारवत्स्वस्थाने क्षेत्रं भवति प १।४।६ १ पुनः पञ्चमराशौ
० ५ ५।

१० स्वस्वयोग्यतया विकुवितशरीरावगाहलब्धसंख्यातघनाङ्गुलैः ६ १ गुणिते वैक्रियिकसमुद्धातपदे क्षेत्रं
भवति प १।६ १
० ५।५।५ ५

पुनः रज्जुषट्कायामसूच्यङ्गुलसंख्यातभागविष्कम्भोत्सेध २।२ क्षेत्रघनफलमेकजीवप्रतिबद्धं भवति
१ १
७ ६

— ६।४ अस्मिन्नानतादिदेवानां मनुष्येष्वेवोत्पत्तेस्तत्र संख्यातैरेव त्रियमाणैर्गुणिते मारणान्तिकसमुद्धातक्षेत्रं
७।१

भवति १।७ ६।४ तैजसाहारकसमुद्धातक्षेत्रं पद्मलेख्यावत् ।—तै १।६ १।आ १।६ १ केवलि-
१

१५ विहारवत्स्वस्थान सम्बन्धी क्षेत्र होता है। तथा अपने-अपने योग्य विक्रियारूप बनाये गये हाथी आदिके शरीरकी अवगाहना संख्यात घनांगुल है। उससे वैक्रियिक समुद्धातवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर वैक्रियिक समुद्धातमें क्षेत्रका प्रमाण आता है। शुक्ललेख्या आनतादि स्वर्गोंमें होती है। सो आरण-अच्युतकी मुख्यतासे वहाँसे मध्यलोक छह राजू है। अतः वहाँसे मारणान्तिक समुद्धात करनेपर एक जीवके प्रदेश छह राजू लम्बे और
२० सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग चौड़े-ऊँचे होते हैं। उसका जो क्षेत्रफल एक जीवकी अपेक्षा हुआ, उसको संख्यातसे गुणा करना, क्योंकि आनतादिकसे मरकर देव मनुष्य ही होता है। इस-लिए मारणान्तिक समुद्धातवाले जीव संख्यात ही होते हैं। अतः संख्यातसे गुणा करनेपर मारणान्तिक समुद्धात सम्बन्धी क्षेत्र आता है। तैजस और आहारक समुद्धात सम्बन्धी क्षेत्र पद्मलेख्यामें जैसा कहा है, वैसा ही जानना। अब केवल समुद्धातमें क्षेत्र कहते हैं—

२५ १. अ. तपदक्षेत्रम् ।

दधातमं दुं कवाटसमुद्धातमे दुं प्रतरसमुद्धातमं दुं लोकपूरणसमुद्धातमे दितु केवलिसमुद्धातं चतुः-
प्रकारमवकुमल्लि स्थितदंडमे दुमुपविष्टदंडमे दुं दंडं द्विविधमवकुं । पूर्वाभिमुखोत्तराभिमुखस्थितक-
वाटद्वयमे दुं, पूर्वाभिमुखोत्तराभिमुखोपविष्टकवाटद्वयमे दितु कवाटसमुद्धातं चतुःप्रकारमवकुं ।

प्रतरसमुद्धातमेकप्रकारमेवकुं । लोकपूरणसमुद्धातमुमेकप्रकारमेवकुमवरोळु प्रथमो-
द्दिष्टस्थितदंडसमुद्धातमे ते दोडे वातवलयरहितत्वादिदं किंचिदून चतुर्दशरज्जुसुंगद्वादशांगुलरुद्रक्षेत्रं ५
वासो तिगुणो परिहीत्यादि १२ । ३ १२ । १४- ॥ = ॥ लब्धं षोडशाभ्यधिकद्विशतप्रतरांगुलप्रमितं-
४ । ७

जगच्छ्रेणिमात्रमवकु — ४ । २१६ मिदं जीवगुणकारदिदं गुणिसुतं विरलु ४० अष्टसहस्रषट्शतचत्वा-
रिंशत् प्रतरांगुलसंगुणितजगच्छ्रेणिमात्रं स्थितदंडसमुद्धातक्षेत्रमवकुं ॥—४ । ८६४० । ई क्षेत्रमने
नवगुणं माडिदोडे षष्टिसमधिकसप्तशतसमन्वितसप्तसप्ततिसहस्रमात्रप्रतरांगुलगुणितजगच्छ्रेणिमात्र-
मुपविष्ट दंडसमुद्धातक्षेत्रमवकु—४ । ७७७६० । किंचिदूनचतुर्दशरज्ज्वायामसप्तरज्जुविकम्भद्वा- १०
दशांगुलरुद्रक्षेत्रफलं जीवगुणकारदिदं ४० गुणिसुतं विरलु नवशतषष्टिमूयंगुलगुणितजगत्प्रतर-
प्रमितं पूर्वाभिमुखस्थितकवाटसमुद्धातक्षेत्रमवकु = सू २ । ९०० ॥ मी क्षेत्रमे त्रिगुणित

समुद्धातः दण्डकवाटप्रतरलोकपूरणभेदाच्चतुर्धा । दण्डसमुद्धातः स्थितोपविष्टभेदाद्वेधा । कवाटसमुद्धातोऽपि
पूर्वाभिमुखोत्तराभिमुखभेदाभ्यां स्थितः उपविष्टश्चेति चतुर्धा । प्रतरलोकपूरणसमुद्धातावेकैकावेव । तत्र
वातवलयरहितत्वात् किंचिदूनचतुर्दशरज्जुसुंगद्वादशांगुलरुद्रक्षेत्रस्य वासो तिगुणो परिहीत्यागतं १५
१२ । ३ । १२ ।—१४—षोडशाभ्यधिकद्विशतप्रतरांगुलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रं—४ । २१६ जीवगुणकारेण ४०
४ ७

गुणितं, अष्टसहस्रषट्शतचत्वारिंशत्प्रतरांगुलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रं स्थितदण्डसमुद्धातक्षेत्रं—४ । ८६४०
एतदेव नवगुणितं सप्तसप्ततिसहस्रसप्तशतषष्टिप्रतरांगुलहतजगच्छ्रेणिमात्रमुपविष्टदण्डसमुद्धातक्षेत्रं भवति—
४ । ७७७६० किंचिदूनचतुर्दशरज्ज्वायामसप्तरज्जुविकम्भद्वादशांगुलरुद्रक्षेत्रफलं जीवगुणकारेण ४० गुणितं

केवलि समुद्धात दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरणके भेदसे चार प्रकारका है । २०
दण्ड समुद्धात स्थित और उपविष्टके भेदसे दो प्रकारका है । कपाट समुद्धात भी पूर्वाभि-
मुख, उत्तराभिमुखके भेदसे तथा स्थित और उपविष्टके भेदसे चार प्रकारका है । प्रतर और
लोकपूरण समुद्धात एक-एक ही हैं । उनमें-से स्थितदण्ड समुद्धातमें एक जीवके प्रदेश
वातवलयरहित होनेसे कुछ कम चौदह राजू ऊँचे और बारह अंगुल प्रमाण चौड़े गोला-
कार होते हैं । 'वासो तिगुणो परिही' इस सूत्रके अनुसार इसका क्षेत्रफल दो सौ सोलह २५
प्रतरांगुलसे गुणित जगतश्रेणि प्रमाण होता है, क्योंकि बारह अंगुल गोल क्षेत्रका क्षेत्रफल
एक सौ आठ प्रतरांगुल होता है, उसकी ऊँचाई दो श्रेणियोंसे गुणा करनेपर इतनी ही होती है ।
एक समयमें इस समुद्धातवाले जीव चालीस होते हैं, अतः इसे चालीससे गुणा करनेपर आठ
हजार छह सौ चालीस प्रतरांगुलसे गुणित जगतश्रेणि प्रमाण स्थितदण्ड समुद्धात सम्बन्धी
क्षेत्र होता है । इसको नौसे गुणा करनेपर सतहत्तर हजार सात सौ साठ प्रतरांगुलसे गुणित ३०
जगतश्रेणिप्रमाण उपविष्ट दण्ड समुद्धात क्षेत्र होता है, क्योंकि स्थित दण्ड समुद्धातमें बारह
अंगुल चौड़ाई कही है । उपविष्टमें उससे तिगुनी चौड़ाई होनेसे क्षेत्रफल नौगुणा होता है ।

१. म. प्रमितजगच्छ्रेणिमात्रमवकु—४ । २१६ । तिसहस्रसप्तशत्रमात्रप्रतरांगुलगुणित । जगं ।

मांडुदादोडे अशीत्युत्तराष्टशतद्विसहस्रसूच्यंगुलगुणितजगत्प्रतरमात्रं निष्पण्णपूर्वाभिमुखकवाट-
समुद्घातक्षेत्रमक्कुं = सू २। २८८०। किंचिद्वनचतुर्दशरज्जुदीर्घं पूर्वपरिदं सप्तैकपञ्चैकरज्जु
विष्कंभं द्वादशांगुलरुद्रसमीकृतक्षेत्रफलं मुख—१। भूमि—७ जोग—८ दळे—४ प—७ गुणिदे = ४ पदधणं

होदि एदिदधोलोकक्षेत्रफलमक्कुं = ४। मत्तं। मुख—१ भूमि—५ जोग—६ दळे—३ पद—७ गुणिदे=२१

५ पदधणं होदि। अपर्बत्तितं = ३ इदं द्विगुणिसिदोर्ध्वलोकक्षेत्रफलमक्कुमोर्ध्वलोकक्षेत्रफल-

मुमं = ३ अधोलोकक्षेत्रफलमुमं = ४ कूडि जगत्प्रतरमितमक्कुमदं द्वादशांगुलरुद्रदिदं गुणि-

सिदो = १२ एकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रमक्कुमदं जीवगुणकारदिदं ४० गुणिसिदोर्ध्वं चतुःशताशीति सूच्यंगुल-
गुणितजगत्प्रतरमात्रमुत्तराभिमुखस्थितकवाटसमुद्घातक्षेत्रमक्कुं = सू २। ४८०। मिदं त्रिगुणितं
माडिदोडे चत्वारिंशदुत्तरचतुःशतैकसहस्रसूच्यंगुलसंगुणितजगत्प्रतरमात्रमुत्तराभिमुखासीनकवाट-
समुद्घातक्षेत्रमक्कुं = सू २। १४४०। ई कवाटसमुद्घातक्षेत्रं नोडलसंख्यातगुणमप्पुदु सर्व-

१० लोकमं नोडलमसंख्यातभागहीनमुमप्पुदु प्रतरसमुद्घातक्षेत्रमक्कुमवेते दोडे :—

नवशतषष्टिसूच्यङ्गुलहतजगत्प्रतरं पूर्वाभिमुखस्थितकवाटसमुद्घातक्षेत्रं भवति—= सू २। ९६० एतदेव
त्रिगुणितं द्विसहस्राष्टशताशीतिसूच्यङ्गुलहतजगत्प्रतरं निष्पण्णपूर्वाभिमुखकवाटसमुद्घातक्षेत्रं भवति सू २।
२८८० किंचिद्वनचतुर्दशरज्जुदीर्घस्य पूर्वापरेण सप्तैकपञ्चैकरज्जुविष्कंभस्य मुख—१ भूमि—जोग—८ दळे
—४ पद—गुणिदे = ४ पदधणं होदीत्यधोलोकफलं = ४ मुख—१ भूमि—५ जोग—६ दळे—३ पद—
गुणिदे = २१ पदधणं होदीत्यपर्वत्यं = ३ द्विहते ऊर्ध्वलोकफलं = ३ अस्मिन्नधोलोकफले मिलिते जगत्प्र-

१५ गुणिदे = २१ पदधणं होदीत्यपर्वत्यं = ३ द्विहते ऊर्ध्वलोकफलं = ३ अस्मिन्नधोलोकफले मिलिते जगत्प्र-

तरद्वादशाङ्गुलं रुद्रेण गुणितः = १२ एकजीवप्रतिबद्धं तदेव जीवगुणकारेण ४० गुणितं चतुःशताशीतिसूच्यङ्गु-
लहतजगत्प्रतरमुत्तराभिमुखस्थितकवाटसमुद्घातक्षेत्रं भवति = सू २। ४८० एतदेव त्रिहृतं एकसहस्रचतुः-

इससे नौसे गुणा किया है। पूर्वाभिमुख स्थित कपाट समुद्घातमें एक जीवके प्रदेश वातवलय
विना लोक प्रमाण अर्थात् कुछ कम चौदह राजू लम्बे हैं। उत्तर-दक्षिण दिशामें लोककी
चौड़ाई सात राजू, सो उतने चौड़े हैं। बारह अंगुल प्रमाण पूरब पश्चिममें ऊँचे हैं। इसका
क्षेत्रफल चौबीस अंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण होता है। चूँकि एक समयमें इस समुद्घात
करनेवाले जीवोंका प्रमाण चालीस है, अतः चालीससे गुणा करनेपर नौ सौ साठ
सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण पूर्वाभिमुख स्थित कपाट समुद्घातका क्षेत्र होता है।
इसीको तिगुणा करनेपर दो हजार आठ सौ अस्सी सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण
पूर्वाभिमुख स्थित कपाट समुद्घातका क्षेत्र होता है। उत्तराभिमुख स्थित कपाट समुद्घातमें
एक जीवके प्रदेश वातवलय विना लोक प्रमाण अर्थात् कुछ कम चौदह राजू प्रमाण
लम्बे होते हैं। और पूरब-पश्चिममें लोककी चौड़ाई प्रमाण चौड़े होते हैं। सो लोक

१. म. मादुदादोडे।

सत्तासोविचतुस्सदसहस्सतिसोदिलक्खउणवीसं ।

चउवीसधियं कोडोसहस्सगुणिदं तु जगपदरं ॥

सट्ठीसत्तसएहिं णवयसहस्सेगलक्खभजिदं तु ।

सब्बं वादारुद्धं गुणिदं भणिदं समासेण ॥ — त्रिलोक. १३९-१४० गा. ।

एंदो सूत्रद्वयविदं पेळळपट्टं सर्ववातावरुद्धक्षेत्रयुतियं = १०१२४१९८३४८७ सर्वलोका-
१०१९७ २०

संख्यातैकभागम् $\equiv$ १ कळदुळिद सर्वलोकमेकजीवप्रतिबद्धप्रतरसमुद्घातक्षेत्रमक्कु

$\equiv$ — लोकपूरणसमुद्घातदोळमेकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रम् सर्वलोकमक्कु = १ मिल्लि आरोह-

शतचत्वारिंशत्सूच्यङ्गुलहतजगत्प्रतरभुत्तराभिमुखसीनकवादसमुद्घातक्षेत्रं भवति = सू २ । १४४० प्रतर-
समुद्घातस्य बहिर्वतित्रयाभ्यन्तरे सर्वलोके व्याप्तत्वात् तद्वातक्षेत्रफलेन लोकासंख्यातैकभागेन $\equiv$ १ ऊनं

लोकमात्रमेकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रं भवति $\equiv$ १ लोकपूरणसमुद्घाते एकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रं सर्वलोको भवति $\equiv$ अत्र

अधोलोकके नीचे सात राजू चौड़ा है। क्रमसे घटते-घटते मध्यलोकमें एक राजू चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल निकालनेके लिए करणसूत्रके अनुसार मुख एक राजू, भूमि सात राजू दोनोंको जोड़नेपर आठ हुए। उसका आधा चारको अधोलोककी ऊँचाई सातसे गुणा करनेपर अट्ठाईस राजू अधोलोकका प्रतररूप क्षेत्रफल होता है। मध्यलोकमें एक राजू चौड़ा है। वहाँसे बढ़ते-बढ़ते ब्रह्मस्वर्गके निकट पाँच राजू चौड़ा है। सो यहाँ मुख एक राजू, भूमि पाँच राजू। दोनोंको जोड़नेपर लह हुए। उसका आधा तीनसे मध्य लोकसे ब्रह्मस्वर्ग तक की ऊँचाई साढ़े तीन राजूसे गुणा करनेपर आवे ऊर्ध्वलोकका क्षेत्रफल साढ़े दस राजू होता है। इतना ही क्षेत्रफल ऊपरके आवे ऊर्ध्वलोकका होता है। इसमें अधोलोक-का फल मिलानेपर जगत्प्रतर होता है। बारह अंगुल प्रमाण उत्तर-दक्षिण दिशामें ऊँचा है। सो जगत्प्रतरको बारह सूच्यंगुलसे गुणा करनेपर एक जीव-सम्बन्धी क्षेत्र बारह अंगुल गुणित जगत्प्रतर प्रमाण होता है। इसको चालीससे गुणा करनेपर चार सौ अस्सी अंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख कपाट समुद्घातका क्षेत्र होता है। स्थितमें ऊँचाई बारह अंगुल कही, उपविष्टमें (बैठनेपर) उससे तिगुणी छत्तीस अंगुल ऊँचाई होती है। अतः उक्त प्रमाणको तीनसे गुणा करनेपर एक हजार चार सौ चालीस सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख बैठे हुए कपाट समुद्घातसम्बन्धी क्षेत्र होता है। प्रतरसमुद्घातमें तीन वातवलयको छोड़कर सर्वलोकमें प्रदेश व्याप्त होते हैं। सो तीन वातवलयका क्षेत्रफल लोक-का असंख्यातबाँ भाग है। इसे लोकमें घटानेपर जो शेष रहे, उतना एक जीव सम्बन्धी

१. ब. मुखस्थितक ।

कावरोहकदण्डद्वयदोळं कवाटचतुष्टयदोळं प्रत्येकमुत्कृष्टदिदं विंशतिविंशतिप्रमितजीवंगळु
घटिइसुवरेंदु जीवगुणकारं ४० नाल्वत्तकुमेदु कैकोळल्पदुवुदु ।

सुवकस्स समुग्घादे असंख भागा य सच्चलोगो य ॥५४४॥

एदितु सूत्राद्धदोळु केवलिसमुद्घातापेक्षेयिदं लोकासंख्यातबहुभागगळु लोकमुं शुक्ललेश्येगे
५ क्षेत्रमेदु पेळल्पदुदु । रज्जुषट्कायामसंख्यातसूच्यंगुलविष्कंभोत्सेधदुपपाददंडतिर्य्यचप्रतिबद्धमप्य
संख्यातप्रतरांगुलगुणितरज्जुषट्कमात्रमेकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रमक्कु मा क्षेत्रमुमच्युतकल्पदोळु संख्यात-
जीवंगळे सावुवुवनिते तिर्य्यजीवंगळल्लि पुटदुवर्वेदितु संख्यातजीवंगळिदं गुणिसिदोडे उपपादसर्व-
क्षेत्रमक्कु— १—६।४।१ मत्तमी शुभलेश्येगळिल्लियुं सर्वत्र गुणकारभागहारंगळं निरीक्षिसि-
७
यपवत्तिसि पंचलोकंगळं स्थापिसियवरमेलेयाळापं माडल्पडुगुं । पतोदनेयक्षेत्राधिकारंतीदुदुदु ।

१० आरोहकावरोहकदण्डद्वयकवाटचतुष्के प्रत्येकमुत्कृष्टतो विंशतिविंशतिजीवसं भवाज्जीवगुणकारः ४० चत्वारिंशत् ।

इति सूत्रार्थेन केवलिसमुद्घातापेक्षया लोकस्यासंख्यातबहुभागाः लोकश्च शुक्ललेश्याक्षेत्रमुक्तं रज्जुषट्-
कायामसंख्यातसूच्यङ्गुलविष्कम्भोत्सेधैकतिर्यग्प्रतिबद्धोपपाददण्डक्षेत्रफलं संख्यातप्रतराङ्गुलहतरज्जुषट्कमात्रम् ।
अच्युतकल्पे संख्यातानामेव मरणात् तावतामेव तत्रोत्पत्तेः संख्यातेन गुणितं उपपादपदसर्वक्षेत्रं भवति
१—। ६ । ४ १ अत्रापि प्राग्वत् सर्वत्र गुणकारभागहारानपवत्यं पञ्चलोकान् संस्थाप्य आलापः
७

१५ कर्तव्यः ॥५४४॥ इति क्षेत्राधिकारः ॥ अथ स्पर्शाधिकारं सार्धगाथाषट्केनाह—

प्रतरसमुद्घातमें क्षेत्र होता है । लोकपूरण समुद्घातमें सर्वलोकमें प्रदेश व्याप्त होते हैं । अतः
लोकपूरणमें लोकप्रमाण एक जीव सम्बन्धी क्षेत्र होता है । प्रतर और लोकपूरणमें बीस
जीव तो करनेवाले और बीस जीव संकोचनेवाले होनेसे एक समयमें चालीस जीव
समुद्घात करनेवाले होते हैं । किन्तु क्षेत्र सबका पूर्वोक्त ही रहता है; अतः चालीससे गुणा
२० नहीं किया । दण्ड और कपाटमें भी बीस-बीस जीव करनेवाले और समेटनेवाले होनेसे
चालीस होते हैं, किन्तु इनका क्षेत्र भिन्न-भिन्न भी होता है; इससे वहाँ एक जीव सम्बन्धी
क्षेत्रको चालीससे गुणा किया है । यह संख्या उत्कृष्ट है ॥५४४॥

इस आधे गाथासूत्रसे केवली समुद्घातकी अपेक्षा लोकका असंख्यात बहुभाग और
सर्व लोक शुक्ललेश्याका क्षेत्र कहा है । उपपादमें मुख्य रूपसे अच्युत स्वर्गकी अपेक्षा एक
२५ जीवके प्रदेश छह राजू लम्बे और असंख्यात सूच्यंगुल प्रमाण चौड़े व ऊँचे होते हैं । अच्युत
स्वर्गमें एक समयमें संख्यात ही उत्पन्न होते हैं और संख्यात ही मरते हैं । अतः संख्यात
प्रतरांगुलसे गुणित छह राजू मात्र उपपाददण्ड क्षेत्रफलको संख्यातसे गुणा करनेपर उपपादका
सर्व क्षेत्र होता है । यहाँ भी पूर्वोक्त प्रकार पाँच लोकोंकी स्थापना करके गुणकार भागहारका
यथायोग्य अपवर्तन करके कथन करना चाहिए । क्षेत्राधिकार समाप्त हुआ ॥

क्षे	स्वस्थानस्वस्थान	विहा. स्वस्थान	वेबना समुद्घात	कषाय समुद्घात	वैकि. समुद्घात	मारणाति. समुद्घात	तैजस	आहार.
ते	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	७ ६ ७	७ ६ ७
प	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	७ ६ ७	७ ६ ७
शु	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	॥ १ ४ १ ६ ४ ६ ५ = ७ १ ५ १ ७ ४ १ ६ ५ = ७ १ ५ ५	७ ६ ७	७ ६ ७

५

केवलि स वं	उपपाद				
	$\begin{array}{c} \text{—प— प—} \\ \text{a a} \\ \text{प प प प प} \\ \text{a a a a a} \end{array}$	७ २	३१४७		
	$\begin{array}{c} \text{—प— प— ७—} \\ \text{a a} \\ \text{११ प प प प प} \\ \text{a a a a a} \end{array}$	३१४१७	७-६४१७		
स्थित दंड	पू स्थि = क =	उत्थित क =	प्रतर		
- ४१८६४०	= सू २१२६०	= २१४८०	$\frac{\text{०}}{\text{a a}}$		
आसीन दंड	पू आसीन क	आसीन क	लोकपूर		
५ - ४१७७६०	= सू २१२८८०	= २१४४०	$\frac{\text{०}}{\text{०}}$		

स्पर्शाधिकारमं सादृग्गाथावट्कविदं पेळदपं :—

फासं सव्वं लोथं तिट्ठाणे असुहलेस्साणं ॥५४५॥

स्पर्शः सर्वलोकत्रिस्थाने अशुभलेश्यानां ॥

अशुभलेश्यात्रयकके स्वस्थानमेदुं समुदघातमेदुं उपपादमेदितु सामान्यविदं त्रिस्थानमक्कु-

१० मल्लिया त्रिस्थानदोळं स्पर्शः स्पर्शं सर्वलोकः सर्वलोकमक्कुं । ≡ विशेषदि स्वस्थानस्वस्थानादि-
दशपदंगळोळं स्पर्शं फेळलुगुं ।

स्पर्शमेदुनेने दोडे स्वस्थानस्वस्थानादिवदशपदंगळोळु विवक्षितपदपरिणतंगळप्प जीवंगळिदं
वर्तमानक्षेत्रसहितमागियतीतकालदोळु स्पृष्टक्षेत्रं स्पर्शमेदुदक्कुमल्लि अन्नेवरं कृष्णलेश्याजीवंगळो
स्वस्थानस्वस्थानवेदना कषाय मारणान्तिक उपपादमेदुं ब पंचपदंगळोळु स्पर्शं सर्वलोकमक्कुं ≡ विहार-

१५ अशुभलेश्यात्रयस्य स्वस्थानसमुदघातोपपादसामान्यस्थानत्रये स्पर्शः विवक्षितपदपरिणतैर्वर्तमानक्षेत्र-
सहितातीतकालस्पृष्टक्षेत्रलक्षणः सर्वलोकः ≡ विशेषेण तु दशपदेषु उच्यते । तत्र कृष्णलेश्याजीवानां
स्वस्थानस्वस्थानवेदनाकषायमारणान्तिकोपपादेषु पञ्चपदेषु सर्वलोकः ≡ विहारवत्स्वस्थाने संख्यातसूच्यङ्गुलो-

आगे सादे छह गाथाओंसे स्पर्शाधिकार कहते हैं—

२० क्षेत्रमें तो केवल वर्तमान कालमें रोके गये क्षेत्रका ही ग्रहण होता है, किन्तु स्पर्शमें
वर्तमान क्षेत्र सहित अतीत कालमें स्पृष्ट क्षेत्रका ग्रहण होता है । अतः तीन अशुभ लेश्याओंका
स्पर्श स्वस्थान, समुद्धात और उपपाद इन तीन सामान्य स्थानोंमें सर्वलोक होता है । विशेष
रूपसे दस स्थानोंमें कहते हैं—उनमें-से स्वस्थान स्वस्थान, वेदना-समुद्धात, कषाय-समुद्धात,
मारणान्तिक और उपपाद इन पाँच स्थानोंमें कृष्णलेश्यावाले जीवोंका स्पर्श सर्वलोक है ।
विहारवत्स्वस्थानमें एक राजू लम्बा व चौड़ा और संख्यात सूच्यंगुल ऊँचा तिर्यक् लोक

वत् स्वस्थानदोळु संख्यातसूच्यंगुलोत्सेधरज्जुप्रतरमात्रतिर्यंग्लोकक्षेत्रफलं संख्यातसूच्यंगुलगुणित-
जगत्प्रतरमात्रस्पर्शनमक्कुं ४९ सू २ १ सुरशैलमूलं मोदलगांडु सहस्रारपर्यंतं त्रसनाळियोळु
वातपुद्गलंगळु संच्छन्नमागिरुतिकुमल्लिसर्वत्रातीतकालदोळु बादरवातकायिकंगळु विकुर्वि-
मुवर्वादितु रज्जुविस्तारविष्कंभपंचरज्जुदयक्षेत्रफलं लोकसंख्यातभागमात्रं स्पर्शनमक्कु = ५ तैजस-
३४३

समुद्धाताहारकसमुद्धातकेवलिसमुद्धातपदत्रयंगळु^१ वि कृष्णादिलेश्येगळोळु संभविसवु । इल्लियं ५
पंचलोकंगलं संस्थापिसि

सामान्यलोक ≡	यवरमेलेळुपलापं माडलपडुगुं
अधोलोक ≡ ४	
७	
ऊर्ध्वलोक ≡ ३	
७	
तिर्यंग्लोक ≡ १ ल	
४९	
मनुष्यलोक ६७	

स्प	स्व = स्व	वि = स	वे	क	वै	मा	ते	आ	के	उ	प
कृ	≡	= २७	≡	≡	≡ ५	≡	०	०	०	≡	
		४९			३४३						
नी	≡	= २७	≡	≡	≡ ५	≡	०	०	०	≡	
		४९			३४३						
क	≡		≡	≡	≡ ५	≡	०	०	०	≡	
					३४३						

स्वस्थानस्वस्थान वेदना कषाय मारणांतिकोपपादमं ब पंचपदंगळोळु कृष्णलेश्याजीवंगळिदं कियत्
क्षेत्रं स्पृष्टं सर्वलोकं विहारवत्स्वस्थानदोळु कृष्णलेश्याजीवंगळिदंकियत् क्षेत्रं स्पृष्टं सामान्यलोक
मोदलागि मूरं लोकंगळु असंख्यातैकभागं तिर्यंग्लोकद संख्यातैकभागमेकदोडे लक्षयोजनप्रमाण-
तिर्यंग्लोकबाह्यदत्तणिदं विहारवत्स्वस्थानक्षेत्रोत्सेधकके संख्यातगुणहीनत्वादिदं मनुष्यलोकमं १०

त्सेधरज्जुप्रतर २ १ तिर्यंग्लोकक्षेत्रफलं संख्यातसूच्यंगुलहतजगत्प्रतरं स्यात् = सू २ १ वैक्रियिकसमुद्धाते
७ ४९

७

सुरशैलमूलादारम्य सहस्रारपर्यन्तत्रसनात्वां वातपुद्गलानां संच्छन्नरूपेण अवस्थानात् । तत्र सर्वत्रातीतकाले
बादरवातकायिकानां विकुर्वणाद् रज्जुव्यासायामपञ्चरज्जुदय — क्षेत्रफलं लोकसंख्यातभागमात्रं
७ । ५ । ७

७

क्षेत्र है । इसका क्षेत्रफल संख्यात सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण होता है । वही विहार-
वत्स्वस्थानमें स्पर्श जानना । वैक्रियिक समुद्धातमें मेरुके मूलसे लेकर सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त १५
त्रसनालीमें वायुकायरूप पुद्गल संच्छन्न रूपसे भरे हैं । वायुकायिक जीवोंमें विक्रिया पायी
जाती है । सो अतीत कालकी अपेक्षा वहाँ सर्वत्र विक्रियाका सद्भाव है । अतः एक राजू

१. मं लु निकृष्टले ।

१६

नोडलुमसंस्थातगुणं क्षेत्रं स्पृष्टं वैक्रियिकपदबोळु कृष्णलेश्याजीवंगळिवं कियत् क्षेत्रं स्पृष्टं मूर्धं लोकंगळ संस्थातैकभागं । तिर्य्यंग्लोकमुमं मनुष्यलोकमुमं नोडलुमसंस्थातगुणं क्षेत्रं स्पृष्टं । इते नीललेश्ययोळं कपोतलेश्ययोळं वक्तव्यमवकुं ।

तेजोलेश्यात्रिस्थानबोळु सामान्यविदं स्पर्शमं पेळ्दपं गाथाद्वयविदं :—

५ तेउस्स य सट्टाणे लोगस्स असंखभागमेत्तं तु ।

अड चोदस भागा वा देखणा होंति णियमेण ॥५४६॥

तेजोलेश्यायाः स्वस्थाने लोकस्यासंख्यभागमात्रं तु । अष्ट चतुर्दशभागा वा देशोना भवन्ति नियमेन ॥

१० तेजोलेश्येय स्वस्थानबोळु स्पर्श स्वस्थानस्वस्थानापेक्षेयि लोकव असंख्यातभागमात्रमवकुं । तु मत्ते अष्टचतुर्दशभागंगळु मेणु किञ्चिदूनंगळप्पु नियमविदं विहारवत्स्वस्थानाविचतुःपदंगळं विवक्षितं :—

एवं तु समुग्धादे नवचोद्दसभागयं च किञ्चूणं ।

उववादे पढमपदं दिवड्ढचोद्दस य किञ्चूणं । ५४७॥

१५ एवं तु समुद्घाते नव चतुर्दशभागकं च किञ्चिदूनं । उपपादे प्रथमपदं द्व्यर्धचतुर्दश-भागः किञ्चिदूनः ॥

समुद्घातबोळं स्वस्थानबोळपेळ्दंते किञ्चिदून अष्टचतुर्दशभागमुं किञ्चिदूननवचतुर्दश-भागमु स्पर्शमवकुं । मारणांतिकसमुद्घातापेक्षेयिदं उपपादबोळु प्रथमपदं द्व्यर्धचतुर्दशभागं किञ्चिदूनं स्पर्शमवकुं इंतु सामान्यविदं तेजोलेश्येणे त्रिस्थानबोळु स्पर्श पेळ्त्पददुदु ।

भवति ॐ ५ अत्र तैजसाहारककेवलिसमुद्घाताः पुनः न संभवन्ति । अत्रापि पञ्च लोकान् संस्थाप्य आलापः ३४३

२० कर्तव्यः । एवं नीलकपोतयोरपि वक्तव्यम् ॥५४५॥ अथ तेजोलेश्यायां गाथाद्वयेनाह—

तेजोलेश्यायः स्वस्थाने स्पर्शः स्वस्थानात् स्वस्थानापेक्षया लोकस्यासंख्येयभागः । तु-पुनः, अष्टचतुर्दशभागाः अथवा किञ्चिदूना भवन्ति नियमेन विहारवत्स्वस्थानापेक्षया ॥५४६॥

समुद्घाते स्वस्थानवत् किञ्चिदूनाष्टचतुर्दशभागः किञ्चिदूननवचतुर्दशभागश्च स्पर्शो भवति मारणान्तिक-समुद्घातापेक्षया । उपपादपदे द्व्यर्धचतुर्दशभागः किञ्चिदूनः इति सामान्येन तेजोलेश्यायां त्रिस्थाने स्पर्श

२५ लम्बा-चौड़ा तथा पाँच राजू ऊँचा क्षेत्र हुआ । उसका क्षेत्रफल लोकके संख्यातवें भाग हुआ । वही वैक्रियिक समुद्घातमें स्पर्श जानना । इस कृष्णलेश्यामें आहारक, तैजस और केवलि समुद्घात नहीं होते । यहाँ भी पाँच लोकोंकी स्थापना करके यथासम्भव गुणकार भागहार जानना । कृष्णलेश्याकी ही तरह नीललेश्या और कपोतलेश्यामें भी कथन करना ॥५४५॥

तेजोलेश्यामें दो गाथाओंसे कहते हैं—

३० तेजोलेश्याका स्वस्थानमें स्पर्श स्वस्थानस्वस्थान अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग है । और विहारवत्स्वस्थानकी अपेक्षा नियमसे त्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम आठ भाग स्पर्श होता है ॥५४६॥

समुद्घातमें स्वस्थानकी तरह त्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम आठ भाग स्पर्श है । मारणान्तिक समुद्घातकी अपेक्षा त्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम नौ भाग प्रमाण

विशेषदिदं स्वस्थानस्वस्थानादिदशपदंगळोळु स्पर्शं पेळल्पडुगुमदेतेदोडे तिर्यंग्लोकद
रज्जुप्रतरक्षेत्रदोळु ७ जलचरसहितंगळप्प लवणोदकालोदस्वयंभूरमणसमुद्रमेदी समुद्रत्रय-



७

रहितसर्वसमुद्रक्षेत्रफलं कर्त्तव्यतिरलु शेषक्षेत्रं शुभत्रयलेश्यास्वस्थानस्वस्थानस्पर्शक्षेत्रमकुं ।
तदानयनक्रमं पेळल्पडुगुमदेतेदोडे जम्बूद्वीपमादियाणि स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तमाव सर्वद्वीपसमुद्र-
गळु द्विगुणद्विगुण विस्तीर्णंगळगिरितिपुंनु १ ल । २ ल । ४ ल । ८ ल । १६ ल । ३२ ल । ६४ ल । ५
१२८ ल । २५६ ल । ५१२ ल । इति लक्षयोजनविष्कम्भमप्य जम्बूद्वीपसूक्ष्मक्षेत्रफलं :—

सत्त णव सुण्ण पंच य छण्णव चउरेक्क पंच सुण्णं च ।

जम्बूदीवस्सेवं गुणिदकळं होदि णादव्वं ॥

७९०५६९४१५० एतावन्मात्रं जम्बूद्वीपगुणितफलमकुमिदनोबु खंडमेबु माडल्पडुवु
। १ । मत्तं लवणसमुद्रदोळु तत्प्रमाणखंडंगळु चतुर्विंशतिगळप्पुवु । २४ । घातकीषड्वीपदोळु १०
चतुस्तरचत्वारिंशच्छतप्रमितंगळप्पुवु । १४४ ।

कालोदकसमुद्रदोळु षट्छतद्वाप्तप्रमाणंगळप्पुवु ६७२ । पुष्करवरद्वीपदोळु अशीत्युत्त-
राष्टाविंशतिशतप्रमितंगळप्पुवु २८८० । तत्समुद्रदोळु एकादशसहस्रनवशतचतुःप्रमितखंडंगळप्पुवु

उक्तः । विशेषेण तु दशपदेषु उच्यते—तिर्यंग्लोकस्य रज्जुप्रतरस्य क्षेत्रे ७ जलचरसहितलवणोदकालोदक-



७

स्वयंभूरमणसमुद्रम्यः शेषसर्वसमुद्रक्षेत्रफलेऽपनीते शेषं शुभत्रयलेश्यास्वस्थानस्वस्थाने स्पर्शो भवति । तद्यथा १५
जम्बूद्वीपादयः स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्ताः सर्वे द्वीपसमुद्राः द्विगुणद्विगुणविस्ताराः सन्ति । तत्र लक्षयोजनविष्कम्भो
जम्बूद्वीपः तस्य सूक्ष्मक्षेत्रफलं—

सत्तणवसुण्णपंचयछण्णवचउरेक्कपंचसुण्णं च ।

इत्येतावत् ७९०५६९४१५० इदमेकखण्डं कृत्वा लवणसमुद्रे तादृशानि चतुर्विंशतिः २४ । घातकीखण्डे
शतचतुश्चत्वारिंशत् १४४ । कालोदके समुद्रे षट्छतद्वाप्तप्रमाणः ६७२ । पुष्करद्वीपे द्विसहस्राष्टशतशोतिः । २८८० । २०

स्पर्श है । उपपादस्थानमें त्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुल कम डेढ़ भाग प्रमाण स्पर्श है ।
यह सामान्यसे तेजोलेख्याके तीन स्थानोंमें स्पर्श कहा । विशेषसे दस स्थानोंमें स्पर्श कहते
हैं—तिर्यंग्लोक एक राजू लम्बा व चौड़ा है । इसमें लवणोदक, कालोदक और स्वयंभूरमण
समुद्रमें ही जलचर जीव पाये जाते हैं; शेष समुद्रोंमें नहीं । सो तिर्यंग्लोकके क्षेत्रमें-से जिन
समुद्रोंमें जलचर जीव नहीं हैं, उन समुद्रोंका क्षेत्रफल घटानेपर जितना शेष रहे, उतना तीन २५
शुभ लेख्याओंका स्वस्थानस्वस्थानमें स्पर्श जानना । उसीको कहते हैं—जम्बूद्वीपसे लेकर
स्वयंभूरमण समुद्रपर्यन्त सब द्वीपसमुद्र दूने-दूने विस्तारवाले हैं । उनमें-से जम्बूद्वीपका
विस्तार एक लाख योजन है । उसका सूक्ष्म क्षेत्रफल इस प्रकार है—सात नौ शून्य पाँच छह
नौ चार एक पाँच और शून्य ७९०५६९४१५० । इसे एक खण्ड मानकर लवण समुद्रमें इतने

११९०४। वारुणिवरद्वीपदोळु चतुरशीतित्रिशताष्टचत्वारिंशत्सहस्रगळप्पुवु ४८३८४। तत्समुद्र-
दोळु द्वासप्तत्युत्तर पंचनवतिसहस्रैकलक्षप्रमितंगळप्पुवु १९५०७२। क्षीरवरद्वीपदोळु समलक्ष-
त्र्यशीतिसहस्रत्रिशतषष्टिमात्रंगळप्पुवु ७८३३६०। तदर्णवदोळु एकत्रिशत्लक्षैकोनचत्वारिंशत्सहस्र-
पंचशतचतुरशीतिप्रमितंगळप्पुवु। ३१३९५८४। एवं स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तं नेतव्यंगळप्पुवु।

५ ३१३९५८४। स ई खंडंगळं साधिसुवकरण सूत्रत्रयं :—

७८३३६० क्षे

१९५०७२। स

४८३८४ वा

११९०४। स

१० २८८०। घ

६७२। स

१४४। दा

२४ ल ल

१। ज

१५ बाहिरसूईवर्गं अब्भंतरसूईवर्गपरिहीणं।

जंबूवासविभक्ते तत्तियमेत्ताणि खंडाणि ॥ —त्रि. सा. ३१६ गा.।

बाहिरसूई ५ ल। वर्ग ५ ल। ५ ल। गुणिते। २५ ल ल। अब्भंतरसूई १ ल। वर्ग १ ल। १ ल। परिहीणं। २४। ल ल। जंबूवास १ ल ल। विभक्ते २४ ल ल तत्तियमेत्ताणि १ ल ल

खंडाणि २४।

२० लूऊण सला वारस सलागुणिदे वु वळयखंडाणि।

बाहिर सूई सलागा कदी तदंता खिला खंडा ॥

तत्समुद्रे एकादशसहस्रनवशतचत्वारि ११९०४। वारुणीद्वीपे अष्टचत्वारिंशत्सहस्रत्रिशतचतुरशीतिः ४८३८४। तत्समुद्रे एकलक्षपञ्चनवतिसहस्रद्वासप्ततिः १९५०७२। क्षीरवरद्वीपे समलक्षत्र्यशीतिसहस्रत्रिशतषष्टिः ७८३३६०। तदर्णवे एकत्रिशत्लक्षैकोनचत्वारिंशत्सहस्रपञ्चशतचतुरशीतिः। ३१३९५८४ एवं स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तमानेत-

२५ व्यानि। तदानयनसूत्रत्रयं बाहिरसूई ५ ल, वर्ग ५ ल ५ ल, गुणिते पञ्चीस ल ल, अब्भन्तरसूई १ ल, वर्ग १ ल १ ल, गुणिते ल ल परिहीणं २४ ल ल, जंबूवास १ ल ल, विभक्ते २४। ल ल अपवर्तिते तत्तियमेत्ताणि १। ल ल

प्रमाण वाले चौबीस खण्ड होते हैं। धातकी खण्डमें एक सौ चवालीस खण्ड होते हैं। कालोद समुद्रमें छह सौ बहत्तर खण्ड होते हैं। पुष्कर द्वीपमें दो हजार आठ सौ अरसी खण्ड होते हैं। पुष्कर समुद्रमें ग्यारह हजार नौ सौ चार खण्ड होते हैं। वारुणी द्वीपमें अड़तालीस हजार तीन सौ चौरासी खण्ड होते हैं। वारुणी समुद्रमें एक लाख पनचानवे हजार बहत्तर खण्ड होते हैं। क्षीरवर द्वीपमें सात लाख तिरासी हजार तीन सौ साठ खण्ड होते हैं। क्षीर-
३० वर समुद्रमें इकतीस लाख उनतालीस हजार पाँच सौ चौरासी खण्ड होते हैं। इस प्रकार स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त लाना चाहिए। इसके लानेके लिए तीन सूत्र हैं। तदनुसार लवणसमुद्रकी बाह्य सूची पाँच लाख योजन, उसका वर्ग पचीस लाख लाख योजन। लवण
३५ समुद्रकी अभ्यन्तर सूची एक लाख योजन। उसका वर्ग एक लाख लाख योजन। घटानेपर

रुऊणसला २ । बारस १२ । सलाग २ । गुणिदे दु २ । १२ । २ । वळयखंडाणि ।

२४ । बाहिरसूई सलागा ५ कदी २५ । तदंताखिला खंडा ।

बाहिरसूईवल्यवासूणा चउगुणिद्ववासहदा ।

इगिलक्खवग्गभजिदा जंबूसमवल्यखंडाणि ॥ —त्रि. सा. ३१८ गा. ।

बाहिरसूई ५ ल । वळयं । वास २ ल । ऊणा ३ ल । चउगुण ३ ल । ४ । इद्ववास २ ल । हदा २४ ल ल । इगिलक्खवग्ग १ ल ल भजिदा २४ ल ल जंबूसमवल्यखंडाणि २४ । इल्लि १ ल ल

सर्व्वद्वीपखंडंगळं बिट्ठु समुद्रखंडंगळने यादुकोडु प्रकृतं पेळ्ळपडुगुमदे ते दोडे लवणसमुद्रदोळु जंबूद्वीपोपमानखंडंगळु चतुर्व्विंशतिप्रमितंग २४ । लवनोंडु लवणसमुद्रखंडमेडु माडि १ । या चतुर्व्विंशतिखंडंगळिदं कालोदकसमुद्रद जंबूद्वीपसमानद सर्व्वखंडंगळं भागिसिदोडे ६७२ लवण- २४

समुद्रोपमानलब्धखंडंगळप्पुविप्पत्तेडु २८ । मत्तमा चतुर्व्विंशतिखंडंगळिदं पुष्करसमुद्रद जंबूद्वीप-

खण्डाणि २४ । रुऊणसला २ बारस १२ सलाग २ । गुणिदे दु २ १२ । २ वलयखण्डाणि २४ । बाहिरसूई सलागा ५ कदी २५ तदंताखिलाखण्डा । बाहिरसूई ५ ल वलयवासू २ ल, गा ३ ल, चउगुणिद्ववास ४२ ल, हदा २४ ल ल, इगिलक्खवग्गभजिदा २४ ल ल जंबूसमवल्यखण्डाणि २४ । अत्र सर्व्वद्वीपखण्डानि १ ल ल

त्यक्त्वा सर्व्वसमुद्रखण्डेषु जंबूद्वीपसमचतुर्व्विंशतिखण्डैर्भक्तेषु लवणसमुद्रे लवणसमुद्रसमखण्डमेकं १ । कालोदकखण्डेषु भक्तेषु ६७२ अष्टाविंशतिः २८ । पुष्करसमुद्रखण्डेषु भक्तेषु ११९०४ चतुःशतषण्णवतिः ४९६, २४

शेष रहे चौबीस लाख लाख योजन । इस तरह बाह्य सूचीके वर्गमें-से अभ्यन्तर सूचीके वर्गको घटाना । फिर उसे जम्बूद्वीपके व्यास लाख योजनके वर्गसे भाग देनेपर चौबीस लब्ध आया । उतने ही खण्ड लवणसमुद्रमें होते हैं । तथा लवणसमुद्रका व्यास दो लाख होनेसे उसकी शलाका दो हैं । उसमें-से एक घटानेपर एक रहा । उसको बारह और शलाका दोसे गुणा करनेपर चौबीस वलयखण्ड होते हैं । तथा लवणसमुद्रकी बाह्य सूची पाँच लाख योजन है, अतः शलाकाका प्रमाण पाँच, उसका वर्ग पच्चीस । सो लवण समुद्र पर्यन्त पच्चीस खण्ड होते हैं । तथा लवण समुद्रकी बाह्य सूची पाँच लाख योजन, उसमें-से उसका व्यास दो लाख योजन घटानेपर तीन लाख शेष रहे । इनको चौगुणे व्यास आठ लाख योजनसे गुणा करनेपर चौबीस लाख हुए । इसमें एक लाखके वर्गसे भाग देनेपर चौबीस आये । उतने ही जम्बूद्वीपके समान वलयाकार खण्ड लवण समुद्रमें होते हैं ।

सो यहाँ सर्व्वद्वीप सम्बन्धी खण्डोंको छोड़कर सर्व्वसमुद्र सम्बन्धी खण्ड ही लेना । तथा जम्बूद्वीप समान चौबीस खण्डोंका भाग समुद्रके खण्डोंमें देना । तब लवणसमुद्रमें लवणसमुद्रके समान एक खण्ड होता है । कालोदके छह सौ बहत्तर खण्डोंमें चौबीससे भाग देनेपर कालोद समुद्रमें लवणसमुद्रके समान अट्ठाईस खण्ड होते हैं । पुष्कर समुद्रके ग्यारह

१. व. कालोदके अष्टाविं । २. व. समुद्रे चतुः ।

समानखंडंगळं पंचणिसुत्तं विरलु पुष्करसमुद्रखंडंगळु षण्णवत्युत्तरचतुःशतप्रमितंगळप्पुवु ४१६ ।
मत्तमा चतुर्विंशतिखंडंगळिदं वारुणिसमुद्रद जंबूद्वीपसमानसर्वखंडंगळं प्रमाणिसुत्तं विरलु
१९५०७२ अष्टाविंशतिशतोत्तराष्टसहस्रप्रमितंगळप्पुवु ८१२८ । मत्तमा चतुर्विंशतिखंडंगळिदं
२४

क्षीरसमुद्रद जंबूद्वीपसहस्रखंडंगळ ३१३९५८४ प्रमाणिसुत्तं विरलु मेकलक्षत्रिंशत्सहस्राष्टशत-
२४

५ षोडशप्रमितखंडंगळप्पुवु १३०८१६ ।

ई प्रकारदिदमरिदु स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यंतं नडसत्पडुवु १३०८१६ मत्तमल्लि

८१२८
४९६
२८
१

सर्वत्र प्रभवोत्तरोत्पत्तिनिमित्तमेकादिचतुर्गुणोत्तरमवरप्रमाणऋणखंडंगळं प्रक्षेपिसुत्तं विरलु
द्वयादिषोडशोत्तरगुणसंकलितक्रममाणि नडवुल्लि प्रकृतक्षेत्रफलसमुत्पत्तिनिमित्तं पुष्करसमुद्रद-

	वि १ छे ३ छे ३ २	वि १ छे ३ छे ३ २	द्विगुणषोडशवर्गखंडप्रमाण माडि
क्षी	२ । १६ । १६ । १६ । १६	१ ४ ४ ४ ४	
वा	२ । १६ । १६ । १६ ।	१ ४ ४ ४	
पु.	२ । १६ । १६ ।	१ ४ ४	
का	२ । १६ । का ल	१ ४ ।	
ल	२ । १	१	
	धन	ऋण	

१० वारुणीसमुद्रखण्डेषु भक्तेषु-१९५०७२ अष्टसहस्रैकशताष्टाविंशतिः ८१२८ । क्षीरसमुद्रखण्डेषु भक्तेषु
२४

३१३९५८४ एकलक्षत्रिंशत्सहस्राष्टशतषोडश १३०८१६ एवं स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तं गन्तव्यं १३०८१६ पुनरत्र
२४

८१२८
४९६
२८
१

सर्वत्रैकादिचतुर्गुणोत्तरक्रमेण ऋणे प्रक्षिप्ते द्वयादिषोडशोत्तरगुणसंकलितक्रमो गच्छति—

०	०	०
१ ३	१ ३	०
वि- १ छे छे ३	वि- १ छे छे ३	०
३ २	३	०

हजार नौ सौ चार खण्डोंमें चौबीससे भाग देनेपर चार सौ छियानबे खण्ड होते हैं । वारुणी
समुद्रके खण्ड एक लाख पंचानवे हजार बहत्तरमें चौबीससे भाग देनेपर आठ हजार एक
१५ सौ अठ्ठाईस खण्ड होते हैं । क्षीर समुद्रके खण्ड इकतीस लाख उनतालीस हजार पाँच सौ
चौरासीमें चौबीससे भाग देनेपर एक लाख तीस हजार आठ सौ सोलह खण्ड होते हैं ।

१. म परसुत्तं । २. व. समुद्रे अष्टं । ३. व. समुद्रे एकलक्षं ।

षोडशवर्गखंड गुणोत्तरमबकुं । मत्ते सर्व्वद्वीपसागरगलनदिसुत्तं विरलु सर्व्वसमुद्रप्रमाणमबकुमल्लि
लवणोदकालोदस्वयंभूरमणसमुद्रशलाकात्रयमं कळेदोडे प्रकृतगच्छमबकुमीयाद्युत्तरगच्छगलिदं—

पदमेत्ते गुणयारे अण्णोणं गुणिय रूय परिहीणे ।

रूऊणगुणेण्हिये मुहेण गुणियंमि गुणगणियं ॥

२	१६	१६	१६	१६	१	४	४	४	४	क्षी
२	१६	१६	१६		१	४	४	४		वा
२	१६	१६			१	४	४			पु
२	१६				१	४				का
२	१				१					ल
धन					ऋण					

अत्र प्रकृतक्षेत्रफलोत्पत्तिनिमित्तं पुष्करसमुद्रस्य द्विगुणषोडशवर्गखण्डानि आदिः षोडशगुणोत्तरसर्व्वद्वीप-
समुद्रसंख्याधं समुद्रत्रयशलाकोनं गच्छः धनमानीयते । 'पदमेत्ते गुणयारे अण्णोणं गुणियं,' अत्र गच्छो द्वीपसागर-

इस प्रकार स्वयंभूरमण पर्यन्त जानना चाहिए । सो सर्वत्र एकको आदि लेकर चतुर्गुणा
उत्तरोत्तर ऋण और दो को आदि लेकर सोलहगुणा उत्तरोत्तर धन करनेसे लवण समुद्र
समान खण्ड आते हैं ।

लवण समुद्र समान खण्डोंका प्रमाण लानेके लिए रचना—

समुद्र

धनराशि

ऋणराशि

क्षीरवर	२	१६	१६	१६	१६	१	४	४	४	४
वारुणीवर	२	१६	१६	१६		१	४	४	४	
पुष्कर	२	१६	१६			१	४	४		
कालोद	२	१६				१	४			
लवणोद	२	१				१				

यहाँ दो आदि सोलह सोलह गुणा तो धन जानना और एक आदि चौगुना-चौगुना
ऋण जानना । धनमें से ऋणको घटाने पर जो प्रमाण रहे, उतने ही लवण समुद्र समान खण्ड
जानना । जैसे प्रथम स्थानमें धन दो और ऋण एक । सो दो में-से एक घटाने पर एक रहा ।

मे० बी गुणसंकलनसूत्रेष्टदिदं धनमं तदु चतुर्विंशतिखंडगणितं जंबूद्वीपक्षेत्रफलदिदमं गुणियसियपवत्तिसि पूर्वं निक्षिप्तसंख्यातसूच्यंगुलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रऋणसंकलितधनमं किंचिद्वनं माडुत्तिरलु दगरयभाजित १ २ ३ ९ जगत्प्रतरमात्रं ऋणक्षेत्रमवकु १ मिदे० तादुदे० ते० १ २ ६ ९ दोडे पेळत्पडुगुं ।

- ५ इल्लि गच्छप्रमाणं द्वीपसागरंगळ १ संख्याधर्मयप्पुदरिदं गुणोत्तरद १६ मूलमे ग्राह्यमवकु ४ । मडुकारणविदं । पदमेत्ते गुणयारे अण्णोण्णं गुणियं एदु गच्छमात्रद्विकगळं वग्गितसंवग्गं माडिदोडे

संख्याधर्ममिति गुणोत्तरस्य १६ मूलं ४ गृहीत्वा गच्छमात्रद्विकद्वयेषु परस्परं गुणितेषु रज्जुवर्गः स्यात् । = = ७ । ७

- सो लवण समुद्रमें एक खण्ड हुआ । दूसरे स्थानके दो को सोलहसे गुणा करने पर बत्तीस घन हुआ । और एकको चारसे गुणा करने पर चार ऋण हुआ । बत्तीसमें-से चार घटाने पर १० अट्ठाईस रहा । सो दूसरे कालोदक समुद्रमें लवण समुद्र समान अट्ठाईस खण्ड हैं । तीसरे स्थानके बत्तीसको सोलहसे गुणा करनेपर पाँचसौ बारह घन हुआ । और चारको चारसे गुणा करनेपर सोलह ऋण हुआ । पाँच सौ बारह में से सोलह घटाने पर चार सौ छियानवे रहे । सो इतने ही पुष्कर समुद्रमें लवण समुद्र समान खण्ड हैं । अब जलचर रहित समुद्रोंका क्षेत्रफल कहते हैं—

- १५ जो द्वीप समुद्रोंका प्रमाण है, उसमें-से यहाँ समुद्रोंका ही ग्रहण होनेसे आधा करें । उसमें-से जलचर सहित तीन समुद्र घटानेपर जलचर रहित समुद्रोंका प्रमाण होता है ; वही यहाँ गच्छ जानना । सो दो आदि सोलह-सोलह गुणा घन कहा था । सो जलचररहित समुद्रोंके धनमें कितना क्षेत्रफल हुआ, उसे कहते हैं—

- २० 'पदमेत्ते गुणयारे' सूत्रके अनुसार गच्छ प्रमाण गुणकारको परस्परमें गुणा करके उसमें-से एक घटाओ । तथा एक हीन गुणकारके प्रमाणसे भाग दो । तथा मुख अर्थात् आदिस्थानसे गुणा करो । तब गुणकाररूप राशिमें सबका जोड़ होता है । यहाँ गच्छका प्रमाण तीन कम द्वीपसागरके प्रमाणसे आधा है । सो सब द्वीप-समुद्रोंका प्रमाण कितना है यह कहते हैं—

- २५ एक राजूके जितने अर्द्धच्छेद हैं, उनमें एक लाख योजनके अर्द्धच्छेद, एक योजनके साठ लाख अड़सठ हजार अंगुलियोंके अर्द्धच्छेद और सूच्यंगुलके अर्द्धच्छेद तथा मेरुके ऊपर प्राप्त हुआ एक अर्द्धच्छेद, इतने अर्द्धच्छेद घटानेपर जितना शेष रहे, उतने सब द्वीप समुद्र हैं । और गुणोत्तरका प्रमाण सोलह है । सो गच्छ प्रमाण गुणोत्तरको परस्परमें गुणा करो । सो एक राजूकी अर्द्धच्छेद राशिसे आवे प्रमाण मात्र स्थानोंमें सोलह-सोलह रखकर परस्परमें गुणा करनेसे राजूका वर्ग होता है । सो कैसे है, यह कहते हैं—

- ३० १. म संख्यातमेयप्पुदं ।

रज्जुवर्गं पुट्टुगुं । रूवपरिहीणे । रूपमेकप्रदेशमदीरिदं हीनमादोडिदु ७।७ रुऊणगुणेणहिये

७।७।१५ मुहेण गुणियम्मि गुणगणियं = २।१६।१६ मुखं पुष्करसमुद्रमवकु । मत्त-
७।७।१५

मिदं संकलितघनमं चतुर्विंशतिखंडंगळिदमं जंबूद्वीपक्षेत्रफलदिदमं योजनांगुलंगळ वर्गदिदमं

रूवपरिहीणे ७।७ रुऊणगुणेणहिये ७।७ मुहेण गुणियम्मि गुणगणियं = २।१६।१६ पुनरिदं चतुर्विंशति-
= ७।७।१५
७७ ७७।१५

विवक्षित गच्छके आधा प्रमाणमात्र विवक्षित गुणाकारको रखकर परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है, वही प्रमाण विवक्षित गच्छ प्रमाण मात्र विवक्षित गुणाकारका वर्गमूल रखकर परस्परमें गुणा करनेपर होता है । जैसे विवक्षित गच्छ आठके आवे प्रमाण चार जगह विवक्षित गुणाकार नौको रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पैसठ सौ इकसठ होते हैं । वही विवक्षित गच्छमात्र आठ जगह विवक्षित गुणाकार नौका वर्गमूल तीन रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पैसठ सौ इकसठ होते हैं ।

इसी प्रकार यहाँ विवक्षित गच्छ एक राजूके अर्धच्छेदके अर्धच्छेद प्रमाण मात्र जगह सोलह-सोलह रखकर परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है, वही राजूके अर्धच्छेद मात्र सोलहका वर्गमूल चार-चार रखकर परस्परमें गुणा करनेपर प्रमाण होता है । सो राजूके अर्धच्छेद मात्र जगह दो-दो रखकर गुणा करनेपर राजू होता है और उतनी ही जगह दो-दो बार दो रखकर परस्परमें गुणा करनेपर राजूका वर्ग होता है । सो जगत्प्रतरको दो बार सातका भाग देनेपर इतना ही होता है । उसमें-से एक घटानेपर जो प्रमाण हो, उसको एक हीन गुणाकारके प्रमाण पन्द्रहसे भाग दें । यहाँ आदिमें पुष्कर समुद्र है, उसमें लवणसमुद्र समान खण्डोंका प्रमाण दोको दो बार सोलहसे गुणा करे जो प्रमाण हो, उतना है, वही मुख है । उससे गुणा करे । ऐसा करनेपर एक हीन जगत्प्रतरको दो सोलह-सोलहका गुणाकार और सात सात पन्द्रहका भागहार हुआ । अथवा राजूके अर्धच्छेद प्रमाण सोलहका वर्गमूल चारको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे भी राजूका वर्ग होता है । अथवा राजूके अर्धच्छेद प्रमाण स्थानोंमें दो-दो रखकर उन्हें परस्परमें गुणा करनेसे राजूका प्रमाण होता है और राजू प्रमाण स्थानोंमें दो-दो रखकर परस्परमें गुणा करनेसे राजूका वर्ग होता है । सो ही जगत्प्रतरमें दो बार सातसे भाग देनेपर भी इतना ही होता है । इसमें-से एक घटानेपर जो प्रमाण हो, उसे एक हीन गुणाकार पन्द्रहसे भाग दो । इसको मुखसे गुणा करो । सो यहाँ आदिमें पुष्कर समुद्र है, उसमें लवणसमुद्रके समान खण्डोंका प्रमाण दोको दो बार सोलहसे गुणा करो, २×१६×१६ उतना है । वही यहाँ मुख है, उसीसे गुणा करो । ऐसा करनेसे एक कम जगत्प्रतरको दो, सोलह-सोलहसे गुणा और सात, सात, पन्द्रहसे भाग हुआ;

यथा = $\frac{२ \times १६ \times १६}{७७।१५}$ । एक लवण समुद्रमें जम्बूद्वीपके समान चौबीस खण्ड होते हैं । अतः

इस राशिमें चौबीससे गुणा करना । और जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे गुणा करना । एक योजनके सात लाख अड़सठ हजार अंगुल होते हैं । यहाँ राशि वर्गरूप है और वर्गराशिका भागहार

प्रतरांगुलदिदं गुणिसि बलिबकं :—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।

तेसि अण्णोण्हदे हारो उप्पण्णरासिस्स ॥

एंदु लक्षयोजनच्छेदमात्रद्विकद्वयंगल संवर्गजनितलक्षयोजनवर्गदिदं येकयोजनांगुलच्छेद-

- ५ मात्रद्विकद्वयसंवर्गजनितएकयोजनांगुलंगल वर्गदिदं मेरुमध्यच्छेदमोदर द्विकवर्गदिदं जल-
चरसहितसमुद्रत्रयशलाकात्रयद गुणोत्तरगुणितघनप्रमितदिदं १६। १६। १६ गुणिसत्पट्ट
प्रतरांगुलदिदं भागिसि भाज्यभागहारंगलं निरोक्षिसि :—

जम्बूद्वीपक्षेत्रफलयोजनाङ्गुलवर्गप्रतराङ्गुलैः संगुण्य पश्चात्—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।

१०

तेसि अण्णोण्हदे हारो उप्पण्णरासिस्स ।

इति लक्षयोजनच्छेदमात्रद्विकद्वयैर्जातलक्षयोजनवर्गेण एकयोजनाङ्गुलच्छेदमात्रद्विकद्वयैर्जनितैकयोजनाङ्गुल-
वर्गेण मेरुमध्यच्छेदस्य द्विकवर्गेण जलचरसमुद्रशलाकात्रयस्य गुणोत्तरघनेन च १६। १६। १६ हतप्रतराङ्गुलेन

- गुणाकार वर्गरूप होता है, अतः सात लाख अड़सठ हजारका दो बार गुणा करना होता है ।
सूच्यंगुलके वर्गको प्रतरांगुल कहते हैं, अतः इतने प्रतरांगुलोंसे उक्त राशिको गुणा करना ।
१५ पश्चात् 'विरलिदरासीदो' इत्यादि करणसूत्रके अनुसार द्वीप-समुद्रोंके प्रमाणमें-से राजूके
अर्धच्छेदोंमें-से जितने अर्धच्छेद घटाये हैं, उनके आधे प्रमाणमात्र गुणाकार सोलहको
परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो, उसे उक्त राशिका भागहार जानना । सो यहाँ जिसका
आधा ग्रहण किया, उस सम्पूर्ण राशि प्रमाण सोलहके वर्गमूल चारको परस्परमें गुणा करनेसे
भी वही राशि आती है । सो अपने अर्धच्छेद प्रमाण दो-दोके अंकोंको परस्परमें गुणा करनेसे
२० विवक्षित राशि होती है । यहाँ चार कहे हैं, अतः उतने ही मात्र दो बार दो-दोके अंकोंको
परस्परमें गुणा करनेसे विवक्षित राशिका वर्ग आता है । तदनुसार यहाँ लाख योजनके
अर्धच्छेद प्रमाण दो बार दो-दोके अंकोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे एक लाखका
वर्ग आता है । एक योजनके अंगुलके अर्धच्छेद मात्र दो बार दो-दोको रखकर परस्परमें
गुणा करनेसे एक योजनके अंगुल सात लाख अड़सठ हजारका वर्ग आता है । मेरुके ऊपर
२५ आनेवाले एक अर्धच्छेद मात्र दो दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे चार हुआ । सूच्यंगुलके
अर्धच्छेदमात्र दो-दोको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे प्रतरांगुल हुआ । ये सब भागहार होते
हैं । तथा जलचरवाले तीन समुद्र गच्छमें-से कम किये हैं अतः गुणोत्तर सोलहका तीन बार
भाग होता है । इस प्रकार जगत्प्रतरमें प्रतरांगुल, दो, सोलह, चौबीस और सात सौ नब्बे
करोड़ छप्पन लाख, चौरानबे हजार, एक सौ पचास तथा सात लाख अड़सठ हजार,
३० सात लाख अड़सठ हजार तो गुणाकार हुआ । तथा प्रतरांगुल, सात, सात, पन्द्रह, एक लाख,
एक लाख, तथा सात लाख अड़सठ हजार, सात लाख अड़सठ हजार और चार और
सोलह-सोलह-सोलह भागहार हुआ । इनमें-से प्रतरांगुल, दो बार सोलह, दो बार सात
लाख अड़सठ हजार ये गुणाकार और भागहारमें समान हैं, अतः इनका अपवर्तन हो जाता
है । गुणाकारमें दो और चौबीसको परस्परमें गुणा करनेसे अड़तालीस होते हैं, तथा भाग-

= ४।२।१६।१६।२४।७९०५६९४१५०।७६८०००।७६८०००

४।७।७।१५।१६।१६।७६८०००।७६८०००।४।१६।१६।१६

अपवर्तितं = ७९०५६९४१५० हारंगळं गुणिसिदोडिडु = ७९०५६९४१५० इवनपवर्तिसुध
७।७।१६।१६।४।५ ९८०००००००००००

क्रममेते दोडे भाज्यदि भागहारमं भागिसिद शेषमे भागहारमवकुं मंतु भागिसुत्तिरलु दगरय भक्त-
जगत्प्रतरप्रमितमवकु $\frac{1}{2}$ ।१। ई संकलनधनदोळिर्प्य ऋणं पदमेते इत्यादिद्वंद्वं गच्छाद्धेतिमितं
१२।३९

गुणोत्तरद मूलं ग्राह्यमपुदरिदं गुणोत्तरं नात्कदर मूलमेरडरिदं रज्जुछेदंगळ विरळिसि वर्गित- ५

संवर्ग माडिदोडे रज्जु पुट्टुगुं। हवपरिहीणे रूपमेकप्रदेशमदरिदं परिहीन माडिदोडिडु ७ रु

ऊणगुणेणहिए ७।३ सुहेण गुणियंमि गुणगणियं। मुखं पुष्करसमुद्रमपुदरि पदिमारिं गुणिसि-
दोडिडु १६ इदं चतुर्विंशतिखंडगळिदं जंबूद्वीपक्षेत्रफलदिदं एकयोजनांगुलंगळ
७ ३

भवत्वा भाज्यभागहारान् निरीक्ष्य=४।२।१६।१६।२४।७९०५६९४१५०।७६८०००।७६८०००
४।७।७।१५।१६।१६।७६८०००।७६८०००।४।१६।१६।१६

अपवर्त्य = ७९०५६९४१५०

हारान् परस्परं गुणयित्वा = ७९०५६९४१५०

१०

७।७।१६।१६।४।५

९८०००००००००००

भक्ते साधिकधगरयभक्तजगत्प्रतरं स्यात् = १। अत्रत्य ऋणमानीयते 'पदमेते गुणयारे अण्णोण्णं गुणिय' अत्रापि
१२३९

गच्छार्थत्वाद् गुणोत्तरचतुष्कस्य मूलं गृहीत्वा गच्छमात्रद्विकेषु परस्परं गुणितेषु रज्जु—रूपपरिहीणे—रूऊण
७ ७

हारमें पन्द्रह और सोलहको परस्परमें गुणा करनेसे दो सौ चालीस होते हैं। इसे अड़तालीस-
से अपवर्तित करनेपर भागहारमें पाँच रहे। इस प्रकार करनेसे स्थिति इस प्रकार रही—

= ४।२।१६।१६।२४।७९०५६९४१५०।७६८०००।७६८००० अपवर्तन करनेपर १५
४।७।७।१५।१६।१६।७६८०००।७६८०००।४।१६।१६।१६

७९०५६९४१५० सब भागहारोंको परस्परमें गुणा करनेपर और उनको गुणाकारके अंकोंसे
७।७।१६।१६।४।५

भाग देनेपर धनराशिमें सर्वक्षेत्र फल 'साधिक धगरय' अर्थात् कुछ अधिक बारह सौ
उनतालीससे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण होता है। अब ऋण लाना है। सो जलचर सहित
समुद्रोंका ऋणरूप क्षेत्रफल लाते हैं—'पदमेते गुणयारे' इत्यादि सूत्रके अनुसार गच्छमात्र
गुणाकार चारका परस्परमें गुणा करना चाहिए। सो राजूके अर्धच्छेदोंके आधे प्रमाण चारको २०
परस्परमें गुणा करनेसे एक राजू होता है। यहाँ गच्छ सर्वद्वीप समुद्रोंके प्रमाणसे आधा है।
अतः गुणाकार चारका वर्गमूल दो ग्रहण करना। सम्पूर्ण गच्छमें एक राजूके अर्धच्छेद कहे
हैं। अतः एक राजूके अर्धच्छेद मात्र दोको परस्परमें गुणा करनेसे एक राजूका प्रमाण होता
है, वह जगत्श्रेणिका सातवाँ भाग है। उसमें-से एक घटानेपर जो प्रमाण हो, उसको एकहीन
गुणाकारतीनसे भाग दें। तथा पुष्कर समुद्रकी अपेक्षा आदि स्थानमें प्रमाण सोलह है, २५

वर्गोद्विदं प्रतरांगुलद्विदं गुणिसि बळिकं "विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूपाणि । तेसि अण्णोण्हदे हारो उप्पणरासिस्स" एंडु ओंडु लक्षयोजनंगळिदं एकयोजनांगुलंगळिदं मेरुमध्यच्छेदद्विकविदं जलचरसहितसमुद्रशलाकात्रयजनितगुणोत्तरघनविदं १४।४। गुणिसत्पट्ट सूच्यंगुलं भागहारमक्कु १६।४। २४। ७९०५६९४१५०। ७६८०००। ७६८००० मिदन-
७३।२।१ ल। ७६८०००। २।४।४।४।

५ पर्वत्तिसिदोडे संख्यातसूच्यंगुलप्रमितजगच्छ्रेणिगळपुववं २१ किंचिदूतं माडिदोडिदु = १
१२३९

गुणेण हिये - ३ मुहेण १६। गुणयम्मि गुणगणियं - ३। १६। इदं चतुर्विंशतिखण्डजम्बूद्वीपश्रेत्रफलैकयोज-
७ ७

नाङ्गुलवर्गप्रतराङ्गुलैः संगुण्य पश्चात्—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूपाणि ।

तेसि अण्णोण्हदे हारो उप्पणरासिस्स ॥

१० इति लक्षयोजनैरेकयोजनाङ्गुलैर्मध्यच्छेदस्य द्विकेन समुद्रशलाकात्रयजगुणोत्तरघनेन च १४।४।४।

हत्सूच्यङ्गुलेन भक्त्वा— १६।४। २४। ७९०५६९४१५०। ७६८०००। ७६८००० अपवर्तिते संख्यात-
७३।२।१ ल। ७६८०००। २।४।४।४।

सूच्यङ्गुलप्रमितजगच्छ्रेणिमात्रं भवति - २१। अनेन किंचिदूतं = १ पूर्वोक्तं साधिकधगरयभक्तजगत्प्रतरमात्रं
१२३९

१५ उससे गुणा करें। ऐसा करनेसे एक कम जगतश्रेणिको सोलहका गुणकार व सात और तीनका भागहार हुआ। इसको पूर्वोक्त प्रकारसे चौबीस खण्ड, जम्बूद्वीपके क्षेत्रफल रूप योजनोंके प्रमाण और एक योजनके अंगुलोंके वर्ग तथा प्रतरांगुलोंसे गुणा करो। पश्चात् 'विरलितरासीदो' इत्यादि सूत्रके अनुसार गच्छमेंसे जितने राजूके अर्धच्छेद घटायें हैं, उसका आधा प्रमाण चारके अंकोंको परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो, उतना भागहार जानना। जिस राशिका आधा प्रमाण लिया, उस राशिमात्र चारके वर्गमूल दोको परस्परमें गुणा करनेपर एक लाख योजनके अर्धच्छेद प्रमाण दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे एक लाख हुए। एक योजनके अंगुलोंके अर्धच्छेद प्रमाण दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे सात लाख अड़सठ हजार अंगुल हुए। मेरुके मध्यमें एक अर्धच्छेदके दूने दो हुए। सूच्यंगुलके अर्धच्छेद प्रमाण दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे सूच्यंगुल हुआ। ये सब भागहार हुए। तीन समुद्र घटायें थे सो तीन बार गुणोत्तर चारका भी भागहार जानना। इस तरह एकहीन जगतश्रेणिको सोलह, चार, चौबीस, और सात सौ नब्बे करोड़ छप्पन लाख चौरानवे हजार एक सौ पचास तथा सात लाख अड़सठ हजार और सात लाख अड़सठ हजारका तो गुणाकार हुआ। तथा सात, तीन, और सूच्यंगुल और एक लाख, और सात लाख अड़सठ हजार तथा दो, चार, चार, चारका भागहार हुआ।
२५ १ हीन ज. श्रे. १६।४। २४। ७९०५६९४१५०। ७६८०००। ७६८०००। अपवर्तन करनेपर संख्यात-
७३।२।१ ल. ७६८०००। २।४।४।

१. ब. मेरुमध्यच्छेद ।

पूर्वोक्तद्वय भक्तजगत्प्रतरमात्रऋणक्षेत्रं सिद्धमादुदाहणक्षेत्रमं रज्जुप्रतरमात्रक्षेत्रदोळ = सम-
४९
च्छेदं माडिकन्निदोडे शेषमिदु = ११९० इदंनपर्वतिसलेडु भाज्यदि भागहारमं भागिसिदोडे
४९।१२३९

साधिककाम ५१ भक्तजगत्प्रतरमात्रं विवक्षितक्षेत्रद तलस्पर्शमवकुं = १ इदमूर्ध्वस्पर्शग्रहणार्थ-
५१

मागि जीवोत्सेधजनितसंख्यातसूच्यंगुलंगणितं गुणिसिदोडे शुभलेश्यागळे स्वस्थानस्वस्थानस्पर्श-
मवकुं = २१ इदं कटाक्षिसि तेजोलेश्येगे स्वस्थानस्वस्थानापेक्षेयिदं लोकासंख्यातभागं स्पर्शमेदु ५
५१
पेळपट्टदुदु । विहारवत् स्वस्थानदोळं वेदनाकषायवैक्रियिकसमुद्धातदोळं तेजोलेश्येगे अष्टचतु-
ददंशभागंगळ किचिदूनंगळगि ८ = प्रत्येकं नाल्कडेयोळमवकुमी किचिदूनाष्टचतुर्ददंशभागं
१४

ऋणक्षेत्रं सिद्धम् । इदं रज्जुप्रतरे = समच्छेदेनापनीय = ११९० अपवर्तनार्थं भाज्येन भागहारं भक्त्वा
४९ ४९ । १२३९

साधिककाम ५१ भक्तजगत्प्रतरं विवक्षितक्षेत्रस्य तलस्पर्शो भवति = १ । इदमूर्ध्वस्पर्शग्रहणार्थं जीवोत्सेधजनित-
५१

संख्यातसूच्यङ्गुलैर्गुणितं शुभलेश्यानां स्वस्थानस्वस्थानस्पर्शो भवति = २१ । इदं दृष्ट्वा तेजोलेश्यायाः स्वस्थान- १०
५१

स्वस्थानापेक्षया लोकासंख्येयभागः स्पर्शः इत्युक्तम् । विहारवत्स्वस्थाने वेदनाकषायवैक्रियिकसमुद्धाते च
तेजोलेश्याया अष्टचतुर्दशभागः किचिदूनः स्यात् । ८- कुतः ? सनत्कुमारमाहेन्द्रजानां तेजोलेश्योत्कृष्टांशानां
१४

सूच्यंगुलसे गुणित जगतत्रेणि मात्र क्षेत्रफल हुआ । इसे पूर्वोक्त धनराशिरूप क्षेत्रफलमें-से
घटाना चाहिए । सो किंचित्हीन साधिक बारह सौ उनतालीससे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण
सर्वजलचर रहित समुद्रोंका ऋणरूप क्षेत्रफल हुआ । इसको एक राजू लम्बा चौड़ा तथा १५
जगत्प्रतरका उनचासवाँ भाग मात्र रज्जु प्रतरक्षेत्रमें-से समच्छेद करके घटाइए । तब
जगत्प्रतरमें ग्यारह सौ नब्बेका गुणकार और उनचास गुणा बारह सौ उनतालीसका
भागहार हुआ । $\frac{ज. प्र. \times ११९०}{४९ \times १२३९}$ । अपवर्तन करनेके लिए भाज्यसे भागहारमें भाग देनेपर

साधिक इक्यावनसे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण विवक्षित क्षेत्रका प्रतररूप तलस्पर्श होता है ।
इसको ऊँचाईका स्पर्श ग्रहण करनेके लिए जीवोंकी ऊँचाईके प्रमाण संख्यात सूच्यंगुलसे २०
गुणा करनेपर कुछ अधिक इक्यावनसे भाजित संख्यात सूच्यंगुल गुणित जगत्प्रतर मात्र
शुभलेश्याओंका स्वस्थान-स्वस्थान सम्बन्धी स्पर्श होता है । इसको देखकर तेजोलेश्याका
स्वस्थान-स्वस्थानकी अपेक्षा स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भाग मात्र कहा है ।

त्रैराशिकसिद्धमवकुमदेतेदोडे सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पजदेवकर्कणे तेजोलेश्योत्कृष्टांशं संभविसुगु-
मप्युदरिदमवर्गळगे विहारं मेगच्युतकल्पपट्यंतमवकुं केळगे तृतीयपृथ्वीपट्यंतमवकुमदु कारण-
माणि अष्टरज्जुत्सेधमुं एकरज्जुप्रतरमुमवकुं $\equiv ८ =$ मंतागुत्तं विरलुं तृतीयपृथ्विय पटल-
३४३

रहिताधस्तनसहस्रयोजनदिदं किंचिदूनाष्टरज्जुत्सेधमवकुं प्र३१४ फ श १। इ $\equiv ८ -$ लब्धं
३४३ ३४३

५ किंचिदूनाष्टचतुर्दशभागमवकुमंदरिवुदु । भवनत्रयसंभूतर्गमितेयवकुमेकेदोडे :—

“भवणतियाण विहारो णिरयति सोहम्मजुगळ पेरंतं ।

उवरिमदेवपयोगेणच्चुदकप्पोत्ति णिहिट्ठो ॥”

एदितु पेळलपट्टुदप्युदरिदं भवनत्रयसंजातर्गोलं केळगे तृतीयपृथ्वीपट्यंतं मेगे सौधर्म-
युगलपट्यंतं स्वैरविहारमवकुं । मेगणदेवप्रयोगदिदमच्युतकल्पपट्यंतं विहारमवकुं । मारणसमुद्धात-
१० पददोळ तेजोलेश्येगे किंचिदूननवचतुर्दशभागक्षेत्रं स्पर्शमवकुमेकेदोडे तेजोलेश्याजीवंगळ भवन-
त्रयसंभूतर्मेण् सौधर्मेशानसानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पजर्मेण् तृतीयपृथ्वीयोळिह्वगर्गळगे ईषत्प्राग्भाराष्टम-

उपर्यधोऽच्युतान्ततृतीयपृथ्व्यन्तं विहारसंभवात् । पृथ्वीपटलरहिताधस्तनयोजनानामपनयनात् प्र३१४
३४३

फ श १ इ $\equiv ८$ —इति त्रैराशिकलब्धस्य च तत्प्रमाणत्वात् । अथवा भवनत्रयस्य उपर्यधः स्वैरं सौधर्मद्वयतृतीय-
३४३

पृथ्व्यन्तं देवप्रयोगेन अच्युतान्तं च विहारसद्भावात् तावान् संभवति । मारणान्तिकसमुद्धाते तेजोलेश्यायाः किंचि-
१५ दूननवचतुर्दशभागः भवनत्रयसौधर्मचतुष्कजानां तृतीयपृथ्व्यां स्थित्वा अष्टमपृथ्वीसंबन्धिनादरपर्याप्तपृथ्वीकायेषु
उत्पत्तुं मुक्ततत्समुद्धातदण्डानां संभवति । ९—तैजसाह्वारकसमुद्धाते संख्यातवनाद्गुलानि ६ १ केवलिसमुद्धा-
१४

तेजोलेश्याका विहारवत्स्वस्थान, वेदना समुद्धात, कषाय समुद्धात और वैकैयिक
समुद्धातमें स्पर्श कुछ कम चौदह भागमें आठ भाग है। सो कैसे हैं, यह बतलाते हैं—
सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्गके उत्कृष्ट तेजोलेश्यावाले देव ऊपर सोलहवें अच्युत स्वर्ग पर्यन्त
२० गमन करते हैं और नीचे तीसरी नरक पृथ्वीपर्यन्त गमन करते हैं। अच्युतस्वर्गसे तीसरी
नरक आठ राजू हैं। इससे चौदह भागमें-से आठ भाग कहे हैं। तथा तीसरी पृथ्वीकी
मोटाईमें जहाँ नरकपटल नहीं है, उस हजार योजनको कम करनेसे कुछ कम कहा है।
जो चौदह धनरूप राजूकी एक शलाका हो, तो आठ धनरूप राजूकी कितनी शलाका होगी
ऐसा त्रैराशिक करनेपर आठ बटे चौदह आता है। अथवा भवनत्रिकदेव स्वयं तो ऊपर
२५ सौधर्म ऐशान स्वर्ग पर्यन्त और नीचे तीसरे नरक पर्यन्त गमन करते हैं। दूसरे देव द्वारा
ले जानेपर सोलहवें स्वर्गपर्यन्त विहार करते हैं। इससे भी पूर्वोक्त प्रमाण स्पर्श है। तेजो-
लेश्याका स्पर्श मारणान्तिक समुद्धातमें चौदह भागमें-से कुछ कम नौ भाग प्रमाण होता है।
वह इस प्रकार है—भवनत्रिकदेव अथवा सौधर्मादि चार स्वर्गोंके वासी देव तीसरे नरक
गये। वहाँ ही मारणान्तिक समुद्धात किया, और ऊपर आठवीं पृथ्वीमें बादर पृथ्वी-
३० कायमें उत्पन्न होनेके लिए वहाँ तक प्रदेशोंका विस्तार किया। उस आठवीं पृथ्वीसे तीसरी
नरक नौ राजू हैं तथा पूर्ववत् तीसरी पृथ्वीकी पटलरहित मोटाई कम करनेसे कुछ कम नौ

पृथ्वीय वादरपर्याप्तपृथ्वीकायंगलोऽपुष्टलेडि मुक्तमारणांतिकसमुद्घातदंडमनुळरोळु किंचिदून-
नवचतुर्दश भागं स्पर्शसंभवमप्युदरिदं तैजससमुद्घातदोळं आहारकसमुद्घातदोळं तेजोलेश्येगे स्पर्शं
प्रत्येकं संख्यातघनांगुलप्रमितमक्कुं । केवलिसमुद्घातं तेजोलेश्येयोळसंभवमप्युदरिनापददोळिल्ल ।
उपपादपददोळु तेजोलेश्येगे प्रथमपदं स्पर्शं किंचिदूनद्वचद्वचतुर्दशभागमक्कुमेकंदोडे तेजोलेश्येय
उपपादपरिणतजीवंगळिदं सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पपर्यंतं क्षेत्रं स्पृष्टमप्युदंतागुत्तं त्रिरज्जुत्सेधमदक्के ५
किंचिदूनत्रिचतुर्दशभागमागदे द्वचद्वचतुर्दशभागप्ररूपणमाचाप्यांतराभिप्रायदिदं माबुदवगर्गळ पक्ष-
दोळु सौधर्मैशानकल्पद्वयदिदं मेगे संख्यातयोजनंगळिदं पोगि सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पप्रारंभमागि
द्वचद्वरज्जुदयदोळु परिसमाप्तिवक्कुमा चरमदोळु तेजोलेश्याजीवंगळु एनिल्लवे एंदोडिल्ल,
तत्कल्पद्वयाधस्तनविमानंगळोळे तेजोलेश्यासंभवमे बुपदेशमवगर्गळ पक्षदोळुप्युदरिदं, अथवा चित्राव-
नियोळिदं तिथ्यग्मनुष्यरुगळिगे ईशानपर्यंतमुपपादसंभवादिदं । च शब्ददिदं तेजोलेश्योत्कृष्टमृत- १०
रुगळिगे सानत्कुमारमाहेन्द्रांतिमचक्रेंद्रकप्रैणिधियोळुमुपपादमे दाक्केलंबर पेळवरवगर्गळभिप्रायदिदं

यथासंभवमागि इदुवु ३- संभविमुगुर्देरिद ३-२ दनिपममक्कुं ॥

१४

१४२

तोऽत्र न संभवति । उपपादपदे किंचिदूनद्वचर्धचतुर्दशभागः । ननु तेजोलेश्यतत्पदपरिणतैः सानत्कुमारमाहेन्द्रान्तं
क्षेत्रे स्पृष्टे त्रिरज्जुत्सेधात् किंचिदूनत्रिचतुर्दशभागः कथं नोच्यते सौधर्मद्वयादुपरि संख्यातयोजनानि गत्वा
सानत्कुमारद्वयप्रारम्भो द्वचर्धरज्जुदये परिसमाप्तिः तच्चरमे च तेजोलेश्या नास्तीति केषांचिदुपदेशाश्रयणात् १५
चित्रास्थितितिर्यग्मनुष्याणां ईशानपर्यन्तमुपपादसंभवाद्वा । चशब्दात्तेजोलेश्योत्कृष्टांशभूतानां सानत्कुमारमाहेन्द्रा-
न्तिमचक्रेंद्रकप्रणिधावुपपादं वदतां अभिप्रायेण यथासंभवं तस्यापि संभवादनियमः ॥५४७॥

बटे चौदह स्पर्श होता है । तैजस समुद्घात और आहारक समुद्घातमें संख्यात घनांगुल
प्रमाण स्पर्श है । तेजोलेश्यामें केवल समुद्घात नहीं होता । उपपाद स्थानमें चौदह राजूमें-
से डेढ़ राजूसे कुछ कम स्पर्श होता है ।

२०

शंका—तेजोलेश्यावाले जीव उपपाद करते हुए सानत्कुमार-माहेन्द्रके अन्त तक क्षेत्र-
का स्पर्श करते हैं और सानत्कुमार माहेन्द्रके अन्त तक तीन राजूकी ऊँचाई है, अतः चौदह
राजूमें-से कुछ कम तीन राजू स्पर्श क्यों नहीं कहा ?

समाधान—सौधर्म-ऐशान स्वर्गसे ऊपर संख्यात योजन जाकर सानत्कुमार-माहेन्द्र
स्वर्गोंके प्रारम्भमें डेढ़ राजूकी ऊँचाई समाप्त होती है । उसके आगे डेढ़ राजू जानेपर २५
सानत्कुमार-माहेन्द्रका अन्तिम पटल है । उसमें तेजोलेश्या नहीं है, ऐसा किन्हीं आचार्योंका
उपदेश है । उसीके अनुसार उक्त कथन किया है । अथवा चित्रा पृथ्वीपर स्थित तिर्यच
और मनुष्योंका उपपाद ऐशान स्वर्ग पर्यन्त होता है । इससे किंचित् न्यून डेढ़ राजू मात्र
स्पर्श कहा है । गाथामें आये 'च' शब्दसे तेजोलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे हुआका उपपाद
सानत्कुमार-माहेन्द्रके अन्तिम चक्रनामा इन्द्रके श्रेणीबद्ध विमानोंमें होता है, ऐसा कहने- ३०
वाले आचार्योंके अभिप्रायसे यथासम्भव तीन भाग भी स्पर्श सम्भव होनेसे कोई नियम
नहीं है ॥५४७॥

१. मं योलाक्केलंबर । २. मं रिदुवदिनं ।

पद्मलेश्येयजीवंगळगे स्पर्शं पेळस्पडुगुं :—

पम्मस्स य सट्ठाणसमुद्घाददुगेसु होदि पढमपदं ।

अडचोद्दस भागा वा देसूणा होंति णियमेण ॥५४८॥

पद्मलेश्यायाः स्वस्थानसमुद्घातद्विकेषु भवति प्रथमपदं । अष्टचतुर्दश भागा वा देशोना

५ भवंति नियमेन ॥

पद्मलेश्याजीवंगळगे वाशब्ददिदं स्वस्थानस्वस्थानपददोळमुपेळद लोकासंख्यातैकभागं स्पर्शमवकुं = २१ विहारदत्त्वस्थानदोळ प्रथमपदं स्पर्शं किंचिदूनाष्टचतुर्दशभागमवकुमंते वेदना-

५१

कषायवैक्रियिकसमुद्घातपदंगळोळमष्टचतुर्दशभागं किंचिदूनामागियवकुं । मारणान्तिकसमुद्घात-
दोळं किंचिदूनाष्टचतुर्दशभागमेयवकुमेकदोडे पद्मलेश्याजीवंगळ पृथिव्यव्वनस्पतिगळोळ पुट्टरप्पु-
१० दर्दिरं । तैजससमुद्घातदोळं आहारकसमुद्घातदोळं पद्मलेश्याजीवंगळगे प्रत्येकं संख्यातघनांगुलमे स्पर्शमवकुं केवलिसमुद्घातमा लेश्याजीवंगळोळ संभवमपुदर्दिरंमिल्लि :—

उपपादे पढमपदं पणचोद्दसभागयं देसूणं ।

उपपादे प्रथमपदं पंचचतुर्दशभागा देशोनाः ।

उपपाददोळ प्रथमपदं स्पर्शं शतारसहस्रारपर्यंतं पद्मलेश्याजीवं संभवमपुदर्दिरं पंचचतुर्दश-

१५ भागंगळ किंचिदूनांगळपुवु ५- । शुक्ललेश्याजीवंगळगे स्पर्शमं पेळदपं :—

१४

सुक्कस्स य तिट्ठाणे पढमो छच्चोद्दसा हीणा ॥५४९॥

शुक्ललेश्यायाः त्रिस्थाने प्रथमः षट्चतुर्दश भागाः हीनाः ॥

पद्मलेश्यानां वाशब्दस्वस्थानस्वस्थानपदे प्रागुक्तलोकासंख्यातैकभागः स्पर्शो भवति २१ । विहारव-

५१

त्त्वस्थाने वेदनाकषायवैक्रियिकसमुद्घातेषु च किंचिदूनाष्टचतुर्दशभागः । मारणान्तिकसमुद्घातेऽपि तथैव
२० पद्मलेश्यजीवानां पृथिव्यव्वनस्पतिषूत्पत्तिसंभवात् । तैजसाहारकसमुद्घातयाः संख्यातघनाङ्गुलानि ६१
केवलिसमुद्घातोऽत्र नास्ति ॥५४८॥

उपपादादे स्पर्शः शतारसहस्रारपर्यन्तं पद्मलेश्यासंभवात् पञ्चचतुर्दशभागाः किंचिदूना भवन्ति । ५- ।

१४

पद्मलेश्यावाले जीवोंका स्वस्थानस्वस्थानपदमें पूर्वोक्त प्रकारसे लोकका असंख्यातवां
भाग स्पर्श होता है । विहारवत्त्वस्थानमें और वेदना कषाय तथा वैक्रियिक समुद्घातोंमें
२५ कुछ कम आठ भाग स्पर्श होता है । मारणान्तिक समुद्घातमें भी चौदहमें-से कुछ कम आठ
भाग स्पर्श होता है, क्योंकि पद्मलेश्यावाले जीव पृथिवीकाय, जलकाय और वनस्पतिकायमें
उत्पन्न होते हैं । तैजस और आहारक समुद्घातमें स्पर्श संख्यात घनांगुल है । केवली-
समुद्घात इस लेश्यामें नहीं होता ॥५४८॥

पद्मलेश्यावालोंका उपपाद शतार-सहस्रार स्वर्गपर्यन्त सम्भव होनेसे उपपादपदमें
३० स्पर्श चौदह भागोंमें-से कुछ कम पाँच भाग होता है ।

शुक्ललेश्याजीवंगळगे स्वस्थानस्वस्थानदोळ मुन्नं तेजोलेश्ययोळपेळद लोकासंख्यात भागमक्कुं = २१ विहारवत्स्वस्थानमादियागि वेदनाकषायवैक्रियिकमारणान्तिकसमुद्धात- ५१

पर्यंत पंचपदंगळोळ प्रथमपदं स्पर्श देशोन षट्चतुर्दशभागं प्रत्येकमक्कुं । तैजससमुद्धातदोळं आहारकसमुद्धातदोळं प्रथमपदं स्पर्श प्रत्येकं संख्यातघनांगुलप्रमितमक्कु । ६१ ॥ केवलिसमुद्धात- पददोळपेळदपं । ५

णवरि समुद्धादम्मि य संखातीदा हवंति भागा वा ।

सर्वो वा खलु लोगो फासो होदित्ति निदिदडो ॥५५०॥

विशेषोऽस्ति समुद्धाते च संख्यातीता भवंति भागा वा । सर्वो वा खलु लोकः स्पर्शो भवति इति निर्दिष्टः ॥

केवलिसमुद्धातदोळविशेषमुंदावुदेदोडे स्वस्थानदोळं विहारमक्कुं दंडसमुद्धातदोळ १० स्पर्श क्षेत्रदोळपेळवंते संख्यातप्रतरांगुलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रमक्कु । १ ॥ मिदनारोहणावतरण- विवर्क्षेयिदं द्विगुणिसिदोडे दंडसमुद्धातदोळ स्पर्शमक्कुं—४ । १ । २ । पूर्वाभिमुखस्थितोपविष्ट- कवाटसमुद्धातदोळ स्पर्श संख्यातसूच्यंगुलप्रमितजगत्प्रतरमक्कु = २१ । मदनारोहणावरोहण- निमित्तं द्विगुणिसिदोडे पूर्वाभिमुखस्थितोपविष्टकवाटसमुद्धातारोहणावतरणस्पर्शमक्कुं = २१२ ।

शुक्ललेश्याजीवानां स्पर्शः स्वस्थानस्वस्थाने तेजोलेश्यावल्लोकासंख्यातैकभागः = २ १ विहारवत्स्वस्थाने १५
५१

वेदनाकषायवैक्रियिकमारणान्तिकसमुद्धातेषु च देशोनषट्चतुर्दशभागः ६- तैजसाहारकसमुद्धातयोः संख्यात- १४
घनाङ्गुलानि ६ १ ॥५४९॥

केवलिसमुद्धाते विशेषः, स कः ? दण्डसमुद्धाते स्पर्शः क्षेत्रवत् संख्यातप्रतराङ्गुलहतजगच्छ्रेणिः - ४ । १ स च द्विगुणितः आरोहणावरोहणदण्डयोर्भवति । - ४ । १ । २ । पूर्वाभिमुखस्थितोपविष्टकवाट- समुद्धाते संख्यातसूच्यङ्गुलमात्रजगत्प्रतरः = २ १ स च द्विगुणितः आरोहणावरोहणयोर्भवति = २ १ । २

शुक्ललेश्यावाले जीवोंका स्पर्श स्वस्थान-स्वस्थानमें तेजोलेश्याकी तरह लोकका २० असंख्यातवाँ भाग है । विहारवत्स्वस्थानमें वेदना, कषाय, वैक्रियिक और मारणान्तिक समुद्धातमें चौदह भागोंमें-से कुछ कम छह भाग स्पर्श है । तैजस और आहारक समुद्धातमें संख्यात घनांगुल स्पर्श है ॥५४९॥

केवली समुद्धातमें विशेष है । वह इस प्रकार है—दण्डसमुद्धातमें स्पर्श क्षेत्रकी तरह संख्यात प्रतरांगुलसे गुणित जगत्श्रेणि प्रमाण है । सो वह विस्तारने और संकोचनेकी २५ अपेक्षा इना होता है । पूर्वाभिमुख स्थित या बैठे हुए कपाट समुद्धातमें संख्यात सूच्यंगुल

स्प	स्व =	वि =	वे	क	वै	मा	ते	आ	केवल तमुद्धात	उपपाद	
ते	= २१ ५१	८ = १४	८ = १४	८ - १४	८ - १४	८ - १४	६१ ६१				३- २८
प	= २१ ५१	८ - १४	८ - १४	८ - १४	८ - १४	८ - १४	६१ ६१				५- १४
शु	= २१ ५१	६ - १४	६ - १४	६ - १४	६ - १४	६ - १४	६१ ६१	दं	पू=क=उ=क=	० प्र लो	६- १४
								-४१२	=२१२=२१२	०	

मत्तं अंत्युत्तराभिमुखस्थितोपविष्टकवाटसमुद्धातदोळु स्पर्श आरोहणावतरणविवक्षेयिदं द्विगुण-
संख्यातसूच्यं गुलप्रमितजगत्प्रतरमात्रमवकुं । = २१२ । प्रतरसमुद्धातदोळु स्पर्श लोकासंख्यात बहु-

भागमवकुं $\equiv$ ० मेकेदोडे वातावरुद्धक्षेत्रदिदं लोकासंख्यातैक $\equiv$ १ भागदिदं हीनमादुदप्यु-

दरिदं । लोकपूरणसमुद्धातदोळु सर्वलोक $\equiv$ स्पर्शमवकुमेदु पेळत्पट्टुदु । खलु नियमदिदं

५ उपपाददोळु स्पर्श किचिदून षट्चतुर्दशभागमवकु ६- मेकेदोडे शुक्ललेख्येयोळु आरणाच्युताव-

सानं विवक्षितमप्युदरिदं पन्नरडनेय स्पर्शाधिकारंतीदुदु ।

अनंतरं कालाधिकारं गाथाद्वयदिदं पेळदपं ।—

कालो छल्लेस्साणं णाणाजीवं पडुच्च सव्वद्धा ।

अंतोमुहुत्तमवरं एयं जीवं पडुच्च हवे ॥५५१॥

१० कालः षड्लेख्यानां नानाजीवं प्रतीत्य सव्वद्धा । अंतर्मुहूर्तोऽवरः एकं जीवं प्रतीत्य भवेत् ॥

तथैवोत्तराभिमुखस्थितोपविष्टकवाटस्यापि = २ १ । २ प्रतरसमुद्धाते लोकासंख्यातबहुभागः $\equiv$ ० । वातावरुद्ध-

क्षेत्रेण लोकसंख्यातैक $\equiv$ १ भागेन न्यूनत्वात् । लोकपूरणसमुद्धाते सर्वलोकः $\equiv$ खलु नियमेन । उपपादपदे

किचिदून- षट्चतुर्दशभागः ६- आरणाच्युतावसानस्यैव विवक्षितत्वात् ॥ ५५० ॥ इति स्पर्शाधिकारः । अथ

कालाधिकारं गाथाद्वयेनाह—

१५ मात्र जगत्प्रतर प्रमाण है । वह भी विस्तारने और संकोचनेकी अपेक्षा दूना होता है । ऐसा ही उत्तराभिमुख स्थित और उपविष्ट कपाट समुद्धातका भी होता है । प्रतर समुद्धातमें लोकका असंख्यात बहुभाग प्रमाण स्पर्श है, क्योंकि वातवलयके द्वारा रोका गया क्षेत्र लोक-
का असंख्यातवाँ भाग है और वह भाग प्रतर समुद्धातमें नहीं आता । लोकपूरण समुद्धात-
में नियमसे सर्वलोक स्पर्श है । उपपाद पदमें चौदह भागोंमें-से कुछ कम छह भाग स्पर्श है,
२० क्योंकि यहाँ आरण-अच्युत पर्यन्तकी ही विवक्षा है ॥५५०॥

कृष्णलेश्याप्रभृति षड्लेश्येगङ्गां कालं नानाजीवापेक्षेयिदं सर्वाद्धियक्कुमेकजीवापेक्षेयिदं जघन्यकालमंतर्मुहूर्तमवकुं ।

उबहीणं तेत्तीसं सत्तर सत्तेव ह्येति दो चेव ।

अट्टारस तेत्तीसा उक्कस्सा ह्येति अदिरेया ॥५५२॥

उदधीनां त्रयस्त्रिंशत् सप्तदश सप्तैव भवन्ति द्वावेवाष्टादश त्रयस्त्रिंशत् उत्कृष्टा भवन्त्यतिरेकाः॥

त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमंगळं ३३ । सप्तदशसागरोपमंगळं १७ । सप्तसागरोपमंगळं ७ । यथासंख्य-
माणि कृष्णलेश्याप्रभृत्यशुभलेश्यात्रयंगळगुत्कृष्टकालंगळपुत्रु । तेजोलेश्याप्रभृति शुभलेश्यात्रयंगळगो
यथासंख्यमाणिगुत्कृष्टकालमेरडुसागरोपमंगळं पदिनेदु सागरोपमंगळं त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमंगळं
साधिकमधिकमागपुत्रे ते दोडे षड्लेश्येगङ्गा व्याघातविषयविवर्क्षेयिदं जघन्यकालमंतर्मुहूर्तगळिदं
समधिकमाद कृष्णलेश्याप्रभृतिषड्लेश्येगङ्गा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमादिगळुत्कृष्टकालंगळपुत्रुविते-
केरडेरडुमंतर्मुहूर्तगळिदं समधिकंगळादुवे दोडे नारकदेवभवंगळत्तिणिदं पूर्वभवचरमकालदोळं
उत्तरभवप्रथमसमयदोळमंतर्मुहूर्तगळिदं उत्तमिल्लिविशेषमुंददावु-
दे दोडे तेजःपद्मलेश्येगङ्गा किंचिदून सागरोपमाद्धमतिरेकमवकुमेक दोडे सौधर्मकल्पं मोदल्गोडु
सहस्रारकल्पपर्यंतं स्वस्वोत्कृष्टस्थितिगळ मेले घातायुष्कजीवापेक्षेयिदमंतर्मुहूर्तानाद्धसागरोपमं
सम्यग्दृष्टिगङ्गा पळितोपमासंख्यातैकभागं मिथ्यादृष्टिगङ्गाम्यधिकमवकुमपुदरिदं संदृष्टिः—

कृष्णादिषड्लेश्यानां कालः नानाजीवं प्रति सर्वाद्धा सर्वकालः । एकजीवं प्रति जघन्येन अन्तर्मुहूर्तो
भवति ॥५५१॥

उत्कृष्टस्तु सागरोपमाणि कृष्णायास्त्रयस्त्रिंशत् ३३ । नीलायाः सप्तदश १७ । कपोतायाः सप्त ७ ।
तेजोलेश्याया द्वे २ । पद्माया अष्टादश १८ । शुक्लायास्त्रयस्त्रिंशत् ३३ । साधिकानि भवन्ति व्याघातविषये ।
तदाधिवयं तु देवनारकभवेभ्यः पूर्वभवचरमान्तर्मुहूर्तः उत्तरभवप्रथमान्तर्मुहूर्तश्च षण्णां । तेजःपद्मयोः पुनः
किंचिदूनसागरोपमार्धमपि, कुतः सौधर्मादिसहस्रारपर्यन्तं स्वस्वोत्कृष्टस्थितेरुपरि घातायुष्कस्य सम्यग्दृष्टेरन्त-

इस प्रकार स्पर्शाधिकार समाप्त हुआ । अब दो गाथाओंसे कालाधिकार कहते हैं—
कृष्ण आदि छह लेश्याओंका काल नाना जीवोंकी अपेक्षा सर्वकाल है और एक जीवकी
अपेक्षा जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त है ॥५५१॥

उत्कृष्टकाल कृष्णका तैत्तीस सागर है, नीलका सत्तरह सागर है, कपोतका सात सागर
है, तेजोलेश्याका दो सागर है । पद्मका अठारह सागर है और शुक्लका तैत्तीस सागर है ।
यह काल कुछ अधिक-अधिक होता है । इसका कारण यह है कि यह काल देव और
नारकियोंकी अपेक्षा कहा है । सो उनके पूर्वभवके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें और उत्तरभवके
प्रथम अन्तर्मुहूर्तमें वही लेश्या होती है, इस तरह छहों लेश्याओंका उक्त काल दो-दो अन्तर्मुहूर्त
अधिक होता है । किन्तु तेजोलेश्या और पद्मलेश्यामें कुछ कम आधा सागर भी अधिक
होता है, क्योंकि घातायुष्क सम्यग्दृष्टिके सौधर्मसे लेकर सहस्रार स्वर्गपर्यन्त अपनी-अपनी
उत्कृष्ट स्थितिसे अन्तर्मुहूर्त कम आधा सागर प्रमाण स्थिति अधिक होती है । और मिथ्या-
दृष्टिके पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक होती है ।

१. ब. भवात्पूर्वोत्तरभवयोः चरमप्रथमान्तर्मुहूर्तो षण्णां ।

कृ=कृ=	नी	क	ते	प	शु
उ २ १ २ सा ३ ३	२१ १ २ सा १७	२१ १ २ सा ७	२१ १ २ सा ५ - २	२१ २ सा ३७- २	२१ १ २ सा ३ ३
ज २ १	२१	२१	२१	२१	२१
णाणा जीवाणं	सब्ब	काळो ।			१०१०॥

परिभूरनेय कालाधिकारं तीदुङ्कु ।

अनंतरमंतराधिकारमं गाथाद्वयदिवं पेळ्ळपं :—

अंतरमवरुक्कस्सं किण्हतियाणं मुहुत्तअंतं तु ।

उवहीणं तेत्तीसं अहियं होदित्ति णिदिदुङ्कु ॥५५३॥

५ अंतरमवरोत्कृष्टं कृष्णत्रयाणां मुहूर्तोत्तस्तु । उदधीनां त्रयस्त्रिंशदधिकं भवतीति निर्दिष्टं ॥
तेउतियाणं एवं णवरि य उक्कस्सविरहकालो दु ।

पोग्गलपरियद्धा हु असंखेज्जा होंति णियमेण ॥५५४॥

तेजस्तिमृणामेवं विशेषोस्ति उत्कृष्टविरहकालस्तु । पुद्गलपरिवर्त्तनान्यसंख्येयानि भवन्ति नियमेन ॥

१० अंतरमेबुदेनेदोडे विरहकालमेबुदर्थमल्लि कृष्णादिलेश्यात्रयक्कं जघन्यांतरमंतर्मुहूर्त-
मक्कुमुत्कृष्टांतरमा लेश्यात्रयक्कं प्रत्येकं त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमं साधिकमक्कुमेदितु परमागम-
दोळपेळत्पट्टुददेतेदोडे कृष्णलेश्ययोळं तत्रोत्पत्तिक्रममिदु पूर्वकोटिवर्षायुषमनुळ्ळ मनुष्यं

मुहूर्तोनार्थसागरोपमेण मिथ्यादृष्टेस्तु पल्यासंख्यातैकभागेन चाधिकायात् ॥५५२॥ इति कालाधिकारः ।
अथान्तराधिकारं गाथाद्वयेनाह—

१५ अन्तरं विरहकालः कृष्णादित्रयस्य जघन्येनान्तर्मुहूर्तः । उत्कृष्टेन त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि साधिकानि

विशेषार्थ—वैसे सौधर्म-ऐशानमें उत्कृष्ट आयु दो सागर होती है, किन्तु आयुका
अपवर्तन घात करनेवाले सम्यग्दृष्टिके अन्तर्मुहूर्त कम ढाई सागर आयु होती है । इसी तरह
सहस्रार स्वर्गपर्यन्त जानना, क्योंकि घातायुष्ककी उत्पत्ति सहस्रार स्वर्गपर्यन्त ही होती है ।
इसी प्रकार घातायुष्क मिथ्यादृष्टिके पत्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो सागर आदिकी
२० उत्कृष्ट स्थिति होती है ॥५५२॥

कालाधिकार समाप्त हुआ । अब दो गाथाओंसे अन्तराधिकार कहते हैं—

अन्तर विरहकालको कहते हैं । कृष्ण आदि तीन लेश्याओंका जघन्य अन्तर-अन्त-
मुहूर्त है । उत्कृष्ट अन्तर साधिक तैतीस सागर है । वह इस प्रकार होता है—एक पूर्वकोटि

गर्भाष्टवर्षचरमदोळंतर्म्मूर्तषट्कमुत्तिदुदेवागळ् कृष्णलेश्येयोळे अंतर्म्मूर्तकालदोळिदु-
नीललेश्येयं पोद्दिदं । तदा कृष्णलेश्यांतरं प्रारब्धमादुदु । आ नीललेश्येयोळंतर्म्मूर्तपय्यंतमिदु-
कपोतलेश्येयं पोद्दिदनल्लियुमंतर्म्मूर्तपय्यंतमिदु । तेजोलेश्येयं पोद्दिदनल्लियुमंतर्म्मूर्तमिदु
पद्मलेश्येयं पोद्दिदनल्लियुमंतर्म्मूर्तमिदु शुक्ललेश्येयं पोद्दिदनल्लियुमंतर्म्मूर्तमिदु अष्टवर्ष-
चरमसमयदोळ् संयममं कैकोडु देशोनपूर्वकोटिवर्षं संयममननुपालसि सर्वार्थसिद्धियोळपुद्दि ५
अल्लिय त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितियं समाप्तिमाडि बंदु मनुष्यनागि तद्भवप्रथमसमयं मोदल्लोडु
अंतर्म्मूर्तकालपय्यंतं शुक्ललेश्येयोळिदु पद्मलेश्येयं पोद्दि अल्लियुमंतर्म्मूर्तपय्यंतमिदु
तेजोलेश्येयं पोद्दि अल्लियुमंतर्म्मूर्तमिदु कपोतलेश्येयं पोद्दि अल्लियुमंतर्म्मूर्तकालमिदु
नीललेश्येयं पोद्दि अल्लियुमंतर्म्मूर्तमिदु कृष्णलेश्येयं पोद्दिदनुदशांतर्म्मूर्तगळिनभ्यधिक
अष्टवर्षानपूर्वकोटिवर्षाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमंगळ कृष्णलेश्येयोळंतरमवकुं मिते नीलकपोत-
लेश्येगळमंतरं पेळल्पडुगुमिदु विशेषं नीललेश्येयोळंतांतर्म्मूर्तगळ कपोतलेश्येयोळ् षडंत-
र्म्मूर्तगळभ्यधिकंगळे दु वक्तव्यमवकुं । तेजोलेश्येयोळ्कृष्णंतात्पत्तिक्रममिदु । कश्चिज्जीवं मनुष्यं
तिर्यंचं मेणु तेजोलेश्येयं बंदु कपोतलेश्येयं पोद्दिदं तदा तेजोलेश्येयंतरं प्रारब्धमादुदु पश्चात्
कपोतनीलकृष्णलेश्येगळोळ् प्रत्येकमंतर्म्मूर्तमिदु तर्म्मूर्तगळनिदु एकेंद्रियजीवनादनल्लि आवल्लिय
संख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरिवर्तनंगळं परिभ्रमसि विकलेंद्रियजीवनादनल्लि संख्यातसहस्रवर्ष- १०

भवन्तीति निर्दिष्टम् । तत्र कृष्णायां पूर्वकोटिवर्षायुर्मनुष्यो गर्भाष्टवर्षचरमेज्जन्तर्म्मूर्तषट्के अवशिष्टे कृष्णां
गतः, अन्तर्म्मूर्तं स्थित्वा नीलां गतस्तदा कृष्णान्तरं प्रारब्धम् । ततः नीलां कपोतां तैजसीं पद्मां शुक्लां च
प्रत्येकमन्तर्म्मूर्तं स्थित्वा अष्टवर्षचरमसमये संयमं स्वीकृत्य देशोनपूर्वकोटिवर्षाणि प्रतिपाल्य सर्वार्थसिद्धिं गतः ।
तत्र त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि नीत्वा मनुष्यो भूत्वा तद्भवप्रथमसमयादन्तर्म्मूर्तं शुक्लां पद्मां तैजसीं कपोतां नीलां
च प्रत्येकं स्थित्वा कृष्णां गच्छति । इति दशान्तर्म्मूर्ताधिकानि अष्टवर्षानपूर्वकोटिवर्षाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि २०
उत्कृष्टान्तरं भवति । एवं नीलकपोतयोरपि किन्तु अधिकान्तर्म्मूर्ताः नीलायामष्टौ, कपोतायां षडेव भवन्ति ।
तेजोलेश्यायां कश्चिन्मनुष्यः तिर्यंच वा स्थित्वा कपोतां गतस्तदा तेजोलेश्यान्तरं प्रारब्धम् । पश्चात्कपोतनील-
कृष्णलेश्यामु एकान्तर्म्मूर्तं स्थित्वा एकेन्द्रियो भूत्वा आवल्लयसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनानि भ्रान्त्वा

वर्षकी आयुवाला मनुष्य गर्भसे लेकर आठ वर्षकी आयु पूरी होनेमें जब छह अन्तर्म्मूर्त शेष
रहे, तो कृष्णलेश्यामें चला गया । अन्तर्म्मूर्त तक रहकर नीललेश्यामें चला गया । तब कृष्ण-
लेश्याका अन्तर प्रारम्भ हुआ । उसके पश्चात् नील, कापोत, तेज, पद्म, शुक्लमें-से प्रत्येकमें २५
अन्तर्म्मूर्त काल तक ठहरकर आठ वर्षोंके अन्तिम समयमें संयमी हो गया । कुछ कम एक
पूर्वकोटि वर्ष तक संयमका पालन करके मरकर सर्वार्थसिद्धिमें उत्पन्न हुआ । वहाँ तैतीस
सागर बिताकर मनुष्य हुआ । मनुष्यभवके प्रथम समयसे शुक्ल, पद्म, तेज, कापोत और
नीलमें-से प्रत्येकमें अन्तर्म्मूर्त काल तक रहता हुआ कृष्णलेश्यामें चला जाता है । इस प्रकार ३०
दस अन्तर्म्मूर्त अधिक और आठ वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष अधिक तैतीस सागर कृष्ण-
लेश्याका उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी तरह नील और कापोतका भी उत्कृष्ट अन्तर होता
है । किन्तु अधिक अन्तर्म्मूर्त नीलमें आठ और कापोतमें छह ही होते हैं । कोई मनुष्य या
तिर्यंच तेजोलेश्यामें रहकर कापोतलेश्यामें चला गया । तेजोलेश्याका अन्तर प्रारम्भ हो

- गळनिदुर्बुंदु पंचेन्द्रियजीवनादनल्लि भवप्रथमसमयप्रभृति कृष्णनीलकपोतलेश्यंगळोळु प्रत्येकमंत-
 म्मुहूर्तातम्मुहूर्तगळनिदुर्बुंदु बंदु तेजोलेश्येय पोद्दिदंतु षडंतम्मुहूर्तगळिदमधिकमप्य संख्यात-
 सहस्रवर्षगळिनम्यधिकमप्यावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तंगळु तेजोलेश्येयोळुत्कृष्टांतर-
 मक्कुं । पद्मलेश्येयोळंतंरं पेळल्पडुगुं । कश्चिज्जीवनु पद्मलेश्येयि बंदु तेजोलेश्येयं पोद्दिदनागळु
 ५ पद्मलेश्येयंतंरं प्रारंभमावुदु । आ तेजोलेश्येयोळंतंरंमुहूर्तकालमिदुर्बुंदु सौधर्मकल्पद्वयोळु पत्या-
 संख्यातैकभागाम्यधिकद्विसागरोपमस्थितिकदेवनागिर्याल्लि बळिचि बंदु मुनिनंतं एकेंद्रियविकले-
 द्रियपंचेन्द्रियजीवंगळोळु पुट्टि क्रमदिदं आवलियसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनंगळं संख्यात-
 सहस्रवर्षगळनिदुर्बुंदु पंचेन्द्रियदोळुद्वभिसिद प्रथमसमयं मोदल्लोडु कृष्णनीलकपोततेजोलेश्यंगळोळं-
 तम्मुहूर्तातम्मुहूर्तगळनिदुर्बुंदु पद्मलेश्येयं पोद्दिदं इंतु पंचांतम्मुहूर्तगळिदमधिकमाद संख्यातसहस्र-
 १० वर्षगळिनधिकमप्य पत्यासंख्यातैकभागाम्यधिकसागरोपमद्वयाभ्यधिकमप्यावत्यसंख्यातैकभागमात्र-
 पुद्गलपरावर्तनंगळु पद्मलेश्येयोळुत्कृष्टांतरमक्कुं । शुक्ललेश्येयोळुमिते वत्तव्यमक्कुमावोडमिदु
 विशेषं । शुक्ललेश्येयिदं बंदु पद्मलेश्येयं पोद्दियल्लियंतंरंमुहूर्तमिदुर्बुंदु तेजोलेश्येयं पोद्दि अल्लियु-
 मंतंरंमुहूर्तमिदुर्बुंदु मुनिनंतं सौधर्मद्वयोळु पत्यासंख्यातैकभागदिदमधिकमप्य सागरोपमद्वयम-
 नल्लिय स्वस्थितियनिदुर्बुंदु बळिचि एकेंद्रियंगळोळावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनंगळं
-
- १५ विकलेन्द्रियो भूत्वा संख्यातसहस्रवर्षाणि भ्रान्त्वा पञ्चेन्द्रियो भूत्वा तद्भवप्रथमसमयात्कृष्णनीलकपोतलेश्यासु
 एकैकान्तर्मुहूर्तं स्थित्वा तेजोलेश्यां गच्छति । इति षडन्तर्मुहूर्तसंख्यातसहस्रवर्षावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुद्गल-
 परावर्तनान्युत्कृष्टान्तरं भवति । पद्मायां कश्चित्स्थित्वा तेजोलेश्यां गतस्तदा पद्मान्तरं प्रारब्धं तत्रान्तर्मुहूर्तं
 स्थित्वा सौधर्मद्वये पत्यासंख्यातैकभागाम्यधिकसागरोपमद्वयं स्थितः च्युत्वा प्राग्बदेकविकलेन्द्रियेषु क्रमेणावत्यसंख्या-
 तैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनसंख्यातसहस्रवर्षाणि स्थित्वा पञ्चेन्द्रियभवप्रथमसमयात् कृष्णनीलकपोततेजोलेश्यासु
 २० एकैकान्तर्मुहूर्तं स्थित्वा पद्मां गच्छति । इति पञ्चान्तर्मुहूर्तसंख्यातसहस्रवर्षपत्यासंख्यातैकभागाम्यधिकसागरोपम-
 द्वावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनानि उत्कृष्टान्तरं भवति । एवं शुक्लायामपि, किन्तु शुक्लातः पद्मां
-
- गया । पश्चात् कपोत, नील और कृष्णलेश्यामें एक-एक अन्तर्मुहूर्त रहकर एकेन्द्रिय हो
 गया । आवलीके असंख्यातवें भागमात्र पुद्गल परावर्तन काल एकेन्द्रियोंमें भ्रमण करके
 विकलेन्द्रिय हुआ । विकलेन्द्रियोंमें संख्यात हजार वर्ष तक भ्रमण करके पंचेन्द्रिय हुआ ।
 २५ पंचेन्द्रियके भवके प्रथम समयसे कृष्ण, नील, कापोतलेश्यामें एक-एक अन्तर्मुहूर्त ठहरकर
 तेजोलेश्यामें चला जाता है । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्त संख्यात हजार वर्ष तथा
 आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र पुद्गल परावर्तन तेजोलेश्याका उत्कृष्ट अन्तर है ।
 पद्मलेश्यामें रहकर कोई जीव तेजोलेश्यामें चला गया । तब पद्मलेश्याका अन्तर प्रारम्भ
 हुआ । वहाँ अन्तर्मुहूर्त तक रहकर सौधर्म युगलमें पत्यके असंख्यातवें भाग अधिक
 ३० दो सागर तक रहा । वहाँसे च्युत होकर पहलेकी तरह एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियोंमें क्रमसे
 आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र पुद्गल परावर्तन तथा संख्यात हजार वर्ष तक रहकर
 पंचेन्द्रिय हुआ । भवके प्रथम समयसे कृष्ण, नील, कपोत और तेजोलेश्यामें एक-एक
 अन्तर्मुहूर्त ठहरकर पद्मलेश्यामें जाता है । इस प्रकार पाँच अन्तर्मुहूर्त संख्यात हजार वर्ष,
 पत्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो सागर, आवलीके असंख्यातवें भाग पुद्गल परावर्तन

माडि बंदु विकलत्रयदोळपुट्टि संख्यातसहस्रवर्षगळनिर्दु बंदु पंचेन्द्रियजीवनागि तद्भवप्रथम समयं मोदल्लोडु कृष्णनीलकपोततेजःपद्मलेश्यागळोळु प्रत्येकमंतर्मुहूर्तार्तामूर्मुहूर्तगळनिर्दु शुक्ल-लेश्येयं पोद्दिदोडदुत्कृष्टांतरं शुक्ललेश्येगे समांतर्मुहूर्तार्ताधिकसंख्यातवर्षसहस्राधिकमप्य पळितोपमा संख्यातैकभागाधिकासागरोपमद्वयाभ्यधिकावलयसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनप्रमितमवकुं ।

अंत=कृ	नील	कपोत	तेजो	पद्मलेश्या	शुक्ललेश्या
२१।१० अ पू-व ८ सा ३३	२१।८ पू व ८ सा ३३	२१।६ पू व-८ सा ३३	२१।६ व ७००० पु द २ ० ०	२१।५ व ७००० प ० सागरोप २ ० पुद्गल प २ ०	२१।७ व ७००० प ० सागरोप १ ० पुद्गल परा २ ०
ज २१	२१	२१	२१	२१	२१

पदिनाल्लनेय अंतराधिकारंतिर्दुर्दु ।

अनंतरं भावाधिकारमुमं अल्पबहुत्वाधिकारमुमंनो दे सूत्रविदं पेळ्दपं :-

भावादो छल्लेस्सा ओदइया होंति अप्पबहुगं तु ।

दन्वपमाणे सिद्धं इदि लेस्सा वणिणदा होंति ॥५५५॥

भावतः षड्लेश्या औद्यिका भवन्ति अल्पबहुकं तु । द्रव्यप्रमाणे सिद्धं इति लेश्या वर्णिता भवन्ति ॥

तैजसीं च प्रत्येकमन्तर्मुहूर्त स्थित्वा प्राग्वत् सौधर्मद्वये पत्यासंख्यातैकभागाधिकद्विसागरोपमस्थिति एकेन्द्रियेण आवल्यसंख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनानि विकलेन्द्रियेषु संख्यातसहस्रवर्षाणि च नीत्वा पञ्चेन्द्रियभवप्रथमसमयात् कृष्णनीलकपोततेजःपद्मलेश्यागु एकैकान्तर्मुहूर्त स्थित्वा शुक्लां गच्छति तदासमान्तर्मुहूर्तसंख्यातवर्षसहस्रपलितोपमासंख्यातैकभागाधिकासागरोपमद्वयावलय- संख्यातैकभागमात्रपुद्गलपरावर्तनानि उत्कृष्टान्तरं भवति ॥५५३-५५४॥ इत्यन्तराधिकारः ॥१३॥ अथ भावाल्पबहुत्वाधिकारावाह—

इतना उत्कृष्ट अन्तर पद्मलेश्याका होता है । इसी प्रकार शुक्ललेश्यामें भी जानना । किन्तु शुक्लसे पद्म और तेजमें एक-एक अन्तर्मुहूर्त ठहरकर पहलेकी तरह सौधर्म युगलमें पत्यके असंख्यातवर्ष भाग अधिक दो सागरकी स्थिति बिताकर एकेन्द्रियोंमें आवलीके असंख्यातवर्ष भागमात्र पुद्गल परावर्तन और विकलेन्द्रियोंमें संख्यात हजार वर्ष बिताकर पंचेन्द्रिय होता है । वहाँ भवके प्रथम समयसे कृष्ण, नील, कपोत, तेज, और पद्मलेश्यामें एक अन्तर्मुहूर्त ठहरकर शुक्ललेश्यामें जाता है । तब सात अन्तर्मुहूर्त, संख्यात हजार वर्ष, पत्यके असंख्यातवर्ष भाग अधिक दो सागर, और आवलीके असंख्यातवर्ष भागमात्र पुद्गल परावर्तन उत्कृष्ट अन्तर होता है ॥५५४॥

५

१०

१५

२०

भावेदिदमारु लेश्येगळु मौदयिकंगळ्येप्पुवुवेकेदोडे कषायोदयावष्टंभसंभूतयोगप्रवृत्ति
लक्षणंगळपुदरिदं । तु मत्ते अल्पबहुत्वमं मुन्नं संख्याधिकारदोळपेळद द्रव्यप्रमाणदोळे सिद्धमक्कु-
मेकेदोडा द्रव्यप्रमाणदोळु सर्वतः स्तोकेगळु शुक्ललेश्याजीवंगळसंख्यातंगळु । ० । अवं नोडल्प-
पलेश्याजीवंगळुमसंख्यातगुणितंगळपु ० ० ववं नोडल्केतेजोलेश्याजीवंगळु संख्यातगुणितंगळपु
५ ० ० १ ववं नोडल्कपोतलेश्याजीवंगळनंतानंतगुणितंगळ १३- ववं नोडळु नीललेश्याजीवंगळपु
३
१३- ववं नोडळु कृष्णलेश्याजीवंगळसाधिकंगळपु १३- वेदिनु सिद्धंगळितारु लेश्येगळपदि-
३- ३-
नारुमधिकारंगळिदं वर्णितंगळपुवु ।

अनंतरं लेश्यारहितजीवंगळं पेळदपं :—

किण्हादिलेस्सरहिया संसारविणिग्गया अणंतसुहा ।

१०

सिद्धिपुरं संपत्ता अलेस्सिया ते मुणेदव्वा ॥५५६॥

कृष्णादिलेश्यारहिताः संसारविनिर्गताः अनंतमुखाः । सिद्धिपुरं संप्राप्ता अलेश्यास्ते
मंतव्याः ॥

भावेन षडपि लेश्याः औदयिका एव भवन्ति । कुतः ? कषायोदयावष्टंभसंभूतयोगप्रवृत्तरेव तल्लक्षण-
त्वात् । तु-पुनः, तासामल्पबहुत्वं पूर्वसंख्याधिकारे द्रव्यप्रमाणे एव सिद्धम् । तथाहि-शुक्ललेश्याजीवाः सर्वतः
१५ स्तोका अप्यसंख्याताः ० । तेभ्यः पद्मलेश्या असंख्यातगुणाः ० ० । तेभ्यस्तेजोलेश्याः संख्यातगुणाः ० ० १ ।
तेभ्यः कपोतलेश्या अनन्तानन्तगुणाः १३-तेभ्य नीललेश्याः साधिकाः १३ । तेभ्यः कृष्णलेश्याः साधिकाः
३- ३-
१३- । इति षडपि लेश्याः षोडशाधिकारैर्वर्णिता भवन्ति ॥५५५॥ अथालेश्यजीवानाह—
३-

अन्तराधिकार समाप्त हुआ । अब भाव और अल्पबहुत्व अधिकार कहते हैं—

भावसे छहों लेश्या औदयिक ही होती हैं, क्योंकि कषायके उदयसे संयुक्त योगकी
२० प्रवृत्ति ही लेश्याका लक्षण है । उनका अल्पबहुत्व तो पहले संख्या अधिकारमें जो द्रव्यप्रमाण
कहा है, उसीसे ही सिद्ध है, जो इस प्रकार है—शुक्ललेश्यावाले जीव सबसे थोड़े होनेपर
भी असंख्यात हैं । उनसे पद्मलेश्यावाले जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे तेजोलेश्यावाले
जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे कपोतलेश्यावाले जीव अनन्तानन्तगुणे हैं । उनसे नील
लेश्यावाले जीव कुछ अधिक हैं । उनसे कृष्णलेश्या वाले जीव कुछ अधिक हैं । इस
२५ प्रकार सोलह अधिकारोंसे छहों लेश्याका वर्णन किया ॥५५५॥

अब लेश्यारहित जीवोंको कहते हैं—

आवुषु केलुषु जीवंगळगे कषायस्थानोदयंगळं योगप्रवृत्तियुमितलमा जीवंगळु कृष्णादि-
लेश्यारहितरपर । संसारविनिर्गताः अदुकारणदिदं पंचविधसंसारवाराशिविनिर्गतरं अनंत-
सुखाः अतीन्द्रियानंतसुखसंतुप्तं सिद्धिपुरं संप्राप्ताः स्वात्मोपलब्धि लक्षणसिद्धियेव परमं पोहंत्पटुं
अलेश्यास्ते मंतव्याः अंतप्य जीवंगळु लेश्यारहिताऽयोगिकेवलंगळं सिद्धपरमेष्ठिगळुमोळरेदु
बगेयल्पदुवह ।

५

इंतु भगवदहंत्परमेश्वरचारुचरणारविद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरुमंडला-
चाद्यमहावादनादीश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्तिगळुं श्रीमदभयसूरिसिद्धान्तचक्रवर्ति
श्रीपादपंकजरजोरंजितललाटपटुं श्रीमत्केशवर्णविरचितगोम्मटसारकर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपि-
केयोळु जीवकांडविंशतिप्ररूपणगळोळु पंचदशं लेश्यामार्गणामहाधिकारं निगदितमायतु ॥

ये जीवाः कषायोदयस्थानयोगप्रवृत्त्यभावात् कृष्णादिलेश्यारहिताः तत एव पञ्चविधसंसारवाराशि- १०
विनिर्गताः अतीन्द्रियानंतसुखसंतुप्ताः स्वात्मोपलब्धिलक्षणं सिद्धिपुरं संप्राप्ताः ते अयोगकेवलिनः सिद्धाश्च
अलेश्या जीवा इति ज्ञातव्याः ॥५५६॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्ररचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ तत्त्वप्रदीपिकाख्यायां
जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणामु लेश्याप्ररूपणा नाम
पञ्चदशोऽधिकारः ॥१५॥

१५

जो जीव कषायोंके उदयस्थानसे युक्त योगोंकी प्रवृत्तिके अभावसे कृष्ण आदि
लेश्याओंसे रहित हैं और इसीसे पाँच प्रकारके संसार समुद्रसे निकल गये हैं, अतीन्द्रिय
अनंतसुखसे तृप्त हैं, तथा अपने आत्माकी उपलब्धि लक्षणवाले मुक्तिनगरको प्राप्त हो चुके
हैं, वे अयोगकेवली और सिद्ध जीव लेश्यासे रहित जानना ॥५५६॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव २०
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूकसे शोभित ललाटवाले
श्री केशवर्णोंके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा २५
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमेंसे लेश्यामार्गणा प्ररूपणा
नामक पन्द्रहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१५॥

भव्यमार्गणाधिकार ॥१६॥

अनंतरं भवमार्गणाधिकारं गाथाचतुष्टयदिदं पेळदपं :—

भविया सिद्धी जेसि जीवाण ते हवति भवसिद्धा ।

तच्चिवरीयाभव्या संसारादो ण सिज्झंति ॥५५७॥

५ भव्या सिद्धिर्ध्वेषां ते भव्यसिद्धाः अथवा भाविनी सिद्धिर्ध्वेषां ते भव्यसिद्धाः । तद्विपरीता अभव्याः संसारतो न सिद्धयन्ति ॥

मुंदे संभविसुवन्तप्प अनंतचतुष्टयस्वरूपयोग्यतेयाक्के लब्धरुगळिगभव्यसिद्धह । तद्विपरीत-
लक्षणमनुळ्ळ जीवंगळऽभव्यह । अदु कारणमागि अभव्यजीवंगळु संसारदत्तणिदं पिमि सिद्धियं
पडेयत्पडुवह ।

१०

भवत्तणस्स जोग्गा जे जीवा ते हवति भवसिद्धा ।

ण हु मलविगमो णियमा ताणं कणयोवलाणमिव ॥५५८॥

भव्यत्वस्य योग्याः ये जीवास्ते भवन्ति भव्यसिद्धाः । न खलु मलविगमो नियमास्तेषां कन-
कोपलानामिव ॥

यस्य नाम्नापि नश्यन्ति निश्शेषानिष्टराशयः ।

फलन्ति वाञ्छितार्थाश्च शान्तिनाथं तमाश्रये ॥१६॥

१५

अथ भव्यमार्गणाधिकारं गाथाचतुष्टयेनाह—

भव्या भवितुं योग्या भाविनी वा सिद्धिः अनन्तचतुष्टयरूपस्वरूपोपलब्धिर्ध्वेषां ते भव्यसिद्धाः । अनेन
सिद्धेर्लब्धियोग्यताभ्यां भव्यानां द्वैविध्यमुक्तम् । तद्विपरीताः उक्तलक्षणद्वयरहिताः, ते अभव्या भवन्ति । अतएव
ते अभव्या न सिद्धयन्ति संसारान्निःसृत्य सिद्धिं न लभन्ते ॥५५७॥ एवं द्विविधानामपि भव्यानां सिद्धिलाभ-
प्रसक्तौ तद्योग्यतामात्रवतामुपपत्तिपूर्वकं तां परिहरति—

२०

अथ चार गाथाओंसे भव्य मार्गणाधिकारको कहते हैं—

भव्य अर्थात् होनेके योग्य अथवा जिनकी सिद्धि—अनन्त चतुष्टयरूप आत्मस्वरूप-
की उपलब्धि भाविनी—होनेवाली है, वे जीव भव्यसिद्ध होते हैं । इससे सिद्धिकी प्राप्ति
और योग्यताके भेदसे भव्योंके दो भेद कहे हैं । उक्त दोनों लक्षणोंसे रहित जीव अभव्य
होते हैं । वे संसारसे निकलकर सिद्धिको प्राप्त नहीं होते ॥५५७॥

२५

इस प्रकार दोनों ही प्रकारके भव्योंको मुक्तिलाभका प्रसंग प्राप्त होनेपर जिनके मात्र
सिद्धि प्राप्तिकी योग्यता है, उपपत्तिपूर्वक उनको मुक्ति प्राप्ति का निषेध करते हैं—

सम्यग्दर्शनादिसामग्रियनेयिदियन्तचतुष्टयस्वरूपतोर्यबं परिणमिसल्लके योग्यरूप जीवंगलु-
नियमविदं भव्यसिद्धरुगळपरवर्गळगे मलविगमदोळु नियममिल्ल । कनकोपलंगळगे तंते केलवु-
जीवंगलु भव्यरुगळगियु रत्नत्रयप्राप्तिरूपमप्य स्वसामग्रियं पडेयलारदिरुत्तिर्पुवु । अभव्यसमानरूप
भव्यजीवंगलुमोळवे बुद्धर्थ ।

ण य जे भव्वाऽभव्वा मुक्तिसुहातीदणंतसंसारा ।

ते जीवा णादव्वा णेव य भव्वा अभव्वा य ॥५५९॥

न च ये भव्याः अभव्याश्च मुक्तिसुखाः अपगतानंतसंसाराः ते जीवा ज्ञातव्याः नैव च
भव्या अभव्याश्च ॥

आक्केलंबरु जीवंगलु भव्यरुगळमल्लु अभव्यरुगळमल्लु मुक्तिसुखाः कुत्तनकम्मक्षयदोळं
घातिकम्मक्षयदोळं संजनितातींद्रियानंतसुखमनुळळरु अतीतानंतसंसाराः पेरगिक्कल्पट्ट संसार-
मनुळळ ते जीवाः आ जीवंगलु नैव भव्याः भव्यरुगळमल्लु नैवाभव्याश्च अभव्यरुगळमल्लु
ज्ञातव्याः एदितरियल्पडुवरु ।

अनंतरं भव्यमागर्गणेयोळु जीवसंख्येयं पेळ्दपं :--

अवरो जुत्ताणतो अभव्वरासिस्स होदि परिमाणं ।

तेण विहीणो सव्वो संसारी भव्वरासिस्स ॥५६०॥

अवरो युक्तानंतो भव्यराशेर्भवति परिमाणं । तेन विहीनः सव्वः संसारी भव्यराशेः । युक्ता-
नंतजघन्यराशिप्रमाणमभव्यराशिय परिमाणमक्कुं । ज जु अ । मा अभव्यराशिहीनसव्वसंसारि-

ये भव्यजीवाः भव्यत्वस्य सम्यग्दर्शनादिसामग्रीं प्राप्यानन्तचतुष्टयस्वरूपेण परिणमनस्य योग्याः
केवलयोग्यतामाश्रयुक्ताः ते भवसिद्धा संसारप्राप्ता एव भवन्ति । कुतः ? तेषां मलस्य विगमे विनाशकरणे
केषांचित्कनकोपलानामिव नियमेन सामग्री न संभवतीति कारणात् ॥५५८॥

ये जीवा न च भव्याः नाप्यभव्याः मुक्तिसुखाः अतीतानन्तसंसाराः ते जीवा नैव भव्या भवन्ति,
नाप्यभव्या भवन्ति इति ज्ञातव्याः ॥५५९॥ अत्र जीवसंख्यामाह—

जघन्ययुक्तानन्तोऽभव्यराशिपरिमाणं भवति । ज जु अ । तेन अभव्यराशिहीनः सर्वसंसारिराशिः

जो भव्यजीव भव्यत्वके अर्थात् सम्यग्दर्शन आदि सामग्रीको प्राप्त करके अनन्त-
चतुष्टय स्वरूपसे परिणमनके योग्य हैं अर्थात् केवल योग्यतामात्र रखते हैं, वे भवसिद्ध संसारी ही होते हैं । क्योंकि जैसे कुछ स्वर्णपाषाण ऐसे होते हैं, जिनका मल दूर करना
शक्य नहीं होता, उस प्रकारकी सामग्री नहीं मिलती, उसी तरह उनके भी मलको विनाश
करनेवाली सामग्री नियमसे नहीं मिलती ॥५५८॥

जो जीव न तो भव्य हैं और न अभव्य हैं, क्योंकि उन्होंने मुक्तिसुख प्राप्त कर लिया
है और उनका अनन्त संसार अतीत हो चुका है । वे जीव न तो भव्य हैं और न अभव्य
हैं ॥५५९॥

इनमें जीवोंकी संख्या कहते हैं—

अभव्यराशि जघन्य युक्तानन्त परिमाणवाली होती है । भव संसार राशिमेंसे

१. मंमिल्लदिरुत्तिरलु कं ।

- राशि भव्यराशिय परिमाणमक्कुं १३-१ इल्लि संसारिजीवंगळ परिवर्त्तनं पेळत्पडुगुं । परिवर्त्तनं परिभ्रमणं संसरणमेदनत्थांतरमक्कुमडुवु द्रव्यक्षेत्रकालभवभावभेदादि पंचविधमक्कुं लिल द्रव्यपरिवर्त्तनं नोकर्मसंक्रमणपरिवर्त्तनभेदादिदं द्विविधमक्कुमल्लि । नोकर्मपरिवर्त्तनमेवुडु मूहं शरीरंगळगहं पर्याप्तिगळगे योग्यंगळपुवावु केलवु पुद्गलंगळ वोव्वंजीवनिदमोदु समयदोळु कैकोळत्पट्टु
- ५ स्निग्धरुक्षवर्णगंधादिगळिदं तीव्रमन्दमध्यमभावदिदमुं यथास्थितंगळु द्वितीयादिसमयंगळोळु निजजीर्णंगळु । अगृहीतंगळनंतवारंगळं कळेदु मिश्रकंगळन् अनंतवारंगळं कळेदु मध्यदोळु गृहीतंगळनुमनंतवारंगळं पेरगिविक आपुद्गलंगळं आ प्रकारदिदमे आ जीवन नोकर्मभावमनन्दत्पडुववेन्नेवरमा समुदितं कालं नोकर्मद्रव्यपरिवर्त्तनमक्कुमदे तंदोडा पुद्गलपरिवर्त्तनकालं अगृहीतग्रहणादियेदुं मिश्रग्रहणादियेदुं त्रिविधमक्कुमल्लि विवक्षितनोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तनमध्यदोळु
- १० अगृहीतंगळग्रहणकालमनगृहीतग्रहणादियेदुं गृहीतंगळग्रहणकालं गृहीतग्रहणादियेदुं युगपदुभयग्रहणकालं मिश्रग्रहणादियेदुं बुदक्कुमिवेल्लर परिवर्त्तनक्रममिडु । विवक्षितनोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तनप्रथमसमयं मोदल्लोडु निरन्तरमगृहीतंगळनंतवारंगळकळेदोस्मे मिश्रग्रहणमक्कुं मत्तम-

- भव्यराशिप्रमाणं भवति १३-अत्र संसारिणां परिवर्त्तनमुच्यते । परिवर्त्तनं परिभ्रमणं संसार इत्यनर्थान्तरम् । तत् द्रव्यक्षेत्रकालभवभावभेदात्पञ्चधा । तत्र द्रव्यपरिवर्त्तनं कर्मनोकर्मभेदाद्द्वेधा । तत्र नोकर्मपरिवर्त्तनं नाम
- १५ शरीरत्रयस्य षट्पर्याप्तीनां च योग्याः पुद्गलाः केनचिज्जीवेन एकस्मिन् समये गृहीताः स्निग्धरुक्षवर्णगंधादिभिः तीव्रमन्दमध्यमभावेन यथावस्थिताः द्वितीयादिसमयेषु निर्जीर्णाः, अगृहीताननन्तवारानतीत्य मिश्रकाननन्तवारानतीत्य मध्ये गृहीताननन्तवारानतीत्य त एव पुद्गलाः तेनैव प्रकारेण तस्यैव जीवस्य नोकर्मभावं गच्छेयुस्तावान् समुदितकालो नोकर्मद्रव्यपरिवर्त्तनं भवति । तद्यथा—तत्पुद्गलपरिवर्त्तनकालोऽगृहीतग्रहणाद्धा गृहीतग्रहणाद्धा मिश्रग्रहणाद्धेति त्रिविधः । तत्र अगृहीतग्रहणकालः अगृहीतग्रहणाद्धा । गृहीतग्रहणकालो गृहीतग्रहणाद्धा,
- २० युगपदुभयग्रहणकालो मिश्रग्रहणाद्धा । तेषां परिवर्त्तनक्रमोऽयं विवक्षितनोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तनप्रथमसमयादारभ्य निरन्तरमगृहीताननन्तवारानतीत्य सकृन्मिश्रग्रहणं, पुनः निरन्तरमगृहीताननन्तवारानतीत्य सकृन्मिश्रग्रहणं

- अभव्यराशिका परिमाण घटानेपर भव्यराशिका प्रमाण होता है । यहाँ संसारी जीवोंके परिवर्त्तन कहते हैं । परिवर्त्तन परिभ्रमण और संसार ये शब्द एकार्थक हैं । परिवर्त्तन द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भावके भेदसे पाँच प्रकारका है । उनमेंसे द्रव्यपरिवर्त्तन कर्म और
- २५ नोकर्मके भेदसे दो प्रकारका है । नोकर्म परिवर्त्तन इस प्रकार होता है—तीन शरीर छह पर्याप्तियोंके योग्य पुद्गल किसी जीवने एक समयमें ग्रहण किये । स्निग्ध- रुक्ष, वर्ण, गन्ध आदि तथा तीव्र, मन्द या मध्यम भावसे जैसे ग्रहण किये, दूसरे आदि समयोंमें उनकी निर्जरा हो गयी । उसके पश्चात् अनन्त बार अगृहीतको ग्रहण करके छोड़े, अनन्त बार मिश्रको ग्रहण करके छोड़े । मध्यमें अनन्त बार गृहीतको ग्रहण करके छोड़े । तब वे ही
- ३० पुद्गल उसी प्रकारसे उसी जीवके नोकर्म भावको जब प्राप्त हों, उतना सब काल नोकर्म द्रव्य परिवर्त्तन होता है ।

- पुद्गल परिवर्त्तनका काल अगृहीतग्रहणाद्धा, गृहीत ग्रहणाद्धा और मिश्र ग्रहणाद्धाके भेदसे तीन प्रकार है । अगृहीत ग्रहणके कालको अगृहीत ग्रहणद्धा कहते हैं । गृहीतग्रहणके कालको गृहीत ग्रहणद्धा कहते हैं और एक साथ गृहीत और अगृहीतके ग्रहणकालको मिश्रग्रहणद्धा कहते हैं । उनके परिवर्त्तनका क्रम इस प्रकार है—विवक्षित नोकर्म पुद्गल
- ३५ परिवर्त्तनके प्रथम समयसे लेकर निरन्तर अनन्त बार अगृहीतको ग्रहण करके एक बार मिश्रको ग्रहण करता है । पुनः निरन्तर अनन्त बार अगृहीतको ग्रहण करके एक बार मिश्रको

गृहीतंगळननंतवारंगळं पेरगिक्कियोनिकम्मं मिश्रग्रहणमक्कुमितनंतंगळु मिश्रग्रहणंगळपुवु । बळिक्कं निरंतरमवगृहीतंगळननंतवारंगळं कळेदोम्मं गृहीतग्रहणमक्कुमिते गृहीतंगळमनंतंगळा-
गुत्तं विरलु प्रथमपरिवर्त्तनमक्कुममल्लिदं बळिक्कं निरंतरंमिश्रकंगळमनंतवारंगळकलिदुवोम्मो-
गृहीतग्रहणमक्कु मत्तं मिश्रकंगळननंतवारंगळं पेरगिक्कियोम्मं अगृहीतग्रहणमक्कुमितनंतंगळु
अगृहीतग्रहणंगळपुवु । मुंदे मत्तं निरंतरंमागि मिश्रकंगळननंतंगळं काळपियोम्मं गृहीतग्रहणमक्कु
मिते गृहीतंगळमनंतंगळागुत्तं विरलु द्वितीयपरिवर्त्तनमक्कु ।

मत्तमल्लि बळिक्कं निरंतरंमागि मिश्रकंगळननंतवारंगळं पेरगिक्कियोम्मं गृहीतग्रहण-
मक्कु । मत्तं निरंतरंमिश्रकंगळननंतवारंगळं कळेदोम्मं गृहीतग्रहणमक्कुमितुगृहीतग्रहणंगळुम-
नंतंगळपुवुमल्लिबळिक्कं निरंतरंमागि मिश्रकंगळननंतवारंगळं कळेदोम्मं अगृहीतग्रहणमक्कु
मितु अगृहीतग्रहणंगळोलमनंतंगळागुत्तं विरलु तृतीयपरिवर्त्तनमक्कु । अल्लि बळिक्कं निरंतरं

५

१०

पुनः निरन्तरमगृहीताननन्तवारानतीत्य सकृन्मिश्रग्रहणम् । एवमनन्तानि मिश्रग्रहणानि । ततः निरन्तरम-
गृहीताननन्तवारानतीत्य सकृत् गृहीतग्रहणम् । एवं गृहीतेष्वपि अनन्तेषु जातेषु प्रथमपरिवर्त्तनं भवति ।
ततोऽग्रे निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्गृहीतग्रहणम् । पुनः निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्-
गृहीतग्रहणम् । एवमनन्तानि अगृहीतग्रहणानि । ततः निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्गृहीतग्रहणम् ।
एवं गृहीतेष्वप्यनन्तेषु जातेषु द्वितीयपरिवर्त्तनं भवति । ततोऽग्रे निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्गृहीत-
ग्रहणम् । पुनः निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्गृहीतग्रहणम् । एवं गृहीतग्रहणानि अनन्तानि । ततः
निरन्तरं मिश्रकाननन्तवारानतीत्य सकृद्गृहीतग्रहणम् । एवमगृहीतग्रहणेऽप्यनन्तेषु जातेषु तृतीयपरिवर्त्तनं भवति ।

१५

ग्रहण करता है । इस प्रकार अनन्त बार मिश्रको ग्रहण करता है । उसके पश्चात् निरन्तर
अनन्तवार अगृहीतको ग्रहण करके एक बार गृहीतका ग्रहण करता है । इस प्रकार गृहीतका
भी ग्रहण अनन्त बार होनेपर प्रथम परिवर्त्तन होता है । इसकी संदृष्टि इस प्रकार है—

२०

० ० +	० ० +	० ० +	० ० +	० ० +	० ० +
+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + १
१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

इसमें अगृहीतका चिह्न शून्य है, मिश्रका हंसपद है और गृहीतका एक अंक है । दो बार
अनन्त बारका सूचक है । प्रथम परावर्त्तनसे मतलब है, प्रथम पंक्तिके कोठोंकी समाप्ति हो
गयी, अब आगे चलिए ।

आगे निरन्तर अनन्त बार मिश्रको ग्रहण करके एक बार अगृहीतका ग्रहण करता है ।
पुनः निरन्तर मिश्रको अनन्त बार ग्रहण करके एक बार अगृहीतका ग्रहण करता है । इस तरह
अनन्त बार अग्रहीतका ग्रहण करता है । उसके पश्चात् निरन्तर मिश्रको अनन्त बार ग्रहण
करके एक बार गृहीतका ग्रहण करता है । इस प्रकार अनन्त बार गृहीतका ग्रहण होनेपर
द्वितीय परिवर्त्तन होता है । आगे निरन्तर मिश्रको अनन्त बार ग्रहण करके एक बार गृहीतका
ग्रहण करता है । पुनः निरन्तर मिश्रको अनन्त बार ग्रहण करके एक बार गृहीतको ग्रहण करता
है । इस प्रकार अनन्त बार गृहीतको ग्रहण करता है । फिर निरन्तर मिश्रको अनन्त बार
ग्रहण करके एक बार अगृहीतका ग्रहण करता है । इस प्रकार अगृहीतका ग्रहण अनन्त बार
होनेपर तृतीय परिवर्त्तन होता है । आगे निरन्तर गृहीतको अनन्त बार ग्रहण करके एक बार

२५

३०

गृहीतंगळनंतवारंगळं कळिपियोम्मे^१ मिश्रग्रहणमक्कुं । मत्तं गृहीतंगळनंतवारंगळं पेरगिक्कियोम्मे^२ मिश्रग्रहणमक्कुं मितु^३ मिश्रग्रहणंगळुमनंतंगळक्कुमल्लि बळिकं निरन्तरं गृहीतंगळनंतंगळं पेरगिक्कियोम्मे^४ अगृहीतग्रहणमक्कुमितु अगृहीतंगळोलमनंतंगळगुत्तं विरलु चतुर्थपरिवर्तन-
मक्कुं । तदनन्तरसमयदोळु विवक्षितनोकर्मपुद्गलपरिवर्तनप्रथमसमयगृहीतंगळु द्वितीयादिसमयं
५ निज्जोर्णंगळायुवु केलवु नोकर्मसमयप्रबद्धपुद्गलंगळु अवेतादृशंगळे शुद्धंगळु बंदु पोदुदुववु
अदिदेल्लमुं कडि नोकर्मपुद्गलपरिवर्तनमक्कुं । कर्मपुद्गलपरिवर्तनं पेळत्पडुगुमोदु समय-
दोळोर्ध्वजीवनिदमष्टविधकर्मभावादिसमायुवुकेलवु कैकोळत्पट्टुवु समयाधिकावलिकालप्रमितं^५
आबाधयं कळेदु द्वितीयादिसमयंगळोळु निजोर्णंगळु पूर्वोक्तक्रमदिदमे अवे आ प्रकारदिदमे आ
जीवंगे कर्मरूपतेयनेधुववु एन्नेवरमनितु कालं कर्मपुद्गलपरिवर्तनमक्कुं उळिदंतेल्ला विशेषमुं
१० नोकर्मपरावर्तनदोळपेळदंतेयक्कुमी यरडुं पुद्गलपरिवर्तनंगळगे कालंगळेरडुं समानंगळेयप्पुविल्लि
अगृहीतग्रहणकालमनंतमागियुं सर्वतः स्तोकमक्कुमेकं दोडे विनष्टद्रव्यक्षेत्रकालभावसंस्कारंगळनुळळ
पुद्गलंगळगे बहुवारं ग्रहणं घटिसदु कारणमागि इदरिदं विवक्षितपुद्गलपरिवर्तनमध्यदोळु

ततोऽपि निरन्तरं गृहीतानन्तवारानतीत्य सकृन्मिश्रग्रहणम् । पुनः गृहीतानन्तवारानतीत्य सकृन्मिश्रग्रहणम् ।
एवं मिश्रग्रहणानि अनन्तानि । ततः निरन्तरं गृहीतानन्तवारानतीत्य सकृदगृहीतग्रहणम् । एवमग्रहीतेष्वप्य-
१५ नस्तेषु जातेषु चतुर्थपरिवर्तनं भवति । तदनन्तरसमये विवक्षितनोकर्मपुद्गलपरिवर्तनप्रथमसमयगृहीताः अनन्ता
द्वितीयादिसमयनिर्जोर्णा ये नोकर्मसमयप्रबद्धपुद्गलास्त एव तादृशा एव शुद्धा आगत्य आश्रयन्ति तदेतत्सर्वं
मिलितं नोकर्मपुद्गलपरिवर्तनं भवति । कर्मपुद्गलपरिवर्तनमुच्यते—एकस्मिन् समये केनचिज्जीवेन अष्टविधकर्म-
भावेन ये गृहीताः समयाधिकावलिकालमतीत्य द्वितीयादिसमयेषु निर्जोर्णाः । पूर्वोक्तक्रमेणैव त एव तेनैव प्रकारेण
तस्यैव जीवस्य कर्मभावं प्राप्नुवन्ति तावत्कालं कर्मपुद्गलपरिवर्तनं भवति । शेषसर्वविशेषो नोकर्मपरिवर्तनवत्
२० ज्ञातव्यः । अनयोः कालौ समानौ । अत्रागृहीतग्रहणकालः अनन्तोऽपि सर्वतः स्तोकः । कुतः, विनष्टद्रव्यक्षेत्र-
कालभावसंस्कारपुद्गलानां बहुवारग्रहणाघटनात् । अनेन विवक्षितपुद्गलपरिवर्तनमध्ये गृहीतानामेव बहुवारग्रहणं

मिश्रको ग्रहण करता है । पुनः गृहीतको अनन्त बार ग्रहण करके एक बार मिश्रको ग्रहण
करता है । इस प्रकार अनन्त बार मिश्रको ग्रहण करता है । पुनः निरन्तर गृहीतको अनन्त
बार ग्रहण करके एक बार अगृहीतका ग्रहण करता है । इस प्रकार अनन्त बार अगृहीतका
२५ ग्रहण करनेपर चतुर्थ परिवर्तन होता है । उसके अनन्तर समयमें विवक्षित नोकर्म पुद्गल
परिवर्तनके प्रथम समयमें जो अनन्त नोकर्म समयप्रबद्ध पुद्गल ग्रहण किये थे और
द्वितीयादि समयमें जिनकी निर्जरा कर दी गयी थी, वे ही नोकर्म पुद्गल उसी रूपमें ग्रहण
किये जाते हैं, तो यह सब मिलकर नोकर्म पुद्गल परिवर्तन होता है ।

अब कर्मपुद्गलपरिवर्तन कहते हैं—एक समयमें किसी जीवने आठ कर्मरूपसे जो
३० पुद्गल ग्रहण किये और एक समय अधिक आवलीके बीतनेपर द्वितीयादि समयोंमें उनकी
निर्जरा कर दी । पूर्वोक्त क्रमसे वे ही पुद्गल उसी प्रकारसे उसी जीवके कर्मपनेको प्राप्त हों
तबतकका काल कर्मपुद्गलपरावर्तन कहलाता है । शेष सब विशेष कथन नोकर्म परिवर्तनकी
तरह जानना । इन दोनों परिवर्तनोंके काल समान हैं । यहाँ अगृहीत ग्रहणकाल अनन्त
होनेपर भी सबसे थोड़ा है । क्योंकि जिन पुद्गलोंका द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावका संस्कार नष्ट हो

३५ १. म^०मितु गृहीतग्रहणंगळु । २. म^०मं कलिदु ।

गृहीतगन्धगे बहुवारग्रहणं संभविषुगुमेदितु पेळलपट्टदुदक्कुं ॥ उक्तं च :—

सुहुमट्टिदिसंजुत्तं आसण्णं कम्मणिज्जरा मुक्कं ।

पाएण एदि गहणं दव्वमणिदिट्ठसंठाणं ॥ []

सूक्ष्मस्थितिसंयुक्तं आसन्नं कर्मनिर्जरा मुक्तं । प्रायेणैति ग्रहणं द्रव्यमनिर्दिष्टसंस्थानमिति ॥

अल्पस्थितिसंयुक्तं जीवप्रदेशगच्छोक्तिद्वन्द्वं कर्मनिर्जरेयिदं कर्मस्वरूपं बिडलपट्टदुदुं ५
इतप्प पुद्गलद्रव्यमनिर्दिष्टसंस्थानं विवक्षितपरावर्तनप्रथमसमयोक्तस्वरूपमल्लदुदु जीवनिदं प्रचुर-
वृत्तिरिदं स्वीकरिसलुपडुगुमेके दोडे द्रव्यादिचतुर्विधसंस्कारसंपन्नमप्युदरिदं । अगृहीतग्रहणकालं
नोडलु मिश्रग्रहणकालमनंतगुणमक्कु । ख ख । मदं नोडलु जघन्यगृहीतग्रहणकालमनंतगुणमक्कु ।
ख ख ख । मदं नोडलु जघन्यपुद्गलपरिवर्तनकालं विशेषाधिकमक्कुमधिकप्रमाणमिदु ख ख ख
ख

इदनपर्वत्तिसि इल्लि कूडिदोडिदु ज = घ ख ख ख । अदं नोडलुत्कृष्ट गृहीतग्रहणकालमनंतगुणमक्कु । १०

ख ख ख ख । मदं नोडलुत्कृष्टपुद्गलपरावर्तनकालं विशेषाधिकमक्कुमा विशेषप्रमाणमिदु

ख ख ख ख इदनपर्वत्तिसि कूडिदोडिदु । ख ख ख ख । इल्लि अगृहीतमिश्रग्रहणकालगन्धगे
ख

संभवतीत्युक्तं भवति । उक्तं च —

सुहुमट्टिदिसंजुत्तं आसण्णं कम्मणिज्जरा मुक्कं ।

पाएण एदि गहणं दव्वमणिदिट्ठसंठाणं ॥ १ ॥ []

१५

अल्पस्थितिसंयुक्तं जीवप्रदेशेषु स्थितं निर्जरया विमोचितकर्मस्वरूपं पुद्गलद्रव्यं अनिर्दिष्टसंस्थानं
विवक्षितपरावर्तनप्रथमसमयोक्तस्वरूपरहितं जीवेन प्रचुरवृत्त्या स्वीक्रियते । कुतः ? द्रव्यादिचतुर्विधसंस्कार-
संपन्नत्वात् । अगृहीतग्रहणकालात् मिश्रग्रहणकालोऽनन्तगुणः । ख ख । ततो जघन्यगृहीतग्रहणकालोऽनन्तगुणः ।
ख ख ख । ततो जघन्यपुद्गलपरिवर्तनकालो विशेषाधिकः । अधिकप्रमाणमिदं ख ख ख अपवर्त्यं तत्र निक्षिप्ते
ख

१—

१—

एवं ज = पु । ख ख ख ततः उत्कृष्टगृहीतग्रहणकालः अनन्तगुणः ख ख ख ख । तत उत्कृष्टपुद्गलपरावर्तनकालो २०

चुका है, उनका बहुत बार ग्रहण नहीं होता है । इससे यह कहा गया है कि विवक्षित पुद्गल-
परावर्तनके मध्यमें गृहीतोंका ही बहुत बार ग्रहण होता है । कहा भी है—जो कर्मरूप परिणत
पुद्गल थोड़ी स्थितिको लिये हुए जीवके प्रदेशोंमें एक क्षेत्रावगाह रूपसे स्थित होते हैं और
निर्जराके द्वारा कर्मरूपसे छूट जाते हैं, जिनका आकार कहनेमें नहीं आता तथा विवक्षित
परावर्तनके प्रथम समयमें जो स्वरूप कहा है, उस स्वरूपसे रहित हो वे ही जीवके द्वारा २५
अधिकतर ग्रहण किये जाते हैं । क्योंकि वे द्रव्यादि रूप चार प्रकारके संस्कारसे युक्त
होते हैं ।

अगृहीत ग्रहणके कालसे मिश्र ग्रहणका काल अनन्तगुणा है । उससे गृहीत ग्रहणका
जघन्य काल अनन्तगुणा है । उससे पुद्गल परिवर्तनका जघन्य काल विशेष अधिक है ।
जघन्य गृहीत ग्रहण कालको अनन्तसे भाजित करनेपर जो प्रमाण आवे, उतना उसमें जोड़ने- ३०
पर जघन्यपुद्गल परिवर्तन काल होता है । उससे उत्कृष्ट गृहीतग्रहणका काल अनन्तगुणा

जघन्योत्कृष्टभावमितलमैदितवधरिसल्पदुबुदेके दोडेतद्विष परमगुरूपदेशाभावमपुर्वरिदं संदृष्टिः—

ज=घ। ख ख ख उ घ ख ख ख ख
ज=गृ। ख ख ख उ=कृ ख ख ख ख
मिश्र। ख ख मिश्र ख ख

५ अगृ। ख अगृ। ख

इल्लि अगृहीतके संदृष्टिशून्यं मिश्रके हंसपदं गृहीतककमलियं शून्यद्वयमुं हंसपदद्वयमुं।
अंकद्वयमुं क्रमदिदन्तं गल्लप अगृहीतवारंगल्लमं मिश्रवारंगल्लमं गृहीतवारंगल्लमं संदृष्टियक्कुः—

१०

० ० +	० ० +	० ० १	० ० +	० ० +	० ० १
+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + ०
१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

इल्लिगुपयोगियक्कु मी गाथासूत्रं :—

अगृहीदमिस्सं य गृहीदं मिस्समगृहीदं तहेव गृहीदं च ।

मिस्सं गृहीदगृहीदं गृहीदं मिस्सं अगृहीदं च ॥

१५ विशेषाधिकः । तद्विशेषप्रमाणमिदं ख ख ख ख—, अपवर्त्य निक्षिप्ते एवं ख ख ख ख । अत्रागृहीतमिश्रग्रहण-
ख

कालयोज्योत्कृष्टभावी न इत्यवधार्यम् । तथाविधपरमगुरूपदेशाभावात् । संदृष्टिः

२०

उ = गृ = ख ख ख ख	उ = पु = ख ख ख ख
ज = गृ = ख ख ख	ज = पु = ख ख ख
मिश्र ख ख	०
अगृहीत ख	०

अत्रागृहीतस्य संदृष्टिः शून्यं मिश्रस्य हंसपदं, गृहीतस्यांकः, अनन्तवारस्य द्विचारः । तत्संदृष्टिः—

० ० +	० ० +	० ० १	० ० +	० ० +	० ० १
+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + ०
१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

२५ अत्रोपयोगिगाथासूत्रं—

अगृहीदमिस्सं गृहीदं मिस्समगृहीदं तहेव गृहीदं च ।

मिस्सं गृहीदमगृहीदं गृहीदं मिस्सं अगृहीदं च ॥२॥

३० है । उससे उत्कृष्ट पुद्गलपरावर्तन काल विशेष अधिक है । उत्कृष्ट गृहीत ग्रहणकालमें अनन्तसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उतना उत्कृष्ट गृहीत ग्रहणकालमें मिलानेपर उत्कृष्ट पुद्गलपरावर्तन काल होता है । यहाँ अगृहीत ग्रहणकाल और मिश्रग्रहण कालमें जघन्य और उत्कृष्टपना नहीं है, ऐसा जानना; क्योंकि उस प्रकारके उपदेशका अभाव है । यहाँ उपयोगी गाथाका अर्थ इस प्रकार है—जो द्रव्य परिवर्तनमें स्पष्ट कर आये हैं कि पहला अगृहीतमिश्र गृहीत, दूसरा मिश्र अगृहीत गृहीत, तीसरा मिश्र गृहीत अगृहीत और चतुर्थ ३५ गृहीत मिश्र अगृहीत है; इस क्रमसे ग्रहण करता है ।

१ १ ० ० "सर्वेषु पुद्गलाः खल्वेकेनाप्रोज्झिताश्च जीवेन । असकृदनन्तकृत्वः पुद्गल-
+ ० १ +
० + + १
परिवर्त्तसंसारे । "

क्षेत्रपरिवर्त्तनमुं स्वक्षेत्रपरिवर्त्तनमेवं परक्षेत्रपरिवर्त्तनमेदितुं द्विविधमवकुमल्लि । स्वक्षेत्र-
परिवर्त्तनं पेळपडुगुं । वोदानुमोर्व्व जीवं सूक्ष्मनिगोदजघन्यावगाहनदिदं पुट्टिदातं स्वस्थितिं
१ जीविसि मृतनागि मत्तं प्रदेशोत्तरावगाहनदिदं पुट्टि इंतु द्वयादिप्रदेशोत्तरकर्मदिदं महामत्स्याव- ५
१८

गाहनपर्यन्तंगळु संख्यातघनांगुल ६१ प्रमितावगाहन विकल्पंगळा जीवनिदमे येनेवरं स्वीकरि-
सल्पडुवुवेळलं कूडि स्वक्षेत्रपरिवर्त्तनमवकुं । परक्षेत्रपरिवर्त्तनमेतेंदोडे सूक्ष्मनिगोदजीवनपर्याप्तकं
सर्वजघन्यावगाहनशरीरमनुळलं लोकमध्याष्टप्रदेशंगळं तन्न शरीरमध्याष्टप्रदेशंगळं माडि पुट्टि
क्षुद्रभवकालमं जीविसि मृगनागि आजीवेन मत्तमा अवगाहनदिदमेरडु वारंगवकुमंते मूख वारंगळुमंते

अत्रोपयोग्यावृत्तं

१०

सर्वेषु पुद्गलाः खलु एकेनाप्रोज्झिताश्च जीवेन ।

ह्यसकृत्वनन्तकृत्वा पुद्गलपरिवर्त्तसंसारे ॥

१ + ० क्षेत्रपरिवर्त्तनमपि स्वपरभेदाद्देष्टा तत्र स्वक्षेत्रपरिवर्त्तनमुच्यते—कश्चिज्जीवः सूक्ष्मनिगोदजघ-
+ १ ०
+ ० १
० + १

न्यावगाहनेनोत्पन्नः स्वस्थिति १ जीवित्वा मृतः पुनः प्रदेशोत्तरावगाहनेन उत्पन्नः । एवं द्वयादिप्रदेशोत्तरक्रमेण
१८

महामत्स्यागाहनपर्यन्ताः संख्यातघनाङ्गुल ६१ प्रमितावगाहनविकल्पाः तेनैव जीवेन यावत्स्वीकृताः तत् १५
सर्वं समुदितं स्वक्षेत्रपरिवर्त्तनं भवति । परक्षेत्रपरिवर्त्तनमुच्यते—सूक्ष्मनिगोदः अपर्याप्तकः सर्वजघन्यावगाहनशरीरः
लोकमध्याष्टप्रदेशान् स्वशरीरमध्याष्टप्रदेशान् कृत्वा उत्पन्नः । क्षुद्रभवकालं जीवित्वा मृतः । स एव पुनस्तेनैव

उपयोगी आर्याच्छन्दका अर्थ—पुद्गलपरिवर्त्तनरूप संसारमें एक जीवने अनन्त
वार सब पुद्गलोंको ग्रहण करके छोड़ दिया है ।

क्षेत्रपरिवर्त्तन भी स्व और परके भेदसे दो प्रकारका है । उनमें-से स्वक्षेत्रपरिवर्त्तनको २०
कहते हैं—कोई जीव सूक्ष्मनिगोदकी जघन्य अवगाहनासे उत्पन्न हुआ । अपनी स्थिति
श्वासके अठारहवें भाग प्रमाण जीवित रहकर मर गया । पुनः एकप्रदेश अधिक उसी
अवगाहनासे उत्पन्न हुआ । इसी प्रकार दो आदि प्रदेश अधिक अवगाहनाके कमसे
महामत्स्यकी अवगाहना पर्यन्त संख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहनाके विकल्प उसी जीवने
जबनक धारण किये, वह सब मिलकर स्वक्षेत्र परिवर्त्तन होता है । २५

अब परक्षेत्र परिवर्त्तनको कहते हैं—सूक्ष्मनिगोदिया लब्धपर्याप्तक सबसे जघन्य
अवगाहनावाले शरीरके साथ लोकके आठ मध्य प्रदेशोंको अपने शरीरके मध्य आठ प्रदेश
बनाकर उत्पन्न हुआ । क्षुद्रभव काल तक जीकर मरा । वही पुनः उसी अवगाहनाके साथ
दुबारा, तिबारा, चौबारा उत्पन्न हुआ । इस प्रकार घनांगुलके असंख्यातवें भाग बार वही
उत्पन्न हुआ । पुनः एक-एक प्रदेश बढ़ाते-बढ़ाते समस्त लोकको अपना जन्मक्षेत्र बना लेता ३०

नालकु बारियुमंते इं तेन्नेवर घनाङ्गुलासंख्येयभागप्रमिताकाशप्रदेशंगळु अनितु वारंगळं नल्लिये जनिसि मत्तमेकैकप्रदेशाधिकभावेदं सर्वलोकमुं तनगे जन्मक्षेत्रभावमनेय्यिसल्लपट्टुदक्कुमेन्नेवर-
मनितुकालमेल्लं कूडि परक्षेत्रपरिवर्तनमक्कुमिल्लिगुपयोगियप्प श्लोकं :—

सर्वत्र जगत्क्षेत्रे प्रदेशो न ह्यस्ति जंतुनाऽक्षुण्णः ।

५

अवगाहनानि बहुशो बन्धमता क्षेत्रसंसारे ॥

क्षेत्रसंसारदोळु बन्धमिसुवंतप्प जीवनिदं जगच्छ्रेणिघनप्रमितजगत्क्षेत्रदोळु स्वशरीरावगाह-
रूपदिदं मुट्टुल्लपडद प्रदेशमिल्ल । अवगाहनंगळु बहुवारं कैकोळल्लपड्डुवुमिल्लि । कालपरिवर्तनं
पेळल्लपड्डुगुं । उत्सर्पिणिय प्रथमसमयदोळु पुट्टिदावजानुमोव्वं जीवं स्वायुः परिसमाप्पियोळु
मृतनागि मत्तमा जीवने द्वितीयोत्सर्पिणिय द्वितीयसमयदोळुपुट्टिस्वायुःक्षयवर्गदिदं मृतनागि आ
१० जीवने मत्तमा तृतीयोत्सर्पिणिय तृतीयसमयदोळु पुट्टि मृतनागि मत्तमा चतुर्थोत्सर्पिणिय चतुर्थ-
समयदोळुपुट्टिदन्तु क्रमदिदं मुत्सर्पिणियसमाप्पमक्कुमंते अवसर्पिणियुं समाप्पमादुदक्कुमिनु जन्म-
नैरंतयं पेळल्लपड्डु । मरणवकर्मते नैरंतयं कैकोळल्लपड्डुगुमिदेल्लमं कूडि कालपरिवर्तनमक्कुं ।

अवगाहनेन द्विवारं तथा त्रिवारं तथा चतुर्वारं एवं यावत् घनाङ्गुलासंख्येयभागः तावद्वारं तत्रैवोत्पन्नः, पुनः
एकैकप्रदेशाधिकभावेन सर्वलोकं स्वस्वजन्मक्षेत्रभावं नयति । तदेतत्सर्वं परक्षेत्रपरिवर्तनं भवति । अत्रोप-

१५ योग्यार्थावृत्तं—

सर्वत्र जगत्क्षेत्रे देशो न ह्यस्ति जंतुनाऽक्षुण्णः ।

अवगाहनानि बहुशो बन्धमता क्षेत्रसंसारे ॥

क्षेत्रसंसारे बन्धमता जीवेन जगच्छ्रेणिघनप्रमितजगत्क्षेत्रे स्वशरीरावगाहनरूपेणास्पृष्टप्रदेशो नास्ति ।
अवगाहनानि बहुवारं यानि न स्वीकृतानि तानि न सन्ति ।

२० कालपरिवर्तनमुच्यते—कश्चिज्जीवः उत्सर्पिणीप्रथमसमये जातः स्वायुःपरिसमाप्ती मृतः, पुनर्द्वितीयो-
त्सर्पिणीद्वितीयसमये जातः स्वायुःपरिसमाप्त्या मृतः । पुनः तृतीयोत्सर्पिणीतृतीयसमये जातः तथा मृतः, पुनः
चतुर्थोत्सर्पिणीचतुर्थसमये जातः । अनेन क्रमेण उत्सर्पिणीं समाप्नोति तथैवावसर्पिणीमपि समाप्नोति एवं

है । यह सब परक्षेत्र परिवर्तन है । इस विषयमें उपयोगी आर्याच्छन्दका अभिप्राय इस प्रकार
है—क्षेत्र संसारमें भ्रमण करते हुए इस जीवने बहुत-सी अवगाहनाओंके द्वारा समस्त जगत्-
२५ के क्षेत्रको अपना जन्मस्थान बनाया, कोई क्षेत्र उत्पन्न होनेसे शेष नहीं रहा । ऐसी कोई
अवगाहना नहीं रही जो अनेक बार धारण नहीं की ।

कालपरिवर्तन कहते हैं—कोई जीव उत्सर्पिणी कालके प्रथम समयमें उत्पन्न हुआ
और अपनी आयु समाप्त होनेपर मर गया । पुनः दूसरी उत्सर्पिणीके दूसरे समयमें उत्पन्न
हुआ और अपनी आयु समाप्त होनेसे मर गया । पुनः तीसरी उत्सर्पिणीके तीसरे समयमें
३० उत्पन्न हुआ और उसी प्रकार आयु समाप्त होनेपर मरा । पुनः चतुर्थ उत्सर्पिणीके चतुर्थ
समयमें उत्पन्न हुआ । इसी क्रमसे उत्सर्पिणीके सब समयोंमें उत्पन्न होकर उत्सर्पिणीको
समाप्त करता है तथा इसी क्रमसे अवसर्पिणी कालके सब समयोंमें उत्पन्न होकर अवसर्पिणी
समाप्त करता है । इस प्रकार निरन्तर जन्म लेनेका कथन किया । इसी प्रकार क्रमसे
उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालके सब समयोंमें मरण भी करना चाहिए । यह सब काल-

इल्लिगुपयोगियप्पाव्यावृत्तः—

उत्सर्पणावसर्पणसमयावलिकासु निरवशेषासु ।

जातो मृतश्च बहुशः परिभ्रमन्कालसंसारे ॥

उत्सर्पणावसर्पणगळ समयमालेयोळे नितोळवनिनु समयंगळोळु यथाक्रमदि पुट्टिदनु पो दिदनुमनंतवारं कालसंसारदोळु परिभ्रमिसुत्तं जीवनं ।

भवपरिवर्तनं पेळल्पडुगुं—नरकगतियोळु सर्वजघन्यायुद्धंशवर्षसहस्रप्रमितमक्कु मंतप्पा-युष्यदिदमल्लिये पुट्टि पोरमट्टु मत्तं संसारदोळु परिभ्रमिसि या जघन्यायुष्यदिदमल्लिये पुट्टिद-निनु दशवर्षसहस्रंगळ समयंगळे नितोळवनिनु वारंगळनल्लिये पुट्टिदनु मृतमादनु । बळिकेकैक-समयाधिकभाविदं त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमंगळु समाप्तं माडल्पट्टुदु । बळिक्कमा नरकगतिरियिदं बंदु तिर्यंगगतियोळु अंतर्मुहूर्तजघन्यायुष्यदिदं पुट्टि मुनिनंतेयंतर्मुहूर्तसमयंगळे नितोळवनिनु वारं पुट्टि मेले समयाधिकभाविदं त्रिपल्योपमंगळुमा जीवनिदं परिसमाप्ति माडल्पट्टुविते । मनुष्य-गतियोळं त्रिपल्योपमंगळा जीवनिदमे परिसमाप्ति माडल्पडुवुवु । नरकगतियोळपेळदंते देवगति-योळं दशवर्षसहस्रसमयसमाप्तिरियिदं मेले समयोत्तरक्रमायुष्यनागुत्तमेकत्रिंशत्सागरोपमंगळु परि-

जन्मनैरन्तर्यमुक्तं । मरणस्याप्येवं नैरत्यं ग्राह्यं । तदेतत्सर्वं कालपरिवर्तनं भवति । अत्रोपयोग्याव्यावृत्तः—

उत्सर्पणावसर्पणसमयावलिकासु निरवशेषासु ।

जातो मृतश्च बहुशः परिभ्रमन् कालसंसारे ॥

उत्सर्पणावसर्पणयोः सर्वसमयमालायां क्रमेण उत्पन्नः मृतश्च अनन्तवारकालसंसारे परिभ्रमन् जीवः ।

भवपरिवर्तनमुच्यते—नरकगतौ सर्वजघन्यायुद्धंशसहस्रवर्षाणि तेनायुषा तत्रोत्पन्नः पुनः संसारे भ्रान्त्वा तेनैव आयुषा तत्रैवोत्पन्नः । एवं दशसहस्रवर्षसमयवारं तत्रैवोत्पन्नो मृतः । पुनः एकैकसमयाधिकभावेन त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि परिसमाप्यन्ते । पश्चात् तिर्यंगतो अन्तर्मुहूर्तायुषा उत्पन्नः प्राग्वत् अन्तर्मुहूर्तसमयवार-मुत्पन्नः उपरिसमयाधिकभावेन त्रिपल्योपमानि तेनैव जीवेन परिसमाप्यन्ते । एवं मनुष्यगतावपि त्रिपल्योपमानि तेनैव जीवेन परिसमाप्यन्ते । नरकगतिवद्देवगतावपि दशसहस्रवर्षसमयसमाप्तेरपरि समयोत्तरक्रमेण एकत्रिंश-

परिवर्तनं है । इस विषयमें उपयोगी आर्यावृत्तका आशय इस प्रकार है—काल संसारमें अनन्त बार भ्रमण करता हुआ जीव उत्सर्पिणी और अवसर्पिणीके सब समयोंमें क्रमसे उत्पन्न हुआ और मरा ।

भवपरिवर्तन कहते हैं—नरकगतिमें सबसे जघन्य आयु दस हजार वर्ष है । उस आयुसे नरकमें उत्पन्न हुआ । पुनः संसारमें भ्रमण करके उसी आयुसे वहीं उत्पन्न हुआ । इस प्रकार दस हजार वर्षके समयोंकी जितनी संख्या है, उतनी बार वहीं उत्पन्न हुआ और मरा । पुनः एक-एक समय बढ़ाते-बढ़ाते तैंतीस सागर पूर्ण किये । फिर तिर्यंगगतिमें अन्तर्मुहूर्तकी आयु लेकर उत्पन्न हुआ । पहलेकी तरह अन्तर्मुहूर्तके जितने समय हैं उतनी बार अन्तर्मुहूर्तकी आयु लेकर उत्पन्न हुआ । फिर एक-एक समयकी आयु बढ़ाते-बढ़ाते उसी जीवने तीन पल्य तक सब आयु भोग डाली । इसी प्रकार मनुष्यगतिमें भी उसी जीवने तीन पल्य तककी सब आयु भोगकर समाप्त की । नरकगतिकी तरह देवगतिमें भी दस हजार वर्षके समयप्रमाण दस हजार वर्षकी आयुसे उत्पन्न होकर उसे भोगनेके पश्चात् एक-एक समयकी आयु क्रमसे बढ़ाते-बढ़ाते इकतीस सागरकी आयु पूर्ण की । इस प्रकार भ्रमण करनेके पश्चात् आकर पुनः पूर्वोक्त जघन्यस्थितिवाला नारकी होकर नया भवपरिवर्तन

समाप्तिमाडल्पदृष्टितु परिभ्रमसि बंदा जीवं पूर्वोक्तजघन्यस्थितियनारकनाद्वर्तितवेल्लमेकभव-
परिवर्तनमवकुं । इल्लिगुपयोगियप्यार्यावृत्तं ।—

नरकजघन्यायुष्याद्युपरिमग्नैवेयकावसानेषु ।

मिथ्यात्वसंश्रितेन हि भवस्थितिर्भाविता बहुशः ॥

- ५ नरकजघन्यायुष्यं मोदलोडु मेरो गुपरिमग्नैवेयकावसानमादायुष्यस्थितिगळोळु मिथ्यात्वोदय-
दोळकूडिवजीवनिदं भवस्थितिगळनुभविसत्पद्वु बहुवारं हि स्फुटमागि । भावपरित्तनं पेळत्पडुगुं:—

पंचेन्द्रियसंज्ञिपर्याप्तकं मिथ्यादृष्टि यावानुमोर्व्व जीवं स्वयोन्यसर्व्वजघन्यज्ञानावरणप्रकृति-
स्थितियन्तकोटिकोटियं माळकुमा जीवंगे कषायाध्यवसायस्थानंगळसंख्यातलोकप्रमितंगळु षट्-

स्थानपतितंगळा जघन्यस्थितिगे योग्यंगळपुवलि सव्वजघन्यस्थितिबंधाध्यवसायस्थाननिमित्तंगळु

- १० अनुभागबंधाध्यवसायस्थानंगळसंख्यातलोकप्रमितंगळपुवितु सव्वजघन्यस्थितियनु सव्वजघन्य-
कषायाध्यवसायस्थानमं सव्वजघन्यमनुभागबंधाध्यवसायस्थानमुमं पोहिदंगे तद्योग्यसव्वजघन्यं
योगस्थानमवकुमा स्थितिकषायाध्यवसायानुभागस्थानंगळगे द्वितीयमसंख्येयभागवृद्धियुक्तं योग-

त्सारोपमाणि परिसमाप्यन्ते । एवं भ्रांस्त्वागत्य पूर्वोक्तजघन्यस्थितिको नारको जायते । तदा तदेतत्सर्व्वं
भवपरिवर्तनं भवति । अत्रोपयोग्यार्यावृत्तं—

- १५ नरकजघन्यायुष्याद्युपरिमग्नैवेयकावसानेषु ।

मिथ्यात्वसंश्रितेन हि भवस्थितिर्भाविता बहुशः ॥

नरकजघन्यायुष्याद्युपरिमग्नैवेयकावसानायुष्या स्थितौ मिथ्यात्वोदयाश्रितजीवेन भवस्थितयोऽनुभविता
बहुवारं स्फुटम् ।

भावपरिवर्तनमुच्यते—कश्चित्पञ्चेन्द्रियसंज्ञिपर्याप्तकमिथ्यादृष्टिर्जीवः स्वयोग्यसर्व्वजघन्यां ज्ञानावरण-

- २० प्रकृतिस्थिति अन्तःकोटाकोटिप्रमितां बध्नाति । सागरोपमैककोट्या उपरि द्विवारकोट्या मध्यं अन्तःकोटाकोटि-
रित्युच्यते । तस्य जीवस्य कषायाध्यवसायस्थानानि असंख्येलोकप्रमितानि षट्स्थानपतितानि जघन्यस्थिति-
योग्यानि । तत्र सर्व्वजघन्यकषायाध्यवसायस्थाननिमित्तानि अनुभागाध्यवसायस्थानानि असंख्येलोक-
प्रमितानि । एवं सर्व्वजघन्यस्थिति सर्व्वजघन्यकषायाध्यवसायस्थानं सर्व्वजघन्यानुभागबन्धाध्यवसायस्थानं च
प्राप्तस्य तद्योग्यसर्व्वजघन्यं योगस्थानं भवति । तेषामेव स्थितिकषायाध्यवसायानुभागस्थानानां द्वितीयं असंख्येय-

- २५ प्रारम्भ करता है । तब यह सब भवपरिवर्तन होता है । इस विषयमें उपयोगी आर्याच्छन्द-
का अभिप्राय—मिथ्यात्वके उदयसे जीवने नरककी जघन्य आयुसे लेकर उपरिमग्नैवेयक
तककी आयुप्रमाण भवस्थितियाँ अनेक बार भोगीं ।

भावपरिवर्तन कहते हैं—कोई पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि जीव अपने योग्य
सबसे जघन्य ज्ञानावरणकर्मकी अन्तःकोटाकोटी सागर प्रमाण स्थितिका बन्ध करता है ।

- ३० एक कोटि सागरके ऊपर और कोटाकोटी सागरके मध्यको अन्तःकोटाकोटी सागर कहते
हैं । उस जीवके जघन्यस्थितिवन्धके योग्य छह प्रकारकी हानिवृद्धिको लिये असंख्यात
लोक प्रमाण कषायाध्यवसायस्थान होते हैं । तथा सर्व्वजघन्य कषायाध्यवसाय स्थानमें
निमित्त असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागाध्यवसाय स्थान होते हैं । इस प्रकार सबसे जघन्य
स्थिति, सबसे जघन्य कषायाध्यवसाय स्थान और सबसे जघन्य अनुभागबन्धाध्यवसाय-

- ३५ स्थानको प्राप्त जीवके उसके योग्य सबसे जघन्य योगस्थान होता है । पुनः उन्हीं स्थिति,
कषायाध्यवसाय और अनुभागस्थानोंका असंख्यात भागवृद्धिको लिये हुए दूसरा योगस्थान

स्थानमवकुर्मितसंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि चतुः-
स्थानवृद्धिपतितंगळु श्रेण्यसंख्येयभागप्रमितंगळुपुवंते आ स्थितियने या कषायाध्यवसायस्थानमने
प्रतिपद्यमानंगे द्वितीयमनुभागबन्धाध्यवसायस्थानमवकुमदवके योगस्थानंगळु पूर्वोक्तंगळैरियल्प-
डुबुवु ।

इंतु तृतीयादिगळोळमनुभागाध्यवसायस्थानंगळोळ असंख्यातलोकपरिसमाप्तिपर्यंतप्रत्येकं ५
योगस्थानंगळु नडसल्पडुबुवुमिता स्थितिने प्रतिपद्यमानंगे द्वितीयस्थितिबन्धाध्यवसायस्थानमवकु-
मदवके अनुभागबन्धाध्यवसायस्थानंगळु योगस्थानंगळुमुनिनंतैरियल्पडुबुवितु तृतीयादिस्थिति-
बन्धाध्यवसायस्थानंगळोळसंख्यातलोकमात्रपरिसमाप्तिपर्यंतमा वृत्तिक्रममरियल्पडुगुः—

भागयुक्तं योगस्थानं भवति । एवमसंख्यातभागवृद्धि-संख्यातभागवृद्धि-संख्यातगुणवृद्धि-असंख्यातगुणवृद्धिचाख्य-
चतुःस्थानवृद्धिपतितानि श्रेण्यसंख्येयभागप्रमितानि योगस्थानानि भवन्ति । तथा तामेव स्थितिं तदेव कषाया- १०
ध्यवसायस्थानमास्कन्दतो द्वितीयमनुभागबन्धाध्यवसायस्थानं भवति । तस्यापि योगस्थानानि पूर्वोक्तान्येव
ज्ञातव्यानि । एवं तृतीयादिष्वपि अनुभागाध्यवसायस्थानेषु असंख्यातलोकपरिसमाप्तिपर्यन्तेषु प्रत्येकं योग-
स्थानानि नेतव्यानि । एवं तामेव स्थितिं बध्नतो द्वितीयं कषायाध्यवसायस्थानं भवति । तस्यापि
अनुभागबन्धाध्यवसायस्थानानि योगस्थानानि च प्राप्नुवन् ज्ञातव्यानि । एवं तृतीयादिकषायाध्यवसायस्थानेषु
असंख्यातलोकमात्रपरिसमाप्तिपर्यन्तेषु आवृत्तिक्रमो ज्ञातव्यः । ततः समयाधिकस्थितेरपि स्थितिबन्धाध्यवसाय- १५
स्थानानि प्राप्नुवन् असंख्येयलोकमात्राणि भवन्ति । एवं समयाधिकक्रमेण उत्कृष्टस्थितिपर्यन्तं त्रिंशत्सागरोपम-
कोटोकोटिप्रमितस्थितेरपि स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानि अनुभागबन्धाध्यवसायस्थानानि योगस्थानानि च
ज्ञातव्यानि । एवं मूलप्रकृतीनां उत्तरप्रकृतीनां च परिवर्तनक्रमो ज्ञातव्यः । तदेतत्समुदितं भावपरिवर्तनं भवति ।
संदृष्टिः—

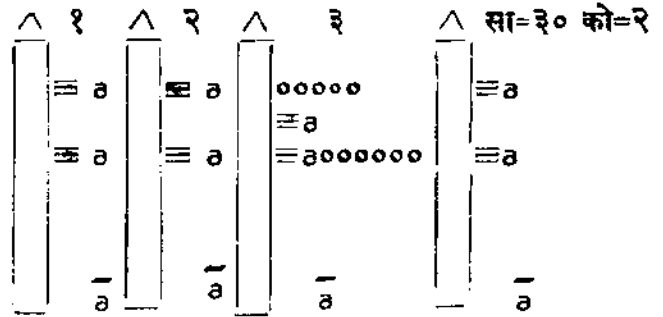
होता है । इस प्रकार असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात २०
गुणवृद्धि नामक चतुःस्थान वृद्धिको लिये हुए श्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान होते
हैं । इन समस्त योगस्थानोंके समाप्त होनेपर वही स्थिति, वही कषायाध्यवसाय स्थानको
प्राप्त जीवके द्वितीय अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान होता है । उसके भी योगस्थान पूर्वोक्त
ही जानना । इस प्रकार तृतीय आदि असंख्यात लोकप्रमाण अनुभागस्थानोंके भी समाप्ति
पर्यन्त प्रत्येक अनुभागस्थानके साथ सब योगस्थान लगाना चाहिए । उनके भी समाप्त २५
होनेपर उसी स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके दूसरा कषायाध्यवसायस्थान होता है ।
उसके भी अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान और योगस्थान पूर्वकी तरह जानना । इस प्रकार
तृतीय आदि असंख्यात लोकप्रमाण कषायाध्यवसायस्थानोंकी समाप्ति पर्यन्त अनुभाग-
स्थानों और योगस्थानोंकी आवृत्ति करना चाहिए । इस प्रकार सबसे जघन्य स्थितिके
साथ सबकी आवृत्ति होनेपर एक समय अधिक अन्तःकोटाकोटीकी स्थिति बाँधता है । ३०
उसके भी कषायाध्यवसायस्थान, अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान योगस्थान जानना । इस
प्रकार एक-एक समय अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट स्थिति पर्यन्त तीस कोटा-कोटी सागर प्रमाण
स्थितिके भी स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान, अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान और योगस्थान
जानना । इसी प्रकार आठों मूल कर्मों और उनकी उत्तर प्रकृतियोंका भी परिवर्तनक्रम
जानना । यह सब मिलकर भाव परिवर्तन है । ३५

सा = अं = को २

कषायज. ००० ≡ २०००००० उ

अनुभागज. ००० ≡ २०००००० उ

योगस्थानज. ००० ≡ २००००० उ



एकसमयाद्यधिकांतःकोटिकोटिरचना

- मो पेळलपट्ट जघन्यस्थितिय समयाधिकमपुदर स्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळु मुनिनंत-
संख्यातलोकमात्रमक्कुमिनु समाधिककर्मदिवमुत्कृष्टस्थितिपर्यंतं त्रिशत्सागरोपमकोटिकोटिप्रमित-
१० स्थितिय स्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळु मनुभागबंधाध्यवसायस्थानंगळु योगस्थानंगळु मरियत्पडुव-
वितेला मूलप्रकृतिगळामुत्तरप्रकृतिगळं परिवर्तनकममरियत्पडुगुमितवेल्लं कूडि भावपरिवर्तन-
मक्कुमिल्लिगुपयोगियप्यार्यावृत्तं :—

सर्वप्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबंधयोग्यानि ।

स्थानान्यनुभूतानि भ्रमता भुवि भावसंसारे ॥

१९ अन्तःको २—

कषाय	जघ०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० उ
अनुभाग	जघ०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० ≡ २०० उ
योग	जघ०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० २०० उ

अत्रोपयोग्यावृत्तं—

- २० विशेषार्थ—योगस्थान, अनुभाग बन्धाध्यवसायस्थान, कषायाध्यवसायस्थान और स्थितिस्थानोंके परिवर्तनसे भावपरिवर्तन होता है। आत्माके प्रदेशोंके परिस्पन्दको योग कहते हैं। यह प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्धमें कारण होता है। इन योगोंके जघन्य आदि स्थानोंको योगस्थान कहते हैं। जिन कषाययुक्त परिणामोंसे कर्मोंमें अनुभागबन्ध होता है, उनके जघन्य आदि स्थान अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान हैं। जिन कषाय परिणामोंसे स्थितिबन्ध होता है, उनके जघन्य आदि स्थान कषायाध्यवसायस्थान हैं, इन्हींको स्थिति-
२५ स्थितिबन्ध होता है, उनके जघन्य आदि स्थान कषायाध्यवसायस्थान हैं, इन्हींको स्थिति-
बन्धाध्यवसायस्थान भी कहते हैं। कर्मोंकी स्थितिके जघन्यादि स्थानोंको स्थितिस्थान कहते हैं। एक-एक स्थितिभेदके बन्धके कारण असंख्यात लोक प्रमाण कषायाध्यवसायस्थान होते हैं। एक-एक कषायाध्यवसायस्थानके असंख्यात लोक प्रमाण अनुभागबन्धाध्यवसाय-
स्थान होते हैं। एक-एक अनुभागबन्धाध्यवसायस्थानके जगतश्रेणिके असंख्यातवें भाग
३० योगस्थान होते हैं।

इस परिवर्तनके सम्बन्धमें उपयोगी आर्याच्छन्दका अभिप्राय इस प्रकार है—

समस्तप्रकृतिस्थितिअनुभागप्रदेशबन्धयोग्यगळप्प स्थितिबन्धाध्यवसायानुभागबन्धाध्यवसाय-
योगस्थानगळेनितोळवनितुं पृथ्वियोळु भावसंसारदोळतोळत्व जीवनिदमनुभविसलपट्टु । इल्लि
स्थितिबन्धाध्यवसायजघन्य मोदल्लोडुत्कृष्टपर्यंतमंत अनुभागबन्धाध्यवसायजघन्यस्थानमोदल्लोडु-
त्कृष्टस्थानपर्यंत योगस्थानगळ जघन्य मोदल्लोडुत्कृष्टस्थानपर्यंत सर्वजघन्यस्थितिसंबंधि
गळमोदल्लोडुत्कृष्टस्थितिपर्यंत तत्तत्संबंधिगळ स्थापिसि अक्षसंचारक्रमदिदं भावसंसार- ९
दोळनुभविसलपट्टु स्थितिबन्धाध्यवसायादिगळमं साधिसुबुदे बुदत्थं ।

इल्लि एकपुद्गलपरिवर्तनकालमनंतमवकुमदं नोडलु क्षेत्रपरिवर्तनकालमनंतगुणं अदं
नोडलु कालपरिवर्तनवारंगळमंतगुणमदं नोडलु भवपरिवर्तनकालमनंतगुणमदं नोडलु भावपरि-
वर्तनकालमनंतगुणमवकुमिल्लि संहृष्टिरचनेयिदु :—भाव । ख ख ख ख ख

भव । ख ख ख ख

१०

काल । ख ख ख

क्षेत्र । ख ख

द्रव्य । ख

ओळवं जीवगे अतीतकालदोळु भावपरिवर्तनवारंगळु अनंतगळु । ख । अवं नोडलु भव-
परिवर्तनवारंगळु अनंतगुणगळवं नोडलु कालपरिवर्तनवारंगळु अनंतगुणगळवं नोडलु क्षेत्रपरिवर्तन- १५
वारंगळु अनंतगुणगळवं नोडलु द्रव्यपरिवर्तनवारंगळु अनंतगुणगळप्पुवु । संहृष्टि :—

सर्वप्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबन्धयोग्यानि ।

स्थानान्यनुभूतानि भ्रमता भुवि भावसंसारे ॥

अत्र स्थितिबन्धाध्यवसायजघन्यात्तदुत्कृष्टपर्यन्तानि पुनः अनुभागबन्धाध्यवसायजघन्यात्तदुत्कृष्टपर्यन्तानि
योगस्थानजघन्यात्तदुत्कृष्टपर्यन्तानि च सर्वजघन्यस्थितिसंबन्धीनि आदि कृत्वा सर्वोत्कृष्टस्थितिपर्यन्तं तत्तत्संबन्धीनि २०
संस्थाप्य अक्षसंचारक्रमेण भावसंसारे अनुभूतस्थित्यादिस्थितिबन्धाध्यवसायादीन् साधयेदित्यर्थः । अत्रैक-
पुद्गलपरावर्तनकालः अनन्तः । ततः क्षेत्रपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । अतः कालपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः,
ततो भवपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । ततो भावपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । संहृष्टिः—

भाव ख ख ख ख ख

भव ख ख ख ख

२५

काल ख ख ख

क्षेत्र ख ख

द्रव्य ख

एकजीवस्य अतीतकाले भावपरिवर्तनवारा अनन्ताः । तेभ्यः भवपरिवर्तनवारा
अनन्तगुणाः । तेभ्यः क्षेत्रपरिवर्तनवारा अनन्तगुणाः । तेभ्यः द्रव्यपरिवर्तनवारा
अनन्तगुणाः । संहृष्टिः—

‘भावसंसारमें भ्रमण करते हुए जीवने सब प्रकृतियोंके स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध
और प्रदेशबन्धके योग्य स्थानोंका अनुभव किया ।’

३०

सबसे जघन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थिति पर्यन्त तत्संबन्धी स्थिति बन्धाध्यवसाय-
स्थान, अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान और योगस्थान जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट पर्यन्त स्थापित
करके जैसे पहले प्रमादोंमें अक्षसंचार कहा है, उसी क्रमसे भावसंसारमें अनुभूत स्थिति आदि
सम्बन्धी स्थिति बन्धाध्यवसाय आदिको साधना चाहिए ।

यहाँ एक पुद्गलपरावर्तन काल सबसे थोड़ा अर्थात् अनन्त है । उससे क्षेत्रपरिवर्तन ३५
काल अनन्त गुणा है । उससे कालपरिवर्तनका काल अनन्त गुणा है । उससे भवपरिवर्तनका
काल अनन्त गुणा है । उससे भावपरिवर्तनकाल अनन्त गुणा है । इसीसे एक जीवके अतीत

द्रव्य, ख ख ख ख ख
क्षेत्र, ख ख ख ख
काल, ख ख ख
भव, ख ख
भाव, ख

इल्लिगुपयोगियप्पाय्यावृत्तमिदु ।

“पञ्चविधे संसारे कर्मवशाज्जैनदर्शितं मुक्तेः ।

मार्गमपश्यन् प्राणी नानादुःखाकुले भ्रमति ॥

- इतु भगवदहर्त्परमेस्वरचारुचरणारविदद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजगुरुमंडला-
५ चार्थ्यमहावादवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरिसिद्धांतचक्रवर्त्तिश्रीपादपंकजरजो-
रंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्तिजीवतत्त्वप्रदीपिकेयोऽनु जीव-
कांडविंशतिप्ररूपणयोऽनु षोडशं भव्यमार्गणाधिकार व्याकृतमायतु ॥

द्रव्य ख ख ख ख ख
क्षेत्र ख ख ख ख
काल ख ख ख
भव ख ख
भाव ख

अत्रोपयोगि आर्यावृत्तमाह—

पञ्चविधे संसारे कर्मवशाज्जैनदर्शितं मुक्तेः ।

१०

मार्गमपश्यन् प्राणी नानादुःखाकुले भ्रमति ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रकृतायां गोम्मटसारपञ्चसंग्रहवृत्ती तत्त्वप्रदीपिकाख्यायां जीवकाण्डे
विंशतिप्ररूपणासु भव्यमार्गणाप्ररूपणानाम षोडशोऽधिकारः ॥१६॥

कालमें भावपरिवर्तन सबसे थोड़े हुए अर्थात् अनन्त बार हुए । उनसे भवपरिवर्तन अनन्त गुणी बार हुए ।

१५

उनसे कालपरिवर्तन अनन्तगुणी बार हुए । क्षेत्रपरिवर्तन उससे भी अनन्तगुणी बार हुए और द्रव्यपरिवर्तन उनसे अनन्त गुणी बार हुए । यहाँ उपयोगी आर्याछन्दका अभिप्राय कहते हैं—जिनमतके द्वारा दिखाये गये मुक्तिके मार्गका श्रद्धान न करता हुआ प्राणी अनेक प्रकारके दुःखोंसे भरे पाँच प्रकारके संसारमें भ्रमण करता है ।

२० इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव

परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी

श्री अभयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्त्तिके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णों-

के द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटकवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका

तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक

भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत

२५

भव्य प्ररूपणाओंमेंसे भव्यमार्गणा प्ररूपणा नामक सोलहवाँ

अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१६॥

अथ सम्यक्त्वमार्गणा ॥१७॥

अनंतरं सम्यक्त्वमार्गणाप्ररूपणं पेळदपं :—

छप्पंचणवविहाणं अट्टाणं जिणवरोवइट्ठाणं ।

आणाए अहिगमेण य सव्दहणं होइ सम्मत्तं ॥५६१॥

षट्पंचनवविधानामत्यूनां जिनवरोपविष्टानां । आज्ञयाधिगमेन च श्रद्धानं भवति सम्यक्त्वं ॥

द्रव्यभेदविद षड्विधंगळप्प अस्तिकायभेदविदं पंचविधंगळप्प पदार्थभेदविदं नवविधंगळप्प सर्वज्ञवीतरागभट्टारकरुगळिद पेळल्पट्ट जीवादिवस्तुगळ श्रद्धानं रुचिः सम्यक्त्वमक्कुमा श्रद्धान-
मावतेरविदमे दोडे आज्ञेयिदमाज्ञेये बुवे ते दोडे “प्रमाणादिभिर्विना आप्रवचनाश्रयेणैव निर्णय आज्ञा”
एवं ब आज्ञेयिदं मेणधिगमविदमधिगमे बुवे ते दोडे “प्रमाणनयनिक्षेपनिरुक्त्यनुयोगद्वारैर्विशेषनिर्णयो-
धिगमः” एवितप्पधिगमनदिदं जिनवरोपविष्ट जीवादिवस्तुश्रद्धानं सम्यक्त्वमक्कुमा सम्यक्त्वमुं

सरागवीतरागात्मविषयत्वात् द्विधा स्मृतं ।

प्रज्ञमादिगुणं पूर्वं परं चात्मविशुद्धितः ॥” —[सो. उ. २२७ श्लो.]

कुण्ड्यादिजन्मिनां जन्मजरामृत्युविनाशिने ।

सद्बोधसिन्धुचन्द्राय नमः कुण्ड्यजिनेशिने ॥१७॥

अथ सम्यक्त्वमार्गणामाह—

द्रव्यभेदेन षड्विधानां अस्तिकायभेदेन पञ्चविधानां पदार्थभेदेन नवविधानां च सर्वज्ञोक्तजीवादिवस्तूनां
श्रद्धानं रुचिः सम्यक्त्वम् । तच्छ्रद्धानं आज्ञया प्रमाणादिभिर्विना आप्रवचनाश्रयेण ईषन्निर्णयलक्षणया, अथवा
अधिगमेन प्रमाणनयनिक्षेपनिरुक्त्यनुयोगद्वारैः विशेषनिर्णयलक्षणेन भवति ।

सरागवीतरागात्मविषयत्वाद् द्विधा स्मृतम् । प्रज्ञमादिगुणं पूर्वं परं चात्मविशुद्धिजम् ॥१॥

सम्यक्त्व मार्गणाका कथन करते हैं—

द्रव्यभेदसे छह प्रकारके, पंचास्तिकायके भेदसे पाँच प्रकारके और पदार्थभेदसे नौ
प्रकारके जो जीव आदि वस्तु सर्वज्ञदेवने कहे हैं, उनका श्रद्धान रुचि सम्यक्त्व है । उनका
श्रद्धान आज्ञासे अर्थात् प्रमाण आदिके बिना आप्रके वचनोंके आश्रयसे किंचित् निर्णयको
लिये हुए होता है अथवा प्रमाण- नय- निक्षेप- निरुक्ति- अनुयोगके द्वारा विशेष निर्णयरूप
अधिगमसे होता है । सरागी आत्मा और वीतरागी आत्माके सम्बन्धसे सम्यग्दर्शनके दो
भेद हैं—सराग और वीतराग । सराग सम्यग्दर्शनके गुण प्रज्ञम, संवेग, अनुकम्पा आदि हैं
और वीतराग सम्यग्दर्शन आत्माकी विशुद्धिरूप होता है । आप्रमें, व्रतमें, श्रुतमें और
तत्त्वमें जो चित्त ‘ये हैं’ इस प्रकारके भावसे युक्त होता है, उसे आस्तिकोंने सम्यक्त्वसे

१. व प्रवचनाश्रयेण ।

तत्सम्यक्त्वं सरागवीतरागात्मविषयत्वविदं द्विप्रकारदरिभ्यत्पदुगुं । पूर्वं मोक्ष सरागा-
त्मविषयसम्यक्त्वं प्रशमादिगुणं प्रशमसंवेगानुकंपास्तिक्याभिव्यक्तियोज्ज्वलितुं । परं द्वितीयं
वीतरागात्मविषयसम्यक्त्वं आत्मविशुद्धितः प्रतिपक्षप्रक्षयजनितजीवविशुद्धिपिदमावुतु । आस्तिक्यमे-
बुदेने दोषे :—

५ 'आप्ते व्रते श्रुते तत्त्वे चित्तमस्तित्वसंयुतं ।
आस्तिक्यमास्तिकैरुक्तं सम्यक्त्वेन युते नरे ॥ —[सो. उ. २३१ श्लो.]

अथवा तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं अथवा तत्त्ववृत्तिः सम्यक्त्वं ॥

“प्रवेशप्रचयात्कायाः द्रवणात् द्रव्यनामकाः ।

परिच्छेद्यत्वतस्तेऽर्थास्तत्त्वं वस्तुस्वरूपतः ॥” —[]

१० एतदितु सामान्यदि पंचास्तिकायषड्द्रव्य नवपदार्थगङ्गे लक्षणमवकुं ।
अनंतरं षड्द्रव्यगङ्गाधिकारनिर्देशं माडिपं :—

छद्द्रव्येषु य नामं उवलक्खणुवाय अत्थणे कालो ।

अत्थणखेत्तं संखा ठाणसरुवं फलं च द्वे ॥५६२॥

१५ षड्द्रव्येषु च नामानि उपलक्षणानुवादः आसने कालः । आसनक्षेत्रं संख्यास्थानस्वरूपं फलं
च भवेत् ॥

षड्द्रव्यगङ्गोळु नामगङ्गमुपलक्षणानुवादमुं स्थितियुं क्षेत्रमुं संख्येयुं स्थानस्वरूपमुं फलम-
मेदितु सप्ताधिकारगळपुवु ।

‘यथोद्देशस्तथा निर्देशः’ एंबी न्यायविदं प्रथमोद्दिष्ट नामाधिकारमं पेळवपं :—

आप्ते व्रते श्रुते तत्त्वे चित्तमस्तित्वसंयुतम् । आस्तिक्यमास्तिकैरुक्तं सम्यक्त्वेन युते नरे ॥२॥

२० अथवा तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् । अथवा तत्त्ववृत्तिः सम्यक्त्वम् ।

प्रवेशप्रचयात्काया द्रवणाद् द्रव्यनामकाः । परिच्छेद्यत्वतस्तेऽर्थाः तत्त्वं वस्तुस्वरूपतः ॥१॥

इति सामान्येन पञ्चास्तिकायषड्द्रव्यनवपदार्थानां लक्षणम् ॥५६१॥ अथ षड्द्रव्याणामधिकाराग्नि-

दिशति—

षड्द्रव्येषु नामानि उपलक्षणानुवादः स्थितिः क्षेत्रं संख्या स्थानस्वरूपं फलं चेति सप्ताधिकारा

२५ भवन्ति ॥५६२॥ अथ प्रथमोद्दिष्टनामाधिकारमाह—

युक्त मनुष्यका आस्तिक्य गुण कहा है । अथवा तत्त्वार्थके श्रद्धानको सम्यग्दर्शन कहते हैं
अथवा तत्त्वोंमें रुचिको सम्यक्त्व कहते हैं । प्रवेशोंके समूह रूप होनेसे काय कहलाते हैं ।
गुण और पर्यायोंको प्राप्त करनेसे द्रव्य नामसे कहे जाते हैं । जीवके द्वारा जाननेमें आनेसे
अर्थ कहलाते हैं और वस्तुस्वरूपके कारण तत्त्व कहलाते हैं । यह सामान्यसे पाँच
३० अस्तिकाय, छह द्रव्य और नौ पदार्थोंका लक्षण है ॥ ५६१ ॥

छह द्रव्योंके अधिकारोंको कहते हैं—

छह द्रव्योंके सम्बन्धमें नाम, उपलक्षणानुवाद, स्थिति, क्षेत्र, संख्या, स्थान, स्वरूप
और फल ये सात अधिकार होते हैं ॥ ५६२ ॥

प्रथम उद्दिष्ट नाम अधिकार को कहते हैं—

जीवाजीवं द्रव्यं रूपावरूपिणि होदि पत्तेयं ।

संसारस्था रूपा कर्मविमुक्ता अरूपगया ॥५६३॥

जीवाजीवद्रव्ये रूपारूपिणेति भवतः प्रत्येकं । संसारस्था रूपाः रूपाण्येषां संतीति रूपाः कर्मविमुक्ता अरूपगताः ॥

सामान्यविदं संग्रहनयापेक्षयिदं द्रव्यमो'दु । अदं भेदिसिदोडे जीवद्रव्यमे'दु अजीवद्रव्यमे'दु ५
द्विविधमवकुमल्लि जीवद्रव्यं रूपि जीवद्रव्यमे'दुमरूपिजीवद्रव्यमे'दु' द्विविधमपुवल्लि संसार-
स्थंगळु रूपिजीवद्रव्यंगळुपुवु । कर्मविमुक्तसिद्धपरमेष्ठिजीवंगळु अरूपगतजीवद्रव्यंगळुपुवु ।
अजीवद्रव्यमुं रूप्यजीवद्रव्यमे'दुमरूप्यजीवद्रव्यमे'दु द्विविधमवकु ।

अज्जीवेसु य रूवी पोग्गलदव्वाणि धम्म इदरो वि ।

आगासं कालो वि य चत्तारि अरुविणो होति ॥५६४॥

अजोवेसु च रूपीणि पुद्गलद्रव्याणि धम्म इतरोपि च । आकाशं कालोपि च चत्वार्य-
रूपीणि भवन्ति ॥

अजीवद्रव्यंगळु पुद्गलद्रव्यंगळु रूपिद्रव्यंगळुपुवु । इल्लि

“वर्णगंधरसस्पर्शः पूरणं गलनं च यत् ।

कुर्वन्ति स्कन्धवत्तस्मात्पुद्गलाः परमाणवः ॥” []

ए'दितु परमाणुगळंग पुद्गलत्वमुंटागुत्तं विरलु द्विप्रदेशादि स्कन्धंगळोये ग्रहणमवकुमेक'दोडे
प्रदेशपूरणगलनरूपविदं द्रव्यंति द्रोष्यन्ति अदुद्रवन्निति पुद्गलद्रव्यमे'दितु द्वयणुकाविस्कन्धंगळोये
पुद्गलशब्दवाच्यत्वं यथावत्ताणि संभविमुमुपुर्दारिदं परमाणुविगे “वट्केन युगपद्योगात्परमाणोः

सामान्येन संग्रहनयापेक्षया द्रव्यमेकम् । तदेव भेदविवक्षाया जीवद्रव्यं अजीवद्रव्यं च । तत्र जीवद्रव्यं
रूप्यरूपि च । तत्र संसारस्थाः रूपिणः, कर्मविमुक्ताः सिद्धा अरूपिणो भवन्ति । अजीवद्रव्यमपि रूप्यरूपि २०
च ॥५६३॥

अजोवेसु पुद्गलद्रव्याणि रूपीणि भवन्ति धर्मद्रव्यं तथा अधर्मद्रव्यं आकाशद्रव्यं कालद्रव्यं चेति
चत्वारि अरूपीणि भवन्ति । अत्र “वर्णगन्धरसस्पर्शः पूरणं गलनं च यत् । कुर्वन्ति स्कन्धवत् तस्मात्पुद्गलाः
परमाणवः” इत्येवं परमाणूनां पुद्गलत्वे द्वयणुकादीनामेव कथं ? प्रदेशपूरणगलनरूपेण द्रवन्ति द्रोष्यन्ति
अदुद्रवन्निति ब्रूमः । ननु—

सामान्यसे संग्रहनयकी अपेक्षा द्रव्य एक है । भेदविवक्षासे दो प्रकारका है—जीव
द्रव्य और अजीव द्रव्य । उसमें जीव द्रव्यके दो प्रकार हैं—रूपी और अरूपी । संसारी
जीव रूपी है और कर्मोंसे मुक्त सिद्ध अरूपी हैं । अजीव द्रव्य भी रूपी और अरूपी
होता है ॥ ५६३ ॥

अजीवोंमें पुद्गल द्रव्य रूपी होते हैं । धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल- ३०
द्रव्य ये चार अरूपी हैं ।

शंका—कहा है कि ‘परमाणु स्कन्धकी तरह वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्शके द्वारा पूरण गलन
करते हैं, अतः वे पुद्गल हैं’; इस प्रकार परमाणुको पुद्गल कहनेपर द्वयणुक आदिमें पुद्गल-
पना कैसे घटित होता है ?

समाधान—द्वयणुक आदि प्रदेशोंके पूरण-गलन रूपके द्वारा अन्य परमाणुओंको प्राप्त ३५

षडंशता । षण्णां समानदेशित्वे पिण्डं स्यादणुमात्रकम् ॥” [] एतदुत्तरं पूर्वपक्षं माडुत्तरं
द्रव्याधिकनयदिदं निरंशत्वमुं पर्यायाधिकनयदिदं षडंशतेयकमेतदुत्तरं परिहारं पेळत्पट्टुदु ।

“आद्यन्तरहितं द्रव्यं विश्लेषरहितांशकं ।

स्कन्धोपादानमत्यक्षं परमाणुं प्रचक्षते ॥” []

५ आद्यन्तरहितं आद्युमवसानमुमिल्लदुदुं द्रव्यं गुणपर्यायंगलनुल्लदुदुं विश्लेषरहितांशकं
बेक्केय्यल्लद अंशमनुल्लदुदुं स्कन्धोपादानं स्कन्धक्के कारणमपुदुं अत्यक्षं इन्द्रियविषयमल्लदुदुं
परमाणुं प्रचक्षते परमाणुवे दुवत्तव्यमाणि परमाणुमज्ञर पेळवर । नामाधिकारं तिदुदुदु ।

उवजोगो वण्णचऊ लक्खणमिह जीवपोग्गलाणं तु ।

गदिठाणोग्गहवट्ठणकिरियुवयारो दु धम्मचऊ ॥५६५॥

१० उपयोगो वर्णचतुष्कं लक्षणमिह जीवपुद्गलयोस्तु । गतिस्थानावगाहवर्तनक्रियोपकारस्तु
धर्मचतुर्णां ॥

उपयोगमुं वर्णचतुष्कमुं यथासंख्यमाणिह परमाणुमदोळ जीवंगळं पुद्गलंगळं लक्षण-
मक्कुं । तु मत्ते गतिस्थानावगाहवर्तनक्रियेगळे उपकारंगळ तु मत्ते यथासंख्यमाणि धर्माधर्मा-
काशकालंगळे ब नात्कुं द्रव्यंगळ लक्षणमक्कुं ।

१५ षट्केन युगपद्योगात् परमाणोः षडंशता ।

षण्णां समानदेशित्वे पिण्डं स्यादणुमात्रकम् ॥

सत्यं, द्रव्याधिकनयेन निरंशत्वेऽपि परमाणोः पर्यायाधिकनयेन षडंशत्वे दोषाभावात् ।

आद्यन्तरहितं द्रव्यं विश्लेषरहितांशकम् ।

स्कन्धोपादानमत्यक्षं परमाणुं प्रचक्षते ॥

२० ॥५६४॥ इति नामाधिकारः ।

उपयोगः जीवानां, तु—पुनः वर्णचतुष्कं पुद्गलानां, इह परमाणुमे लक्षणं भवति । गतिस्थानावगाहन-
वर्तनक्रियाः उपकाराः । तु—पुनः यथासंख्यं धर्माधर्माकाशकालानां लक्षणं भवति ॥५६५॥

करते हैं, प्राप्त करेंगे और पहले प्राप्त कर चुके हैं; इस व्युत्पत्तिके अनुसार द्वयणुकादिमें भी
पुद्गलपना घटित होता है ।

२५ शंका—यदि परमाणु एक साथ छह दिशामें छह परमाणुओंसे सम्बन्ध करता है, तो
परमाणु छह अंशवाला सिद्ध होता है । यदि छहों समान देश वाले माने जाते हैं, तो छह
परमाणुओंका पिण्ड परमाणु मात्र सिद्ध होता है ?

समाधान—आपका कथन यथार्थ है । द्रव्याधिकनयसे यद्यपि परमाणु निरंश है किन्तु
पर्यायाधिकनयसे उसके छह अंशवाला होनेमें कोई दोष नहीं है । जो द्रव्य आदि और अन्तसे
३० रहित है, जिसके अंश कभी भी अलग नहीं होते, जो स्कन्धका उपादान कारण तथा
अतीन्द्रिय है, उसे परमाणु कहते हैं ॥ ५६४ ॥

इस प्रकार नामाधिकार समाप्त हुआ ।

परमाणुममें जीवका लक्षण उपयोग और पुद्गलोंका लक्षण वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श कहा
है । तथा यथाक्रमसे गतिरूप उपकार, स्थानरूप उपकार, अवगाहनरूप उपकार और
३५ वर्तनक्रियारूप उपकार धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्यका लक्षण है ॥५६५॥

१. म परमाणुमे पेळुदु । २. ब सत्यं पर्या° ।

गदिठाणोग्गहकिरिया जीवाणं पोग्गलाणमेव हवे ।

धम्मतिथे ण हि किरिया सुक्खा पुण साधगा होति ॥५६६॥

गतिस्थानावगाहक्रियाः जीवानां पुद्गलानामेव भवेयुः । धर्मत्रये न हि क्रियाः मुख्या पुनः साधका भवन्ति ॥

गतिस्थानावगाहक्रियेगळे बी मूरं जीवंगळं पुद्गलंगळमेयपुवु । धर्मत्रये धर्माधर्मा- ५
काशंगळे बी मूरं द्रव्यंगळोळु न हि क्रिया क्रियेयिल्लेके दोडे स्थानचलनमुं प्रदेशचलनमुमिल्ल-
मपुदरिदं । पुनः मत्तेने दोडे धर्मादिद्रव्यंगळु गत्यादिगळमे मुख्यसाधकंगळपुवु अदे ते दोडे :—

जत्तस्स पदं ठत्तस्स आसणं निवसगस्स वसदी वा ।

गदिठाणोग्गहकरणे धम्मतिथं साधगं होदि ॥५६७॥

गच्छतः पन्थाः तिष्ठतः आसनं निवसकस्य वसतिरिव गतिस्थानावगाहकरणे धर्मत्रयं १०
साधकं भवति ॥

नडेवंगे बट्टियं कुल्लिप्यवंगासनमुं इप्पवंगे निवासमुमेदितु गतिस्थानावगाहकरणदोळु
साधकंगळपुवन्ते धर्मत्रयमुं गमनाविकरणदोळु साधकमक्कं । कारणमक्कुमे बुदत्थं ।

वत्तणहेदू कालो वत्तणगुणमविय दव्वणिचयेसु ।

कालाधारेणैव य वट्टन्ति सव्वदव्व्याणि ॥५६८॥

१५

वर्तनाहेतुः कालो वर्तनगुणोपि च द्रव्यनिचयेषु । कालाधारेणैव वर्तन्ते सव्वद्रव्याणि ॥

गिजंतमप्प वूतू ई धातुविनत्तणिदं कम्मंदोळं मेणभावदोळं खीलिगदोळं वर्तना एदितु
शब्दस्थितियक्कु । वर्त्यन्ते वर्तनमात्रं वा वर्तना । धर्मादिद्रव्यगत्त्ये स्वपर्यायनिवृत्तिथं कुरुत्तु

गतिस्थानावगाहनक्रियास्तिस्रः जीवपुद्गलयोरेव भवन्ति, धर्माधर्माकाशेषु क्रिया नहि स्थानचलनप्रदेश-
चलनयोरभावात् । किं तर्हि ? धर्मादिद्रव्याणि गत्यादीनां मुख्यसाधिकानि भवन्ति ॥५६६॥ तद्यथा— २०

गच्छतः पन्थाः, तिष्ठतः आसने, निवसतो निवासो, यथा गतिस्थानावगाहकरणे साधका भवन्ति
तथा धर्मादित्रयमपि साधकं कारणमित्यर्थः ॥५६७॥

णिजन्तात् वूतूज्धातोः कर्मणि भावे वा वर्तनाशब्दव्यवस्थितिः वर्त्यन्ते वर्तनमात्रं वेति । धर्मादि-

गति, स्थिति और अवगाह ये तीन क्रियाएँ जीव और पुद्गलमें ही होती हैं । धर्म, २५
अधर्म और आकाशमें क्रिया नहीं है; क्योंकि न तो ये अपने स्थानको छोड़कर अन्य स्थानमें
जाते हैं और न इनके प्रदेशोंमें ही चलन होता है । किन्तु ये धर्मादि द्रव्य, गति आदि
क्रियाओंमें मुख्य साधक होते हैं ॥ ५६६ ॥

वही कहते हैं—

जैसे जाते हुएको मार्ग, बैठनेवालेको आसन, निवास करनेवालेको निवासस्थान,
चलने, ठहरने, अवगाह करनेमें साधक होता है, उसी तरह धर्मादि तीन द्रव्य भी सहायक २०
कारण होते हैं ॥ ५६७ ॥

णिजंत वृत्त्वा धातुसे कर्ममें अथवा भावमें वर्तना शब्द निष्पन्न होता है । सो बर्ते
या वर्तन मात्र वर्तना है । धर्मादि द्रव्य अपनी-अपनी पर्यायोंकी निर्वृत्तिके प्रति स्वयं ही

१. म वृत्तिमे णिजंतदत्तणिदं ।

तस्मिन्मदमे वर्तितुमुत्तिष्ठन्वक्के बाह्योपग्रहमितल्लवे तद्वृत्त्यसंभवमप्युद्दिदमा द्रव्यंगळ प्रवर्तनोपलक्षितं कालमेदितु माडिवर्तने कालदुपकारमक्कुमे दूरियत्पडुवुदु । इल्लि णिच्चिगत्थंभावुदेदोडे वर्तते द्रव्यपर्यायस्तस्य वर्तयिता कालः एदितु कालवक्तृत्थमादोडे कालवक्के क्रियावत्त्वमागि बक्कुमे तोगळु अधीते शिष्यः उपाध्यायोध्यापयति एवमे कर्तृत्वमक्कुमे दोडिल्लि दोषमितलेके दोडे निमित्तमात्र-

- ५ मादोडे हेतुकर्तृव्यपदेशं काणल्पट्टुदु । ये तोगळु कारिषोग्निरध्यापयति एदितु कालवक्के हेतुकर्तृ-
तेयक्कुमंतादोडा कालमेतु निश्चयिसत्पडुगुमेदोडे समयाधिकक्रियाविशेषंगळं समयादिनिर्वर्त्य-
गळप् पाकादिगळं समयमेदुं पाकमेदितित्येवमादि स्वसंज्ञारूढिसद्भावदोळं समयः कालः
ओदनपाककालः एदितध्यारोपिसत्पडुतिहंदावुदु कालव्यपदेशनिमित्तमप्य मुख्यकालवस्तित्वमं
पेळुमेकेदोडे गौणवक्के मुख्यापेक्षत्वमुत्पुद्दिदं । षड्द्रव्यंगळवर्तनाकारणं मुख्यकालमक्कुमा वर्तन-
१० गुणमुं द्रव्यनिचयंगळोळे अक्कुमंतादोडमा कालाधारदिदमे सर्वद्रव्यंगळं वर्तते । परिणमंति
स्वपर्यायंगळं परिणमिसुत्तिष्ठन्वु खलु नियमदिदं इल्लि खलुशब्दमवधारणार्थमक्कुं । इदंदिदं
कालवक्के परिणामक्रियापरत्वापरत्वोपकारंगळं पेळल्पट्टु ।

द्रव्याणां स्वपर्यायनिर्वृतिं प्रति स्वयमेव वर्तमानानां बाह्योपग्रहाभावे तद्वृत्त्यसंभवात् तेषां प्रवर्तनोपलक्षितः
काल इति कृत्वा वर्तना कालस्य उपकारो ज्ञातव्यः । अत्र णिचोऽर्थः कः ? वर्तते द्रव्यपर्यायः तस्य वर्तयिता

- १५ काल इति । तदा कालस्य क्रियावत्त्वं प्रसज्यते अधीते शिष्यः, उपाध्यायोऽध्यापयतीत्यादिवत्, तत्र-
निमित्तमात्रेऽपि हेतुकर्तृत्वदर्शनात् कारीषोऽग्निरध्यापयतीत्यादिवत् । तर्हि स कथं निश्चीयते ? समयादिक्रिया-
विशेषाणां समय इत्यादेः समयादिनिर्वर्त्यपाकादीनां पाक इत्यादेश्च स्वसंज्ञायाः रूढिसद्भावेऽपि तत्र काल इति
यदध्यारोप्यते तन्मुख्यकालास्तित्वं कथयति गौणस्य मुख्यापेक्षत्वात् इति षड् द्रव्याणां वर्तनाकारणं मुख्यकालः ।
वर्तनगुणो द्रव्यनिचये एव, तथा सति कालाधारेणैव सर्वद्रव्याणि वर्तन्ते स्वस्वपर्यायैः परिणमन्ति खलु नियमेन ।
२० अत्र खलुशब्दोऽवधारणार्थः, अनेन कालस्यैव परिणामक्रियापरत्वापरत्वोपकारी उक्तो । तौ तु जीवपुद्गल-
योर्दृश्येते धर्मादि-अमूर्तद्रव्येषु कथं ? इति चेदाह—

वर्तन करते हैं, किन्तु बाह्य उपकारके बिना वह सम्भव नहीं है अतः उनकी वर्तनामें जो
निमित्त मात्र होता है, वह काल है । ऐसा करके वर्तना कालका उपकार जानना । यहाँ
णिच् प्रत्ययका अर्थ है—द्रव्यकी पर्याय वर्तन करती है, उसका वर्तन करानेवाला काल है ।

- २५ शंका—तब तो कालको क्रियावान् होनेका प्रसंग आता है । जैसे शिष्य पढ़ता है और
उपाध्याय पढ़ाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि निमित्त मात्रमें भी हेतुकर्तापना देखा जाता है; जैसे
(रात्रिके समयमें) कण्डेकी आग पढ़ाती है ।

शंका—उस कालके अस्तित्वका निश्चय कैसे होता है ?

- ३० समाधान—समय, घड़ी, मुहूर्त आदि जो क्रिया विशेष हैं, उनमें जो समय आदिका
व्यवहार किया जाता है, समय आदिसे होनेवाले पकाने आदिको जो समयपाक इत्यादि
कहा जाता है। इन रूढ़ संज्ञाओंमें जो कालका आरोप है, वह मुख्य कालके अस्तित्वको कहता
है क्योंकि उपचरित कथन मुख्य कथनकी अपेक्षा रखता है । इस प्रकार छह द्रव्योंकी वर्तना-
का कारण मुख्यकाल है । यद्यपि वर्तना गुण द्रव्यसमूहमें ही वर्तमान है, उन्हींमें वह
३५ शक्ति है, तथापि कालके आधारसे ही सब द्रव्य वर्तन करते हैं अर्थात् अपनी-अपनी पर्याय
रूपसे परिणमन करते हैं । यहाँ खलु अवधारणार्थक है । इससे परिणाम क्रिया और परत्व,

जीवपुद्गलंगळोळु परिणामादिपरत्वापरत्वंगळु काणल्पडुगुं । धर्माद्यमूर्तद्रव्यंगळोळु
परिणामादिगळे ते दोडे पेळदपं :—

धर्माधर्मादीणं अगुरुगलहुगं तु छद्दिहि वड्ढीहि ।

हाणीहि वि वड्ढंतो हायंतो वड्ढे जम्हा ॥५६९॥

धर्माधर्मादीनां अगुरुलघुकस्तु षड्भिरपि वृद्धिभिर्हानिभिरपि वर्द्धमानो हीयमानो वत्तते ५
यस्मात् ॥

आवुदो दु कारणदिदं धर्माधर्मादिद्रव्यंगळ अगुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदंगळु स्वद्रव्यत्ववर्क
निमित्तमप्य शक्तिविशेषंगळु षड्वृद्धिगळिदं षड्हानिगळिदं वर्द्धमानंगळु हीयमानंगळुमागुत्तं
परिणमिसुववु । कारणं मुख्यकालमेयवकुं ।

ण य परिणमदि सयं सो ण य परिणामेइ अणमण्णेहि । १०

त्रिविहपरिणामियाणं हवदि हु कालो सयं हेदू ॥५७०॥

न च परिणमति स्वयं सः न च परिणामयति अन्यदन्यैः । विविधपरिणामिकानां भवति हु
कालः स्वयं हेतुः ॥

सः कालः आ कालं न च परिणमति संक्रमविधानदिदं स्वकीयगुणंगळिदं अन्यद्रव्यदोळप-
रिणमिसदु । येतोंगळु परद्रव्यगुणंगळगे तन्नोळु संक्रमदिदं परिणमनमित्तलंते मत्तं हेतु कर्तृत्वदिदं १५
अन्यद्रव्यमनन्यगुणंगळोळकूडि न च परिणमयति परिणमनमं माडिसदु । मत्तेन दोडे विविधपरि-
णामिकानां विविधपरिणामिगळप्य द्रव्यंगळ परिणमनवर्क कालं ताने उदासीननिमित्तमवकुं ।

कालं अस्सिय दब्बं सगसगपज्जायपरिणदं होदि ।

पज्जायावड्ढाणं सुद्धणए होदि खणमेत्तं ॥५७१॥

कालमाश्रित्य द्रव्यं स्वस्वपदार्थायपरिणतं भवति । पदार्थावस्थानं शुद्धनये भवति क्षणमात्रं ॥ २०

यतः धर्माधर्मादीनां अगुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदा स्वद्रव्यत्वस्य निमित्तभूतशक्तिविशेषाः षड्वृद्धि-
भिर्वर्द्धमाना षड्हानिभिश्च हीयमानाः परिणमन्ति ततः कारणात्तत्रापि च मुख्यकालस्यैव कारणत्वात् ॥५६९॥

स कालः संक्रमविधानेन स्वगुणैरन्यद्रव्ये न परिणमति । न च परद्रव्यगुणान् स्वस्मिन् परिणामयति ।
नापि हेतुकर्तृत्वेन अन्यद् द्रव्यम् अन्यगुणैः सह परिणामयति । किं तर्हि ? विविधपरिणामिकानां द्रव्याणां
परिणमनस्य स्वयमुदासीननिमित्तं भवति ॥५७०॥ २५

अपरत्वं उपकार कालके ही कहे गये हैं और ये जीव और पुद्गलमें ही देखे जाते हैं ॥५६८॥

तब धर्मादि अमूर्तद्रव्योंमें वर्तना कैसे होती है, यह बतलाते हैं—

यतः धर्म, अधर्म आदिमें अपने द्रव्यत्वमें निमित्तभूत शक्ति विशेष अगुरुलघु नामक
गुणके अविभागी प्रतिच्छेद छह प्रकारकी वृद्धिसे वर्द्धमान और छह प्रकारकी हानिसे
हीयमान होकर परिणमन करते हैं । इस कारणसे वहाँ भी मुख्य काल ही कारण है ॥५६९॥ ३०

वह काल संक्रमविधानके द्वारा अपने गुणोंसे अन्य द्रव्यके रूपमें परिणमन नहीं
करता । और अन्य द्रव्यके गुणोंको अपने रूपमें भी नहीं परिणमाता । हेतुकर्ता होकर अन्य
द्रव्यको अन्य द्रव्यके गुणोंके साथ भी नहीं परिणमाता । किन्तु अनेक रूपसे स्वयं परिणमन
करनेवाले द्रव्योंके परिणमनमें उदासीन निमित्त होता है ॥ ५७० ॥

कालमनाश्रयिसि जीवादिसर्वद्रव्यं स्वस्वपर्यायपरिणतमक्कुं । आ पर्यायावस्थानमुं ऋजुसूत्रनयदेळु येकसमयमेयक्कुनत्थं पर्यायापेक्षेयिदं ।

ववहारो य वियप्पो भेदो तह पज्जओत्ति एयड्ढो ।

ववहार अवट्ठाणट्ठिदी हु ववहारकालो दु ॥५७२॥

व्यवहारश्च विकल्पो भेदश्च तथा पर्याय इत्येकार्थः । व्यवहारावस्थानस्थितिः खलु व्यवहारकालस्तु ॥

व्यवहारमेदोडं विकल्पमेदोडं भेदमेदडमंते पर्यायमेदोडमेकार्थमक्कुमल्लि व्यंजन-पर्यायापेक्षेयिदं व्यवहारावस्थानस्थितिः व्यवहारमेदोडं पर्यायमेदु पेळ्ळुद्वारिदमा पर्यायद अवस्थानदिदं वर्तमानतेयिदमावुदो दु स्थितियदु तु मत्ते व्यवहारकालः व्यवहारकालमेदुदक्कुं ।

अवरा पज्जायठिदी खणमेत्तं होदि तं च समओत्ति ।

दोण्णमण्णमदिक्कमकालपमाणं हवे सो दु ॥५७३॥

अवरा पर्यायस्थितिः क्षणमात्रा भवति सैव समय इति । द्वयोरण्वोरतिक्रमकालप्रमाणो भवेत्स तु ॥

द्रव्यंगल पर्यायंगलगे जघन्यस्थिति क्षणमात्रमक्कुमा स्थितिमे समयमेव संज्ञेयुळ्ळुदक्कुं । सः आ समयमुं तु मत्ते गमनपरिणतंगळप्पेरडुं परमाणुगळ परस्परतिक्रमकालप्रमाणमक्कुमिल्लि गुपयोगियप्प गाथासूत्रमिदु :—

णभएयपएसत्थो परमाणू मंदगइपवट्ठतो ।

बीयमणंतरखेत्तं जावदियं जादि तं समयकालो ॥

कालमाश्रित्य जीवादि सर्वद्रव्यं स्वस्व-पर्यायपरिणतं भवति । तत्पर्यायावस्थानं ऋजुसूत्रनयेन एकसमयो भवति अर्थपर्यायापेक्षया ॥५७१॥

व्यवहारः विकल्पः भेदः तथा पर्यायः इत्येकार्थः तु पुनः तत्र व्यञ्जनपर्यायस्य अवस्थानतया स्थितिः सैव व्यवहारकालो भवति ॥५७२॥

द्रव्याणां जघन्या पर्यायस्थितिः क्षणमात्रं भवति । सा च समय इत्युच्यते । स च समयः द्वयोर्गमन-परिणतपरमाण्वोः परस्परतिक्रमकालप्रमाणं स्यात् ॥५७३॥ अत्रोपयोगिगाथाद्वयं—

णभएयपएसत्थो परमाणू मन्दगइपवट्ठतो ।

बीयमणंतरखेत्तं जावदियं जादि तं समयकालो ॥१॥

कालका आश्रय पाकर जीव आदि सब द्रव्य अपनी-अपनी पर्याय रूपसे परिणमन करते हैं । उस पर्यायके ठहरनेका काल ऋजु सूत्रनयसे अर्थपर्यायकी अपेक्षा एक समय होता है ॥ ५७१ ॥

व्यवहार, विकल्प, भेद तथा पर्याय ये सब एक अर्थवाले हैं । अर्थात् इन शब्दोंका अर्थ एक है । उनमें-से व्यंजन पर्यायकी वर्तमान रूपसे स्थिति व्यवहार काल है ॥५७२॥

द्रव्योंकी पर्यायकी जघन्य स्थिति क्षण मात्र होती है, उसको समय कहते हैं । गमन करते हुए दो परमाणुओंके परस्परमें अतिक्रमण करनेमें जितना काल लगता है, उतना ही समयका प्रमाण है ॥ ५७३ ॥

आकाशद एकप्रदेशबोद्धिं परमाणु मन्दगतिविंदं परिणतमादुदु द्वितीयमनन्तरक्षेत्रमं याव-
द्याति यिनितु पोळितगेधुगुमदु समयमेव कालमक्कुमा नभः प्रदेशमेव बुदेते दोडे :-

जेत्ति वि खेतमेत्तं अणुणा संदं खु गयणदब्बं च ।

तं च पदेसं भणियं अवरावरकारणं जस्स ॥ []

आनुदोदु परमाणुविगे अपरापरकारणं पिदु मुंदुमेवी व्यवस्थितिगे निमित्तमप्प गगनद्रव्य- ५
मनितु क्षेत्रमात्रं परमाणुविंदं व्यापितत्पट्टदुदु खु स्फुटमागि सः अदु प्रदेशो भणितः प्रदेशमेव
पेळत्पट्टदुदु ।

अनन्तरं व्यवहारकालमं पेळदधं :-

आवलि असंखसमया संखेज्जावलिसमूहमुस्सासो ।

सन्धुस्सासो थोवो सत्तत्थोवो लवो भणियो ॥५७४॥

१०

आवलिरसंखसमया संखेयावलिसमूह उच्छ्वासः । सप्पोच्छ्वासा स्तोकाः सप्तस्तोका लवो
भणितः ॥

आवलि ये बुदु असंख्यातसमयंग ठनुठुदेके दोडे युक्तासंख्यातजघन्यराशिप्रमाणमप्पुवरिवं ।
संख्यातावलिसमूहमुच्छ्वासमेव बुदक्कुमा उच्छ्वासमेव तप्परोळे दोडे :-

अड्डस्स अणलसस्स य णिरुवहदस्स य हवेज्ज जीवस्स ।

उस्सासो णिस्सासो एगो पाणोत्ति आहीदो ॥ []

१५

आकाशस्य एकप्रदेशस्थितपरमाणुः मन्दगतिपरिणतः सन् द्वितीयमनन्तरक्षेत्रं यावद्याति स समयाख्य-
कालो भवति ॥१॥ स च प्रदेशः कियान्—

जेत्तिवि खेतमेत्तं अणुणा संदं खु गयणदब्बं च ।

तं च पदेसं भणियं अवरावरकारणं जस्स ॥२॥

२०

यस्य परमाणोः अपरपरकारणं गगनद्रव्यं यावत्क्षेत्रमात्रं परमाणुना व्याप्तं स्फुटं स प्रदेशो भणितः ॥२॥
अथ व्यवहारकालमाह—

जघन्ययुक्तासंख्यातसमयराशिः आवलिः । संख्यातावलिसमूह उच्छ्वासः । स च किरुवः ?

अड्डस्स अणलसस्स य णिरुवहदस्स य हवेज्ज जीवस्स ।

उस्सासाणिस्सासो एगो पाणोत्ति आहीदो ॥१॥

२५

यहाँ उपयोगी दो गाथाओंका अर्थ इस प्रकार है—

आकाशके एक प्रदेशमें स्थित परमाणु मन्द गतिसे चलता हुआ अनन्तरवर्ती दूसरे
प्रदेशपर जितनी देर में जाता है, वह समय नामक काल है । वह प्रदेश कितना है, यह कहते
हैं—आकाशके जितने क्षेत्रको एक परमाणु रोकता है, उसे प्रदेश कहते हैं । वह दूर और
निकट व्यवहारमें कारण होता है ।

३०

आगे व्यवहार कालको कहते हैं—

जघन्य युक्तासंख्यात प्रमाण समयोंके समूहका नाम आवली है । संख्यात आवलीके
समूहका नाम उच्छ्वास है । वह सुखी, निरालसी और नीरोगी जीवका उच्छ्वास-

आहचनप्प सुखितनप्प अनालस्यनप्प निरुपहतनप्प जीवंगक्कुमावुदो दुच्छ्वासनिश्वासम-
वो दु प्राणमेदितु पेळल्पदुदु । सप्तोच्छ्वासमो दु स्तोकमक्कुं । सप्तस्तोकंगळो दु लवमे बुदक्कुं ।

अइत्तीसद्वलवा नाली वे नालिया मुहुत्तं तु ।

एगसमयेण हीणं भिण्णमुहुत्तं तदो सेसं ॥५७५॥

- ५ अष्टात्रिंशद्वलवाः नाडी द्वे नाडिके मुहूर्तस्तु । एकसमयेन हीनो भिन्नमुहूर्तस्ततः शेषः ॥
सूवत्ते दुवरे लवेगळु घट्टिगे ये बुदक्कुं । द्विघट्टिगेगळो दु मुहूर्तमक्कुं । तु मत्ते एकसमयादिद
हीनमाद मुहूर्तं भिन्नमुहूर्तमंतर्मुहूर्तमुत्कृष्टमक्कुं । ततः मुंदे द्विसमयोनाड्यावत्यसंख्यातैकभाग-
पर्यंतमाद शेषंगळनितुमंतर्मुहूर्तंगळं यप्पुवु ।

इल्लिगुपयोगियप्प गाथासूत्रमिदु :—

- १० ससमयमावलि अवरं समऊण मुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।

मज्झासंखवियप्पं वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ॥ []

समयाधिकावलि जघन्यांतर्मुहूर्तमक्कुं । समयोनमुहूर्तमुत्कृष्टांतर्मुहूर्तमक्कुं । मध्यव-
असंख्यातविकल्पमं मध्यमांतर्मुहूर्तंगळं दिदनरि ।

दिवसो पक्खो मासो उडु अयणं वस्समेवमादी हु ।

- १५ संखेज्जासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥

दिवसः पक्षो मास ऋतुरयनं वर्षमेवमादिः खलु । संख्यातासंख्यातानंततो भवति
व्यवहारः ॥

सुखिनः अनलसस्य निरुपहतस्य यो जीवस्य उच्छ्वासनिश्वासः स एव एकः प्राण उक्तो भवेत् ।
सप्तोच्छ्वासाः स्तोकाः । सप्तस्तोका लवः ॥५७४॥

- २० साध्याष्टा त्रिंशल्लवा नाली घटिका । द्वे नाल्यो मुहूर्तः । स चैकसमयेन हीनो भिन्नमुहूर्तः, उत्कृष्टान्त-
र्मुहूर्त इत्यर्थः । ततोऽग्रे द्विसमयोनाद्या आवत्यसंख्यातैकभागान्ताः सर्वेऽन्तर्मुहूर्ताः ॥५७५॥ अत्रोपयोगि
गाथासूत्रम्—

ससमयमावलि अवरं समऊणमुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।

मज्झासंखवियप्पं वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ॥१॥

- २५ ससमयाधिकावलिः जघन्यान्तर्मुहूर्तः समयोनमुहूर्तः उत्कृष्टान्तर्मुहूर्तः । मध्यमा असंख्यातविकल्पा
मध्यमान्तर्मुहूर्ताः, इति जानीहि ॥१॥

निश्वास होता है । उसीको प्राण कहते हैं । सात उच्छ्वासका एक स्तोक और सात स्तोकका
एक लव होता है ॥ ५७४ ॥

- ३० साढ़े अड़तीस लवकी एक नाली होती है, उसे घटिका कहते हैं । दो नालीका मुहूर्त
होता है । एक समयहीन मुहूर्तको भिन्न मुहूर्त कहते हैं; यह उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है । इससे
आगे दो समयहीन आदिसे लेकर आवलीके एक असंख्यात भाग पर्यन्त सब अन्तर्मुहूर्त
होते हैं ॥ ५७५ ॥

यहाँ उपयोगी गाथा सूत्रका अर्थ इस प्रकार है—

दिवसमे'दुं पक्षमे'दुं मासमे'दुं ऋतुमे'दुमयनमे'दुं वर्षमे'दित्यवमादिगळु स्फुटमागि आवल्यादिभेददिदं संख्यातासंख्यातानंतपर्यंतं यथासंख्यमागि श्रुतावधिकेवलज्ञानविषयतेयिदं विकल्पंगळप्पुववेलं व्यवहारकालमवकुं ।

ववहारो पुण कालो माणुसखेत्तम्मि जाणिदव्वो दु ।

जोइसियाणं चारे ववहारो खलु समानोत्ति ॥५७७॥

५

व्यवहारः पुनः कालो मनुष्यक्षेत्रे ज्ञातव्यस्तु । ज्योतिष्काणां चारे व्यवहारः खलु समान इति ॥

व्यवहारकालमे'बुदु मत्ते मनुष्यक्षेत्रदोळु ज्ञातव्यमवकुमेके'दोडे ज्योतिष्कचारदोळु व्यवहारकालं तु मत्ते खलु स्फुटमागि समानमे'दितिदु कारणमागि ।

ववहारो पुण तिबिहो तीदो वडुंतगो भविस्सो दु ।

१०

तीदो संखेज्जावलिहदसिद्धाणं पमाणो दु ॥५७८॥

व्यवहारः पुनस्त्रिविधोऽतीतो वर्तमानो भविष्यस्तु । अतीतः संख्यातावलिहृतसिद्धाणां प्रमाणं तु ॥

व्यवहारकालमे'बुदु मत्ते त्रिविधमवकुं । अतीतकालमे'दुं वर्तमानकालमे'दुं भविष्यत्कालमे'दितु । अल्लि अतीतकालप्रमाणं तु मत्ते संख्यातावलिहृतं गुणिसत्पट्ट सिद्धरागळ प्रमाणमे'नित- १५
नितेयवकुमेके'दोडे त्रैराशिक सिद्धमप्पुदर्दिसा त्रैराशिकमे'ते'दोडे अरुनूर एंदु जीवंगळु मुक्तिगो सलुत्तिरलु अरुदिगळमेले'दु समयकालमागुत्तिरलु सर्वजीवराशिय अनंतैकभागमात्रमप्प जीवंगळु

दिवसः पक्षः मासः ऋतुः अयनं वर्षं इत्यादयः स्फुटं आवल्यादिभेदतः संख्यातासंख्यातानन्तपर्यन्तं क्रमशः श्रुतावधिकेवलज्ञानविषयविकल्पाः सर्वे व्यवहारकालो भवति ॥५७६॥

व्यवहारकालः पुनः मनुष्यक्षेत्रे स्फुटं ज्ञातव्यः । कुतः ? ज्योतिष्काणां चारे स समान इति २०
कारणात् ॥५७७॥

व्यवहारकालः पुनस्त्रिविधः अतीतोऽनागतो वर्तमानश्चेति । तु-पुनः अत्रातीतः संख्यातावलिगुणित-
सिद्धराशिर्भवति, कुतः ? अष्टोत्तरषट्छतजीवानां मुक्तिगमनकालोऽष्टसमयाधिकषष्मासाः तदा, सर्वजीवराश्य-

एक समय अधिक आवली जवन्य अन्तमुहूर्त है । एक समय कम मुहूर्त उत्कृष्ट अन्त-
मुहूर्त है । दोनोंके मध्यमें असंख्यात भेद हैं, वे सब अन्तमुहूर्त जानना । २५

दिवस, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष इत्यादि आवली आदिसे लेकर संख्यात, असंख्यात, अनन्तपर्यन्त क्रमसे श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और केवलज्ञानके विषयभूत सब विकल्प व्यवहार काल है ॥५७६॥

व्यवहारकाल मनुष्यलोकमें ही जाना जाता है, क्योंकि ज्योतिषी देवोंके चलनेसे ही व्यवहारकाल निष्पन्न होता है; अतः ज्योतिषी देवोंके चलनेका काल और व्यवहार काल ३०
दोनों समान हैं ॥ ५७७ ॥

व्यवहारकाल तीन प्रकारका है—अतीत, अनागत और वर्तमान । अतीतकाल संख्यात आवलीसे गुणित सिद्धराशि प्रमाण है । क्योंकि छह सौ आठ जीवोंके मुक्ति जानेका काल आठ समय अधिक छह मास है । तब समस्त जीव राशिके अनन्तवें भाग मुक्त जीवोंका

मुक्तिगो संब कालमेतत्पुर्वेदितु त्रैराशिकं माडि प्र । ६०८ फल मासं ६ । इ ३ बंध लब्धं संख्याता-
बलिहृतसिद्धराशिप्रमाणमप्युदरिदं ।

समयो हु वट्टमाणो जीवादो सन्वयोग्गलादो वि ।

भावी अणंतगुणितो इदि व्यवहारो हवे कालो ॥५७९॥

५ समयः खलु वर्त्तमानो जीवात्सर्वपुद्गलादपि च । भावी अनंतगुणित इति व्यवहारो
भवेत्कालः ॥

वर्त्तमानकालमेकसमयमेवकुं । सर्वजीवराशियं नोडलुं सर्वपुद्गलराशियं नोडलुं भावी
भविष्यत्कालमनंतगुणितमवकुमितु व्यवहारकालं त्रिविधमेदु पेऊत्पट्टदु ।

कालोत्ति य ववएसो सद्भावपरूपओ हवदि णिच्चो ।

१० उत्पण्णप्पद्वंसी अवरो दीहंतरट्ठाई ॥५८०॥

काल इति व्यपदेशः सद्भावप्ररूपको भवति नित्यः । उत्पन्नप्रध्वंसी अपरो दीर्घा-
न्तरस्थायी ॥

कालमेवो यभिधानं मुख्यकालसद्भावप्ररूपकं । मुख्यकालास्तित्वमं पेऊगुं एतंदोडे
मुख्यविल्लविरुतिरलु गौणक्कभावमवकुमेतगेळु सिंहक्कभावमागुतिरलु वट्टुः सिंहः एबिदक्कभाव-
१५ प्रतीति न्यायमिल्लिगमंतुदेयक्कुमप्युदरिदमा मुख्यकालं नित्यमुं उत्पन्नप्रध्वंसियक्कुं येकेदोडे
द्रव्यत्वेदिव मुत्पादव्ययधौव्ययुक्तमप्युदरिदमपरव्यवहारकालं वर्त्तमानकालापेक्षेयिदमुत्पन्नप्रध्वंसि-

नन्तकभागमुक्तजीवानां कियान् ? इति त्रैराशिकागतस्य तत्प्रमाणत्वात् । प्र ६०८ फ मा ६ इ ३ लब्धं ३ ।
२ १ ॥५७८॥

वर्त्तमानकालः खल्वेकसमयः भावी सर्वजीवराशितः सर्वपुद्गलराशितोऽप्यनन्तगुणः, इति व्यवहारकालः
२० त्रिविधो भणितः ॥५७९॥

काल इति व्यपदेशो मुख्यकालस्य सद्भावप्ररूपकः मुख्याभावे गौणस्याप्यभावात् सिंहाभावे वट्टुः सिंह
इत्यादिवत् । स च मुख्यः नित्योऽपि उत्पन्नप्रध्वंसी भवति द्रव्यत्वेन उत्पादव्ययधौव्ययुक्तत्वात् । अपरः

कितना काल होगा । इस प्रकार त्रैराशिक करना । सो प्रमाण राशि छह सौ आठ, फल
राशि छह महीना आठ समय । इच्छाराशि सिद्धोंकी संख्या । फलराशिको इच्छाराशिसे
२५ गुणा करके उसमें प्रमाणराशिसे भाग देनेपर लब्धराशि संख्यात आवलीसे गुणित सिद्ध-
राशि आती है । वही अतीत कालका परिमाण है ॥ ५७८ ॥

वर्त्तमान कालका परिमाण एक समय है । भाविकाल सर्व जीवराशि और सर्व
पुद्गलोंसे भी अनन्त गुणा है । इस प्रकार व्यवहार काल तीन प्रकारका कहा ॥ ५७९ ॥

लोकमें जो 'काल' ऐसा व्यवहार है, वह मुख्यकालके सद्भावको कहता है, क्योंकि
३० मुख्यके अभावमें गौण व्यवहार भी नहीं होता । जैसे सिंहके अभावमें यह बालक सिंह है;
ऐसा कहनेमें नहीं आता । वह मुख्यकाल नित्य होनेपर भी उत्पत्ति और व्ययशील है, क्योंकि
द्रव्य होनेसे उत्पाद, व्यय और धौव्यसे युक्त है । दूसरा व्यवहारकाल वर्त्तमानकी अपेक्षा
उत्पादव्ययशील है और अतीत-अनागतकी अपेक्षा दीर्घकाल तक स्थायी होता है । इस विषय-
में उपयोगी श्लोक इस प्रकार है—

युमतोतानागतकालापेक्षेयिदं दीर्घान्तरस्थायियुमवकुमिल्लिगुपयोगिश्लोकमिदुः—

“निमित्तमांतरं तत्र योग्यता वस्तुनि स्थिता ।

बहिर्निश्चयकालस्तु निश्चितं तत्त्वदर्शिभिः ॥” []

उपलक्षणानुवादाधिकारंतिदुर्दु ।

छद्दव्वावट्टाणं सरिसं तियकाल अट्टपज्जाये ।

वेंजणपज्जाये वा मिलिदे ताणं ठिदितादो ॥५८१॥

षड्द्रव्यावस्थानं सदृशं त्रिकालार्थपर्यायान् । व्यंजनपर्यायान्वा मिलिते तेषां स्थिति-
त्वात् ॥

षड्द्रव्यगन्धगमवस्थानं सदृशमेव कुमेके दोडे त्रिकालार्थपर्यायगन्धमं मेषु व्यंजनपर्यायगन्धमं
कूडिदोडे या षड्द्रव्यगन्धो स्थितियवकुमपुदरिदं अर्त्यव्यंजनपर्यायगन्धं बुवुमे तुटे दोडे “सूक्ष्माः १०
अवागोचराः अचिरकालस्थायिनोऽर्थपर्यायाः, स्थूलाः वागोचराः चिरकालस्थायिनो व्यंजन-
पर्यायाः” एतदित्यप्य लक्षणमनुल्लवप्नुवु ।

एयदवियम्मि जे अत्थपज्जया विंजणपज्जया चावि ।

तीदाणागदभूदा तावदियं तं हवदि दव्वं ॥५८२॥

एकस्मिन् द्रव्ये ये अर्थपर्यायाः व्यंजनपर्यायाश्चापि । अतीतानागतभूताः तावत्तदभवति १५

द्रव्यम् ॥

व्यवहारकालः वर्तमानापेक्षया उत्पन्नप्रध्वंसी अतीतानागतापेक्षया दीर्घान्तरस्थायी भवति । अत्रोपयोगी
श्लोकः—

निमित्तमांतरं तत्र योग्यता वस्तुनि स्थिता ।

बहिर्निश्चयकालस्तु निश्चितं तत्त्वदर्शिभिः ॥१॥

२०

इत्युपलक्षणानुवादाधिकारः ॥५८०॥

षड्द्रव्याणां अवस्थानं सदृशमेव भवति त्रिकालभवेषु सूक्ष्मावागोचराचिरस्थाय्यर्थपर्यायेषु तद्विपरीत-
लक्षणव्यंजनपर्यायेषु वा मिलितेषु तेषां स्थितत्वात् ॥५८१॥ इदमेव समर्थयति—

वस्तुमें रहनेवाली योग्यता तो अन्तरंग निमित्त है और निश्चय काल बाह्य निमित्त
है; ऐसा तत्त्वदर्शियोंने निश्चित किया है ॥ ५८० ॥

२५

उपलक्षणानुवाद अधिकार समाप्त हुआ ।

छहों द्रव्योंका अवस्थान—ठहरनेका काल बराबर एक समान है, क्योंकि तीनों कालों-
में होनेवाली सूक्ष्म, वचनके अगोचर और क्षणस्थायी अर्थपर्याय तथा उनसे विपरीत
लक्षणवाली व्यंजन पर्यायोंके मिलनेपर उन द्रव्योंकी स्थिति होती है ॥ ५८१ ॥

इसीका समर्थन करते हैं—

३०

बोदु द्रव्यदोळावु केलवुवर्थपय्यायंगळुं व्यंजनपय्यायंगळुमतीतानागतकालंगळोळवत्ति-
सुबुदु वत्तिसत्पडुववुमपि शब्ददिदं वर्त्तमानपय्यायिवबेल्लमुं कूडि तत् अदु द्रव्यं भवति द्रव्यमक्कुं-
स्थित्यधिकारंतिदुदु ।

आगासं वज्जित्ता सव्वे लोगम्मि चेव णत्थि बहिं ।

वावी धम्माधम्मा अवट्ठिदा अचलिदा णिच्चा ॥५८३॥

आकाशं विवर्ज्य सर्वे लोके चैव न संति बहिः । व्यापिनौ धर्माधर्मा अवस्थितौ अच-
लितौ नित्यौ ॥

आकाशद्रव्यं पोरगाणि शेषद्रव्यंगळनितुं लोकदोळेयप्पवु । लोकादि पोरगिल्ल । आ द्रव्य-
गळोळु धर्माधर्मद्रव्यंगळेरडुं व्यापिगळेके दोडे लोकप्रदेशंगळेनितोळवनितं व्यापिसिदुवु तिलदोळु
१० तैलमेतंते । अवस्थितौ स्थानचलनरहितंगळपुदरिदमवस्थितंगळु, अचलितौ प्रदेशचलनरहितंगळ-
पुदरिदमचलितंगळु, त्रिकालदोळं नाशरहितंगळपुदरिदं नित्यौ नित्यंगळपुवु । इल्लिगुपयोगियप्प
श्लोकमिदु :—

“औपश्लेषिकवैषयिकावभिव्यापक इत्यपि ।

आधारः त्रिविधः प्रोक्तः कटाकाशतिलेषु च ॥ []

१५ एकस्मिन् द्रव्ये ये अर्थपर्याया व्यञ्जनपर्यायाश्च अतीतानागताः अपिशब्दावर्तमानाश्च सन्ति तावत्
तद् द्रव्यं भवति ॥५८२॥ इति स्थित्यधिकारः ॥

आकाशं विवर्ज्य शेषसर्वद्रव्याणि लोके एव सन्ति न तद्बहिः । तेषु धर्माधर्मा व्यापिनौ सर्वलोक-
व्याप्तत्वात् तिले तैलवत्, अवस्थितौ स्थानचलनाभावात्, अचलितौ प्रदेशचलनाभावात्, नित्यौ त्रैकाल्येऽपि
विनाशाभावात् । अत्रोपयोगी श्लोकः—

२० औपश्लेषिकवैषयिकावभिव्यापक इत्यपि ।

आधारस्त्रिविधः प्रोक्तः कटाकाशतिलेषु च ॥५८३॥

एक द्रव्यमें जितनी अतीत, अनागत और वर्तमान अर्थपर्याय तथा व्यंजनपर्याय होती
है, उतना ही वह द्रव्य होता है ॥५८२॥ स्थिति अधिकार पूर्ण हुआ ।

आकाशको छोड़कर शेष सब द्रव्य लोकमें ही हैं, बाहर नहीं हैं । उनमें धर्म और
२५ अधर्म तिलोंमें तेलकी तरह सब लोकमें व्याप्त होनेसे व्यापी हैं । तथा अवस्थित हैं; क्योंकि
अपने स्थानसे विचलित नहीं होते । प्रदेशों में हलन चलन न होने से अचलित हैं और तीनों
कालोंमें भी विनाश न होनेसे नित्य हैं । इस विषयमें उपयोगी श्लोक—आधार तीन प्रकार-
का कहा है—औपश्लेषिक, वैषयिक और अभिव्यापक । इसके तीन उदाहरण हैं—चटाई,
आकाश और तेल । अर्थात् चटाईपर बालक सोता है, यहाँ चटाई औपश्लेषिक आधार है ।
३० आकाश में पदार्थ स्थित हैं, यहाँ आकाश वैषयिक आधार है । तिलोंमें तेल यहाँ अभिव्यापक
आधार है । इसी तरह लोकाकाशमें धर्म-अधर्म व्यापी हैं; यहाँ अभिव्यापक आधार
है ॥५८३॥

लोगस्स असंखेज्जदिभागप्पहुडिं तु सव्वलोगोत्ति ।

अप्पपदेसविसप्पणसंहारे वावदो जीवो ॥५८४॥

लोकस्यासंख्येयभागप्रभृतिस्तु सव्वलोकपर्यन्तमात्मप्रदेशविसर्पणसंहारे व्यापृतो जीवः ॥

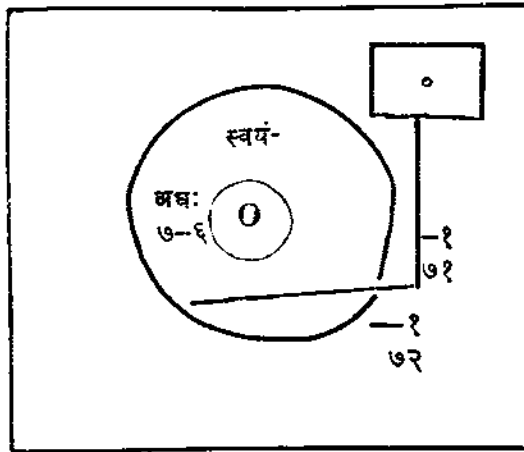
सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तजघन्यावगाहं मोदल्लोडु महामत्स्यावगाहपर्यन्तं प्रदेशोत्तरवृद्धि-

क्रमंगलप्पुवु ६ ६ ६०००६१११११ वेदनायुतंगे एकप्रदेशोत्तरवृद्धिक्रमविदं जघन्यविदं मेले ५
५ २ १ २

नडुत्तुकृष्टं त्रिगुणितमक्कुं ६ १ १ १ १ १ ३ । मेले मत्ते मारणांतिकसमुद्धातजघन्यं मोदल्लोडु

६ १ १ १ १ १ ३ प्रदेशोत्तरक्रमविदं नडुत्तुकृष्टस्वयंभूरमणसमुद्रबहिस्थितस्थंडिलक्षेत्रदोळिदं महा-
मत्स्यसंबंधि सप्तमपृथ्विय महारौरवनामश्रेणीबद्धं कुत्तु मारणांतिकसमुद्धातदंडमुत्तुकृष्टमक्कुं
१५।४१ मी क्षेत्रवर्के संदृष्टिः—

१ २



सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तजघन्यात्मप्रदेशोत्तरेषु महामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रदेशोत्तरेषु वेदनासमुद्धातस्य १०
त्रिगुणव्यासमहामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रदेशोत्तरेषु स्वयंभूरमणसमुद्रबाह्यस्थण्डिलक्षेत्रस्थितमहामत्स्येन सप्तम-
पृथ्वीमहारौरवनामश्रेणीबद्धं प्रति मुक्तमारणान्तिकसमुद्धातस्य पञ्चशतयोजनतदर्धदिष्कम्भोत्सेधैर्कार्ष्ण्यद्रज्जा-
यतप्रथमद्वितीयतृतीयचक्रोत्कृष्टपर्यन्तेषु तदुपरिलोकपूरणपर्यन्तेषु च अवगाहनविकल्पेषु आत्मप्रदेशविसर्पणसंहारे

सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकी जघन्य अवगाहनासे लेकर एक-एक प्रदेश बढ़ते-
बढ़ते महामत्स्यपर्यन्त उत्कृष्ट अवगाहना होती है। उससे ऊपर एक-एक प्रदेश बढ़ते हुए वेदना १५
समुद्धातवाले का क्षेत्र महामत्स्यकी अवगाहनासे तीन गुणा लम्बा, चौड़ा होता है; पुनः एक-
एक प्रदेश बढ़ते हुए स्वयंभूरमण समुद्रके बाहर स्थण्डिलक्षेत्रमें रहनेवाला महामत्स्य सप्तम
पृथ्वीके महारौरव नामक श्रेणीबद्ध बिलेकी ओर मारणान्तिक समुद्धात करता है, तब पाँच
सौ योजन चौड़ा, अढ़ाई सौ योजन ऊँचा तथा प्रथम मोड़ेमें एक राजू, दूसरेमें आधा राजू
और तीसरेमें छह राजू लम्बा उत्कृष्टक्षेत्र होता है। उसके ऊपर केवलिसमुद्धातमें लोकपूरण २०

इल्लि प्रथमवक्रवर्ध रज्जुवनू द्वितीयवक्रदरज्जुवनू कूडिदोडिदु -२ केळगण तृतीयवक्रवार्ध
१२

रज्जुगळोळकूडिदोडिदु वे ५० २१ व्या ५०० २१ इंतु संख्यातप्रतरांगुलगुणितम ११५
प्येळ्वरे रज्जुगळप्पुवु । इत्ते यथासंभवमाणि मेले केवलिसमुद्धातवदंडकवाटप्रतरलोकपूरणदोळ
सर्वलोकमवकुमिल्लि पठ्यंत=मात्मप्रदेशविसर्पणसंहारदोळ जीवद्रव्यं व्यापृतमवकुं ।

५ योगलदव्वाणं पुण एयपदेसादि होंति भजणिज्जा ।

एक्केक्को दु पदेसो कालाणूणं ध्रुवो होदि ॥५८५॥

पुद्गलद्रव्याणां पुनरेकप्रदेशादयो भवन्ति भजनीयाः । एकैकस्तु प्रदेशः कालाणूनां ध्रुवं
भवति ॥

१० पुद्गलद्रव्यगच्छे पुनः मत्ते एकप्रदेशमादियाणि द्व्यणुकादिपुद्गलस्कंधगच्छे यथासंभवमाणि
प्रदेशांगुल विकल्पनीयगळप्पुवु । अदं ते दोडे द्व्यणुकमेकप्रदेशदोळं मेणु द्विप्रदेशदोळमिवकुं । त्र्यणुक-
मेकप्रदेशदोळं द्विप्रदेशदोळं त्रिप्रदेशदोळं मेणिवकुमित्यादि कालाणुगच्छे तु मत्ते ओदक्कोवे
प्रदेशक्रमं ध्रुवं नियमविदमवकुं ।

संखेज्जासंखेज्जाणंता वा होंति योगलपदेसा ।

लोगागासेव ठिदी एक्कपदेसो अणुस्स हवे ॥५८६॥

१५ संखेयाऽसंखेयाऽनंता वा भवन्ति पुद्गलप्रदेशाः । लोकाकाश एव स्थितिः एकप्रदेशोऽणो-
भवेत् ॥

द्व्यणुकादिपुद्गलस्कंधगच्छे संख्यातासंख्यातानंतपरमाणुगळनुळवप्पुवु । अंतावोडं लोका-
काशदोळ वक्कं स्थितियक्कुमणुविगोवे प्रदेशमवकुं ।

सति जीवद्रव्यं व्यापृतं प्रवृत्तं भवति, सर्वाविगाहनोपपादसमुद्धातानामस्य संभवात् ॥५८४॥

२० पुद्गलद्रव्याणां पुनः एकप्रदेशादयो यथासंभवं भजनीया भवन्ति । तथा—द्व्यणुकं एकप्रदेशे द्विप्रदेशे
वा तिष्ठति । त्र्यणुकं एकप्रदेशे द्विप्रदेशे त्रिप्रदेशे वा तिष्ठतीति । तु-पुनः कालाणूनां एकैकस्य एकैकप्रदेशक्रमो
ध्रुवो भवति ॥५८५॥

द्व्यणुकादयः पुद्गलस्कन्धाः संख्यातासंख्यातानन्तपरमाणवः तथापि लोकाकाश एव तिष्ठन्ति ।
अणोरेक एव प्रदेशो भवेत् ॥५८६॥

२५ पर्यन्त क्षेत्र होता है । इस प्रकार अपने प्रदेशोंके संकोच-विस्तारसे जीवद्रव्यका क्षेत्र लोकके
असंख्यातवें भागसे लेकर सर्वलोक पर्यन्त होता है, क्योंकि जीवके सब अवगाहना, उपपाद
और समुद्धातके भेद होते हैं ॥५८४॥

पुद्गल द्रव्योंका क्षेत्र एक प्रदेशसे लेकर यथायोग्य भजनीय होता है । यथा—द्व्यणुक
एक प्रदेश अथवा दो प्रदेशमें रहता है । त्र्यणुक एक प्रदेश, दो प्रदेश अथवा तीन प्रदेशमें
३० रहता है । और कालाणु लोकाकाशके एक-एक प्रदेशमें एक-एक करके ध्रुव रूपसे रहते
हैं ॥५८५॥

द्व्यणुक आदि पुद्गल स्कन्ध संख्यात, असंख्यात और अनन्त परमाणुओंके समूह रूप
हैं, फिर भी लोकाकाशमें ही रहते हैं । परमाणु एक ही प्रदेशी होता है ॥५८६॥

१. म °माणि विक° ।

लोगागासपदेसा छद्दव्वेहि फुडा सदा होंति ।

सव्वमलोगागासं अण्णेहि विवज्जियं होदि ॥५८७॥

लोकाकाशप्रदेशाः षड्द्रव्यैः स्फुटाः सदा भवन्ति । सर्वमलोकाकाशमन्यैर्विवज्जितं भवति ॥

लोकाकाशप्रदेशंगलंगनितोवनितुं षड्द्रव्यंगल्लिदं सर्वदा स्फुटंगल्लप्पुवु । आलोकाकाशंगले-
नितोळवनितुं अन्यद्रव्यंगल्लिदं विवज्जितंगल्लप्पुवु । क्षेत्राधिकारंतिदुदु । ५

जीवा अणंतसंखाणंतगुणा पुग्गला हु तत्तो दु ।

धम्मतिथं एक्केक्कं लोगपदेसप्पमा कालो ॥५८८॥

जीवाः अनंतसंख्याः अनंतगुणाः पुद्गलाः खलु ततस्तु । धर्मत्रयमेकैकं लोकप्रदेशप्रमा
कालः ॥

सर्वजीवंगलु द्रव्यप्रमाणदिवसनंतंगल्लप्पुवु । पुद्गलंगलु सर्वजीवराशियं नोडलुमनंतानंत- १०
गुणितंगलु । धर्माधर्माकाशद्रव्यंगल्लो दोवेयप्पुवु एके दोडखंडद्रव्यंगल्लप्पुदरिदं । लोकप्रदेशंगलेनितो-
ळवनिते कालाणुगल्लप्पुवु ।

लोगागासपदेसे एक्केक्के जे द्विया हु एक्केक्का ।

रयणाणं रासी इव ते कालाणू गुणेदव्वा ॥५८९॥

लोकाकाशप्रदेशे एकैकस्मिन् ये स्थिताः खलु एकैके । रत्नानां राशिरिव ते कालाणवो १५
मंतव्याः ॥

एकैकलोकाकाशप्रदेशंगल्लो आवुवु केल्लु इरत्पट्टुवु वो दो दुगल्लाणि रत्नंगल्ल राशिये तु
भिन्न-भिन्नव्यक्तियिदिर्पुवन्ते अवु कालाणुगले दु बग यत्पडुवुवु ।

लोकाकाशप्रदेशाः सर्वे षड्द्रव्यैः सर्वदा स्फुटा भवन्ति । अलोकाकाशः सर्वोऽपि अन्यद्रव्यैर्विवजितो
भवति ॥५८७॥ इति क्षेत्राधिकारः ॥ २०

सर्वे जीवा द्रव्यप्रमाणेन अनन्ताः स्युः । तेभ्यः पुद्गलाणवः खलु अनन्तगुणाः । तु-पुनः धर्माधर्माकाशाः
एकैक एव अखण्डद्रव्यत्वात् । कालाणवो लोकप्रदेशमात्राः ॥५८८॥

एकैकलोकाकाशप्रदेशे ये एकैके भूत्वा रत्नानां राशिरिव भिन्नभिन्नव्यक्त्या तिष्ठन्ति ते कालाणवो
मन्तव्याः ॥५८९॥

लोकाकाशके सब प्रदेश सर्वदा छद्द्रव्योसे व्याप्त रहते हैं । और अलोकाकाश पूराका २५
पूरा अन्य द्रव्योसे रहित होता है ॥५८७॥ क्षेत्राधिकार समाप्त हुआ ।

द्रव्यप्रमाणसे सब जीव अनन्त हैं । उनसे पुद्गल परमाणु अनन्त गुणे हैं । धर्म-अधर्म
और आकाश अखण्ड द्रव्य होनेसे एक-एक हैं । कालाणु लोकाकाशके प्रदेश जितने हैं, उतने
हैं ॥५८८॥

एक-एक लोकाकाशके प्रदेशपर जो एक-एक स्थित है, जैसे रत्नोंकी राशिमें प्रत्येक रत्न ३०
भिन्न-भिन्न होता है, वे कालाणु जानना ॥५८९॥

ववहारो पुण कालो योग्गलद्व्यादनंतगुणमेत्तो ।

तत्तो अणंतगुणिदा आगासपदेसपरिसंखा ॥५९०॥

व्यवहारः पुनः कालः पुद्गलद्रव्यादनंतगुणमात्रः । ततोऽनंतगुणिताः आकाशप्रदेशपरि-
संख्याः ॥

५ व्यवहारकालमे'बुद्भु मत्ते पुद्गलद्रव्यमं नोडलुमनंतगुणमात्रमवकुमवं नोडलुमनंतगुणंगळा-
काशद्रव्यद प्रदेशपरिसंख्यगळ ।

लोगागासपदेसा धम्माधम्मैगजीवगपदेसा ।

सरिसा हु पदेसो पुण परमाणु अवट्ठिदं खेत्तं ॥५९१॥

लोकाकाशप्रदेशाः धर्माधर्मैकजीवप्रदेशाः सदृशाः खलु प्रदेशः पुनः परमाणववस्थितं

१० क्षेत्रं ॥

लोकाकाशप्रदेशंगळुं धर्मद्रव्यप्रदेशंगळुमधर्मद्रव्यप्रदेशंगळुमेकजीवप्रदेशंगळुं सदृशंगळप्पुवु
खलु स्फुटमाणि । ई नाल्कुं द्रव्यंगळ प्रदेशंगळु प्रत्येकं जगच्छ्रेणीघनप्रमितंगळप्पुवु । प्रदेशमे'बुदेनितु
प्रमाणमे'दोडे पुनः मत्ते पुद्गलपरमाणववष्टब्ध क्षेत्रमिनिते प्रमाणमवकुमदुकारणविदं जघन्यक्षेत्रमं
जघन्यद्रव्यमुमविभागिगळप्पुवु । संवृष्टि :-

	जीव	पुद्गल	ध.	अ.	लो =	मु का	व्य-का	अलोकाकाश
द्र	१६	१६ ख	१	१	१	≡	१६ ख ख	१६ ख ख ख
क्षे	≡ख	≡ख ख	≡	≡	≡	≡	≡ख ख ख	≡ ख ख ख ख
का	अ=ख	अ ख ख	क a	क a	क a	क a	अ ख ख ख	अ ख ख ख ख
भा	के ४	के ३	ओ.	ओ.	ओ	ओ	के	के १
	ख ख ख ख	ख ख ख	a	a	a	a	ख ख	ख

१५ व्यवहारकालः पुनः पुद्गलद्रव्यादनन्तगुणः । ततोऽनन्तगुणिता आकाशप्रदेशपरिसंख्या ॥५९०॥
लोकाकाशप्रदेशा धर्मद्रव्यप्रदेशा अधर्मद्रव्यप्रदेशा एकैकजीवद्रव्यप्रदेशाश्च सदृशाः खलु संख्यया समाना
एव प्रत्येकं जगच्छ्रेणिघनमात्रत्वात् । प्रदेशप्रमाणं पुनः पुद्गलपरमाणववष्टब्धक्षेत्रमात्रं भवति । तेन जघन्यक्षेत्रं

व्यवहारकाल पुद्गल द्रव्यसे अनन्तगुणा है । और उससे अनन्तगुणी आकाशके
प्रदेशोंकी संख्या है ॥५९०॥

२० लोकाकाशके प्रदेश, धर्मद्रव्यके प्रदेश, अधर्मद्रव्यके प्रदेश और एक-एक जीवद्रव्यके
प्रदेश संख्याकी दृष्टिसे समान ही हैं, क्योंकि प्रत्येकके प्रदेश जगत्क्षेत्रणिके घन प्रमाण हैं ।
पुद्गलका परमाणु जितने क्षेत्रको रोकता है, उतना ही प्रदेशका प्रमाण है । अतः जघन्यक्षेत्र
अर्थात् प्रदेश और जघन्यद्रव्य परमाणु अविभागी हैं, उनका विभाग नहीं हो सकता । अब

१. मं क्षेत्रमेनितनिते । २. मं गियप्पुवु ।

क्षेत्रप्रमाणदि षड्द्रव्यंगळ प्रमाणं पेळल्पडुगुं । जीवद्रव्यंगळ प्र३फ अ १ इ १६ लब्ध शला १६ प्र अ १ । फ ३ इ अ १६ लब्धं लोकमुमं जीवराशिधुमनपर्वत्तिसिदोडिदन्त । ख ।

मिदरिदं फलराशियप्य लोकमं गुणिसिदोडे अनन्तलोकप्रमितंगळपुवु । ३ ख । पुद्गलंगळुमनन्त-
गुणितंगळपुवु । ३ ख ख । धर्मद्रव्यमुमधर्मद्रव्यमुं लोकाकाशद्रव्यमुं कालद्रव्यमुं नालकुं प्रत्येकं लोक-

मात्रप्रदेशंगळपुवु ३ व्यवहारकालं पुद्गलद्रव्यमं नोडलनन्तगुणितलोकप्रमितमक्कु । ख ख ख । ५
मदं नोडलुमलोकाकाशप्रदेशंगळु अनन्तगुणितलोकमात्रमक्कु ३ ख ख ख ख । कालप्रमाणदिदं
षड्द्रव्यंगळगे प्रमाणं पेळल्पडुगुं ।

जीवद्रव्यंगळ प्र३अ । फलं अ १ इ १६ । लब्धशला १६ । प्र अ १ फ अ । इ १६ लब्धम-
अ अ

तीतकालमुमं जीवराशिधुमनपर्वत्तिसिदोडिदु । ख । ईयनन्तविदं फलराशियनतीतकालमं गुणिसि-
दोडनन्तातीतकालप्रमाणंगळपुवु । अ । ख । पुद्गलंगळुं व्यवहारकालंगळुमलोकाकाशमुमनन्त- १०
गुणितक्रमविदमतीतकालानन्तगुणितंगळपुवु । पु अ । ख ख । व्य = का अ । ख ख ख । अलोका-

अध्वद्रव्यं चाविभाजिनी स्तः । अय क्षेत्रप्रमाणेन षट्द्रव्याणि मीयन्ते—जीवद्रव्याणि प्र ३ । फ अ १,
इ १६ लब्ध शला १६ । प्र अ १ फ ३ इ अ १६ लोकजीवराश्यपवर्तनेऽनन्तः । ख । अनेन फलराशि—लोके
३ ३

गुणिते अनन्तलोका भवन्ति ३ ख । पुद्गलाः—अनन्तगुणाः ३ ख ख । धर्मद्रव्यमधर्मद्रव्यं लोकाकाशद्रव्यं
कालद्रव्यं च लोकमात्रप्रदेशः । ३ । व्यवहारकालः पुद्गलद्रव्यादनन्तगुणः ३ ख ख ख । ततोऽलोकाकाश- १५
प्रदेशा अनन्तगुणाः ३ ख ख ख ख । कालप्रमाणेन जीवद्रव्याणि प्र । अ १ । फ अ १ । इ १६ । लब्धशलाका
१६ । प्र अ १ फ अ । इ १६ । अतीतकालजीवराश्यपवर्तने । ख । अनेन फलराश्यतीतकाले गुणिते अनन्ता
अ अ

अतीतकाला भवन्ति । अ ख । पुद्गलो व्यवहारकालोऽलोकाकाशप्रदेशाश्च अनन्तगुणितक्रमेण अनन्तातीत-

क्षेत्रप्रमाणसे छहों द्रव्योंका माप करते हैं—जीवद्रव्य अनन्तलोक प्रमाण हैं । अर्थात् लोका-
काशके प्रदेशोंसे अनन्तगुने हैं । इसके लिए त्रैराशिक करना—प्रमाणराशि लोक, फलराशि २०
एक शलाका, इच्छाराशि जीवद्रव्यका प्रमाण । फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणराशिसे
भाग देनेपर शलाकाराशिका परिमाण आया । पुनः प्रमाणराशि एक शलाका, फलराशि लोक,
इच्छाराशि पूर्वशलाका प्रमाण । सो पूर्वशलाका प्रमाण जीवराशिको लोकका भाग देनेपर
अनन्त पाये, वही यहाँ शलाका प्रमाण जानना । इस अनन्तको फलराशि लोकसे गुणा करके
प्रमाणराशि एक शलाकासे भाग देनेपर लब्ध अनन्तलोक आया । इसीसे जीवद्रव्यको अनन्त- २५
लोक प्रमाण कहा है । इसी प्रकार कालप्रमाण आदिमें भी त्रैराशिक द्वारा जान लेना चाहिए ।

जीवोंसे पुद्गल अनन्तगुने हैं । धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य
लोकमात्र प्रदेशवाले हैं । व्यवहारकाल पुद्गल द्रव्योंसे अनन्तगुणा है । उससे अलोकाकाशके
प्रदेश अनन्तगुने हैं । आगे कालप्रमाणसे जीवद्रव्योंका प्रमाण कहते हैं—प्रमाणराशि अतीत-

काश । अ । ख ख ख ख । धर्माधर्म लोकाकाशकालद्रव्यगण्ड प्र । फ १ । प १ । इ लब्धशलाके

प १ प्र १ फ क इ । श प १ लब्ध संख्यातपल्यगण्डमं लोकमुत्तमपर्वत्तिसिद्धोडे इदु १ ।
इर्वारिदं कल्पमं फलराशियं गुणिसुत्तिरलु प्रत्येकमसंख्यातकल्पगण्डपुव । क १ । क १ । क १ ।
क १ । भावप्रमाणदिदं षड्रव्यगण्डे प्रमाणमं पेळगुं । जीवद्रव्यगण्ड प्र १६ । फ १ । इ । के ।
लब्धशलाकेगण्ड के इद्वनपर्वत्तिसिद्धोडे । ख । प्र । ख । इतिनु शलाकेगण्ड केवलज्ञानमागलु ।

प । के । वोदु शलाकेगणितेदु । इ श । १ । बंद लब्ध केवलज्ञानानंतैकभागमात्रगण्डपुव । वंता-
दोड पुद्गलकालालोकाकाशगण्डं कुस्तु भागहारभूतानंतगण्ड नात्कपुव के पुद्गलगण्ड-
ख ख ख ख

नंतगुणितगण्ड के व्यवहारकालमनंतगुणितमक्कु के मलोकाकाशमनंतगुणं के
ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

काला भवन्ति । पु अ ख ख । व्य = का अ ख ख ख । अलोक अ ख ख ख ख । धर्माधर्मलोकाकाशकाल-
द्रव्याणि प्र । प १ फ १ इ ३ लब्धशलाका—५ प्र १ फ क । इ श १ संख्यातपल्य-

लोकापवर्तने । १ । अनेन कल्पफलराशौ गुणिते प्रत्येकं असंख्यातकल्पा भवन्ति क १ । क १ । क १ । क १ ।
भावप्रमाणेन जीवद्रव्याणि प्र १६ फ १ इ के लब्धशलाकाः के अपवर्तिते ख । प्र ख एतावच्छलाकाभिः
१६

केवलज्ञानं क के तदैकशलाकया इ श १ किमिति लब्ध केवलज्ञानानंतैकभागमपि पुद्गलकालालोकाकाश-
पेक्षया चतुरनन्तभागहारं भवति के पुद्गलाः के व्यवहारकालः के अलोकाकाशः के
ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

- १५ काल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि जीवोंका परिमाण । सो लब्धराशि अनन्त शलाका
हुई । पुनः प्रमाणराशि एक शलाका, फलराशि अतीतकाल, इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका प्रमाण ।
सो फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणसे भाग देनेपर लब्धराशि प्रमाण अतीतकालसे अनन्त-
गुणा जीवोंका प्रमाण होता है । इनसे पुद्गलद्रव्य व्यवहारकालके समय और अलोकाकाशके
प्रदेश क्रमसे अनन्तगुणे होते हुए अनन्त अतीतकाल प्रमाण होते हैं । पुनः धर्मादिका प्रमाण
कहते हैं—प्रमाणराशि कल्पकाल, फल एक शलाका, इच्छा लोक प्रमाण । ऐसा त्रैराशिक
करनेपर लब्ध असंख्यात शलाका हुई । पुनः प्रमाणराशि एक शलाका, फलराशि कल्पकाल,
इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका प्रमाण । ऐसा करनेपर लब्धराशि असंख्यात कल्पप्रमाण धर्म,
अधर्म, लोकाकाश और काल ये चारोंको जानना । अर्थात् बीस कोड़ा-कोड़ी सागरके संख्यात
पल्य होते हैं, उतना एक कल्पकाल है । इससे असंख्यातगुणे धर्म, अधर्म, लोकाकाश और
कालके प्रदेश हैं । अब भावप्रमाणसे जीवद्रव्योंको बतलाते हैं—प्रमाणराशि जीवद्रव्यका
प्रमाण, फलराशि एकशलाका इच्छाराशि केवलज्ञान । लब्धप्रमाण अनन्त शलाका । पुनः
प्रमाणराशि शलाकाप्रमाण । फलराशि केवलज्ञान, इच्छाराशि एक शलाका । सो लब्धराशि
प्रमाण केवल ज्ञानके अनन्तर्वे भाग जीवद्रव्य जानने । वे पुद्गल, काल और अलोकाकाशकी
अपेक्षा चार बार अनन्तका भाग केवलज्ञानके अविभाग प्रतिच्छेदोंमें देनेसे जो प्रमाण आवे,

३० १. म पेळपडुगुं । २. म भूतानंतं ।

धर्माधर्मलोकाकाशकालद्रव्यगण्ड प्र३३ फ श १ । इ३३० । लब्ध शलाके ३० इलियु भागहार-
३

भूतलोकमुमं अवधिज्ञानविलक्षणगण्डप भाज्यभूतासंख्यातलोकमुमनपर्वतसिद्धिदु ० । मत्तं प्र श
० । फ । ओ । इ । श । १ । लब्धमवधिज्ञानविकल्पासंख्यातैकभागप्रमितं प्रत्येकमण्डपु
ओ । ओ । ओ । ओ । इतु संख्याधिकारंतिद्वंदु ।
० ० ० ०

सर्वमरूची द्रव्यं अवट्टिदं अचलिया पदेसावि ।

रूची जीवा चलिया तिवियप्पा होंति हु पदेसा ॥५९२॥

सर्वमरूपि द्रव्यमवस्थितमचलिताः प्रदेशा अपि । रूपिणो जीवाश्चलिताः त्रिविकल्पा
भवन्ति प्रदेशाः ॥

सर्वमरूपि द्रव्यं मुक्तजीवद्रव्यमुं धर्मद्रव्यमुमधर्मद्रव्यमुमाकाशद्रव्यमुं कालद्रव्यमुमेवी
अरूपिद्रव्यगण्डनितुं अवस्थितं स्थानचलनमिल्लवुवपुदरिद्वमवस्थितगण्डपुवु । प्रदेशा अपि अवर १०
प्रदेशगण्डं अचलिताः अचलितगण्डपुवु । रूपिणो जीवाः रूपिजीवगण्ड चलिताः चलितगण्डपुवु-
मवर प्रदेशगण्ड त्रिविकल्पा भवन्ति खलु । विग्रहगतियोळु चलितगण्ड अयोगिकेवलियोळुचलितगण्ड
शेषजीवगण्ड अष्टप्रदेशगण्डचलितगण्ड ।

शेषप्रदेशगण्ड चलितगण्डपुवितु चलितमुमचलितमुं चलिताचलितमुमेवितु प्रदेशगण्ड
त्रिविकल्पगण्डपुवु ।

१५

धर्माधर्मलोकाकाशकालद्रव्याणि । प्र ३३ । फ श १ । इ ३३० लब्धशलाका ३० भागहारभूतलोकेन भाज्य
३

अवधिविकल्पासंख्यातलोके अपवर्तिते । ० । पुनः प्र श ० । फ ओ । इ श १ लब्धोऽवधिविकल्पासंख्यातैकभागः
प्रत्येकं भवति ओ ओ ओ ओ ॥ इति संख्याधिकारः ॥५९१॥

० ० ० ०

अरूपि द्रव्यं मुक्तजीवधर्माधर्माकाशकालभेदं सर्वं अवस्थितमेव स्थानचलनाभावात् । तत्प्रदेशा अपि
अचलिताः स्युः । रूपिणो जीवाश्चलिता भवन्ति । तत्प्रदेशाः खलु त्रिविकल्पाः विग्रहगतौ चलिताः, अयोग- २०
केवलिन्यचलिताः शेषजीवानामष्टप्रदेशाः अचलिताः शेषाः चलिताः ॥५९२॥

उतने (जीवद्रव्य) हैं । उनसे अनन्तगुणे पुद्गल हैं । पुद्गलोंसे अनन्तगुणे कालके समय हैं,
उनसे अनन्तगुणे अलोकाकाशके प्रदेश हैं । वे भी केवलज्ञानके अनन्तवर्गे भाग ही हैं । धर्मादिका
प्रमाण लानेके लिए प्रमाणराशि लोक, फलराशि एक शलाका, इच्छा अवधिज्ञानके विकल्प ।
लब्धप्रमाण असंख्यात शलाका हुई । पुनः प्रमाणराशि असंख्यात शलाका, फलराशि २५
अवधिज्ञानके विकल्प, इच्छाराशि एक शलाका । ऐसा त्रैराशिक करनेपर अवधिज्ञानके
विकल्पोंके असंख्यातवर्गे भाग धर्म, अधर्म, लोकाकाश, कालमें-से प्रत्येकके प्रदेशोंका प्रमाण
होता है ॥५९१॥ संख्याधिकार समाप्त हुआ ।

सब अरूपी द्रव्य—मुक्तजीव, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाश, काल अवस्थित ही हैं, वे
अपने स्थानसे चलते नहीं हैं । उनके प्रदेश भी अचल हैं । रूपी जीव चलते हैं । उनके प्रदेश ३०
तीन प्रकारके होते हैं—विग्रह गतिमें प्रदेश चल ही होते हैं ।

अयोगकेवली अवस्थामें अचल ही होते हैं । शेष जीवोंके आठ प्रदेश अचल और शेष
प्रदेश चल होते हैं ॥५९२॥

पोगलदब्बंहि अणू संखेज्जादी इवन्ति चलिदा हु ।

चरिममहक्खंधम्मि य चलाचला होंति हु पदेसा ॥५९३॥

पुद्गलद्रव्ये अणवः संख्यातादयो भवन्ति चलिताः खलु । चरममहास्कन्धे च चलाचला भवन्ति प्रदेशाः ॥

५ पुद्गलद्रव्यबोळु अणुगळुं द्वयणुकादि संख्यातासंख्यातानंतपरमाणुस्कंधंगळुं चलितंगळु खलु स्फुटमागि, चरममहास्कंधबोळुं प्रदेशाः परमाणुगळु चलाचला भवन्ति चलाचलंगळुपुवु ।

अणुसंखासंखेज्जाणंता य अगेज्जमेहि अंतरिया ।

आहारतेजभासामणकम्मइया ध्रुवक्खंधा ॥५९४॥

अणुसंख्यातासंख्यातानंताश्चाग्राह्यैरन्तरिताः आहारतेजोभाषामनःकाम्मण ध्रुवस्कंधाः ॥

१० सांतरणिरन्तरेण य सुण्णा पत्तेयदेह ध्रुवसुण्णा ।

वादरणिगोदसुण्णा सुहुमणिगोदा णभा महक्खंधा ॥५९५॥

सांतरणिरन्तरेण च शून्य प्रत्येकदेहध्रुवशून्यानि । वादरनिगोदशून्यानि सूक्ष्मनिगोदाः नभांसि महास्कंधाः ॥

अणुवर्गणंगळे दुं संख्याताणुसमूहवर्गणंगळे दुं मसंख्याताणुसमूहवर्गणंगळे दुं ३ मन्त-
१५ परमाणुसमूहवर्गणंगळे दुं^४ आहारवर्गणंगळे दुं^५ मो याहारवर्गण मोदलादुमेल्लमुमन्तपरमाणुस्कंध-
गळेयप्पुवु-। मग्ग्राह्यवर्गणंगळे दुं^६ तैजसशरीरवर्गणंगळे दुं^७ मग्ग्राह्यवर्गणंगळे दुं^८ भाषावर्गण-
गळे दुं^९ मग्ग्राह्यवर्गणंगळे दुं^{१०} मनोवर्गणंगळे दुं^{११} मग्ग्राह्यवर्गणंगळे दुं^{१२} काम्मणवर्गणंगळे दुं^{१३}
ध्रुववर्गणंगळे दुं^{१४} सांतरणिरन्तरवर्गणंगळे दुं^{१५} शून्यवर्गणंगळे दुं^{१६} प्रत्येकशरीरवर्गण-
गळे दुं^{१७} ध्रुवशून्यवर्गणंगळे दुं^{१८} वादरनिगोदवर्गणंगळे दुं^{१९} शून्यवर्गणंगळे दुं^{२०} सूक्ष्म-
२० निगोदवर्गणंगळे दुं^{२१} नभोवर्गणंगळे दुं^{२२} महास्कंधवर्गणंगळे दुं^{२३} पुद्गलवर्गणंगळे त्रयो-

पुद्गलद्रव्ये अणवः द्वयणुकादिसंख्यातासंख्यातानन्ताणुस्कन्धाश्चलिताः खलु स्फुटम् । चरममहास्कन्धे च प्रदेशाः परमाणवः चलाचला भवन्ति ॥५९३॥

अणुवर्गणा संख्याताणुवर्गणा असंख्याताणुवर्गणा अनन्ताणुवर्गणा आहारवर्गणा अग्ग्राह्यवर्गणा तैजस-
शरीरवर्गणा अग्ग्राह्यवर्गणा भाषावर्गणा अग्ग्राह्यवर्गणा मनोवर्गणा अग्ग्राह्यवर्गणा काम्मणवर्गणा ध्रुववर्गणा
२५ सान्तरनिरन्तरवर्गणा शून्यवर्गणा प्रत्येकशरीरवर्गणा ध्रुवशून्यवर्गणा वादरनिगोदवर्गणा शून्यवर्गणा सूक्ष्मनिगोद-
वर्गणा नभोवर्गणा महास्कन्धवर्गणा चेति पुद्गलवर्गणाः त्रयोविंशतिभेदा भवन्ति । अत्रोपयोगी श्लोकः—

पुद्गल द्रव्यमें परमाणु और द्वयणुक आदि संख्यात, असंख्यात और अनन्त पर-
माणुओंके स्कन्ध चलित होते हैं । अन्तिम महास्कन्धमें प्रदेश चल-अचल हैं ॥५९३॥

अणुवर्गणा, संख्याताणुवर्गणा, असंख्याताणुवर्गणा, अनन्ताणुवर्गणा, आहारवर्गणा,
३० अग्ग्राह्यवर्गणा, तैजसशरीरवर्गणा, अग्ग्राह्यवर्गणा, भाषावर्गणा, अग्ग्राह्यवर्गणा, मनोवर्गणा,
अग्ग्राह्यवर्गणा, काम्मणवर्गणा, ध्रुववर्गणा, सान्तरनिरन्तरवर्गणा, शून्यवर्गणा, प्रत्येकशरीर-
वर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, वादरनिगोदवर्गणा, शून्यवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, नभोवर्गणा,
महास्कन्धवर्गणा ये तेईस प्रकारकी पुद्गलवर्गणाएँ होती हैं । इस विषयमें उपयोगी श्लोक

विंशतिभेदगण्यपुत्रु । इल्लिगुपयोगिश्लोकमिदु :—

“मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलाः ।

अकर्मकर्म-नोकर्मजातिभेदेषु वर्गणाः ॥” []

मूर्तिमंतगण्य पदार्थगण्य संसारिजीवनोत्तं पुद्गलशब्दं, अकर्मजातिगण्य कर्म-
जातिगण्य नोकर्मजातिगण्य वर्गण^२ येन शब्दं वर्तिसुगुं । इल्लिगुपयोगिश्लोकं सुगमगण्य । ५
संख्याताणुसमूह वर्गणगण्य द्व्यणुक त्र्यणुक मोदलादसदृश धनिकगण्य मेले मेलेकैक परमाणुविद-
धिकगण्य नडदु चरमदोळ संख्यातोत्कृष्टप्रमितपरमाणुस्कंधगण्य सदृशधनिकगण्य तद्योग्यगण्यपुत्रु
उ १५ । १५ । १५ । असंख्यातवर्गणगण्य जघन्यवर्गणगण्य सदृशधनिकगण्य । परि-

०

० ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३

ज २ । २ । २ । २ । २

अणु १ । १ । १ । १ । १ । १ । १

मितासंख्यातजघन्याराशिप्रमितपरमाणुस्कंधगण्यपुत्रु । मेलेकैकपरमाणुचयक्रमदिवं योगि चरमदोळ
द्विकवारासंख्यातोत्कृष्टराशिप्रमितपरमाणुगण्य स्कंधगण्य सदृशधनिकगण्यपुत्रु १०

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलः ।

अकर्मकर्मनोकर्मजातिभेदेषु वर्गणाः ॥१॥

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिजीवे च पुद्गलशब्दो वर्तते । अकर्मजातिषु कर्मजातिषु नोकर्मजातिषु च
वर्गणाशब्दो वर्तते । अत्राणुवर्गणा (सुगमा) एकैकपरमाणुरूपा स्यात् १ । १ । १ । १ । १ । १ । अणुवर्गणा । १५
संख्याताणुवर्गणा द्व्यणुकादयः एकैकावधिकाः, उत्कृष्टसंख्याताणुकस्कन्धपर्यन्ताः—

उ १५ । १५ । ०० १५

० ० ०

० ० ०

म ३ ३ ०० ३

ज २ २ ०० २

असंख्याताणुवर्गणा जघन्यपरिमितासंख्याताणुकादयः एकैकावधिका उत्कृष्टद्विकवारासंख्याताणुस्कन्ध-
पर्यन्ताः—

है—पुद्गल शब्द मूर्तिमान् पदार्थोंका और संसारी जीवोंका वाचक है । और वर्गणाशब्द
अकर्मजातिके, कर्म जातिके और नोकर्मजातिके पुद्गलोंको कहता है ।

इनमें-से अणुवर्गणा सुगम है । एक-एक परमाणुको अणुवर्गणा कहते हैं । अन्य बाईस २०
वर्गणाओंमें भेद हैं सो उनमें जघन्य और उत्कृष्ट भेद कहते हैं । द्व्यणुकसे लेकर एक-एक
परमाणु बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट संख्यात परमाणुओंके स्कन्ध पर्यन्त संख्याताणुवर्गणा है । उसमें
जघन्य दो अणुओंका स्कन्ध है और उत्कृष्ट-उत्कृष्ट संख्यात अणुओंका स्कन्ध है । जघन्य
परिमितासंख्यात परमाणुओंसे लेकर एक-एक अणु बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात
परमाणुओंके स्कन्ध पर्यन्त असंख्याताणुवर्गणा है । यहाँ जघन्य परीतासंख्यात परमाणुओंका २५
स्कन्ध है और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात परमाणुओंका स्कन्ध है । संख्याताणुवर्गणा और
असंख्याताणुवर्गणामें विवक्षितवर्गणाको लानेके लिए गुणकार नीचेकी वर्गणासे विवक्षित-

१. म पुद्गलंगु । २. म णेगल्लेनुवपुत्रु ।

उ २५५ । २५५ । ० । २५५

ई संख्यातासंख्यातवर्गणोगळोळु तंतम्मवस्तनराशियिदमनंतरो-

०.

म १६ १६ ०० १६

ज १६ । १६ । ०० । १६

परितनराशिगळं भागिसिदोडावुदोडु लब्धमदु विवक्षितवर्गणोरे गुणकारमक्कुमदेतेदोडे संख्यात-
वर्गणोगळोळु जघन्यवर्गणोयिद २ मुपरितनराशियं ३ भागिसि ३ बंद लब्धं द्वितीयवर्गणोयोळु
२

गुणकारमक्कुं गुण्यं जघन्यवर्गणोयक्कु २३ मिदनपर्वत्तिसिदोडे त्र्यणुकमक्कु-३ । मते द्विचरम-
२

५ वर्गणोयिदं चरमवर्गणोयं भागिसिदोडिदु १५ चरमवर्गणोयोळु गुणकारमक्कुं । गुण्यं द्विचरम-
१४

वर्गणोयक्कु १४ १५ मिदनपर्वत्तिसिदोडे चरमवर्गणोयक्कु-१५ । मिते असंख्यातवर्गणोगळोळं
१४

द्विचरमवर्गणोयिदमुपरितनचरमवर्गणोयं भागिसिदोडे चरमदोळु गुणकारमक्कुं गुण्यं द्विचरम-
वर्गणोयक्कु २५४ । २५५ मिदनपर्वत्तिसिदोडे चरमवर्गणोयक्कुं । २५५ । इल्लियोडु परमाणुवं
२५५

१० कूडिदोडे अनंतवर्गणोगळोळु जघन्यवर्गणे परिमितानंतजघन्यराशिप्रमाणमक्कुमेकेदोडे द्विकवारा-
संख्यातोत्कृष्टदोळोडु रूपं कूडिदोडे या स्कंधमनंतवर्गणोगळोळु जघन्यवर्गणोयपुदरिदं । आ
जघन्यानंतवर्गणोय मेलेकेक परमाणुविदमधिकंगळागुतं पोगि तदुत्कृष्टवर्गणे तजजघन्यमं नोडल-
नंतगुणितमक्कुं उ २५६ ख मेलेयाहारजघन्यसहशवर्गवर्गणोगळु एकपरमाणुविदमधिकंगळ-

०

ज २५६

उ २५५ । २५५ ० ० २५५

०

०

०

०

०

०

म १६ । १६ । ०० १६

ज १६ । १६ । ०० १६

अत्र संख्याताणुवर्गणामु असंख्याताणुवर्गणामु च विवक्षितवर्गणामानेतुं गुणकारः तदवस्तनवर्गणाया अवस्तन-
वर्गणाभक्तविवक्षितवर्गणामात्रः यया त्र्यणुकमानेतुं द्व्यणुकस्य द्व्यणुकभक्तत्र्यणुकमात्रः २ । ३ तदनन्तरोपरि-
२

१५ वर्गणामें भाग देनेसे जो प्रमाण आवे उतना है । जैसे त्र्यणुक लानेके लिए द्व्यणुकका गुणकार
द्व्यणुकसे त्र्यणुकमें भाग देनेपर जितना प्रमाण आवे, उतना है । उसके अनन्तर उत्कृष्ट
असंख्याताणुवर्गणामें एक परमाणु अधिक होनेपर अनन्ताणुवर्गणाका जघन्य होता है । उसे
सिद्धराशिके अनन्तवें भाग प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर अनन्ताणुवर्गणाका उत्कृष्ट होता
है । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी आहारवर्गणाका जघन्य होता है । उसमें
२० सिद्धराशिके अनन्तवें भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उसे जघन्यमें मिलानेपर आहारवर्गणा

पुद्गुत्कृष्टं । तज्जघन्यान्तैकभागदि विशेषाधिकमवकुं उ २५६ ख ख मेलणऽग्राह्यवर्गणोगळोळु
आ ०

ज २५६ ख

जघन्यमेकपरमाणुविदमधिकमवकुं । तदुत्कृष्टं जघन्यमं नोडलन्तगुणितमवकुं :—

उ २५६ ख १ ख ख तदनन्तरोपरितनतेजःशरीरवर्गणोगळोळु जघन्यवर्गणे एकपरमाणु-
अग्रा ० ख

ख

ज २५६ ख १ ख

विदधिकमवकुं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागदिदं विशेषाधिकमवकुं उ २५६ ख १ ख १ ख ख
तेज ० ख ख

जघ २५६ ख १ ख १ ख
ख

तनमनन्तवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽजन्तगुणं उ २५६ ख तदनन्तरोपरितनाहारवर्गणाजघन्य- ५

०

०

ज २५६

मेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं उ २५६ ख ख तदनन्तरोपरितनाग्राह्यवर्गणाजघन्यमेकाणु-

० ख

आहा ०

ज २५६ ख

नाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽजन्तगुणं— उ २५६ ख १ ख ख तदनन्तरोपरितनतेजःशरीरवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं

० ख

अगेज्ज ०

ज २५६ ख १ ख

ख

उत्कृष्ट होता है । उत्कृष्ट आहारवर्गणामें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी अग्राह्य-
वर्गणाका जघन्य होता है । उसमें सिद्धराशिके अनन्तर्वे भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे, उससे
उसीमें मिला देनेपर अग्राह्यवर्गणाका उत्कृष्ट होता है । इसमें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे

नंतरोपरितनाग्राह्यवर्गणैगळोळु जघन्यमेकपरमाणुविदमधिकमवकुं । तदुत्कृष्टं तज्जघन्यमे

नोडलनंतगुणमवकुं उ २५६ ख १ ख १ ख ख ख तदनंतरोपरितनभाषावर्गणे-
अग्रा ० ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख

गळोळु जघन्यमेकपरमाणुविदमधिकमवकुं, तदुत्कृष्टं तदनंतैकभागदि विशेषाधिकमवकुं

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख ख तदनंतरोपरितनाग्राह्यवर्गणैगळोळु जघन्य-
भाषा ० ख ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख

५ तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं—उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख
तेजो ० ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख
ख

तदनन्तरोपरितनाग्राह्यवर्गणैजघन्यमेकपरमाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तगुणं—उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख ख ।
अगेज्ज ० ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख

तदनन्तरोपरितनभाषावर्गणैजघन्य एकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
भाषा ० ख ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख

- ऊपरकी तैजसशरीरवर्गणाका जघन्य होता है । उसमें सिद्धराशिके अनन्तवें भागसे भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसे उसीमें मिलानेपर तैजसशरीरवर्गणाका उत्कृष्ट होता है । उसमें एक
- १० परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी अग्राह्यवर्गणाका जघन्य होता है । उसमें सिद्धराशिके अनन्तवें भागसे गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर

मेकपरमाणुविदधिकमक्कुं तदुत्कृष्टमनंतगुणितमक्कुं उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख ख ख ख
अग्रा ० ख ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख

तदनंतरोपरितनमनोवर्गणेगळोळु जघन्यमेकपरमाणुविदधिकमक्कुं तदुत्कृष्टमनंतैकभागदि विशेषा-

धिकमक्कुं उ २५६ ख ख ख ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख तदनंतरोपरितना-
मनोवर्गणा ० ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख ख ख ख
ख ख ख

ग्राह्यवर्गणेगळोळु जघन्यमेकपरमाणुविदधिकमक्कुं तदुत्कृष्टं तज्जघन्यमं नोडलनंतगुणितमक्कुं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख ख १ ख ख
अग्राह्य ० ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख ख १ ख ख १ ख १ ख
ख ख ख ख

तदनन्तरोपरितनाग्राह्यवर्गणाजघन्यं एकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तगुणं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख ख
० ख ख ख
अगेज्जा ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख

तदनन्तरोपरितनमनोवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
० ख ख ख ख
मनोव ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख

तदनन्तरोपरितनाग्राह्यवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तगुणं—

उससे ऊपरकी भाषा वर्गणाका जघन्य है। उसमें सिद्धराशिके अनन्तवें भागसे भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उसे उसीमें मिलानेपर उसका उत्कृष्ट होता है। उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी अग्राह्यवर्गणाका जघन्य है। उससे अनन्तगुणा उसका उत्कृष्ट होता है। उसमें १० एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी मनोवर्गणाका जघन्य होता है। उसमें सिद्धराशिके

तदनन्तरोपरितनकामर्मणवर्गणाजघन्यमेकपरमाणुविदधिकमक्कुं । अदत्कृष्टं तदनन्तैकभागदिदं

विशेषाधिकमक्कुं उ २५६ ख १ ख ख ख १ ख १ ख ख १ ख ख ख
कामर्मण ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख ख ख १ ख ख १ ख १ ख
ख ख ख ख

तदनन्तरोपरितनध्रुववर्गणागलोळु जघन्यमेकपरमाणुविदधिकमक्कुं तदुत्कृष्टमनन्तजीवराशिगुणित-

मक्कुं :- उ २५६ ख १ ख ख ख १ ख १ ख १ ख ख १ ख ख १६ ख
ध्रुव ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख १ ख ख १ ख ख १ ख ख १ ख
ख ख ख ख ख

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख ख
० ख ख ख ख
अगेज्ज ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख ख ख

५ तदनन्तरोपरितनकामर्मणवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
० ख ख ख ख ख
कम्मव ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख ख ख

तदनन्तरोपरितनध्रुववर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तजीवराशिगुणं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १६ ख
० ख ख ख ख ख
ध्रुव ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
ख ख ख ख ख

अनन्तर्वे भागसे भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे उसीमें मिला देनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । उससे एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी अग्राह्यवर्गणाका जघन्य है । उससे अनन्तगुणा उसका उत्कृष्ट है । उससे एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी कामर्मणवर्गणा-
१० का जघन्य है । उसमें सिद्धराशिके अनन्तर्वे भागसे भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उसे उसीमें मिलानेपर उसका उत्कृष्ट होता है । उससे एक परमाणु अधिक उससे ऊपरकी ध्रुववर्गणाका

तदनन्तरोपरितनसांतरनिरन्तरवर्गणोगळोळु जघन्यमेकपरमाणुविदधिकमक्कुं । तदुत्कृष्ट तज्जघन्यमं नोडलनंतजीवराशिगुणितमक्कुमदक्के संदृष्टि :—

उ २५६ ख १ ख ख ख ख ख ख १ ख ख ख १६ ख १६ ख
सांतर नि ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख १ ख ख ख १ ख १ ख ख ख १६ ख
ख ख ख ख ख

इल्लि विशेषं पेळत्पडुगुं । परमाणुवर्गणे मोदल्गोडु ई सांतरनिरन्तरवर्गणोगळ उत्कृष्टवर्गणे पय्यंतं पदिनैदुं वर्गणोगळ सदृशधनिकवर्गणोगळ अनंतपुद्गलवर्गमूलमात्रंगळप्पुवु । पु=मुखवंता-
गुत्तं विशेषहीनक्रमंगळप्पुवल्लि प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकभागमक्कुंमेविदु तदनन्तरोपरितनशून्य- ५
वर्गणोगळोळु जघन्यमेकरूपाधिकमक्कुमुत्कृष्टमनंतजीवराशि गुणितमक्कुं :—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख ख ख ख ख १ ख ख १६ ख १६ ख १६ ख
शून्य ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख ख १ ख ख १ ख ख १ ख ख १ १६ ख १६ ख
ख ख ख ख ख

वितु पदिनारं वर्गणोगळेकप्रकारविदं सिद्धंगळप्पुवु ।

तदनन्तरोपरितनसान्तरनिरन्तरवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तजीवराशिगुणं—

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १६ ख १६ ख
ख ख ख ख ख

सान्तर ०

निरन्तर ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १६ ख
ख ख ख ख ख

अथायं विशेषः—परमाणुवर्गणामादि कृत्वा सान्तरनिरन्तरवर्गणापर्यन्तं पञ्चदशवर्गणानां सदृशधनिकानि अनन्तगुणपुद्गलवर्गमूलमात्राण्यपि विशेषहीनक्रमाणि भवन्ति । तत्र प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकभागः । १०
तदनन्तरोपरितनशून्यवर्गणाजघन्यं एकरूपाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तजीवराशिगुणं—

जघन्य है । उसे अनन्तजीवराशिसे गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । उससे एक परमाणु अधिक उससे ऊपरकी सान्तरनिरन्तरवर्गणाका जघन्य है । उसे अनन्तजीवराशिसे गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । यहाँ इतना विशेष है कि परमाणुवर्गणासे लेकर सान्तरनिरन्तरवर्गणा पर्यन्त पन्द्रह वर्गणाओंका समानधन अनन्तगुणे पुद्गलोंके वर्गमूल १५ प्रमाण होनेपर भी क्रमसे विशेषहीन है । उनका प्रतिभागहार सिद्धराशिका अनन्तवाँ भाग है ।

- तदनन्तरोपरितनप्रत्येकशरीरवर्गणे पेळलपडुगुमदेते दोडे ओव्वं जीवन वोडु देहदोळु-
पचितकर्मनोकर्मस्कंधं प्रत्येकशरीरवर्गणेये बुदवकुमदर जघन्यवर्गणे यावजीवनोळवकुमदोडे
आवनोव्वं क्षपितकर्मांशलक्षणदिदं वंदु पूर्वकोटिवर्षायुस्मनुष्यजीवंगळोळुपुट्टि मनुष्यनागियंत-
म्भुहूर्ताधिकाऽष्टवर्षगळिदं मेले सम्यक्त्वमुमं संयममुमं युगपत्स्वीकरिसि सयोगकेवलीयादोडदेशोन-
५ पूर्वकोटिय औदारिकतैजसशरीरंगळ अस्थितिगणनेयोळु निज्जरेयं माडि कार्मणशरीरवक्कं
गुणश्रेणिनिज्जरेयं माडि चरमसमयभव्यसिद्धमप्प चरमसमयदयोगिकेवलीगे त्रिशरीरसंचयं नाम-
गोत्रवेदनीयंगळ मेले आयुरौदारिकतैजसशरीरंगळिनधिकमाद त्रिशरीरसंचयं प्रत्येकशरीरजघन्य-
वर्गणोयक्कुं । तदुत्कृष्टवर्गणासंभवमावेडोळे देडे नंदीश्वरद्वीपद अकृत्रिममहाचैत्यालयंगळ
धूपघटंगळोळं स्वयंभूरमणद्वीपदकर्मभूमिप्रतिबद्धक्षेत्रदोळु नेगेवकाळिकचुगळोळं बादर-

उ	२५६	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१६	ख	१६	ख	१६	ख
		०		ख		ख		ख		ख		ख		ख		ख						
मुणव	०																					
ज	२५६	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१	ख	१६	ख	१६	ख	१६	ख
			ख		ख		ख		ख		ख		ख		ख							

- १० षोडशवर्गणा एवं सिद्धाः । तदनन्तरोपरितनप्रत्येकशरीरवर्गणा तु एकजीवस्य एकदेहोपचितकर्मनोकर्मस्कन्धः ।
तत्र कश्चिज्जीवः क्षपितकर्मांशलक्षणः पूर्वकोटिवर्षायुः मनुष्यो भूत्वा अन्तर्मुहूर्ताधिकाष्टवर्षोपरि सम्यक्त्वसंयमौ
युगपत् स्वीकृत्य सयोगकेवली जातः देशोनपूर्वकोटिपर्यन्तमौदारिकतैजसशरीरयोर्वस्थितिगणनया निर्जरां
कुर्वन् कार्मणशरीरस्य च गुणश्रेणिनिर्जरां कुर्वन् चरमसमयायोगिकेवली स्यात् । तस्यायुः औदारिकतैजस-
शरीराधिकनामगोत्रवेदनीयरूपत्रिशरीरसंचयः तज्जघन्यं भवति । नन्दीश्वरद्वीपस्य अकृत्रिममहाचैत्यालयानां
१५ धूपघटेषु स्वयंभूरमणद्वीपसंभूतदवाग्निषु च बादरपयसितैजस्कायिकाः एकवन्धनवद्वा असंख्यातावलिवर्गमात्राः

- उत्कृष्ट सान्तरनिरन्तरवर्गणामें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी शून्य-
वर्गणाका जघन्य होता है । उसे अनन्तगुणित जीवराशिके प्रमाणसे गुणा करनेपर उसका
उत्कृष्ट होता है । इस प्रकार सोलह वर्गणा सिद्ध हुई । उससे ऊपर प्रत्येक शरीर वर्गणा है ।
एक जीवके एक शरीरके विस्रसोपचय सहित कर्म-नोकर्मके स्कन्धको प्रत्येक शरीरवर्गणा
२० कहते हैं । शून्यवर्गणाके उत्कृष्टसे एक परमाणु अधिक जघन्य प्रत्येक शरीरवर्गणा होती है ।
जिसके कर्मके अंश क्षयरूप हुए हैं, ऐसा कोई क्षपितकर्मांश जीव एक पूर्वकोटि वर्ष आयु
लेकर मनुष्य जन्म धारण करके अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके ऊपर सम्यक्त्व और संयमको
एक साथ स्वीकार करके सयोगकेवली हुआ । वह कुछ कम एक पूर्व कोटि पर्यन्त औदारिक
शरीर और तैजसशरीरकी अवस्थिति गणनाके अनुसार निर्जरा करता हुआ और कार्मण-
२५ शरीरकी गुणश्रेणिनिर्जरा करता हुआ अयोगकेवलीके चरमसमयको प्राप्त हुआ । उसके
आयुर्कर्म औदारिक और तैजस शरीरके साथ नाम गोत्र वेदनीय कर्मके परमाणुओंका समूह
रूप जो तीन शरीरोंका स्कन्ध होता है, वह जघन्य प्रत्येक शरीरवर्गणा है । इस जघन्यको
पत्यके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा होती है । नन्दीश्वर द्वीप-
के अकृत्रिम महाचैत्यालयोंके धूपघटोंमें और स्वयंभूरमणद्वीपमें उत्पन्न दवाग्निमें असंख्यात

पर्याप्ततेजस्कायिकजीवंगलेकबंधनबद्धगळऽसंख्यातावलिवर्गप्रमितंगळवरोळु गुणितकर्मशंगळप्य जीवंगळु यदि सुष्ठु बहुकंगळपुवादोडमावत्यसंख्यातैकभागप्रमितंगळ्येपुवुळिदवेत्तलम गुणित- कर्मशंगळ्येपुवा गुणितकर्मशंगळेकबंधनबद्धगळ बादरपर्याप्ततेजस्कायिकंगळ सविस्त्रसोपचय- त्रिशरीरसंचयं औदारिकतैजसकाम्मणशरीरसंचयं प्रत्येकदेहोत्कृष्टवर्गणोपयक्कुं :—

उ स ३२ ० ० ख ख १२ १६ ख ८ ई प्रत्येकशरीरोत्कृष्टवर्गणोपे रूपाधिकमादोडे ५
प्रत्येक शरीर ० ०

ज स ० ० ख १२-१६ ख ३

ध्रुवशून्यवर्गणोपेजळोळु जघन्यवर्गणोपयक्कुं। बादरनिगोदजघन्यवर्गणोपेयावेडेयोळसंभविमुमेदोडे—

आवनोव्वं क्षपितकर्मशिलक्षणदिदं बंदु पूर्वकोटिवर्षायुर्मनुष्यनागि पुट्टि गडभाद्यष्टवर्ष- मंतमुहूर्ताधिकंगळमेले सम्यक्त्वमुमं संयममुमं युगपत्कैकोडु कर्मवक्तुकृष्टगुणश्रेणिनिज्जरेयं देशोनपूर्वकोटिवर्षवरं माडियंतमुहूर्ताविशेषदोळु सिद्धितव्यनोदितु क्षपकश्रेणियनेरिदोनुत्कृष्टकर्म- निज्जरेयं क्रियमाणं क्षीणकषायनादोनातंगे शरीरदोळु जघन्यदिदमुत्कृष्टदिदमुमेकबंधनबद्धगळप्य १०

तेषु गुणितकर्मांशः सुष्ठु बहुत्वेषुपि आवल्यसंख्यातैकभागमात्राः ८ तेषां सविस्त्रसोपचयत्रिशरीरसंचयस्तदुत्कृष्टं

भवति— उ स ३२ ० ० ख ख १२- १६ ख ८ इदमेव रूपाधिकं ध्रुवशून्यवर्गणाजघन्यं
पत्तेशरीर ० ०

ज स ० ० ख ख १२- १६ ख ३

भवति । कश्चित् क्षपितकर्मांशलक्षणो जीवः पूर्वकोटिवर्षायुः मनुष्यो भूत्वा अन्तर्मुहूर्ताधिकगर्भाद्यष्टवर्षोपरि सम्यक्त्वसंयमौ युगपत् स्वीकृत्य कर्मणामुत्कृष्टगुणश्रेणिनिज्जरां देशोनपूर्वकोटिवर्षपर्यन्तं कुर्वन् अन्तर्मुहूर्तं सिद्धितव्यमास्ते तदा क्षपकश्रेण्यारूढः उत्कृष्टकर्मनिज्जरां कुर्वन् क्षीणकषायो जातः, तच्छरीरे जघन्येन उत्कृष्टेन १५

आवलीके वर्ग प्रमाण बादर पर्याप्त तैजस्कायिक जीवोंके शरीरोंका एक स्कन्ध रूप हैं। उनमें गुणित कर्मांश जीव बहुत अधिक होनेपर भी आवलीके असंख्यातवें भागमात्र हैं। उनका औदारिक-तैजस- काम्मणशरीरोंका विस्त्रसोपचयसहित उत्कृष्ट संचय उत्कृष्ट प्रत्येक शरीरवर्गणा है। उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर जघन्य ध्रुवशून्यवर्गणा होती है। इस जघन्यको सब मिथ्यादृष्टि जीवोंके प्रमाणको असंख्यात लोकसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, २० उससे गुणा करनेपर उत्कृष्ट भेद होता है। उससे एक परमाणु अधिक बादरनिगोद वर्गणा है। बादर निगोदिया जीवोंके विस्त्रसोपचय सहित कर्म-नोकर्म परमाणुओंके एक स्कन्धको बादरनिगोदवर्गणा कहते हैं। वह कहाँ पायी जाती है, यह कहते हैं—क्षपितकर्मांश लक्षणवाला कोई जीव एक पूर्वकोटि वर्षकी आयुवाला मनुष्य हुआ। अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके ऊपर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ धारण करके कुछ कम पूर्व कोटिवर्ष पर्यन्त कर्मोंकी २५ उत्कृष्ट गुणश्रेणि निज्जरा करते हुए जब सिद्ध पद प्राप्त करनेमें अन्तर्मुहूर्तकाल शेष रहा, तब

पुलविगळु आवल्यसंख्यातैकभागमात्रंगळ्येपुवेके'दो डेल्ल' स्कंधंगळोळमसंख्यातलोकमात्रपुलवि-
गळे'बुदिल्लेके'दोडे' तद्विधप्ररूपणाभावमपुदरिदं । तदावल्यसंख्यातैकभागमात्रपुलविगळोळिदं
निगोदशरीरंगळु त्रैराशिकसिद्ध प्र पु १ फ ३० इ पु ८ लब्धप्रमितंगळपु ३० ८ विल्लि । प्र ।

शरी १ । फ जी १३- इ श ३० ८ लब्ध बादरनिगोदजीवंगळिबु क्षीणकषायन शरीर-

९ ३० ५

५ स्थंगळपुवु १३- ३० ८ ई जीवंगळोळु क्षीणकषायन प्रथमसमयदोळु अनंतबादरनिगोद

९ ३० ५

जीवंगळु मृतंगळपुवु । द्वितीयसमयदोळु प्रथमसमयदोळुमृतमाद जीवराशियनावल्यसंख्यातैक-
भागदिदं भागिसिदेकभागमात्रविशेषाधिकंगळु मृतरपुवु ।

१० इंतु विशेषाधिकक्रमदिदं मृतमपुवेन्नेवरमावलिपृथक्त्वमन्नेवरमल्लि बळिकमावलिसंख्या-
तैकभागविशेषाधिकक्रमदिदं मृतंगळपु वेन्नेवरं क्षीणकषायगुणस्थानकालमावल्यसंख्यातैकभाग-
मात्राविशेषमवकुमन्नेवरमल्लिदं बळिकमुपरितनानंतरसमयदोळु पळितोपमासंख्येयभागगुणित-
जीवंगळु मृतंगळपुवुविल्लिदं मेले संख्यातपत्यगुणितक्रमदिदं मृतंगळपुवेन्नेवरं क्षीणकषायचरम-

च एकबन्धनबद्धपुलवय आवल्यसंख्यातैकभागमात्राः सन्ति । कुतः ? सर्वस्कन्धेषु असंख्यातलोकमात्रतत्प्ररूपणा-
भावात् तदावल्यसंख्यातैकभागपुलवीस्थितनिगोदशरीराणि प्र पु १ । फ ३० । इ पु ८ इति त्रैराशिकसिद्धानि

एतावन्ति ३० ८ एतेषु पुनः प्र श १ । फ जी १३- इ शरी ३० ८ इति त्रैराशिकलब्धाः
९ ३० ५

१५ १३- ३० ८ बादरनिगोदजीवा एतावन्तः । एतेषु क्षीणकषायप्रथमसमये अनन्ता म्रियन्ते । द्वितीय-
९ ३० ५

समयेजन्तमृतराशिमावल्यसंख्यातेन भवत्वा एकभागाधिका म्रियन्ते । एवमावलिपृथक्त्वे गते आवलिसंख्यातैक-
भागाधिकक्रमेण म्रियन्ते यावत्तद्गुणस्थानकाल आवल्यसंख्यातैकभागमात्रोऽवशिष्यते । तदनन्तरसमये पळितो-

२० क्षपक श्रेणिपर आरोहण करके कर्मोंकी उत्कृष्ट निर्जरा करता हुआ क्षीणकषायगुणस्थानवर्ती
हुआ । उसके शरीरमें जघन्य और उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भागमात्र पुलवी एक
बन्धनबद्ध होती हैं । क्योंकि सब स्कन्धोंमें पुलवी असंख्यातलोकमात्र कहे हैं । एक-एक
पुलवीमें असंख्यातलोकप्रमाण शरीर होते हैं । एक-एक शरीरमें सिद्धराशिसे अनन्तगुणे
और संसार राशिके अनन्तवें भाग जीव होते हैं । सो आवलीके असंख्यातवें भागको
असंख्यातलोकसे गुणा करनेपर शरीरोंका प्रमाण होता है । उन शरीरोंके प्रमाणको एक
शरीरमें रहनेवाले निगोदिया जीवोंके प्रमाणसे गुणा करनेपर जितना प्रमाण हो, उतना एक
२५ स्कन्धमें निगोदिया जीवोंका प्रमाण जानना । इनमें-से क्षीणकषाय गुणस्थानके प्रथम समयमें
अनन्त जीव स्वयं आयु पूरी होनेसे मरते हैं । दूसरे समयमें पहले समयमें मरे हुए जीवोंके
प्रमाणमें आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो प्रमाण आवे, उतने अधिक जीव
मरते हैं ।

समयमन्नेवरमिल्लियावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुलविगळोळ पृथक् पृथगसंख्यातलोकमात्रशरीरं-
गळिदं समाकीर्णगळोळ पल्यासंख्यातैकभागमृतजीवंगळ प्रमाणदिदं हीनमागि स्थिताऽऽगुणित
कर्माशानंतानंतजीवंगळ अनंतानंतविस्सोपचयसहितत्रिसरीरसंचयं सर्वजघन्यबादरनिगोदवर्गणे-
यक्कु वो बादरनिगोदजघन्यवर्गणेये एकपरमाणुविदं हीनमादुदादोडा उत्कृष्टध्रुवशून्यवर्गणेयक्कुं

उ = स ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ प बादरनिगोदोत्कृष्टवर्गणेयावेडेयोळ संभवि- ५
० ५ ०

ध्रुवशून्यवर्गणा ० ९ ≡ ० ५ ०

ज स ३२ ० ० ख ख १२ १६ ख ८
०

सुगुमेकंदोडे कर्मभूमिप्रतिबद्धस्वयंभूरमणद्वीपद मूलकादिशरीरंगळोळेकबन्धनबद्धंगळप जगच्छे-

पमासंख्यातैकभागगुणा भ्रियन्ते । ततः संख्यातपल्यगुणितक्रमेण भ्रियन्ते, यावत्क्षीणकषायचरमसमयस्तावत् ।
तत्रावत्यसंख्यातैकभागपुलविषु पृथक्पृथगसंख्यातलोकमात्रशरीराकीर्णेषु पल्यासंख्यातैकभागमृतजीवप्रमाणेनोना
गुणितकर्माशानन्तानंतजीवानामनन्तानन्तविस्सोपचयसहितत्रिसरीरसंचयो जघन्यबादरनिगोदवर्गणा भवति
इयमेवेकागुना हीना सती उत्कृष्टध्रुवशून्यवर्गणा भवति— १०

उ ० स ० ० ख ख १२-१६ ख १३-१ ≡ ० ८ प
० ० ० ०
ध्रुवसुण्णा ० ९ ≡ ० ५ प
० ० ०
ज ० स ३२ ० ० ख ख १२-१६ ख ८
०

स्वयंभूरमणद्वीपस्य मूलकादिशरीरेष्वेकबन्धनबद्ध जगच्छेण्यसंख्येयभागमात्रपुलविषु स्थितानां गुणित-

इस प्रकार क्षीणकषाय गुणस्थानके प्रथम समयसे लेकर आवली पृथक्त्वकाल तक
आवलीके असंख्यातवें भाग अधिक जीव प्रतिसमय क्रमसे तबतक मरते हैं, जबतक क्षीण-
कषाय गुणस्थानका काल आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र शेष रहता है । उसके अनन्तर
समयमें पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणित जीव मरते हैं । उसके पश्चात् पूर्व-पूर्व समयमें मरे १५
जीवोंको संख्यात पल्यसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उतने-उतने जीव क्षीणकषाय गुणस्थानके
अन्तिम समयपर्यन्त प्रति समय मरते हैं । सो अन्तके समयमें अलग-अलग असंख्यातलोक
मात्र शरीरोंसे युक्त आवलीके असंख्यातवें भाग पुलवियोंमें जो गुणितकर्मांश जीव सरे, उनसे
हीन शेष जो अनन्तानन्त जीव गुणित कर्मांश रहे, उनके विस्सोपचय सहित जो औदारिक,
तैजस और कार्मण शरीरके परमाणुओंका स्कन्ध, वह जघन्य बादरनिगोदवर्गणा है । इसमें २०

ण्यसंख्येयभागमात्र पुलविगळोळिरुतिर्दं गुणितकर्मांशानंतानंतजीवगळ सविस्रसोपचय त्रिशरीर-
संचयमं कोळुत्तिरलक्कुं :—

$$\begin{array}{rcl} \text{उ स } ३२ \text{ } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } a \\ \text{बादरनिगोद } ९ & \equiv & a \text{ } ५ \\ & & a \\ \text{ज स } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } p \\ & & ९ \equiv a \text{ } ५ \\ & & a \end{array}$$

ई बादरनिगोदोत्कृष्टवर्गणेश्रोत्रोत्तरूपमनधिकं साङुत्तिरलु तृतीयशून्यवर्गणेश्रोत्रोत्तरूपमनधिकं जघन्यवर्गणेश्रोत्रोत्तरूपमनधिकं

तृतीय शून्यः ०

$$\begin{array}{rcl} \text{ज स } ३२ \text{ } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } a \\ & & a \\ & & ९ \equiv a \text{ } ५ \end{array}$$

५ सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गणेश्रोत्रोत्तरूपमनधिकं संभविमुग्गुमेदोडे जलदोळ स्थलदोळमाकाशदोळमेणु

कर्मांशानन्तानन्तबादरनिगोदजीवानां सविस्रसोपचयत्रिशरीरसंचयः उत्कृष्टबादरनिगोदवर्गणा भवति—

$$\begin{array}{rcl} \text{उ } ० \text{ स } ३२ \text{ } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } a \\ & & a \\ \text{बादरनिगोदसरीर } ० & & ९ \equiv a \text{ } ५ \\ & & a \\ \text{ज } ० \text{ स } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } p \\ & & a \text{ } a \\ & & ९ \equiv a \text{ } ५ \\ & & a \end{array}$$

इयमेकरूपाधिका तृतीयशून्यवर्गणाजघन्यं भवति—

$$\begin{array}{rcl} \text{तियमुग्गवर्गणा ज स } ३२ \text{ } \overline{a} \text{ } \overline{a} \text{ ख ख } १२-१६ \text{ ख } १३ & \equiv & a \text{ } \overline{a} \text{ } a \\ & & a \\ & & ९ \equiv a \text{ } ५ \end{array}$$

एक परमाणु हीन करनेपर उत्कृष्ट ध्रुव शून्यवर्गणा होती है। तथा इस जघन्यको जगत् श्रेणिके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर उत्कृष्ट बादरनिगोदवर्गणा होती है। स्वयम्भू-
रमणद्वीपमें जो मूलक आदि सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतियोंके शरीर हैं, उनमें एक बन्धनबद्ध
१० जगत्श्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण पुलवियोंमें रहनेवाले गुणितकर्मांश अनन्तानन्त बादर-
निगोद जीवोंका जो विस्रसोपचय सहित औदारिक तैजस कर्मणशरीरका उत्कृष्ट संचय है,

एकबंधनबद्धावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुलविगळोळिरुतिर्दं क्षपितकर्माशानन्तानंतसूक्ष्मनिगोदंगळ
सविस्त्रसोपचयत्रिशरीरसंचयमं कोळुत्तिरलक्कु

सूक्ष्मनिगोद

ज स ॐ ॐ ख ख १२- १६ ख १३।८३१।८-८२ ॐ
९३० ५- ० ०

इदरोळेकरूपं कळेयुत्तिरलु तृतीयशून्यवर्गणंगळोळु उत्कृष्टवर्गणयवकुं :-

२
उ स ॐ ॐ ख ख १२ १६ ख १३ - ८ ३ ० ८ २ ० इल्लिबोधकर्नितं दं बादरनिगोदोत्कृष्ट-
तृतीयशून्यवर्ग ९ ३ ० ५

वर्गणयोळु पुलविगळु श्रेण्यसंख्येयभागमात्रंगळु जघन्यसूक्ष्मनिगोदवर्गणयोळु पुलविगळु आवल्य-
संख्यातैकभागमात्रंगळदुकारणमागियुत्कृष्टबादरनिगोदवर्गणयिदं केळगे सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गणया-
गलेवेळकुमे दने दोडिदु दोषमल्लेके दोडे बादरनिगोदवर्गणंगळ निगोदशरीरंगळं नोडलु सूक्ष्म-
निगोदवर्गणाशरीरंगळगे सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रगुणकारोपलंभमपुर्दारिदं । सूक्ष्मनिगोद-

जले स्थले आकाशे वा एकबन्धनबद्धावत्यसंख्यातैकभागपुलविषु स्थितानां क्षपितकर्माशानन्तानन्तसूक्ष्म-
निगोदानां सविस्त्रसोपचयत्रिशरीरसंचयः सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गणा भवति ।

ज स ॐ ॐ ख ख १२-१६ ख १३-८ ३ ० २ ८ ० इयमेकरूपोना तृतीयशून्यवर्गणोत्कृष्टं भवति— १०
९ ३ ० ५ ० ०

तिय उ ० स ॐ ॐ ख ख १२-१६ ख १३-८ ३ ० २ ८ ० । ननु बादरनिगोदवर्गणोत्कृष्टे पुलवयः
सुण्यवर्गणा ९ ३ ० ५ ० ०

श्रेण्यसंख्येयभागः सूक्ष्मनिगोदवर्गणाजघन्ये तु आवल्यसंख्यातैकभागः तेन तदधोऽनेन भाव्यम् इति, तत्र-बादर-
निगोदवर्गणानिगोदशरीरेभ्यः सूक्ष्मनिगोदवर्गणाशरीराणां सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागगुणकारोपलम्भात् । सूक्ष्म-

वह उत्कृष्ट बादरनिगोदवर्गणा है । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर तीसरी शून्यवर्गणा-
का जघन्य होता है । वह कैसे है सो कहते हैं—जल-थल अथवा आकाशमें एकबन्धनबद्ध १५
आवलीके असंख्यातवें भाग पुलवियोंमें क्षपितकर्माश अनन्तानन्त सूक्ष्मनिगोद जीव रहते
हैं, उनके विस्त्रसोपचय सहित औदारिक तैजस कर्मणशरीरका संचय सूक्ष्मनिगोद जघन्य
वर्गणा है । उसमें एक परमाणु हीन करनेपर तीसरी शून्यवर्गणाका उत्कृष्ट होता है ।

शंका—बादरनिगोदवर्गणाके उत्कृष्टमें पुलवियाँ श्रेणिके असंख्यातवें भाग कही हैं
और सूक्ष्मनिगोदवर्गणाके जघन्यमें आवलीके असंख्यातवें भाग कही हैं । अतः बादरनिगोद २०
वर्गणासे पहले सूक्ष्मनिगोदवर्गणा होनी चाहिए । क्योंकि पुलवियोंका प्रमाण बहुत होनेसे
परमाणुओंका प्रमाण बहुत होना सम्भव है ?

१. म चोदकं ।

दुत्कृष्टवर्गणेशे संभवमावेड्योळक्कुमेदोडे महामत्स्यशरीरदोळु एकबंधनबद्धावत्यसंख्यातैकभाग-
मात्रपुळविगळोळिरुतिर्दं गुणितकर्माज्ञानंतानंतजीवंगळसवित्तसोपचयत्रिशरीरसंचयमं ग्रहि-

सुत्तिरलक्कुं :— उ स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$
 $\bar{a}$ $\bar{a}$

सूक्ष्मनिगोद

९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५

मेलणेरदुवर्गणेशे सुगमंगळदेतेदोडे सूक्ष्मनिगोदुत्कृष्टवर्गणेशोळेरूपं कूडिदोडे नभोवर्गण-
गळोळु जघन्यवर्गणेशयक्कुं :—

ज स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$
 नभोवर्गणा ९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५ $\bar{a}$

५ ई जघन्यवर्गणेशं प्रतरासंख्येयभागदिदं गुणिसुत्तिरल नभोवर्गणगळोळुत्कृष्टवर्गणेशयक्कुं :—

उ स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$ $\bar{a}$
 नभोवर्गणा ९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५

निगोदवर्गणोत्कृष्टं महामत्स्यशरीरे एकबंधनबद्धावत्यसंख्यातैकभागमात्रपुलविस्थितगुणितकर्माज्ञानन्तानन्त-
जीवानां सवित्तसोपचयत्रिशरीरसंचयो भवति—

सुहृमणि उ ० स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$
 ९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५ $\bar{a}$ $\bar{a}$

इदं एकरूपयुतं नभोवर्गणाजघन्यं भवति—

जभवग्ग ज स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$
 $\bar{a}$ $\bar{a}$
 ९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५

इदं प्रतरासंख्येयभागगुणितं नभोवर्गणोत्कृष्टं भवति—

जभवग्ग उ स ३२ $\bar{a}$ $\bar{a}$ ख ख १२— १६ ख १३—८ $\equiv$ $\bar{a}$ ८ सू २ $\bar{a}$ $\bar{a}$
 $\bar{a}$ $\bar{a}$
 ९ $\equiv$ $\bar{a}$ ५

समाधान—नहीं, क्योंकि बादरनिगोदवर्गणाके शरीरोंसे सूक्ष्मनिगोदवर्गणाके शरीरों-
का प्रमाण सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गुणित है। इससे वहाँ जीव भी बहुत हैं। अतः
 १० उन जीवोंके तीन शरीर सम्बन्धी परमाणु भी बहुत हैं। जघन्य सूक्ष्मनिगोदवर्गणाको पत्यके

ई नभ उत्कृष्टवर्गणेषोऽनेकैरूपं कूडुत्तिरलु महास्कन्धवर्गणेषोऽनेकैरूपं जघन्यवर्गणेषोऽनेकैरूपं :—

ज स ३२ अ अ ख ख १२- १६ ख १३- ८ ≡ अ ८ सू २ अ अ
महास्कन्धवर्गणा ९ ≡ अ ५ अ अ

ई महास्कन्धजघन्यवर्गणेषोऽनेकैरूपं तज्जघन्यराशियं पत्यासंख्यातद्विदं खंडिसिदेकभागं कूडुत्तिरलु महास्कन्धवर्गणेषोऽनेकैरूपं उत्कृष्टवर्गणेषोऽनेकैरूपं अप्युदरिदं :—

उ स ३२ अ अ ख ख १२- १६ ख १३- ८ ≡ अ ८ सू २ अ प
अ अ अ

महास्कन्ध ९ ≡ अ ५ अ

इतेकश्रेणिपद्याश्रयिसि त्रयोविंशतिवर्गणेषोऽनेकैरूपं लपटदुवु ।

अत्रैकरूपे युते महास्कन्धवर्गणाजघन्यं भवति—

महास्कन्ध ज स ३२ अ अ ख ख १२- १६ ख १३- ८ ≡ अ ८ सू २ अ अ
अ अ अ
९ ≡ अ ५

अत्र अस्यैव पत्यासंख्यातैकभागे युते महास्कन्धवर्गणोत्कृष्टं भवति—

महास्कन्ध उ स ३२ अ अ ख ख १२- १६ ख १३- ८ ≡ अ ८ सू २ अ अ प
अ अ अ
९ ≡ अ ५ प
अ

एवमेकश्रेणिमाश्रित्य त्रयोविंशतिवर्गणा उक्ताः ॥५९४-५९५॥

असंख्यातवै भागसे गुणा करनेपर उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोदवर्गणा होती है। सो कैसे, यह कहते हैं—

महामत्स्यके शरीरमें एक बन्धनबद्ध आवलीके असंख्यातवै भागमात्र पुलवियोंमें स्थित १० गुणितकर्मांश अनन्तानन्त जीवोंके विस्त्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्मण शरीरोंके परमाणुओंके स्कन्ध हैं, वही उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोदवर्गणा होती है। उसमें एक परमाणु अधिक करनेपर नभोवर्गणाका जघन्य होता है। इसको जगत्प्रतरके असंख्यातवै भागसे गुणा करनेपर नभोवर्गणाका उत्कृष्ट होता है। उसमें एक बढ़ानेपर महास्कन्धवर्गणाका जघन्य होता है। इसमें उसीका पत्याका असंख्यातवाँ भाग बढ़ानेपर महास्कन्धवर्गणाका उत्कृष्ट १५ होता है। इस प्रकार एक श्रेणिके रूपमें तेईस वर्गणाएँ कहीं ॥५९४-५९५॥

उक्तार्थोपसंहारं मादुत्तं त्रयोविंशतिवर्गणैर्गणैर्जघन्योत्कृष्टानुत्कृष्टाजघन्य भेदमुप
तदल्पबहुत्वमुप गाथाषट्कदिवं पेळ्दपं :—

परमाणुवर्गणाम्मि ण अवरुक्कस्सं च सेसगे अत्थि ।

गेज्झमहाक्खंधाणं वरमहियं सेसगं गुणियं ॥५९६॥

- ५ परमाणुवर्गणायां नावरोत्कृष्टं च शेषकेऽस्ति । ग्राह्यमहास्कंधानां वरमधिकं शेषकं गुणितं ॥
परमाणुवर्गणयोऽनु जघन्योत्कृष्टविशेषमित्येकं दोषे परमाणुगळु निर्विकल्पंगळुपुर्वारिदं
शेषसंख्यातवर्गणादि महास्कंधावसानमाद द्वाविंशतिवर्गणैर्गळोऽनु जघन्योत्कृष्टादिविशेषं अस्ति
उंदु । आ द्वाविंशतिवर्गणैर्गळोऽनु ग्राह्यमहास्कंधानां आहारतेजोभाषामनःकामर्णवर्गणैर्गळु
ग्राह्यमेव बुद्धकुमवरोत्कृष्टवर्गणैर्गळु महास्कंधोत्कृष्टवर्गणैर्गळुमेव बीयारवर्गणैर्गळु तंतम्म जघन्यमं
१० नोडलु विशेषाधिकंगळु, बुळिद पदिनारं वर्गणैर्गळुत्कृष्टवर्गणैर्गळु तंतम्म जघन्यमं नोडलु गुणि-
तंगळुपुवु ।

सिद्धान्तमभागो पडिभागो गेज्झगाण जेडुट्ठं ।

पल्यासंखेज्जदिमं अंतिमखंधस्स जेडुट्ठं ॥५९७॥

सिद्धानामन्तैकभागः प्रतिभागो ग्राह्याणां ज्येष्ठार्थं । पल्यासंख्येयभागोऽन्तिमस्कंधस्य

१५ ज्येष्ठार्थं ॥

ई ग्राह्यवर्गणापंचकोत्कृष्टवर्गणानिमित्तमागि प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकभागमात्रमवकुमा
भागहारविवं तंतम्म जघन्यमं भागिसिदेकभागमना जघन्यद मेले कूडिदोडे तंतम्मुत्कृष्टवर्गणे-
गळुपुवु बुद्धत्थं । अंतिममहास्कंधोत्कृष्टवर्गणानिमित्तमागि प्रतिभागहारं पल्यासंख्यातैकभाग-
मात्रमवकुमावल्यासंख्यातैकभागदिवं जघन्यवर्गणैर्गळु भागिसिदेकभागमना जघन्यदोऽनु कूडिदोडे

२० उक्तार्थमुपसंहरन् तासामेव जघन्योत्कृष्टानुत्कृष्टाजघन्यानि तदल्पबहुत्वं च गाथाषट्केनाह—

परमाणुवर्गणायां जघन्योत्कृष्टे न स्तः, अणूनां निर्विकल्पकत्वात् शेषद्वाविंशतिवर्गणानां तु स्तः ।

तत्र ग्राह्याणां आहारतेजोभाषामनःकामर्णवर्गणानां महास्कन्धवर्गणायाश्च उत्कृष्टानि स्वस्वजघन्याद्विशेषाधिकानि
शेषबोडशवर्गणानां गुणितानि भवन्ति ॥५९६॥

तत्र पञ्चग्राह्यवर्गणानामुत्कृष्टनिमित्तं प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकभागः, तेन स्वस्वजघन्यं

२५ भवत्वा तत्रैव निक्षिप्ते स्वस्वोत्कृष्टं भवतीत्यर्थः । अन्तिममहास्कन्धोत्कृष्टनिमित्तं प्रतिभागहारः पल्यासंख्या-

उक्त कथनका उपसंहार करते हुए उन्हीं वर्गणाओंके जघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और
अजघन्य भेदों तथा अल्पबहुत्वको लह गाथाओंसे कहते हैं—

परमाणुवर्गणामें जघन्य-उत्कृष्ट भेद नहीं है, क्योंकि परमाणु निर्विकल्प-भेद रहित
होते हैं । शेष बाईस वर्गणाओंमें तो जघन्य-उत्कृष्ट हैं । उनमें-से जो ग्राह्यवर्गणा, आहार-

३० वर्गणा, तेजसशरीरवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कामर्णवर्गणा तथा महास्कन्धवर्गणा
हैं, इनके उत्कृष्ट अपने-अपने जघन्यसे विशेष अधिक हैं, शेष सोलह वर्गणाओंके गुणित
हैं ॥५९६॥

उनमें-से पाँच ग्राह्यवर्गणाओंका उत्कृष्ट लानेके लिए प्रतिभागहार सिद्धराशिका
अनन्तवाँ भाग है । उससे अपने-अपने जघन्यमें भाग देकर जो लब्ध आवे, उसे उसी

तन्महास्कन्धोत्कृष्टवर्गणैयवकुमेंबुदर्थं ।

संखेज्जासंखेज्जे गुणमारो सो दु होदि हु अणंते ।

चत्तारि अगेज्जेसु वि सिद्धाणमणंतिमो भागो ॥५९८॥

संख्यातासंख्यातयोर्वर्गणयोगगुणकारौ तौ तु भवतः खलु अनंते । चतुर्व्वग्राह्येष्वपि सिद्धानामन्तैकभागः ॥

५

संख्यातवर्गणैयोऽसंख्यातवर्गणैयोऽसंख्यातवर्गणैयानिमित्तमाणि गुणकारं यथा-
संख्यामाणि तु मत्ते तौ आ संख्यातमुमसंख्यातमुं भवतः अप्पुबु । अदेत्तेदोडे संख्यातवर्गणा-
जघन्यराशिप्रनुत्कृष्टसंख्याताद्विदं गुणिसिदोडे संख्यातोत्कृष्टवर्गणैयवकु २१५ अपवर्तितमिदु
२

१५ । असंख्यातवर्गणाजघन्यराशियं परिमितासंख्यातजघन्यमं तद्राशिबिभक्तद्विकवारासंख्यातो-
त्कृष्टराशियिदं गुणिसुत्तिरलु तदुत्कृष्टवर्गणैयवकु १६।२५५ मपवर्तितमिदु २५५ । अनंतदोळम- १०
१६

ग्राह्यचतुष्टयदोळं तदुत्कृष्टवर्गणैयानिमित्तं गुणकारं सिद्धान्तैकभागमात्रमवकुमा गुणकारविदं
तन्मम जघन्यवर्गणैयं गुणिसुत्तिरलु तन्ममुत्कृष्टवर्गणैयवकु १६।२५५ मपवर्तितमिदु २५५ । अनंतदोळम- १०
१६

जीवादोणंतगुणो धुवादितिण्हं असंखभागो दु ।

पल्लस्स तदो तत्तो असंखलोगवहिदो मिच्छो ॥५९९॥

जीवादनंतगुणो ध्रुवादितिसृणां असंख्यातभागस्तु पल्यस्य ततस्ततोऽसंखलोकपहृत- १५
मिथ्यादृष्टिः ॥

तैकभागः ॥५९७॥

तु-पुनः संख्यातासंख्यातवर्गणयोस्तुष्टार्थं स्वस्वजघन्यस्य गुणकारः स संख्यातवर्गणायां स्वजघन्यभक्त-

स्वोत्कृष्टमात्रसंख्यातः १५ असंख्यातवर्गणायां स्वजघन्यभक्तस्वोत्कृष्टमात्रसंख्यातो भवति २५५ ताम्यां
२ १६

स्वस्वजघन्यं गुणयित्वा २ । १५ । १६ । २५५ अपवर्तिते १५ । २५५ खलु स्फुटं तयोस्तुष्टे स्याताम् इत्यर्थः । २०
२ १६

अनन्तवर्गणायां अग्राह्यवर्गणाचतुष्के च उत्कृष्टार्थं गुणकारः सिद्धान्तैकभागः ॥५९८॥

जघन्यमें मिलानेपर अपना-अपना उत्कृष्ट होता है । अन्तिम महास्कन्धका उत्कृष्ट लानेके
लिए भागहार पल्यका असंख्यातवाँ भाग है ॥५९७॥

संख्याताणुवर्गणा और असंख्याताणुवर्गणामें अपने-अपने उत्कृष्टमें अपने-अपने
जघन्यसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उतना ही गुणाकार होता है । उनसे अपने-अपने
जघन्यको गुणा करनेपर अपना-अपना उत्कृष्ट होता है । अनन्ताणुवर्गणा और चार अग्राह्य- २५
वर्गणामें उत्कृष्ट लानेके लिए गुणाकार सिद्धराशिका अनन्तवाँ भाग है ॥५९८॥

- सर्वजीवराशियं नोडलनंतगुणितमप्य गुणकारं ध्रुवादि भूख वर्गणेगळुत्कृष्टवर्गणानिमित्त-
गुणकारप्रमाणमक्कुमा गुणकारदिदं तंतम्म जघन्यवर्गणेयं गुणिसुतं विरलु तंतम्मुत्कृष्टवर्गणे-
गळप्पुवे बुदर्थं । तु मत्ते ततः अल्लिदं मेलण प्रत्येकशरीरवर्गणेगळुत्कृष्टवर्गणानिमित्तमाणि
गुणकारं पत्यासंख्यातैकभागमक्कुमा गुणकारगुणित तज्जघन्यवर्गणेये प्रत्येकशरीरवर्गणेत्कृष्ट-
५ वर्गणेयक्कुमे बुदर्थमिल्लि पत्यासंख्यातैकभागगुणकारमे ते दोडे :—प्रत्येकशरीरस्थजीवकार्मण-
शरीरसमयप्रबद्धं गुणितकर्मांशजीवप्रतिबद्धमप्युदरिदमुत्कृष्टयोगाज्जितमप्युदरिदं । तज्जघन्य-
समयप्रबद्धं नोडलु पत्यच्छेदासंख्यातैकभागगुणितमक्कुमदक्के संदृष्टि द्वात्रिंशदंकमक्कुमप्युदरिदं
तज्जघन्यवर्गणेयं तद्गुणकारदिदं गुणिसुतिरलु तदुत्कृष्टवर्गणेयक्कुमे बुदर्थं । ततः इल्लिदं
मेलण ध्रुवशून्यवर्गणेगळोळु तदुत्कृष्टवर्गणानिमित्तगुणकारमसंख्यातलोकविभक्तसर्वमिथ्यादृष्टि-
१० राशियक्कु १३ ≡ ० सो गुणकारदिदं गुणिसिद तज्जघन्यराशि ध्रुवशून्यवर्गणेत्कृष्ट-
९ ≡ ० ५
वर्गणाप्रमाणमे बुदर्थं ।

सेढीसूईपन्नाजगपदरासंखभागगुणगारा ।

अप्पप्पण अवरदो उक्कस्सा होंति णियमेण ॥६००॥

- श्रेणीसूचीपत्यजगत्प्रतरासंखभागगुणकाराः । स्वस्वावरायाः उत्कृष्टा भवन्ति नियमेन ॥
१५ श्रेण्यसंख्यातैकभागं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागं पत्यासंख्यातैकभागं जगत्प्रतरासंख्यातैक-
भागं यथासंख्यामाणि बादरनिगोदशून्य—सूक्ष्मनिगोदनभोवर्गणेगळुत्कृष्टवर्गणानिमित्तगुणकार-
गळप्पुवु ।

- सर्वजीवराशितोऽनन्तगुणो ध्रुवादितिसृणां वर्गणानां उत्कृष्टनिमित्तं गुणकारो भवति । तु पुनः
तदुपरितनप्रत्येकशरीरवर्गणेत्कृष्टनिमित्तं पत्यासंख्यातैकभागः । कुतः ? प्रत्येकशरीरस्थकार्मणसमयप्रबद्धानां
२० गुणितकर्मांशजीवप्रतिबद्धत्वेन जघन्यसमयप्रबद्धात् छेदासंख्येयगुणितत्वात् । तत्संदृष्टिः द्वात्रिंशत् । तथा जघन्ये
गुणिते तदुत्कृष्टं भवतीत्यर्थः । ततः ध्रुवशून्यवर्गणेत्कृष्टनिमित्तं गुणकारः असंख्यातलोकभक्तसर्वमिथ्या-
दृष्टिराशिः १३— ≡ ० ॥५९९॥
९ ≡ ० ५

श्रेणिसूच्यङ्गुलपत्यजगत्प्रतराणामसंख्यातैकभागः क्रमशः बादरनिगोदशून्यसूक्ष्मनिगोदवर्गणेत्कृष्ट-
निमित्तं गुणकारा भवन्ति । तत्र शून्यवर्गणायां सूच्यङ्गुलासंख्यातगुणकारस्तु सूक्ष्मनिगोदवर्गणाजघन्ये रूपोने

- ध्रुव आदि तीन वर्गणाओंके उत्कृष्टके लिए गुणाकार समस्त राशिसे अनन्तगुणा है ।
२५ उससे ऊपरकी प्रत्येक शरीरवर्गणाका उत्कृष्ट लानेके लिए पत्यका असंख्यातवाँ भागमात्र
गुणाकार है । क्योंकि प्रत्येक शरीरवर्गणामें जो कार्मण शरीरके समयप्रबद्ध हैं, वे गुणित-
कर्मांश जीवसम्बन्धी हैं, अतः जघन्य समयप्रबद्धसे पत्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग गुणे
हैं । उसकी संदृष्टि बत्तीस है । उससे जघन्यमें गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । ध्रुव-
३० शून्यवर्गणाके उत्कृष्टके लिए गुणाकार सब मिथ्यादृष्टियोंकी राशिमें असंख्यातलोकसे भाग
देनेपर जो प्रमाण आवे, उतना है ॥५९९॥

बादरनिगोदवर्गणा, शून्यवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा और नभोवर्गणाके उत्कृष्ट लानेके
लिए गुणाकार क्रमसे श्रेणिका असंख्यातवाँ भाग, सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग, पत्यका

अत्र गुणकारंशोऽदं तन्मम जघन्यवर्गणाय गुणिसिद्धौ तन्मुत्कृष्टवर्गणैर्गुणैर्बुद्धत्वं-
मवरोक्तं शून्यवर्गणैर्गुणैः सूच्यंगुलासंख्यातगुणकारमेतदोऽहं :—सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गणैर्गुणैः
सूच्यंगुलासंख्यातं तद्वर्गणैर्गुणैर्लोकैरूपहीनमात्रं शून्यवर्गणैर्गुणैर्बुद्धत्वं पुनरित्युक्तं गुणकारं
तज्जघन्यदोऽदं तन्मुत्कृष्टवर्गणैर्गुणैः सूक्ष्मनिगोदवर्गणैर्गुणैः पल्यासंख्यातगुणकारमेतदोऽहं गुणितकर्मांश-
जीवप्रतिबद्धसमयप्रतिबद्धमुत्कृष्टयोगाजितमप्युदरितं पल्याच्छेदासंख्यातैकभागं गुणकारमप्युदरितं । ५

इतु त्रयोविंशतिवर्गणैर्गुणैर्लोकैर्गुणैः श्रेण्याश्रितंगुणैः पेठलपट्टुविन्नु नानाश्रेणियनाश्रयिसि पेठलप-
ट्टुपुवदेते दोऽहं :—परमाणुवर्गणैः मोदलोडु सांतरनिरन्तरवर्गणैर्गुणैर्लोकैर्गुणैः श्रेण्याश्रितंगुणैः
गुणैः सद्दशधनिकवर्गणैर्गुणैः अनन्तपुद्गलवर्गमूलमात्रंगुणैः मेले मेले विशेषहीनंगुणैर्गुणैः
प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकभागमवकुं । प्रत्येकदेहजघन्यसद्दशधनिकंगुणैः वर्तमानकालदोऽहं क्षपितकर्मां-
शलक्षणैर्दं बंदयोगिचरमसमयदोऽहं नाल्केयपुवु । ४ । उत्कृष्टवर्गणैर्गुणैः वर्तमानकालदोऽहं २०
एतितु संभविमुगुमेदोऽहं स्वयंभूरमणद्वीपदकाळिकच्च मोदलादवरोक्तं आवल्यसंख्यातैकभाग-
मात्रंगुणैः संभविसुववु । बादरनिगोदजघन्यवर्गणैर्गुणैः वर्तमानकालदोऽहं एतितु संभविमुगुमेदोऽहं
क्षोणकषायचरमसमयदोऽहं नाल्केयपुवु । तदुत्कृष्टवर्गणैर्गुणैः महामत्स्यादिगुणैः आवल्य-

सति तदुत्कृष्टसंभवात् । सूक्ष्मनिगोदवर्गणायां पल्यासंख्यातगुणकारोऽपि तत्समयप्रबद्धानां गुणितकर्मांशजीवप्रति-
बद्धत्वात् । एवं त्रयोविंशतिवर्गणा एकश्रेण्याश्रिताः कथिताः । इदानीं नानाश्रेणीराश्रित्योच्यन्ते—तद्यथा— १५
परमाणुवर्गणातः सांतरनिरन्तरौत्कृष्टवसानवर्गणानां सद्दशधनिकानि अनन्तपुद्गलवर्गमूलमात्राण्यपि उपर्युपरि
विशेषहीनानि भवन्ति । तत्र प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकभागः । प्रत्येकदेहजघन्यसद्दशधनिकानि वर्तमानकाले
क्षपितकर्मांशलक्षणेनागत्य अयोगिचरमसमये चत्वारि । उत्कृष्टानि स्वयंभूरमणद्वीपस्य दावानलादिषु आवल्य-
संख्यातैकभागमात्राणि बादरनिगोदजघन्यानि वर्तमानकाले क्षोणकषायचरमसमये चत्वारि तदुत्कृष्टानि

असंख्यातवाँ भाग और जगत्प्रतरका असंख्यातवाँ भाग होता है, यहाँ जो शून्यवर्गणामें २०
सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गुणाकार कहा है, उसका कारण यह है कि सूक्ष्मनिगोदवर्गणामें
जघन्यमें-से एक घटानेपर शून्यवर्गणाका उत्कृष्ट होता है । सूक्ष्मनिगोद वर्गणामें गुणाकार
पल्याके असंख्यातवें भाग कहा है सो उसके समयप्रबद्ध गुणित कर्मांश जीवसे सम्बद्ध होनेसे
कहा है । इस प्रकार एक श्रेणि रूपसे तेईस वर्गणाएँ कहीं । अब नाना श्रेणियोंको लेकर
कहते हैं—

अर्थात् जो ये वर्गणा कही हैं, वे लोकमें वर्तमान कोई एक कालमें कितनी-कितनी
पायी जाती हैं, यह कहते हैं—परमाणुवर्गणासे लेकर सान्तनिरन्तरवर्गणा पर्यन्त पन्द्रह
वर्गणाएँ समानधनवाली हैं । ये पुद्गल द्रव्यराशिके वर्गमूलको अनन्तसे गुणा करनेपर जो
प्रमाण हो उतनी-उतनी लोकमें पायी जाती हैं, किन्तु आगे-आगे कुछ-कुछ कम होती जाती हैं ।
इनमें प्रति भागहार सिद्धराशिका अनन्तवाँ भाग है अर्थात् जितनी अणुवर्गणाएँ हैं, उनमें ३०
सिद्धराशिके अनन्तवें भागसे भाग देनेपर जो प्रमाण आये, उतना अणुवर्गणाके प्रमाणमें-से
घटानेपर जो प्रमाण शेष है, उतनी संख्याताणुवर्गणा जगत्में होती हैं । इसी प्रकार आगे
जानना । किन्तु सामान्यसे प्रत्येक पृथक्-पृथक् वर्गणाका प्रमाण अनन्त पुद्गल राशिका
वर्गमूल मात्र है । प्रत्येक शरीरवर्गणाका जघन्य वर्तमानकालमें क्षपितकर्मांशरूपसे आकर
अयोगकेवलीके अन्त समयमें पाया जाता है, सो उत्कृष्टसे चार है । उत्कृष्ट प्रत्येक शरीरवर्गणा ३५

संख्यातैकभागमात्रंगळप्पुवु । सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गगेगळु सहशधनिकंगळु जलदोळं स्थलदोळमा-
काशदोळं मेणु आवल्यसंख्यातैकभागमात्रंगळप्पुवु । उत्कृष्टवर्गगेगळु सूक्ष्मनिगोदसंबंधिगळु तु
मत्ते वर्त्तमानकालदोळु महामत्स्यंगळोळावल्यसंख्यातैकभागमात्रंगळप्पुवु । ई मूर सच्चित्तवर्गगे-
गळोळु जघन्यानुत्कृष्टवर्गगेगळु वर्त्तमानकालदोळुसंख्यातलोकमात्रंगळप्पुवु । महास्कंधवर्गगेगळु
५ वर्त्तमानकालदोळु तु मत्ते एकमेयक्कुं । महास्कंधर्मे बुदाबुदेदोडे भवनंगळुं विमानंगळुमष्ट-
पृथ्विगळु मेरुगळुं कुलशैलादिगळुमेकीभावमक्कुमदाव तेरदिदमसंख्यातयोजनंगळनंतरिसिद्धवक्के-
कत्वर्मे दोडे एकबंधनबद्धसूक्ष्मपुद्गलस्कंधंगळिदं समवेतंगळंगंतराभावमक्कुमधुदरिदं ।

हेड्डिमउक्कस्सं पुण रुवहियं उवरिमं जहण्णं खु ।

इदि तेवीसवियप्पा पोग्गलदब्बा हु जिणादिट्ठा ॥६०१॥

१० अधस्तनोत्कृष्टाः पुना रूपाधिका उपरितनजघन्याः खलु । इति त्रयोविंशतिविकल्पाः
पुद्गलद्रव्याणि खलु जिनदृष्टानि ॥

ई त्रयोविंशतिवर्गगेगळोळु परमाणुवर्गगेगळुयुळियलुळिद द्वाविंशतिवर्गगेगळु अधस्तनो-
त्कृष्टवर्गगेगळु रूपाधिकमाडुवादोडे तत्तदुपरितनवर्गगेगळजघन्यवर्गगेगळप्पुवु खलु नियम-
दिदमितु त्रयोविंशतिवर्गणाविकल्पंगळु पुद्गलद्रव्यंगळं दु जिनरुगळिदं पेळत्पट्टुवु खलु स्फुट-

१५ महामत्स्यादिषु आवल्यसंख्यातैकभागः । सूक्ष्मनिगोदजघन्यानि वर्त्तमानकाले जले स्थले आकाशे वा आवल्य-
संख्यातैकभागः । उत्कृष्टान्यपि महामत्स्येषु तदालापानि । अस्मिन् सच्चित्तवर्गणात्रये अजघन्यानुत्कृष्टानि
वर्त्तमानकाले असंख्यातलोकमात्राणि भवन्ति । महास्कन्धवर्गणा वर्त्तमानकाले एका सा तु भवनविमानाष्टपृथ्वी-
मरुकुलशैलादीनामेकीभावरूपा । कथं संख्यातासंख्यातयोजनान्तरितानामेकत्वं ? एकबंधनबद्धसूक्ष्मपुद्गलस्कन्धैः
समवेतानामन्तराभावात् ॥६००॥

२० त्रयोविंशतिवर्गणासु अणुवर्गणातः शेषाणां अधस्तनवर्गणोत्कृष्टानि रूपाधिकानि भूत्वा तदुपरितन-
वर्गणानां जघन्यानि भवन्ति खलु नियमेन इति त्रयोविंशतिवर्गणाविकल्पानि पुद्गलद्रव्याणि जिनेरुक्तानि

स्वयम्भूरमण द्वीपके दावानल आदिमें आवलीके असंख्यातवें भागमात्र पायी जाती है । बादर-
निगोदवर्गणाका जघन्य वर्त्तमानकालमें क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें चार पाया
जाता है । उत्कृष्ट बादरनिगोदवर्गणा महामत्स्य आदिमें आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण

२५ पायी जाती है । सूक्ष्मनिगोदवर्गणाका जघन्य वर्त्तमानकालमें जल, स्थल अथवा आकाशमें
आवलीके असंख्यातवें भाग पाया जाता है । उसका उत्कृष्ट भी महामत्स्योंमें आवलीके
असंख्यातवें भाग पाया जाता है । प्रत्येक शरीर, बादरनिगोद और सूक्ष्मनिगोद इन तीन
सचेतन वर्गणाओंमें अजघन्य और अनुत्कृष्ट अर्थात् मध्यमभेद वर्त्तमानकालमें असंख्यात
लोकमात्र पाये जाते हैं । वर्त्तमानकालमें महास्कन्धवर्गणा एक है, वह भवनवासियोंके

३० भवन, देवोंके विमान, आठ पृथिवियाँ, सुमेरु कुलाचल आदिका एक स्कन्धरूप है ।

शंका—उनमें तो संख्यात-असंख्यात योजनका अन्तराल है, वे एक कैसे हैं ?

समाधान—उनके मध्यमें जो सूक्ष्म पुद्गल स्कन्ध हैं, वे सब उक्त विमानादिके साथ
एक बन्धनमें बद्ध होनेसे उनमें अन्तराल नहीं है ॥६००॥

तेईस वर्गणाओंमें से अणुवर्गणाको छोड़कर शेष नीचेकी वर्गणाओंके उत्कृष्टमें एक

३५ अधिक करनेसे नियमसे ऊपरकी वर्गणाओंके जघन्य होते हैं । इस प्रकार जिनदेवने तेईस

माणि । ई त्रयोविंशतिवर्गणैर्गण्योऽनु प्रत्येकवर्गणैर्गुं बादरनिगोदवर्गणैर्गुं सूक्ष्मनिगोदवर्गणैर्गु-
मेवी मूकं वर्गणैर्गण्योऽनु सचित्तवर्गणैर्गण्योऽनु अयोगिचरमसमयदोऽनु प्रथमप्रत्येकशरीरवर्गणैर्गण्योऽनु
जघन्यवर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टदिदं
चतुष्टयमवकुं द्वितीयवर्गणैर्गण्योऽनु द्वयं स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा
उत्कृष्टेन चत्वारि भवन्ति इतवस्थितक्रमदिदमनन्तवर्गणैर्गण्योऽनु सलुत्तं विरलु बळिक्काल्लि मेले ५
आवुदोदनन्तरवर्गणैर्गण्योऽनु वर्गणैर्गण्योऽनु द्वयंगळु स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा
त्रयं वा उत्कृष्टेन पंच भवन्ति सहशधनिकानि । इतवस्थितक्रमदिदमनन्तवर्गणैर्गण्योऽनु सलुत्तं विरलु
बळिक्कमावुदोदनन्तरवर्गणैर्गण्योऽनु वर्गणैर्गण्योऽनु कथंचिदुदु कथंचिदिल्लि येत्तलानुमुटक्कुमप्पोडा-
गळु एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टदिदं सहशधनिकगळु षड्जीवंगळप्पुवी क्रमदिदं सप्ताष्ट-
सप्तषट्पंचचतुस्त्रिद्विसदृशधनिकवर्गणैर्गण्योऽनु संभविसुववु । ई यभिप्रायव मध्यप्ररूपणे भव्यसिद्ध- १०
प्रायोग्यस्थानंगळोऽनु गृहीतव्यमवकु- । मल्लिदं मेले यावुदोदनन्तरवर्गणैर्गण्योऽनु संसारिजीवप्रायोग्य-
वर्गणैर्गण्योऽनु वर्गणैर्गण्योऽनु कथंचिदुदु कथंचिदिल्लि एत्तलानुमुटक्कुमप्पोडागळु एकं मेणु द्वयं

खलु स्फुटम् । तामु प्रत्येकबादरनिगोदसूक्ष्मनिगोदवर्गणाः तिस्रः सचित्ताः । तत्र अयोगिचरमसमये प्रत्येकशरीर-
जघन्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति ? यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन चत्वारि । तथा तद्वितीय-
वर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति । यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन चत्वारि इत्यवस्थितक्रमेणा- १५
नन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति । यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन
पञ्च इत्यवस्थितक्रमेण अनन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं कथञ्चिदस्ति कथञ्चिन्नास्ति । यद्यस्ति तदा
एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन षट् अनेन क्रमेण सप्ताष्ट सप्तषट् पञ्चचतुस्त्रिद्विसदृशधनिकानि भवन्ति ।
इयं यवमध्यप्ररूपणा भव्यसिद्धप्रायोग्यस्थानेषु ग्राह्या । अनन्तरवर्गणा सा संसारिजीवप्रायोग्या तद् द्वयं
कथञ्चिदस्ति कथञ्चिन्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवल्यसंख्यातैकभागः इत्यवस्थित- २०

वर्गणाके भेद लिये हुए पुद्गल द्रव्योंका कथन किया है । उनमें-से प्रत्येक शरीर, बादरनिगोद
और ये तीन वर्गणा सचित्त हैं । उनका विशेष कहते हैं—उनमें-से अयोगकेवलीके अन्तिम
समयमें पायी जानेवाली जघन्य प्रत्येक शरीरवर्गणा लोकमें होती भी है और नहीं भी होती ।
यदि होती हैं, तो एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे चार तक होती हैं । उस जघन्य वर्गणासे २५
एक परमाणु अधिक द्वितीय प्रत्येक शरीरवर्गणा होती भी है और नहीं भी होती । यदि होती
हैं, तो एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे चार होती हैं । इसी अवस्थित क्रमसे एक-एक परमाणु
बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणाओंके होनेपर उसके अनन्तर एक परमाणु अधिक वर्गणा लोकमें
होती भी है और नहीं भी होती । यदि हैं, तब एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे पाँच होती ३०
हैं । इसी अवस्थित क्रमसे एक-एक परमाणु बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणाएँ बीतनेपर पुनः
एक परमाणु अधिक वर्गणा होती भी है और नहीं भी होती । यदि है, तब एक या दो या
तीन वा उत्कृष्टसे छह होती हैं । इसी क्रमसे अनन्तवर्गणा पर्यन्त उत्कृष्ट सात, आठ, सात,
छह, पाँच, चार, तीन-दो वर्गणा लोकमें समान परमाणुओंके परिमाणको लिये हुए होती हैं ।
यह यवमध्यप्ररूपणा मोक्ष जानेवाले भव्य जीवोंके योग्य स्थानोंमें ग्रहण करनेके योग्य है ।
अब जो अनन्तरवर्गणा संसारी जीवोंके योग्य हैं, उसे कहते हैं । पूर्वमें कही प्रत्येक

मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टदिदमावलयसंख्यातैकभागमात्रंगळु सहशधनिकंगळु संभविमुर्वितवस्थित-
क्रमदिदमनंतरवर्गणंगळु सलुत्तं विरलु बळिकमावुदो'दनंतरवर्गणंगळु वर्गणंगळु कथंचिदुदु
कथंचिदिल्ल एतलानुमुदकुम्पोडागळु एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणुत्कृष्टदिदमावलयसंख्यातैक-
भागमात्रंगळु सदृशधनिकंगळु घटिसुगुमंतु घटिसुदो'दं विशेषमुदावुदे'दोडे पूर्ववर्गणंगळं

५ नोडलिवेकवर्गणंगळं विधेयाधिकंगळपुवु ८

मत्तमी विधानदिदमेयनंतरवर्गणंगळु नडेवु । मत्तावुदो'दनंतरोपरितनवर्गणंगळोअध-
स्तनाधस्तनवर्गणंगळं नोडलेकैकवर्गणंगळं विधेयाधिकंगळपुवितु । ई विधानदिदं नडसल्प-
डुवुदेन्नेवरं यवमध्यमन्नेवरं मत्ता यवमध्यवर्गणंगळु क्वचिदस्ति क्वचिन्नास्ति यद्यस्ति तदा
एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टदिदमावलयसंख्यातैकभागमात्रंगळपुवतागुत्तलुं पूर्वोत्क्रम-
१० दिदमनंतराधस्तन सदृशधनिकवर्गणंगळं नोडलेकवर्गणंगळं विधेयाधिकंगळपुवु मत्तमिवुमनंत-
वर्गणंगळवस्थितक्रमदिदं नडेवु । बळिक अल्लिदं मेले यावुदो'दनंतरवर्गणंगळु स्यादस्ति
स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणुत्कृष्टदिदमावलयसंख्यातैकभागमात्रंगळपु-

क्रमेण अनन्तरवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं कथञ्चिदस्ति कथञ्चिन्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं

उत्कृष्टेन आवलयसंख्यातैकभागः । अयं पूर्वस्मादेकरूपाधिकः- २ एवमनन्तरवर्गणा अतीत्य अनन्तरोपरितन-

१५ वर्गणासु अधस्तनाधस्तनवर्गणाम्यः एकैकाधिका भवन्ति । एवं यावत् यवमध्यं तावन्नेतव्यम् । यवमध्यवर्गणा-
सदृशधनिकद्रव्यं क्वचिदस्ति क्वचिन्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवलयसंख्यातैकभागः ।
अयं ततोऽप्येकरूपाधिकः । एवमनन्तरवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति, यद्यस्ति तदा
एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवलयसंख्यातैकभागः । अयं पूर्वस्मादेकरूपहीनः । एवं यावदुत्कृष्टा प्रत्येक-
वर्गणा तावन्नेयम् । तदुत्कृष्टमपि स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन

२० वर्गणासे एक परमाणु अधिक जो प्रत्येक वर्गणा है, वह लोकमें होती भी है और नहीं भी
होती । यदि है, तब एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग होती है ।
इसी क्रमसे एक-एक परमाणु बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणा बीतनेपर उससे एक परमाणु
अधिक अनन्तरवर्गणा कथंचित् है, कथंचित् नहीं है । यदि है, तब एक या दो या तीन
उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग होती है । पहलेसे इसका प्रमाण एक अधिक है ।

२५ इस प्रकार अनन्त वर्गणा बीतनेपर अनन्तरकी ऊपरकी वर्गणाओंमें नीचे-नीचेकी वर्गणासे
एक-एक अधिक परमाणु होता है । इस प्रकार जबतक यवमध्य आये, तब तक ले जाना
चाहिए । यवमध्यमें जितने परमाणुओंके स्क्रन्धरूप प्रत्येक वर्गणा होती है, उतने-उतने
परमाणुओंके स्क्रन्धरूप प्रत्येक वर्गणा लोकमें होती भी हैं या नहीं भी होती ? यदि हैं, तो एक
या दो या तीन उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होती हैं । यह उससे भी
३० एक अधिक है । ऐसे अनन्त वर्गणा बीतनेपर अनन्तर जो वर्गणा है, वह कथंचित् है,
कथंचित् नहीं है । यदि है, तो एक, दो या तीन या उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग है ।

वंतागुत्तलं पूर्ववर्गणेषां नोडलेकवर्गणेषां विशेषहीनंगळपुर्वितेन्नेवरमुत्कृष्टप्रत्येकसदृशधनिक-
वर्गणंगळन्नेवरं आ उत्कृष्टप्रत्येकवर्गणेषां वर्गणंगळु स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा
एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणुत्कृष्टदिदमावत्यसंख्यातैकभागंगळु संभविमुर्वितु ज्ञातव्यमवकुं । एतो
प्रत्येकवर्गणं भव्यसिद्धरुमभव्यसिद्धरुमनाश्रयिसि पेळल्पट्टुदंते बादरनिगोदवर्गणेषां पेळल्पट्टुदु
बेरेपेळकेयिल्ल सूक्ष्मनिगोदवर्गणेषां केदोडे जलस्थलाकाशादिगळोळु सर्वजघन्यसूक्ष्मनिगोद-
वर्गणेषां वर्गणंगळु कथंचिदुं कथंचिदिल्ल । एतलानुमुंढकुम्पोडागळेकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं
मेणुत्कृष्टदिदमावत्यसंख्यातैकभागमात्रंगळपुर्वितभव्यसिद्धप्रायोग्यप्रत्येकशरीरंगळो पेळल्पट्टु
विधानदिदं नडसल्पडुवुदन्नेवरं यवमध्यमन्नेवरं मायवमध्यवोळमावत्यसंख्यातैकभागमात्रंगळु
सदृशधनिकंगळपुर्वु । मत्तं प्रत्येकशरीरवर्गणाविधानदिदं मेले नडसल्पडुवुदन्नेवरमुत्कृष्टसूक्ष्म-

आवत्यसंख्यातैकभागः इति प्रत्येकवर्गणा भव्यसिद्धान् अभव्यसिद्धाश्च आश्रित्योक्ता । एवं बादरनिगोदवर्गणा-
यामपि वक्तव्यं, पृथक् कथनं नास्ति । सूक्ष्मनिगोदवर्गणायां तु जलस्थलाकाशादिषु सर्वजघन्यं कथञ्चिदस्ति
कथञ्चिन्नास्ति । यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवत्यसंख्यातैकभागः एवमभव्यसिद्धप्रायोग्य-
प्रत्येकशरीरवन्नेतव्यं यावत् यवमध्यं तावत् । तत्रापि आवत्यसंख्यातैकभागसदृशधनिकानि भवन्ति । पुनः
प्रत्येकवर्गणावन्नेतव्यं यावत्तद्वर्गणोत्कृष्टं तावत् । तदपि एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवत्यसंख्यातैक-

यह प्रमाण यवमध्य सम्बन्धी पूर्व प्ररूपणासे एक हीन है । इस प्रकार उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर-
वर्गणा तक ले जाना चाहिए । अर्थात् एक परमाणुके बढ़नेसे एक वर्गणा होती है । सो अनन्त-
अनन्त वर्गणा होनेपर उत्कृष्टमें-से एक घटाना । उत्कृष्ट प्रत्येक वर्गणा पर्यन्त ऐसा करना
चाहिए । उत्कृष्ट प्रत्येक वर्गणा भी लोकमें कथंचित् है, कथंचित् नहीं है । यदि है, तब एक
या दो या तीन या उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग होती है । इस प्रकार भव्य-अभव्य
जीवोंकी अपेक्षा प्रत्येक वर्गणा कही । इसी प्रकार बादरनिगोद वर्गणाका भी कथन करना
चाहिए । उसमें कुछ विशेष कथन नहीं है । जैसे प्रत्येक वर्गणामें अयोगीके अन्त समयमें
सम्भव जघन्य वर्गणाको लेकर भव्योंकी अपेक्षा कथन किया है, वैसे ही यहाँ क्षीणकषायके
अन्त समयमें सम्भव उसके शरीरके आश्रित जघन्यबादरनिगोद वर्गणाको लेकर भव्योंकी
अपेक्षा कथन जानना । सामान्य संसारीकी अपेक्षा दोनों स्थानोंमें समानता सम्भव है । आगे
सूक्ष्मनिगोदवर्गणाका कथन करते हैं ।

यहाँ भव्यकी अपेक्षा कथन नहीं है । अतः सूक्ष्म निगोदवर्गणा लोकमें हों भी न भी
हों । यदि होती है, तो एक, दो या तीन उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होती
है । आगे जैसे संसारियोंकी अपेक्षा प्रत्येकवर्गणाका कथन किया, वैसे ही यवमध्य पर्यन्त
अनन्तानन्त वर्गणा होनेपर उत्कृष्टमें एक-एक बढ़ाना । पीछे उत्कृष्ट सूक्ष्म वर्गणा पर्यन्त
एक-एक घटाना । सामान्यसे सर्वत्र उत्कृष्टका प्रमाण आवलीका असंख्यातवाँ भाग है ।
यहाँ सर्वत्र अभव्य सिद्धोंके योग्य प्रत्येक बादर सूक्ष्म निगोदवर्गणाकी यवाकार प्ररूपणामें
गुणहानिका गच्छ जीवराशिसे अनन्तगुणा जानना । नाना गुणहानि शलाकाका प्रमाण
यवमध्यमें ऊपर और नीचे आवलीका असंख्यातवाँ भाग प्रमाण जानना । इसका अभिप्राय
यह है कि संसारी अपेक्षा प्रत्येकवर्गणा, बादरनिगोदवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणामें जो
यवमध्य प्ररूपणा कही है, उसमें लोकमें पाये जानेकी अपेक्षा जितने एक-एक परमाणु बढ़ने

निगोदवर्गणावसानमन्नेवरमा उत्कृष्टसूक्ष्मनिगोदवर्गणयोऽनुवर्गणोऽनु येनितु संभविसुगुमेदोडो दु
मेणु यरडु मेणु मूर्त्तकृष्टादिदमावत्यसंख्यातैकभागमात्रंगळणुवत्ति सर्वत्राभव्यसिद्धप्रायोग्ययव-
मध्यगळोऽनु गुणहान्यध्वानं सर्वजीवंगळं नोडलनंतगुणितमक्कुं १६ ख नानागुणहानिशलाकेगळ
यवमध्यदत्तणिद कळगेयुं मेगेयुमावत्यसंख्यातैकभागमात्रंगळणुवु ८ ।

a

५

पृथ्वी जलं च छाया चतुरिन्द्रियविषयकम्मपरमाणू ।

छव्विहमेयं भणियं योग्गलद्वयं जिणवरैहिं ॥६०२॥

पृथ्वी जलं च छाया चतुरिन्द्रियविषयः कम्मपरमाणुः षड्विधभेदं भणितं पुद्गलद्रव्यं
जिनवरैः ॥

१० पृथ्व्येदुं जलमेदुं छायेदुं चक्षुरिन्द्रियविषयवर्जितशेषेन्द्रियचतुष्टयविषयमेदुं कम्ममेदुं
परमाणुमेदितु पुद्गलद्रव्यं षट्प्रकारममुळदुदुं जिनवरैरिदं भणितं निरूपितत्पट्टदु ।

भागे भवति । तत्र सर्वत्र अभव्यसिद्धप्रायोग्ययवमध्येषु गुणहान्यध्वानं सर्वजीवेभ्योऽनन्तगुणं १६ ख नानागुण-
हानिशलाकायवमध्यादधः उपर्यपि आवत्यसंख्यातैकभागः ८ ॥६०१॥

a

पृथ्वी जलं छाया चक्षुर्बर्जितशेषचतुरिन्द्रियविषयः कर्मपरमाणुश्चेति पुद्गलद्रव्यं षोढा जिन-
वरैर्भणितम् ॥६०२॥

१५ रूप जो वर्गणा भेद हैं, उन भेदोंका प्रमाण तो द्रव्य है । और जिन वर्गणाओंमें उत्कृष्ट पानेकी
अपेक्षा समानता पायी जाती है, उनका समूह निषेक है और उनका जो प्रमाण है, वह स्थिति
है । तथा एक गुणहानिमें निषेकोका जो प्रमाण है, वह गुणहानिका गच्छ है । उसका प्रमाण
जीवराशिसे अनन्त गुना है । तथा यवमध्यके ऊपर और नीचे जो गुणहानिका प्रमाण है, वह
नाना गुणहानि है । सो प्रत्येक आवलीका असंख्यातवां भाग मात्र है ।

२० इस प्रकार द्रव्यादिका प्रमाण जानकर जैसे निषेकोमें द्रव्यका प्रमाण लानेका विधान
है, वैसे ही उत्कृष्ट पानेकी अपेक्षा समानरूप वर्गणाओंका प्रमाण यवमध्यसे ऊपर और नीचे
चय घटता क्रम लिये जानना ।

शंका—यहाँ तो प्रत्येक आदि तीन सचित्त वर्गणाओंके अनन्त भेद कहे और एक-एक
भेदरूप वर्गणा लोकमें आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण सामान्य रूपसे कहीं । किन्तु
२५ पहले मध्यभेदरूप सचित्त वर्गणा सब असंख्यात लोक प्रमाण ही कही हैं । सो उत्कृष्ट और
जघन्यको छोड़ सब भेद मध्य भेदोंमें आ जाते हैं, वहाँ ऐसा प्रमाण कैसे सम्भव है ?

समाधान—यहाँ सब भेदोंमें ऐसा कहा है कि होते भी हैं, नहीं भी होते । यदि होते
हैं, तो एक दो आदि उत्कृष्ट आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं । सो यह कथन
नाना कालकी अपेक्षा है, किसी एक वर्तमान कालकी अपेक्षा वर्तमान कालमें सब मध्यभेद-
३० रूप प्रत्येकादि वर्गणा असंख्यात लोक प्रमाण ही पायी जाती हैं ; अधिक नहीं । उनमें-से
किसी भेदरूप वर्गणाकी नास्ति ही है और किसी भेदरूप वर्गणा एक आदि प्रमाणमें पायी
जाती है । तथा किसी भेदरूप वर्गणा उत्कृष्ट प्रमाणको लिये हुए पायी जाती है ।

इस प्रकार तेईस वर्गणाओंका कथन किया ॥६०१॥

पृथ्वी, जल, छाया, चक्षुको छोड़ शेष चार इन्द्रियोंका विषय और कार्माणस्कन्ध

३५ तथा परमाणु इस प्रकार जिनेन्द्रदेवने पुद्गल द्रव्यके छह भेद कहे हैं ॥६०२॥

बादरबादरबादर बादरसुह्रुमं च सुह्रुमथूलं च ।

सुह्रुमं च सुह्रुमसुह्रुमं धरादिदं होदि छब्भेयं ॥६०३॥

बादरबादरं बादरसूक्ष्मं च सूक्ष्मस्थूलं च । सूक्ष्मं च सूक्ष्मसूक्ष्मं धरादिकं भवति षड्भेदं ॥

पृथिवरूपपुद्गलद्रव्यं बादरबादरमेबुदु । छेदिसत्कं भेदिसत्कं अन्यत्रमोय्वडं शक्यमपुद्गु बादरबादरमेबुदत्थं । जलं बादरमेबुदु । आवुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कं अशक्यमन्यत्रमोय्वडं शक्यमपुद्गु बादरमेबुदत्थं । छायेयं बादरसूक्ष्ममेबुदु । आवुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कदुमन्यत्रमोय्वड-शक्यमपुद्गु बादरसूक्ष्ममेबुदत्थं । आवुदोदु चक्षुरिन्द्रियरहितशेषचतुरिन्द्रियविषयमप्य बाह्यात्थंमदं सूक्ष्मस्थूलमेबुदु । कम्ममं सूक्ष्ममेबुदु । आवुदोदु द्रव्यं देशावधिपरमावधिविषयमपुद्गु सूक्ष्ममेबुदत्थं । परमाणुवं सूक्ष्मसूक्ष्ममेबुदु । आवुदोदु पुद्गलद्रव्यमपुद्गु सर्वावधिविषयमेयादोडं सूक्ष्मसूक्ष्ममेबुदत्थं ।

स्कंधं सयलसमत्थं तस्स य अद्दं भणंति देसो त्ति ।

अद्ददं च पदेसो अविभागी चेव परमाणु ॥६०४॥

स्कंधं सकलसमत्थं तस्य चादं भणंति देश इति । अद्ददं च प्रदेशः अविभागी चैव परमाणुः ॥

स्कंधमेबुदु सर्वाशंगिदं संपूर्णमक्कुमदरदं देशमेदितु पेळवरु । अद्दस्यादंमद्ददंमदं प्रदेशमेबुदु पेळवरु । अविभागियपुद्गुरिदं परमाणुवेबुदु पेळवरु गणधरादिपरमागमजानिगळु । इंतु स्थानस्वरूपाधिकारंतिदुदुदु ।

पृथिवीरूपपुद्गलद्रव्यं बादरबादरं छेत्तु भेत्तु अन्यत्र नेत्तु शक्यं तद्बादरबादरमित्यर्थः । जलं बादरं, यच्छेत्तु भेत्तुमशक्यं, अन्यत्र नेत्तु शक्यं तद्बादरमित्यर्थः । छाया बादरसूक्ष्मं यच्छेत्तु भेत्तुमन्यत्र नेत्तुमशक्यं तद्बादरसूक्ष्ममित्यर्थः । यः चक्षुर्वजितचतुरिन्द्रियविषयो बाह्यार्थः तत्सूक्ष्मस्थूलम् । कर्म सूक्ष्मं, यद्द्रव्यं देशावधिपरमावधिविषयं तत्सूक्ष्ममित्यर्थः । परमाणुसूक्ष्मसूक्ष्मं तत्सर्वावधिविषयं तत्सूक्ष्मसूक्ष्ममित्यर्थः ॥६०३॥

स्कन्धं सर्वाशंसंपूर्णं भणन्ति तदर्थं च देशं, अर्थस्थानं प्रदेशं अविभागिभूतं परमाणुम् ॥६०४॥ इति स्थानस्वरूपाधिकारः ।

पृथिवीरूप पुद्गल द्रव्य बादर-बादर है । जिसका छेदन-भेदन किया जा सके, जिसे एक स्थानसे दूसरे स्थानपर ले जाया जा सके, वह बादर-बादर है । जिसका छेदन-भेदन तो न हो सके; किन्तु अन्यत्र ले जाया जा सके, वह बादर है । छाया बादरसूक्ष्म है । जो छेदन-भेदन और अन्यत्र ले जानेमें अशक्य हो, वह बादर सूक्ष्म है । जो चक्षुको छोड़ शेष चार इन्द्रियोंका विषय बाह्य पदार्थ है, वह सूक्ष्म स्थूल है । कर्मस्कन्ध सूक्ष्म है । जो द्रव्य देशावधि और परमावधिज्ञानका विषय होता है, वह सूक्ष्म है । परमाणु सूक्ष्मसूक्ष्म है । जो सर्वावधिज्ञानका विषय है, वह सूक्ष्मसूक्ष्म है ॥६०३॥

जो सब अंशोंसे पूर्ण हो, उसे स्कन्ध कहते हैं । उसके आवेको देश कहते हैं । और आवेके आवेको प्रदेश कहते हैं । जिसका विभाग न हो सके, वह परमाणु है ॥६०४॥

स्थानाधिकार समाप्त हुआ ।

१. म चक्षुरिन्द्रियविषयवर्जं नात्किन्द्रियविषयमप्य ।

गदिठाणोग्गहकिरियासाधनभूदं खु होदि धम्मतिथं ।

वत्तणकिरियासाहणभूदो णियमेण कालो दु ॥६०५॥

गतिस्थानावगाहक्रियासाधनभूतं खलु भवति धर्मत्रयं । वत्तनक्रियासाधनभूतो नियमेन कालस्तु ॥

- ५ देशान्तरप्राप्तिहेतुवं गतिये बुदु । तद्विपरीतमं स्थानमे बुदु । अवकाशदानमनवगाहमे बुदु । गतिक्रियावंतंगळप्पजीवपुद्गलंगळ गतिक्रियासाधनभूतं धर्मद्रव्यमक्कुं । मत्स्यागमनक्रियेयोळु जलमे तंते । स्थानक्रियावंतंगळप्प जीवपुद्गलंगळ स्थानक्रियासाधनभूतमधर्मद्रव्यमक्कुं पथिक-जनंगळ स्थानक्रियेयोळु च्छाये ये तंते ।

- १० अवगाहक्रियावंतंगळप्प जीवपुद्गलादिद्रव्यंगळ अवगाहक्रियेयोळु साधनभूतमाकाशद्रव्य-मक्कुमिपंगे वसति ये तंते, इल्लिये दपं क्रियावंतंगळप्प अवगाहजीवपुद्गलंगळगे अवकाश-दानं युक्तमक्कुमितरधर्मादिद्रव्यंगळु निष्क्रियंगळुं नित्यसंबंधंगळुमक्कुं तवगाहदानमे दोडंतल्लु येक्के दोडुपचारदिदं तत्तिस्सिद्धियक्कुमप्पुदरिदं । ये तीगळु गमनाभावमागुत्तिरल्लु सर्वगतमाकाश-मे दिदु पेळल्पट्टुदु सर्वत्र सद्भावमप्पुदरिदंमंते धर्मादिगळगे अवगाहनक्रियाभावदोळं सर्वत्र व्याप्तिदर्शनादिदमवगाहमितुपचरिसल्पट्टुदु । सत्तमे दपमेत्तलानुमवकाशदानमाकाशक्के स्वभावमा-

- १५ देशान्तरप्राप्तिहेतुर्गतिः । तद्विपरीतं स्थानम् । अवकाशदानमवगाहः । गतिक्रियावतोर्जीवपुद्गलयोः तत्क्रियासाधनभूतं धर्मद्रव्यं मत्स्यानां जलमिव । स्थानक्रियावतोर्जीवपुद्गलयोः तत्क्रियासाधनभूतमधर्मद्रव्यं पथिकानां छायेव । अवगाहनक्रियावतां जीवपुद्गलादीनां तत्क्रियासाधनभूतमाकाशद्रव्यं तिष्ठतो वसतिरिव । ननु क्रियावतोरवगाहजीवपुद्गलयोरेवावकाशदानं युक्तं धर्मादीनां तु निष्क्रियाणां नित्यसंबद्धानां तत् कथं ? इति तन्न उपचारेण तत्सिद्धेः । यथा गमनाभावेऽपि सर्वगतमाकाशमित्युच्यते सर्वत्र सद्भावात् तथा धर्मादीनां अवगाहनक्रियाया अभावेऽपि सर्वत्र व्याप्तिदर्शनात् अवगाह इत्युपचर्यते ॥

- २० एक देशसे दूसरे देशको प्राप्त होनेमें जो कारण है, वह गति है । उससे विपरीत स्थान है । अवकाशदानको अवगाह कहते हैं । जैसे मत्स्योंको गमनमें सहायक जल है, वैसे ही गतिरूप क्रिया करते हुए जीव और पुद्गलोंकी गतिक्रियामें सहायक धर्मद्रव्य है । जैसे छाया पथिकोंके ठहरनेका साधन है, वैसे ही ठहरने रूप क्रिया परिणत जीव पुद्गलोंको ठहरने रूप क्रियामें साधन अधर्म द्रव्य है । जैसे निवास करनेवालोंको वसतिका साधनभूत है, वैसे ही अवगाहन क्रियावाले जीव, पुद्गल आदिको उस क्रियामें साधनभूत आकाश-द्रव्य है ।

शंका—क्रियावान् अवगाही जीव और पुद्गलोंको ही अवकाश देना युक्त है । धर्म आदि तो निष्क्रिय हैं, नित्य सम्बद्ध हैं, उन्हें अवकाशदान कैसे सम्भव है ?

- समाधान—ऐसा कथन उपचारसे किया गया है । जैसे आकाशमें गमनका अभाव होनेपर भी उसे सर्वगत कहा जाता है; क्योंकि वह सर्वत्र पाया जाता है । वैसे ही धर्मादिमें अवगाह क्रिया न होनेपर भी समस्त लोकाकाशमें व्याप्त होनेसे अवगाहका उपचार किया जाता है ।

दोडे वज्रादिगळिदं लोष्ठादिगळगे भित्त्यादिगळिदं गवादिगळगेयं व्याघातमेग्यदल्पडदे काणल्पट्टु-
दल्ले व्याघातमडु कारणदिदमी याकाशक्कवगाहदानं कुंदल्पडुगुमेदितेनल्वडेकेदोडे दोषमल्लत्पुदे
कारणमागि ।

अदेते दोडे स्थूलंगळप्प वज्रलोष्ठादिगळगे परस्परव्याघातमेदितिदक्के अवकाशदानसामर्थ्यं
कुंदल्पडदल्लि अवगाहिगळगेये व्याघातमपुदरिदं वज्रादिगळगे मत्ते स्थूलंगळप्पुदरिदं परस्परं ५
प्रत्यवकाशदानमं माळपुवल्लवेदेदितु दोषक्कवकाशमिल्ल । आवुवु केलवु पुदगलंगळु सूक्ष्मंगळवु
परस्परं प्रत्यवकाशदानमं माळपुवु येत्तलानुमितादोडे इवाकाशक्कसाधारणलक्षणं मत्तेके दोडे :—
इतरद्रव्यंगळं तत्सदभावमपुदरिदमेदितेनल्वडेकेदोडे सर्वपदार्थंगलो साधारणावगाहनहेतुत्वमी
याकाशक्कसाधारणलक्षणमेदितु दोषमिल्ल । अलोकाकाशदोळु अवगाहदानमिल्लपुदरिदमभाव-
मक्कुमेदेत्तलानुमेदोडयुक्तमेकेदोडे स्वभावपरित्यागमिल्लमपुदरिदं । वर्त्तनक्रियासाधनभूतो १०
नियमेन कालस्तु । जीवादिवर्त्तनक्रियावंतंगळप्प द्रव्यंगळ वर्त्तनक्रियासाधनभूतं तु मत्ते नियमदिदं
कालद्रव्यमक्कु ।

अथ यदि अवकाशदानं आकाशस्य स्वभावस्तदा वज्रादिभिर्लोष्ठादीनां भित्त्यादिभिर्गवादीनां च
व्याघातो भाभूत्, दृश्यते च व्याघातः । तेन आकाशस्य अवगाहदानं हीयते इति नाशङ्कनीयं, वज्रलोष्ठादीनां
स्थूलत्वाद् व्याघातेऽपि अवगाहिनामेव व्याघातात् तस्य अवगाहदानसामर्थ्याह्लासाभावात् । सूक्ष्मपुद्गलानां १५
परस्परं प्रत्यवकाशदानकारणात् । यद्येवं तर्हि आकाशस्य तदसाधारणलक्षणं न इतरद्रव्याणामपि तत्सद्भावात्
इति न मन्तव्यं, सर्वपदार्थानां साधारणावगाहनहेतुत्वस्यैव आकाशस्यासाधारणलक्षणत्वात् । तर्हि अलोकाकाशे
अवगाहनदानाभावात् अभावः स्यात् ? तदपि न, स्वभावपरित्यागाभावात् । तु—पुनः द्रव्याणां वर्तनाक्रिया-
साधनभूतं नियमेन कालद्रव्यं भवति ॥

शंका—अवकाश देना आकाशका स्वभाव है, तो वज्र आदिसे लोष्ठ आदिका और २०
दीवार आदिसे गाय आदिका व्याघात—टक्कर नहीं होना चाहिए, किन्तु व्याघात देखा
जाता है, अतः आकाशके अवगाह देनेकी बात नहीं घटती ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए; क्योंकि वज्र, लोष्ठ आदि स्थूल हैं,
उनका व्याघात होनेपर अवगाहियोंमें ही व्याघात हुआ । इससे आकाशके अवकाशदानकी
शक्तिमें कोई कमी नहीं आती; क्योंकि सूक्ष्म पुद्गल परस्परमें भी एक दूसरेको अवकाश २५
देते हैं; किन्तु स्थूलोंमें ऐसा सम्भव नहीं है ।

शंका—यदि सूक्ष्म पुद्गल भी परस्परमें अवकाशदान करते हैं, तो अवकाश देना
आकाशका असाधारण लक्षण नहीं हुआ; क्योंकि यह लक्षण अन्य द्रव्योंमें भी पाया जाता है ?

समाधान—ऐसा नहीं है; क्योंकि सब पदार्थोंको अवगाह देनेमें साधारण कारण होना
ही आकाशका असाधारण लक्षण है ।

शंका—तब अलोकाकाशमें तो आकाश किसीको अवकाश दान नहीं करता, अतः वहाँ ३०
उसका अभाव मानना होगा ।

समाधान—ऐसा कथन भी ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ भी वह अपना स्वभाव नहीं
छोड़ता । तथा द्रव्योंकी वर्तनाक्रियामें साधनभूत नियमसे कालद्रव्य है ॥६०५॥

अण्णोण्णवयारेण य जीवा वड्ढंति पोग्गलाणि पुणो ।

देहादीणिव्वत्तणकारणभूदा हु णियमेण ॥६०६॥

अन्योन्योपकारेण च जीवा वर्तन्ते पुद्गलाः पुनः । देहादीनां निर्वर्तनकारणभूताः खलु नियमेन ॥

- ५ अन्योन्योपकारविदं स्वामिभृत्यनाचाध्यशिक्षणे दितेवमादिभाविदं वर्तनं परस्परपग्रह-
मक्कुं । अन्योन्योपकारमैबुदक्कुमैबुदत्थमवैतेंदोडे स्वामि ये वं भृत्यरुगळो वित्तत्यागाद्युपकार-
दोळु वर्त्तिसुगुं । भृत्यरुगळु हितप्रतिपादनविदमुपहितप्रतिषेधनविदमुं वर्त्तिसुवरं । आचाध्यनुमु-
भयलोकफलप्रदोपदेशदर्शनविदं तदुपदेशविहितक्रियानुष्ठानविदमुं शिष्यरुगळुपकारदोळु वर्त्तिसुगुं ।
शिष्यरुगळु तदानुकूल्यवृत्तिविदमुपकाराधिकारंगळोळु वर्त्तिसुगुं । इतन्योन्योपकारविदं जीवंगळु
१० वर्त्तिसुववु । च शब्दविदमनुपकारविदमुं वर्त्तिपुषु । अनुभयविदमुं वर्त्तिपुवु । पुद्गलाः पुनर्देहादीनां
खलु निर्वर्तनकारणभूताः नियमेन पुद्गलंगळु मत्ते जीवंगळु देहादिगलनिर्वर्तनकारणभूतंगळुपुवत्तिल-
देहग्रहणविदं कम्मनोकम्मंगळो ग्रहणमक्कुं । नोकम्मंकम्मवाग्मनउच्छ्वासनिश्वासंगळु निर्वर्तन-
कारणभूतंगळु नियमविदं पुद्गलंगळुपुवैबुदत्थमिल्लि पूर्वपक्षमं माडिदपं कम्ममपौद्गलिकमेकेंदोडे
अनाकारत्वविदं । आकारवतंगळुपौदारिकादिगळो पौद्गलिकत्वं युक्तमेदितिदक्कुत्तरमंतत्तेकेंदोडे
१५ कम्ममुं पौद्गलिकमेयक्कुं तद्विपाकक्के मूर्तिमत्संबंधनिमित्तत्वाविदं काणत्पट्टदुवु ग्रीह्यादिगळो
उदकाविद्रव्यसंबंधप्रापितपरिपाकंगळो पौद्गलिकत्वमंते काम्मणमुं लघुडकंठकादिमूर्तिमद्द्रव्योप-

- अन्योन्यमुपकारेण जीवा वर्तन्ते यथा स्वामी भृत्यं वित्तत्यागादिना, भृत्यस्तं हितप्रतिपादनाहित-
प्रतिषेधादिना, आचार्यः शिष्यं उभयलोकफलप्रदोपदेशक्रियानुष्ठानाभ्यां, शिष्यस्तं आनुकूल्यवृत्त्युपकाराधिकारे,
चशब्दात् अनुपकारानुभयाभ्यामपि वर्तन्ते । पुद्गलाः पुनः देहादीनां कर्मनोकर्मवाग्मनउच्छ्वासनिश्वासानां
२० निर्वर्तनकारणभूताः खलु नियमेन भवन्ति । तनु कर्मापौद्गलिकं अनाकारत्वात्—आकारवतामौदारिकादीनामेव
तथात्वं युक्तमिति तन्न, कर्मापि पौद्गलिकमेव लघुडकण्टकादिमूर्तद्रव्यसंबन्धेन पच्यमानत्वात् । उदकादिमूर्त-
द्रव्यसंबन्धेन ग्रीह्यादिवत् । वाक् द्रव्या द्रव्यभावभेदात् । तत्र भाववाग् वीर्यान्तरायमतिश्रुतावरणक्षयोप-

- जीव परस्परमे एक दूसरेका उपकार करते हैं । जैसे स्वामी अपने धन आदिके द्वारा
सेवकका उपकार करता है और सेवक हितकी बात कहने तथा अहितसे रोकने आदिके द्वारा
२५ स्वामीका उपकार करता है । गुरु इस लोक और परलोकमें फल देनेवाले उपदेश तथा
क्रियाके अनुष्ठान द्वारा शिष्यका उपकार करता है और शिष्य गुरुके अनुकूल रहकर उनका
उपकार करता है । पुद्गल शरीर आदि तथा कर्म-नोकर्म, वचन, मन, उच्छ्वास, निश्वास
आदिकी रचनामें नियमसे कारण होते हैं ।

- शंका—कर्म पौद्गलिक नहीं है; क्योंकि उसका कोई आकार नहीं है । आकारवाले
जो औदारिक आदि शरीर हैं, उन्हें ही पौद्गलिक मानना युक्त है ?

- ३० समाधान—नहीं, कर्म भी पौद्गलिक ही है, क्योंकि लाठी, काँटा आदि मूर्तद्रव्यके
सम्बन्धसे ही फल देता है; जैसे पानी आदि मूर्तद्रव्यके सम्बन्धसे पकनेवाले धान मूर्त हैं ।
द्रव्य और भावके भेदसे वाक् दो प्रकार की है । भाववाक् वीर्यान्तराय, मतिज्ञाना-

पातमागुत्तं विरलु विपच्यमानत्वादिदं पौद्गलिकमर्मेदे निश्चैतल्पडुबुदु । वाग् द्विप्रकारमक्कुं द्रव्यवाक्
भाववाक्कोदितल्लि भाववाक्के बुदु वीर्य्यांतरायमतिश्रुतज्ञानावरणक्षयोपशमांगोपांगनामलाभनिमित्त-
त्वादिदं पौद्गलिकेयक्कुमेके'दोडे तदभावमागुत्तिरलु तदवृत्त्यभावमपुदरिदं । तत्सामर्थ्योपेतत्वादिदं
क्रियावतनप्पात्मनिदं प्रेर्यमाणंगळप्प पुद्गलंगळु वाक्त्वादिदं परिणमिसुववे'दितु द्रव्यवाक्कुं
पौद्गलिकेयक्कुं मेके'दोडे श्रोत्रेन्द्रियविषयत्वादिदं इतरेन्द्रियविषयमेनु कारणमागदे'दोडे तद्ग्रहणा- ५
योग्यत्वादिदं घ्राणग्राह्यगंधद्रव्यबोळुरसनाद्यनुपलब्धियंते, अमूर्त्तं वाक्के'देत्तलानुमे'बेयण्पोडे युक्त
मल्लेके'दोडे मूर्त्तिमद्ग्रहणावरोधव्याघाताभिभवादिदर्शनदिदं मूर्त्तिमत्त्व सिद्धियपुदरिदं ।

मनमुं द्विप्रकारमक्कुं द्रव्यभावभेदादिदल्लि भावमनस्से'बुदु लब्ध्युपयोगलक्षणं पुद्गला-
लंबनदिदं पौद्गलिकमक्कुं । द्रव्यमनमुं ज्ञानावरणवीर्य्यांतरायक्षयोपशमांगोपांगनामलाभप्रत्यय-
गळप्प गुणदोषविचारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखनप्पात्मंगनुग्राहकपुद्गलंगळुमनस्त्वादिदं परिण- १०
तंगळे'दितु पौद्गलिकमक्कुं । बोव्वने'दयं :—मनं द्रव्यांतरं रूपादिपरिणमनविरहितमणुमात्र-

शमाङ्गोपाङ्गनामकर्मलाभनिमित्तत्वात् पौद्गलिका तदभावे तदवृत्त्यभावात् । तत्सामर्थ्योपेतत्वेन क्रियावतात्मना
प्रेर्यमाणपुद्गलाः वाक्त्वेन परिणमन्तीति द्रव्यवागपि पौद्गलिकैव श्रोत्रेन्द्रियविषयत्वात् । इतरेन्द्रियविषयापि
कुतो न स्यात् तद्ग्रहणायोग्यत्वात् घ्राणग्राह्ये गन्धद्रव्ये रसनाद्यनुपलब्धिवत् । अमूर्त्ता वाग् इत्यप्ययुक्तं
मूर्त्तग्रहणावरोधव्याघाताभिभवादिदर्शनात् मूर्त्तत्वसिद्धेः । मनोऽपि तथा द्रेशा । तत्र भावमनः लब्ध्युपयोगलक्षणं १५
पुद्गलालम्बनात् पौद्गलिकम् । द्रव्यमनोऽपि ज्ञानावरणवीर्य्यान्तरायक्षयोपशमाङ्गोपाङ्गनामकर्मलाभप्रत्यय-
गुणदोषविचारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखस्यात्मनोऽनुग्राहकपुद्गलानां तथात्वेन परिणमनात् पौद्गलिकम् ।
कश्चिदाह—मनः द्रव्यान्तरं रूपादिपरिणमनविरहितमणुमात्रं, पौद्गलिकं न । आचार्य आह—तेन आत्मनः

वरण और श्रुतज्ञानावरणके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामक कर्मके उदयके निमित्तसे होनेसे
पौद्गलिक है । उसके अभावमें भाववचन—बोलनेकी शक्ति नहीं होती । भाववचनकी २०
शक्तिसे युक्त क्रियावान् आत्माके द्वारा प्रेरित पुद्गल वचन रूप परिणत होते हैं, इसलिए
द्रव्यवाक् भी पौद्गलिक ही है, क्योंकि श्रोत्र इन्द्रियका विषय है ।

शंका—जब वचन पौद्गलिक है, तो अन्य इन्द्रियोंका भी विषय क्यों नहीं है ?

समाधान—वह अन्य इन्द्रियोंसे ग्रहण करनेके अयोग्य है ; जैसे घ्राण इन्द्रियसे ग्राह्य
सुगन्धित द्रव्यमें रसना आदि इन्द्रियोंकी प्रवृत्ति नहीं होती । २५

वचन अमूर्त्तिक है, ऐसा कहना भी अयुक्त है, क्योंकि मूर्त्त इन्द्रियके द्वारा शब्दका
ग्रहण होता है, मूर्त्त दीवार आदिसे रोका जाता है, मूर्त्त पदार्थसे टकराता है तथा बहुत
तीव्र शब्दसे मन्द शब्द दब जाता है, इससे वचन मूर्त्तिक सिद्ध होता है । मन भी दो प्रकार-
का है—भावमन और द्रव्यमन । भावमन लब्धि और उपयोग लक्षणवाला है । वह पुद्गलके
अवलम्बनसे होता है, इसलिए पौद्गलिक है । द्रव्यमन भी पौद्गलिक है, क्योंकि ज्ञानावरण ३०
और वीर्यान्तरायके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामक कर्मके उदयसे जब आत्मा गुण-दोषके
विचार, स्मरण आदिके अभिमुख होता है, तो उसके उपकारी पुद्गल मन रूपसे परिणमन
करते हैं, इसलिए पौद्गलिक है । किसीका कहना है—मन एक पृथक् द्रव्य है, उसमें रूपादि

मदक्के पौद्गलिकत्वमयुक्तमेदितु येदोडाचार्यनेदपं—आ इन्द्रियदोडनात्मंगे संबंधमुंदो मेणु संबंधमित्तमो ? येत्तलानुं संबंधमित्तलेबेयणोडदत्तेकेदोडे आत्मंगुपकारमागतवेळकुमाउपकारमं माडदु इन्द्रियक्कं साचिव्यमं सचिवत्तमुमं माडदु अथवा संबंधमुंदेबेयणोडे एकप्रदेशसंबंधमणु-
 ५ मुंदे बेयणोडदुवुं संभविसदेकेदोडे अणुमात्रक्के तत्सामर्थ्याभावमणुदरिदं ।

अमूर्तनप्पात्मंगे निष्क्रियंगे अदृष्टमप्य गुणमन्यत्रक्रियारंभदोळु समर्थमस्तु अहंगे काण-
 ल्पट्टदु । वायुद्रव्यविशेषं क्रियावतंमुं स्पर्शवतंमुं प्राप्तमाडदु वनस्पतियोळु परिस्पंदहेतुवक्कुं
 तद्विपरीतलक्षणमी यणुमेदितु क्रियाहेतुत्वाभावमक्कुं । वीर्यान्तरायज्ञानावरणक्षयोपमांगोपांग-
 नामोदयापेक्षादिदमात्मनिदुदस्यमानकण्यमप्य वायुउच्छ्वासलक्षणमप्युदु प्राणमेदु पेळल्पट्टदु । आ
 १० वायुविदमेयात्मंगे पोरगण वायुवनभ्यंतरीक्रियमाणनिश्वासलक्षणमपानमेदु पेळल्पट्टदु । इता
 येरडुमात्मंगे अनुप्राहिगळप्युवेकेदोडे जीवितहेतुत्वादिदमा मनःप्राणापानंगळो मूर्तिमत्वमरियल्प-
 डुयुदेकेदोडे प्रतिघातादिदर्शनदिदं प्रतिभयहेतुगळप्पज्ञानिपातादिगळिदं मनक्के प्रतिघातं काण-
 ल्पट्टदु । सुरादिगळि स्वादिगळिदमप्य पूतिगंधिप्रतिभयादिदं हस्ततलपुटादिगळिदमास्यसंवरणदिदं

सम्बन्धः स्यात् न वा ? यदि न, तन्न आत्मनः उपकारेण भाव्यं तन्नोपकुर्वीत, इन्द्रियस्य साचिव्यं सचिवत्वं
 १५ न कुर्यात् । अथ स्यात्, तदा एकदेशसम्बन्धेन सोऽणुः इतरप्रदेशेषु नोपकुर्यात् । अथादृष्टवशेन तस्यालातचक्र-
 वत्परिभ्रमणं तदप्यसंभाव्यं, अणुमात्रस्य तत्सामर्थ्याभावात्, अमूर्तस्य आत्मनो निष्क्रियस्यादृष्टगुणः अन्यत्र
 क्रियारंभे समर्थो न । वायुद्रव्यं हि क्रियावत् स्पर्शवत् प्राप्तवनस्पती परिस्पन्दहेतुः तद्विपरीतलक्षणोऽयमणु-
 स्तादृक् क्रियाहेतुर्न स्यात् । वीर्यान्तरायज्ञानावरणक्षयोपशमाङ्गोपांगनामोदयापेक्षेणात्मनोदस्यमानकण्यवायुः
 उच्छ्वासलक्षणः स प्राणः । तेनैव वायुना आत्मनो बाह्यवायुरभ्यन्तरीक्रियमाणो निश्वासलक्षणः अपानः ।
 २० तो च आत्मनोऽनुप्राहिणौ जीवितहेतुत्वात्, ते च मनःप्राणापाना मूर्तिमन्तः, मनसः प्रतिभयहेतवश्च निपातादिभिः

नहीं है तथा वह परमाणु बराबर है, पौद्गलिक नहीं है । आचार्य कहते हैं—उस अणुरूप
 मनका सम्बन्ध आत्माके साथ है या नहीं है । यदि नहीं है, तो वह आत्माका उपकार नहीं
 कर सकता और न इन्द्रियोंकी ही सहायता कर सकता है । यदि सम्बन्ध है, तो उस अणु-
 रूप मनका सम्बन्ध आत्माके एक देशके साथ ही हो सकता है और ऐसी स्थितिमें वह
 २५ अन्य प्रदेशोंमें उपकार नहीं कर सकता । यदि कहोगे कि अदृष्टवश वह अणुरूप मन समस्त
 आत्मामें अलातचक्रकी तरह भ्रमण करता है, इससे उसका सर्वत्र सम्बन्ध होता है, तो वह
 भी सम्भव नहीं है, क्योंकि अणुमात्र मनमें ऐसी सामर्थ्यका अभाव है । तथा अमूर्त और
 क्रियारहित आत्माका गुण अदृष्ट अन्यमें क्रिया करानेमें समर्थ नहीं है । वायु क्रियावान् और
 स्पर्शवान् होनेसे प्राप्त वृक्षादिमें हलनचलन करनेमें कारण होती है । किन्तु यह अणुरूप
 ३० मन तो उससे विपरीत लक्षणवाला है, इसलिए उस प्रकारकी क्रियामें हेतु नहीं हो सकता ।
 वीर्यान्तराय और ज्ञानावरणके क्षयोपशम और अंगोपांग नामकर्मके उदयकी अपेक्षासे
 आत्माके द्वारा जो अन्दरकी वायु बाहर निकाली जाती है, उसे उच्छ्वास रूप प्राण कहते
 हैं । और उसी आत्माके द्वारा जो बाहरकी वायु भीतरकी ओर ली जाती है, उसे निश्वास
 रूप अपान कहते हैं । ये प्राण अपान भी आत्माके उपकारी हैं, क्योंकि उसके जीवनमें हेतु
 ३५ होते हैं । वे मन, प्राण अपान मूर्तिमान हैं, क्योंकि भयके हेतु वज्रपात आदिसे मनका, और

प्राणापानगच्छे प्रतिघातं पड्येत्पट्टदुः, श्लेष्मदिदं मेणु अभिभवं काणलपट्टदुः । अमूर्तकं मूर्तिमत्तु-
गळिदभिघातादिगळागवु । अदु कारणदिदमे आत्मास्तित्वसिद्धियक्कुमे तीगळे तिलयानुं प्रतिमा-
चेष्टितं प्रयोक्तृलिंगस्तित्वमनरिपुगुमंते प्राणापानादिव्यापारमुं क्रियावतनत्पात्मनं साधिसुगुमि-
वल्लदेयुं मत्ते केलवुं जीवितमरणसुखदुःखनिर्वर्तनकारणभूतंगळु पुद्गलंगळपुवु । सदसद्वेद्यो-
दयमंतरंगहेतुवुंटागुत्तिरलु बाह्यद्रव्यादिपरिपाकनिमित्तवशदिदमुत्पद्यमानप्रोतिपरितापरूपपरिणामं ५
सुखदुःखमेदु पेळलपट्टदुः । भवधारणकारणाधुराख्यकर्मोदयदिदं भवस्थितियं धरिसिद जीवकं
पूर्वोक्तिप्राणपानक्रियाविशेषाव्युच्छेदं जीवितमेदु पेळलपट्टदुः, तदुच्छेदं मरणमेदु पेळलपट्टदुः ।
ई सुखादिगळु जीवकं पुद्गलंगळिदमे संभविसुववु । मूर्तिमद्वेतु सन्निधानमागुत्तिरलु तदुत्पत्ति-
युंटापुद्वरिदं । केवलं जीवगळ शरीरादिनिर्वर्तनकारणभूतंगळु पुद्गलंगळे बुदिल्ल । पुद्गलकं
पुद्गलंगळु निर्वर्तनहेतुगळपुवु । कांस्यादिगळगे भस्मादिगळिदं जलादिगळगे कतकादिगळिदं १०
अयःप्रभृतिगळगे जलादिगळिदं उपकारं माडलपट्टदुः काणलपडुगुमपुद्वरिदं । इंतु औदारिक-
वैक्रियिक आहारकशरीरनामकर्मोदयदिदमा मूहं शरीरंगळु मुच्छ्वासनिश्वासमुमाहारवर्गणे-
यिनपुवु । तैजसशरीरनामकर्मोदयदिदं तेजोवर्गणेयिदं तैजसशरीरमक्कुं । काम्मर्णशरीरनाम-

प्राणापानयोश्च श्वादिपूतिगन्धिप्रतिभयेन हस्ततलपुटादिभिरास्थसंवरणेन श्लेष्मणा वा प्रतिघातदर्शनात्,
अमूर्तस्य मूर्तिमद्भिस्तदसंभवाच्च । तत एव प्राणापानादिव्यापारादात्मनोऽस्तित्वसिद्धिः प्रयोक्तुरभावे १५
प्रतिमाचेष्टितस्येव आत्माभावे तदघटनात् । तथा सदसद्वेद्योदयान्तरङ्गहेतौ सति बाह्यद्रव्यादिपरिपाकनिमित्त-
वशेन उत्पद्यमानप्रोतिपरितापरूपपरिणामौ सुखदुःखे । आयुस्त्वयेन भवस्थिति विभ्रतः प्राणापानक्रियाविशेषा-
व्युच्छेदो जीवितं, तदुच्छेदो मरणम् । तान्यपि पौद्गलिकानि मूर्तिमद्वेतुसन्निधाने सति तदुत्पत्तिसंभवात् ।
न केवलं जीवशरीरादीनामेव निर्वर्तनकारणभूताः पुद्गलाः पुद्गलादीनामपि कांस्यादीनां भस्मादीभिः
जलादीनां कतकादिभिः अयःप्रभृतीनां जलादिभिश्च उपकारदर्शनात् । एवमौदारिकवैक्रियिकाहारकनामकर्मोदयात् २०
आहारवर्गणायास्तानि त्रीणि शरीराणि उच्छ्वासनिश्वासां च । तैजसनामकर्मोदयात् तेजोवर्गणया तैजसशरीरम् ।

दुर्गन्ध आदिके भयसे हथेली आदिसे मुखको बन्द कर लेनेसे तथा जुकामसे प्राण अपानका
प्रतिघात देखा जाता है । अमूर्तका मूर्तिमानके द्वारा प्रतिघात सम्भव नहीं है । उसी प्राण
अपान आदि की क्रियासे आत्माके अस्तित्वकी सिद्धि होती है । जैसे प्रयोक्ताके अभावमें
यन्त्रादि मशीनमें क्रिया सम्भव नहीं है । तथा साता-असाता वेदनीयके उदयरूप अन्तरंग २५
कारणके होनेपर बाह्य द्रव्यादिके परिपाकके निमित्तसे जो प्रीतिरूप या सन्तापरूप परिणाम
उत्पन्न होता है, उसे सुख और दुःख कहते हैं । आयुर्कर्मके उदयसे भवमें स्थिति करते हुए
श्वास-उच्छ्वास आदि क्रिया विशेषका होते रहना जीवन है और उसका छेद होना मरण
है । ये भी पौद्गलिक हैं, क्योंकि मूर्तिमान् कारणोंके होनेपर सुखादिकी उत्पत्ति होती है ।
पुद्गल केवल जीवोंके ही शरीरादिकी रचनामें कारण नहीं हैं, पुद्गल पुद्गलोंका भी उपकार ३०
करते हैं । भस्मसे कांसीके बरतन आदि, निर्मली आदिसे जलादि तथा जलादिसे लोहा आदि
स्वच्छ होते हैं । इसी प्रकार औदारिक, वैक्रियिक और आहारक नामकर्मके उदयसे आहार-
वर्गणाके रूपमें आये तीन शरीर और उच्छ्वास-निश्वास, तैजस नामकर्मके उदयसे

कर्मोदयदिदं कार्मणवर्गणोपिदं कार्मणशरीरमकुं । स्वरनामकर्मोदयदिदं भाषावर्गणोपिदं वचनमकुं । नोइन्द्रियावरणक्षयोपशमोपेतमप्य संज्ञिजीवकङ्गोपांगनामोदयदिदं मनोवर्गणोपिदं द्रव्यमनमकुमेबुदत्थं । ई यत्थमं मुदण सूत्रद्वयदिदं पेळवपं ।

आहारवर्गणादो तिण्णि सरीराणि होति उस्सासो ।

५

णिस्सासो वि य तेजोवर्गणखंधा दु तेजंगं ॥६०७॥

आहारवर्गणायास्त्रीणि शरीराणि भवन्ति उच्छ्वासो । निश्वासोपि च तेजोवर्गणास्कंधा-
त्तैजसांगं ॥

औदारिकवैक्रियकाहारकमेबी मूर शरीरंगलु उच्छ्वासनिश्वासंगलुमाहारवर्गणोपिद-
मपुवु । तेजोवर्गणास्कंधदिदं तैजसशरीरमकुं ।

१०

भासमणवर्गणादो कमेण भासा मणं तु कम्मादो ।

अट्टविहकम्मदव्वं होदित्ति जिणेहि णिदिदं ॥६०८॥

भाषाभनोवर्गणातः क्रमेण भाषाभनस्तु कार्मणात् । अष्टविधकर्मद्रव्यं भवतीति जिनै-
र्निर्दिष्टं ॥

भाषावर्गणास्कंधंगळिदं चतुर्विधभाषेयकुं । मनोवर्गणास्कंधंगळिदं द्रव्यमनमकुं ।

१५ कार्मणवर्गणास्कंधंगळिदं अष्टविधकर्मद्रव्यमकुमेदितु जिनस्वामिगळिदं पेळस्पदुदु ।

णिद्वत्तं लुक्खत्तं बंधस्स य कारणं तु एयादी ।

संखेज्जाऽसंखेज्जाणंतविहा णिद्वलुक्खगुणा ॥६०९॥

स्निग्धत्वं रुक्षत्वं बंधस्य कारणं त्वेकादयः । संख्येयाऽसंख्येयानंतविधाः स्निग्धरुक्षगुणाः ॥

कार्मणनामकर्मोदयात् कार्मणवर्गणया कार्मणशरीरम् । स्वरनामकर्मोदयाद् भाषावर्गणया वचनं, नोइन्द्रिया-
२० वरणक्षयोपशमोपेतसंज्ञिनोऽङ्गोपाङ्गनामकर्मोदयात् मनोवर्गणया द्रव्यमनश्च भवतीत्यर्थः ॥६०६॥ अमुमेवायं
सूत्रद्वयेनाह—

औदारिकवैक्रियकाहारकनामानि त्रीणि शरीराणि उच्छ्वासनिश्वासी च आहारवर्गणया भवन्ति ।
तेजोवर्गणास्कन्धैः तेजःशरीरं भवति ॥६०७॥

भाषावर्गणास्कन्धैश्चतुर्विधभाषा भवन्ति । मनोवर्गणास्कन्धैः द्रव्यमनः, कार्मणवर्गणास्कन्धैराष्टविधं
२५ कर्मेति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६०८॥

तैजस वर्गणासे तैजस शरीर, कार्मण नामकर्मके उदयसे कार्मणवर्गणासे कार्मणशरीर,
स्वरनामकर्मके उदयसे भाषावर्गणासे वचन और नोइन्द्रियावरणके क्षयोपशमसे युक्त संज्ञीके
अङ्गोपांगनामकर्मके उदयसे मनोवर्गणासे द्रव्यमन बनता है ॥६०६॥

इसी अर्थको दो गाथाओंसे कहते हैं—

३० आहारवर्गणासे औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीन शरीर और उच्छ्वास-
निश्वास होते हैं । तैजसवर्गणाके स्कन्धोंसे तैजसशरीर होता है ॥६०७॥

भाषावर्गणाके स्कन्धोंसे चार प्रकारकी भाषा होती है । मनोवर्गणाके स्कन्धोंसे द्रव्य-
मन होता है और कार्मणवर्गणाके स्कन्धोंसे आठ प्रकारके कर्म होते हैं, ऐसा जिनदेवने
कहा है ॥६०८॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

बाह्य और अभ्यन्तर कारणके वशसे स्नेह पर्यायके प्रकट होनेसे स्नेहपन होना स्निग्ध है। उसके भावको स्निग्धता कहते हैं, जिसका अर्थ चिक्कणता है। रूखापनसे रूक्ष है। उसका भाव रूक्षता है। उसका अर्थ चिक्कणतासे विपरीत होना है। जल तथा बकरी, गाय, भैंस, ऊँटनीके दूध-धी आदिमें स्निग्धता व धूलि, रेत, बजरी आदिमें रूक्षता हीनाधिक रूपसे देखी जाती है। इसी तरह परमाणुओंमें भी होती है। वह स्निग्धता और रूक्षता द्व्यणुक आदि पर्याय परिणमनरूप बन्धका और 'च' शब्दसे बन्धके भेदनका कारण है। स्निग्धगुणरूप परिणत दो परमाणुके रूक्षगुणरूप परिणत दो परमाणुके और एक स्निग्ध तथा एक रूक्षगुणरूप परिणत परमाणुके परस्परमें मिलने रूप बन्धके होनेपर द्व्यणुक स्कन्ध बनता है। इसी प्रकार संख्यात, असंख्यात और अनन्तप्रदेशी स्कन्ध भी जानना। उनमेंसे स्नेहगुण एक, दो, तीन, चार, संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रकारका होता है। इसी तरह रूक्षगुण भी होता है ॥६०९॥

१-२. स० पुष्पा ।

एयगुणं तु जहण्णं णिद्वत्तं विगुणतिगुणसंखेज्जा- ।

संखेज्जाणंतगुणं होदि तहा रुक्खभावं च ॥६१०॥

एकगुणस्तु जघन्यं स्निग्धत्वं द्विगुणत्रिगुणसंखेयासंखेयानंतगुणो भवति तथा रुक्खभावश्च ॥

आ स्निग्धत्वगुणवलिद्योळु तु मत्ते एकगुणमप्य स्निग्धत्वं जघन्यमवकुमदादियागि द्विगुण-

५ त्रिगुण संखेयासंखेयानंतगुणमवकुमते रुक्खत्वमुमरियत्पडुगुं ।

एवं गुणसंयुक्ता परमाणू आदिवर्गगणग्निह ठिया ।

जोगदुगाणं बंधे दोण्हं बंधो हवे णियमा ॥६११॥

एवं गुणसंयुक्ताः परमाणवः आदिवर्गणायां स्थिताः । योग्यद्विकानां बंधे द्वयोर्बन्धो भवेन्नियमात् ॥

१० ई पेळत्पट्ट स्निग्धरुक्खगुणसंयुक्तंगळप्प परमाणुगळु मोदल अणुवर्गगणेद्योळिरुत्तिरत्पट्टुवु । योग्यद्विकंगळगे बंधमप्येड्योळा एरडक्कं बंधं नियमदिदमक्कुं । स्निग्धरुक्खत्वगुणनिमित्तमप्य बंधमविशेषदिद प्रसक्तमादोडे अनिष्टगुणनिवृत्तिपूर्वकं विधियिसिदपल ।

णिद्वणिद्धा ण बज्झंति रुक्खरुक्खा य पोग्गला ।

णिद्वलुक्खा य बज्झंति रुवारुवी य पोग्गला ॥६१२॥

१५ स्निग्धस्निग्धा न बध्यंते रुक्खरुक्खाश्च पुद्गलाः । स्निग्धरुक्खाश्च बध्यंते रूप्यरूपिणश्च पुद्गलाः ॥

स्निग्धगुणपुद्गलंगळोडने स्निग्धगुणपुद्गलंगळु बंधमागल्पडवु । रुक्खगुणपुद्गलंगळोडने रुक्खगुणपुद्गलंगळुमते बंधमागल्पडवु । इदुरसर्गविधियक्कुमेकेदोडे विशेषविधियुं मुंदे पेळत्पट्ट-पुदप्पुदरिदं स्निग्धगुणपुद्गलंगळोडने रुक्खगुणपुद्गलंगळु बंधमागल्पडुवत्तप्य पुद्गलंगळु रूपि-

२० स्निग्धगुणावल्यां तु पुनः एकगुणं स्निग्धत्वं जघन्यं स्यात् । तदादि कृत्वा द्विगुणत्रिगुणसंखेयासंखेया-नस्तगुणं भवति तथा रुक्खत्वमपि ॥६१०॥

एवं स्निग्धरुक्खगुणसंयुक्ताः परमाणवः अणुवर्गणायां तिष्ठति योग्यद्विकानां बन्धस्थाने तयोरेव द्वयोर्बन्धो नियमेन भवति ॥६११॥ स्निग्धरुक्खगुणनिमित्तं बन्धस्याविशेषेण प्रसक्तावनिष्टगुणनिवृत्तिपूर्वकं विधिं करोति—

२५ स्निग्धगुणपुद्गलैः स्निग्धगुणपुद्गलाः न बध्यन्ते । तथा रुक्खगुणपुद्गलैः रुक्खगुणपुद्गला न बध्यन्ते, अयमुत्सर्गविधिः । विशेषविधेर्वध्यमानत्वात् । स्निग्धगुणपुद्गलैः रुक्खगुणपुद्गलाः बध्यन्ते ते च पुद्गलाः

स्निग्ध गुणकी पंक्तिमें एक गुण स्निग्धताको जघन्य कहते हैं । उससे लेकर दो गुण, तीन गुण, संख्यात गुण, असंख्यात गुण और अनन्त गुण रूप स्निग्ध गुण होता है । इसी प्रकार रुक्खगुण भी जानना ॥६१०॥

३० इस प्रकारके स्निग्ध और रुक्खगुणोंसे संयुक्त परमाणु अणुवर्गणामें विद्यमान हैं । उनमें-से योग्य दो परमाणुओंके बन्धस्थानको प्राप्त होनेपर उन्हीं दोका बन्ध होता है ॥६११॥

स्निग्ध और रुक्ख गुणके निमित्तसे सर्वत्र बन्धका प्रसंग प्राप्त होनेपर अनिष्ट गुणवालोंके बन्धका निषेध करते हुए बन्धका विधान करते हैं—स्निग्धगुण युक्त पुद्गलोंके साथ स्निग्ध गुण युक्त पुद्गलोंका बन्ध नहीं होता । तथा रुक्ख गुण युक्त पुद्गलोंके साथ रुक्ख गुण युक्त

गळुमरुपिगळुमेंब पेसरनुळळवप्पुवु । आ रूप्यरुपिगळं पेळ्ळधं :—

णिद्धिदरोलीमज्जे विसरिसजादिस्स समगुणं एकं ।

रुवित्ति होदि सण्णा सेसाणं ता अरुवित्ति ॥६१३॥

स्निग्धेतरावलिमध्ये विसदृशजात्याः समगुण एकः । रूपीति संज्ञा भवति शेषानंताः अरूपिण इति ॥

स्निग्धरुक्षगुणावलिगळ मध्यदोळु विसदृशजातियप्पुदरसमानगुणमनुळदोदे रुपियेदितु संज्ञेयनुळळुदक्कुमदल्लदुळिदेल्ला विकल्पंगळुमदक्करुपिगळेंदितु संज्ञेगळपुवु । अदेतंदोडे :—

दोगुणणिद्धाणुस्स य दोगुणळक्खाणुगं हवे रूवो ।

इगितिगुणादि अरूवी रुक्खस्स वि तं व इदि जाणे ॥६१४॥

द्वितीयो गुणो यस्य अथवा द्वौ गुणौ यस्य यस्मिन् वा स द्विगुणः स्निग्धाणोश्च द्विगुण- १०
रुक्षाणुं भवेद्वी । एकत्रिगुणादयोऽरूपिणः रुक्षस्यापि तद्वदिति जानीहि ॥

द्वितीयगुणमनुळळ अथवा येरडुगुणमनुळळ स्निग्धगुणाणुविगे विसदृशजातियप्पु द्विगुण-
रुक्षाणु रुपियेदु पेसरनुळळुदक्कुमुळिदेकत्रिगुणादिसर्वरुक्षाणुगळु अरूपिगळेंदु पेसरक्कुमी
प्रकारदिदं द्विगुणरुक्षाणुविगे द्विगुणस्निग्धाणुरूपियक्कुमदल्लदुळिदेकत्रिगुणादिसर्वस्निग्धाणु
विकल्पंगळनंतगळऽरूपिगळेंदु एले शिष्य ! नीनरि ।

१५

रूपीत्यरूपीतिनामानो भवन्ति ॥६१२॥ तानेव लक्षयति—

स्निग्धरुक्षगुणावत्योर्मध्ये विसदृशजातेः समानगुणः एकः रूपीति संज्ञो भवति । शेषाः सर्वे अरूपीति
संज्ञा भवन्ति ॥६१३॥ तदेवोदाहरति—

द्वितीयो गुणो द्वौ गुणौ वा यस्य यस्मिन् वा द्विगुणः तस्य द्विगुणस्य स्निग्धाणोः द्विगुणरुक्षाणुः
रूपीतिनामा भवेत् । शेषैकत्रिगुणादयः सर्वे रुक्षाणवः अरूपीतिनामानो भवन्ति । एवं द्विगुणरुक्षाणोद्विगुण- २०
स्निग्धाणुः रूपी शेषैकत्रिगुणादिसर्वस्निग्धाणवः अरूपीति नामानः इति जानीहि ॥६१४॥

पुद्गलोंका बन्ध नहीं होता — यह कथन सामान्य है; विशेष विधि कहेंगे । स्निग्ध गुण
युक्त पुद्गलोंके साथ रुक्षगुण युक्त पुद्गल बँधते हैं । और उन पुद्गलोंका नाम रूपी और
अरूपी है ॥६१२॥

उन्हींका लक्षण कहते हैं—

स्निग्धगुण और रुक्षगुणोंकी पंक्तियोंके मध्यमें विजातिके समान गुणवाले एक
परमाणुको रूपी नामसे कहते हैं । शेष सबकी अरूपी संज्ञा है ॥६१३॥

उसीका उदाहरण देते हैं—

जिसका दूसरा गुण है या जिसमें दो गुण हैं, उसे द्विगुण कहते हैं । उस दो गुण
स्निग्धवाले परमाणुका दो गुण रुक्षवाला परमाणु रूपी कहलाता है । शेष एक, तीन आदि ३०
रुक्ष गुणवाले सब परमाणु अरूपी नामवाले होते हैं । इसी प्रकार दो गुण रुक्षवाले परमाणुका
दो गुण स्निग्धवाला परमाणु रूपी है । शेष एक, तीन आदि गुणवाले सब स्निग्ध परमाणु
अरूपी जानना ॥६१४॥

२५

णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिण लुक्खस्स लुक्खेण दुराहिण ।

णिद्धस्स रुक्खेण हवेज्ज बंधो जहण्णवज्जे विसमे समे वा ॥६१५॥

स्निग्धस्य स्निग्धेन द्व्यधिकेन रुक्षस्य रुक्षेण द्व्यधिकेन । स्निग्धस्य रुक्षेण भवेद्बन्धो जघन्यवज्ज्ये विषमे समे वा ॥

- ५ स्निग्धपरमाणुविगे द्विगुणाधिकस्निग्धपरमाणुविनोदने बंधमक्कुमंते रुक्षाणुविगे द्विगुणाधिकरुक्षाणुविनोदने बंधमक्कुं । स्निग्धाणुविगे द्विगुणाधिकरुक्षाणुविनोदने बंधमक्कुमल्लि स्निग्ध-रुक्षगुणगळ परमाणुगळोळु जघन्यमप्पेकगुणयुतपरमाणुगळं वज्जिसि शेषसमस्निग्धधारियोळं समरुक्षधारियोळं विषमस्निग्धधारियोळं विषमरुक्षधारियोळं तंतम्म तदनंतरोपरितनद्व्यधिक-स्निग्धरुक्षगळो बंधमक्कुं । संदृष्टिः—

स्नि	०	२	४	६	८	१०	१२	००	७००	००	ख
रु	०	२	४	६	८	१०	१२	००	७००	००	ख
स्नि	०	३	५	७	९	११	१३	००	७००	००	ख
रु	०	३	५	७	९	११	१३	००	७००	००	ख

- १० इल्लि सदृशगुणयुक्तरूपियोदने रूपिगे बंधमिल्ल । समगुणयुक्तगळिगे विषमगुणयुक्त-गळोदने बंधमिल्ले बो विशेषमरियत्पडुगुमेके दोडे अवरोळु द्व्यधिकत्वं घटियिसदप्पुदरिदं ।

स्निग्धाणोः द्विगुणाधिकस्निग्धाणुना बन्धो भवति । तथा रुक्षाणोः द्विगुणाधिकरुक्षाणुना बन्धो भवति । स्निग्धाणोः द्विगुणाधिकरुक्षाणुना बन्धो भवति । तत्र स्निग्धरुक्षगुणपरमाणुषु जघन्यं एकगुणपरमाणुं वर्जयित्वा शेषाणां समस्निग्धरुक्षधारयोविषमस्निग्धरुक्षधारयोश्च स्वस्वतदनन्तरोपरितनद्व्यधिकस्निग्ध-

- १५ रुक्षाणूनां बन्धो भवति । अत्र सदृशगुणरूपिणा रूपिणः, समगुणाणां विषमगुणैश्च बन्धो नेति विशेषो ज्ञातव्यः, तेषु द्व्यधिकगुणत्वाभावात् ॥६१५॥

- स्निग्ध परमाणुका दो गुण अधिक स्निग्ध परमाणुके साथ बन्ध होता है । उसी प्रकार रुक्ष परमाणुका दो गुण अधिक रुक्ष परमाणुके साथ बन्ध होता है । स्निग्ध परमाणुका दो गुण अधिक रुक्ष परमाणुके साथ बन्ध होता है । उन स्निग्ध गुणवाले और रुक्ष गुणवाले २० परमाणुओंमें जघन्य एक गुणवाले परमाणुको छोड़कर शेष समस्निग्ध धारा और सम रुक्ष धारामें तथा विषम स्निग्ध धारा और विषम रुक्ष धारामें अपने-अपनेसे अनन्तरवर्ती दो अधिक स्निग्ध और रुक्ष गुणवाले परमाणुओंका बन्ध होता है । यहाँ इतना विशेष जानना कि सदृश गुणवाले रूपीका सदृश गुणवाले रूपीके साथ तथा समगुणवालोंका विषम गुण-वालोंके साथ बन्ध नहीं होता । अर्थात् दोका दो गुणवालेके साथ या दो गुणवालेका पाँच २५ गुणवालेके साथ बन्ध नहीं होता; क्योंकि यहाँ दो अधिक गुणका अभाव है ॥६१५॥

णिद्धिदरे समविसमा दोत्तिगआदीदुउत्तरा होंति ।

उभयेवि य समविसमा सरिसिदरा होंति पत्तेयं ॥६१६॥

स्निग्धेतरयोः समविषमौ द्वित्र्यादिव्युत्तरौ भवतः । उभयस्मिन्नपि च समविषमौ सदृशे-
तरौ भवतः प्रत्येकं ॥

स्निग्धरुक्षगुणंगळ समपंक्तिद्वयांकंगळं विसमपंक्तिद्वयांकंगळं प्रत्येकं द्वित्र्यादिव्युत्तरंगळ- ५
पुवा उभयदोळं समविषमौ रूप्यरूपिगळु सदृशांकंगळुमसदृशांकंगळुमपुवदेते दोडे :— स्निग्ध-
रुक्षसमांकपंक्तिद्वयद एरडक्केरडु नाल्कक्के नाल्कु आरक्कारु एंटक्केटु पत्तक्के पत्तु पन्नेरडक्के
पन्नेरडु मोदलागि संख्यातासंख्यातानंतगुणयुतंगळु रूपिगळु परस्परं, आ स्निग्धरुक्षविषमांक
पंक्तिद्वयद मूरक्के मूरु, अय्दक्कय्दु, एळक्केळु, ओंभतक्के वोंभतु, पन्नोदक्के पन्नोदु, पदि-
मूरक्के पदिमूरु इवु मोदलागि संख्यातासंख्यातानंतगुणंगळु परस्परं रूपिगळुमी सदृशंगळितरं- १०
गळु । एरडुनाल्कारेडु पत्तु पन्नेरडु मोदलागि संख्यातासंख्यातानंतगळेल्लमरूपिगळु । मूरदेळु
ओंभतु पन्नोदु पदिमूरु मोदलागि संख्यातासंख्यातानंतगळेल्लमरूपिगळु । प्रत्येकं स्निग्धदोळं
रुक्षदोळं रूपिगळगे बंधमिल्ल । तत्त्वार्थदोळमंते “गुणसाम्ये सदृशानामे”दितु पेळल्पट्टुदु ।

अरूपिगळगे बंधमुंडु स्वस्थानदोळं परस्थानदोळं ई यत्थमने प्रकारांतरदिदं पेळ्दपरः—

स्निग्धरुक्षगुणानां समपंक्तिद्वयाङ्काः विषमपंक्तिद्वयाङ्काश्च प्रत्येकं द्वित्र्यादिव्युत्तरा भवन्ति । ते १५
उभयेऽपि अंकाः समविषमाः रूप्यरूपिणः सदृशाङ्काः असदृशाङ्का भवन्ति । यथा स्निग्धरुक्षसमाङ्कपंक्तयोः
द्वयस्य द्वयं चतुष्कस्य चतुष्कं षट्कस्य षट्कं अष्टकस्य अष्टकं दशकस्य दशकं द्वादशकस्य द्वादशकं एवमादि-
संख्यातासंख्यातानन्तगुणयुताः, तद्विषमाङ्कपंक्तयोः त्रयस्य त्रयं पञ्चकस्य पञ्चकं सप्तकस्य सप्तकं नवकस्य
नवकं एकादशकस्य एकादशकं त्रयोदशकस्य त्रयोदशकं एवमादिसंख्यातासंख्यातानन्तगुणयुताश्च परस्परं
रूपिणः । शेषाः द्वित्र्युःषडष्टदशद्वादशादिसंख्यातासंख्यातानन्ताः । त्रिपञ्चसप्तनवैकादशत्रयोदशादिसंख्याता- २०
संख्यातानन्ताश्चारूपिणः । प्रत्येकं स्निग्धे रुक्षे च रूपिणां बन्धो नास्ति । तत्त्वार्थेऽपि ‘गुणसाम्ये सदृशानां’ इति
तथैव वचनात् । अरूपिणां बन्धः स्यात् स्वस्थाने परस्थानेऽपि ॥६१६॥ अमुमेवार्थं प्रकारान्तरेणाह—

स्निग्ध और रुक्ष गुणवालोंमें-से प्रत्येकमें दोको लेकर दो गुण अधिक होनेपर सम-
पंक्ति और तीनको लेकर दो गुण अधिक होनेपर विषम पंक्ति होती है । वे दोनों ही सम २५
और विषम रूपी और अरूपी होते हैं । जैसे स्निग्ध और रुक्ष सम अंकवाली पंक्तियोंमें दो
का दो, चारका चार, छहका छह, आठका आठ, दसका दस, बारहका बारह रूपी है । इसी-
प्रकार संख्यात, असंख्यात, अनन्तगुण पर्यन्त जानना । विषम अंकवाली पंक्तियोंमें तीनका २५
तीन, पाँचका पाँच, सातका सात, नौका नौ, ग्यारहका ग्यारह, तेरहका तेरह, इसी तरह
संख्यात, असंख्यात और अनन्त गुणवाले परमाणु परस्परमें रूपी हैं । इनके सिवाय शेष अरूपी
हैं । प्रत्येक स्निग्ध और रुक्षमें रूपीका बन्ध नहीं होता है । तत्त्वार्थ सूत्रमें भी कहा है कि ३०
गुणोंकी समानतामें सदृशोंका बन्ध नहीं होता । अरूपियोंका बन्ध स्वस्थानमें अर्थात् स्निग्ध-
का स्निग्धके साथ, रुक्षका रुक्षके साथ और परस्थानमें अर्थात् स्निग्धका रुक्षके साथ या
रुक्षका स्निग्धके साथ बन्ध होता है ॥६१६॥

दोत्तिगपभवदुत्तरगदेसणंतरदुगाण बंधो दु ।

णिद्धे लुक्के वि तहा वि जहणुभये वि सन्वत्थ ॥६१७॥

द्वित्रिप्रभवद्व्युत्तरगतेष्वनंतरद्विकानां बंधस्तु । स्निग्धे रूक्षेऽपि तथा वि जघन्योभयस्मिन्नपि सर्वत्र ॥

५ स्निग्धे स्निग्धदोळं रूक्षेऽपि रूक्षदोळं द्वित्रिप्रभवमुं द्व्युत्तरमाणि नडेववरोळु उपरितना-
नंतरद्विकगळगे स्निग्धव नात्कक्कं रूक्षद नात्कक्कं स्निग्धदेरडरोळं रूक्षदेरडरोळं बंधमक्कु ।
स्निग्धदैदक्कं रूक्षदयिदक्कं स्निग्धद मूररोळं रूक्षद मूररोळं बंधमक्कु । मितागुत्तिरलु जघन्यगुण-
युतदोळं बंधप्रसंगमादोडे जघन्यवज्जितमप्युभयदोळु स्निग्धरूक्षद्वयदोळु सर्वत्र बंधमरियल्पडुगु-
मे बुदत्थं ।

१० णिद्धदरवरगुणाणू सपरट्ठाणे वि णेदि बंधट्ठं ।

बहिरंतरंगहेदुहि गुणंतरं संगदे एदि ॥६१८॥

स्निग्धेतरावरगुणाणुः स्वपरस्थानेऽपि नैति बंधात्थं । बाह्याभ्यंतरहेतुभ्यां गुणांतरं संगते एति ॥

१५ स्निग्धजघन्यगुणाणुवु रूक्षजघन्यगुणाणुवुं स्वस्थानदोळं परस्थानदोळं बंधनिमित्तमाणि
सल्लदु । बाह्याभ्यंतरहेतुर्गाळिदं गुणांतरं पोहि बंधक्के सल्लं । तत्त्वार्थदोळं “न जघन्यगुणाना”
मेदितु पेळल्पट्टुदु ।

स्निग्धे रूक्षेऽपि द्वित्रिप्रभवद्व्युत्तरक्रमेण गच्छन्ति तेषु उपरितनानन्तरद्विकानां स्निग्धचतुष्कस्य
रूक्षचतुष्कस्य च स्निग्धद्वये रूक्षद्वये च बन्धः स्यात् । स्निग्धपञ्चकस्य रूक्षपञ्चकस्य च स्निग्धत्रये रूक्षत्रये
च बन्धः स्यात् । एवं जघन्यगुणयुतेऽपि बन्धप्रसक्तौ जघन्यवर्जिते उभयत्र स्निग्धरूक्षद्वये सर्वत्र बन्धो ज्ञातव्य

२० इत्यर्थः ॥६१७॥

स्निग्धजघन्यगुणाणुः रूक्षजघन्यगुणाणुश्च स्वस्थाने परस्थानेऽपि बन्धाय योग्यो न, बाह्याभ्यन्तरहेतु-
भिर्गुणान्तरं प्राप्तस्तु योग्यः स्यात् । तत्त्वार्थेऽपि ‘न जघन्यगुणाना’ इत्युक्तत्वात् ॥६१८॥

इसीको अन्य प्रकारसे कहते हैं—

२५ स्निग्ध और रूक्षमें भी दोको आदि लेकर तथा तीनको आदि लेकर दो-दो बढ़ते
जाते हैं । उनमें ऊपरके अनन्तरवर्ती दोका बन्ध होता है । जैसे चार गुण स्निग्धवालेका
दो गुण स्निग्धवाले दो गुण रूक्षवालेके साथ तथा चार गुण रूक्षवालेका दो गुण रूक्षवाले या
दो गुण स्निग्धवालेके साथ बन्ध होता है । इसी तरह पाँच गुण स्निग्ध या पाँच गुण रूक्षवाले-
का तीन गुण स्निग्ध या तीन गुण रूक्षवालेके साथ बन्ध होता है । इस प्रकार एक अंशयुक्त
जघन्य गुणवालोंका भी बन्ध प्राप्त होनेपर निषेध करते हैं कि जघन्यको छोड़कर स्निग्ध
३० और रूक्ष दोनोंमें सर्वत्र बन्ध जानना ॥६१७॥

जघन्य स्निग्ध गुणवाला या जघन्य रूक्ष गुणवाला परमाणु स्वस्थान और परस्थानमें
भी बन्धके योग्य नहीं है । वही परमाणु बाह्य और अभ्यन्तर कारणोंसे यदि अधिक गुणवाला
होता है, तो बन्धके योग्य होता है । तत्त्वार्थ सूत्रमें भी कहा है कि जघन्य गुणवालोंका बन्ध
नहीं होता ॥६१८॥

णिद्धिदरगुणा अहिया द्वीणं परिणामयन्ति बंधम्मि ।

संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसाण खंधाणं ॥६१९॥

स्निग्धेतरगुणा अधिकाः हीनं परिणमयन्ति बंधे । संख्यातासंख्यातानंतप्रदेशानां स्कंधानां ॥

संख्यातासंख्यातानंतप्रदेशंगळनुळळ स्कंधंगळ मध्यदोळु स्निग्धगुणस्कंधंगळु रुक्षगुण-
स्कंधंगळु अधिकाः एरडुगुणंगळिनधिकमपुवु । बंधे बंधमप्पागळु हीनं हीनस्कंधमं परिणमयन्ति ५
पिडिदु कोडु बंधक्क बरिसुवु । तत्त्वार्थदोळमिने “बंधेऽधिको पारिणामिको भवतः एदितु
काणलपडुगुं षड्द्रव्यंगळचरमफलाधिकारं तिदुदुदु ।

अनंतरं पञ्चास्तिकायंगळं पेळदपं :—

दव्वं छक्कमकालं पंचत्थीकायसंणिदं होदि ।

काले पदेसपचयो जम्हा णत्थित्ति णिद्धिदुं ॥६२०॥

१०

द्रव्यं षट्कमकालं पञ्चास्तिकायसंज्ञितं भवति । काले प्रदेशप्रचयो यस्मान्नास्तीति निर्दिष्टः ॥

मुत्तं पेळलपट्टु द्रव्यषट्कमे कालद्रव्यदिदं रहितमादोडे पञ्चास्तिकायमेव संज्ञेयनुळळुदक्कु-
देकेदोडे काले कालद्रव्यदोळु प्रदेशप्रचयमावुदोडु कारणदिदमित्तमदु कारणदिदमितु प्रदेशप्रचय-
मनुळळुवस्तिकायगळेडु परमागमवोळु पेळलपट्टुदु ।

अनंतरं नवपदार्थंगळं पेळदपं :—

१५

णव य पदत्था जीवाजीवा ताणं च पुण्णपावदुगं ।

आसवसंवरणिज्जरबंधा मोक्खो य होतित्ति ॥६२१॥

नव पदार्थाः जीवाजीवास्तेषां पुण्यपापद्वयमात्रवसंवरनिर्जराबंधा मोक्षश्च भवन्तीति ॥

संख्यातासंख्यातानंतप्रदेशस्कन्धानां मध्ये स्निग्धगुणस्कन्धाः रुक्षगुणस्कन्धाश्च द्विगुणाधिकाः ते बन्धे
हीनगुणस्कन्धं परिणामयन्ति । तत्त्वार्थेऽपि “बंधेऽधिको पारिणामिको च” इत्युक्तत्वात् ॥६१९॥ इति २०
फलाधिकारः । अथ पञ्चास्तिकायानाह—

प्रागुक्तद्रव्यषट्कं अकालं कालद्रव्यरहितं पञ्चास्तिकायसंज्ञकं भवति, कुतः ? कालद्रव्ये प्रदेशप्रचयो
यतो नास्ति ततः कारणात् इति प्रदेशप्रचययुता अस्तिकाया इत्युक्तं परमाम्ने ॥६२०॥ अथ नवपदार्थानाह—

संख्यात, असंख्यात और अनन्तप्रदेशी स्वन्धोंके मध्यमें दो अधिक गुणवाले स्निग्ध
स्कन्ध या रुक्ष स्कन्ध बन्धके होनेपर हीन गुणवाले स्कन्धको अपने रूप परिणामाते हैं । २५
तत्त्वार्थसूत्रमें भी कहा है कि बन्धके होनेपर अधिक गुणवाला परिणामक होता है ॥६१९॥

इस प्रकार फलाधिकार समाप्त हुआ ।

अब पाँच अस्तिकार्योंको कहते हैं—

पहले कहे गये छह द्रव्योंमेंसे कालद्रव्यको छोड़कर पञ्चास्तिकाय कहलाते हैं । क्योंकि
कालद्रव्यमें प्रदेशोंका प्रचय नहीं है अर्थात् कालाणु एकप्रदेशी होता है । और परमागममें ३०
प्रदेशसमूहसे युक्तको अस्तिकाय कहा है ॥६२०॥

नौ पदार्थोंको कहते हैं—

जीवाजीवाः जीवंगळुमजीवंगळु तेषां अवर पुण्यपापद्वयं पुण्यमुं पापमुमेवेरहुं आस्रवसंवर-
निर्जराबंधमोक्षाः आस्रवमुं संवरमुं निज्जरयं बंधमुं मोक्षमुमेदितु नवपदार्थंगळुप्पुवुं । पदार्थ-
शब्दं सर्वत्र संबधिसल्पडुगुं । जीवपदार्थः अजीवपदार्थः इत्यादि ।

जीवदुगं उत्तत्थं जीवा पुण्णा हु सम्मगुण सहिदा ।

५

वदसहिदा वि य पावा तव्विवरीया हवंतित्ति ॥६२२॥

जीवद्वयमुक्तार्थं जीवाः पुण्याः खलु सम्यक्त्वगुणसहिताः । व्रतसहिताः अपि च पापास्त-
द्विपरीता भवन्तीति ॥

जीवपदार्थमुमजीवपदार्थमुं मुन्नं जीवसमासेयोळं षड्द्रव्याधिकारदोळं पेळ्हुदेयक्कुं ।
सम्यक्त्वगुणयुक्तजीवंगळु व्रतयुक्तजीवंगळु पुण्यजीवंगळुप्पुवु । तद्विपरीतंगळु तद्वयरहितंगळु पाप-
जीवंगळेदरियल्पडुवुवु खलु नियमदिदं । चतुर्दशगुणस्थानंगळोळु जीवसंख्येयं पेळुत्तं मिथ्यादृष्टि-
गळु सासादनहं पापजीवंगळे दु पेळ्हुदपं :—

मिच्छाइद्वी पावाणंताणंता य सासणगुणा वि ।

पल्लासंखेज्जदिमा अणअण्णदरुदयमिच्छगुणा ॥६२३॥

मिथ्यादृष्टयः पापाः अनंतानंताश्च सासादनगुणा अपि । पल्यासंख्येयभागाः अनंतानुबंधि
१५ अन्यतरोदयमिथ्यागुणाः ॥

पापरूपगळप्प मिथ्यादृष्टिजीवंगळु किच्चिदून संसारिराजिप्रमाणरप्परेके दोडे सासादनावि-
तरगुणस्थानजीवसंख्येयिद हीनरप्पुदरिदं । अदु कारणदिदमनंतानंतगळप्पुवु ॥ १३ ॥ सासादनगुण-

जीवा अजीवाः तेषां पुण्यपापद्वयं आस्रवः संवरो निर्जरा बन्धो मोक्षश्चेति नवपदार्था भवन्ति ।
पदार्थशब्दः सर्वत्र सम्बन्धनीयः, जीवपदार्थः अजीवपदार्थः इत्यादिः ॥६२१॥

२० जीवाजीवपदार्थौ द्वौ पूर्वं जीवसमासे षड्द्रव्याधिकारे चोक्तार्थौ । पुण्यजीवाः सम्यक्त्वगुणयुक्ता
व्रतयुक्ताश्च स्युः । तद्विपरीतलक्षणाः पापजीवाः खलु-नियमेन ॥६२२॥ चतुर्दशगुणस्थानेषु जीवसंख्या मिथ्या-
दृष्टिसासादनौ च पापजीवाविति आह—

मिथ्यादृष्टयः पापाः—पापजीवाः । ते चानन्तानन्ता एव इतरगुणस्थानजीवसंख्येयनसंसारिमात्रत्वात्

जीव, अजीव, उनके पुण्य और पाप दो तथा आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, बन्ध
२५ और मोक्ष ये नौ पदार्थ होते हैं । पदार्थ शब्द प्रत्येकके साथ लगाना चाहिए; जैसे जीव-
पदार्थ, अजीवपदार्थ इत्यादि ॥६२१॥

पहले जीवसमासमें तथा छह द्रव्योंके अधिकारमें जीवपदार्थ और अजीवपदार्थका
कथन कर दिया है । जो जीव सम्यक्त्वगुणसे युक्त हैं और व्रतोंसे युक्त हैं, वे जीव पुण्यरूप
होते हैं । उनसे विपरीत लक्षणवाले अर्थात् जो न सम्यक्त्वयुक्त हैं और न व्रतोंसे युक्त हैं, वे
३० नियमसे पापरूप हैं ॥६२२॥

आगे चौदह गुणस्थानोंमें जीवोंकी संख्या और मिथ्यादृष्टि तथा सासादन गुणस्थान-
वाले जीवोंको पापी कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि जीव पापी हैं और वे अनन्तानन्त हैं; क्योंकि संसारी जीवोंकी राशिमें-से
शेष तेरह गुणस्थानवर्ती जीवोंकी संख्या घटानेपर मिथ्यादृष्टि जीवोंकी संख्या होती है ।

मनुष्यजीवंगुणं पापजीवंगुणं पुनस्तानुबन्ध्यन्त्यतरोदयमिध्यागुणयुतरप्पुदरितवुं पल्यासंख्यातैक-
भागप्रमाणमप्पुवु प
० ० ४

मिच्छा सावयसासणमिस्सा विरदा दुवारणंता य ।

पल्यासंखेज्जदिममसंखगुणं संखगुणमसंखेज्जगुणं ॥६२४॥

मिथ्यादृष्टिश्चावकसासादनमिथाविरताः द्विकवारानंताश्च । पल्यासंख्यातैकभागोसंख्येयगुणः ५
संख्येयगुणोऽसंख्येयगुणः ॥

मिथ्यादृष्टिजीवंगुणं किञ्चिदूनसंसारिराशिप्रमितमप्पुदरिदमनंतानंतगळप्पुवु ॥ १३—॥ देश-
संयतरुगळु पदिमूहकोटि मनुष्य देशसंयतरिनधिकमप्य तिद्यगगतिजर पल्यासंख्यातैकभागप्रमित-
रप्पर प । धन १३ को । सासादनरुगळु मनुष्यगतिजद्विपञ्चाशत्कोटिसासादनरिदमधिकमप्य
० ० ४ । ०

इतरगतित्रयजसासादनरनितुं देशसंयतरं नोडलुं असंख्यातगुणमप्पर प धन ५२ को ई सासादनर- १०
० ० ४

संख्येयं नोडलुं मनुष्यगतिजमिथरिदं नूर नालकु कोटिगळिदमधिकमप्य त्रिगतिजमिथर संख्यात-
गुणमप्पर प धन १०४ को ई मिश्रगुणस्थानवर्त्तिजीवंगुणं नोडलु मनुष्यगतिजासंयतरिदमेळु
० ०

नूर कोटिगळिदमधिकमप्य त्रिगतिजासंयतरुमसंख्यातगुणरप्पर प धन ७०० को
०

१३- । सासादनगुणा अपि पापाः अनन्तानुबन्ध्यन्त्यतमोदयेन प्राप्तमिथ्यात्वगुणत्वात् पल्यासंख्यातैकभागमात्रा
भवन्ति प ॥६२३॥
० ० ४

मिथ्यादृष्टयः किञ्चिदूनसंसारित्वादनन्तानन्ताः १३- । देशसंयताः त्रयोदशकोटिमनुष्याधिकतिर्यञ्चः
पल्यासंख्यातैकभागमात्राः- प धन १३ को । तेभ्यः द्विपञ्चाशत्कोटिमनुष्याधिकेतरत्रिगतिसासादनाः असंख्यात-
० ० ४ ०

गुणाः प धन ५२ को । तेभ्यः चतुस्तरशतकोटिमनुष्याधिकत्रिगतिमिथाः संख्यातगुणाः प धन १०४ को ।
० ० ० ० ०

तेभ्यः सप्तशतकोटिमनुष्याधिकत्रिगत्यसंयता असंख्यातगुणा प धन ७०० को ॥६२४॥
०

सासादनगुणस्थानवाले भी पापी हैं; क्योंकि अनन्तानुबन्धीकषायकी चौकड़ीमें-से किसी भी २०
एक कोषादिका उदय होनेसे मिथ्यात्वगुणस्थानको प्राप्त होते हैं । उनकी संख्या पल्यके
असंख्यातवै भाग है ॥६२३॥

मिथ्यादृष्टि कुछ कम संसारी राशि प्रमाण होनेसे अनन्तानन्त हैं । देशसंयत गुण-
स्थानवाले तेरह कोटि मनुष्य तथा पल्यके असंख्यातवै भागमात्र तिर्यच हैं । उनसे बावन
कोटि मनुष्य तथा शेष तीन गतिके सब सासादनगुणस्थानवाले असंख्यातगुणे हैं । उनसे २५
एक सौ चार कोटि मनुष्य और शेष तीन गतिके सब मिश्र गुणस्थानवाले संख्यातगुणे हैं ।
उनसे सात सौ कोटि मनुष्य और शेष तीन गतिके अविरत गुणस्थानवाले सब असंख्यात-
गुणे हैं ॥६२४॥

तिरधियसयणवणउदी छण्णउदी अप्पमत्त वे कोडी ।

पंचेव य तेणवुदी णवट्ठपिसयंछउत्तरं पमदे ॥६२५॥

त्रिभिरधिकशतं नवनवतिः षण्णवतिरप्रमत्त द्विकोटि पंचैव च त्रिनवतिर्नवाष्टद्विशते षडुत्तरं प्रमत्ते ॥

- ५ प्रमत्तरोळु संख्ये अट्ठु कोटियुं तो भत्तमूलक्षेयुं तो भत्तेदु सासिरद इन्नूरारुगळक्कुं ॥ ५९३९८२०६ ॥ अप्रमत्तरोळु संख्ये येरडुकोटियुं तो भत्तार लक्षेयुं तो भत्तो भत्तु सासिरद नूर मूलगळप्पुवु ॥ २९६९९१०३ ॥

तिसयं भणंति केई चउरुत्तरमत्थपंचयं केई ।

उवसामगपरिमाणं खवगाणं जाण तद्दुगुणं ॥६२६॥

- १० त्रिशतं भणंति केचित् चतुस्तरमस्तपंचकं केचित् । उपशमकपरिमाणं क्षयकाणां जानीहि तद्विगुणं ॥

केलंबराचार्यरुगळु उपशमकरप्रमाणमं त्रिशतमेदु पेळवर । मत्तं केलंबराचार्यरुगळु चतुस्तरत्रिशतमेदु पेळवर । मत्तं केलंबराचार्यरुगळु अट्ठु गुंदिद चतुस्तरत्रिशतमेदु पेळवर ॥ २९९ ॥ व ओदु गुंदे मूनूर बुदत्थ । क्षपकर प्रमाणमं तद्विगुणमं नीनरियेदु शिष्यसंबोधन-

- १५ मक्कुमो संख्येगलोळु प्रवाहोपदेशमप्प संख्येयं निरन्तराष्टसमयंगलोळु विभागिसि पेळपं :—

सोलसयं चउवीसं तीसं छत्तीस तह य बादालं ।

अडदालं चउवण्णं चउवण्णं होंति उवसमगे ॥६२७॥

षोडशकं चतुर्विंशतिः त्रिशत् षट्त्रिंशत्तथा च द्विचत्वारिंशदष्टचत्वारिंशच्चतुःपञ्चाशच्चतुः पञ्चाशद्भवन्त्युपशमके ॥

- २० प्रमत्ते पञ्चकोट्यः त्रिनवतिलक्षाण्यष्टानवतिसहस्राणि त्रिशतं षट् च भवन्ति । ५, ९३, ९८, २०६ । अप्रमत्ते द्विकोटिषण्णवतिलक्षनवनवतिसहस्रैकशतत्रयो भवन्ति । २, ९६, ९९, १०३ ॥६२५॥

केचिदुपशमकप्रमाणं त्रिशतं भणन्ति । केचिच्च चतुस्तरत्रिशतं भणन्ति । केचित् पुनः पञ्चोनचतुस्तर- त्रिशतं भणन्ति । एकोनत्रिशतमित्यर्थः । क्षपकप्रमाणं ततो द्विगुणं जानीहि ॥६२६॥ अत्र प्रवाहोपदेशसंख्यां निरन्तराष्टसमयेषु विभजति—

- २५ प्रमत्तगुणस्थानमें पाँच कोटि तिरानवे लाख, अट्टानवे हजार दो सौ छह ५९३९८२०६ जीव हैं । तथा अप्रमत्तगुणस्थानमें दो कोटि छियानवे लाख, निन्यानवे हजार एक सौ तीन २९६९९१०३ जीव हैं ॥६२५॥

- आठवें, नौवें, दसवें, ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती उपशमश्रेणिवालोंका प्रमाण कोई आचार्य तीन सौ कहते हैं, कोई आचार्य तीन सौ चार कहते हैं और कोई आचार्य तीन सौ चारमें ३० पाँच कम अर्थात् दो सौ निन्यानवे कहते हैं । तथा आठवें, नौवें, दसवें और बारहवें गुणस्थान सम्बन्धी क्षपकश्रेणिवाले जीवोंका प्रमाण उपशमवालोंसे दूना जानना ॥६२६॥

आचार्य परम्परासे आगत प्रवाही उपदेश तीन सौ चारकी संख्याका निरन्तर आठ समयोंमें विभाग करते हैं—

उपशमकरोळु षोडशमुं चतुर्विंशतियुं त्रिंशतियुं षट्त्रिंशतियुं द्विचत्वारिंशतियुं अष्ट-
चत्वारिंशतियुं चतुःपञ्चाशतियुं चतुःपञ्चाशतियुं निरन्तराष्टसमयंगळोळपुवु । १६ । २४ । ३० ।
३६ । ४२ । ४८ । ५४ । ५४ ।

वत्तीसं अडदालं सड्डी बावत्तरी य चुलसीदी ।

छण्णउदी अट्टुत्तरसयमट्टुत्तरसयं च खवगेसु ॥६२८॥

५

द्वात्रिंशदष्टचत्वारिंशत् षष्टि द्वांसमतिश्चतुरशीतिः । षण्णवतिरष्टोत्तरशतमष्टोत्तरशत-
क्षपकेषु ॥

क्षपकरोळु निरन्तराष्टसमयंगळोळु उपशमकर संख्येयं नोडलु द्विगुणमाणि द्वात्रिंशदादि-
गळपुवु । ३२ । ४८ । ६० । ७२ । ८४ । ९६ । १०८ । १०८ ॥ ई संख्येयं निरन्तराष्टसमयंगळोळु
समीकरणविधानदिदं क्षपकर । आदि ३४ । उत्तरं १२ । गच्छे ८ । पदमेगेण विहीणमित्यादि १०
संकलनसूत्रदिदं तरल्पट्ट लब्धप्रमितरु अष्टोत्तरषट्शतमप्पर । ६०८ ॥ उपशमकरं । आदि १७ ।
उत्तरं । ६ । गच्छ ८ । इल्लियुं आ सूत्रदिदं तरल्पट्ट लब्धप्रमितरु चतुरत्तरत्रिंशतरप्पर । ३०४ ॥

अट्टेव सयसहस्सा अट्टाणउदी तहा सहस्साणं ।

संखा जोगिजिणाणं पंचसयबिउत्तरं वदे ॥६२९॥

अष्टैव गतसहस्राणि अष्टानवतिस्तथा सहस्राणां । संख्या योगिजिनानां पंचगतं द्व्युत्तरं १५
वदे ॥

उपशमके षोडश चतुर्विंशतिः त्रिंशत् षट्त्रिंशत् द्वाचत्वारिंशत् अष्टचत्वारिंशत् चतुःपञ्चाशत् चतुः-
पञ्चाशत् निरन्तराष्टसमयेषु भवन्ति । १६ । २४ । ३० । ३६ । ४२ । ४८ । ५४ । ५४ ॥६२७॥

क्षपके निरन्तराष्टसमयेषु उपशमकेभ्यो द्विगुणत्वात् द्वात्रिंशत् अष्टचत्वारिंशत् षष्टिः द्वांसमतिः चतुर-
शीतिः षण्णवतिः अष्टोत्तरशतं अष्टोत्तरशतं भवन्ति । इमामेव संख्यां निरन्तराष्टसमयेषु समीकरणविधानेन २०
आदिः ३४ उत्तरः १२ गच्छः ८ पदमेगेण विहीणमित्यादिनानीतधनम् । क्षपका अष्टोत्तरषट्शतं भवन्ति ।
६०८ । उपशमका आदिः १७ उत्तरः ६ गच्छः ८ धनं चतुरत्तरत्रिंशतं ३०४ भवन्ति ॥६२८॥

उपशमश्रेणिपर निरन्तर चट्टनेवाले जीवोंकी आठ समयोंमें संख्या क्रमसे सोलह,
चौबीस, तीस, छत्तीस, बयालीस, अड़तालीस, चौवन, चौवन होती है ॥६२७॥

क्षपकश्रेणिकी संख्या उपशमवालोंसे दुगुनी होती है, इसलिए निरन्तर आठ समयोंमें २५
क्षपकश्रेणि चट्टनेवालोंकी संख्या क्रमसे बत्तीस, अड़तालीस, साठ, बहत्तर, चौरासी, छियान-
वे, एक सौ आठ, एक सौ आठ होती है । इसी संख्याको निरन्तर आठ समयोंमें समीकरण
विधानके द्वारा बराबर करके पहले समयमें चौतीस, फिर आठ समयोंमें बारह-बारह अधिक
करनेसे आदिधन चौतीस, उत्तर बारह और गच्छ आठ, इसको 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि
सूत्रके अनुसार गच्छ आठमें एक घटानेसे सात रहे, दोका भाग देनेसे साढ़े तीन रहे । ३०
उत्तर बारहसे गुणा करनेपर बयालीस हुए । इसमें आदिधन चौतीस जोड़नेसे छियत्तर हुए ।
इसे गच्छ आठसे गुणा करनेसे छह सौ आठ हुए । ये सब क्षपकोंका जोड़ होता है । इसी
तरह उपशमश्रेणिवालोंका आदिधन सतरह, उत्तर छह, गच्छ आठका धन उससे आधा तीन
सौ चार होता है ॥६२८॥

- सयोगिजिनसंख्या लक्षाष्टकमुपगच्छन्वतिसहस्रं गच्छन् द्व्युत्तरपञ्चशतप्रमितमवकु ।
 ८९८५०२ । मिनिबरं सर्व्वदा वंदिसुवे । इल्लि निरन्तर अष्टसमयंगळोळु संचिसत्पट्ट सयोगिजिन-
 रगळाचाव्यांतरापेक्षेयिदं सिद्धान्तवाक्यदोळु “छसु मुद्धसमयेसु तिण्णि तिण्णि जीवा केवलमुप्पाय-
 यन्ति । दोसु समयेसु दोदो जीवा केवलमुप्पाययन्ति एवमट्टसमयसंचिदजीवा बावीसा हवन्ति”
 ५ येदितु पेळत्पट्टवारु समयंगळोळु मूरु मूरुमेरडु समयंगळोळपरडेरडागलु जिनरगळं मोक्षगामि-
 गळुमरुविगळ मेळेंदु समयंगळोळनिबरप्परेंबी विशेषकथनदोळु त्रैराशिकषट्कमवकुमदेतेंदोडे
 संहति :-

प्र के २२	फ का ८ ६	इ के = ८९८५०२	लब्ध मिश्रकाल ८ लब्ध का ४०८४१६
प्र का ८ ६	फ स ८ ।	इ का ४०८४१।८। ६	लब्ध समयाशुद्धा ३२६७२८
प्र स ८	फ के २२	इ स ३२६७२८ ॥	लब्ध केवलिन : लब्ध के ८९८५०२
प्र स ८	फ के ४४	इ स ३२६७२८ । २	लब्ध ८९८५०२
प्र स ८	फ के ८८	इ स ३२६७२८ २।२	लब्ध के ८९८५०२
प्र स ८	फ के १७६	इ स ३२६७२८ २।२।२	लब्ध के ८९८५०२

- सयोगिजिनसंख्या अष्टलक्षाष्टनवतिसहस्रद्व्युत्तरपञ्चशतानि ८, ९ ८, ५०२ तान् सदा वन्दे । अत्र
 १५ निरन्तराष्टसमयेसु संचितसयोगिजिनाः आचार्यान्तरापेक्षया सिद्धान्तवाक्ये—वसुमुद्धसमयेसु तिण्णि तिण्णि जीवा
 केवलमुप्पाययन्ति, दोसु समयेसु दो दो जीवा केवलमुप्पाययन्ति एवमट्टसमयसंचिदजीवा बावीसा हवन्तीति
 विशेषकथने त्रैराशिकषट्कम् । तद्यथा—प्र के २२ । फ का ६ । इ के ८, ९ ८, ५०२ । ल का ४०८४१, ६ ।
 पुनः प्र का ६ । फ स ८ । इ का ४०८४१, ६ । ल स ३, २६, ७२८ । पुनः प्र स ८ । फ के २२ । इ ३,

- सयोगी जिनोंकी संख्या आठ लाख अट्टानवे हजार पाँच सौ दो है, उन्हें सदा नमस्कार
 २० करता हूँ । यहाँ निरन्तर आठ समयोंमें संचित सयोगी जिनोंकी संख्या अन्य आचार्यकी
 अपेक्षा सिद्धान्तमें इस प्रकार कही है—छह शुद्ध समयोंमें तीन-तीन जीव केवलज्ञानको
 उत्पन्न करते हैं और दो समयोंमें दो-दो जीव केवलज्ञानको उत्पन्न करते हैं । इस प्रकार आठ
 समयोंमें संचित जीव बाईस होते हैं । यहाँ विशेष कथन छह त्रैराशिकोंके द्वारा करते हैं—

१. यदि बाईस केवली छह मास आठ समयमें होते हैं, तो आठ लाख अट्टानवे हजार
 २५ पाँच सौ दो केवली कितने कालमें होंगे; ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाणराशि २२ केवली,
 फलराशि छह मास आठ समयकाल, इच्छाराशि आठ लाख अट्टानवे हजार पाँच सौ दो
 केवली । सो प्रमाणका भाग इच्छाराशिमें देनेसे चालीस हजार आठ सौ इकतालीस आये ।
 इस संख्याको छह मास आठ समयसे गुणा करनेपर कालका प्रमाण आता है । २. छह मास

इतिदोढु पक्षांतरमरियत्पडुगु । अनंतरमेक समयदोळु युगपत्संभविसुव क्षपकर विशेष-
संख्येयुमनुपशमकर विशेषसंख्येयुमं गाथात्रयादिदं पेळदपर ।

होंति खवा इगिसमये बोहियबुद्धा य पुरिसवेदा य ।

उक्कस्सेणटुत्तरसयप्पमा सम्गदो य चुदा ॥६३०॥

भवन्ति क्षपकाः एकस्मिन्समये बोधितबुद्धाश्च पुरुषवेदाश्च । उत्कृष्टेनाष्टोत्तरशतप्रमिताः ५
स्वर्ग्यंतश्च ज्युताः ॥

पत्तेयबुद्धतिथयरितिथिणवुंसयमणोहिणाणजुदा ।

दसछक्कवीसदसवीसट्टावीसं जहाकमसो ॥६३१॥

प्रत्येकबुद्धतोत्यंकरस्त्रीनपुंसकमनोवधिज्ञानयुताः । दश षट्क विंशति दश विंशत्यष्टा-
विंशतिः यथाक्रमशः ॥

१०

२६, ७२८ ल । के ८, ९८, ५०२ । तथा प्र स ८ । फ के ४४ । इ ३, २६, ७२८ ल । के ८, ९८,
२ २

५०२ तथा प्र स ८ । फ के ४४ । इ ३, २६, ७२८ । ल के ८, ९८, ५०२ । तथा प्र स ८ । फ के ८८ ।
२

आठ समयमें निरन्तर केवली उत्पन्न होनेका काल आठ समय है, तो पूर्वोक्त कालमें कितने
समय हैं; ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाणराशि छह मास आठ समय, फलराशि आठ समय,
इच्छाराशि छह मास आठ समयसे गुणित चालीस हजार आठ सौ इकतालीस । यहाँ १५
प्रमाणराशिके कालसे इच्छाराशिके कालका अपवर्तन करके फलराशिके आठ समयोंसे इच्छा-
राशि ४०८४१ को गुणा करनेपर तीन लाख छब्बीस हजार सात सौ अट्ठाईस समय होते
हैं । ३-६ आठ समयोंमें विभिन्न आचार्योंके मतसे बाईस या चवालीस या अठासी या एक
सौ छियत्तर जीव केवलज्ञानको उत्पन्न करते हैं, तो पूर्वोक्त तीन लाख छब्बीस हजार सात सौ
अट्ठाईस समयोंमें अथवा उससे आवे अथवा चौथाई अथवा आठवें भाग समयोंमें कितने २०
जीव केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं, इस प्रकार चार त्रैराशिक करना । इन चारोंमें प्रमाणराशि आठ
समय है । फलराशि २२, ४४, ८८ और १७६ पृथक्-पृथक् है । तथा इच्छाराशि तीन लाख
छब्बीस हजार सात सौ अट्ठाईस, उसका आधा, उसका चौथाई और उसका आठवाँ भाग
पृथक्-पृथक् है । सर्वत्र फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके प्रमाणराशिसे भाग देनेपर लब्ध

१. गुणितक्रमः समीचीनः प्रयोजनं वावबुध्यते । अर्हदिगळ मेलेंदुसमयदोळो केवलज्ञानमं पडेव जीवंगळ २५
जघन्य ७२६ दिदिविप्पत्तेरडनुत्कृष्टदिनेटु लक्षवु तो भत्तेटु साविरदेनूररडु मध्यनानाभेदमदरोळु नात्तनात्के
४४ भत्ते ८८ टु नूरिप्पत्तारेव मूह विकल्पमं जघन्यमुमं फलराशियं माडिदर मूहमध्यमविकल्पद इच्छा-
राशियं हारवेंते दोडे इत्तिय फलराशियं इच्छाराशियं माडि अर्हदिगळ मेलेंदु समयंगळं फलराशियं माडि
उत्कृष्टकेवलसंख्येयं इच्छाराशियं माडलक्कु । बंद लब्ध १६३६४ यो राशियनेरडरि गुणिसियेरडरि भागि-
सिदडे इंतक्कु ३२६७२८ = इदु प्रतिपद = ॥
२

३०

जेष्ठावरबहुमज्झिम ओगाहणगा दु चारि अद्देव ।

जुगवं हवन्ति खवगा उवसमगा अद्धमेदेसि ॥६३२॥

ज्येष्ठावरबहुमध्यमावगाहनकाः द्विचतुरष्टैव । युगपद्भवन्ति क्षपकाः उपशमकाः अद्धमेतेषां॥
बोधितबुद्धश्च क्षपकरेकसमयदोळु युगपन्नूरेंदु उपशमकर तदद्धमप्यह १०८ पुंवेदिगळ

५ क्षपकर नूरेंदुपशमकर तदद्धमप्यह । १०८ स्वर्गादिवं बंद क्षपकर युगपन्नूरेंदुपशमकर तदद्ध-
५४

इ ३, २६, ७२८ । ल के ८, ९८, ५०२ । तथा प्र स ८ । फ के १७६ । इ ३, २६, ७२८ । ल के ८, ९८,
२ २ २ । २ । २ । २ ।

५०२ । इदमेकपक्षान्तरम् ॥६३९॥ अथैकसमये युगपत्संभवती क्षपकोपशमकविशेषसंख्यां गाथात्रयेणाह—

युगपदुत्कृष्टेन एकसमये बोधितबुद्धाः पुंवेदिनः स्वर्गच्युताश्च प्रत्येकं क्षपकाः अष्टोत्तरशतम् उपशम-

आठ लाख अठानवे हजार पाँच सौ दो आता है । नीचे इन छह त्रैराशियोंको अंकित किया

१० जाता है—

प्रमाणराशि	फलराशि	इच्छाराशि	लब्धराशि
केवली २२	काल छह मास ८ समय	केवली ८९८५०२	काल ४०८४१ × छह मास आठ समय
काल छह मास ८ समय	समय ८	काल ४०८४१ × छहमास आठ समय	समय ३२६७२८
समय ८	केवली २२	समय ३२६७२८	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली ४४	समय ३२६७२८ का आधा	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली ८८	समय ३२६७२८ का चौथाई	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली १७६	समय ३२६७२८ का आठवाँ भाग	केवली ८९८५०२

आगे एक समयमें एक साथ होनेवाली क्षपकों और उपशमकोंकी विशेष संख्या तीन गाथाओंसे कहते हैं—

२० एक साथ उत्कृष्टसे एक समयमें बोधित बुद्ध क्षपक, पुरुषवेदी क्षपक, और स्वर्गसे
च्युत होकर मनुष्य जन्म लेकर क्षपकश्रेणी चढ़नेवाले प्रत्येक एक सौ आठ, एक सौ आठ

मप्यु १०८ प्रत्येकबुद्धर क्षपकर पत्तुपशमकरध्वर १० तीर्थकरर क्षपकररवरपशमकर ५४ ५
 मूवर ६ स्त्रीवेदिक्षपकरमिपत्तुपशमकर्पादिबर २० नपुंसकवेदिगळु क्षपकर पदिबरवरद्ध- ३ १०
 मुपशमकर १० मनःपर्ययज्ञानिगळु क्षपकरगळिपत्तु तदद्धंमुपशमकर २० अवधिज्ञानिगळु ५ १०
 क्षपकरगळिपत्तुमुपशमकरगळु तदद्धंमप्यर २८ उत्कृष्टावगाहनयुतक्षपकरगळीर्वरपशमक- १४
 नोर्वने २ जघन्यावगाहनयुतक्षपकर नात्वरपशमकरीर्वर ४ बहुमध्यमावगाहनयुतक्षपक- १
 रेणवरपशमकर्णात्वर ८ मितेल्ला क्षपकर ४३२ । उपशमकर २१६ । ५

अनंतरं अयोगिजितरसंख्येयं कंठोक्तमाणि पेळुदिल्लपुर्दारिदं प्रमत्तगुणस्थानं मोदल्लोडु
 अयोगकेवलभट्टारकावसानमाद समस्तसंयमिगळ संख्येयं पेळुदडदरोळु सयोगकेवलपद्यंतं कंठोक्त-
 माणि पेळुलपट्ट संयमिगळ संख्येयं कूडि कळेदोडे शेषमयोगिकेवलिगळ संख्येयक्कुमेंबुदं मनदोळि-
 रिसि संयमिगळ सब्दसंख्येयं पेळुदपं :— १०

सत्तादी अहुंता छणवमज्झा य संजदा सब्बे ।

अंजलिमौलियदत्थो तियरणसुद्धे णमंसामि ॥६३३॥

सप्ताष्टांतान् षण्णवमध्यांश्च संयुतान्सर्वान् । अंजलिमौलिकहस्तस्त्रिकरणशुद्ध्या नम-
 स्यामि ॥

सप्तांकमादियाणि अष्टांकमवसानमाणि षण्णवांशकंगळं मध्यमागुळं त्रिहीननवकोटिसंयत- १५
 गळनंजलिमौलिकहस्तनाणि मनोवाक्कायशुद्धिगळिदं वंदिसुवे ॥ एदितु सद्धंसंयमिगळ संख्येयो

कास्तदर्थं भवन्ति । पुनः प्रत्येकबुद्धाः तीर्थङ्कराः स्त्रीवेदिनः नपुंसकवेदिनः मनःपर्ययज्ञानिनः अवधिज्ञानिनः
 उत्कृष्टावगाहाः अधन्यावगाहाः बहुमध्यमावगाहाराच क्षनकाः क्रमशः दश षट्विंशतिः दश विंशतिः अष्टाविंशतिः
 द्वौ चत्वारः अष्टौ, उपशमकाः तदर्थं भवन्ति । सर्वे मिलित्वा क्षपकाः ४३२ । उपशमकाः २१६ ॥६३०-६३२॥
 अथ सर्वसंयमिसंख्यामाह— २०

आदी सप्ताङ्कं अन्तेऽष्टाङ्कं च लिखित्वा तयोर्मध्ये च षट्सु नवाङ्केषु लिखितेषु संजनितशूननवकोटि-
 संख्यामात्रान् सर्वसंयतान् अञ्जलिमौलिकहस्तोऽहं मनोवाक्कायशुद्ध्या नमस्यामि । ८९९९९९९७ । अत्र च

होते हैं । और उपशमक इनसे आधे अर्थात् चौवन-चौवन होते हैं । पुनः क्षपकश्रेणीवाले
 प्रत्येकबुद्ध दस, तीर्थकर छह, स्त्रीवेदी बीस, नपुंसकवेदी दस, मनःपर्ययज्ञानी बीस,
 अवधिज्ञानी अट्ठाईस, उत्कृष्ट अवगाहनावाले दो, जघन्य अवगाहनावाले चार, बहुमध्यम २५
 अवगाहनावाले आठ एक समयमें उत्कृष्ट रूपसे होते हैं । उपशमक इनसे आधे होते हैं ।
 सो उक्त सब क्षपकोंकी संख्या मिलकर चार सौ बत्तीस होती है और उपशमकोंकी दो सौ
 सोलह ॥६३०-६३२॥

आगे सब संयमियोंकी संख्या कहते हैं—

सातका अंक आदिमें और अन्तमें आठका अंक लिखकर दोनोंके मध्यमें छह नौके ३०

सि	३
० अ	५९८
० स	८२८५०२
० क्षी	५९८
० उ	२२२१०
० सु	२२२१५९८॥
० अ	२२२१५९८॥
० अ	२२२१५९८॥
० अ	२२२२२२१०३
० प्र	५९३२२८२०६
० दे	प ३ ४ ३ ॥ १३ को
० अ	प ७०० को
० मि	प १०४ को
सा	प ५२ को
मि	१३-

आगे चारों गतिके मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, मिश्र और असंयतसम्यग्दृष्टियों—
२० की संख्याके साधक पत्न्यके भागहार विशेषोंको कहते हैं—

गुणस्थानदोषेन्द्र असंयतसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिध्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिगळे बी मूर्ह
गुणस्थानंगळ आवुवु केलवु पत्यम्के पोक्क भागहारंगळ अ ० वुरूपोनावल्यसंख्यातदिदं

मि ० ०

सा ० ० ४

०-१ । भागिसि भागिसि तंतम्म हारदोळे कूडल्पट्टुवादोळे देवोघदोळु तंतम्म भागहारंगळपुवु ।

अ ० ० मत्तमी देवसामान्यगुणस्थानत्रयभागहारंगळं रूपोनावल्यसंख्यातदिदं भागिसि

०-१

मि ० ० ०

०-१

सा ० ० ४ ०

०-१

भागिसिदेकभागमं तंतम्म हारंगळोळु प्रक्षेपिसुत्तं विरलु सौधर्मेशानकल्पद्वयद असंयतमिश्रसासा- ५
दनरंगळ भागहारंगळपुवु । सौधर्मकल्पद्वयद असंयतन भागहारंगळ प मिश्रभागहारंगळ

० ० ०

०-१०-१

प सासादनर भागहारंगळ प अनंतरमी सौधर्मकल्पद्वयासंयतादि सासादनगुण-

० ० ० ०

० ० ४ ० ०

०-१०-१

०-१०-१

गुणस्थानोक्ताः असंयतसम्यग्मिध्यादृष्टिसासादनानां ये पत्यासंख्यातप्रविष्टभागहाराः अ ०

मि ० ०

सा ० ० ४

एतेषु रूपोनावल्यसंख्यातेन ०-१ भक्त्वा एतेष्वेव निक्षिप्तेषु देवोषे स्वस्वभागहारा भवन्ति ।

अ ० ० एतान् पुनः रूपोनावल्यसंख्यातेन भक्त्वा एकैकभागे स्वस्वहारे प्रक्षिप्ते सौधर्मेशानासंयत- १०

०-१

मि ० ० ०

०-१

सा ० ० ४ ०

०-१

गुणस्थानोंमें जीवोंकी संख्या कहते हुए पूर्वमें जो असंयत, सम्यग्मिध्यादृष्टि और सासादनोंके पत्यके भागहार कहे हैं, उनमें एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देनेसे जो प्रमाण आवे, उन्हें उन्हीं भागहारोंमें मिलानेसे देवगतिमें अपना-अपना भागहार होता है । इन भागहारोंको पुनः एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक-एक भाग अपने-अपने भागहारमें मिलानेपर सौधर्म और ऐशान स्वर्गमें असंयत मिश्र और सासादनोके भागहार होते हैं ।

विशेषार्थ—पहले असंयतगुणस्थानमें भागहारका प्रमाण एक बार असंख्यात कहा था । उसे एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देनेसे जो प्रमाण आवे, उसे उस भागहारमें मिलानेपर जो प्रमाण हो, उतना देवगतिसम्बन्धी असंयतगुणस्थानका भागहार जानना । इस भागहारका भाग पत्यमें देनेसे जो प्रमाण आवे, उतने देवगतिमें असंयतगुणस्थानवर्ती जीव हैं । मिश्रमें दो बार असंख्यातरूप और सासादनमें दो बार १५ २०

सप्तमपृथिव्य गुणस्थानत्रयपर्यंतसंबी व्याप्तिर्यं पेन्द्रपं :—

उवरि असंजदमिस्सयसासणसम्माण अवहारा ॥६३६॥

सौधर्मकल्पद्वयदत्तासादनं सम्यग्दृष्टिगळ भागहारम् ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ निदानसंख्यातदिदं च
ॐ - १० - १

अनंतरमी गुणितक्रमदठ्यांमियं पेळदपं :—

a a a a a a a a a x a a
 a-?, a-? a-?, a-? a-?, a-?

१५ गुणिते यथासंख्यमुपरिसानत्कुमारद्वये असंख्यातमिश्रसाप्तादनहारा भवन्ति । ॐ ॐ ॐ ॐ ४ ॐ
a-१ a-१

a a a a x a a a a a a x a a x ||६३६|| अथास्य गुणितक्रमस्य व्याप्तिमाह—
a-१ a-१ a-१-a-१

सौधर्म और ऐशानमें सासादनका जो भागहार है, उससे असंख्यातगुणा भागहार सान्तकुमार, माहेन्द्र स्वर्गमें असंयतसम्बन्धी है। 'च' शब्दसे इस असंयतके भागहारसे २५ असंख्यातगुणा मिश्रगुण सम्बन्धी भागहार है और उससे संख्यातगुणा सासादनसम्बन्धी भागहार है ॥६३६॥

आगे इस गुणितक्रमकी व्याप्ति कहते हैं—

सौहर्मादासारं जोइसवणभवनतिरियपुढवीसु ।

अविरदमिस्सेअसंखे संखासंखगुणं सासणे देसे ॥६३७॥

सौधर्मादासहस्रारं ज्योतिषिकवानभावनतिर्यक्पृथ्वीषु । अविरतमिश्रेऽसंख्ये संख्य असंख्य-
गुणं सासादने देशसंयते ॥

सौधर्मद्वयदत्तणिदं मेळे सानत्कुमारकल्पद्वयं मोदल्लोडु सहस्रारकल्पपट्यंतं कल्पद्वय- ५
पंचकदोळं ज्योतिषिकवानभावनतिर्यच प्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थपंचमषष्ठसप्तमपृथ्वीयं बी षोडश
स्थानदोळमवितरोळं मिश्ररोळमसंख्यातगुणितक्रममक्कु । सासादनरोळुसंख्यातगुणमक्कु । तिर्यच-
देशसंयतरोळसंख्यातगुणमक्कुमदं तेदोडेमु पेळद सानत्कुमारकल्पद्वयव सासादनहारमं नोडलु
ब्रह्मकल्पद्वयासंयतहारमसंख्यातगुण ००००४००४० मदं नोडलु मिश्रहारमसंख्यातगुण
० - १० - १

००००४००४०० मदं नोडलु सासादनर हारं संख्यातं गुणमक्कु ००००४००४००४ १०
० - १० - १ ० - १० - १

मदं नोडलु लांतवकल्पद्वयदऽसंयतहारमसंख्यातगुण ००००४००४।२।० मदं नोडलु
० - १० - १

मिश्र हारमसंख्यातगुण ००००४००४।२।०० मदं नोडलु सासादनहारं संख्यातगुण
०-१०-१

मक्कु ००००४००४।२।००४ मदं नोडलु शुक्रकल्पद्वयासंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु
० - १० - १

००००४००४।३।० मदं नोडलु मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु ००००४००४।३।००
० - १० - १ ० - १० - १

मदं नोडलु तत्रत्य सासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ००००४००४।३००४ मदं नोडलु १५
० - १० - १

सौधर्मद्वयादुपरि सानत्कुमारादिसहस्रारपर्यन्तं पञ्चयुगेषु ज्योतिषिकवानभावनतिर्यक्सप्तपृथ्वीषु चेति
षोडशस्थानेषु अविरते मिश्रे त्वसंख्येयगुणितक्रमः सासादने संख्यातगुणितक्रमः, तिर्यग्देशसंयते असंख्यातगुणित-
क्रमश्च भवति । तथाहि—उक्तसानत्कुमारद्वयसासादनहारात् ब्रह्मद्वयस्य असंयतहारोऽसंख्यातगुणः । ततो
मिश्रहारोऽसंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिचतुरङ्कः । ततः लांतवद्वये
असंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः शुक्रद्वये- २०

सौधर्मसे ऊपर सानत्कुमारसे लेकर सहस्रार पर्यन्त पाँच स्वर्ग युगलोमें और
ज्योतिषी, व्यन्तर, भवनवासी, तिर्यच, और सात नरक इन सोलह स्थानोंमें अविरत और
मिश्रमें असंख्यात गुणितक्रम जानना । सासादनमें संख्यात गुणितक्रम जानना । और तिर्यच
सम्बन्धी देशसंयत गुणस्थानमें असंख्यात गुणितक्रम जानना । इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार
है—सानत्कुमार, माहेन्द्रमें जो सासादनका भागहार कहा, उससे ब्रह्म-ब्रह्मोत्तरमें असंयतका २५
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका
भागहार संख्यातगुणा है । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि चारका अंक ४ है । उससे लांतव-
कापिष्ठमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा
है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे शुक्र-महाशुक्रमें असंयतका
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासा- ३०
दनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे शतारसहस्रारमें असंयतका भागहार

- शतारकल्पद्वयासंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ४ ० मंदं नोडलु तन्मिश्रहारम-
० - ०१ - १
- संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ४ ० ० मंदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ५ १ ४ ० ० ४ मंदं नोडलु ज्योतिषिकाअसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ५ ० मंदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ५ ० ०
० - १० - १
- ५ मंदं नोडलु तत्रत्य सासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ५ ० ० ४ मंदं नोडलु
० - १० - १
- व्यंतरासंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ६ ० मंदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यात-
० - १० - १
- गुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ६ ० ० मंदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ६ ० ० मंदं नोडलु भवनवासिकासंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ७ ०
० - १० - १
- मंदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ ७ ० ० मंदं नोडलु तत्रत्यसासा-
० - १० - १
- १० दनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ७ १ ० ० ४ मंदं नोडलु तिर्घ्यचासंयतहारम-
० - १० - १
- संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ८ मंदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ८ ० ० मंदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ८ ० ०
० - १० - १
- मंदं नोडला तिर्घ्यदेशसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु तिर्घ्यदेशसंयतर (हारं नोडलु) प्रथमपृथ्विनारका-
असंयतहारः असंख्यातगुणः । ततो मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः शतारक-
असंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः ज्योति-
१५ षकासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः
व्यन्तरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः
भवनवास्यसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः ।
ततस्तिर्यगसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । सासादनहारः संख्यातगुणः । ततस्ति-
असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका
२० भागहार संख्यातगुणा है । उससे ज्योतिषीदेवोंमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है ।
उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है ।
उससे व्यन्तरोंमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यात-
गुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे भवनवासियोंमें असंयतका
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका
२५ भागहार संख्यातगुणा है । उससे तिर्यचोंमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे
मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे
तिर्यचोंमें ही देशसंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । जो तिर्यचोंमें देशसंयतका भागहार

संयतहारमुमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४ ९ a	प्रथमपृथ्वि = असंयतहार	
	a - १a - १		
a a a a ४ a a ४। ९। a	मदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ९। a a	
a - १a - १		a - १a - १	
मदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं	संख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। ९ a a ४	मदं नोडलु
		a - १a - १	
द्वितीयपृथ्वि असंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १०। a।	मदं नोडलु	
	a - १a - १		
तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १०। a a	मदं नोडलु तत्रत्यसासादन-	५
	a - १a - १		
हारं संख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १०। a a ४।	मदं नोडलु तृतीयधराऽसंयत-	
	a - १a - १		
हारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। ११। a।	मदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुण-	
	a - १a - १		
मक्कु	a a a a ४ a a ४ ११ a a	मदं नोडलु तत्रत्य सासादनहारं संख्यातगुणमक्कु	
	a - १a - १		
a a a a ४ a a ४। ११ a a ४	मदं नोडलु चतुर्थभूनारकाऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु		
a - १a - १			
a a a a ४ a a ४। १२। a	मदं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १२। a a	१०
a - १a - १		a - १a - १	
मदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं	संख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १२। a a ४	मदं नोडलु
		a - १a - १	
पंचमधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १३। a	मदं नोडलु तन्मिश्रहारम-	
	a - १a - १		
संख्यातगुणमक्कु	a a a a ४ a a ४। १३। a a	मदं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुण-	
	a - १a - १		

यंदेशसंयतहारः असंख्यातगुणः । अयमेव प्रथमपृथिव्यसंयतस्यापि हारः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः द्वितीयपृथिव्यसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः तृतीयपृथिव्यसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः चतुर्थपृथिव्यसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः पञ्चमधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः

है, वही भागहार प्रथम नरकमें असंयतका भी है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे दूसरे नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे तीसरे नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे चौथे नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे पंचम नरकमें असंयत भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका

मक्कु ० ० ० ० ४ । १३ ० ० ४ मं नोडलुं षष्ठधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ।
० - १० - १

० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० मं नोडलु तन्मिश्रहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० ०
० - १० - १ ० - १० - १

मं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ । ० ० ४ मं नोडलु
० - १० - १

सप्तमधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ ० मं नोडलु तन्मिश्रहारम-
० - १० - १

५ संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० मं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुण-
० - १० - १

मक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० ४ मन्तरमानतादिगळोळु हारमं वेळदपं :—
० - १ ० - १

चरमधरासाणहारा आणदसम्माण आरणप्पहुडि ।

अंतिमगेवेज्जंतं सम्माणमसंखसंखगुणहारा ॥६३८॥

चरमधरासासादनहाराः आनतसम्बन्धदृष्टिनामारणप्रभृत्यन्तिमग्रैवेयकांतं सम्बन्धदृष्टीनाम-

१० संख्यसंख्यगुणहाराः ॥

ततो ताणुत्ताणं वामाणमणुद्धिसाण विजयादी ।

सम्माणं संखगुणो आणदमिस्से असंखगुणो ॥६३९॥

ततस्तेषामुक्तानां वामानामनुद्दिशानां विजयादिसम्बन्धदृष्टीनां संख्यगुणः आनतमिश्रेऽ-
संख्यगुणः ॥

१५ असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः षष्ठधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः सप्तमधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिश्रहारः
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः ॥६३७॥ अथानतादिषु गायानयेणाह—

तत्सप्तमपृथ्वीसासादनहारात् आनतद्वयासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः आरणद्वयाद्यन्तिमग्रैवेयकान्त-
दशपदासंयतानां दशहाराः संख्यातगुणक्रमाः स्युः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः पञ्चाङ्कः ॥६३८॥

२० ततोऽन्तिमग्रैवेयकासंयतहारात् आनतद्वयादितदुक्तैकादशपदमिथ्यादृष्टीनां एकादशहाराः संख्यातगुणित-
क्रमाः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः षडङ्कः । ततः तदन्तिमग्रैवेयकवामहारात् नवानुदिशविजयादिचतुर्विमाना-

भागहार संख्यातगुणा है । उससे छठी पृथ्वीमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है ।
उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है ।
उससे सातवें नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार

२५ असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है ॥६३७॥

आगे आनतादिमें तीन गाथाओंसे कहते हैं—

सप्तम पृथ्वीसम्बन्धी सासादनके भागहारसे आनत-प्राणत सम्बन्धी असंयतका
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे आरण-अच्युतसे लेकर अन्तिम ग्रैवेयक पर्यन्त दस
स्थानोंमें असंयतोंका भागहार क्रमसे संख्यातगुणा संख्यातगुणा है । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि

३० पाँचका अंक है ॥६३८॥

उस अन्तिम ग्रैवेयक सम्बन्धी असंयतोंके भागहारसे आनत-प्राणत युगलसे लेकर

ततो संखेज्जगुणो सासणसम्माण होदि संखगुणो ।

उत्तङ्गणे कमसो पणछस्सत्तट्ठचदुरसंदिट्ठी । ६४० ॥

ततः संख्येयगुणः सासादनसम्यग्दृष्टीनां भवति संख्यगुणः । उक्तस्थाने क्रमशः पंचषट्-
सप्ताष्टचत्वारः संदृष्टिः ॥ गथा त्रितयं ॥

सप्तमपृथ्विसासादनसम्यग्दृष्टिय हारंगलु आनतकल्पद्वयसम्यग्दृष्टिगळ्गेयुं आरण अच्युत- ५
कल्पद्वयप्रभृत्यतिमग्रैवेयकपर्यंतमात्र सम्यग्दृष्टिगळ्गमुमसंख्यातगुणमुं संख्यातगुणमुं यथासंख्य-
मागियपुवदेते दोडे सप्तमपृथ्विसासादनसम्यग्दृष्टिय हारमं नोडलु आनतकल्पद्वयासंयतहारम-
संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ ० मदं नोडलु आरणाच्युतकल्पद्वयाऽसंयतसम्यग्-
० - १० - १

दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ० ५ मदं नोडलु अधस्तनाधस्तनद-
० - १० - १

नवग्रैवेयकसम्यग्दृष्टियहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ । ० ० ४ । १६ ० । ५ । ५ मदं नोडलु १०
० - १० - १

अधस्तनमध्यमग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु । ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ५ । ५ । ५
० - १० - १

मदं नोडलुमधस्तनोपरितनग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ ० । ५ । ५ । ५
० - १० - १

मदं नोडलुमध्यमाधस्तनग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ ० । ५ । ५ । ५ । ५
० - १० - १

मदं नोडलु मध्यम मध्यमग्रैवेयक सम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ ० । ५ । ५ । ५ । ५
० - १० - १

मदं नोडलु मध्यमोपरितनसम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ० । ५ । १५
० - १० - १

५ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ मदं नोडलुपरितनाधस्तनग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहारं संख्यातगुणमक्कु
० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ मदं नोडलुपरितनमध्यमग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहारं
० - १० - १

संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ० । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ मदं नोडलुपरितनोपरि-
० - १० - १

तनग्रैवेयकसम्यग्दृष्टिहार संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १६ । ० । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५
० - १० - १

संयतहारो द्वौ संख्यातगुणक्रमौ । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः सप्ताङ्कः । ततः विजयाद्यसंयतहारादानतद्वयमिश्रहारः २०
असंख्यातगुणः ॥ ६३९ ॥

तदानतद्वयमिश्रहारात् आरणद्वयादितद्वयपदमिश्रहाराः संख्यातगुणक्रमाः । अतः संख्यातस्य संदृष्टिः

अन्तिम ग्रैवेयक पर्यन्त ग्यारह स्थानोंमें मिथ्यादृष्टियोंके ग्यारह भागहार क्रमसे संख्यातगुणे २५
हैं । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि छहका अंक है । उस अन्तिम ग्रैवेयक सम्बन्धी मिथ्यादृष्टियोंके
भागहारसे नौ अनुदिश और विजयादि चार विमानोंमें असंयतोंके दो भागहार संख्यातगुणे-
संख्यातगुणे हैं । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि सातका अंक है । विजयादि सम्बन्धी असंयतके
भागहारसे आनत-प्राणत सम्बन्धी मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है ॥ ६३९ ॥

आनत-प्राणत सम्बन्धी मिश्रके भागहारसे आरण-अच्युतसे लेकर अन्तिम ग्रैवेयक

मदं नोडलु द्वितीयग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४॥ मदं नोडलु तृतीयग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४।४॥ मदं नोडलु चतुर्थग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४।४।४॥ मदं नोडलु पंचमग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४।४।४॥ मदं नोडलु षष्ठग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।८।८।८।८।८।८।८॥ मदं नोडलु सप्तमग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४।४।४।४॥ मदं नोडलु अष्टमग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।४।४।४।४।४।४।४।४॥ मदं नोडलु नवमग्रैवेयकसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु । ०।५।१०।६।११।७।२।०।८।१०।४।११॥ मी पेळल्पट्टु स्थानदोळु क्रमदिदमय्दु । ५। मारु । ६। मेळु ७। मंडु । ८। नाल्कु । ४। संख्यातक्के संदृष्टिगळे दारिवुदु ।

सगसग अवहारेहि पल्ले भजिदे ह्वंति सगरासी ।

सगसगगुणपडिवण्णे सगसगरासीसु अवणिदे वामा ॥६४१॥

स्वस्वावहारैः पत्ये भक्ते भवन्ति स्वस्वराशयः । स्वस्वगुणप्रतिपन्ने स्वस्वराशिष्वपनीते वामाः ॥

तंतम्म हारंगळिदमी पेळल्पट्टुवरिदं पत्यं भागिसल्पडुत्तिरलु तंतम्म राशिगळप्पुवु । तंतम्म स्थानद गुणप्रतिपन्नरं सासादनमिश्रासंयतदेशसंयतरं कूडि तंतम्म राशियोळ्कळियुत्तिरलु तंतम्म स्थानदोळु मिथ्यादृष्टिगळप्पह । अदं ते दोडे सामान्यगुणस्थानद गुणप्रतिपन्नरिदं हीनमाद वामरु किचिदूनसर्वसंसारिराशियक्कु । १३- देवौघगुणप्रतिपन्नरिदं हीनमाद वामरुगळु किचिदून-

देवौघमक्कु = १- सौधर्मकल्पद्वयोळु गुणप्रतिपन्नरिदं हीनघनांगुलतृतीयमूलगुणजगच्छेणि-
४।६५।= १

संदृष्टिश्चतुरङ्गः । एतेषूक्तपञ्चस्थलेषु संख्यातानां संदृष्टयः क्रमशः पञ्चषट्सप्ताष्टचतुरङ्का ज्ञातव्याः ॥६४०॥

प्रागुक्तैः स्वस्वहारैः पत्ये भक्ते सति स्वस्वराशयो भवन्ति । स्वस्वस्थानस्य गुणप्रतिपन्नेषु सासादनमिश्रासंयतदेशसंयतेषु मेलयित्वा स्वस्वराशावपनीतेषु शेषस्वस्वस्थाने मिथ्यादृष्टयो भवन्ति । तत्र सामान्ये

किचिदूनसंसारो १३- देवौघे किचिदूनतद्राशिः- = १- सौधर्मद्वये किचिदूना घनाङ्गुलतृतीयमूल-
४।६५=१

आनत आदि ग्यारह स्थानोंमें सासादनका भागहार क्रमसे संख्यातगुणा संख्यातगुणा है । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि चारका अंक है । ऊपर कहे इन पाँच स्थानोंमें संख्यातोंकी संदृष्टि क्रमसे पाँच, छह, सात, आठ और चारका अंक जानना ॥६४०॥

पहले कहे अपने-अपने भागहारोंसे पत्यमें भाग देनेपर अपनी-अपनी राशि होती है । अपने-अपने स्थानके सासादन, मिश्र, असंयत और देशसंयतोंको जोड़नेपर जो राशि हो, उसे अपनी-अपनी राशिमें घटानेपर जो शेष रहे, उतना अपने-अपने स्थानमें मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण होता है । सो सामान्यसे मिथ्यादृष्टि कुछ कम संसारोराशि प्रमाण हैं । सामान्य-

- प्रमितं वामरूपरु॥-३-। सनत्कुमारकल्पद्वयोऽङ्गु गुणप्रतिपन्नरिदं किञ्चिदूनैकादशजगच्छ्रेणिमूल-
भक्त जगच्छ्रेणिप्रमितंवामरूपरु॥ किञ्चिदूनविकल्लि हारंगङ्गु साधिकगङ्गे दु निश्चैसुवदू ११ ब्रह्मकल्प-
द्वयवामरुं निजनवममूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं किञ्चिदूनं वामरूपरु ९ लांतवकल्पद्वयोऽङ्गु निजसप्तम-
मूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं किञ्चिदूनमागि वामरूपरु १ शुककल्पद्वयोऽङ्गु निजपंचममूलभक्तजग-
५ च्छ्रेणिमात्रं किञ्चिदूनमागि वामरूपरु ५ । शतारकल्पद्वयोऽङ्गु निजचतुर्थमूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं
किञ्चिदूनमागि वामरूपरु ४ । ज्योतिष्करोऽङ्गु गुणप्रतिपन्नरिदं किञ्चिदूनमागि पण्णट्टिमात्र
प्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरमात्रं वामरूपरु ४ । ६५ = व्यंतररोऽङ्गु गुणप्रतिपन्नराशित्रयहीन
संख्यातप्रतरांगुल भक्तजगत्प्रतरमात्रं वामरूपरु ४ । ६५ = ८ १ १ ० । भवनवासिगरोऽङ्गु
गुणप्रतिपन्नराशित्रयहीनघनांगुलप्रथममूलमात्रं जगच्छ्रेणिप्रमितं वामरूपरु -१-। तिथ्यंचरोऽङ्गु
१० गुणप्रतिपन्नराशिचतुष्टयविहीनसकलसंसारिराशितत्रयवामरूपरु १३-। प्रथमपृथिव्योऽङ्गु
गुणप्रतिपन्नराशित्रयहीनघनांगुलद्वितीयमूलगुणजगच्छ्रेणियोऽङ्गु साधिकद्वादशांशविहीनमात्रं वामरु-
गळप्परु -- २-१२ । द्वितीयपृथिव्योऽङ्गु गुणप्रतिपन्नराशित्रयविहीन निजद्वादशमूलभक्तजगच्छ्रेणि-
मात्रं वामरूपरु १ २ तृतीयपृथिव्योऽङ्गु निजदशममूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं गुणप्रतिपन्नरु
गळिदं किञ्चिदूनमवकु १ ० चतुर्थपृथिव्योऽङ्गु गुणप्रतिपन्नरुगळिदं विहीन २ निजाष्टममूल

- १५ जगच्छ्रेणिः । सनत्कुमारद्वयादिपञ्चयुग्मेषु किञ्चिदूना क्रमशो निर्जकादशमनवमसप्तमपञ्चमचतुर्थमूलभक्तजगच्छ्रेणिः,
ऊनताव हाराधिका ज्ञेया । ज्योतिष्के पण्णट्टिप्रतराङ्गुलभक्तः व्यन्तरसंख्यातप्रतराङ्गुलभक्तश्च जगत्प्रतरः
किञ्चिदूनः । भवनवासिषु किञ्चिदूना घनाङ्गुलप्रथममूलहृतजगच्छ्रेणिः । तिर्यक्षु किञ्चिदूनः सर्वतिर्यग्राशिः १३-।
प्रथमपृथिव्यां किञ्चिदूना घनाङ्गुलद्वितीयमूलगुणहृतजगच्छ्रेणिः साधिकद्वादशांशोना -२=१ । द्वितीयादि-
१२

- २० देवोंमें कुछ कम देवराशि प्रमाण मिथ्यादृष्टि होते हैं । सौधर्मयुगलमें घनांगुलके तृतीय
वर्गमूलसे गुणित जगत्श्रेणि प्रमाणमें-से कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । सानत्कुमार
आदि पाँच युगलोंमें क्रमसे जगत्श्रेणिके ग्यारहवें, नौवें, सातवें, पाँचवें और चौथे वर्गमूल-
का भाग जगत्श्रेणिमें देनेसे जो प्रमाण आवे, उसमें कुछ-कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण
है । यहाँ कमीका कारण भागहारकी अधिकता जानना । ज्योतिषीदेवोंमें पण्णट्टिप्रमाण
प्रतरांगुलसे और व्यन्तरोंमें संख्यात प्रतरांगुलसे जगत्प्रतरमें भाग देनेपर जो प्रमाण आवे,
२५ उसमें कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । भवनवासियोंमें घनांगुलके प्रथम वर्गमूलसे
गुणित जगत्श्रेणि प्रमाणमें कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । तिर्यचोंमें कुछ कम सर्व-
तिर्यचराशि प्रमाण मिथ्यादृष्टि हैं । प्रथम पृथिवीमें घनांगुलके दूसरे वर्गमूलसे कुछ अधिक
बारहवें भागसे हीन जगत्श्रेणिको गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उसने सब नारकी हैं; उनसे
कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । द्वितीयादि पृथिवियोंमें क्रमसे जगत्श्रेणिके बारहवें,

भक्तजगच्छ्रेणिमात्रं वामरुगळप्पु ८ । पंचमपृथ्वियोळु गुणप्रतिपन्नराशित्रयविहीननिज-
षष्ठमूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं वामरुगळप्पु ६ । षष्ठपृथ्वियोळु गुणप्रतिपन्नराशित्रयविहीननिज-
तृतीयमूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं वामरुगळप्पु ३ । सप्तमपृथ्वियोळु गुणप्रतिपन्नराशित्रयविहीन-
निजद्वितीयमूलभक्तजगच्छ्रेणिमात्रं वामरुगळप्पु २ । आनतादिगळोळु कंठोक्तमागि पेळल्-
पट्टरु । सर्वार्थसिद्धिविमानाहमिन्द्र असंयतसम्यग्दृष्टिगळु । 'तिगुणा सत्तगुणा वा सब्बट्टा माणुसी ५
पमाणादो' एदितु संख्यातमप्पु ४२ = ४२ = ४२ = ३ । ३ । ७॥ मनुष्यगतियोळु देशसंयतादिगळं
पेळदणं :—

तेरसकोडीदेसे वावण्णं सासणे मुणेदन्वा ।

मिस्सावि य तद्दुगुणा असंजदा सत्तकोडिसया ॥६४२॥

त्रयोदशकोटयो देशसंयते द्विपंचाशत्कोटयः सासादने ज्ञातव्याः । मिश्राश्चापि तद्विगुणा १०
भवन्ति असंयताः सप्तकोटिशताः ॥

मनुष्यगतियोळु देशसंयतरु पविमूरु कोटिगळप्पु १३ को । सासादनरु द्विपंचाशत्कोटि-
गळप्पु ५२ को । मिश्ररुगळु तद्विगुणमप्पु १०४ को । असंयतसम्यग्दृष्टिगळु सप्तकोटिशत-
प्रमितरप्पु ७०० को । प्रमत्तादिसंख्ये मुन्नमे पेळल्पट्टुदु ।

पृथ्वीषु किंचिदूना क्रमशो निजद्वादशदशमाष्टमषष्ठतृतीयमूलभक्तजगच्छ्रेणिः । आनतादिषु कण्ठोक्तयोक्ता । १५
सर्वार्थसिद्धावहमिन्द्रा असंयता एव । ते च मानुषीप्रमाणात्त्रिगुणाः सप्तगुणा वा भवन्ति ॥६४१॥
मनुष्यगतावाह—

देशसंयते त्रयोदशकोटयो मन्तव्याः । १३ को । सासादने द्विपञ्चाशत् कोट्यः ५२ को । मिश्रे ततो
द्विगुणाः १०४ को । असंयते सप्त शतकोट्यः ७०० को । प्रमत्तादीनां संख्या तु प्रागुक्ता ॥६४२॥

दसवें, आठवें, छठे, तीसरे और दूसरे वर्गमूलका भाग जगतश्रेणिमें देनेसे जो-जो प्रमाण २०
आवे, उसमें कुछ-कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । यहाँ जो अपनी-अपनी समस्त राशि-
में कुछ कम किया है सो दूसरे आदि गुणस्थानवाले जीवोंके प्रमाणको घटानेके लिए
किया है; क्योंकि मिथ्यादृष्टियोंकी तुलनामें उनका परिमाण बहुत अल्प है । आनतादिमें
मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण पहले कहा ही है । सर्वार्थसिद्धिमें अहमिन्द्र असंयत सम्यग्दृष्टि
ही है । मानुषियोंके प्रमाणसे उनका प्रमाण तिगुना और किन्हींके मतसे सात गुणा २५
कहा है ॥६४१॥

मनुष्यगतिमें कहते हैं—

मनुष्य देशसंयत गुणस्थानमें तेरह कोटि जानना । सासादनमें बावन कोटि जानना ।
मिश्रमें उससे दुगुने अर्थात् एक सौ चार कोटि जानना । असंयतमें सात सौ कोटि जानना ।
प्रमत्त आदिकी संख्या पहले कही है ॥६४२॥

जीविदरे कम्मचये पुण्णं पावोत्ति होदि पुण्णं तु ।

सुहपयडीणं दव्वं पावं असुहाण दव्वं तु ॥६४३॥

जीवेतरस्मिन् कम्मचये पुण्यं पापमिति भवति पुण्यं तु । शुभप्रकृतीनां द्रव्यं पापमशुभानां द्रव्यं तु ॥

- ५ जीवपदार्थं पेळवल्लि सामान्यादिं गुणस्थानंगळोळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानवर्त्तिगळुं सासादनगुणस्थानवर्त्तिगळुं पापजीवंगळु । मिश्रगुणस्थानवर्त्तिगळु पुण्यपापमिश्रजीवंगळेकंदोडे सम्यक्त्वमिथ्यात्वमिश्रपरिणामिगळपुदरिंदमसंयतगुणस्थानवर्त्तिगळु पुण्यजीवंगळेकंदोडे सम्यक्त्वसंयुक्तजीवंगळपुदरिंदं देशसंयतगुणस्थानवर्त्तिगळुं सम्यक्त्वमुमेकदेशव्रतंगळोळु कूडिदवपुदरिंदं पुण्यजीवंगळप्परु । प्रमत्ताद्ययोगिकेवल्लिगुणस्थानवर्त्तिगळनितुं पुण्यजीवंगळेदिनु
- १० पेळदंनंतरमजीवपदार्थं पेळवल्लि कम्मचयदोळु कम्मणस्कंधदोळु पुण्यमेदुं पापमेदुंमजीवपदार्थंमेरडु भेदमक्कुमल्लि पुण्यमेदुं बुदावुदेदोडे मत्ते शुभप्रकृतिगळ द्रव्यमक्कुमा शुभप्रकृतिगळावुवेदोडे सद्देद्यमुं शुभायुष्यंगळुं शुभनामकम्मप्रकृतिगळुमुच्चैर्गोत्रमे बिबु शुभप्रकृतिगळे बुवक्कुं । पापमेदुं बुदावुदेदोडे अशुभकम्मप्रकृतिगळ द्रव्यमक्कुमा अशुभप्रकृतिगळे बुदावुवेदोडे अतोन्त्यपापमेदी सूत्राभिप्रायदिंदमसद्देद्यमुं नरकायुष्यमुं नीचैर्गोत्रमुमशुभनामकम्मप्रकृतिगळुमे बिबुशुभप्रकृतिगळे बुवक्कुं ।
- १५ गळे बुवक्कुं ।

आसवसंवरदव्वं समयपवद्धं तु णिज्जरादव्वं ।

ततो असंखगुणिदं उक्कस्सं होदि णियमेण ॥६४४॥

आस्रवसंवरद्रव्यं समयप्रबद्धस्तु निज्जराद्रव्यं । ततोऽसंख्यगुणितमुत्कृष्टं भवति नियमेन ॥

- २० जीवपदार्थप्रतिपादने सामान्येन गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टयः सासादनाश्च पापजीवाः । मिश्राः पुण्यपापमिश्रजीवाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वमिश्रपरिणामपरिणतत्वात् । असंयताः सम्यक्त्वेन, देशसंयताः सम्यक्त्वेन देशव्रतेन च प्रमत्तादयः सम्यक्त्वेन व्रतेन च युतत्वात् पुण्यजीवा एव इत्युक्ताः । अनन्तरं अजीवपदार्थरूपणे कर्मचये—कामर्णस्कन्धे पुण्यं पापमिति अजीवपदार्थी द्वेषा । तत्र शुभप्रकृतीनां सद्देद्यशुभायुर्नामगोत्राणां द्रव्यं पुण्यं भवति । अशुभानां असद्देद्यादिसर्वाप्रशस्तप्रकृतीनां द्रव्यं तु पुनः पापं भवति ॥६४३॥

- २५ जीवपदार्थं सम्बन्धी सामान्य कथनके अनुसार गुणस्थानोंमें मिथ्यादृष्टि और सासादन तो पापी जीव हैं । मिश्रगुणस्थानवाले पुण्यपापरूप मिश्र जीव हैं, क्योंकि उनके सम्यक् मिथ्यात्वरूप मिश्र परिणाम होते हैं । असंयत सम्यक्त्वसे युक्त हैं, देशसंयत सम्यक्त्व और देशव्रतसे युक्त हैं, इसलिये ये तो पुण्यात्मा जीव ही हैं और प्रमत्तादि तो पुण्यात्मा हैं ही । इसके अनन्तर अजीव पदार्थका प्ररूपण करते हैं—कामर्ण-स्कन्ध पुण्यरूप भी होता है और पापरूप भी होता है । इस प्रकार अजीव पदार्थके दो भेद हैं । उनमें सातावेदनीय, शुभ आयु, शुभनाम और उच्चगोत्र ये शुभ प्रकृतियाँ हैं । इनका द्रव्य पुण्यरूप है । असातावेदनीय आदि सब अप्रशस्त प्रकृतियोंका द्रव्य पाप है ॥६४३॥
- ३०

आस्रवद्रव्यं संवरद्रव्यं प्रत्येकं समयप्रबद्धमक्कुं निज्जराद्रव्यं तु मत्ते समयप्रबद्धं नोडलुमसंख्यातगुणितमुत्कृष्टमक्कुं नियमदिदं ।

बन्धो समयप्रबद्धो किंचूणादिवद्धमेत्तगुणहाणी ।

मोक्खो य होदि एवं सद्दहिदच्चा दु तच्चट्ठा ॥६४५॥

बंधः समयप्रबद्धः किंचिदूनद्वचर्द्धमात्रगुणहानिर्मोक्षश्च भवत्येवं श्रद्धातव्यास्तु तत्त्वार्थाः ॥ ९

तु मत्ते बंधं समयप्रबद्धमेयक्कुं । मोक्षद्रव्यं किंचिदूनद्वचर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं गळप्पुवे दिदु तत्त्वार्थंगळु श्रद्धातव्यंगळप्पुवु ।

अनंतरं सम्यक्त्वभेदं येळदणं :—

खीणे दंसणमोहे जं सद्दहणं सुणिम्मलं होई ।

तक्खाइयसम्मत्तं णिच्चं कम्मक्खवणहेदू ॥६४६॥

१०

क्षीणे दर्शनमोहे यच्छ्रद्धानं भवति सुनिर्मलं । तत्क्षायिकसम्यक्त्वं नित्यं कम्मक्षयणहेतुः ॥

मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतिगळुमन्तानुबन्धितुष्टयं करणलब्धिपरिणामसामर्थ्यदिदं क्षीणमागुत्तं विरलु आवुदोदु श्रद्धानं सुनिर्मलमक्कुमदु क्षायिकसम्यग्दर्शनमेव बुदक्कुमा क्षायिकसम्यग्दर्शनं नित्यं नित्यमक्कुमेकंदोडे प्रतिपक्षकम्मप्रक्षयदिदं पुट्टिदात्मगुणविशुद्धिरूपसम्यग्दर्शनमक्षयमपुवरिदं प्रतिसमयं गुणश्रेणिकम्मनिज्जराकारणमक्कुमन्ते पेळल्पट्टदुदु । १५

दंसणमोहक्खविदे सिज्झवि एक्केव तदियतुरियभवे ।

णादिच्छवि तुरिय भवं ण विणस्सवि सेस सम्मं व ॥

आस्रवद्रव्यं संवरद्रव्यं च समयप्रबद्धः । निज्जराद्रव्यं तु पुनः उत्कृष्टं समयप्रबद्धान्नियमेनासंख्यातगुणं भवति ॥६४४॥

तु—गुणः बन्धोऽपि समयप्रबद्ध एव । मोक्षद्रव्यं किंचिदूनद्वचर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं भवतीति एवं तत्त्वार्थाः श्रद्धातव्याः ॥६४५॥ अथ सम्यक्त्वभेदमाह— २०

मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतित्रये अनन्तानुबन्धितुष्टये च करणलब्धिपरिणामसामर्थ्यात् क्षीणे सति यच्छ्रद्धानं सुनिर्मलं भवति तत्क्षायिकसम्यग्दर्शनं नाम । तच्च नित्यं स्यात् प्रतिपक्षप्रक्षयोत्पन्नात्मगुणत्वात् । पुनः प्रतिसमयं गुणश्रेणिनिज्जराकारणं भवति । तथा चोक्तं—

आस्रवद्रव्य और संवरद्रव्य प्रबद्ध प्रमाण है । किन्तु उत्कृष्ट निज्जराद्रव्य समयप्रबद्धसे नियमसे असंख्यातगुणा होता है ॥६४४॥ २५

बन्धद्रव्य भी समयप्रबद्ध प्रमाण ही है । और मोक्षद्रव्य किंचित् हीन डेढ गुण हानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है । इस प्रकार तत्त्वार्थोंका श्रद्धान करना चाहिए ॥६४५॥

आगे सम्यक्त्वके भेद कहते हैं—

करणलब्धि रूप परिणामोंकी सामर्थ्यसे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृति इन तीन दर्शनमोहके तथा अनन्तानुबन्धी क्रोध,मान,माया,लोभके क्षय होनेपर जो अत्यन्त निर्मल श्रद्धान होता है उसका नाम क्षायिक सम्यग्दर्शन है । वह नित्य है; क्योंकि प्रतिपक्षी कर्मोंके क्षयसे उत्पन्न होनेके साथ आत्माका गुण है । तथा प्रतिसमय गुणश्रेणि ३०

दर्शनमोहं क्षपिसत्पटुतिरलु तदभवदोळे सिद्धिसुगुं मेणु तृतीयचतुर्थभयंगळोळु कम्मक्षयमं
माळकुं । नालकनेय भवमनतिक्रमिसुबुदल्ल शेषसम्यक्त्वगळंतं किडुबुदुमल्लमडु कारणादिदं नित्यमं दु
पेळलपटुदु साक्षयानंतमं बुदर्थमनंतरमोयर्थनने पेळदपं :—

वयणेहि वि हेदुहि वि इंदियभयआणएहि रूवेहिं ।

५

बीभच्छजुगुं छाहि य तेलोक्केण वि ण चालेज्जो ॥६४७॥

वचनैरपि हेतुभिरपीन्द्रियमयानकैः रूपैः । बीभत्स्यजुगुप्साभिश्च त्रैलोक्येनापि न चालनीयं ॥
कुत्सितोक्तिर्गालिदमुं कुहेतुवृष्टांतर्गालिदमुं इन्द्रियंगळा भयंकरं गालिदमुं विकृतवेषं गालिदमुं
बीभत्स्यंगळत्तणिदप्प जुगप्सिर्गालिदमुं कि बहुना त्रैलोक्येनापि मूरं लोकदिदमुं क्षायिकसम्यक्त्वं
चलिसत्पटुदु । अंतप्य क्षायिकसम्यग्दर्शनमार्गवकुमं दोडे पेळदपर :—

१०

दंसणमोहवस्ववणापटुवगो कम्मभूमिजादो हु ।

मणुसो केवलिमूले णिडुवगो होदि सव्वत्थ ॥६४८॥

दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापकः कम्मभूमिजातस्तु मनुष्यः केवलिमूले निष्ठापको भवति सर्वत्र ॥
दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकं मत्ते कम्मभूमिजनककुमिल्लियं मनुष्यनेयकुमादोडं केवलिश्रीपाद-
मूलदोळु दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभमं माळकुं । चतुर्गतिगळोळेल्लियादोडं निष्ठापिसुगु ।
अनंतरं वेदकसम्यक्त्वस्वरूपमं पेळदपं—

१५

दर्शनमोहे क्षपिते सति तस्मिन्नेव भवे वा तृतीयभवे वा चतुर्थभवे कर्मक्षयं करोति चतुर्थभवं नाति-
क्रामति । शेषसम्यक्त्ववन्न विनश्यति । तेन नित्यमित्युक्तं । साक्षयानन्तमित्यर्थः । अमुमेवार्थमाह—

कुत्सितोक्तिभिः—कुहेतुदृष्टान्तैः इन्द्रियभयोत्पादकविकृतवेषैः बीभत्स्यवस्तुत्पन्नजुगुप्साभिः किं बहुना
त्रैलोक्येनापि क्षायिकसम्यक्त्वं न चालयितुं शक्यम् ॥६४७॥ तत्सम्यग्दर्शनं कस्य भवेत् ? इति चेदाह—

२०

दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकः कर्मभूमिज एव सोऽपि मनुष्य एव तथापि केवलिश्रीपादमूले एव भवति ।
निष्ठापकस्तु सर्वत्र चतुर्गतिषु भवति ॥६४८॥ अथ वेदकसम्यक्त्वस्वरूपमाह—

निर्जराका कारण होता है । कहा है—दर्शन मोहका क्षय होनेपर उसी भवमें या तीसरे
अथवा चौथे भवमें कर्मोंका क्षय करके मुक्ति प्राप्त करता है । चतुर्थ भवका अतिक्रमण नहीं
करता । और न अन्य सम्यक्त्वोंकी तरह नष्ट ही होता है । इसीसे इसे नित्य कहा है । अर्थात्
यह सादि अक्षयानन्त होता है ॥६४६॥

२५

इसी बातको कहते हैं—

कुत्सित वचनोंसे, मिथ्याहेतु और दृष्टान्तोंसे, इन्द्रियोंको भय उत्पन्न करनेवाले
भयंकर रूपोंसे, बिनाबनी वस्तुओंसे उत्पन्न हुई ग्लानिसे, बहुत कहनेसे क्या, तीनों लोकोंके
द्वारा भी क्षायिक सम्यक्त्वको विचलित नहीं किया जा सकता ॥६४७॥

३०

वह क्षायिक सम्यग्दर्शन किसके होता है, यह कहते हैं—

दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारंभ कर्मभूमिमें उत्पन्न हुआ मनुष्य ही केवलीके पाद-
मूलमें ही करता है । किन्तु निष्ठापक चारों गतियोंमें होता है ॥६४८॥

आगे वेदक सम्यक्त्वका स्वरूप कहते हैं—

१. मं मल्लदु ।

दंसणमोहदयादो उत्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं ।

चलमलिनमगाढं तं वेदयसम्मत्तमिदि जाणे ॥६४९॥

दर्शनमोहोदयादुत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानं । चलमलिनमगाढं तद्वेदकसम्यक्त्वमिति जानीहि ॥

दर्शनमोहनीयस्य सम्यक्त्वप्रकृत्युदयमागुतिर्होडमाबुदोदु तत्त्वार्थश्रद्धानं पुटदुगुमदु
चलमलिनमगाढमवकुमवं वेदकसम्यक्त्वमेदितु एले शिष्यने नीतरि । ५

अनंतरमुपशमसम्यक्त्वस्वरूपमुमं तत्सामग्रिविशेषमुमं गाथात्रयमिदं पेळदपं :—

दंसणमोहवसमदो उत्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं ।

उवसमसम्मत्तमिणं पसण्णमलपंकतोयसमं ॥६५०॥

दर्शनमोहोपशमतः उत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानं । उपशमसम्यक्त्वमिदं प्रसन्नमलपंकतोयसमं ॥

अनन्तानुबन्धिचतुष्टयोदयाभावलक्षणाप्रशस्तोपशममिदं दर्शनमोहत्रयप्रशस्तोपशममिदं प्रसन्न- १०
मलपंकतोयसमानमपुदाबुदोदु पदार्थश्रद्धानं पुटदुगुमदु उपशमसम्यक्त्वमेदु परमाणमबोळु
पेळत्पट्टुदु ।

खयउवसमियविसोही देसणपाओगकरणलद्धी य ।

चत्तारि वि सामण्णा करणं पुण होदि सम्मत्ते ॥६५१॥

क्षायोपशमिकविशुद्धिदेशना प्रायोग्यकरणलब्धयश्चतस्रः सामान्याः करणलब्धिः पुनः १५
सम्यक्त्वे भवति ॥

क्षायोपशमबोळावलब्धियं विशुद्धिलब्धियं देशनाप्रायोग्यकरणलब्धिगळुमेदितु लब्धि-
पंचकमुपशमसम्यक्त्वबोळपुववरोळु मोदल नात्कु लब्धिगळु भव्यनोळमभव्यनोळमपुवपुवदरिदं

दर्शनमोहनीयस्य सम्यक्त्वप्रकृतेः उदये सति यत्तत्त्वार्थश्रद्धानं चलं मलिनं अगाढं वोत्पद्यते तद्वेदक-
सम्यक्त्वमिति जानीहि ॥६४९॥ अथोपशमसम्यक्त्वस्वरूपं तत्सामग्रीविशेषं च गाथात्रयेण आह— २०

अनन्तानुबन्धिचतुष्कस्य दर्शनमोहत्रयस्य च उदयाभावलक्षणाऽप्रशस्तोपशमेन प्रसन्नमलपङ्क्तोयसमानं
यत्पदार्थश्रद्धानमुत्पद्यते तदिदमुपशमसम्यक्त्वं नाम ॥६५०॥

क्षायोपशमिकविशुद्धिदेशनाप्रायोग्यताकरणनाम्यः पञ्चलब्धयः उपशमसम्यक्त्वे भवन्ति । तत्र आद्याः

दर्शनमोहनीयकी सम्यक्त्व प्रकृतिका उदय होनेपर जो तत्त्वार्थश्रद्धानं चल, मलिन
वा अगाढ होता है, उसे वेदक सम्यक्त्व जानो ॥६४९॥ २५

उपशम सम्यक्त्वका स्वरूप और उसकी विशेष सामग्री तीन गाथाओंसे कहते हैं—

अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ और दर्शन मोहकी मिथ्यात्व, सम्यक्-
मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृति इन तीनके उदयका अभाव लक्षणरूप प्रशस्त उपशमसे
मलपंक नीचे बैठ जानेसे निर्मल हुए जलकी तरह जो पदार्थ श्रद्धानं उत्पन्न होता है, उसका
नाम उपशम सम्यक्त्व है ॥६५०॥ ३०

क्षायोपशमिकलब्धि, विशुद्धिलब्धि, देशनालब्धि, प्रायोग्यलब्धि और करणलब्धि ये
पाँच लब्धियाँ उपशमसम्यक्त्व होनेसे पूर्व होती हैं । इनमें-से आदिकी चार लब्धियाँ सामान्य

साधारणंगलेप्पुवु । करणलब्धि भव्यनोळेयप्पुदर्दिवं सम्यक्त्वग्रहणदोळं चारित्रग्रहणदोळमक्कुं ।

अनंतरमी युपशमसम्यक्त्वमं कैको ब जीवनं पेळवपरः—

चउमइ भव्वो सण्णी पज्जत्तो सुज्झगो य सागारो ।

जागारो सल्लेस्सो सलद्धिगो सम्ममुवगमइ ॥६५२॥

- ५ चतुर्गतिभव्यः संज्ञिपर्याप्तः शुद्धश्च साकारः । सल्लेश्यो जागरिता सलब्धिकः सम्यक्त्व-
मुपगच्छति ॥

चतुर्गतिभवनं संज्ञियं पर्याप्तकं विशुद्धं भेदग्रहणमाकारभेददरोळकूडिवनुमप्पुदर्दिवं
साकारं स्त्यानगृद्ध्यादिनिद्रात्रयरहितं भावशुभलेश्यात्रयदोळन्यतमलेश्यायुतं करणलब्धि-
परिणतनुमित्तं जीवं यथासंभवमप्य सम्यक्त्वमं पोद्धुं ।

- १० चत्तारि वि खेत्ताइं आउमवंधेण होइ सम्मत्तं ।

अणुवदमइव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥६५३॥

चतुर्णां क्षेत्राणामायुबंधेन भवति सम्यक्त्वं । अणुव्रतमहाव्रतानि न लभते देवायुष्कं मुक्त्वा ॥

नारकायुष्यमुमं तिर्यगायुष्यमुमं मनुष्यायुष्यमुमं देवायुष्यमुमं परभवायुष्यगळं कट्टिद
बद्धायुष्यरुगळप्प जीवंगळु सम्यक्त्वमं स्वीकरिमुवरल्लि दोषमिल्लमणुव्रतमहाव्रतंगळं पड्यल्के
१५ नरेयरल्लि, देवायुबंधमाद जीवंगळु अणुव्रतमहाव्रतंगळं स्वीकरिमुवर ।

चतस्रोऽपि सामान्याः भव्याभव्ययोः संभवात् । करणलब्धिवस्तु भव्य एव स्यात् तथापि सम्यक्त्वग्रहणे चारित्र-
ग्रहणे च ॥६५१॥ अथोपशमसम्यक्त्वग्रहणयोग्यजीवमाह—

यः चतुर्गतिभव्यः संज्ञी पर्याप्तकः विशुद्धः आकारेण भेदग्रहणेन सहितः स्त्यानगृद्ध्यादिनिद्रात्रयरहितः
भावशुभलेश्यात्रये अन्यतमलेश्यः करणलब्धिपरिणतः स जीवो यथासंभवं सम्यक्त्वमुपगच्छति ॥६५२॥

- २० चतुर्णां परभवायुषां एकतमबन्धेन जातबद्धायुष्यस्य सम्यक्त्वं भवत्यत्र दोषो नास्ति । अणुव्रतमहाव्रतानि
तु एकं बद्धदेवायुष्कं मुक्त्वा नान्ये लभन्ते ॥६५३॥

हैं-भव्य और अभव्य दोनोंके होती हैं; किन्तु अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण परिणाम
रूप करणलब्धि भव्यके ही होती है। वह भी सम्यक्त्व और चारित्र ग्रहणके समय होती
है ॥६५१॥

- २५ उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेके योग्य जीवको कहते हैं—

जो चारों गतियोंमें-से किसी भी गतिमें वर्तमान है; किन्तु भव्य, पर्याप्तक, विशुद्ध,
साकार उपयोगवाला, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्राओंसे रहित अर्थात्, तीन शुभ भाव
लेश्याओंमें-से किसी एक लेश्याका धारक और करणलब्धि रूप परिणत होता है, वह जीव
यथासंभव सम्यक्त्वको प्राप्त करता है ॥६५२॥

- ३० परभव सम्बन्धी चारों आयुओंमें-से किसी भी एक आयुका बन्ध कर लेनेपर जो
जीव बद्धायु हो गया है, उसके सम्यक्त्व उत्पन्न होनेमें कोई दोष नहीं है। किन्तु अणुव्रत और
महाव्रत एक बद्धदेवायु—जिसने परभव सम्बन्धी देवायुका बन्ध किया है—को छोड़कर
अन्य आयुका बन्ध कर लेनेवाले बद्धायुष्कके नहीं होते ॥६५३॥

ण य मिच्छत्तं पत्तो सम्मत्तादो य जो य परिवड्ढिदो ।

सो सासणोत्ति णेयो पंचमभावेण संजुत्तो ॥६५४॥

न च मिथ्यात्वं प्राप्तः सम्यक्त्वतश्च यश्च परिपतितः । सासादन इति ज्ञेयः पंचमभावेन संयुक्तः ॥

आवनोर्ध्वं जीवन्तु सम्यक्त्वदिदं बल्लिचि मिथ्यात्वमं पोहूँदेग्नेवरमिण्वग्नेवरमा जीवं ५
सासादनने दितरियल्पडुवं । दर्शनमोहनीयोदयोपशमादिनिरपेक्षापेक्षोयिदं पारिणामिकभावदोळ्ळकूडि-
दनुमप्पनेकं दोडे चारित्रमोहनीयापेक्षयिनातंगौदयिकभावमप्पुदरिदं ।

सद्दहणासद्दहणं जस्स य जीवस्स होइ तच्चेसु ।

विरयाविरयेण समो सम्मामिच्छोत्ति णायव्वो ॥६५५॥

श्रद्धानाश्रद्धानं यस्य च जीवस्य भवति तत्त्वेषु । विरताविरतेन समः सम्यग्मिथ्यादृष्टिरिति १०
ज्ञातव्यः ।

जीवादिपदार्थगळोळु आवनोर्ध्वंजीवंगे श्रद्धानमुमश्रद्धानमुमोम्मो'दलोळे संयतासंयतंगंतु
संयममुमसंयममुमोम्मो'दलोळेयक्कुमंते । मिश्रनोळु तत्त्वार्थश्रद्धानमुमतत्त्वार्थश्रद्धानमुमोम्मो'द-
लोळेयक्कुमप्पुदरिना जीवं सम्यग्मिथ्यादृष्टिये दितरियल्पडुवं ।

मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।

सद्दहदि असम्भावं उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ॥६५६॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्दधाति । श्रद्दधात्यसद्भावमुपदिष्टं वाऽनुपदिष्टं ॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवं उपदेशं गेय्यल्पट्टाप्तागमपदार्थगळं नंबुवनतलं । उपदेशं गेय्यल्पट्टुमनुपदेशं
गेय्यल्पडुदुमनसद्भावमननाप्तागमपदार्थगळं नंबुवं ।

यो जीवः सम्यक्त्वात्पतितो मिथ्यात्वं यावन्न प्राप्तः तावत् सासादन इति ज्ञेयं स च दर्शनमोहनीय- २०
स्वैवापेक्षया पारिणामिकभावेन सहितः, चारित्रमोहनीयापेक्षया तस्यौदयिकभावसद्भावात् ॥६५४॥

जीवादिपदार्थेषु यस्य जीवस्य श्रद्धानमश्रद्धानं च युगपदेव देशसंयमस्य संयमासंयमवद्भवति स जीवः
सम्यग्मिथ्यादृष्टिरिति ज्ञातव्यः ॥६५५॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टान् आप्तागमपदार्थान् न श्रद्दधाति । उपदिष्टान् अनुपदिष्टान्श्च असद्भावान्
अनाप्तागमपदार्थान् श्रद्दधाति ॥६५६॥ अथ सम्यक्त्वमार्गणायां जीवसंख्यां गाथात्रयेणाह— २५

जो जीव सम्यक्त्वसे गिरकर जबतक मिथ्यात्वको प्राप्त नहीं होता, तबतक उसे
सासादन जानना । वह दर्शन मोहनीयकी अपेक्षा ही पारिणामिक भाववाला होता है ।
चारित्र मोहनीयकी अपेक्षा तो अनन्तानुबन्धीका उदय होनेसे औदयिक भाववाला है ॥६५४॥

जैसे देशसंयमीके एक साथ संयम और असंयम दोनों होते हैं, वैसे ही जिस जीवके
जीवादि पदार्थोंमें श्रद्धान और अश्रद्धान दोनों ही एक साथ होते हैं, वह जीव सम्यग्मिथ्या- ३०
दृष्टि जानना ॥६५५॥

मिथ्यादृष्टि जीव जिन भगवान्के द्वारा कहे गये आप्त, आगम और पदार्थोंका श्रद्धान
नहीं करता; किन्तु कुदेवोंके द्वारा उपदिष्ट और अनुपदिष्ट असमीचीन मिथ्या आप्त, मिथ्या
आगम और मिथ्या पदार्थोंका श्रद्धान करता है ॥६५६॥

अनंतरं सम्यक्त्वमार्गणयोऽं जीवसंख्येयं गाथात्रयदिदं वेत्तव्यं—

वासपुधत्ते खइया संखेज्जा जइ हवन्ति सोहम्मे ।

तो संखपल्लठिदि ए केवडिया एवमणुपादे ॥६५७॥

५ वर्षपृथक्त्वे क्षायिकाः संख्येया भवन्ति सौधम्मं । तर्हि संख्यपल्यस्थितिके कियन्त एव-
मनुपाते ॥

वर्षपृथक्त्वदोऽं क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळु संख्यातप्रमितर सौधम्मकल्पद्वयोऽं पुदुवुरंता-
दोऽं संख्यातपल्यस्थितिकनोऽं एनिबर क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळुपरेंदितनुपातत्रैराशिकमं माडुत्तिरलु
प्रवर्ष ७ फ। क्षा = ७। इ। प ७। वंद लब्धमेनितवकुमे दोऽं :—

८

संखावलिहिदपल्ला खइया तत्तो य वेदगुवसमया ।

१० आवलि असंखगुणिदा असंखगुणहीणया कमसो ॥६५८॥

संख्यातावलिहृतपल्याः क्षायिकाः ततश्च वेदकोपशमकाः । आवल्यसंख्यगुणिताः असंख-
गुणहीनकाः क्रमशः ॥

संख्यातावलिगळिदं भागिसलपट्ट पल्यप्रमितर क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळुपर प मा क्षायिक-
२७

१५ सम्यग्दृष्टिगळं नोडलु वेदकसम्यग्दृष्टिगळुमुपशमसम्यग्दृष्टिगळुं क्रमविदमावल्यसंख्यातगुणित-
प्रमाणरुसंख्यातगुणहीनरुमपर वे प ० ३ = प
२१० २१०

यदि वर्षपृथक्त्वे क्षायिकसम्यग्दृष्टयः संख्याताः सौधर्मद्वये उत्पद्यन्ते तर्हि संख्यातपल्यस्थितिके कति
इत्यनुपाते त्रैराशिके कृते वर्ष ७ फ क्षा = १। इ प १ लब्धाः ॥६५७॥

८

संख्यातावलिभक्तपल्यमात्रकाः क्षायिकसम्यग्दृष्टयो भवन्ति प । तेभ्यः वेदकोपशमसम्यग्दृष्टयः क्रमेण
२१

आवल्यसंख्यातगुणितासंख्यातगुणहीना भवन्ति । वे = प ० ३ = प ॥६५८॥
२१ २१।०

२० सम्यक्त्वमार्गणामें जीवोंकी संख्या तीन गाथाओंसे कहते हैं—

यदि वर्षपृथक्त्व कालमें सौधर्मगुणलमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि संख्यात उत्पन्न होते हैं,
तो संख्यात पल्यकी स्थितिमें कितने उत्पन्न होते हैं। ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाणराशि
वर्षपृथक्त्व, फलराशि संख्यात जीव और इच्छाराशि संख्यात पल्य । सो फलराशिसे इच्छा-
राशिको गुणा करके उसमें प्रमाणराशिसे भाग देनेपर जो लब्ध आया, वह कहते हैं ॥६५७॥

२५ संख्यातआवलीसे भाजित पल्यप्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टि होते हैं । क्षायिकसम्यग्दृष्टियों-
की संख्याको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी संख्या होती
है । तथा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे असंख्यातगुणे हीन उपशमसम्यग्दृष्टि होते हैं ॥६५८॥

पन्नासंखेज्जदिमा सासणमिच्छा य संखगुणिदा हु ।

मिस्सा तेहि विहीणो संसारी वामपरिमाणं ॥६५९॥

पल्यासंख्यातैकभागाः सासादनमिथ्यादृष्टयश्च संख्यातगुणिताः खलु । मिश्राः तैर्विहीनः संसारी वामपरिमाणं ॥

पल्यासंख्यातैकभागप्रमितरु सासादनमिथ्यादृष्टिगळप्परु प मा सासादनरं नोडलु ५
० ० ४

सम्यग्मिथ्यादृष्टिगळु संख्यातगुणितमात्ररूपुरु प स्फुटमागि ई राशिपंचकविहीनसंसारिराशि-
० ०

वामरुगळ प्रमाणमक्कुं । वा १३-१ ।

नवपदार्थगळ प्रमाणं पेळत्पडुगुं । जीवंगळु । १६ अजीवंगळु पुद्गलंगळु सर्वजीवराशिगं
नोडलनंतगुणमक्कुं । १६ ख । धर्मद्रव्यमोदु १ । अधर्मद्रव्यमोदु १ । आकाशद्रव्यमोदु १ । काल-
द्रव्यं जगच्छ्रेणिघनप्रमितमक्कुं = मितजीव गुंदि साधिकपुद्गलराशिप्रमितमक्कुं ३ पुण्यजीव- १०

१६ ख

गळु असंयतरुं देशसंयतरुं कूडि प्रमत्ताद्युपरितनगुणस्थानवर्त्तिगळं संख्यातदिदं साधिकरूपुरु
प ० ० ४ अजीवपुण्यं द्व्यर्द्धगुणहानिसंख्यातैकभागमक्कु स ०-१२-१ पापजीवंगळु
० ० ० ४ १

साधिकसिद्धराशिविहीन संसारिराशिप्रमाणमप्परु १३ । अजीवपापं द्व्यर्द्धगुणहानिसंख्यातबहु-

पल्यासंख्यातैकभागमात्राः सासादनमिथ्यादृष्टयः प तैम्यः सम्यग्मिथ्यादृष्टयः संख्यातगुणाः प
० ० ४ ० ०

स्फुटं एतद्राशिपञ्चकोनसंसारिराशिर्वामपरिमाणं भवति वा १३-नवपदार्थप्रमाणमुच्यते— १५

जीवाः १६ अजीवेषु पुद्गलाः सर्वजीवराशितोऽनन्तगुणाः १६ ख । धर्मद्रव्यमेकं । अधर्मद्रव्यमेकं ।
आकाशद्रव्यमेकं । कालद्रव्यं जगच्छ्रेणिघनमात्रं । ३ । एवमजीवपदार्थो मिलित्वा साधिकपुद्गलराशिमात्रः
३

१६ ख । पुण्यजीवा असंयतदेशसंयतान्मेलयित्वा तत्र प्रमत्तादीनां संख्याते युते एतावन्तः प ० ० ४ अजीव-
० ० ० ४

पुण्यं द्व्यर्द्धगुणहानिसंख्यातैकभागः स ० १२-१ पापजीवाः साधिकपुण्यजीवसिद्धराशिविहीनसंसारिराशिः १३-१
१

पल्यके असंख्यातवें भाग सासादन होते हैं, जिनकी रुचि मिथ्या होती है । उनसे २०
सम्यग्मिथ्यादृष्टि संख्यातगुणे हैं । संसारी जीवोंकी राशिमेंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक-
सम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादन और मिश्र इन पाँचकी राशियोंको घटानेपर मिथ्या-
दृष्टियोंका परिमाण होता है । अब नौ पदार्थोंका परिमाण कहते हैं—जीव अनन्त हैं ।
अजीवोंमें पुद्गल समस्त जीवराशिसे अनन्तगुणा है । धर्मद्रव्य एक है । अधर्मद्रव्य एक है ।
आकाशद्रव्य एक है । कालद्रव्य जगत्श्रेणिके घन अर्थात् लोकप्रमाण है । इस प्रकार अजीव २५
पदार्थ सब मिलकर साधिक पुद्गलराशिप्रमाण है । असंयत और देशसंयतोंके प्रमाणको
प्रमत्त आदिके प्रमाणमें मिलानेपर पुण्य जीवोंका प्रमाण होता है । डेढ़ गुण-हानि प्रमाण

भागमात्रमक्कुं स ११ १ आस्रवपदार्थ समयप्रबद्धप्रमाणमक्कुं स ० संवरद्रव्यं समयप्रबद्ध-
 १
 प्रमितमक्कुं । स ० । निर्जराद्रव्यमिदु स ० बन्धद्रव्यं समयप्रबद्धमक्कुं । स ० मोक्षद्रव्यं
 १२ । ६४

प । ८५

० ०

द्वयर्द्धगुणहानिप्रमितमक्कुं स ० १२-१ । संदृष्टिः—

सामान्यजीव १६

अजी = सा

बंध स ०

३

४

५ पुण्यजीव ० ५ ० ० ४

१६ ख

१ १ १ ४

पु स ० १२ । १

मोक्ष सं ० १२

०

पापजीव १३ =

पाप ० १२-१

आस्र स ०

संवर स ०

निर्ज स ० १२ = ६४

प । ८५ ।

०

अजीवपापं द्वयर्द्धगुणहानिसंख्यातबहुभागः स ० १२-१ आस्रवपदार्थः समयप्रबद्धः स ० । संवरद्रव्यं
 १

समयप्रबद्धः स ० । निर्जराद्रव्यमेतावत्- स ० १२-१ । ६४ बन्धद्रव्यं समयप्रबद्धः स ० । मोक्षद्रव्यं
 ऊ प ८५

०

किंचिदूनद्वयर्द्धगुणहानिः स ० १२-॥६५९॥

- १० समय प्रबद्धोंमें-से संख्यातवें भाग अजीवपुण्यका परिमाण है । संसारी राशियोंमें-से मिश्रकी अपेक्षा कुछ अधिक पुण्यजीवोंके प्रमाणको घटानेसे पापजीवोंका प्रमाण होता है । डेढ़ गुण-हानिप्रमाण समयप्रबद्धोंमेंसे संख्यात बहुभाग अजीवपापका परिमाण है । आस्रव पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है । संवर द्रव्य समयप्रबद्ध प्रमाण है । निर्जराद्रव्य गुणश्रेणि निर्जराके षष्ठ्यष्ट द्रव्यप्रमाण है । बन्धद्रव्य समयप्रबद्धप्रमाण है । मोक्षद्रव्य कुछ कम डेढ़ गुणहानि-
 १५ प्रमाण है ॥६५९॥

इंतु भगवदहंत्परमेश्वर चारुचरणारविंदद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमान श्रीमद्वायराजगुरु-
मंडलाचार्यमहावादादीश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्ति श्रीमदभयसूरिसिद्धान्तचक्र-
वर्ति श्रीपादपंकजराजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवर्णविरचितगोम्मटसारकर्णाटवृत्तिजीवतत्त्व-
प्रदीपिकेयोळु जीवकांडविंशतिप्ररूपणंगळोळु सप्तदशं सम्यक्त्वमार्गंगणमहाधिकारं व्याकृतमायु ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्ती जीवतत्त्व-
प्रदीपिकाख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणासु सम्यक्त्वमार्गंगणप्ररूपणानाम
सप्तदशोऽधिकारः ॥१७॥

५

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अहन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले
श्री केशववर्णोंके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमल्लरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणामेंसे सम्यक्त्वमार्गंगण
प्ररूपणा नामक सत्रहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१७॥

१०

१५

संज्ञिमार्गणा ॥१८॥

अनंतरं संज्ञिमार्गणाधिकारमं पेळवपं :—

नोइंदिय आवरणखओवसमं तज्जबोहणं सण्णा ।

सा जस्स सो दु सण्णी इदरो सेसिदि अवबोहो ॥६६०॥

नोइंदियावरणक्षयोपशमस्तज्जनितबोधनं संज्ञा । सा यस्य स तु संज्ञी इतरः शेषेद्वियाव-

५ बोधः ॥

नोइंदियं मनस्तदावरणक्षयोपशमं संज्ञेयं बुद्धकुं । तज्जनितबोधनं मेणुं संज्ञेयं बुद्धकुमा । संज्ञे यावतोब्बं जीवंगुटक्कुमा जीवं संज्ञि यं बुद्धकुमितरनप्पसंज्ञिजीवं शेषेद्वियंगंळिदमरिवनुळ्ळनक्कुं ।

सिखकिरियुवदेशालावग्गाहिमणोवलंबेण ।

१०

जो जीवो सो सण्णी तन्विबरीयो असण्णी दु ॥६६१॥

शिक्षाक्रियोपदेशालापग्राहि मनोवलंबेन । यो जीवः स संज्ञी तद्विपरीतोऽसंज्ञी तु ॥

हिताहितविधिनिषेधात्मिका शिक्षा तदग्राही कश्चिन्मनुष्यादिः, करचरणचालनादिरूपा क्रिया । तदग्राही कश्चिदुक्षादिः, चर्मपुत्रिकादिनोपदिश्यमानवधविधानादिरूपदेशस्तदग्राही कश्चिद्वगजादिः । श्लोकादिपाठः आलापस्तदग्राही कश्चिच्चकोरराजकोरादिः । एतदितु मनोवलंबनविदं

१५ शिक्षाक्रियोपदेशालापग्राहकमाबुदोदु जीवमदु संज्ञेयं बुद्धकुं । तद्विपरीतलक्षणमनुळ्ळवसंज्ञि-

निरस्तारिरजोविघ्नो व्यक्तानन्तचतुष्टयः ।

शतेन्द्रपूज्यपादाब्जः श्रियं दद्यादरो जिनः ॥१८॥

अथ संज्ञिमार्गणामाह—

नोइन्द्रियं मनः तदावरणक्षयोपशमः तज्जनितबोधनं वा संज्ञा सा विद्यते यस्य स संज्ञी इतरः असंज्ञी

२० शेषेन्द्रियज्ञानः ॥६६०॥

हिताहितविधिनिषेधात्मिका शिक्षा । करचरणचालनादिरूपा क्रिया । चर्मपुत्रिकादिनोपदिश्यमानवधविधानादिरूपदेशः । श्लोकादिपाठ आलापः । तदग्राही मनोवलंबेन यो मनुष्यः उक्षगजराजकीरादिजीवः स

संज्ञीमार्गणाको कहते हैं—

नोइन्द्रिय मनको कहते हैं । नोइन्द्रियावरणके क्षयोपशमको अथवा उससे उत्पन्न हुए

२५ ज्ञानको संज्ञा कहते हैं । जिसके वह संज्ञा है, वह संज्ञी है । मनके सिवाय अन्य इन्द्रियोंके ज्ञानसे युक्त जीव असंज्ञी होता है ॥६६०॥

हितका विधान और अहितका निषेध जो करती है, वह शिक्षा है । हाथ-पैरके संचालनको क्रिया कहते हैं । चमड़ेकी पेटी आदिके द्वारा हिंसादि करनेके उपदेश देनेको उपदेश कहते हैं । श्लोक आदि पढ़नेको आलाप कहते हैं । जो मनुष्य या बैल, हाथी, तोता

३० १. म संज्ञियं जसमासंज्ञियां ।

जीवमेवदक्कुं ।

मीमांसदि जो पुव्वं कज्जमकज्जं च तच्चमिदरं च ।

सिक्खदि णामेणेदि य समणो अमणो य विवरीदो ॥६६२॥

मीमांसति यः पूर्व्वं कार्य्यमकार्य्यं च तत्त्वमितरंच । शिक्षते नाम्नैति च समनाः अमनाश्च विपरीतः ॥

यः आवनोव्वं पूर्व्वं मुन्नमे कार्य्यकार्य्यमं मीमांसति अरियलच्छैसुगुं । तत्त्वमितरं च शिक्षते तत्त्वमुममतत्त्वमुमनरिहिसुव शास्त्रंगळोल्लु प्रवर्तिसुगुं नाम्नैति च पेसैरिवं करेदोडे वक्कुं आ जीवं समनाः समनस्कनक्कुं । विपरीतश्च विपरीतलक्षणममनुळ्ळुदु अमनाः अमनस्कजीवमक्कुं ।

संज्ञिमागणेषोल्लु जीवसंख्येयं पेळ्ळपं :—

देवेहि सादिरेगो रासी सण्णीण होदि परिमाणं ।

तेणूणो संसारी सब्बेसिमसण्णिजीवानं ॥६६३॥

देवैः सातिरेको राशिः संज्ञिनां भवति परिमाणं । तेनोनः संसारी सब्बेषामसंज्ञिजीवानां ॥

चतुर्णिकायामरसामान्यराशि साधिकमावोडे संज्ञिजीवंगळ परिमाणमक्कुं = १ सो
४ । ६५ = १

राशियिदं विहोनमप्प संसारिराशि सब्बं असंज्ञिजीवंगळ परिमाणमक्कुं । १३- ।

संज्ञी नाम । तद्विपरीतलक्षणः तु पुनः असंज्ञीनाम ॥६६१॥

यः पूर्व्वं कार्य्यमकार्य्यं च मीमांसति । तत्त्वमितरंच शिक्षते । नाम्ना आहूत आयाति स जीवः समनाः समनस्को भवति । तद्विपरीतलक्षणः अमनाः अमनस्को भवति ॥६६२॥ अत्र जीवसंख्यामाह—

चतुर्णिकायामरराशिः साधिकः संज्ञिप्रमाणं भवति = १ तेनोनः सर्वसंसारिराशिः सर्वा-
४ । ६५ = १

संज्ञिपरिमाणं भवति १३- ॥६६३॥

आदि जीव मनके द्वारा शिक्षा आदि ग्रहण करते हैं, वे संज्ञी हैं । जो ऐसा नहीं कर सकते, वे असंज्ञी हैं ॥६६१॥

जो पहले कार्य-अकार्यका विचार करता है, तत्त्व और अतत्त्वको सीखता है, नाम लेकर पुकारनेपर चला आता है, वह जीव मनसहित है । जो ऐसा नहीं कर सकता, वह मन-रहित है ॥६६२॥

चार प्रकारके देवोंका जितना प्रमाण है, उससे कुछ अधिक संज्ञी जीवोंका प्रमाण है । सब संसारीराशिमें-से संज्ञी जीवोंके प्रमाणको घटानेपर समस्त असंज्ञी जीवोंका परिमाण होता है ॥६६३॥

१. म करवोडे ।

इंतु भगवदहंपरमेश्वरचारुचरणारविदद्वंद्वं वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजगुरु
भूमंडलाचार्यवर्ष्यमहावादादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्ति श्रीपादपंकजरजो-
रंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्तिजीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळु जीव-
कांडविंशतिप्ररूपणंगळोळु अष्टदशसंज्ञिमार्गणाधिकारं व्याख्यातमादुदु ॥

५ इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ तत्त्वप्रदीपिका-
ख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणामु संज्ञिमार्गणाप्ररूपणा नाम अष्टादशोऽधिकारः ॥१८॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी
श्री अभयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णी-
१० के द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटकवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका
तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक
माषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी माषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत
सव्य प्ररूपणाओंमेंसे संज्ञिमार्गणा प्ररूपणा नामक अठारहवाँ
अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१८॥

आहार मार्गणा ॥१९॥

अनंतरं आहारमार्गण्यं पेच्छपं :—

उदयावण्णसरीरोदयेण तद्देहवयणचित्ताणं ।

णोकम्मवग्गणाणं ग्रहणं आहारयं णाम ॥६६४॥

उदयापन्नशरीरोदयेन तद्देहवचनचित्तानां । नोकर्मवर्गणानां ग्रहणमाहारो नाम ॥

औदारिकवैक्रियिक आहारकशरीरनामकर्मप्रकृतिगळोळो दानुमो दुदयमनेय्दुत्तिरलंतप्पु-
वरुदयदिदमा शरीरमुं वचनमुं द्रव्यमनमुमे बो नोकर्मवर्गणगळो ग्रहणमाहारमे बुदक्कुं । ५

आहरदि सरीराणं तिण्हं एयदरवग्गणाओ य ।

भासामणाण णियदं तम्हा आहारयो भणिदो ॥६६५॥

आहरति शरीराणां त्रयाणामेकतरवर्गणाश्च । भाषामनसोनियतं तस्मादाहारको भणितः ॥

औदारिकवैक्रियिक आहारकगळं ब भूहं शरीरगळोळुदयक्के बंद एकतमशरीरवर्गणगळमं
भाषामनोवर्गणगळमं नियतं नियतमे तप्पुदंते नियतजीवसमासदोळं नियतकालदोळं देहभाषा-
मनोवर्गणगळं नियतमेहेहंगे आहरति आहरिसुगुमे दिनु आहारकने दु परमागमदोळपेळल्पट्टं । १०

मल्लिफुल्लवदामोदो मल्लो मोहारिमदने ।

बहिरन्तःश्रियोपेतो मल्लिः शल्यहरोऽस्तु नः ॥१९॥

अथाहारमार्गणामाह—

औदारिकवैक्रियिकाहारकनामकर्मन्यतमोदयेन तच्छरीरवचनद्रव्यमनोयोग्यनोकर्मवर्गणानां ग्रहणं
आहारो नाम ॥६६४॥ १५

औदारिकादित्रिशरीराणां उदयागतैकतमशरीरवर्गणाः भाषामनोवर्गणाश्च नियतजीवसमासे नियतकाले
च नियतं यथा भवति तथा आहरति इत्याहारको भणितः ॥६६५॥

आहार मार्गणाको कहते हैं—

औदारिक, वैक्रियिक और आहारक नामकर्ममें-से किसी एकके उदयसे उस शरीर,
वचन और द्रव्यमनके योग्य नोकर्मवर्गणाओंके ग्रहणका नाम आहार है ॥६६४॥ २०

औदारिक आदि तीन शरीरोंमें-से उदयमें आये, किसी शरीरके योग्य आहारवर्गणा,
भाषावर्गणा, मनोवर्गणाको नियत जीवसमासमें और नियत कालमें नियत रूपसे सदा ग्रहण
करता है, इसलिए आहारक कहते हैं ॥६६५॥ २५

१. म दुदयमनेय्दित्तप्पुदयदिदमा । २. म दिताहारनेदु ।

विग्रहगदिमावण्णा केवलिनो समुग्घदो अजोगी य ।

सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्नाः केवलिनः समुद्धातवन्तोऽयोगी च सिद्धाश्चानाहाराः शेषा आहारका जीवाः ॥

- ५ विग्रहगतियं पोद्दिद जीवंगळु प्रतरलोकपूरणसमुद्धातसयोगकेवलिंगळुमयोगकेवलिंगळं सिद्धपरमेष्ठिगळुमनाहारकमप्पर । शेषजीवंगळेनितोळधन्तुमाहारकरेयप्पर । समुद्धातमेनिते दोडे पेळ्ळदपर ।

वेयणकसायवेगुन्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।

तेजाहारो छट्ठो सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

- १० वेदनाकषायवैगुन्विकाश्च मारणांतिकः समुद्धातश्च । तेजः आहारः षष्ठः सप्तमः केवलिनं तु ॥

वेदनासमुद्धातमे'दुं कषायसमुद्धातमे'दुं वैगुन्विकसमुद्धातमे'दुं मारणांतिकसमुद्धातमे'दुं तेजससमुद्धातमे'दुमाहारकसमुद्धातमे'दु केवलिसमुद्धातमे'दु'वितु सप्तसमुद्धातंगळप्पुवु ।

अनंतरं समुद्धातमे'बुदेने'दोडे पेळ्ळपं :—

- १५ मूलशरीरमछंडिय उत्तरदेहस्स जीवपिंडस्स ।

णिग्गमणं देहादो होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य । निर्गमनं देहाद् भवति समुद्धातनाम तु ॥

मूलशरीरमं बिडवे काम्मणंतैजसोत्तरदेहदजीवप्रदेशप्रचयक्के शरीरदि पोरगलो निर्गमनं समुद्धातमे'बुदक्कं

- २० विग्रहगत्याश्रितचतुर्गतिजीवाः प्रतरलोकपूरणसमुद्धातपरिणतसयोगिजिनाः अयोगिजिनाः सिद्धाश्च अनाहारा भवन्ति । शेषजीवाः सर्वेऽपि आहारका एव भवन्ति ॥६६६॥ समुद्धातः कतिधा ? इति चेदाह—
समुद्धातः वेदनाकषायवैगुन्विकमारणान्तिकतैजसाहारककेवलिसमुद्धातभेदात् सप्तधा भवति ॥६६७॥
स च किरूपः ? इति चेदाह—

- २५ मूलशरीरमत्यक्त्वा काम्मणंतैजसरूपोत्तरदेहयुक्तस्य जीवप्रदेशप्रचयस्य शरीराद्बहिर्निर्गमनं तत् समुद्धातो नाम भवति ॥६६८॥

विग्रहगतिमें आये चारों गतियोंके जीव, प्रतर और लोकपूरण समुद्धात करनेवाले सयोगी जिन, और सिद्ध अनाहारक हैं; शेष सब जीव आहारक हैं ॥६६६॥

समुद्धातके भेद कहते हैं—

- ३० वेदना, कषाय, विक्रिया, मारणान्तिक, तैजस, आहार और केवली समुद्धातके भेदसे समुद्धात सात प्रकारका होता है ॥६६७॥

समुद्धातका स्वरूप कहते हैं—

मूल शरीरको छोड़कर काम्मण और तैजस रूप उत्तर शरीरसे युक्त जीवके प्रदेश समूहका शरीरसे बाहर निकलना समुद्धात है ॥६६८॥

- ३५ १. व कति चे ।

आहारमारणंतिर्यदुगं पि णियमेण एगदिसिगंतु ।

दसदिसिगदा हु सेसा पंचसमुग्घादया होंति ॥६६९॥

आहारमारणान्तिकसमुद्धातद्वयमेकविशिकं तु । दशदिग्गताः खलु शेषाः पंचसमुद्धाता भवन्ति ॥

आहारकसमुद्धातमुं मारणान्तिकसमुद्धातमे बेरडुं समुद्धातंगळेकदिसिकंगळप्पुवु । शेष- ५
वेदनासमुद्धातादिपंचसमुद्धातंगळु दशदिग्गतंगळप्पुवु ।

आहारानाहारकालमं पेळवपं :—

अंगुलअसंखभागे कालो आहारयस्स उक्कस्सो ।

कम्मम्मि अणाहारो उक्कस्सं तिण्णि समया हु ॥६७०॥

अंगुलासंख्यातभागः काल आहारस्योत्कृष्टः । कम्मर्णे अनाहारः उत्कृष्टत्रयः समयाः खलु ॥ १०

सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रकालमहारक्कुत्कृष्टमक्कुं । त्रिसमयो नोच्छ्वासाष्टादशैकभाग-
मात्रकालं जघन्यमक्कुं । कम्मर्णकायदोळु अनाहारक्कुत्कृष्टकालं मूर समयंगळप्पुवु । जघन्यकाल-
मेकसमयमक्कु आहार अनाहार

स
उ सू २ जघ १—१ उत्कृष्ट सम ३ ज = स १
० १८

अन्तरमाहारमार्गण्योळु जीवसंख्येयं पेळवपं ।

१५

कम्मइयकायजोगी होदि अणाहारयाण परिमाणं ।

तच्चिरहिदसंसारी सच्चो आहारपरिमाणं ॥६७१॥

कम्मर्णकाययोगिनो भवत्यनाहारकाणां परिमाणं । तद्विरहितसंसारी सध्वंः आहारक-
परिमाणं ॥

आहारमारणान्तिकसमुद्धातद्वयमेव एकदिग्गतं भवति तु— पुनः शेषाः पञ्चसमुद्धाताः दशदिग्गता २०
भवन्ति ॥६६९॥ आहारानाहारकालमाह—

आहारकालः उत्कृष्टः सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागः २ । जघन्यः त्रिसमयो नोच्छ्वासाष्टादशैकभागः ।
०

अनाहारकालः कर्मणकाये उत्कृष्टः त्रिसमयः । जघन्यः एकसमयः । खलु—स्फुटं ॥६७०॥ अथात्र जीव-
संख्यामाह—

आहारक और मारणान्तिक ये दो समुद्धात ही एक दिशामें गमन करते हैं । किन्तु २५
शेष पाँच समुद्धात दसों दिशाओंमें गमन करते हैं ॥६६९॥

आगे आहार और अनाहारका काल कहते हैं—

आहारका उत्कृष्टकाल सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग है । जघन्यकाल तीन समय कम
उच्छ्वासका अठारहवाँ भाग है । अनाहारका काल कर्मणकायमें उत्कृष्ट तीन समय और
जघन्य एक समय है ॥६७०॥

३०

इनमें जीवोंकी संख्या कहते हैं—

११३

काम्मणकाययोगिगळु अनाहारकरपरिमाणमक्कुं । तद्वाशिविरहितमप्य संसारिराशि
आहारकर परिमाणमक्कुमवेत्ते दोडे काम्मणकाययोगकालं समयत्रयमक्कुं । औदारिकमिश्र-
कालमंतर्मुहूर्तमक्कुं । तत्कायकालं संख्यातगुणमक्कुं । कूडि त्रिसमयाधिकसंख्यातगु-
णितांतर्मुहूर्तमक्कु ३ मिदु प्रक्षेपकयोगमक्कुमंतागुत्तं विरलु 'प्रक्षेपकयोगोद्धृतमिश्रपिण्डः

२१४

५ प्रक्षेपकाणां गुणको भवेत्सः । येनो सूत्राभिप्रायदिदं त्रैराशिकं माडल्पडुगुं । प्र २१।५।

फ १३- । इ स ३ । लब्धमनाहारकर प्रमाणमक्कुं । १३- । ३ मत्तं प्र २१।५। फ १३- । इ

२१।५

२१।५ । लब्धमाहारकर प्रमाणमक्कुं १३- । २१।५ वैक्रियिकाहारकगन्धं यथायोग्यमरि-

२१।५

यल्पडुगुं ।

१० काम्मणकाययोगिजीवराशिः अनाहारकपरिमाणं भवति । तद्विरहितसंसारिराशिः आहारकपरिमाणं
भवति । तद्यथा—योगकालः काम्मणस्य त्रिसमयाः । औदारिकमिश्रस्य अन्तर्मुहूर्तः । औदारिकस्य ततः संख्यात-
गुणः । मिलित्वा त्रिसमयाधिकसंख्यातगुणितान्तर्मुहूर्तः । ३- १- "प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिण्डः प्रक्षेपकाणां
२१४

गुणको भवेदिति प्र २१५ । फ १३- । इ स ३ । लब्धमनाहारकजीवप्रमाणं १३- ३ पुनः २१।५ ।

२१।५

फ १३- । इ २१।५ । लब्धमाहारकजीवप्रमाणं १३- । २१।५ वैक्रियिकाहारकयोर्यथायोग्यं

२१।५

जातव्यम् ॥६७१॥

१५ योगमार्गणामे काम्मणकाय योगियोंका जितना प्रमाण कहा है, उतना ही अनाहारकोंका
प्रमाण है । संसारीराशिमें-से अनाहारकोंका प्रमाण घटानेपर आहारकोंका परिमाण होता
है । जो इस प्रकार है—काम्मणयोगका काल तीन समय है । औदारिक मिश्र काययोगका
काल अन्तर्मुहूर्त है । औदारिक काययोगका काल उससे संख्यातगुणा है । सब मिलानेपर
तीन समय अधिक संख्यात गुणित अन्तर्मुहूर्त काल होता है । करण सूत्रमें कहा है—प्रक्षेपको
२० मिलाकर मिले हुए पिण्डसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे, उसे प्रक्षेपकसे गुणा करनेपर अपना-
अपना प्रमाण होता है । सो उक्त तीनों योगोंके कालोंको मिलानेपर तीन समय अधिक
संख्यात अन्तर्मुहूर्त काल हुआ । इसका भाग कुछ हीन संसारीराशिमें देनेपर जो प्रमाण
आवे, उसे तीनसे गुणा करनेपर अनाहारक जीवोंका प्रमाण होता है । शेष सब संसारी
आहारक जीव हैं । वैक्रियिक और आहारकवालोंका यथायोग्य जानना । उनके अल्प होनेसे
२५ यहाँ उनकी मुख्यता नहीं है ॥६७१॥

इंतु श्रीमदहर्त्परमेश्वरचारुचरणारविन्दद्वंद्वन्दनानंदितपुण्यपुंजायमान श्रीमद्रायराजगुरु-
मंडलाचार्यवर्धमहावावबादोश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरिसिद्धान्त-
चक्रवर्त्तिश्रीपादपंकजरीजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्ति-
जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळु जीवकांडविंशति प्ररूपणंगळोळु एकान्तविंशति माहारमार्गणाधिकारं
निरूपितमायतु ।

५

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्त्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ तत्त्वप्रदीपिका-
ख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणानु आहारमार्गणाप्ररूपणानामैकान्तविंशोऽधिकारः ॥१९॥

हस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री भमयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्त्तिके चरणकमलोंकी धूकिसे शोभित कलाटवाले
श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमकरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणामोंमेंसे आहारमार्गणा
प्ररूपणा नामक उन्नीसवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१९॥

१०

१५

उपयोगाधिकारः ॥२०॥

अनंतरमुपयोगाधिकारमं पेळदपं :—

वत्थुणिमित्तं भावो जादो जीवस्स जो दु उवजोगो ।

सो दुविहो णायव्वो सायारो चेवाणायारो ॥६७२॥

वस्तुनिमित्तं भावो जातो जीवस्य यस्तूपयोगः । स द्विविधो ज्ञातव्यः साकारश्चैवानाकारः ॥

वसतो गुणपर्यायावस्मिन्निति वस्तु—जेयपदार्थस्तदग्रहणाय प्रवृत्तं ज्ञानं वस्तुनिमित्तं भावः अर्थग्रहणव्यापार इत्यर्थः । अर्थप्रकाशननिमित्तमाणि ज्ञातः प्रवृत्तमप्य जीवस्य जीवनं यस्तु आवुदोदु भावः परिणामः । क्रियाविशेषमदुपयोगमे बुदु, अदु मत्ते साकारोपयोगमे दुमना-कारोपयोगमे दु द्विप्रकारमे दे ज्ञातव्यमवकु ।

अनंतर साकारोपयोगमे दु प्रकारमे दु पेळदपं :—

णाणं पंचविहंपि य अण्णाणतियं च सागरुवजोगो ।

चदुदंसणमणगारो सव्वे तल्लक्खणा जीवा ॥६७३॥

ज्ञानं पंचविधमपि च अज्ञानत्रयं च साकारोपयोगः । चतुर्दशनमनाकारः सर्व्वे तल्लक्षणा जीवाः ॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलमे ब सम्यग्ज्ञानपंचकमुं कुमतिकुश्रुतविभंगमे ब मूर तेरद-ज्ञानमुं साकारोपयोगमे बुदवकुं । चक्षुर्दशनमचक्षुर्दशनमवधिदर्शनं केवलदर्शनमे बी नालकुं दर्शनमना-

सुव्रतः सुव्रतैः सेव्यः सुव्रतः सुव्रताय सः ।

प्राप्ताहन्त्यपदो दद्यात् स्वकीयां सुव्रतश्रियम् ॥२०॥

अथोपयोगाधिकारमाह—

वसतः गुणपर्यायी अस्मिन्निति वस्तु जेयपदार्थः—तदग्रहणाय जातः—प्रवृत्तः यो भावः—परिणामः क्रियाविशेषः जीवस्य स उपयोगो नाम । स च साकारोऽनाकारश्चेति द्वेधा ज्ञातव्यः ॥६७२॥ अथ साकारोपयोगोऽष्टधा इत्याह—

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानानि कुमतिकुश्रुतविभङ्गाज्ञानानि च साकारोपयोगः । चक्षुरचक्षुर-

उपयोगाधिकार कहते हैं—

जिसमें गुण और पर्यायोंका वास है, वह वस्तु अर्थात् जेय पदार्थ है । उसको ग्रहण करनेके लिए जीवका जो भाव अर्थात् परिणाम होता है, वह उपयोग है । वह दो प्रकारका है—साकार और अनाकार ॥६७२॥

आगे उनके भेद कहते हैं—

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल ये पाँच ज्ञान तथा कुमति, कुश्रुत, विभंग ये

कारोपयोगमे'बुदक्कुं । सर्वे जीवाः सर्वजीवंगळु तल्लक्षणंगळे ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षणंगळ्ये'पुनु-
मेके'दोडे लक्षणक्के अव्याप्तिमुमतिव्याप्तिमुसंभविमुमे'बो दोषत्रयरहितत्वादिदं ।

मदिसुदओहिमणेहि य सगसगविसये विसेसविण्णानं ।

अंतोमुहुत्तकालो उवजोगो सो दु सायारो ॥६७४॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययैश्च स्वस्वविषये विशेषविज्ञानमन्तर्मुहूर्तकाल उपयोगः स तु साकारः ॥ १

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानंगळिदं तन्तम्मविषयदोळु विशेषविज्ञानमन्तर्मुहूर्तकालमर्थ-
ग्रहणव्यापारलक्षणमुपयोगमक्कुमुदु तु मत्ते साकारोपयोगमे'बुदक्कुं ।

इंदियमणोहिणा वा अट्ठे अविसेसिदूण जं गहणं ।

अंतोमुहुत्तकालो उवजोगो सो अणायारो ॥६७५॥

इंद्रियमनोभ्यां अवधिना वार्थानविशेषित्वा यद्ग्रहणमन्तर्मुहूर्तकाल उपयोगः सोऽनाकारः ॥

चक्षुरिन्द्रियविदम्भं मनमचक्षुरिन्द्रियमप्युदरिदमचक्षुर्दर्शनविदम्भमवधिदर्शनविदम्भं वा शब्दमुं
समुच्चयात्थमक्कुं । जीवाद्यर्थंगळं विकल्पसदे निर्विकल्पविदमावुदो'दु ग्रहणमन्तर्मुहूर्तकालं
सामान्यार्थग्रहणव्यापारलक्षणमुपयोगमदनाकारोपयोगमे'बुदक्कुं ॥

अनन्तरंमुपयोगाधिकारदोळु जीवसंख्येयं पेळदपं ।—

णाणुवजोगजुदानं परिमाणं णाणमग्गणं व हवे ।

दंसणुवजोगियाणं दंसणमग्गणपउत्तकमो ॥६७६॥

ज्ञानोपयोगयुतानां परिमाणं ज्ञानमार्गणायामिव भवेत् । दर्शनोपयोगिनां दर्शनमार्गणा-
प्रोक्तक्रमः ॥

वधिकेवलदर्शनानि अनाकारोपयोगः । सर्वे जीवाः तज्ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षणा एव तल्लक्षणस्याव्याप्यतिव्याप्य-
संभवदोषाभावात् ॥६७३॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानैः स्वस्वविषये विशेषविज्ञानं अन्तर्मुहूर्तकालं अर्थग्रहणव्यापारलक्षणं उपयोगः,
स तु साकारोपयोगो नाम ॥६७४॥

चक्षुर्दर्शनेन वा शेषेन्द्रियैर्मनसा च इत्यचक्षुर्दर्शनेन वा अवधिदर्शनेन वा यज्जीवाद्यर्थान् अविशेषित्वा
निर्विकल्पेन ग्रहणं सोऽन्तर्मुहूर्तकालः अनाकारोपयोगो नाम ॥६७५॥ अथात्र जीवसंख्यामाह—

तीन अज्ञान साकार उपयोग हैं । चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन ये
अनाकार उपयोग हैं । सब जीव ज्ञानदर्शनोपयोग लक्षणवाले हैं । जीवके इस लक्षणमें
अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असम्भव दोष नहीं है ॥६७३॥

मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्ययज्ञानोंके द्वारा अपने-अपने विषयमें जो विशेष ज्ञान
होता है । अन्तर्मुहूर्तकालको लिये हुए अर्थको ग्रहण करने रूप व्यापार जिसका लक्षण है, वह
उपयोग साकार उपयोग है ॥६७४॥

चक्षुदर्शन अथवा शेष इन्द्रिय और मनरूप अचक्षुदर्शन, अथवा अवधि दर्शनके
द्वारा जीवादि पदार्थोंका विशेष न करके जो निर्विकल्प रूपसे ग्रहण होता है, वह अनाकार
उपयोग है । उसका काल भी अन्तर्मुहूर्त है ॥६७५॥

इनमें जीव संख्या कहते हैं—

ज्ञानोपयोगयुक्तरूपं परिमाणं ज्ञानमार्गणयोऽप्यु पेळदंत्येयकुं । दर्शनोपयोगिगळ परिमाणं दर्शनमार्गणयोऽप्यु पेळद क्रममेयवकुमदे ते दोडे कुमतिज्ञानिगळ किंचिदून संसारिराशिप्रमाणमकुं ।

III

१३—कुश्रुतज्ञानिगळ मनिबरेयकुं । १३-॥ विभंगज्ञानिगळ = १ मतिज्ञानिगळ प श्रुतज्ञानिगळ = १
४। ६५ = १

निगळ प अवधिज्ञानिगळ प मनःपर्ययज्ञानिगळ १ केवलज्ञानिगळ १ तिर्य्यचविभंग-
५ ज्ञानिगळ—६ प मनुष्यविभंगज्ञानिगळ । १ । नारकविभंगज्ञानिगळ -२- देवविभंगज्ञानिगळ
= १ शक्ति चक्षुदर्शनिगळ । प्र । बि । ति । च । प । ४ । फ । ४ इ च । पं । २ । लब्ध त्रस-
४। ६५ = १

ज्ञानोपयोगिप्रमाणं ज्ञानमार्गणावत् । दर्शनोपयोगिप्रमाणं दर्शनमार्गणावत् भवेत् । तद्यथा—कुमतिज्ञानिनः

III

कुश्रुतज्ञानिनश्च किंचिदूनसंसारिराशिः १३- विभङ्गज्ञानिनः = १ । मतिज्ञानिनः प श्रुतज्ञानिनः प
४६५ = १

अवधिज्ञानिनः प मनःपर्ययज्ञानिनः १ केवलज्ञानिनः १ तिर्य्यचविभङ्गज्ञानिनः - ६ प मनुष्यविभङ्गज्ञानिनः
४६५ = १

II

१० १ नरकविभङ्गज्ञानिनः - २ - देवविभङ्गज्ञानिनः = १ । शक्तिचक्षुदर्शनिनः प्र-बि । ति । च । पं ।
४ । ६५ = १

ज्ञानोपयोगवाले जीवोंका प्रमाण ज्ञानमार्गणाके समान है और दर्शनोपयोगवाले जीवोंका प्रमाण दर्शनमार्गणाके समान है । जो इस प्रकार है—कुमतिज्ञानी और कुश्रुत-ज्ञानियोंका प्रमाण कुछ कम संसारीराशि है । विभंगज्ञानी पूर्ववत् जानना । मतिज्ञानी और श्रुतज्ञानी प्रत्येक पक्षके असंख्यातवें भाग हैं । अवधिज्ञानी पूर्ववत् जानना । मनःपर्ययज्ञानी संख्यात हैं । केवलज्ञानी सिद्धराशिसे अधिक हैं । तिर्य्यच विभंगज्ञानी पक्षके असंख्यातवें भागसे गुणित घनांगुलसे जगत्श्रेणिको गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उतने हैं । विभंग-ज्ञानी मनुष्य, संख्यात हैं । विभंगज्ञानी नारकी घनांगुलके दूसरे वर्गमूलसे जगत्श्रेणिको गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उतने हैं । देवविभंगज्ञानी सम्यग्दृष्टियोंकी संख्यासे हीन ज्योतिष्कदेवोंसे अधिक हैं । शक्तिरूप और व्यक्तिरूप चक्षुदर्शनीका परिमाण गाथा

राशि शक्ति चक्षुर्दर्शनगळु = २ व्यक्ति चक्षुर्दर्शनजीवंगळु । प्र १ फ = ४ इ । २ लब्ध = २
४४ ५ ४४ ५

अचक्षुर्दर्शनगळु १३—अवधिदर्शनगळु प ० केवलदर्शनगळु ३—॥
० ०

इतु भगवदहंत्परमेश्वरचारुचरणारविद्वंद्वं दनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजगुरुभूमं-
डलाचार्यवर्ग्यमहावाववादीश्वरराय वादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदभयसूरिसिद्धांत-
चक्रवर्त्तिश्रीपादपंकजराजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्ति ५
जीवतत्त्व प्रदीपिकेयोळु विशुमुपयोगधिकारं निगदितमावुदु ॥

४ । फ = १ इ च । पं । २ । इति त्रैराशिकलब्धमात्राः - = २ = व्यक्तिचक्षुर्दर्शिनः - प्र - ४ । फ = ४ २
४ ४ ५
० ० ४ ५

इति त्रैराशिकलब्धमात्राः = २ - अचक्षुर्दर्शिनः १३- अवधिदर्शिनः प ० केवलदर्शिनः सि ३ ॥६७६॥
२ १
४ ५ ४ ० ०

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्त्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ तत्त्वप्रदीपिका-
ख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणासु उपयोगमार्गणाप्ररूपणा नाम विशोऽधिकारः ॥२०॥

१०

४८७ की टीकामें कहा है । अवधिदर्शनवालोंका परिमाण अवधिज्ञानियोंके समान और
केवलदर्शनियोंका परिमाण केवलज्ञानियोंके समान जानना । एकेन्द्रियसे लेकर क्षीणकषाय
गुणस्थान पर्यन्त अनन्तानन्त जीवराशि प्रमाण अचक्षुर्दर्शनी हैं ॥६७६॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी मगधान् अहंन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी
श्री अभयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्त्तिके चरणकमलोंकी धूँकसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णी-
के द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका
तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोदरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक
भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत
मध्य प्ररूपणाओंमेंसे उपयोगमार्गणा प्ररूपणा नामक बीसवाँ
अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥२०॥

१५

२०

ओघादेशप्ररूपणाधिकारः ॥२१॥

अन्तरमुक्तविशतिप्ररूपणेगळं यथासंभवमाणि गुणस्थानंगळोळं मार्गणास्थानंगळोळं प्रत्येकं पेळदपं—

गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणुवजोगो ।

जोग्गा परुविदव्वा ओघादेसेसु पत्तेयं ॥६७७॥

५ गुणजीवाः पर्याप्तयः प्राणाः संज्ञाश्च मार्गणा उपयोगे योग्याः प्ररूपयितव्याः ओघादेशेषु प्रत्येकं ॥

गुणस्थानमार्गणास्थानंगळोळु प्रत्येकं । गुणस्थानंगळुं जीवसमासेगळुं पर्याप्तगळुं प्राण-
गळुं संज्ञेगळुं मार्गणेगळुमुपयोगेगळुमेदीविशतिप्रकारंगळु प्ररूपितपडुववु । यथायोग्यमाणि ।

अदेते दोडे—

१० चउ पण चोदस चउरो णिरयादिसु चोदसं तु पंचकखे ।

तसकाये सेदिंदियकाये मिच्छं गुणट्ठाणं ॥६७८॥

चतुः पंच चतुर्दश चत्वारि नरकादिषु चतुर्दश तु पंचाक्षे । त्रसकाये शेषेन्द्रियकाये मिथ्या-
दृष्टिगुणस्थानं ॥

१५ नरकतिर्यग्मनुष्यदेवगतिगळोळु यथासंख्यमाणि नालकुमय्यदुं पदिनालकुं नालकुं गुणस्थान-
गळुपुवदेते दोडे—नरकगतियोळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतगुणस्थानचतुष्टयमक्कुं । तिर्यग्ग-
तियोळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतदेशसंयतगुणस्थानपंचकमक्कुं । मनुष्यगतियोळु सामान्य-

नमिर्नमत्सुराधीशोजन्तज्ञानादिवैभवः ।

हृत्घातिव्रजो जीयाद्द्वान्नः शाश्वतं पदम् ॥

अथोत्तरमभिधेयं ज्ञापयति—

२० उक्तविशतिप्ररूपणासु गुणस्थानमार्गणास्थानयोः प्रत्येकं गुणस्थानानि जीवसमासाः पर्याप्तयः प्राणाः
संज्ञाः, मार्गणाः उपयोगाश्च यथायोग्यं प्ररूपयितव्याः ॥६७७॥ तद्यथा—

नारकादिगतिषु क्रमेण गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि चत्वारि पञ्च चतुर्दश चत्वारि भवन्ति ।
इन्द्रियमार्गणायां पञ्चेन्द्रिये तु पुनः कायमार्गणायां त्रसकाये च, चतुर्दश, शेषेन्द्रियकायेषु एकं मिथ्यादृष्टिगुण-
स्थानं । जीवसमासास्तु नरकगतौ संज्ञिपर्याप्तनिवृत्त्यपर्याप्तौ द्वौ । तिर्यग्गतौ चतुर्दश । मनुष्यगतौ संज्ञिपर्याप्ता-

बीस प्ररूपणाओंका कथन करनेके पश्चात् जो कुछ अभिधेय है, उसे कहते हैं—

२५ ऊपर कही बीस प्ररूपणाओंमें-से गुणस्थान और मार्गणास्थानमें गुणस्थान, जीव-
समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा और उपयोगोंकी यथायोग्य प्ररूपणा करनी चाहिये ॥६७७॥

वही कहते हैं—

३० गतिमार्गणामें क्रमसे गुणस्थान, मिथ्यादृष्टि आदि नरक गतिमें चार, तिर्यग्गतिमें
पाँच, मनुष्यगतिमें चौदह और देवगतिमें चार होते हैं । इन्द्रियमार्गणामें, पंचेन्द्रियमें, और
कायमार्गणामें त्रसकायमें चौदह गुणस्थान होते हैं । शेष एकेन्द्रियादिमें और स्थावरकायमें

चतुर्दश गुणस्थानगळनितुं संभविषुगुं । देवगतिथोळु नरकगतिथोळु तंतं मिथ्यादृष्टिसासादनमिथ्या-
संयतगुणस्थानचतुष्टयं संभविषुगुं । इन्द्रियमार्गणथोळु पंचेन्द्रियक्के चतुर्दशगुणस्थानगळनितुं
संभविषुगुं । कायमार्गणथोळु त्रसकायक्केणुं चतुर्दशगुणस्थानगळनितुं संभविषुगुं । शेषेन्द्रियकायग-
ळोळु प्रत्येकमो'दो' दु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमक्कुं ।

	न	ति	म	दे	ए	वि	ति	च	पं	पू	अ	ते	वा	व	त्र
गुण	४	५	१४	४	२	१	१	१	१४	२	१	१	१	१	१४
जीव	२	१४	२	२	४	२	२	२	२	४	४	४	४	४	१०

नरकगतिथोळु संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तनिवृत्यपर्याप्तजीवसमासेगळे रडेयप्पुवु । तिथ्यगतिथोळु एकेंद्रिय- ५
बादरसूक्ष्मद्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियअसंज्ञिपंचेन्द्रियसंज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्ताऽपर्याप्तजीवसमासेगळु पदि-
नाल्कुमप्पुवु । मनुष्यगतिथोळु संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्ताऽपर्याप्तजीवसमासेगळे रडेयप्पुवु ।
देवगतिथोळु संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तनिवृत्यपर्याप्त जीवसमासेगळे रडेयप्पुवु । इन्द्रियमार्गणथोळे केंद्रिय-
दोळु बादरसूक्ष्मेन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळु नाल्कुप्पुवु । द्वीन्द्रियदोळु द्वीन्द्रियपर्याप्तापर्याप्त-
जीवसमासेगळु येरडेयप्पुवु । त्रीन्द्रियदोळु त्रीन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळे रडेयप्पुवु । चतु- १०
रिन्द्रियदोळु चतुरिन्द्रियपर्याप्तपर्याप्तजीवसमासेगळे रडेयप्पुवु । पंचेन्द्रियदोळु संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ता-
पर्याप्तजीवसमासेगळु नाल्कुप्पुवु । कायमार्गणथोळु पृथ्व्यप्तेजोवायुवनस्पतिकायिकपंचकदोळु
एकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्याप्त अपर्याप्तजीवसमासेगळु प्रत्येकं नाल्कुनाल्कुप्पुवु । त्रसकायिकगळोळु
द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियासंज्ञिपंचेन्द्रियसंज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळु पत्तु संभविषुववु

गतिमार्गणायां	इन्द्रिय मार्गणायां	कायमार्गणायां
न । ति । म । दे ।	ए । बी । ती । च । पं ।	पू । अ । ते । वा । व । त्र ।
४ । ५ । १४ । ४ ।	१ । १ । १ । १ । १ । १४ ।	१ । १ । १ । १ । १ । १४ ।
२ । १४ । २ । २ ।	४ । २ । २ । २ । ४ ।	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । १० ।

पर्याप्ती द्वी । देवगती नरकगतिवद्द्वी । इन्द्रियमार्गणायां एकेन्द्रिये बादरसूक्ष्मेकेन्द्रियौ पर्याप्तापर्याप्ताविति १५
चत्वारः । द्वीन्द्रिये त्रीन्द्रिये चतुरिन्द्रिये च तत्तत्पर्याप्तापर्याप्ती द्वी द्वी । पञ्चेन्द्रिये संज्ञ्यसंज्ञिनौ पर्याप्ता-
पर्याप्ताविति चत्वारः । कायमार्गणायां पृथ्व्यादिपञ्चसु एकेन्द्रियवत् चत्वारः चत्वारः, त्रसे शेषा दश ॥६७८॥

एक मिथ्यादृष्टिगुणस्थान होता है । जीवसमास नरकगतिमें संज्ञीपर्याप्त और निवृत्यपर्याप्त २०
दो होते हैं । तिर्यग्गतिमें चौदह होते हैं । मनुष्यगतिमें संज्ञीपर्याप्त और अपर्याप्त दो
होते हैं । देवगतिमें नरकगतिके समान दो होते हैं । इन्द्रियमार्गणामें एकेन्द्रियमें बादर और
सूक्ष्म एकेन्द्रियके पर्याप्त और अपर्याप्त होनेसे चार होते हैं । दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय और
चतुरिन्द्रियमें अपने-अपने पर्याप्त और अपर्याप्त होनेसे दो-दो होते हैं । पंचेन्द्रियमें संज्ञी-
असंज्ञीके पर्याप्त-अपर्याप्तके भेदसे चार हैं । कायमार्गणामें पृथिवीकायिक आदि पांच
कायोंमें एकेन्द्रियकी तरह चार-चार जीवसमास होते हैं । त्रसमें शेष दस जीवसमास
होते हैं ॥६७८॥

मज्झिमचउमणवयणे सण्णिप्पहुडिं तु जाव खीणोत्ति ।

सेसाणं जोगिति य अणुभयवयणं तु वियलादो ॥६७९॥

मध्यमचतुर्म्मनोवचनेषु संज्ञिप्रभृतिस्तु यावत् । क्षीणकषायस्तावत्पर्यन्तं शेषाणां योगिपर्यन्तं च अनुभयवचनं तु विकलात् ॥

- ५ मनोवचनयोगंगळोळु मध्यमंगळप्प असत्यमनोयोगमुभयमनोयोगमसत्यवचनयोगमुभयवचन-योगमेंबी नात्करोळं मिथ्यादृष्टिसंज्ञिपंचेंद्रियमादियागि क्षीणकषायगुणस्थानपर्यन्तमप्प पन्नेरहुं पन्नेरहुं गुणस्थानंगळुमो'दो'दे संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासेगळु प्रत्येकमप्पुवु । शेषसत्यमनोयोग-दोळुमनुभयमनोयोगदोळं सत्यवचनयोगदोळं संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि सयोगिकेवल्लिगुणस्थानपर्यन्तं पदिमूहं गुणस्थानंगळु पंचेंद्रियसंज्ञिपर्याप्तजीवसमासेगळो'दो'हुं
- १० प्रत्येकमप्पुवु । अनुभयवचनयोगदोळु विकलत्रयमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि सयोगिकेवल्लिगुण-स्थानपर्यन्तमाद पदिमूहं गुणस्थानंगळु द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियसंज्ञिपंचेंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्त-जीवसमासेगळुमध्यप्पुवु :— मनोयोग

स । अ । उ । अ
गु १३ । १२ । १२ । १३
जी- १ । १ । १ । १ ।

वाग्योग

स । अ । उ । अ
१३ । १२ । १२ । १३
१ । १ । १ । ५

ओरालं पज्जत्ते थावरकायादि जाव जोगिति ।

तम्मिस्समपज्जत्ते चदुगुणठाणेसु णियमेण ॥६८०॥

- १५ औदारिकः पर्याप्ते स्थावरकायादि यावद्योगिपर्यन्तं । तन्मिश्रः अपर्याप्ते चतुर्गुणस्थानेषु नियमेन ॥

औदारिकाययोगमेंकेन्द्रियस्थावरकायपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि सयोगिकेवलि-पर्यन्तमाद पदिमूहं गुणस्थानंगळुवकुमल्लि एकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियसंज्ञिपंचेंद्रिया-संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासेगळुमेलप्पुवु । ७ । औदारिकमिश्रयोगमपर्याप्तचतुर्गुणस्थानंगळोळु

- २० मध्यमेषु असत्योभयमनोवचनयोगेषु चतुर्षु संज्ञिमिथ्यादृष्ट्यादीनि क्षीणकषायान्तानि द्वादश । तु-पुनः सत्यानुभयमनोयोगयोः सत्यवचनयोगे च संज्ञिपर्याप्तमिथ्यादृष्ट्यादीनि सयोगान्तानि त्रयोदश गुणस्थानानि भवन्ति । जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एवैकः । अनुभयवचनयोगे तु गुणस्थानानि विकलत्रयमिथ्यादृष्ट्यादीनि त्रयोदश । जीवसमासः द्वित्रिचतुरिन्द्रियसंज्ञिपर्याप्ताः पञ्च ॥६७९॥

औदारिकाययोगः एकेन्द्रियस्थावरकायपर्याप्तमिथ्यादृष्ट्यादिसयोगान्तत्रयोदशगुणस्थानेषु भवति ।

- २५ मध्यम अर्थात् असत्य और उभय मनोयोग और वचन योग इन चारमें संज्ञी मिथ्या दृष्टिसे लेकर क्षीणकषाय पर्यन्त बारह गुणस्थान होते हैं । तथा सत्य और अनुभय मनोयोग और सत्यवचनयोगमें संज्ञीपर्याप्त मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगकेवली पर्यन्त तेरह गुणस्थान होते हैं । जीवसमास एक संज्ञीपर्याप्त ही होता है । अनुभयवचनयोगमें विकलत्रय मिथ्यादृष्टिसे लेकर तेरह गुणस्थान होते हैं । जीवसमास दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय
- ३० संज्ञी-असंज्ञी, पंचेन्द्रिय पर्याप्त रूप पाँच होते हैं ॥६७९॥

औदारिक काययोग एकेन्द्रिय स्थावरकाय पर्याप्त मिथ्यादृष्टीसे लेकर सयोगकेवली पर्यन्त तेरह गुणस्थानोंमें होता है । औदारिक मिश्रकाययोग नियमसे अपर्याप्त अवस्थामें

नियमदिदमवकुमा नालकुमपट्यामिगुणस्थानंगलावुबे दोडे पेळदपं :—

मिच्छे सासणसम्मे पुवेदयदे कवाडजोगिमि ।

णरतिरिये वि य दोणिण वि होतित्ति जिणेहि णिदिदुं ॥६८१॥

मिथ्यादृष्टौ सासादनसम्यग्दृष्टौ पुवेदासंयते कवाटयोगिनि नरतिरश्चि च द्वावपि भवत इति जिनै निर्दिष्टं ।

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळं सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं पुवेदोदयासंयतसम्यग्दृष्टिगुण-
स्थानदोळं कवाटसमुद्घातसयोगकेवलिगुणस्थानदोळमितु मनुष्यरोळं तिर्य्यंचरोळमा यरडुमौदा-
रिककाययोगमुं तन्मिश्रकाययोगमुमपुवेदितु बीतरागसर्वज्जरिदं पेळल्पट्टुदु । मत्तमौदारिकमिश्र-
काययोगदोळु एकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिपंचेंद्रियसंज्ञिपंचेंद्रियापट्यामिजीवसमाससप्तकमुं
सयोगिकेवलियोळु कवाटसमुद्घातदोळु औदारिकमिश्रयोगमदुवुं कूडि जीवसमासाष्टकमवकुं १०

औ	मिश्र
१३	४
७	८

वेगुव्वं पज्जते इदरे खलु होदि तस्स मिस्सं तु ।

सुरणिरयचउट्टाणे मिस्से ण हि मिस्सजोगो दु ॥६८२॥

वैगुर्वर्हः पर्याप्ते इतरस्मिन् खलु भवति तस्य मिश्रस्तु । सुरनारकचतुःस्थाने मिश्रे न हि मिश्रयोगस्तु ॥

वैक्रियिककाययोग पंचेंद्रियपट्यामिदेवनारकमिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतगुणस्थानचतुष्टय-
दोळवकुं । तन्मिश्रयोगं देवनारकमिथ्यादृष्टिसासादनासंयतगुणस्थानत्रयदोळमवकुं । वैक्रियिक-

तन्मिश्रयोगः अपर्याप्तचतुर्गुणस्थानेष्वेव नियमेन ॥६८०॥ तेषु केषु ? इति चेदाह—

मिथ्यादृष्टौ सासादने पुवेदोदयासंयते कपाटसमुद्घातसयोगे, चैतेषु अपर्याप्तचतुर्गुणस्थानेषु स औदारिक-
मिश्रयोगः स्यादित्यर्थः । तौ योगौ द्वावपि नरतिरश्चोरेवेति सर्वज्ञैस्त्वत्तम् । जीवसमासाः औदारिकयोगे पर्याप्ताः
सप्त । तेन मिश्रयोगे अपर्याप्ताः सप्त । सयोगस्य चैकः एवमष्टौ ॥६८१॥

वैक्रियिककाययोगः पर्याप्तदेवनारकमिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्गुणस्थानेषु भवति खलु स्फुटम् । तु-पुनः

चार गुणस्थानोंमें होता है ॥६८०॥

किन गुणस्थानोंमें होता है, यह कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें, सासादनमें, पुरुषवेदके उदय सहित असंयतमें और कपाट समुद्घात
सहित सयोगकेवलीमें इन चार अपर्याप्त अवस्था सहित गुणस्थानोंमें औदारिकमिश्रयोग २५
होता है । औदारिक और औदारिकमिश्र ये दोनों भी योग मनुष्य और तिर्य्यचोंमें ही सर्वज्ञ-
देवने कहे हैं । औदारिक योगमें सात पर्याप्त जीवसमास होते हैं । अतः औदारिक मिश्र
योगमें सात अपर्याप्त जीवसमास होते हैं और सयोगकेवलीके एक जीवसमास होता है इस
तरह आठ जीवसमास होते हैं ॥६८१॥

वैक्रियिक काययोग पर्याप्त देव नारकियोंके मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें ३०
होता है । वैक्रियिक मिश्रकाय योग मिश्रगुणस्थानमें तो नहीं होता, अतः देवनारकियोंके

काययोगदोळु पंचेंद्रियसंज्ञिपर्याप्तजीवसमासमो'देयक्कुं । तन्मिश्रदोळु संज्ञिपंचेंद्रियनिवृत्त्यपर्याप्त-
जीवसमासमो'देयक्कुं वै मि

४ । ३ ।

१ १ ।

आहारो पज्जत्ते इदरे खलु होदि तस्स मिस्सो दु ।

अंतोमुहुत्तकाले छट्ठगुणे होदि आहारो ॥६८३॥

५ आहारः पर्याप्ति इतरस्मिन् खलु भवति तस्य मिश्रस्तु । अंतर्मुहूर्तकाले षष्ठगुणे भवति
आहारः ॥

आहारककाययोगसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तषष्ठगुणस्थानवर्त्तिप्रमत्तसंयतनोळक्कुमाहारककाययोग-
कालमुमुत्कृष्टदिदमुं जघन्यदिदमुंमंतर्मुहूर्तकालदोळेयक्कुं । तन्मिश्रकाययोगमुं तद्गुणस्थान-
दोळे प्रमत्तगुणस्थानदोळे अंतर्मुहूर्तकालदोळेयक्कुमदु कारणमागियाहारककाययोगदोळो'दे
१० गुणस्थानमूमो'दे जीवसमासयुमक्कुं । तन्मिश्रदोळमंते वो'देगुणस्थानमूमो'दे जीवसमासमूमक्कुं ।

आहारककाययोगदोळु गु १ । मि गु १

जी १ । जी १

ओरालियमिस्सं वा चउगुणठाणेषु होदि कम्मइयं ।

चटुगदिविग्रहकाले जोगिस्स य पदरलोगपूरणगे ॥६८४॥

औदारिकमिश्रवच्चतुर्गुणस्थानेषु भवति काम्मणं । चतुर्गतिविग्रहकाले योगिनः प्रतर-
लोकपूरणे ॥

१५ औदारिकमिश्रकाययोगदोळपेळ्ळंते चतुर्गुणस्थानंगळोळु काम्मणकाययोगमक्कुं मदुवु
चतुर्गतिविग्रहकालदोळं सयोगकेवलिय प्रतरलोकपूरणसमुद्धातकालदोळमक्कुमदु कारणमागि
काम्मणकाययोगदोळु मिथ्यादृष्टिसासादनाऽसंयतसम्यग्दृष्टि समुद्धातसयोगिभट्टारकरे'व गुण-

तन्मिश्रयोगः मिश्रगुणस्थाने तु न हीति कारणात् देवनारकमिथ्यादृष्टिसासादनासंयतेऽवेव भवति । जीवसमासः
तयोः क्रमेण संज्ञिपर्याप्तः तन्निवृत्त्यपर्याप्तः एकैकः ॥६८२॥

२० आहारककाययोगः संज्ञिपर्याप्तषष्ठगुणस्थाने जघन्योत्कृष्टेन अन्तर्मुहूर्तकाले एव भवति । तन्मिश्रयोगः
इतरस्मिन् संज्ञिपर्याप्तषष्ठगुणस्थाने खलु जघन्योत्कृष्टेन तावत्काले एव भवति । तेन तयोर्योगयोस्तदेव
गुणस्थानं जीवसमासः स एव एकैकः ॥६८३॥

औदारिकमिश्रवच्चतुर्गुणस्थानेषु काम्मणकाययोगः स्यात् स चतुर्गतिविग्रहकाले सयोगस्य प्रतरलोक-

मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयतगुणस्थानोंमें ही होता है । जीवसमास उनमें-से वैक्रियिकमें
२५ संज्ञिपर्याप्त और वैक्रियिकमिश्रमें संज्ञिअपर्याप्त होता है ॥६८२॥

आहारक काययोग संज्ञिपर्याप्त छठे गुणस्थानमें जघन्य और उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त कालमें
ही होता है । आहारमिश्रकाययोग संज्ञिअपर्याप्त अवस्थामें छठे गुणस्थानमें जघन्य उत्कृष्टसे
अन्तर्मुहूर्तकालमें ही होता है । अतः उन दोनोंमें एक छठा ही गुणस्थान होता है । तथा
जीवसमास भी वही संज्ञिपर्याप्त और संज्ञिअपर्याप्त एक-एक ही होता है ॥६८३॥

३० औदारिकमिश्रकी तरह काम्मणकाययोग चार गुणस्थानोंमें होता है । सो वह चार
गति सम्बन्धी विग्रहगतिके कालमें और सयोगकेवलीके प्रतर और लोकपूरण समुद्धातके

स्थानचतुष्टयम् एकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिपंचेंद्रियसंज्ञिपंचेंद्रियजीवंगळ उत्तरभव-
शरीरग्रहणात्थं स्वस्वयोग्यचतुर्गतिगळगे पोपुदं विग्रहगतिये बुदा विग्रहगतियोळप्प अपर्याप्तजीव-
समाप्तिगळेंतुं प्रतरसमुदघातलोकपूरणसमुदघातसमयत्रयवर्तिसयोगिभट्टारकन काम्मणकाययोगाऽ
पर्याप्तजीवसमाप्तेगूडि काम्मणकाययोगदोळेंतुं जीवसमाप्तेगळप्पुवु का =

गु ४
जी ८

थावरकायप्पहुडी संढो सेसा असण्णिआदी य ।

अणियट्टिस्सय पढमो भागोत्ति जिणेहि णिदिदडुं ॥६८५॥

स्थावरकायप्रभृति षंडः शेषाः असंख्यादयश्च । अनिवृत्तेः प्रथमभागपर्यंतं जिनैर्निर्दिष्टं ॥

वेदमार्गणयोळु स्थावरकायदोळु मिथ्यादृष्टिप्रभृतियागि षंडवेदिगळनिवृत्तिकरणगुणस्थान-
पंचभागंळोळु प्रथमसवेदभागपर्यंतमो भत्तुं गुणस्थानं गळोळप्परु । अदु कारणमागि नपुंसक-
वेददोळु गुणस्थाननवकम् एकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियसंज्ञिसंज्ञिपपर्याप्तजीवसमाप्तेगळु १०
पदिनात्कुमप्पुवु । शेषस्त्रीवेदिगळु पुंवेदिगळु संज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदलगोडनिवृत्ति-
करणगुणस्थानद तंतम्म सवेदभागपर्यंतमो भत्तुं गुणस्थानं गळोळप्परु । अदु कारणमागि स्त्रीवेद-
दोळं पुंवेददोळमो भत्तुमभो भत्तुं गुणस्थानं गळु । संज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमाप्तेगळु
नाल्कु नाल्कुमप्पुवु न । स्त्री । पुं
९ । ९ । ९ ।
१४ ४ ४

थावरकायप्पहुडी अणियट्टीवितिचउत्थभागोत्ति ।

कोहतियं लोहो पुण सुहुमसरागोत्ति विण्णेयो ॥६८६॥

स्थावरकायप्रभृत्यनिवृत्तिद्वित्रिचतुर्थभागपर्यंतं । क्रोधत्रयं भवति लोभः पुनः सूक्ष्मसराग-
पर्यंतं विज्ञेयः ॥

पूरणकाले च भवति तेन तत्र गुणस्थानानि जीवसमासाश्च तद्वत् चत्वारि अष्टौ भवन्ति ॥६८४॥

वेदमार्गणायां षण्णवेदः स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणप्रथमसवेदभागान्तं भवति तेन तत्र
गुणस्थानानि नव । जीवसमासाश्चतुर्वश । शेषस्त्रीपुंवेदौ संज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणस्वस्ववेदभाग- २०
पर्यन्तं भवतः तेन तयोर्गुणस्थानानि नव नव । जीवसमासाः संज्ञिसंज्ञिनौ पर्याप्तापर्याप्ताविति चत्वारः इति
जिनैस्त्वत् ॥६८५॥

कालमें होता है । इससे उसमें गुणस्थान और जीवसमास उसीकी तरह क्रमसे चार और
आठ होते हैं ॥६८४॥

वेदमार्गणामें नपुंसकवेद स्थावरकायसम्बन्धी मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके २५
प्रथम सवेदभागपर्यन्त होता है । अतः उसमें नौ गुणस्थान होते हैं । जीवसमास चौदह
होते हैं । शेष स्त्रीवेद और पुरुषवेद संज्ञी-असंज्ञी मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके अपने-
अपने सवेद भागपर्यन्त होते हैं । इससे उनमें नौ-नौ गुणस्थान होते हैं । तथा जीवसमास
संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्त, अपर्याप्त चार होते हैं; ऐसा जिनदेवने कहा है ॥६८५॥

कषायमार्गणयोळु क्रोधमानमायाकषायत्रयंगळु स्थावरकायमिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदल्लो'डनिवृत्तिकरणगुणस्थानद्वित्रिचतुर्थभागपर्यंतमाद गुणस्थाननवकदोळप्पुवु । अदु कारण-
माणि क्रोधादिकषायत्रयदोळु प्रत्येकमो'भत्तुमो'भत्तु' गुणस्थानंगळुमेकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुरऽ-
संज्ञिपंचेंद्रिय संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तिजीवसमासेगळु' पदिनाल्कु' पदिनाल्कुमप्पुवु । लोभ-
५ कषायदोळमंते स्थावरकायमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियाणि सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानपर्यंतमाद गुण-
स्थानदशकमं क्रोधाधिगळगे पेळदंत चतुर्दशजीवसमासेगळुमप्पुवे'वु क्रो । मा । मा । लो
९ । ९ । ९ । १०
१४ । १४ । १४ । १४

परमागमदो'ळरियल्पडुवुवु ।

थावरकायप्पहुडी मदिसुदअण्णाणंयं विभंगो दु ।

सण्णोपुणप्पहुडी सासणसम्मोत्ति णायव्वो ॥६८७॥

१० स्थावरकायप्रभृति मतिश्रुताज्ञानकं विभंगस्तु । संज्ञोपूष्णं प्रभृति सासादनसम्यग्दृष्टिपर्यंतं ज्ञातव्यं ॥

ज्ञानमार्गणयोळु मतिश्रुताज्ञानद्वयं स्थावरकायमिथ्यादृष्टिप्रभृतिसासादनसम्यग्दृष्टिगुण-
स्थानपर्यंतमेरडेरडुगुणस्थानदोळप्पुवु । एकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुः पंचेंद्रियसंज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ता-
पर्याप्तिजीवसमासेगळु प्रत्येकं पदिनाल्कु पदिनाल्कुमप्पुवु । विभंगज्ञानं संज्ञिपूष्णमिथ्यादृष्ट्यादि-

१५ याणि सासादनसम्यग्दृष्टिपर्यंतमेरडुगुणस्थानदोळप्पुवु । संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तिजीवसमासेयो'देय-
प्पुवु । ए'दितु परमागमदो'ळरियल्पडुवुवु ।

कषायमार्गणायां क्रोधमानमायाः स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणद्वित्रिचतुर्भागान्तम् । लोभः पुनः
सूक्ष्मसांपरायान्तम् । तेन क्रोधत्रये गुणस्थानानि नव लोभे दश ज्ञेयानि । जीवसमासाः सर्वत्र चतुर्दश ॥६८६॥

ज्ञानमार्गणायां मतिश्रुताज्ञानद्वयं स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्यादिसासादनान्तं ज्ञातव्यं तेन तत्र गुणस्थाने
२० द्वे । जीवसमासाश्चतुर्दश । तु-पुनः विभङ्गज्ञानं संज्ञिपूष्णमिथ्यादृष्ट्यादिसासादनान्तं तत्र गुणस्थाने द्वे ।
जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एवैकः ॥६८७॥

कषायमार्गणामें क्रोध, मान, माया, स्थावरकायमिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके
क्रमसे दूसरे, तीसरे और चौथे भागपर्यन्त होते हैं । लोभ सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानपर्यन्त
होता है । इससे क्रोध, मान, मायामें नौ और लोभमें दस गुणस्थान होते हैं । जीवसमास
२५ सर्वत्र चौदह होते हैं ॥६८६॥

ज्ञानमार्गणामें कुमति, कुश्रुतज्ञान स्थावरकायमिथ्यादृष्टिसे लेकर सासादनपर्यन्त
जानना । इससे उनमें दो गुणस्थान होते हैं । जीवसमास चौदह होते हैं । विभंगज्ञान संज्ञि-
पर्याप्त मिथ्यादृष्टिसे लेकर सासादन पर्यन्त जानना । इससे उसमें भी दो गुणस्थान होते
हैं । जीवसमास एक संज्ञिपर्याप्त ही होता है ॥६८७॥

३० १. म' दोल्लेल्पडुवुवु ।

सण्णाणतिगं अविरदसम्मादी छट्ठगादि मणपज्जो ।

खीणकसायं जाव दु केवलणाणं जिणे सिद्धे ॥६८८॥

सज्ज्ञानत्रिकमसंयतसम्यग्दृष्ट्यादि षष्ठकादि मनःपर्यायः क्षीणकषायं यावत् केवलज्ञानं जिनेसिद्धे ॥

मतिश्रुतावधि सम्यग्ज्ञानत्रितयमसंयतसम्यग्दृष्ट्यादिक्षीणकषायगुणस्थानपर्यन्तं मो भत्तु ५
गुणस्थानगळोळपुट्टु । संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ताऽपर्याप्तजीवसमासेगळेरडेरडपुवु । मनःपर्यायज्ञानं
षष्ठगुणस्थानवर्त्ति प्रमत्तसंयतनादियागि क्षीणकषायपर्यन्तमेळु गुणस्थानदोळपुट्टु । संज्ञिपंचेंद्रिय-
पर्याप्तजीवसमासमो देयक्कुं । केवलज्ञानं सयोगिकेवलियोळमयोगिकेवलियोळं सिद्धरोळमक्कुमल्लि
संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासमुं समुद्धातजिननल्लि औदारिकमिश्रमुं काम्मणकाययोगमुमुळु-
दरिदमपर्याप्तजीवसमासमुं कूडि जीवसमासद्वयं संभविसुगुं— १०

कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । के

२ । २ । २ । ९ । ९ । ९ । ७ । २

१४ । १४ । १ । २ । २ । २ । १ । २

अयदोत्ति हु अविरमणं देसे देसो पमत्तइदरे य ।

परिहारो सामाइयच्छेदो छट्ठादि थूलोत्ति ॥६८९॥

असंयतपर्यन्तमविरमणं देशे देशः प्रमत्ते इतरस्मिन्इच्च । परिहारः सामायिकच्छेदोपस्था-
पनौ षष्ठादिस्थूलपर्यन्तं ॥

सुहुमो सुहुमकसाए संते खीणे जिणे जहक्खादं ।

संजममगणभेदा सिद्धे णत्थित्ति णिदिदट्ठं ॥६९०॥

सूक्ष्मः सूक्ष्मकषाये ज्ञाते क्षीणे जिने यथाख्यातः । संयममार्गणाभेदाः सिद्धे न संति
इति निर्दिष्टं ॥

संयममार्गणयोळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदल्लोडसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्यन्तं नात्कुं
गुणस्थानगळोळविरमणमक्कुमल्लि पदिनात्कुं जीवसमासगळुमपुवु । देशसंयतगुणस्थानदोळु देश- २०

मत्यादिसम्यग्ज्ञानत्रयं असंयतादिक्षीणकषायान्तं तेन तत्र गुणस्थानानि नव । जीवसमासो संज्ञिपर्याप्ता-
पर्याप्तौ द्वौ । मनःपर्यायज्ञानं षष्ठादिक्षीणकषायान्तं तेन तत्र गुणस्थानानि सप्त जीवसमासः संज्ञिपर्याप्ति एवैकः ।
केवलज्ञानं सयोगायोगयोः सिद्धे च । तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तसयोगापर्याप्तौ द्वौ ॥६८८॥

संयममार्गणायां अविरमणं मिथ्यादृष्ट्याद्यसंयतान्तचतुर्गुणस्थानेषु । तत्र जीवसमासाश्चतुर्दश । देशसंयमः

मति आदि तीन सम्यग्ज्ञान असंयतसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानपर्यन्त होते हैं, इससे २५
उनमें नौ गुणस्थान होते हैं । जीवसमास संज्ञीपर्याप्त अपर्याप्त दो होते हैं । मनःपर्यायज्ञान
छठे गुणस्थानसे क्षीणकषाय पर्यन्त होता है, अतः उसमें सात गुणस्थान होते हैं और जीव-
समास एक संज्ञी पर्याप्त ही होता है । केवलज्ञान सयोगी, अयोगी और सिद्धोंमें होता है ।
उसमें संज्ञी पर्याप्त तथा समुद्धातगत सयोगीकी अपेक्षा संज्ञी अपर्याप्त, ये दो जीवसमास
होते हैं ॥६८८॥

संयममार्गणामें असंयम मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतपर्यन्त चार गुणस्थानोंमें होता ३०

- संयतमुमक्कुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपट्याप्रजीवसमासमो देयक्कुं । सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमंगळे-
रडुं प्रत्येकं प्रमत्त संयतगुणस्थानमादिप्रागऽनिवृत्तिकरणगुणस्थानपट्यंतं नाल्कुं नाल्कुं गुणस्थानंग-
ळपुवल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपट्याप्रजीवसमासमुं आहारकापट्याप्रजीवसमासमुंमिंतेरडेरडु जीवसमास-
गळपुवु । परिहारविशुद्धिसंयमं प्रमत्तसंयतरोळमप्रमत्तसंयतरोळमक्कुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपट्याप्र-
५ जीवसमासमो दे यक्कुमेकेंदोडे परिहारविशुद्धिसंयमऋद्धिगुमाहारकऋद्धिगुमोर्व्वनोळे संभविस्-
वपुर्दारिदं । सूक्ष्मसांपरायसंयमं सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानदोळेयक्कुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपट्याप्रजीव-
समासमो देयक्कुं । यथाख्यातचारित्रमुपशान्तकषायगुणस्थानदोळं क्षीणकषायगुणस्थानदोळं
सयोगिकेवल्लिगुणस्थानदोळमयोगिकेवल्लिगुणस्थानदोळमिनु नाल्कुं गुणस्थानंगळोळमक्कुमल्लि
संज्ञिपंचेंद्रियपट्याप्रजीवसमासमुं समुद्धातकेवल्लिय अपट्याप्रजीवसमासमुं कूडि जीवसमासद्वय-
१० मक्कुं । संयममार्गणाभेदंगळु सिद्धपरमेष्ठिगळोळु संभविसुववर्त्ते दु परमागमदोळपेळत्पदुडु ।

अ । दे । सा । छे । प । सू । य ।

४ । १ । ४ । ४ । २ । १ । ४ ।

१४ । १ । २ । २ । १ । १ । २ ।

चउरक्खथावरविरदसम्मादिट्ठी दु खीणमोहोत्ति ।

चक्खु अचक्खु ओही जिणसिद्धे केवलं होदि ॥६९१॥

चतुरिन्द्रियस्थावराविरतसम्यग्दृष्टितः क्षीणमोहपट्यंतं । चक्षुरचक्षुरवधयो जिनसिद्धे
केवलं भवति ॥

- १५ देशसंयतगुणस्थाने तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एव । सामायिकच्छेदोपस्थापनौ प्रमत्ताऽनिवृत्तिकरणान्त-
चतुर्गुणस्थानेषु । तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्ताहारकपर्याप्तौ द्वौ । परिहारविशुद्धिसंयमः प्रमत्ताप्रमत्तयोरेव ।
तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एव तेन सह आहारकद्वैरेकत्वासंभवात् । सूक्ष्मसांपरायसंयमः सूक्ष्मसांप-
रायगुणस्थाने तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्तः । यथाख्यातचारित्रं उपशान्तकषयादिचतुर्गुणस्थानेषु
तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तसमुद्धातकेवल्यपर्याप्तौ द्वौ । संयममार्गणाभेदाः सिद्धे न संतीति परमागमे
२० निदिष्टम् ॥६८९-६९०॥

- है, उसमें चौदह जीवसमास होते हैं । देशसंयम देशसंयत गुणस्थानमें होता है, उसमें जीव-
समास एक संज्ञीपर्याप्त ही होता है । सामायिक और छेदोपस्थापना प्रमत्तसे लेकर अनि-
वृत्तिकरणपर्यन्त चार गुणस्थानोंमें होते हैं । उनमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त और आहारक
मिश्रकी अपेक्षा संज्ञी अपर्याप्त होते हैं । परिहारविशुद्धिसंयम प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानोंमें
२५ ही होता है । उसमें जीवसमास संज्ञी पर्याप्त ही होता है, क्योंकि परिहारविशुद्धि संयमके
साथ आहारकऋद्धि नहीं होती । सूक्ष्मसाम्परायसंयत सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें होता है ।
उसमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त ही होता है । यथाख्यातचारित्र उपशान्तकषाय आदि चार
गुणस्थानोंमें होता है । उसमें जीवसमास संज्ञी पर्याप्त तथा समुद्धात केवलीकी अपेक्षा
अपर्याप्त इस तरह दो होते हैं । संयममार्गणाके भेद सिद्धोंमें नहीं होते, ऐसा परमागममें
३० कहा है ॥६८९-६९०॥

दर्शनमार्गणयोऽच्छुर्दशनं चतुरिन्द्रियमिध्यादृष्टि मोदलोऽङ्गु क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतं पन्नेरङ्गु गुणस्थानगळोळपुदलिल चतुरिन्द्रियसंज्ञिपंचेन्द्रियासंज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासे-
गळारपुवु । अचक्षुर्दशनं स्थावरकायमिध्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतं पन्नेरङ्गु गुणस्थानगळोळपुदलिल पदिनालकुं जीवसमासेगळपुवु । अवधिदर्शनमसंयतसम्यग्दृष्टि-
गुणस्थानमादियागि क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतमोभत्तु गुणस्थानगळोळपुदलिल संज्ञिपंचेन्द्रिय ५
पर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळेरडेपुवु । केवलदर्शनं सयोगिकेवलिययोगिकेवलिलगळे बरेडुं गुण-
स्थानगळोळपुदलिल संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेयुं समुदघातकेवलिय अपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेमु-
मितेरङ्गु जीवसमासेगळपुवु— च । अ । अ । के । गुणस्थानातीतरप्प सिद्धरोळं केव-

१२ । १२ । १२ । २ ।

६ । १४ । २ । २ ।

लदर्शननक्कुं ॥

थावरकायप्पहुडी अविरदसम्मोत्ति असुहतिथलेस्सा ।

१०

सण्णीदो अपमत्तो जाव दु सुहतिणिलेस्साओ ॥६९२॥

स्थावरकायप्रभृत्यविरतसम्यग्दृष्टिपर्यंतमशुभत्रयलेश्याः । संज्ञितोऽप्रमत्तं यावत् शुभत्रयलेश्याः ॥

लेश्यामार्गणयोऽच्छुर्दशनं अशुभत्रयलेश्येगळु स्थावरकायमिध्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि असंयत-
सम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्यंतं नोल्कुं गुणस्थानगळोळु संभविमुववलिल एकेंद्रियबावरसूक्ष्मद्वित्रिचतुः- १५
पंचेन्द्रियसंज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तभेदविभिन्नजीवसमासेगळु पदिनालकुमपुवु । तेजःपञ्चलेश्येगळु
संज्ञिमिध्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि अप्रमत्तगुणस्थानपर्यंतमेळुं गुणस्थानगळोळपुववलिल संज्ञि-
पर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळेरडेरडपुवु ।

दर्शनमार्गणायां चक्षुर्दशनं चतुरिन्द्रियमिध्यादृष्ट्यादिक्षीणकषायान्तं । तत्र जीवसमासाः चतुरिन्द्रिय-
संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः षट् । अचक्षुर्दशनं स्थावरकायमिध्यादृष्ट्यादिक्षीणकषायान्तं तत्र जीवसमासाश्चतुर्दश । २०
अवधिदर्शनं असंयतादिक्षीणकषायान्तं तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ता । केवलदर्शनं सयोगायोगगुण-
स्थानयोः तत्र जीवसमासौ केवलज्ञानोक्तौ द्वौ । सिद्धेऽपि केवलदर्शनं भवति ।

लेश्यामार्गणायां अशुभलेश्यात्रयं स्थावरकायमिध्यादृष्ट्याद्यसंयतान्तं तत्र जीवसमासाः चतुर्दश ।
तेजःपञ्चलेश्ये संज्ञिमिध्यादृष्ट्याद्यप्रमत्तान्तं तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ता ॥६९२॥

दर्शनमार्गणामे चक्षुर्दशनं चतुरिन्द्रिय मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषाय पर्यन्त होता २५
है । उसमें जीवसमास चौइन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, इनके पर्याप्त और अपर्याप्त
के भेदसे छह होते हैं । अचक्षुर्दशनं स्थावरकाय मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान
पर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास चौदह होते हैं । अवधिदर्शन असंयतसे लेकर क्षीण-
कषाय गुणस्थानपर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं ।
केवलदर्शन सयोगी-अयोगी गुणस्थानोंमें होता है । उसमें दो जीवसमास होते हैं जो केवल- ३०
ज्ञानमें होते हैं । सिद्धोंमें भी केवलदर्शन होता है ॥६९१॥

लेश्यामार्गणामे तीन अशुभ लेश्या स्थावरकाय मिध्यादृष्टिसे लेकर असंयत गुणस्थान
पर्यन्त होती है । उनमें जीवसमास चौदह हैं । तेजोलेश्या और पञ्चलेश्या संज्ञी मिध्यादृष्टिसे
लेकर अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त होती हैं । उसमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त
होते हैं ॥६९२॥

णवरि य सुक्का लेस्सा सजोगिचरिमोत्ति होदि णियमेण ।

गयजोगिम्मि वि सिद्धे लेस्सा णत्थित्ति णिद्धिं ॥६९३॥

विशेषोस्ति शुक्ललेश्या सयोगचरमपद्यंतं भवति नियमेन । गतयोगेऽपि सिद्धे लेश्या न संतीति निर्दिष्टं ।

५ शुक्ललेश्येयोऽनु विशेषमुंटावुवंदोडे शुक्ललेश्यासंज्ञिपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि सयोगिकेवल्लिगुणस्थानपद्यंतं पदिमूरं गुणस्थानंगळोळपुदेबुदल्लि संज्ञिपंचेद्रियपद्याप्तापद्याप्ति-जीवसमासमुं समुद्घातकेवल्लिय औदारिकमिश्रकास्मरणकाययोगकालकृतापद्याप्तिजीवसमासमुं कूडि जीवसमासद्वयमक्कुं नियमदिदं । कृ । नी । क । ते । प । शु । गतयोगरूप अयोगिकेवल्लि-

४ । ४ । ४ । ७ । ७ । १३

१४ । १४ । १४ । २ । २ । २

गळोळं सिद्धपरमेष्ठिगळोळं लेश्येगळिल्लमे दिनु परमागमदोळपेळपट्टुदु ।

१० स्थावरकायपहुडी अजोगिचरिमोत्ति होंति भवसिद्धा ।

मिच्छादृष्टिगणे अभव्वसिद्धा हवन्तीत्ति ॥६९४॥

स्थावरकायप्रभृत्ययोगिचरमसमयपद्यंतं भवन्ति भव्वसिद्धाः । मिथ्यादृष्टिस्थाने अभव्व-सिद्धा भवन्तीति ॥

१५ अभव्वमार्गण्योऽनु स्थावरकायमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि अयोगिकेवल्लिचरमगुणस्थान-पद्यंतं पदिनाल्लुं गुणस्थानंगळोळुं भव्वसिद्धरुगळपरल्लि पदिनाल्लुं जीवसमासंगळपुवु । अभव्व-सिद्धरुगळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमोदरोळेयप्परु । अल्लि पदिनाल्लुं जीवसमासंगळपुवु भ । अ १४ । १ १४ । १४

मिच्छो सासणमिस्सो सगसगठाणम्मि होदि अयदादो ।

पट्टमुवसमवेदगसम्मत्तदुगं अप्पमत्तोत्ति ॥६९५॥

मिथ्यादृष्टिः सासादनो मिश्रः स्वस्वस्थाने भवति असंयतात्प्रथमोपशमवेदकसम्यक्त्वद्विकम-

२० प्रमत्तपद्यंतं ॥

शुक्ललेश्यायां विशेषः । स कः ? सा लेश्या संज्ञिपर्याप्तमिथ्यादृष्ट्यादिसयोगान्तं भवति तत्र जीव-समासौ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ द्वावेव नियमेन केवल्यपर्याप्तस्य अपर्याप्ति एवान्तर्भावात् । अयोगिजिने सिद्धे च लेश्या न सन्तीति परमागमे प्रतिपादितम् ॥६९३॥

२५ अभव्वमार्गणायां भव्वसिद्धाः स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्यादिसयोगान्तं भवन्ति । अभव्वसिद्धाः मिथ्यादृष्टिगुण-स्थाने एव भवन्ति इत्युभयत्र जीवसमासाश्चतुर्दश ॥६९४॥

शुक्ललेश्यायामे विशेष है । वह संज्ञीमिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगीपर्यन्त होती है । उसमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त और संज्ञीअपर्याप्त दो ही नियमसे होते हैं । केवलिसमुद्घातगत अपर्याप्तका अन्तर्भाव अपर्याप्तमें ही हो जाता है । अयोग केवली और सिद्धोंमें लेश्या नहीं होती, ऐसा परमागममें कहा है ॥६९३॥

३० अभव्वमार्गणायामे भव्व स्थावरकाय मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगकेवली पर्यन्त होते हैं । अभव्व मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होते हैं । दोनोंमें जीवसमास चौदह ही होते हैं ॥६९४॥

सम्यक्त्वमार्गणयोऽपि मिथ्यादृष्टिः सासादनं मिश्रं तन्मम गुणस्थानदोषैककुमल्लि
मिथ्यादृष्टयोऽपि पविनालकु जीवसमासेगळपुवु । सासादनोऽपि येकेन्द्रियबादरापय्याप्त द्विद्रियापय्याप्त
त्रौन्द्रियापय्याप्तचतुरिद्रियापय्याप्त संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्ता संज्ञिपंचेंद्रियापय्याप्तजीवसमासे-
गळेळपुवु । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वविराधकनप्य सासादननुमुोऽने बाचाप्यापेक्षयिदं
संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासेयुं देवापय्याप्तजीवसमासेयुमेरडपुवु । मिश्रनोऽपि संज्ञिपंचेंद्रिय- ५
पर्याप्तजीवसमासेयोऽपि देयक्कु । प्रथमोपशमसम्यक्त्वमु वेदकसम्यक्त्वमुसंयतसम्यग्दृष्टि-
यागियागऽप्रमत्तपर्यंतं नालकु नालकु गुणस्थानगळोळपुवु । अल्लि प्रथमोपशमसम्यक्त्वदोऽपि
मरणमिल्लपुदरिदं संज्ञिपर्याप्तपंचेंद्रियजीवसमासेयोऽपि देयक्कु । वेदकसम्यक्त्वदोऽपि संज्ञिपंचेंद्रिय-
पर्याप्तापर्याप्तजीवसमासेगळेरडपुवेकेऽपि दोषे घर्मेय नारकापय्याप्तनुं भवनत्रयवर्जितदेवापय्याप्तनुं
भोगभूमिजमनुष्यतिर्य्यचापय्याप्तनुं वेदकसम्यग्दृष्टयोऽनपुदरिदं । १०

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वक्के पेळवपं ।

विदियुवसमसम्मत्तं अविरदसम्मादि संतमोहो ति ।

खड्गं सम्मं च तहा सिद्धोत्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥६९६॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमविरतसम्यग्दृष्टयाद्युपशांतमोहगुणस्थानपर्यंतं क्षायिकसम्यक्त्वं च
तथा सिद्धपर्यंतं जिनैर्निर्दिष्टं । १५

सम्यक्त्वमार्गणायां मिथ्यादृष्टिः सासादनः मिश्रश्च स्वस्वगुणस्थाने एव भवति । तत्र मिथ्यादृष्टौ
जीवसमासाश्चतुर्दश । सासादने बादरैकद्वित्रिचतुरिन्द्रियसंज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्तसंज्ञिपर्याप्ताः सप्त । द्वितीयोपशमसम्य-
क्त्वविराधकस्य सासादनत्वप्राप्तिपक्षे च संज्ञिपर्याप्तदेवापर्याप्तावपि द्वौ । मिश्रे संज्ञिपर्याप्तः । प्रथमोपशमवेदक-
सम्यक्त्वे द्वे असंयताद्यप्रमत्तान्तं स्तः । तत्र जीवसमासः प्रथमोपशमसम्यक्त्वे मरणाभावात् संज्ञिपर्याप्त एवैकः ।
वेदकसम्यक्त्वे संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ द्वौ । घर्मानारकस्य भवनत्रयवर्जितदेवस्य भोगभूमिनरतिरश्चोद्व अपर्याप्तत्वेऽपि २०
तत्संभवात् ॥६९५॥ द्वितीयोपशमसम्यक्त्वस्याह—

सम्यक्त्वमार्गणामे मिथ्यादृष्टिः, सासादन, और मिश्र अपने-अपने गुणस्थानमें होते
हैं । मिथ्यादृष्टिमें जीवसमास चौदह होते हैं । सासादनमें बादर एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय,
तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीअपर्याप्त तथा संज्ञीपर्याप्तअपर्याप्त ये सात जीवसमास होते हैं । २५
द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी विराधना करके सासादनको प्राप्त होनेके पक्षमें संज्ञीपर्याप्त और
देवअपर्याप्त दो जीवसमास होते हैं । मिश्रगुणस्थानमें संज्ञीपर्याप्त जीवसमास होता है ।
प्रथमोपशम सम्यक्त्व और वेदकसम्यक्त्व असंयतसे अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त होते हैं ।
प्रथमोपशम सम्यक्त्वमें मरणका अभाव होनेसे जीवसमास एक संज्ञीपर्याप्त ही है । वेदक
सम्यक्त्वमें संज्ञीपर्याप्त, अपर्याप्त दो होते हैं । क्योंकि घर्मा नामक प्रथम नरकमें भवनत्रिकको
छोड़कर देवोंमें और भोगभूमिया मनुष्य तथा तिर्य्यचोंमें अपर्याप्त दशमें भी वेदक सम्यक्त्व ३०
होता है ॥६९५॥

द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको कहते हैं—

१. मु. °साविति द्वौ ।

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमसंयताद्युपशान्तकषायगुणस्थानपर्यन्तमेतदु गुणस्थानंगळोलक्कुमल्लि-
युपशमश्रेण्यबरोहणवोलऽप्रमत्तप्रमत्तदेशसंयतासंयतरोळु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमेदरिवुदेके-
दोडे उपशमश्रेण्यारोहणाबरोहणकालमं नोडलु तदुपशमसम्यक्त्वकालं संख्यातगुणमक्कुमेत्तलानुं
चारित्रावरणोदर्यादिवं देशसंयतासंयतरोळु पतनमुंटपुदरिवं । अल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमा-
५ सेयुं देवासंयतापर्याप्तजीवसमासेयुमितेरडु जीवसमासेगळपुवु । क्षायिकसम्यक्त्वमसंयतादियुम-
योगिकेवल्लिगुणस्थानमवसानमागि पंनोदुं गुणस्थानंगळोलपुदल्लि । संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तभुज्य-
मानजीवसमासेयुं बद्धायुष्यपेक्षेयिवं धम्मंय नारकापर्याप्तनु भोगभूमिजमनुष्यतिर्यंचासंयता-
पर्याप्तं देवासंयतापर्याप्तनु संभविसुगुमपुदरिनपर्याप्तजीवसमासेयुमितेरडुजीवसमासे-
गळपुवु । संदृष्टिरचने :-

मि	सा	मि	द्वि	उ	प्र	वे	क्षा	गुणस्थानातीतरण्य	सिद्धपरमेष्ठिगळोलं
१	१	१	८	१	४	४	११		
१४	७	११	२	१	२	२			

१० क्षायिकसम्यक्त्वमक्कुमेदितु जिनस्वामिगळिवं पेळल्पदुदु ॥

सण्णी सण्णिप्पहुडी स्त्रीणकसाओत्ति होदि णियमेण ।

थावरकायप्पहुडी असण्णिप्ति हवे असण्णी दु ॥६९७॥

संज्ञी संज्ञिप्रभृति क्षोणकषायपर्यन्तं भवति नियमेन । स्थावरकायप्रभृति असंज्ञिपर्यन्तं
भवेदसंज्ञी तु ॥

१५ संज्ञिमार्गणेयोळु संज्ञिजीवं संज्ञिमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि क्षोणकषायगुणस्थान-
पर्यन्तं पन्नेरडु गुणस्थानंगळोलपुवु अल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयमक्कुं । तु
मत्ते असंज्ञिजीवस्थावरकायमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि पंचेंद्रियासंज्ञिमिथ्यादृष्टिपर्यन्तं मिथ्या-

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं असंयताद्युपशान्तकषायान्तं भवति । अप्रमत्ते उत्पाद्य उपरि उपशान्तकषायान्तं
गत्वा अघोवतरणे असंयतान्तमपि तत्संभवात् । तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तदेवासंयतापर्याप्तौ द्वौ । क्षायिक-

२० सम्यक्त्वं असंयताद्योगान्तम् । तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तः बद्धायुष्यपेक्षया धर्मानारकभोगभूमिनरतिर्यग्दे-
मानिकापर्याप्तश्चेति द्वौ । सिद्धेऽपि क्षायिकसम्यक्त्वं स्यादिति जिनैरुक्तम् ॥६९६॥

संज्ञिमार्गणायां संज्ञिजीवः संज्ञिमिथ्यादृष्ट्यादिक्षोणकषायान्तं भवति तत्र जीवसमासौ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असंयतसे उपशान्तकषाय गुणस्थानपर्यन्त होता है ; क्योंकि
अप्रमत्त गुणस्थानमें इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके ऊपर उपशान्तकषाय पर्यन्त
२५ जाकर नीचे उतरनेपर असंयत पर्यन्त भी उसका अस्तित्व रहता है । उसमें जीवसमास
संज्ञीपर्याप्त तथा देव असंयत अपर्याप्त दो होते हैं । क्षायिक सम्यक्त्व असंयतसे अयोगी
पर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास संज्ञीपर्याप्त होता है । किन्तु परभवकी आयु बाँधनेकी
अपेक्षा प्रथम नरक, भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंच और वैमानिक सम्बन्धी अपर्याप्त होनेसे दो
होते हैं । सिद्धोंमें भी क्षायिक सम्यक्त्व जिनदेवने कहा है ॥६९६॥

३० संज्ञिमार्गणामें संज्ञीजीव संज्ञीमिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षोणकषाय गुणस्थानपर्यन्त होता
है । उसमें जीवसमास संज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्त दो होते हैं । असंज्ञीजीव स्थावरकायसे

दृष्टिगुणस्थानमोदेयक्कुमल्लि संजिजीवसंबंधिपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयमुळियलुळिद द्वादश-
जीवसमासेगळनितुमपुवु नियमविदं सं । अ

१२ । १ ।

२ । १२ ।

थावरकायप्पहुडी सजोगिचरिमोत्ति होदि आहारी ।

कम्मइय अणाहारी अजोगिसिद्धे वि णायव्वो ॥६९८॥

स्थावरकायप्रभृति सयोगिचरमपर्यंत भवत्याहारी । काम्मणे अनाहारी अयोगिसिद्धेपि ५
ज्ञातव्यः ॥

आहारमार्गणेयोळु स्थावरकायमिथ्यादृष्टियादियागि सयोगकेवलिपर्यंतं पदिमूलं गुणस्था-
नंगळोळाहारिगळोळु आहारियक्कुमल्लि सम्बधुं जीवसमासेगळु पविनाल्लकुमपुवु । विग्रहगति-
काम्मणकाययोगद मिथ्यादृष्टिसासादनसम्बधुदृष्टि असंयतसम्बधुदृष्टिगुणस्थानत्रयमुं प्रतरलोकपूरण-
समुद्घातसयोगिगुणस्थानमुमयोगिगुणस्थानमुमितुगुणस्थानपंचकदोळमनाहारियक्कुमल्लि एकंद्रिय- १०
बावरसूक्ष्मापर्याप्तजीवसमासद्वयमुं द्वित्रिचतुरिन्द्रियापर्याप्तजीवसमासत्रयमुं संज्ञिपंचैन्द्रियपर्याप्ता-
पर्याप्तद्वयमुमसंज्ञ्यपर्याप्तजीवसमासेयुमितु जीवसमासाष्टकमक्कुं आ । अ अनंतरं गुण-

१३ । ५

१४ । ८

स्थानंगळोळु जीवसमासयं पेळवपरु :—

मिच्छे चोद्दसजीवा सासण अयदे पमत्तविरदे य ।

सण्णिदुगं सेसगुणे सण्णी पुण्णो दु खीणोत्ति ॥६९९॥

मिथ्यादृष्टौ चतुर्दशजीवाः सासादने अयते प्रमत्तविरते च । संज्ञिद्वयं शेषगुणे संज्ञिपूर्णस्तु १५
क्षीणकषायपर्यंतं ॥

द्वौ । तु—पुनः असंज्ञिजीवः स्थावरकायाद्यसंज्ञ्यन्तमिथ्यादृष्टिगुणस्थाने एव स्थान्नियमेन तत्र जीवसमासा द्वादश
संज्ञिनो द्वाभावात् ॥६९७॥

आहारमार्गणायां स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्यादिसयोगान्तं आहारी भवति । तत्र जीवसमासाश्चतुर्दश २०
मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतसयोगानां काम्मणयोगावसरे अयोगिसिद्धयोश्च अनाहारो ज्ञातव्यः । तत्र जीवसमासा
अपर्याप्ताः सन्त । अयोगस्य चकः ॥६९८॥ अथ गुणस्थानेषु जीवसमासानाह—

असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है । नियमसे उसमें बारह जीव-
समास होते हैं, क्योंकि संज्ञी सम्बन्धी दो जीवसमास नहीं होते ॥६९७॥

आहारमार्गणामें स्थावरकाय मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगकेवलिपर्यन्त आहारी होता २५
है । उसमें जीवसमास चौदह होते हैं । मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, और सयोगकेवली
के काम्मणयोगके समय तथा अयोगी और सिद्धोंमें अनाहारी जानना । उसमें जीवसमास
अपर्याप्त सम्बन्धी सात होते हैं और अयोगीके एक पर्याप्त होता है ॥६९८॥

अब गुणस्थानोंमें जीवसमासोंको कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळ पदिनालकुं जीवसमासेगप्पुवु । सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळ-
मविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं प्रमत्तविरतनोळं च शब्ददिदं सयोगकेवलिगुणस्थानदोळमितु नालकुं
गुणस्थानंगळोळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयं प्रत्येकमक्कुं । शेषमिश्रदेशसंयताप्रमत्ता
पूर्वकरणा निवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषायक्षीणकषायगुणस्थानाष्टकदोळमपि-शब्ददिदमयो-
गिगुणस्थानदोळमितु नवगुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ताजीवसमासेयो देयक्कुं :—
मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ
१४ । २ । १ । २ । १ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । २ । १

अनंतरं मार्गणास्थानंगळोळु जीवसमासेयं सूचिसिदपं :—

तिरियगदीए चोद्दस हवन्ति सेसेसु जाण दोद्दो दु ।

मग्गणठाणस्सेवं नेयाणि समासठाणाणि ॥७००॥

तिर्यग्गतौ चतुर्दश भवन्ति शेषेषु जानीहि द्वौ द्वौ तु । मार्गणास्थानस्थैवं ज्ञेयानि समास-
१० स्थानानि ॥

तिर्यग्गतियोळु जीवसमासंगळु पदिनालकुमप्पुवु । शेषनारकदेवमनुष्यगतिगळोळु प्रत्येकं
संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयमक्कुं । तु मत्ते एवमी प्रकारदिदं मार्गणास्थानंगळेनि-
तोळधनितक्कुं । जीवसमासस्थानंगळु यथायोग्यमाणि भुंयेळ्व क्रमदिनरियत्पडुवुवु ।

अनंतरं गुणस्थानंगळोळु पर्याप्तिप्राणंगळं निरूपिसिदपरु :—

पज्जत्ती पाणावि य सुग्गमा भाविदिंयं ण जोगिम्मि ।

तहि वाचुस्सासाउगकायत्तिगदुग्गमजोगिणो आऊ ॥७०१॥

पर्याप्तयः प्राणाः अपि च सुग्गमाः भावेन्द्रियं न योगिनि । तस्मिन्वागुच्छ्वासायुः काया-
स्त्रिकद्विकमयोगिनः आयुः ॥

मिथ्यादृष्टौ जीवसमासाश्चतुर्दश, सासादने अविरते प्रमत्ते च शब्दात् सयोगे च संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ द्वौ ।
२० शेषाष्टगुणस्थानेषु 'दु' शब्दात् अयोगे च संज्ञिपर्याप्त एवैकः ॥६९९॥ अथ मार्गणास्थानेषु तान् सूचयति—

तिर्यग्गतौ जीवसमासाश्चतुर्दश भवन्ति शेषगतिषु संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ द्वौ । तु-पुनः सर्वमार्गणास्थानानां
यथायोग्यं प्रागुक्तक्रमेण जीवसमासा ज्ञातव्याः ॥७००॥ अथ गुणस्थानेषु पर्याप्तिप्राणानाह—

मिथ्यादृष्टिमें चौदह जीवसमास होते हैं । सासादन, अविरत, प्रमत्त और च शब्दसे
सयोगीमें संज्ञीपर्याप्त और अपर्याप्त दो जीवसमास होते हैं । शेष आठ गुणस्थानोंमें और
२५ अपि शब्दसे अयोगकेवलीमें एक संज्ञीपर्याप्त ही होता है ॥६९९॥

अब मार्गणाओंमें जीवसमास कहते हैं :—

तिर्यग्गतियोंमें चौदह जीवसमास होते हैं । शेष गतियोंमें संज्ञीपर्याप्त, अपर्याप्त दो
जीव-समास होते हैं । इस प्रकार सब मार्गणास्थानोंमें यथायोग्य पूर्वोक्त क्रमसे जीवसमास
जानना ॥७००॥

३० गुणस्थानोंमें पर्याप्ति और प्राण कहते हैं—

१. सु. ० पु अपित्रयदात् ।

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदत्तगोडु पदिनात्कुं गुणस्थानंगळोळु पर्याप्तिगळुं प्राणंगळुं पृथक्कागि पेळत्पडवेकंदोडे सुगमंगळपुदरिदमदेतेंदोडे क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतं प्रत्येकयाह-
पर्याप्तिगळं दशप्राणंगळमप्युवु । सयोगिकेवलिभट्टारकनोळु भावेन्द्रियमित्तल । द्रव्येन्द्रियापेक्षेयिनाहं
पर्याप्तिगळोळु वाग्बलप्राणमुमुच्छ्वासनिश्वासप्राणमुमायुःप्राणमुं कायबलप्राणमेंबो नाल्कुं
प्राणंगळप्युवु । उळिदिद्रिय प्राणंगळय्दुं मनोबलप्राणमुं संभविसवु । आ सयोगिकेवलिगे वाग्योगं ५
निलुत्तिरलु मूह प्राणंगळप्युवु । उच्छ्वासनिःश्वासनुपरतमागुत्तिरलुमेरडेप्राणंगळप्युवु । अयोगि
भट्टारकनोळु आयुष्यप्राणमोदेयक्कुं । पूर्वसंचितनोकर्मकर्मसंचयं प्रतिसमयमेकैकनिषेकस्थिति-
गळिसि चरमसमयदोळु किंचिन्न्यूनद्वयार्धगुणहानिमात्रनोकर्मसंचयमुं कर्मसंचयमुमुदयिसि
द्रव्यार्थिकनयापेक्षेयिदमयोगिचरमसमयदोळु कर्ममुं नोकर्ममुं केदुवु पर्यायार्थिकनयापेक्षेयिन-
नंतरसमयदोळिकडुत्तिरलु लोकाग्रनिवासि सिद्धपरमेष्ठियप्पने बुदु तात्पर्यं । १०

अनंतर गुणस्थानंगळोळु संज्ञेगळं पेळदपरः—

छटोत्ति पढमसण्णा सकज्ज सेसा य कारणावेक्खा ।

पुव्वो पढमणियट्ठी सुहुमोत्ति कमेण सेसाओ ॥७०२॥

षष्ठपर्यंतं प्रथमसंज्ञा सकार्या शेषाश्च कारणापेक्षाः । अपूर्वप्रथमानिवृत्ति सूक्ष्मपर्यंतं
क्रमेण शेषाश्च ॥ १५

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि प्रमत्तगुणस्थानपर्यंतमूहं गुणस्थानंगळोळु सकार्यमप्पा-
हारादिचतुःसंज्ञेगळुमप्युवा षष्ठनल्लि आहारसंज्ञे भ्युच्छित्तियात्तु । उपरितनगुणस्थानदोळुभावमं

चतुर्दशगुणस्थानेषु पर्याप्तयः प्राणाश्च पृथक् नोच्यन्ते सुगमत्वात् । तथाहि—क्षीणकषायपर्यन्तं
षट्पर्याप्तयः दश प्राणाः । सयोगजिने भावेन्द्रियं न, द्रव्येन्द्रियापेक्षया षट्पर्याप्तयः वागुच्छ्वासनिश्वासायुः-
कायप्राणाश्चत्वारि भवन्ति । शेषेन्द्रियमनःप्राणाः षट् न सन्ति । तथापि वाग्योगे विश्रान्ते त्रयः । पुनः २०
उच्छ्वासनिश्वासे विश्रान्ते द्वौ । अयोगे आयुः प्राण एकः । प्राक्संचितनोकर्मकर्मसंचयः प्रतिसमयमेकैकनिषेकं
गलन् किंचिदूनद्वयार्धगुणहानिमात्रो द्रव्यार्थिकनयेन अयोगिचरमे विनश्यति पर्यायार्थिकनयेन अनन्तरसमये
एवेति तात्पर्यम् ॥७०१॥ अथ गुणस्थानेषु संज्ञा आह—

मिथ्यादृष्ट्यादिप्रमत्तान्तं सकार्याः आहारादिचतस्रः संज्ञा भवन्ति । षष्ठगुणस्थाने आहारसंज्ञा

चौदह गुणस्थानोंमें पर्याप्ति और प्राण पृथक् नहीं कहे हैं ; क्योंकि सुगम है । यथा— २५
क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यन्त छह पर्याप्तियाँ और दस प्राण होते हैं । सयोगकेवलीमें भावेन्द्रिय
नहीं है । उनके द्रव्येन्द्रियकी अपेक्षा छह पर्याप्तियाँ हैं और वचनबल, उच्छ्वास-निश्वास,
आयु और कायबल ये चार प्राण होते हैं । शेष इन्द्रियाँ और मन ये छह प्राण नहीं हैं । उन
चार प्राणोंमें-से भी वचनयोगके रुक जानेपर तीन रहते हैं, पुनः उच्छ्वास-निश्वासका
निरोध होनेपर दो रहते हैं । अयोगकेवलीके एक आयुप्राण होता है । पूर्व संचित कर्म- ३०
नोकर्मका संचय प्रतिसमय एक-एक निषेक गलते-गलते किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानि प्रमाण
रहता है । सो द्रव्यार्थिक नयसे तो अयोगीके अन्तिम समयमें नष्ट होता है और पर्यायार्थिक
नयसे अनन्तर समयमें नष्ट होता है ॥७०१॥

गुणस्थानोंमें संज्ञा कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिसे लेकर प्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त आहार आदि चारों संज्ञाएँ कार्यरूपमें ३५

व्युच्छित्तिये बुद्धि, मेले अप्रमत्तादिगळोळु कारणास्तित्वापेक्षेयिदं । अपूर्वकरणपर्यंतं भयमैथुनपरिग्रह संज्ञेगळु कार्यरहितंगळप्यु । आ अपूर्वकरणनोळु भयसंज्ञे व्युच्छित्तियाबुद्धि अनिवृत्तिकरणप्रथमभागं सवेदभागे आ भागे पर्यंतं कार्यरहितंगळप्य मैथुनपरिग्रहसंज्ञेगळप्यु । आ अनिवृत्तिकरणप्रथमभागकालदोळु मैथुनसंज्ञे व्युच्छित्तियाबुद्धि । सूक्ष्मसांपरायणस्थानदोळु परिग्रह संज्ञे ५ व्युच्छित्तियाबुद्धि । मेले उपज्ञांतादिगुणस्थानंगळोळु कार्यरहितमादोडं संज्ञेगळिल्ल एकेदोडे “कारणाभावे कार्यस्याप्यभावः” एंबो न्यायदिदं संज्ञेगळभावमक्कु :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।

४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ३ । ३ । २ । १ । ० । ० । ० । ० ।

मग्गण उवजोगावि य सुग्गमा पुब्बं परूविदत्तादो ।

१० गदियादिसु मिच्छादी परूविदे रूविदा होति ॥७०३॥

मार्गणोपयोगा अपि च सुग्गमाः पूर्वं प्ररूपितत्वात् । गत्यादिषु मिथ्यादृष्टयादौ प्ररूपिते रूपिता भवन्ति ॥

गुणस्थानंगळ मेले मार्गणेगळुमं उपयोगमुमं पेळ्वातं सुग्गमेदु पेळ्बुदिल्लदेकेदोडे पूर्वमुन्नं प्ररूपितमपुर्दारिदं । आवडेयोळु प्ररूपितमादुदं दोडे गत्यादिमार्गणास्थानंगळोळु मिथ्या- १५ दृष्ट्यादिगुणस्थानंगळुं जीवसमासेगळुं पेळ्पट्टबुद्धि कारणमागियल्लि पेळ्पट्टुत्तिरल्लिल्लियुं पेळ्पट्टवेयपुवेदरिवुद्धि । आदोडं मंदबुद्धिगळनुग्रहात्थं पेळ्पट्टेमुमदेते दोडे :—नरकादिगतिनाम-

व्युच्छिन्ना । शेषास्तिस्रः अप्रमत्तादिषु कारणास्तित्वापेक्षया अपूर्वकरणान्तं कार्यरहिता भवन्ति । तत्र भयसंज्ञा व्युच्छिन्ना । अनिवृत्तिकरणप्रथमसवेदभागान्तं कार्यरहिते मैथुनपरिग्रहसंज्ञे स्तः । तत्र मैथुनसंज्ञा व्युच्छिन्ना । सूक्ष्मसांपराये परिग्रहसंज्ञा व्युच्छिन्ना । उपरि उपज्ञानतादिषु कार्यरहिता अपि संज्ञा न सन्ति कारणाभावे २० कार्यस्याप्यभावात् ॥७०२॥

गुणस्थानेषु मार्गणा उपयोगाश्च वक्तुं सुग्गमा इति नोच्यन्ते पूर्वं प्ररूपितत्वात् । क्वेति चेत् ? मार्गणासु गुणस्थानजीवसमासेषु उक्तेषु उक्ता भवन्ति । तथापि मन्दबुद्धयनुग्रहार्थमुच्यन्ते तद्यथा—

रहती हैं । छटे गुणस्थानमें आहार संज्ञाका विच्छेद हो जाता है । शेष तीन संज्ञा अप्रमत्त आदिमें कारणका सद्भाव होनेसे हैं वैसे कार्यरहित हैं । अपूर्वकरणमें भय संज्ञाका विच्छेद २५ हो जाता है । अनिवृत्तिकरणके प्रथम सवेद भाग पर्यन्त कार्यरहित मैथुन और परिग्रह संज्ञा रहती है । वहाँ मैथुन संज्ञाका विच्छेद हो जाता है । सूक्ष्म साम्परायमें परिग्रह संज्ञाका विच्छेद हो जाता है । ऊपर उपज्ञानत कषाय आदिमें कार्यरहित भी संज्ञा नहीं हैं ; क्योंकि कारणके अभावमें कार्यका भी अभाव हो जाता है ॥७०२॥

गुणस्थानोंमें मार्गणा और उपयोगका कथन सरल होनेसे नहीं कहा है । पहले कह ३० आये हैं, क्योंकि मार्गणाओंमें गुणस्थान और जीवसमासके कहनेसे उनका कथन हो जाता है । फिर भी मन्द बुद्धियोंके अनुग्रहके लिए कहते हैं—

कर्मोदयजनितनारकापर्याप्तगच्छे गतिगच्छपुद्गरिदं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोषु पर्याप्तापर्याप्त नारकहं पर्याप्तापर्याप्त तिरियंचहं पर्याप्तापर्याप्तमनुष्यहं पर्याप्तापर्याप्तदेवकंकळुमितु नाल्कुं गतिजोवरुमप्पह । सासादनगुणस्थानदोषु पर्याप्तनारकहं पर्याप्तापर्याप्ततिरियंचहं पर्याप्तापर्याप्तमनुष्यहं पर्याप्तापर्याप्तदेवकंकळुमप्पह । मिश्रगुणस्थानदोषु पर्याप्तनारकहं पर्याप्ततिरियंचहं पर्याप्तमनुष्यहं पर्याप्तदेवकंकळुमप्पह । असंयतसम्पदृष्टिगुणस्थानदोषु घम्मंय पर्याप्तापर्याप्तनारकहं षड्भूमिगच्छ पर्याप्तनारकहं भोगभूमिजपर्याप्तापर्याप्ततिरियंचहं कम्मभूमिय पर्याप्ततिरियंचहं भोगभूमिजपर्याप्तापर्याप्तमनुष्यहं कम्मभूमिजपर्याप्तापर्याप्तमनुष्यहं भवनत्रयवर्जितपर्याप्तापर्याप्तदेवकंकळुं भवनत्रयपर्याप्तदेवकंकळुं संभविमुवरु । देशसंयतगुणस्थानदोषु पर्याप्तकम्मभूमिजतिरियंचहं मनुष्यहं संभविमुवरु । प्रमत्तगुणस्थानदोषु पर्याप्तमनुष्यरुमाहारकच्छिप्राप्तप्रमत्तापेक्षेयिदमाहारकशरीरपर्याप्तापर्याप्तमनुष्यरुमोळरु । १०

अप्रमत्तगुणस्थानं मोदलोडु क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतमारु गुणस्थानगच्छो प्रत्येकं पर्याप्तमनुष्यनेयकुं । सयोगकेवलिगुणस्थानदोषु पर्याप्तमनुष्यरेयप्पह । समुदधातकेवल्यपेक्षेयिदं औदारिकमिश्रकाययोगिगच्छुं काम्मणकाययोगिगच्छप्प अपर्याप्तमनुष्यरुमप्पह । अयोगिकेवलि गुणस्थानदोषु पर्याप्तमनुष्यरेयप्पह ।

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
४ । ४ । ४ । ४ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ ।

नरकादिगतिनामोदयजनित नारकादिपर्याप्ताः गतयः । तेन मिथ्यादृष्टौ नारकादयः पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च । १५
सासादने नारकाः पर्याप्ताः, शेषाः उभये । मिश्रे सर्वे पर्याप्ता एव । असंयते घर्मानारकाः उभये, शेषनारकाः पर्याप्ता एव । भोगभूमितिर्यग्मनुष्याः कर्मभूमिमनुष्याः वैमानिकाश्च उभये । कर्मभूमितिर्यञ्चो भवनत्रयदेवाश्च पर्याप्ता एव । देशसंयते कर्मभूमितिर्यग्मनुष्याः पर्याप्ताः । प्रमत्ते मनुष्याः पर्याप्ताः, साहारकद्वयस्तु उभये । अप्रमत्तादिक्षीणकषायान्ताः पर्याप्ताः । संयोगिनि उभये । अयोगिनि पर्याप्ता एव ।

नरक आदि गतिनाम कर्मके उदयसे उत्पन्न हुई नरकादि पर्याप्तोंको गति कहते हैं । २०
इससे मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें नारक आदि पर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं । सासादनमें नारकी पर्याप्त ही होते हैं, शेष तिर्यंच आदि पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों होते हैं । मिश्रगुणस्थानमें सब पर्याप्त ही होते हैं । असंयत गुणस्थानमें प्रथम नरकके नारकी पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों होते हैं । शेष नारकी पर्याप्त ही होते हैं । भोगभूमिके तिर्यंच, मनुष्य, कर्मभूमिके मनुष्य और वैमानिक पर्याप्तक-अपर्याप्तक दोनों होते हैं । कर्मभूमिके तिर्यंच और भवनत्रिकके देव पर्याप्त ही होते हैं । देशसंयतमें कर्मभूमिके तिर्यंच और मनुष्य पर्याप्त ही होते हैं । प्रमत्त गुणस्थानमें मनुष्य पर्याप्त ही होते हैं । आहारक ऋद्धिवाले पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों होते हैं । अप्रमत्तसे लेकर क्षीणकषाय पर्यन्त पर्याप्त होते हैं । संयोगीमें दोनों होते हैं । अयोगीमें पर्याप्त ही होते हैं । २५

एकेंद्रियादिजातिनामकर्मोदयजनितजीवपर्यायिकैन्द्रियव्यपदेशमवकुमा यिन्द्रियमार्गणगळेकेंद्रि-
यादिपंचप्रकारमप्युवु । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु पर्याप्तापर्याप्तैकद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियंगळदु-
मप्युवु ।

- सासादनसभ्यदृष्टिगुणस्थानदोळु एकेंद्रियादिपंचेंद्रियपर्याप्तमाददुमपर्याप्तजीवंगळु पर्याप्त-
५ पंचेंद्रियजीवंगळुमप्युवु । मिश्रगुणस्थानदोळु पर्याप्तपंचेंद्रियमोदेयवकुं । असंयतसभ्यदृष्टिगुण-
स्थानदोळु पर्याप्ताऽपर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियजीवंगळेप्युवु । देशसंयतगुणस्थानदोळु पर्याप्तपंचेंद्रिय-
मोदेयवकुं । प्रमत्तगुणस्थानदोळु पर्याप्तपंचेंद्रियमोदेयवकुमल्लि आहारकऋद्धियुक्तनोळु तद-
ऋद्धयपेक्षेयिदं पर्याप्तापर्याप्ताहारकशरीरपंचेंद्रियमुमवकुं । अप्रमत्तगुणस्थानदोळु मेले क्षीण-
कषायगुणस्थानपर्याप्तं आहं गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं पर्याप्तपंचेंद्रियमेयवकुं । सयोगकेवलिगुण-
१० स्थानदोळुपर्याप्तपंचेंद्रियमेयवकुमल्लि समुद्घातकेवल्यपेक्षेयिदं मुं पेळदंतऽपर्याप्तपंचेंद्रियमुमवकुं ।
अयोगिकेवलिगुणस्थानदोळु पर्याप्तपंचेंद्रियमेयवकुं—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
५ । ५ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ ।

२

- पृथ्वीकायादिविशिष्टैकेंद्रियजातिस्थावरनामकर्मोदयदिदमुं त्रसनामकर्मोदयदिदमूमाद जीवपर्या-
यवके कायत्वव्यपदेशमवकुमा कायत्वमुं पृथ्वीकायिकमुमप्यायिकमुं तेजस्कायिकमुं वातकायिकमुं
वनस्पतिकायिकमुमेंदुं त्रसकायिक मेदितु षड्भेदमवकुं । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु पर्याप्तापर्याप्त-
१५ षड्जीवनिकायमवकुं । सासादनगुणस्थानदोळु बादरपृथ्वीवब्वनस्पत्यपर्याप्तकायिकंगळु द्वित्रिचतुः-
पंचेंद्रियासंज्ञि अपर्याप्तत्रसकायिकंगळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तत्रसकायिकंगळुसितु षड्जीव-

- एकेन्द्रियादिजातिनामोदयजनितजीवपर्यायः इन्द्रियं, तन्मार्गणाः एकेन्द्रियादयः पञ्च । ताः मिथ्यादृष्टी
पर्याप्तापर्याप्ताः पञ्च । सासादने अपर्याप्ताः पञ्च पर्याप्तपञ्चेन्द्रियश्च । मिश्रे पर्याप्तपञ्चेन्द्रिय एव । असंयते स
उभयः । देशसंयते पर्याप्तः । प्रमत्ते पर्याप्तः । साहारकविस्तृभयः । अप्रमत्तादिक्षीणकषायान्तेषु पर्याप्त एव ।
२० सयोगे पर्याप्तः । समुद्घाते तृभयः । अयोगे पर्याप्त एव ।

पृथ्वीकायादिविशिष्टैकेंद्रियजातिस्थावरनामोदयत्रसनामोदयजाः षड्जीवपर्यायाः कायाः । ते मिथ्या-
दृष्टी पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च । सासादने बादरपृथ्वीवब्वनस्पतिस्थावरकायाः द्वित्रिचतुरिन्द्रियाऽसंज्ञित्रसकायाश्चा-

- एकेन्द्रिय आदि जातिनामकर्मके उदयसे उत्पन्न हुई जीवकी पर्याय इन्द्रिय है । उसकी
मार्गणा एकेन्द्रिय आदि पाँच हैं । वे पाँचों मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें पर्याप्त-अपर्याप्त होते हैं ।
२५ सासादनमें अपर्याप्त तो पाँचों हैं, पर्याप्त एक पंचेन्द्रिय ही है । मिश्रमें पर्याप्त पंचेन्द्रिय ही है ।
असंयतमें पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों है । देशसंयतमें पर्याप्त है । प्रमत्तमें पर्याप्त है
आहारक ऋद्धिवाला दोनों है । अप्रमत्तसे लेकर क्षीणकषाय पर्यन्त पर्याप्त ही है । सयोग-
केवलीमें पर्याप्त है, किन्तु समुद्घातमें दोनों है । अयोगीमें पर्याप्त ही है ।

- पृथ्वीकाय आदि विशिष्ट एकेन्द्रियादि जाति और स्थावर नामकर्म तथा त्रसनाम-
३० कर्मके उदयसे उत्पन्न हुई छह जीवपर्यायोंको काय कहते हैं । वे मिथ्यादृष्टिमें पर्याप्त और
अपर्याप्त होते हैं । सासादनमें बादर, पृथ्वी, जल और वनस्पति स्थावरकाय तथा दोइन्द्रिय,

निकायमप्युव । मिश्रगुणस्थानदोळु पर्याप्तपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु । असंयतगुणस्थानदोळु पर्याप्तापर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु । देशसंयतगुणस्थानदोळु पर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु । प्रमत्तगुणस्थानदोळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तत्रसकायिकमेयक्कुमल्लियाहारकऋद्धिप्राप्तनोळु आहारकशरीरपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तत्रसकायिकमेयक्कु । अप्रमत्तगुणस्थानं मोदलोडु क्षीणकषायगुणस्थानपर्याप्तसारं गुणस्थानगळोळु प्रत्येकं पर्याप्तपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु । ५
सयोगकेवलिगुणस्थानदोळु पर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कुमल्लि समुद्घातसयोगकेवलि भट्टारकनोळु औदारिकमिश्रयोगमुं काम्मर्णकाययोगमुमुळुदरिदमपर्याप्तपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु । अयोगिकेवलिभट्टारकनोळुपर्याप्तपंचेंद्रियत्रसकायिकमेयक्कु—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सु । उ । क्षी । स । अ ।
६ । ६ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ ।

पुद्गलविपाकिशरीरांगोपांगनामकर्मोदयंगळिदं मनोवचनकाययुक्तमप्य जीवके कर्मनो-
कर्मगमनकारणमप्युदाबुदु शक्ति जीवप्रदेशपरिस्पंदसंभूतमदु योगमेबुदक्कुमदु मनोवचनकाय- १०
प्रवृत्तिभेदादि त्रिविधमक्कुमल्लि वीर्यान्तरायनोइन्द्रियावरणक्षयोपशमदिदमंगोपांगनामकर्मोदयदिदं-
मनःपर्याप्तियुक्तं मनोवर्गणायातपुद्गलस्कन्धगळो अष्टच्छदारविदाकारदिदं हृदयदोळु निर्माण-
नामकर्मोदयसंपादितद्रव्यमनः पद्मपत्रंगळोळु नोइन्द्रियक्षयोपशमजीवप्रदेशप्रचयदोळु लब्ध्युप-
योगलक्षणभावेन्द्रियं मनमेबुदक्कुमा मनोव्यापारमं मनोयोगमेबुदा मनोयोगमुं सत्याद्यर्थ

पर्याप्ताः संज्ञिप्रसकायः उभयश्चेति षड्जीवनिकायः । मिश्रे संज्ञिपञ्चेन्द्रियत्रसकायपर्याप्त एव । असंयते उभयः, १५
देशसंयते पर्याप्त एव । प्रमत्ते पर्याप्तः । साहारकविस्तुभयः । अप्रमत्तादिक्लीणकषायान्तेषु पर्याप्त एव ।
सयोगे पर्याप्तः । समुद्घाते तूभयः । अयोगे पर्याप्त एव ।

पुद्गलविपाकिशरीराङ्गोपाङ्गनामकर्मोदयैः मनोवचनकाययुक्तजीवस्य कर्मनोकर्मगमकारणा या शक्तिः
तज्जनितजीवप्रदेशपरिस्पन्दनं वा योगः स च मनोवचनकायवृत्तिभेदात्तन्ना । तत्र वीर्यान्तरायनोइन्द्रियावरण-
क्षयोपशमेन अङ्गोपाङ्गनामोदयेन च मनःपर्याप्तियुक्तजीवस्य मनोवर्गणायातपुद्गलस्कन्धानां अष्टच्छदारविन्दा- २०
कारेण हृदये निर्माणनामोदयसंपादितं द्रव्यमनः । तत्पत्राग्रेषु नोइन्द्रियावरणक्षयोपशमयुक्तजीवप्रदेशप्रचये

तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय त्रसकाय अपर्याप्त होते हैं । संज्ञी पंचेन्द्रिय
त्रसकाय दोनों होते हैं । इस प्रकार इस गुणस्थानमें लहो जीवनिकाय होते हैं । मिश्रमें संज्ञी
पंचेन्द्रिय त्रसकाय पर्याप्त ही है । असंयतमें दोनों हैं । देशसंयतमें पर्याप्त ही है । प्रमत्तमें
पर्याप्त है । आहारक ऋद्धि सहित दोनों हैं । अप्रमत्तसे क्षीणकषायपर्यन्त दोनों हैं । सयोगीमें २५
पर्याप्त है । समुद्घातमें दोनों हैं । अयोगीमें पर्याप्त ही है ।

पुद्गलविपाकी शरीर और अंगोपांग नामकर्मके उदयके साथ मन-वचन-कायसे युक्त
जीवके कर्म-नोकर्मके आनेमें कारण जो शक्ति है अथवा उसके द्वारा होनेवाला जो जीवके
प्रदेशोंका चलन है, वह योग है । वह मन-वचन-कायकी प्रवृत्तिके भेदसे तीन प्रकारका है ।
वीर्यान्तराय और नोइन्द्रियावरणके क्षयोपशमसे तथा अंगोपांगनाम कर्मके उदयसे मनः- ३०
पर्याप्तिसे युक्त जीवके मनोवर्गणारूपसे आये हुए पुद्गल स्कन्धोंका आठ पाँखुड़ीके कमलके
आकारसे हृदयमें निर्माणनाम कर्मके उदयसे रचा गया द्रव्यमन है । उन पाँखुड़ीके अग्रभागोंमें

- विषयभेदं चतुर्विधमक्कुं । भाषापर्याप्तियोज्ज्वलं जीवके शरीरनामकर्मोदयं स्वरनाम-
कर्मोदयसहकारिकारणं भाषावर्गणायातपुद्गलस्कंधंगळे चतुर्विधभाषारूपं परिणमनं
वाग्योगमक्कुमदु सत्याद्यर्थवाचकत्वं चतुर्विधमक्कुमोदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरनामकर्मो-
दयंगळिदमाहारवर्गणायातपुद्गलस्कंधंगळे निर्माणनामकर्मोदयनिर्माणित तत्तच्छरीरपरिण-
मनपरिणतियोळु पुट्टिव जीवप्रदेशपरिस्पंदमोदारिकादिकाययोगमक्कुं । तच्छरीरपर्याप्तिकालं
समयोनांतर्मुहूर्तपर्यंतं तन्मिश्रकाययोगमक्कुमवक्के मिश्रत्वव्यपदेशमे ते दोडे औदारिकादिनोकर्म-
शरीरवर्गणंगळनाहरिसुवलि स्वतः सामर्थ्यासंभवेन पुट्टिरं कामर्णवर्गणासव्यपेक्षमपुट्टिरं
मिश्रव्यपदेशमक्कुं । विग्रहगतियोळु औदारिकादिनोकर्मवर्गणंगळनाहार मागुत्तिरलु कामर्ण-
शरीरनामकर्मोदयं कामर्णवर्गणायातपुद्गलस्कंधंगळे ज्ञानावरणादिकर्मपर्यायं जीव-
१० प्रदेशंगळोळु बंधप्रघट्टोळु पुट्टिव जीवप्रदेशपरिस्पंदं कामर्णकाययोगमे बुदितुं कूडि योगंगळु
पदिनैदपुवु ॥

- लब्धुपयोगलक्षणं भावमनः तद्व्यापारो मनोयोगः । स च सत्याद्यर्थविषयभेदाच्चतुर्धा । भाषापर्याप्तियुक्त-
जीवस्य शरीरनामोदयेन स्वरनामोदयसहकारिकारणेन भाषावर्गणायातपुद्गलस्कन्धानां चतुर्विधभाषारूपेण
परिणमनं वाग्योगः । सोऽपि सत्याद्यर्थवाचकत्वेन चतुर्धा । औदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरनामोदयैः आहार-
१५ वर्गणायातपुद्गलस्कन्धानां निर्माणनामोदयनिर्माणिततत्तच्छरीरपरिणमनपरिणतौ उत्पन्नजीवपरिस्पन्दः
औदारिकादिकाययोगः । तत्तच्छरीरपर्याप्तिकाले समयोनांतर्मुहूर्तपर्यंतं तत्तन्मिश्रकाययोगः । अस्य च
मिश्रत्वव्यपदेशः औदारिकादिनोकर्मशरीरवर्गणाहरणे स्वतः सामर्थ्यासंभवेन कामर्णवर्गणासव्यपेक्षत्वात् ।
विग्रहगतौ औदारिकादिनोकर्मवर्गणानां अनाहरणे सति कामर्णशरीरनामोदयेन कामर्णवर्गणायातपुद्गलस्कन्धानां
ज्ञानावरणादिकर्मपर्यायेण जीवप्रदेशेषु बन्धप्रघट्टके उत्पन्नजीवप्रदेशपरिस्पन्दः कामर्णकाययोगः, एवं योगाः
२० पञ्चदश ॥७०३॥

- जो नोइन्द्रियावरणके क्षयोपशमसे युक्त जीवप्रदेश है ; उनमें लब्धि उपयोग लक्षणवाला भाव-
मन है । उसके व्यापारको मनोयोग कहते हैं । वह सत्य-असत्य आदि अर्थविषयक भेदसे
चार प्रकारका है । भाषा पर्याप्तिसे युक्त जीवके शरीर नाम कर्मके उदयसे और स्वर नाम
कर्मके उदयकी सहायतासे भाषावर्गणके रूपमें आये हुए पुद्गल स्कन्धोंका चार प्रकारकी
२५ भाषाके रूपसे परिणमन वचनयोग है । वह भी सत्य आदि अर्थका वाचक होनेसे चार
प्रकारका है । औदारिक, वैक्रियिक, और आहारक शरीरनाम कर्मके उदयसे आहार वर्गणके
रूपमें आये पुद्गल स्कन्धोंका निर्माणनाम कर्मके उदयसे रचित उस-उस शरीररूप परिणमन
होनेपर जो जीवमें परिस्पन्द होता है, वह औदारिक आदि काययोग है । उस-उस शरीर
पर्याप्तिके कालमें एक समय हीन अन्तर्मुहूर्त काल तक औदारिक आदि मिश्रकाययोग होता
३० है । इसको मिश्र कहनेका कारण यह है कि औदारिक आदि नोकर्म शरीर वर्गणाओंके
आहरणमें स्वयं समर्थ न होनेसे कामर्णवर्गणाकी अपेक्षा करता है । विग्रहगतिमें औदारिक
आदि नोकर्म वर्गणाओंका ग्रहण न होनेपर कामर्ण शरीर नामकर्मके उदयसे कामर्णवर्गणा
रूपसे आये पुद्गल स्कन्धोंका ज्ञानावरण आदि कर्मपर्याय रूपसे जीवके प्रदेशोंमें बन्ध
होनेपर उत्पन्न हुआ जीवके प्रदेशोंका हलन-चलन कामर्ण काययोग है । इस प्रकार योग
३५ पन्द्रह होते हैं ॥७०३॥

तिसु तेरं दस मिस्से सत्तसु णव छट्ठयम्मि एक्कारा ।

जोगिम्मि सत्त योगा अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥७०४॥

त्रिषु त्रयोदश दश मिश्रे सप्तसु नव षष्ठे एकादश । योगिनि सप्तयोगाः अयोगिस्थानं भवेत् शून्यं ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु आहारकाहारकमिश्रकाययोगिगळं वर्ज्जिसि शेषत्रयोदशयोगयुक्तरप्परु । सासादनगुणस्थानदोळं अंते पदिमूरु योगयुक्तजीवंगळप्पुवु । मिश्रगुणस्थानदोळु मत्तमापदिमूरुं योगगळोळमौदारिकमिश्रवैक्रियिकमिश्रकाम्मणकाययोगगळं कळेदु शेष पत्तुं योगयुक्तजीवंगळप्पुवु । असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानदोळु सासादननोळपेळदंते पदिमूरुं योगयुक्तजीवंगळप्पुवु । देशसंयताप्रमत्तापूर्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषायक्षीणकषायगुणस्थानसप्तकरोळु मनोवाग्योगिगळेणवर मौदारिकाययोगिगळुमितु ओ'भत्तु योगिगळप्परु । १०

प्रमत्तसंयतगुणस्थानदोळु आहारकाहारकमिश्रयोगिगळं कूडुत्तिरलुं पन्नो'दु योगयुक्तजीवंगळप्पुवु । सयोगभट्टारकरोळु सत्यानुभयमनोवाग्योगगळु नालकुमौदारिकमौदारिकमिश्रकाम्मणकाययोगमुमितु सप्तयोगयुक्तरप्परु । अयोगिकेवलिभट्टारकरोळु योगं शून्यमवकुं—
मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
१३ । १३ । १० । १३ । ९ । ११ । ९ । ९ । ९ । ९ । ९ । ९ । ७ । ० ।

मोहनीयप्रकृतिगळोळु नोकषायभेदंगळप्पखोपुंनपुंसकवेदोदयंगळिदं स्त्रीपुंनपुंसकवेदिगळप्परु । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदल्लो'दु अनिवृत्तिकरणसवेदभागिपर्यंतं मूर्खवेदिगळप्परु । अनिवृत्तिकरणगुणस्थानद्वितीयभागं मोदल्लो'डयोकेवलिंगुणस्थानपर्यंतमवेदिगळप्परु—
मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ० । ० । ० । ० । ० ।

उक्तपञ्चदशयोगेषु मध्ये मिथ्यादृष्टिसादानासंयतेषु त्रयोदश त्रयोदश भवन्ति आहारकतन्मिश्रयोः प्रमत्तादन्यत्राभावात् । मिश्रगुणस्थाने तेष्वपर्याप्तयोगत्रयं नेति दश । उपरि क्षीणकषायान्तेषु सप्तसु तत्रापि वैक्रियिकयोगाभावात् नव । प्रमत्तसंयते एकादश आहारकतन्मिश्रयोगयोरत्र पतितत्वात् । सयोगे सत्यानुभयमनोवाग्योगाः औदारिकतन्मिश्रकाम्मणकाययोगाश्चेति सप्त । अयोगिजिने योगो नेति शून्यम् । २०

स्त्रीपुंनपुंसकवेदोदयैः तत्तन्नामवेदा भवन्ति ते त्रयोऽपि अनिवृत्तिकरणसवेदभागपर्यन्तं न तत उपरि ।

उक्त पन्द्रह योगोंमें-से मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयतोंमें तेरह-तेरह योग होते हैं । क्योंकि आहारक आहारक मिश्रयोग प्रमत्तगुणस्थानसे अन्यत्र नहीं होते । मिश्रगुण स्थानमें उनमें तीन अपर्याप्त योग न होनेसे दस योग होते हैं । मिश्रगुणस्थानमें उनमें-से तीन अपर्याप्त योग न होनेसे दस योग होते हैं । ऊपर क्षीणकषाय पर्यन्त सात गुणस्थानोंमें वैक्रियिक काययोगके न होनेसे नौ योग होते हैं । प्रमत्तसंयतमें आहारक आहारक मिश्रके होनेसे ग्यारह योग होते हैं । सयोगकेवलीमें सत्य, अनुभय, मनोयोग और वचनयोग तथा औदारिक, औदारिक मिश्र और काम्मण काययोग इस तरह सात होते हैं । अयोगकेवलीमें योग नहीं है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उदयसे उस-उस नामवाले वेद होते हैं । वे तीनों ही अनिवृत्तिकरणके सवेद भाग पर्यन्त होते हैं, उपर नहीं होते । अनन्तानुबन्धी ३०

चारित्रमोहनीय भेदंगलप्य क्रोधचतुष्कमानचतुष्कमायाचतुष्कलोभचतुष्कंगळे यथायोग्यमा-
 गुदयमागुत्तिरलु क्रोधिगळुं मानिगळुं मायिगळुं लोभिगळुं मप्परु । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु
 चतुर्गंतिय नानाक्रोधिगळुं मानिगळुं मायिगळुं लोभिगळुं मप्परु । सासादनगुणस्थानदोळुं चतु-
 र्गंतिय नानाक्रोधिमानिमायिलोभिगळुं मप्परु । मिश्रगुणस्थानदोळुं अनंतानुबधिकषायिगळुं नात्व-
 ५ लियलुळिद क्रोधत्रयजीवंगळुं मानत्रयजीवंगळुं मायात्रयजीवंगळुं लोभत्रयजीवंगळुं मप्परु ।
 असंयतगुणस्थानदोळुं मिश्रगुणस्थानदोळुपेळदंतेयप्परु । देशसंयतगुणस्थानदोळुप्रत्याख्यानकषाय-
 चतुष्टयरहितमागि क्रोधद्वययुतरं मानद्वययुतरं मायाद्वययुतरं लोभद्वययुतरं मप्परु । प्रमत्तगुणस्थानं
 मोदल्लोडनिवृत्तिकरणगुणस्थानद्वितीयभागिपर्यंतं संज्वलनक्रोधिगळुं मप्परु । तृतीयभागिपर्यंतं
 संज्वलनमानिगळुं मप्परु । चतुर्थभागिपर्यंतं संज्वलनमायिगळुं मप्परु । पंचमभागिपर्यंतं संज्वलन-
 १० बादरलोभिगळुं मप्परु । सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानदोळुं सूक्ष्मसंज्वलनलोभिगळुं मप्परु । मेलेल्लरुमकषायि-
 गळुं मप्परु :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सु । उ । क्षी । स । अ ।
 ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । ० । ० । ० । ० ।
 ३
 २
 १

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणक्षयोपशमदिदं पुट्टिद सम्यग्ज्ञानचतुष्टयमुं केवलज्ञाना-
 वरण निरवशेषक्षयदिनाद केवलज्ञानमुमितैदुं सम्यग्ज्ञानंगळुं मिथ्यात्वकर्म्मोदयदोळुकूडिद मति-
 श्रुतावधिज्ञानावरणक्षयोपशमजनितमज्ञानंगळुं कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानमेदितज्ञानत्रयं गूडि
 १५ मिथ्याज्ञानिगळुं सम्यग्ज्ञानिगळुंमेदुं प्रकारमप्परु । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळुं कुमतिकुश्रुतविभंग-
 ज्ञानिगळुं मूवरुमप्परु । सासादनगुणस्थानदोळुं सम्यक्त्वसंयमप्रतिबंधकमप्परु अनंतानुबन्ध्यस्यतमो-

क्रोधादीनां चतुष्कचतुष्कस्य यथायोग्योदये सति क्रोधमानमायालोभा भवन्ति । ते च मिथ्यादृष्टौ
 सासादने च चत्वारश्चत्वारः । मिश्रासंयतयोर्विना अनन्तानुबन्धिनस्त्रयस्त्रयः । देशसंयते विना अप्रत्याख्यान-
 कषायान् द्वौ द्वौ । प्रमत्ताद्यनिवृत्तिकरणद्वितीयभागपर्यन्तं संज्वलनक्रोधः । तृतीयभागपर्यन्तं मानः । चतुर्थ-
 २० भागपर्यंतं माया । पञ्चमभागपर्यन्तं बादरलोभः । सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः । उपरि सर्वेऽपि अकषाया एव ।

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणक्षयोपशमेन तत् सम्यग्ज्ञानचतुष्कं । केवलज्ञानावरणनिरवशेषक्षयेण
 च केवलज्ञानं, मिथ्यात्वोदयसहचरितं मतिश्रुतावधिज्ञानावरणक्षयोपशमेन कुमतिकुश्रुतविभङ्गज्ञानानि च

आदि चारके क्रोधादि चतुष्कका यथायोग्य उदय होनेपर क्रोध, मान, माया, लोभ डोते हैं ।
 वे मिथ्यादृष्टि और सासादनमें चार चार होते हैं । मिश्र और असंयतमें अनन्तानुबन्धीके
 २५ बिना तीन-तीन होते हैं । देशसंयतमें अप्रत्याख्यान कषायोंके बिना दो-दो होते हैं । प्रमत्तसे
 अनिवृत्तिकरणके द्वितीय भाग पर्यन्त संज्वलन-क्रोध होता है । तृतीय भाग पर्यन्त मान,
 चतुर्थभाग पर्यन्त माया, पंचमभाग पर्यन्त बादर लोभ रहता है । सूक्ष्म साम्परायमें सूक्ष्म-
 लोभ होता है । ऊपर सब अकषाय ही होते हैं ।

मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधि ज्ञानावरण और मनःपर्यय ज्ञानावरणके
 ३० क्षयोपशमसे चारों सम्यग्ज्ञान होते हैं । केवल ज्ञानावरणके सम्पूर्णक्षयसे केवलज्ञान होता
 है । मिथ्यात्वका उदय रहते हुए मति-श्रुत-अवधिज्ञानावरणोंके क्षयोपशमसे कुमति, कुश्रुत

दयजनितमिथ्यादृष्टिये अप्य सासादननोळं कुमतिकुश्रुतविभंगगळप्पुवु । मिश्रगुणस्थानदोळु मिश्रमतिश्रुतावधिज्ञानंगळप्पुवु । असंयतसम्यग्दृष्टियोळु आद्यसम्यग्ज्ञानत्रितयमक्कुं । देशसंयतनोळं आद्यसम्यग्ज्ञानत्रितयमुमक्कुं । प्रमत्तादक्षीणकषायपर्यन्तमाद्यसम्यग्ज्ञानचतुष्टयमुमक्कुं योगिकेवलियोळमयोगिकेवलियोळमो देकेवलज्ञानमक्कुं —

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । १ ।

संज्वलनकषायनोकषायंगळुसंदोदयदिदं संयमपरिणाममक्कुमदुवुं व्रतधारण समितिपालन-
कषायनिग्रहदंडत्यागेन्द्रियजयस्वरूपमक्कुमिदु सासान्यदिदं सामायिकसंयममो देयक्कुं मेदं तंदोडे
सर्वसावद्याद्विरतोस्मि ये बुद्धरोळेल्ला संयमंगळंतर्भावमुंष्टुपुर्दरिदं । विशेषदिदमसंयममेदुं
देशसंयममेदुं सामायिकसंयममेदुं छेदोपस्थापनसंयममेदुं सूक्ष्मसांपरायसंयममेदुं यथाख्यातसंयम-
मेदितु संयमं सप्तविधमक्कुं । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदत्तो डसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्यन्तं
असंयममक्कुं । देशसंयतगुणस्थानदोळु देशसंयममक्कुं । प्रमत्तगुणस्थानमादियागि अनिवृत्तिकरण-
गुणस्थानपर्यन्तं नालकुं गुणस्थानदोळु प्रत्येकं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगळरडप्पुवु । प्रमत्ता-
प्रमत्तगुणस्थानद्वयोळं परिहारविशुद्धिसंयममक्कुं । सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानदोळे सूक्ष्मसांपराय-
संयममक्कुमुपशांतकषायक्षीणकषायसयोगाऽयोगिगुणस्थानचतुष्टयोळु प्रत्येकं यथाख्यातसंयममो-
देयप्पुदु—

मिलित्वा अष्टौ । तत्र मिथ्यादृष्टिसासादनयोः कुज्ञानत्रयम् । मिश्रे तदेव मिश्रितम् । असंयते देशसंयते वा आद्यं
सम्यग्ज्ञानत्रयम् । प्रमत्तादक्षीणकषायान्तमाद्यं सम्यग्ज्ञानचतुष्कम् । सयोगायोगयोरेकं केवलज्ञानमेव । १५

संज्वलननोकषायसन्दोदयेन व्रतधारणसमितिपालनकषायनिग्रहदण्डत्यागेन्द्रियजयरूपसंयमभावो भवति ।
स च सामान्येन सर्वसावद्याद्विरतोऽस्मीति गृहीतः सामायिकनामकः । विशेषेण असंयमदेशसंयमसामायिकछेदोप-
स्थापनपरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसांपराययथाख्यातभेदात्सप्तधा । तत्र असंयतान्तमसंयमः । देशसंयते देशसंयमः ।
प्रमत्ताद्यनिवृत्तिकरणान्तं सामायिकछेदोपस्थापनी । प्रमत्ताप्रमत्तयोः परिहारविशुद्धिरपि । सूक्ष्मसांपराये
सूक्ष्मसांपरायसंयमः । उपशान्तकषायादिषु यथाख्यातः । २०

और विभंगज्ञान होते हैं । सब मिलकर आठ हैं । उनमेंसे मिथ्यादृष्टि और सासादनमें तीन
अज्ञान होते हैं । मिश्रमें तीनों मिश्र रूप होते हैं । असंयत और देशसंयतमें आद्य तीन
सम्यग्ज्ञान होते हैं । प्रमत्तसे क्षीणकषायपर्यन्त आदिके चार सम्यग्ज्ञान होते हैं । सयोग-
अयोगमें एक एक केवलज्ञान होता है ।

संज्वलन और नोकषायके मन्द उदयसे व्रतोंका धारण, समितियोंका पालन, कषायोंका
निग्रह, दण्डोंका त्याग और इन्द्रियजयरूप संयमभाव होता है । वह सामान्यसे 'सब पाप-
कार्योंसे विरत होता हूँ' इस प्रकार ग्रहण करनेपर सामायिकसंयम नाम पाता है । विशेषसे
असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय और यथा-
ख्यातके भेदसे सात प्रकारका है । असंयत गुणस्थान पर्यन्त असंयम होता है । देशसंयतमें
देशसंयम है । प्रमत्तसे अनिवृत्तिकरण पर्यन्त सामायिक और छेदोपस्थापना होते हैं । प्रमत्त
और अप्रमत्तमें परिहारविशुद्धि भी होता है । सूक्ष्म साम्परायमें सूक्ष्म साम्पराय संयम होता
है । उपशान्तकषाय आदिमें यथाख्यात होता है ।

१. म^०मेकंदोडे । २. व असंयतदेशसंयतयोश्चाद्यं ।

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
 १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । २ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ ।

चक्षुर्दृशनावरणीयमचक्षुर्दृशनावरणीयमवधिदर्शनावरणीयमेव मूहं दर्शनावरणीयकर्म-
 प्रकृतिगळ क्षयोपशमंगळिदं यथासंख्यमाणि चक्षुर्दृशनमुमचक्षुर्दृशनमुमवधिदर्शनमेव मूहं दर्शन-
 गळप्पुवु । केवलदर्शनावरणीयकर्मप्रकृति निरवशेषक्षयदिदं क्षायिककेवलदर्शनमुमक्कुमितु दर्शन-
 चतुष्टयमक्कु । मिथ्याहृष्टिगुणस्थानमादियाणि मिश्रगुणस्थानपर्यंतं प्रत्येकं चक्षुदर्शनमुमचक्षुदर्शन-

५ मुमेबेरंडु दर्शनंगळक्कु । मिश्रनोलु मत्ते मिश्रावधिदर्शनमुमक्कुमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानं
 मोदल्लोडु क्षीणकषायगुणस्थानपर्यंतमोभत्तु गुणस्थानंगळोलु प्रत्येकं चक्षुदर्शनमुमचक्षुदर्शनमुम-
 वधिदर्शनमुमेव मूहं दर्शनमक्कु । सयोगिभट्टारकरोळमयोगकेवलिभट्टारकरोळं गुणस्थानातीतरप्प
 सिद्धपरमेष्ठिगळोळं केवलदर्शनमक्कु ।

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ । सि ।
 २ । २ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । १ । १ । १ ।

कषायोदयंगळिननुरंजितसत्पट्ट मनोवाक्काययोगप्रवृत्तियं लेश्येयं बुद्धमदशुभलेश्येयं दु शुभलेश्येयं दु
 १० द्विविधमक्कुमल्लि अशुभलेश्येयं कृष्णनीलकपोतभेददिदं त्रिविधमक्कु । शुभलेश्येयं तेजः पद्मशुक्ल-
 भेददिदं त्रिविधमक्कुमितु षड्लेश्येगळप्पुवु ।

मिथ्याहृष्टिगुणस्थानं मोदल्लोडु असंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्यंतं नाल्लकुं गुणस्थानंगळोलु
 प्रत्येकं षड्लेश्येगळप्पुवु । देशसंयतगुणस्थानं मोदल्लोडु अप्रमत्तगुणस्थानपर्यंतं मूहं गुणस्थान-
 गळोलु प्रत्येकं मूहं शुभलेश्येगळप्पुवु । अपूर्वकरणगुणस्थानमोदल्लोडु सयोगिकेवलि भट्टारकपर्यंतं

१५ चक्षुरचक्षुर्वधिदर्शनावरणीयक्षयोपशमः केवलदर्शनावरणीयनिरवशेषक्षयेण तानि चत्वारि दर्शनानि
 स्युः । तत्र मिश्रगुणस्थानान्तं चक्षुरचक्षुर्दर्शनद्वयम् । असंयतादिक्षीणकषायान्तं चक्षुरचक्षुर्वधिदर्शनत्रयम् ।
 सयोगायोगयोः सिद्धे चैकं केवलदर्शनम् ।

कषायोदयानुरंजितमनोवाक्कायप्रवृत्तिलेश्या सा च शुभाशुभभेदाद्वेधा । तत्र अशुभा कृष्णनील-
 कपोतभेदात् त्रेधा । शुभापि तेजःपद्मशुक्लभेदात्त्रेधा । असंयतान्तं षडपि । देशसंयतादित्रये शुभा एव ।

२० अपूर्वकरणसंयोगान्तं शुक्लैव । अयोगे योगाभावात् लेश्या नास्ति ।

सामग्रीविशेषः रत्नत्रयानन्तचतुष्टयस्वरूपेण परिणमितुं योग्यो भव्यः । तद्विपरीतोऽभव्यः । तो च

चक्षु-अचक्षु और अवधिदर्शनावरणोंके क्षयोपशमसे तथा केवलदर्शनावरणके सम्पूर्ण
 क्षयसे चारों दर्शन होते हैं । उनमें-से मिश्र गुणस्थानपर्यन्त चक्षु और अचक्षु दर्शन होते हैं ।
 असंयतसे क्षीणकषायपर्यन्त चक्षु, अचक्षु, अवधि तीन दर्शन होते हैं । संयोग, अयोग और
 २५ सिद्धोंमें एक केवलदर्शन होता है । कषायके उदयसे अनुरंजित मन-वचन-कायकी प्रवृत्ति
 लेश्या है । वह शुभ और अशुभके भेदसे दो प्रकार है । उनमें-से अशुभ कृष्ण, नील, कापोतके
 भेदसे तीन प्रकार है । शुभ भी तेज, पद्म, शुक्लके भेदसे तीन प्रकार है । असंयत पर्यन्त लहो
 लेश्या होती है । देशसंयत आदि तीन गुणस्थानोंमें शुभलेश्या ही होती है । अपूर्वकरणसे
 सयोगी पर्यन्त शुक्ललेश्या ही होती है । अयोगीमें योगका अभाव होनेसे लेश्या नहीं है ।
 ३० सामग्री विशेषके द्वारा रत्नत्रय और अनन्तचतुष्टयस्वरूपसे परिणमन करनेके जो योग्य

६ । ६ । ६ । ६ । ३ । ३ । ३ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । ०

१०

84

२०

20

24

20

- मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिरूपदिदमसंख्यातगुणहीनद्रव्यक्रमविदमंतर्मुहूर्तकालं त्रिप्रकृतिगळं
माळकु। मिथ्यात्वमं मिथ्यात्वमागियं तु माळकुमं दोडे पूर्वस्थितियं नोडलतिच्छापनावलिमात्र-
स्थितिह्लासमं माळकुमं बुदत्थं। अनंतरमा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालदोळु अप्रमत्तं प्रमत्ताप्रमत्त-
परावृत्तिसंख्यातसहस्रगळपुष्पुर्वारिदं प्रमत्तगुणस्थानदोळं प्रथमोपशमसम्यक्त्वसंभवमरियल्पडुगुं।
५ आ नाळकुं गुणस्थानवर्त्तिप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळु तत्सम्यक्त्वकालमंतर्मुहूर्तदोळु षडावलिकालाव-
शेषमादागळुत्कृष्टविदमनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानकालमारावलिप्रमाण-
मवकुं। जघन्यदिनेकसमयमवकुं। मध्यमसंख्यातविकल्पमवकुं। एतलानुं भव्यतागुणविशेषदिदं
सम्यक्त्वविराधने इल्लदिदोडे तद्गुणस्थानस्थानकालं संपूर्णमागुत्तिरलु सम्यक्त्वप्रकृतियुदयिसि
वेदकसम्यग्दृष्टिगळ नाळकुं गुणस्थानवर्त्तिगळप्परह। अथवा मिश्रप्रकृत्युदयदिदमा नाळवरुं मिश्र-
१० रप्परह। मिथ्यात्वकस्मोदयमादुदादोडा नाळकुं गुणस्थानवर्त्तिगळु मिथ्यादृष्टिगळप्परह। द्वितीयोपशम-
सम्यक्त्वदोळु विशेषमुंटादुदोडे उपशमश्रेण्यारोहणार्थं सातिशयाप्रमत्तगुणस्थानवर्त्तिवेदक-
सम्यग्दृष्टिकरणत्रयपरिणामसामर्थ्यदिदमनंतानुबंधि कषायंगळगे प्रशस्तोपशममिल्लपुर्वारिदम-
प्रशस्तोपशमदिदमधस्तननिषेकंगळनुत्कर्षिसि मेणु विसंयोजिसि केडिसि दर्शनमोहत्रयकंतर करण-
विदमंतरमं माडि उपशमविधानदिदमुपशमिसि अनंतरप्रथमसमयदोळु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमं
१५ स्वीकरिसि उपशम श्रेणियं क्रमदिनेरुगु मेरियुपशांतकषायगुणस्थानदोळु मंतर्मुहूर्तकालमिद्विद्वडं
क्रमदिदमिडिदु अप्रमत्तगुणस्थानमं पोर्दि भव्यजीवं प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्रगळं द्वितीयोपशम

युगपत्प्राप्य अप्रमत्तसंयतो भवति। ते त्रयोऽपि तत्प्राप्तिप्रथमसंयममादि कृत्वा गुणसंक्रमणविधानेन मिथ्यात्व-
द्रव्यं गुणसंक्रमणभागहारेण अपकृष्यापकृष्य मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण असंख्यातगुणहीनद्रव्यक्रमेण
अन्तर्मुहूर्त कालं त्रिधा कुर्वन्ति। मिथ्यात्वस्य मिथ्यात्वकरणं तु पूर्वद्विप्रती अतिस्थापनावलिमात्रमूनयन्तीत्यर्थः।
२० तदप्रमत्तस्य प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसंख्यातसहस्रसंभवात् प्रमत्तेऽपि तत् सम्यक्त्वं स्यात्। ते अप्रमत्तसंयतं विना
त्रय एव तत्सम्यक्त्वकालान्तर्मुहूर्तं जघन्येन एकसमये उत्कृष्टेन च षडावलिमात्रेऽवशिष्टे अनन्तानुबन्धन्यत-
मोदये सासादना भवन्ति। अथवा ते चत्वारोऽपि यदि भव्यतागुणविशेषेण सम्यक्त्वविराधका न स्युः तदा
तत्काले संपूर्णं जाते सम्यक्त्वप्रकृत्युदये वेदकसम्यग्दृष्टयः वा मिश्रप्रकृत्युदये सम्यग्मिथ्यादृष्टयः वा मिथ्यात्वोदये

- प्रथमोपशमसम्यक्त्व और महाव्रतोंको एक साथ प्राप्त करके अप्रमत्तसंयत होता है। वे तीनों
२५ भी उसकी प्राप्तिके प्रथम समयसे लेकर गुणसंक्रमण विधानके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यको
गुणसंक्रमण भागहारके द्वारा घटा-घटाकर मिथ्यात्व मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृतिरूपसे
अन्तर्मुहूर्तकाल तक तीन रूप करता है। इनका द्रव्य उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा हीन होता है।
मिथ्यात्वका मिथ्यात्वकरण तो पूर्वस्थितिमें अतिस्थापनावली मात्र कम करता है। जो
अप्रमत्तमें जाता है, वह अप्रमत्तसे प्रमत्तमें और प्रमत्तसे अप्रमत्तमें संख्यात हजार बार
३० आता-जाता है। अतः प्रमत्तमें भी प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है। अप्रमत्तसंयतके विना शेष
तीनों ही प्रथमोपशम सम्यक्त्वके अन्तर्मुहूर्त कालमें जघन्यसे एक समय उत्कृष्टसे लह
आवली काल शेष रहनेपर अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभमें-से किसी भी एकका उदय
होनेपर सासादन होते हैं। अथवा वे चारों भी यदि भव्यत्वगुणकी विशेषतासे सम्यक्त्वकी
विराधना नहीं करते, तो उस सम्यक्त्व काल पूर्ण होनेपर सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयमें
३५ वेदक सम्यग्दृष्टि हो जाते हैं या मिश्र प्रकृतिके उदय होनेपर सम्यग्मिथ्यादृष्टि होते हैं अथवा

सम्यग्दृष्ट्यागिदुर्मात्रकुमथवा केळगे देशसंयमगुणस्थानमं पोहि द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्ट्यागिक्कु-
मथवा, असंयतगुणस्थानमं पोहि असंयतसम्यग्दृष्ट्यागिक्कुमथवा मरणमादोडे देवाऽसंयतनक्कुं ।
मेणु मिश्रप्रकृत्युदयदिदं मिश्रनक्कु । अनन्तानुबन्धिकवायोदयदिदं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वविराधकं
सासादननुमोळने बाचाध्यपक्षदोळ सासादननुमक्कुमथवा मिथ्यात्वकम्मोदयदिदं मिथ्यादृष्ट्यु-
मक्कुमेबो विशेषं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वदोळरियत्पडुगुं । क्षायिकसम्यक्त्वमसंयतादिचतुर्गुण- ५
स्थानवर्तिगळु वेदकसम्यग्दृष्टिगळकम्मभूमि जेहमप्परवर्गळगक्कुमवर्गळुं केवलि श्रुतकेवलिद्वय
श्रोपादराश्वदोळु सप्रप्रकृतिगळं निरवशेषं कोडिसि क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळप्परु । मानुषियहम-
संयतसम्यग्दृष्टिगळु देशव्रतिकेयरुमुपचारमहाव्रतिकेयरु केवलिद्वयपादमूलदोळु सप्रप्रकृतिगळं
क्षपियिसि क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळप्परु । मितु सम्यक्त्वं सामान्यदिदमोदु विशेषदिदं मिथ्यात्व
सासादनमिश्रउपशमवेदकक्षायिकमेदितु षड्विधमक्कुं । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु मिथ्यारुचियक्कुं । १०
सासादननोळमा सासादनरुचियक्कुं । मिश्रगुणस्थानदोळु मिश्ररुचियक्कुं । असंयतगुणस्थानमादि-
यागिअप्रमत्तगुणस्थानपट्यंतं प्रत्येकमुपशमवेदकक्षायिकगळमूरुं सम्यक्त्वंगळप्पुनु ।

अपूर्वकरणगुणस्थानं मोदलागि उपशान्तकषायगुणस्थानपट्यंतमुपशमश्रेणीयोळु नाल्कुं गुण-
स्थानंगळोळु प्रत्येकमुपशमसम्यक्त्वमुं क्षायिकसम्यक्त्वमुमेरडुं संभविसुववु । क्षपकश्रेणीयोळु

मिथ्यादृष्ट्यो भवन्ति । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वे विशेषः । स कः ? उपशमश्रेण्यारोहणार्थं सातिशयप्रमत्तवेदक- १५
सम्यग्दृष्टिः करणत्रयपरिणामसामर्थ्यात् अनन्तानुबन्धिनां प्रशस्तोपशमं विना अप्रशस्तोपशमेन अधोनिषेकानु-
त्कुष्य वा विसंयोज्य क्षपयित्वा दर्शनमोहत्रयस्य अन्तरकरणेन अन्तरं कृत्वा उपशमविधानेन उपशमय्य
अनन्तरप्रथमसमये द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा उपशमश्रेणिमारुह्य उपशान्तकषायं गत्वा अन्तर्मुहूर्तं स्थित्वा
क्रमेण अवतीर्य अप्रमत्तगुणस्थानं प्राप्य प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्राणि करोति । वा अधः देशसंयतमो भूत्वा
आस्ते । वा असंयतो भूत्वा आस्ते । वा मरणे देवासंयतः स्यात् वामिश्रप्रकृत्युदये मिश्रः स्यात् । अनन्तानु- २०
बन्ध्यन्यतमोदये द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं विराध्यतीत्याचार्यपक्षे सासादनः स्यात् वा मिथ्यात्वोदये मिथ्यादृष्टिः
स्यात् इति । क्षायिकसम्यक्त्वं तु असंयतादिचतुर्गुणस्थानमनुष्ठायानां असंयतदेशसंयतोपचारमहाव्रतमानुषीणां

मिथ्यात्वका उदय होनेपर मिथ्यादृष्टि हो जाते हैं । द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें विशेष कथन
है । उपशम श्रेणीपर आरोहण करनेके लिए सातिशय अप्रमत्तवेदक सम्यग्दृष्टि तीन करणरूप
परिणामोंकी सामर्थ्यसे अनन्तानुबन्धी कषायोंका प्रशस्त उपशमके विना अप्रशस्त उपशमके २५
द्वारा नीचेके निषेकोंको उत्कर्षणके द्वारा ऊपरके निषेकोंमें स्थापित करता है अथवा विसंयो-
जन द्वारा अन्य प्रकृतिरूप परिणमाता है । इस तरह उनका क्षपण करके दर्शनमोहकी तीन
प्रकृतियोंका अन्तरकरणके द्वारा अन्तर करके उपशम विधानके द्वारा उपशम करता है ।
तदनन्तर प्रथम समयमें द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि होकर उपशम श्रेणीपर चढ़ता है । और
उपशान्त कषाय तक जाकर वहाँ अन्तर्मुहूर्त तक ठहरकर क्रमसे उतरता हुआ अप्रमत्त ३०
गुणस्थानको प्राप्त करके हजारों बार सातवेंसे छठेमें और छठेसे सातवेंमें आता-जाता है ।
अथवा नीचे उतरकर देशसंयमी या असंयमी हो जाता है । अथवा मरणकाल आनेपर
असंयतदेव हो जाता है अथवा मिश्र प्रकृतिके उदयमें मिश्रगुणस्थानवर्ती हो जाता है । जिन
आचार्योंका मत है कि अनन्तानुबन्धीका उदय होनेपर द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी विरा-
धना करता है, उनके मतसे सासादन हो जाता है । अथवा मिथ्यात्वके उदयमें मिथ्यादृष्टि ३५

स्थानंगळोळं आहारमो देयक्कुं । अयोगिकेवलभट्टारकरोळं गुणस्थानातीतरप्प सिद्धपरमेष्ठिगळो-
ळमनाहारमेयक्कुं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । ओ । स । अ । सि
२ । २ । १ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । २ । १ । १

अनंतरं गुणस्थानंगळोळुपयोगमं पेळदपं :—

दोण्हं पंच य छन्वेव दोसु मिससम्मि होति वामिस्सा ।

सत्तुवजोगा सत्तसु दो चेव जिणे य सिद्धे य ॥७०५॥

द्वयोः पंच च षट् चैव द्वयोः मिश्रे भवन्ति व्यामिश्राः । सप्तोपयोगाः सप्तसु द्वावेव जिनयोः
सिद्धे च ॥

गुणपर्यायवद्वस्तुग्रहणव्यापारमुपयोगमे बुद्धकुं । ज्ञानमं वस्तु पुट्टिसुदत्तुमन्ते पेळल्पट्टुदु ।

स्वहेतुजनितोऽप्यर्थः परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।

तथा ज्ञानं स्वहेत्वर्थं परिच्छेद्यात्मकं स्वतः ॥ []

१०

‘नात्थालोकौ कारणं परिच्छेद्यत्वात्तमोवत्’ । [परी० मु०] एदितु अंतप्पुपयोगं ज्ञानोपयोग-
मेदुं दर्शनोपयोगमेदुं द्विविधमक्कुमल्लि कुमति कुश्रुत विभंग मतिश्रुतावधिमनःपर्यायकेवलज्ञान-
मेदुं ज्ञानोपयोगमेदुं तेरनवक्कुं । चक्षुरचक्षुरवधिकेवलदर्शनमेदुं दर्शनोपयोगं नालकु तेरनवक्कुं ।
मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु कुमतिकुश्रुतविभंगमेव मूहं ज्ञानोपयोगंगळुं चक्षुरचक्षुर्दर्शनमेवबरडुं
दर्शनोपयोगंगळुमितु अट्टमुपयोगंगळप्पुवु । सासादनगुणस्थानदोळमन्ते अट्टमुपयोगंगळप्पुवु । १५
मिश्रगुणस्थानदोळु मतिश्रुतावधिचक्षुरचक्षुरवधिगळं बारु मिश्रोपयोगंगळप्पुवु । असंयतसम्यग्दृष्टि-

सयोगे अयोगे सिद्धे च अनाहारः । तेन मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतसंयोगेषु तौ द्वौ शेषनवस्वाहारः । अयोगि-
सिद्धे वा अनाहारः ॥७०४॥ गुणस्थानेषु उपयोगमाह—

गुणपर्यायवद्वस्तु तद्ग्रहणव्यापार उपयोगः । ज्ञानं न वस्तुत्वं तथा चोक्तं—

स्वहेतुजनितोऽप्यर्थः परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।

२०

तथा ज्ञानं स्वहेतुत्वं परिच्छेदात्मकं स्वतः ॥१॥

“नात्थालोकौ कारणं परिच्छेद्यत्वात् तमोवत् इति” । स चोपयोगः ज्ञानदर्शनभेदाद्वेधा । तत्र
ज्ञानोपयोगः—कुमतिकुश्रुतविभंगमतिश्रुतावधिमनःपर्यायकेवलज्ञानभेदाद्वेधा । दर्शनोपयोगः चक्षुरचक्षुरवधि-

शरीर और अंगोपांग नामकर्मसे उत्पन्न शरीर वचन और मनके योग्य नोकर्म वर्गणाओंके
ग्रहणको आहार कहते हैं । विग्रहगतिमें प्रतर और लोकपूरण समुद्धात सहित सयोगीमें, २५
अयोगी और सिद्ध अनाहारक है । अतः मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत और सयोगकेवलीमें
प्रतर लोकपूरणवाले अनाहारक हैं । शेष नौ गुणस्थानोंमें आहार है । अयोगकेवली और सिद्ध
अनाहारक हैं ॥७०४॥

गुणस्थानोंमें उपयोग कहते हैं—

गुणपर्यायसे जो युक्त है वह वस्तु है । उसको ग्रहण करनेरूप व्यापारका नाम उपयोग ३०
है । ज्ञान वस्तुसे उत्पन्न नहीं होता । कहा है—जैसे अर्थ अपने कारणसे उत्पन्न होता है, आप
स्वतः ही ज्ञानका विषय होनेके योग्य होता है । उसी प्रकार ज्ञान अपने कारणसे उत्पन्न होता
है और स्वतः अर्थको जाननेरूप होता है ॥ और कहा है—अर्थ और प्रकाश ज्ञानके कारण नहीं

गुणस्थानदोळु मतिश्रुतावधिज्ञानंगळुं चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनंगळुमिताहमुपयोगंगळपुवु । - देशसंयत-
गुणस्थानदोळमसंयतंगे पेळदंताहमुपयोगंगळपुवु । प्रमत्तगुणस्थानदोळु मतिश्रुतावधिमनःपर्यय-
ज्ञानंगळुं चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनमुमितुपयोगसमकमुमक्कुमंते अप्रमत्तगुणस्थानादिकीणकषायपर्ययंतं
प्रत्येकमुपयोगसमकमक्कुं । सयोगिकेवलभट्टारकगुणस्थानदोळु मयोगिकेवलभट्टारकगुणस्थान-
५ दोळं सिद्धपरमेष्ठिगळोळं केवलज्ञानोपयोगमुं केवलदर्शनोपयोगमुं मेरळुं युगपत्संभविमुं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ । सि ।
५ । ५ । ६ । ६ । ७ । ७ । ७ । ७ । ७ । ७ । ७ । २ । २ । २ ।

इंतु भगवदहंत्परमेस्वरचारुचरणारविदद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजराजगुरुभूमंड-
लाचार्यमहावादादीश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदभयसूरिसिद्धान्तचक्रवर्त्ति -
श्रीपादपंकजराजोरजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवर्णविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटिकवृत्तिजीवतत्त्व-
प्रदीपिकेयोळु ओघादेशंगळोळु विंशतिप्ररूपणाधिकारं प्ररूपितमाय्यतु ॥

१० केवलदर्शनभेदाच्चतुर्धा । तत्र मिथ्यादृष्टिसासादनयोः कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानचक्षुरचक्षुदर्शनाख्याः पञ्च । मिश्रे
मतिश्रुतावधिज्ञानचक्षुरचक्षुरवधिदर्शनाख्याः मिश्राः षट् । असंयतदेशसंयतयोः त एव षड्मिश्राः । प्रमत्ता-
दिकीणकषायान्तेषु त एव मनःपर्ययेण सह सप्त । सयोगे अयोगे सिद्धे च केवलज्ञानदर्शनाख्यौ द्वौ ॥७०५॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्त्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिका-
ख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणामु ओघादेशयोर्विंशतिप्ररूपणानिरूपणानामैकविंशोऽधिकारः ॥२१॥

१५ हैं, क्योंकि वे होय हैं, जैसे अन्धकार ज्ञानका कारण नहीं है । वह उपयोग ज्ञान और दर्शनके
भेदसे दो प्रकार है । उनमें ज्ञानोपयोग कुमति, कुश्रुत, विभंग, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय
और केवलज्ञानके भेदसे आठ प्रकारका है । दर्शनोपयोग चक्षु, अचक्षु, अवधि और केवल-
दर्शनके भेदसे चार प्रकारका है । मिथ्यादृष्टि और सासादनमें कुमति, कुश्रुत, विभंगज्ञान और
चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन ये पाँच उपयोग होते हैं । मिश्र गुणस्थानमें, मति, श्रुत, अवधिज्ञान
२० और चक्षु, अचक्षु अवधिदर्शन ये छह मिले हुए सम्यक्मिथ्यात्वरूप होते हैं । असंयत और
देशसंयतमें वे ही छह उपयोग सम्यक् रूप होते हैं । प्रमत्तसे क्षीणकषाय पर्यन्त वे ही मनः-
पर्ययके साथ मिलकर सात उपयोग होते हैं । सयोगी अयोगी, और सिद्धोंमें केवलज्ञान और
केवलदर्शन दो उपयोग होते हैं ॥७०५॥

२५ इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अमयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्त्तिके चरणकमलोंकी धूलिसे शीमित ललाटवाले
श्री केशवर्णके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक माषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमेंसे ओघादेशमार्गणा
३० प्ररूपणा नामक इक्कीसवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥२१॥

आलापाधिकारः ॥२२॥

अन्तरमालापाधिकारं पेळलुपक्रमिसुत्तमिष्टदेवतानमस्काररूपपरममंगलमनंगीकरि सुत्तं गुणस्थानदोळं मार्गणास्थानदोळं विशतिभेदगळ्णे प्राग्योजितंगळ्णाळापत्रयमं पेळदपेनेंदाचार्यं प्रतिजेयं माडिदपं :—

गोदमथेरं पणमिय ओघादेसेसु बीसभेदाणं ।

जोजणिकाणालावं वोच्छामि जहाकमं सुणुह ॥७०६॥

५

गौतमस्थविरं प्रणम्य ओघादेशेषु विशतिभेदानां । योजितानामालापं वक्ष्यामि यथाक्रमं शृणुत ॥

विशिष्टा गौर्भूमिर्गौतमा अष्टमपृथ्वी सा स्थविरा नित्या यस्य सिद्धपरमेष्ठिसमूहस्य स गौतमस्थविरः गौतमस्थविरः गौतमस्थविर एव गौतमस्थविरस्तं । अथवा गौतमो गौतमस्वामी स्थविरो यस्यासौ गौतमस्थविरः श्रीवीरवर्द्धमानस्वामी तं । अथवा विशिष्टा गौर्वाणी गौतम सर्वज्ञभारती तां वेत्ति अधीते वा गौतमः । स चासौ स्थविरश्च गौतमस्थविरः गौतमस्वामी तं प्रणम्येत्यर्थः । सिद्धपरमेष्ठिसमूहं श्रीवीरवर्द्धमानस्वामियुग्मं मेणु गौतमगणधरस्वामियुग्मं नमस्कारमं माडि गुणस्थानमार्गणास्थानंगळोळु मुत्तं योजिसत्पट्टं विशतिप्रकारंगळ्णाळापमं सामान्यपट्यापट्याप्रमे ब त्रिप्रकाराळापमं यथाक्रमदिदं पेळदपे केळिमेंदाचार्यं शिष्यरं शिक्ष-सिदिपं । अदेतेंदोडे :—

१०

१५

नेमि धर्मरथे नेमि पूज्यं सर्वनरामरैः ।

बहिरन्तःश्रियोपेतं जिनेन्द्रं तच्छ्रियो श्रये ॥२२॥

अथालापाधिकारं स्वेष्टदेवतानमस्कारपूर्वकं वक्तुं प्रतिजानीते—

विशिष्टा गौर्भूमिः गौतमा—अष्टमपृथ्वी सा स्थविरा नित्या यस्य स गौतमस्थविरः सिद्धसमूहः, गौतमस्थविर एव गौतमस्थविरः तं अथवा गौतमः गौतमस्वामी स्थविरो यस्यासौ गौतमस्थविरः श्रीवर्धमानस्वामी तं । अथवा विशिष्टा गोः वाणी यस्यासौ गौतमः गौतम एव गौतमः स चासौ स्थविरश्च गौतमस्थविरः तं प्रणम्य गुणस्थानमार्गणास्थानयोः प्राग् योजितानां विशतिप्रकाराणां आलापं यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥७०६॥ तद्यथा—

२०

अपने इष्टदेवको नमस्कारपूर्वक आलापाधिकारको कहनेकी प्रतिज्ञा करते हैं—विशिष्ट 'गौ' अर्थात् भूमि गौतमा अर्थात् आठवीं पृथ्वी वह जिसकी स्थविर अर्थात् नित्य है, वह गौतमस्थविर अर्थात् सिद्ध समूह । अथवा गौतम स्वामी जिसके गणधर हैं, वे वर्धमान स्वामी, अथवा जिसकी गौ अर्थात् वाणी विशिष्ट है, उन गौतमस्थविरको नमस्कार करके गुणस्थान और मार्गणास्थानोंमें पूर्वयोजित बीस प्रकारके आलापोंको यथाक्रम कहूँगा ॥७०६॥

२५

१. म^० वाणी यस्यासौ गौतमः । गौतम एव गौतमः स चासौ ।

३०

ओषे चोदसठाणे सिद्धे बीसदिविहाणमालावा ।

वेदकसायविभिण्णे अणियड्डीपंचभागे य ॥७०७॥

ओषे चतुर्दशस्थाने सिद्धे विंशतिविधानमालापाः । वेदकषायविभिन्नेऽनिवृत्तिपंच-
भागेषु च ॥

- ५ गुणस्थानदोळं चतुर्दशमार्गणास्थानदोळं प्रसिद्धदोळं विंशतिविधंगळप्प गुणजीवेत्यादि-
गळगे सामान्यं पर्याप्तमपर्याप्तमेव मूर्तेरदाळापंगळप्पुवु । वेदकषायंगळिदं भेदमनुळल अनि-
वृत्तिकरणगुणस्थानपंचभागंगळोळं पृथगाळापंगळप्पुवेकंदोडे अनिवृत्तिकरणपंचभागंगळोळु
सवेदावेदादि विशेषंगळुटप्पुदर्दं ।

अनंतरं गुणस्थानंगळोळु आळापमं पेळदपं :—

- १० ओषेमिच्छदुगेवि य अयदपमत्ते सजोगठाणम्मि ।

तिण्णेव य आलावा ससेसिको हवे णियमा ॥७०८॥

ओषे मिथ्यादृष्टिद्विकेपि च असंयते प्रमत्ते सयोगस्थाने । त्रय एवाळापाः शेषेणवेको भवे-
न्नियमात् ॥

- १५ गुणस्थानंगळोळु मिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानद्वयोळं असंयतसम्यग्दृष्टिगुण-
स्थानदोळं प्रमत्तसंयतगुणस्थानदोळं सयोगकेवलभट्टारकगुणस्थानदोळं प्रत्येकं सामान्यं पर्याप्ता-
पर्याप्तमेव मूर् मालापांगळप्पुवु । शेषनवगुणस्थानंगळोळु पर्याप्ताळापमो देयक्कुं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।

३ । ३ । १ । ३ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । ३ । १ ।

अनंतरमीयर्थमने विंशदं माडिदपं :—

गुणस्थाने चतुर्दशमार्गणास्थाने च प्रसिद्धे विंशतिविधानां गुणजीवेत्यादीनां सामान्यपर्याप्तापर्याप्तास्त्रयः
आलापा भवन्ति । तथा वेदकषायविभिन्नेषु अनिवृत्तिकरणपञ्चभागेषु अपि पृथक्पृथग्भवन्ति ॥७०७॥ तत्र

- २० गुणस्थानेष्वाह—

गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टिसासादनयोः असंयते प्रमत्ते सयोगे च प्रत्येकं त्रयोऽपि आलापा भवन्ति ।
शेषनवगुणस्थानेषु एकः पर्याप्तालाप एव नियमेन ॥७०८॥ अमुमेवार्थं विंशदयति—

- २५ प्रसिद्ध गुणस्थान और चौदह मार्गणास्थानमें 'गुणजीवा' इत्यादि बीस प्ररूपणाओंके
सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त ये तीन आलाप होते हैं । तथा वेद और कषायसे भेदरूप हुए
अनिवृत्तिकरणके पाँच भागोंमें भी आलाप पृथक्-पृथक् होते हैं ॥७०७॥

गुणस्थानोंमें आलाप कहते हैं—

गुणस्थानोंमें-से मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, प्रमत्त और सयोगीमें-से प्रत्येकमें
तीनों ही आलाप होते हैं, शेष नौ गुणस्थानोंमें एक पर्याप्त आलाप ही नियमसे होता
है ॥७०८॥

- ३० १. म सेसेसेको ।

सामरणं पञ्जत्तमपञ्जत्तं चेदि तिणिण आलावा ।

दुवियप्पमपञ्जत्तं लद्धो णिव्वत्तगं चेदि ॥७०९॥

सामान्यपर्याप्तमपर्याप्तं चेति त्रय एवालापाः । द्विविकल्पमपर्याप्तं लब्धनिवृत्तिश्चेति ॥

सामान्यमेतदु पर्याप्तमेतदुमपर्याप्तमेतदितु आलापंगळु मूरप्पुवल्लि अपर्याप्तालापं लब्ध-
पर्याप्तं निवृत्त्यपर्याप्तमेतदितु द्विविकल्पमक्कं ।

दुविहंपि अपञ्जत्तं ओघे मिच्छेव होदि णियमेण ।

सासण अयदपमत्ते णिव्वत्ति अपुण्णगं होदि ॥७१०॥

द्विविधमप्यपर्याप्तं ओघे मिथ्यादृष्टावेव भवति नियमेन । सासादनासंयतप्रमत्ते निवृत्त्य-
पर्याप्तं भवति ॥

द्विप्रकारमनुल्लसपर्याप्तं ओघदोळु सामान्यदोळु मिथ्यादृष्टियोळ्येक्कु नियमदिदं ।

सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळुमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं प्रमत्तसंयतगुणस्थान-
दोळमी भूहं गुणस्थानंगळोळु नियमदिदं निवृत्त्यपर्याप्तमेयक्कुं ।

जोगं पडि जोगिजिणे होदि हु णियमा अपुण्णगत्तं तु ।

अवसेसणवट्ठाणे पञ्जत्तालावगो एक्को ॥७११॥

योगं प्रति योगिजिने भवति खलु नियमादपूर्णकत्वं तु । अवशेषं नवस्थाने पर्याप्तालापक
एकः ॥

योगमं कुरुतु सयोगिकेवल्लभट्टारकजिननोळु खलु स्फुटमाणि अपूर्णकत्वमपर्याप्तकत्व-
मक्कुं । तु मत्ते अवशेष नवगुणस्थानंगळोळु पर्याप्तालापमोदेयक्कुं ।

अनंतरं चतुर्दश मार्गणास्थानंगळोळालापमं पेळलुपक्रमिसि मोवल्लोळु गतिमार्गणयोळु
पेळदपं :—

ते आलापाः सामान्यः पर्याप्तः अपर्याप्तश्चेति त्रयो भवन्ति । तत्रापर्याप्तालापः लब्धपर्याप्तः
निवृत्त्यपर्याप्तश्चेति द्विविधो भवति ॥७०९॥

स द्विविधोऽपि अपर्याप्तालापः सामान्यमिथ्यादृष्टावेव भवति नियमेन । सासादनासंयतप्रमत्तेषु नियमेन
निवृत्त्यपर्याप्तालाप एव भवति ॥७१०॥

योगमाश्रित्यैव सयोगिजिने नियमेन खलु अपर्याप्तकत्वं भवति । तु-पुनः अवशेषनवगुणस्थानेषु एकः
पर्याप्तालापः ॥७११॥ अथ चतुर्दशमार्गणास्थानेषु आह—

इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं—

वे आलाप सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त इस तरह तीन हैं । उसमें-से अपर्याप्त आलापके
भेद दो हैं—लब्धपर्याप्त और निवृत्त्यपर्याप्त ॥७०९॥

वह दोनों ही प्रकारका अपर्याप्त आलाप नियमसे सामान्य मिथ्यादृष्टिमें ही होता
है । सासादन, असंयत और प्रमत्तमें नियमसे निवृत्त्यपर्याप्त आलाप ही होता है ॥७१०॥

सयोगी जिनमें नियमसे योगकी अपेक्षा ही अपर्याप्त आलाप होता है । शेष नौ
गुणस्थानोंमें एक पर्याप्त आलाप ही होता है ॥७११॥

चौदह मार्गणास्थानोंमें कहते हैं—

१. म चेदि । २. म चेति ।

११८

३५

सत्तण्हं पुढवीणं ओघेमिच्छे य तिण्णि आलावा ।

पढमाविरदेवि तहा सेसाणं पुण्णमालावो ॥७१२॥

सप्तानां पृथ्वीनामोघे सामान्ये मिथ्यादृष्टौ च त्रय आलापाः । प्रथमाविरतेऽपि तथा शेषाणां पूर्णालापः ॥

- ५ सामान्यविदं सप्तपृथ्विगणं साधारणमिथ्यादृष्टियुक्तं मूर्खमाळापंगलपुत्रु । प्रथमपृथ्वियं अविरतसम्यग्दृष्टियुक्तमंतं मूर्खमाळापंगलपुत्रुवेकं दोडे प्रथमनरकमं बद्धायुष्यनप्य वेदकसम्यग्दृष्टियुक्तं क्षाधिकसम्यग्दृष्टियुक्तं पुगुगुमपुदरिदं शेषमो प्रथमपृथ्वियं सासादनमिश्रमो द्वितीयादि पृथ्विकगणं सासादनमिश्रासंयतगणे युं पर्याप्तालापमो देयवकुं । उळिदारं नरकंगळोळु सम्यग्दृष्टि पुगते बुदर्थं ।

तिरियचउक्काणोघे मिच्छदुगे अविरदे य तिण्णेव ।

- १० नवरि य जोणिणि अयदे पुण्णो सेसेवि पुण्णो दु ॥७१३॥

तिरश्चां चतुर्णामोघे मिथ्यादृष्टिद्विके अविरते च त्रय एव । विशेषोऽस्ति योनिमत्यसंयते पूर्णः शेषेऽपि पूर्णस्तु ॥

- तिर्यग्गतिप्रोक्तं पञ्चगुणस्थानगळोळु सामान्यतिर्यग्चरुगळगं पंचेन्द्रियतिर्यग्चरुगळगं पर्याप्त-
तिर्यग्चरुगळगं योनिमतिर्यग्चरुगळगं इंतु नालकुं तेरद तिर्यग्चरुगळगे साधारणविदं मिथ्यादृष्टि-
१५ गुणस्थानदोळं सासादनगुणस्थानदोळमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं प्रत्येकं मूर्खमाळापंगलपुत्रुल्लि विशेषमुंढदावुदे दोडे योनिमतिर्यग्चरुगळगे पद्ध्याप्तालापमेयवकुमेकं दोडे बद्धतिर्यग्गायुष्य-
रप्य सम्यग्दृष्टिगळु योनिमतिगळुं षंढरुमाणि पुदटरपुदरिदं शेषमिश्रदेशसंयतगुणस्थानद्वयदोळु पर्याप्तालापमेयवकुं :—

- नरकगतौ सामान्येन सप्तपृथ्वीमिथ्यादृष्टौ त्रयः आलापाः स्युः । तथा प्रथमपृथ्व्यविरतेऽपि त्रय
२० आलापाः स्युः । बद्धनरकायुर्वेदकक्षाधिकसम्यग्दृष्टयोस्तत्रोत्पत्तिसंभवात् शेषपृथ्व्यविरतानामेकः पर्याप्तालाप
एव सम्यग्दृष्टेस्तत्रानुत्पत्तेः ॥७१२॥

तिर्यग्गतौ पञ्चगुणस्थानेषु सामान्यपञ्चेन्द्रियपर्याप्तयोनिमतिरश्चां चतुर्णां साधारणेन मिथ्यादृष्टि-
सासादनासंयतेषु प्रत्येकं त्रय आलापा भवन्ति । तत्रायं विशेषः—योनिमदसंयते पर्याप्तालाप एव । बद्धायुष्क-
स्यापि सम्यग्दृष्टेः स्त्रीषण्डयोरनुत्पत्तेः । तु—पुनः शेषमिश्रदेशसंयतयोरपि पर्याप्तालाप एव ॥७१३॥

- २५ नरकगतिमें सामान्यसे सातों पृथ्वीके मिथ्यादृष्टिमें तीनों आलाप होते हैं । तथा प्रथम पृथ्वीमें अविरतमें भी तीनों आलाप होते हैं, क्योंकि जिन्होंने पहले नरकायुका बन्ध किया है, वे वेदक सम्यग्दृष्टि और क्षाधिक सम्यग्दृष्टि प्रथम नरकमें ही उत्पन्न होते हैं । शेष पृथिवियोंमें अविरतोंके एक पर्याप्त आलाप ही होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर उनमें जन्म नहीं लेता ॥७१२॥

- ३० तिर्यग्गतिमें पाँच गुणस्थानोंमें सामान्यतिर्यग्च, पंचेन्द्रियतिर्यग्च, पर्याप्ततिर्यग्च और योनिमतीतिर्यग्च इन चारोंके सामान्यसे मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयत गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें तीन आलाप होते हैं । किन्तु इतना विशेष है कि असंयतमें योनिमतीतिर्यग्चमें पर्याप्त आलाप ही होता है; क्योंकि जिसने परभवकी आयुका बन्ध किया है, वह सम्यग्दृष्टि

तेरिच्छियलद्वियपज्जत्ते एक्को अपुण्ण आलावो ।

मूलोघं मणुसतिये मणुसिणि अयदम्मि पज्जत्तो ॥७१४॥

तिर्य्यग्लब्धपदार्थात्ते एकोऽपूण्यालापः मूलौघो मनुष्यत्रये मानुष्यसंयते पदार्थात्तः ॥

तिर्य्यग्लब्धपदार्थात्तनोऽप्यप्याप्तालापमो देयककुं । मनुष्यगतिर्योऽपदिनात्कुं गुणस्थानंग-
लोऽसामान्यमनुष्यपदार्थात्तमनुष्ययोनिमतिमनुष्यमेवो मनुष्यत्रयद प्रत्येकं पदिनात्कुं पदिनात्कुं ५
गुणस्थानंगलोऽमुपेच्छात्तापं मूलौघमेयककुमादोऽयोनिमत्यसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोऽप्यप्याप्ता-
लापमेयककुमेकं दोऽकारणं मुन्नं तिर्य्यग्लगतिर्योऽपेच्छादेयककुं । मत्तोऽदु विशेषमुत्तदावुदेदोऽ
असंयतयोनिमतिर्य्यचैयदमसंयतयोनिमतिमानुषियुं प्रथमोपशमवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टिगुण-
लरप्पुदरि । भुज्यमानपदार्थात्तालापमेयककुं । योनिमतिमनुष्यरुगलरु गुणस्थानंगलेयप्पुदरिदमुप-
शमश्रेण्यवतरणदोऽलमा द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमिल्ल एकं दोऽवग्गे श्रेण्यारोहणमे घटिसद- १०
पुदरिदं ॥

मणुसिणि पमत्तविरदे आहारदुगं तु णत्थि णियमेण ।

अवगदवेदे मणुसिणि सण्णा भूदगदिमासेज्ज ॥७१५॥

मानुषि प्रमत्तविरते आहारद्वयं नास्ति तु नियमेन । अपगतवेदायां मानुष्यां संज्ञा
भूतगतिमाश्रित्य ॥ १५

तिर्य्यग्लब्धपर्याप्तके एकः अपर्याप्तालाप एव । मनुष्यगतौ सामान्यपर्याप्तयोनिमनुष्येषु प्रत्येकं
चतुर्दशगुणस्थानेषु गुणस्थानवत् मूलौघः स्यात् तथापि योनिमदसंयते पर्याप्तालाप एव । कारणं प्रागुक्तमेव ।
पुनरयं विशेषः—असंयततैरदवचां प्रथमोपशमकवेदकसम्यक्त्वद्वयं, असंयतमानुष्यां प्रथमोपशमवेदकक्षायिक-
सम्यक्त्वत्रयं च संभक्नत तथापि एको भुज्यमानपर्याप्तालाप एव । योनिमतीनां पञ्चगुणस्थानादुपरि गमना-
संभवात् द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं नास्ति ॥७१४॥ २०

स्त्री और नपुंसकोंमें उत्पन्न नहीं होता । तथा शेष मिश्र और देश संयत गुणस्थानोंमें भी एक
पर्याप्त आलाप ही होता है ॥७१३॥

तिर्य्यच लब्धपर्याप्तकमें एक अपर्याप्त आलाप ही होता है । मनुष्यगतिमें सामान्य,
पर्याप्त और योनिमत मनुष्योंमें-से प्रत्येकमें चौदह गुणस्थानोंमें गुणस्थानवत् जानना । फिर
भी योनिमत मनुष्यके असंयत गुणस्थानमें एक पर्याप्त आलाप ही होता है । कारण पहले २५
कहा ही है । पुनः इतना विशेष और है कि असंयत गुणस्थानमें तिर्य्यचीके प्रथमोपशम और
वेदक दो ही सम्यक्त्व होते हैं । और मानुषीके प्रथमोपशम, वेदक तथा क्षायिक तीन
सम्यक्त्व होते हैं । तथापि एक भुज्यमान पर्याप्त आलाप ही है । योनिमती पंचम गुण स्थानसे
ऊपर नहीं जाती, इसलिए उसके द्वितीयोपशम सम्यक्त्व नहीं होता ॥७१४॥

१. म^० तालापमेयककुमुपशमश्रेण्यवतरणदोलु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं योनिमतिगलरु गुणस्थानं गलेयप्पुदरिदमा ३०
द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमिल्ल ।

- द्रव्यपुरुषं भावस्त्रीयुग्मं प्रमत्तविरतनोऽतु मत्ते आहारकाहारकांगोपांगनामकर्मोदयं नियमदिदमित्त्वं । तु शब्ददिनऽशुभवेदोदयदोऽतु मनःपर्ययज्ञानमुं परिहारविशुद्धिसंयममुं घटिसवु । भावमानुषियोऽतु चतुर्दशगुणस्थानंगऽतु घटिसुवबल्लदे द्रव्यमानुषियोऽतु गुणस्थानंगऽतु दरिवुदु । अपगतवेदनप अनिवृत्तिकरणमानुषियोऽतु संज्ञा । कार्यरहितमैथुनसंज्ञेयं । भूतपूर्वगतिन्यायमना-
 ५ श्रयिसियक्कुं । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमुं मनःपर्ययज्ञानियोऽतु । परिहारविशुद्धिसंयमिगळोऽतु आहारकऋद्धिप्राप्तरोऽतु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमित्त्वेकंदोडे सूक्तं वर्षंगळिल्लदे परिहारविशुद्धि-
 संयमक्कं संभवाभावमपुदरिदं तावत्कालमुपशमसम्यक्त्वक्कवस्थानमित्त्लपुदरिदं आउदोऽतु । परिहारविशुद्धिसंयमदोडने उपशमसम्यक्त्वक्कुपलब्धियक्कुंमपुडे । परिहारविशुद्धिसंयममं विडदि-
 दंतपंगे उपशमश्रेण्यारोहणार्थं दर्शनमोहनीयक्के उपशमनमुं संभविमुवदत्तु । हेगे परिहार-
 १० विशुद्धिसंयमदोडनुपशमश्रेणियोऽतु द्वितीयोपशमक्के संयोगमक्कुं ॥

गरलद्धि अपज्जत्ते एक्को दु अपुण्णगो दु आलावो ।

लेस्सामेदविभिण्णा सत्तवियप्पा सुरद्धाणा ॥७१६॥

नरलब्धपर्यायै एकस्त्वपूर्णालापः । लेश्याभेदविभिन्नानि सप्तविकल्पानि सुरस्थानानि ॥

- १५ द्रव्यपुरुषभावस्त्रीरूपे प्रमत्तविरते आहारकतदङ्गोपाङ्गनामोदयो नियमेन नास्ति । तुशब्दात् अशुभ-
 वेदोदये मनःपर्ययपरिहारविशुद्धी अपि न । भावमानुष्यां चतुर्दशगुणस्थानानि, द्रव्यमानुष्यां पञ्चैवेति ज्ञातव्यं ।
 अपगतवेदानिवृत्तिकरणमानुष्यां कार्यरहितमैथुनसंज्ञा भूतपूर्वगतिन्यायमाश्रित्य भवति । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं
 मनःपर्ययज्ञानिनि स्यात् । न चाहारकधिप्राप्तेनापि परिहारविशुद्धी त्रिशद्वर्षेविना तत्संयमस्यासंभवात्
 तत्सम्यक्त्वस्य तु तावत्कालं अनवस्थानात् । अत्यक्ततत्संयमस्य उपशमश्रेणिमारोहमपि दर्शनमोहोपशमाभावाच्च
 तद्द्वयसंयोगावदनात् ॥७१५॥

- २० द्रव्यसे पुरुष और भावसे स्त्रीरूप प्रमत्त विरतमें आहारक शरीर और आहारक
 अंगोपांगका उदय नियमसे नहीं होता । 'तु' शब्दसे अशुभ वेद स्त्री और नपुंसकके उदयमें
 मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धि संयम भी नहीं होते । भावमानुषीके चौदह गुणस्थान
 होते हैं और द्रव्यमानुषीके पाँच ही जानना । वेद रहित अनिवृत्तिकरणमें मानुषीके कार्य
 रहित मैथुन संज्ञा भूतपूर्वगति न्यायकी अपेक्षा कही है अर्थात् वेदरहित होनेसे पहले मैथुन
 २५ संज्ञा थी, इस अपेक्षा कही है । द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और मनःपर्ययज्ञान जो आहारक
 ऋद्धिको प्राप्त है अथवा परिहार विशुद्धि संयमवाले हैं, उनके नहीं होते । क्योंकि तीस वर्षकी
 अवस्था हुए बिना परिहार विशुद्धि संयम नहीं होता और प्रथमोपशम इतने काल तक रहता
 नहीं है तथा परिहारविशुद्धि संयमको त्यागे बिना उपशम श्रेणिपर आरोहण भी नहीं
 होता और दर्शन मोहका उपशम भी नहीं होता, अतः द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी नहीं
 ३० होता ॥७१५॥

१. म सुवुदत्तावुदोऽतु परि^० । २. म^० योलैरउक्कं संयोगमित्त्लपुदरिदं ।

मनुष्यलब्धपर्याप्तकनोळु अपूर्णालापमोदे यक्कुं । लेश्येगळिदं माडलपट्ट भेदगळिदं-
विभिन्नगळप देववर्कळ स्थानगळु सप्तविकल्पगळपुवु । अदेंतेदोडे :—

तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य चोदसण्हं लेस्सा भवणादिदेवाणं ॥

त्रयाणां द्वयोर्द्वयोः षण्णां द्वयोश्च त्रयोदशानां इतश्चतुर्दशानां लेश्याः भवनादिदेवानां ॥ ५

भवनत्रयदेववर्कळगं सौधर्मज्ञानकल्पजगं सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पजगं ब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतव-
कापिष्ठशुक्रमहाशुक्रषट्कल्पजगं शतारसहस्रारकल्पद्वयजगं आनतप्राणतारणाच्युतकल्पनवग्रैवे-
यककल्पातीतजगं अल्लिदं मेलण अनुदिशानुत्तरचतुर्दशविमानसंभूतगर्माभितु सप्तस्थानगळ देव-
वर्कळगे लेश्येगळपेळलपट्टपुवु ॥

तेऊ तेऊ तह तेऊ पम्मपम्मा य पम्मसुक्का य ।

सुक्का य परमसुक्का लेस्सा भवणादिदेवाणं ॥

तेजस्तेजस्तथा तेजः पद्मं पद्मं च पद्मशुक्ले च । शुक्ला च परमशुक्ला लेश्या भवनादि-
देवानां ॥

मुपेळद सप्तस्थानगळोळु यथासंख्यमाणि भवनत्रयादिस्थानगळोळु तेजोलेश्येयजघन्यांशमुं
तेजोलेश्येयमध्यमांशमुं तेजोलेश्येय उत्कृष्टांशमुं पद्मलेश्येय जघन्यांशमेरंडुं पद्मलेश्येय मध्य- १५
मांशमुं पद्मलेश्येय उत्कृष्टांशमुं शुक्ललेश्येय जघन्यांशमुमेरंडुं शुक्ललेश्येय मध्यमांशमुं शुक्लले-
श्येयुत्कृष्टांशमुं भवनत्रयादिदेववर्कळ लेश्येगळपुवु ॥

सव्वसुराणं ओधे मिच्छदुगे अविरदेय तिण्णेव ।

णवरि य भवणतिकप्पित्थीणं च य अविरदे पुण्णो ॥७१७॥

सर्वसुराणामोघे मिथ्यादृष्टिद्वये अविरते च त्रय एव । नवमस्ति भवनत्रयकल्पस्त्रीणां च २०
चाविरते पूर्णाः ॥

तु-पुनः, मनुष्यलब्धपर्याप्ते एकः लब्धपर्याप्तालाप एव । लेश्याभेदविभिन्नदेवस्थानानि सप्तविकल्पानि
भवन्ति तद्यथा—

तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य चोदसण्हं लेस्सा भवणादिदेवाणं ॥१॥

तेऊ तेऊ तेऊ पम्मा पम्मा य पम्मसुक्का य ।

सुक्का य परमसुक्का भवणतिया पुण्णमे असुहा ॥२॥

भवनत्रय-सौधर्मद्वय-सानत्कुमारद्वय-ब्रह्मषट्क-शतारद्वय-आनताद्वयोदश- उपरितनचतुर्दशविमान-
जानां क्रमशः तेजोऽजघन्यांशतेजोमध्यमांश-तेज-उत्कृष्टांश-पद्मजघन्यांश-पद्ममध्यमांश-पद्मोत्कृष्टांश-शुक्लजघन्यांश-
शुक्लमध्यमांश-शुक्लोत्कृष्टांश भवन्ति ॥७१६॥

मनुष्य लब्धपर्याप्तकमें एक लब्धपर्याप्त आलाप ही होता है । लेश्याभेदसे देवोंके
सात स्थान होते हैं । भवनत्रिक, सौधर्मयुगल, सानत्कुमार युगल, ब्रह्म आदि छह स्वर्ग,
शतार युगल, आनतादि तेरह और ऊपरके चौदह विमानवालोंके क्रमसे तेजोलेस्याका जघन्य
अंश, तेजोलेस्याका मध्यम अंश, तेजोलेस्याका उत्कृष्ट अंश और पद्मलेस्याका जघन्य अंश,
पद्मलेस्याका मध्यम अंश, पद्मलेस्याका उत्कृष्ट अंश और शुक्लका जघन्य अंश, शुक्लका ३५
मध्यम अंश तथा शुक्लका उत्कृष्ट अंश होता है ॥७१६॥

सर्वदेवसामान्यदोळु नालकुं गुणस्थानमक्कुंमल्लि मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळं सासादनगुण -
स्थानदोळं असंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं सामान्यालापमुं पर्याप्तालापमुं पर्याप्तालापमुं ब
मूरमाळापंगळपुवु । अल्लि विशेषमुंटावुदेदोडे भवनत्रयदेवकर्कळ कल्पवासिस्त्रीयरुगळ असंयत-
गुणस्थानदोळु पर्याप्तालापमोदेयक्कुमेकंदोडे तिर्यग्मनुष्यासंयतसम्यग्दृष्टिगळु भवनत्रयदोळुं
५ कल्पामरस्त्रीयरानि पुट्टरपुदरिदं ॥

मिस्से पुण्णालावो अणुदिसाणुत्तरा हु ते सम्मा ।

अविरदतिण्णालावा अणुदिसाणुत्तरे होंति ॥७१८॥

मिश्रे पूर्णाालापः अनुदिशानुत्तराः खलु ते सम्यग्दृष्टयः । असंयतत्रितयालापाः अनुदिशानुत्तरे
भवन्ति ॥

१० मुपेब्ब नवग्रैवेयकावसानमाद सामान्यदेवकर्कळ मिश्रगुणस्थानदोळु पर्याप्तालापमोदे-
यक्कुं । अनुदिशानुत्तरविमानगळहमिन्दरेल्लरं स्फुटमागवर्गळु सम्यग्दृष्टिगळेयपुदरिदमसंयत-
सम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळप्य सामान्यालापमुं पर्याप्तालापमुं निवृत्त्यपर्याप्तालापमुं ब मूर माळा-
पंगळु अनुदिशानुत्तरविमानवासिगळोळपुवु ।

अनंतरमिद्रियमार्गणयोलापमं पेब्बपं :—

१५ वादरसुहुमेइंदियवित्तिचतुरिंदिय असण्णिजीवाणं ।

ओघे पुण्णे तिण्णि य अपुण्णमे पुण अपुण्णो दु ॥७१९॥

बादरसूक्ष्मैर्केन्द्रियद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिजीवानामोघे पूर्णे त्रयश्चापूर्णे पुनरपूर्णस्तु ॥

बादरैर्केन्द्रिय सूक्ष्मैर्केन्द्रियद्वौन्द्रियत्रौन्द्रियचतुरिन्द्रियासंज्ञिपंचैन्द्रियजीवंगळ सामान्यदोळु सामान्य-
पर्याप्तालापमे ब मूरमाळापंगळपुवु । पर्याप्तिनामकर्मोदयविशिष्टजीवंगळोळमा मूरमाळापं-
२० गळपुवु । अपर्याप्तिनामकर्मोदयविशिष्टजीवंगळोळ लब्ध्यपर्याप्तालापमोदेक्कुं ।

सर्वदेवसामान्ये चतुर्गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टिसासादनयोः असंयते च त्रय आलापा भवन्ति । अयं विशेषः—
भवनत्रयदेवाणां कल्पस्त्रीणां च असंयते पर्याप्तालाप एव तिर्यग्मनुष्यासंयतानां तत्रोत्पत्त्यभावात् ॥७१७॥

नवग्रैवेयकावसानसामान्यदेवानां मिश्रगुणस्थाने एकः पर्याप्तालाप एव अनुदिशानुत्तरविमानादहमिन्द्राः
सर्वे खलु सम्यग्दृष्टय एव तेन असंयते त्रय आलापा भवन्ति ॥७१८॥ अयेन्द्रियमार्गणायामाह—

२५ तु-पुनः बादरसूक्ष्मैर्केन्द्रियद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिजीवसामान्ये पर्याप्तिनामोदयविशिष्टे त्रय आलापा
भवन्ति । अपर्याप्तिनामोदयविशिष्टे पुनः एको लब्ध्यपर्याप्तालाप एव ॥७१९॥

सब सामान्य देवोंमें चार गुणस्थानोंमेंसे मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयतमें
तीन आलाप होते हैं । इतना विशेष है कि भवनत्रिकके देवोंके और कल्पवासी देवांगनाओंके
असंयतमें पर्याप्त आलाप ही होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि तिर्यच और मनुष्य उनमें उत्पन्न
३० नहीं होते ॥७१७॥

नौ ग्रैवेयक पर्यन्त सामान्य देवोंके मिश्र गुणस्थानमें एक पर्याप्त आलाप ही है ।
अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी अहमिन्द्र सब सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, अतः उनके
असंयतमें तीन आलाप होते हैं ॥७१८॥

जो बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय और असंज्ञी
३५ सामान्य जीव पर्याप्त नामकर्मके उदयसे युक्त होते हैं, उनके तीन आलाप होते हैं । और
जिनके अपर्याप्त नामकर्मका उदय है, उनके एक लब्ध्यपर्याप्त आलाप ही होता है ॥७१९॥

सण्णी ओवे मिच्छे गुणपडिवण्णे य मूल आलावा ।

लद्धिअपुण्णे एक्को अपज्जत्तो होदि आलावो ॥७२०॥

संशयोघे मिथ्यादृष्टौ गुणप्रतिपन्ने च मूलालापः । लब्ध्यपर्याप्तो एकोऽपर्याप्तो भवत्यालापः ॥

संज्ञिपंचेंद्रियसामान्यदोळ गुणस्थानपंचकमक्कुमल्लि मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळ मूला-
लापंगळ सूरुमप्पुवु । गुणप्रतिपन्नरूप सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळमसंयतसम्यग्दृष्टिगुण-
स्थानदोळ मूलालापंगळ सामान्यपर्याप्तनिर्वृत्यपर्याप्तमेवमूरुमालापंगळप्पुवु । मिश्रदेशसंयत-
गुणप्रतिपन्नरोळ मूलालापमोदे पर्याप्तालापमक्कु । संज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तनोळ लब्ध्यपर्याप्ता-
लापमोदेवक्कु ।

अनंतरं कायमार्गणेषोळापमं गाथाद्वयदिदं पेळवपं ।

भू आउतेउवाळुणिच्चचदुग्गदिणिगोदमे तिण्णि ।

ताणं थूलिदरेसु वि पत्तेमे तद्दुभेदेवि ॥७२१॥

भूवर्मेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदे त्रयः । तेषां स्थूलेतरेष्वपि प्रत्येके तद्विभेदेपि ॥

तसजीवाणं ओवे मिच्छादिगुणेवि ओघआलावो ।

लद्धिअपुण्णे एक्कोअपज्जत्तो होदि आलावो ॥७२२॥

त्रसजीवानामोघे मिथ्यादृष्टिगुणेपि ओघालापः । लब्ध्यपर्याप्ते एकोऽपर्याप्तो भवत्यालापः ॥

संज्ञिसामान्ये पञ्चगुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ मूलालापस्त्रयो भवन्ति । गुणप्रतिपन्नेषु तु सासादना-
संयतयोः सामान्यपर्याप्तनिर्वृत्यपर्याप्ताः मूलालापस्त्रयो भवन्ति । मिश्रदेशसंयतयोरेकः पर्याप्त एव मूलालापः ।
संज्ञिलब्ध्यपर्याप्ते एकः लब्ध्यपर्याप्तालापः ॥७२०॥ अथ कायमार्गणायां गाथाद्वयेनाह—

पृथ्व्यप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदेषु तद्वादरसूक्ष्मेषु च प्रत्येकवनस्पतौ तत्प्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितभेदयोश्च
आलापत्रयमेव । त्रसजीवानां सामान्येन चतुर्दशगुणस्थानेषु गुणस्थानबदालाप भवन्ति विशेषभावात् ।
पृथ्यादित्रिसातलब्ध्यपर्याप्तेषु एकः लब्ध्यपर्याप्तालाप एव ॥७२१—७२२॥ अथ योगमार्गणायामाह—

सामान्य संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यचके पाँच गुणस्थान होते हैं । उनमें-से मिथ्यादृष्टिमें
तीन मूल आलाप होते हैं । जो ऊपरके गुणस्थानोंमें चढ़े हैं उनके सासादन और असंयतमें
सामान्य पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त तीन मूल आलाप होते हैं । मिश्र और देश संयतमें एक पर्याप्त
ही मूल आलाप है । संज्ञी लब्ध्यपर्याप्तमें एक लब्ध्यपर्याप्त आलाप है ॥७२०॥

कायमार्गणामें दो गाथाओंसे कहते हैं—

पृथिवी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद, चतुर्गतिनिगोद, इनके बादर और सूक्ष्म-
भेदोंमें प्रत्येक वनस्पति और उसके प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित भेदोंमें तीन ही आलाप होते हैं ।
त्रसजीवोंके सामान्यसे चौदह गुणस्थानोंमें गुणस्थानकी तरह आलाप होते हैं, कोई विशेष
बात नहीं है । पृथ्वी आदि त्रसपर्यन्त लब्ध्यपर्याप्तोंमें एक लब्ध्यपर्याप्त आलाप ही होता
है ॥७२१—७२२॥

योगमार्गणामें कहते हैं—

पृथ्विकायिकदोळमष्कायिकदोळं तेजस्कायिकदोळं वायुकायिकदोळं नित्यनिगोदजीवंगळोळं चतुर्गतिनिगोदजीवंगळोळं इवर बादरसूक्ष्मभेदंगळोळं प्रत्येकवनस्पतियोळं तद्विभेदमप्य ।

प्रतिष्ठितप्रत्येकदोळं अप्रतिष्ठितप्रत्येकदोळं ओघदोळु साधारणालापत्रयमक्कु । त्रस जीवंगळ सामान्यदोळु गुणस्थानंगळपदिनालकपुवल्लि मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु गुणस्थान-
५ दोळपेळदंते आळापंगळपुवु । विशेषमिल्ल । पृथ्विकायिकादित्रसकायिकजीवपद्यंतमाद लब्ध-
पद्यामिरोळु लब्धअपर्याप्तालापमो देयक्कु ।

अनंतरं योगमार्गणेयोळु आलापमं पेळदपं :—

एककारसजोगाणं पुण्णगदाणं सपुण्ण आलावो ।

मिस्सचउक्कस्स पुणो सगएक्क अपुण्ण आलावो ॥७२३॥

१० एकादशयोगानां पूर्णगतानां स्वपूर्णांलापः । मिश्रचतुष्कस्य पुनः स्वकैकोऽपूर्णः आलापः ॥
पर्याप्तिगे संद मनोवाग्योगंगळं दुं औदारिकवैक्रियिकाहारकंगळं ब मूर्धमितु पन्नोदु
योगंगळो स्वस्वपूर्णांलापमोदोदेयक्कुमदंतेदोडे सत्यासत्योभयानुभयमनः पर्याप्तालापमुं
सत्यासत्योभयानुभयभाषापर्याप्तालापमुं औदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरपर्याप्तालापमुं तंतम्म
वोदोदेयागि पन्नोदुयोगंगळोळु पन्नोदे पर्याप्तालापमपुवेबुदत्थं । मिश्रचतुष्कयोगक्के मत्ते
१५ स्वस्वापर्याप्तालापमोदोदेयक्कुमोदारिकापर्याप्तिवैक्रियिकापर्याप्तिआहारकापर्याप्ति काम्मंकाया-
पर्याप्तिमं बाळापचतुष्टयं यथासंख्यमार्गोदोदे पेळलपडुवुवेबुदत्थं ॥

अनंतरं वेद मार्गणादियाहारमार्गणापर्यंतमाद पत्तुं मार्गणंगळोळापक्रमं तोरिदपं ॥

वेदादाहारोत्ति य सगुणङ्गाणमोघ आलावो ।

णवरि य संदित्थीणं णत्थि हु आहारमाण दुगं ॥७२४॥

२० वेदाहारपर्यंतं च स्वगुणस्थानानामोघ आलापः । नवमस्ति च षट्स्त्रीणां नास्त्याहारक-
योद्विकं ॥

वेदमार्गणेमोदल्लोडु आहारमार्गणेपर्यंतमाद पत्तुं मार्गणंगळोळु तंतम्ममार्गणंगळु
गुणस्थानंगळो सामान्यदिदं गुणस्थानंगळोळु पेळशालापक्रममेयक्कुमादोडमोदु नवीनमुंदावुदेदोडे
भावषण्डरं द्रव्यपुरुषरं भावस्त्रीयरं द्रव्यपुरुषरुगळप्प वेदमार्गणंथ सवेदानिवृत्तिकरणपर्यंतमाद

२५ पर्याप्तिगतानां चतुर्धनश्चतुर्वागीदारिकवैक्रियिकाहारकैकादशयोगानां स्वस्वपूर्णांलापो भवति यथा
सत्यमनोगोस्य सत्यमनःपर्याप्तालापः । मिश्रयोगचतुष्कस्य पुनः स्वस्वैकापर्याप्तालापो भवति । यथा
औदारिकमिश्रस्य औदारिकापर्याप्तालापः ॥७२३॥ अथ शेषमार्गणासु आह—

वेदाद्याहारान्तदशमार्गणासु स्वस्वगुणस्थानानामालापक्रमः सामान्यगुणस्थानवद्भवति किन्तु भावषण्ड-

पर्याप्त अवस्थामें होनेवाले चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक, वैक्रियिक,
३० आहारक काययोग इन ग्यारह योगोंमें अपना-अपना पर्याप्त आलाप होता है । जैसे सत्य-
मनोयोगके सत्यमन पर्याप्त आलाप होता है । चार मिश्रयोगोंमें अपना-अपना एक अपर्याप्त
आलाप होता है । जैसे औदारिकमिश्रके औदारिक अपर्याप्त आलाप होता है ॥७२३॥

शेष मार्गणाओंमें कहते हैं—

वेदसे लेकर आहारमार्गणा पर्यन्त दस मार्गणाओंमें अपने-अपने गुणस्थानोंका आलाप-
३५ क्रम सामान्य गुणस्थानकी तरह होता है । किन्तु भावसे नपुंसक द्रव्यसे पुरुष और भावसे

गुणस्थानंगळोळु षष्ठगुणस्थानवर्त्तिप्रमत्तसंयतनोळाहारक आहारकमिश्रमें बाळापद्वयमें पेळुदुको-
 ल्वेडेके दोडा गुणस्थानदोळु अशुभवेदोदयमुळळरोळाहारद्वि संभविसदपपर्दरं हृत्यपमाणं पसत्थु-
 दयमें दाहारकशरीरदोळु प्रशस्तप्रकृतिगळुवयनियममुंठपुवरिदं । वेदमागंगेयोळनिवृत्तिकरण-
 सवेदभागिपर्यंतमो भत्तुं गुणस्थानंगळपुवु । मेलण नालकुमवेदभागिपर्यंतं कषायमागंगेय
 क्रोधदो भत्तुं मानदो भत्तुं मायेयो भत्तुं बादरलोभदो भत्तुं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागिर्दं ५
 गुणस्थानंगळोळं सूक्ष्मलोभके सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानदोळं ज्ञानमार्गणेय कुमतिज्ञानदेरडुं कुश्रुत-
 ज्ञानदेरडुं विभंगज्ञानदेरडुं मतिज्ञानदो भत्तुं श्रुतज्ञानदो भत्तुं अवधिज्ञानदो भत्तुं मनःपर्ययज्ञानदेळुं
 केवलज्ञानदेरडुं गुणस्थानंगळोळु । संयममार्गणेय असंयमव नालकुं देशसंयमदो दुं सामायिकद
 नालकुं छेदोपस्थापनद नालकुं परिहारविशुद्धि संयमदेरडुं सूक्ष्मसांपरायसंयमदो दुं यथाख्यातसंयमव
 नालकुं गुणस्थानंगळोळं दर्शनमार्गणेय चक्षुर्दशनद पन्नरेडु गुणस्थानंगळोळमचक्षुर्दशनद पन्नरेडुं १०
 अवधिदर्शनदो भत्तुं केवलदर्शनदेरडुं गुणस्थानंगळोळं लेख्यामार्गणेय कृष्णनीलकपोतंगळनालकुं
 नालकुं गुणस्थानंगळोळं तेजःपदमंगळोळं गुणस्थानंगळोळं शुक्ललेइयेय पविमूरं गुणस्थानंगळोळं
 भव्यमार्गणेयोळु भव्यन पविनालकुमभव्यनदो दु गुणस्थानंगळोळं सम्यक्त्वमार्गणेय मिथ्यात्वदो दुं
 सासादननतन्नो दुं मिथन तन्नो दुं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वदे दुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वदनालकुं
 वेदकसम्यक्त्वद नालकुं क्षायिकसम्यक्त्वद पन्नो दुं गुणस्थानंगळोळं संज्ञिमार्गणेयोळु संज्ञिय १५

द्रव्यपुरुषे भावस्त्रीद्रव्यपुरुषे च प्रमत्तसंयते आहारकतन्मिश्रालापौ न । 'हृत्यपमाणं पससत्युदयं' इत्याहारक-
 शरीरे प्रशस्तप्रकृतीनामेवोदयनियमात् । वेदानामनिवृत्तिकरणसवेदभागान्तेषु क्रोधमानमायाबादरलोभानां
 अवेदचतुर्भागान्तेषु सूक्ष्मलोभस्य सूक्ष्मसांपराये । ज्ञानमार्गणायां कुमतिकुश्रुतविभङ्गानां द्वयोः, मतिश्रुतान्वधीनां
 नवसु, मनःपर्ययस्य सप्तसु, केवलज्ञानस्य द्वयोः, असंयमस्य चतुर्षु, देशसंयमस्य एकस्मिन्, सामायिकछेदोप-
 स्थापनयोश्चतुर्षु, परिहारविशुद्धेर्द्वयोः, सूक्ष्मसांपरायस्य एकस्मिन्, यथाख्यातस्य चतुर्षु, चक्षुरचक्षुर्दर्शनयोः २०
 द्वादशसु, अवधिदर्शनस्य नवसु, केवलदर्शनस्य द्वयोः, कृष्णनीलकपोतानां चतुर्षु, तेजःपद्योः सप्तसु, शुक्लाया-
 स्त्रयोदशसु, भव्यमार्गणायां भव्यस्य चतुर्दशसु, अभव्यस्य एकस्मिन्, सम्यक्त्वमार्गणायां मिथ्यात्वसासादन-
 मिथ्याणामेकैकस्मिन्, द्वितीयोपशमस्य अष्टसु, प्रथमोपशमवेदकयोश्चतुर्षु, क्षायिकस्य एकादशसु, संज्ञिनो-

ओ द्रव्यसे पुरुषके प्रमत्तसंयतमें आहारक-आहारक मिश्र आलाप नहीं होते, क्योंकि
 'हृत्यपमाणं पसत्युदयं' इस आगम प्रमाणके अनुसार आहारक शरीरमें प्रशस्त प्रकृतियोंके
 ही उदयका नियम है । वेद अनिवृत्तिकरणके सवेद भाग पर्यन्त होते हैं । क्रोध, मान, माया,
 बादर लोभ अनिवृत्तिकरणके वेदरहित चार भागपर्यन्त क्रमसे होते हैं । सूक्ष्मलोभ सूक्ष्म-
 साम्परायमें होता है । ज्ञानमार्गणामें कुमति, कुश्रुत और विभंगके दो गुणस्थान हैं । मतिश्रुत-
 अवधिके नौ गुणस्थान हैं । मनःपर्ययके सात गुणस्थान हैं । केवलज्ञानके दो गुणस्थान
 हैं । असंयतके चार गुणस्थान हैं, देशसंयतका एक गुणस्थान है । सामायिक छेदोपस्थापनाके
 चार गुणस्थान हैं । परिहारविशुद्धिके दो, सूक्ष्मसाम्परायका एक, यथाख्यातके चार, चक्षु-
 दर्शन-अचक्षुदर्शनके बारह, अवधिदर्शनके नौ, केवलदर्शनके दो, कृष्ण-नील-कापोतलेइयाके
 चार, तेज और पद्माके सात, शुक्ललेइयाके तेरह, भव्यमार्गणामें भव्यके चौदह, अभव्यका
 एक, सम्यक्त्वमार्गणामें मिथ्यात्व, सासादन, मिश्रका एक-एक गुणस्थान है । द्वितीयोपशम-
 सम्यक्त्वके आठ, प्रथमोपशम और वेदकके चार, क्षायिक सम्यक्त्वके ग्यारह, संज्ञीके ३५

पन्नरडुं असंज्ञियदोडुं गुणस्थानंगळोळं आहारमागण्योळु आहारद पदिमूरुमनाहारदोडुं गुणस्थानंगळोळं सामान्यदिदं गुणस्थानंगळोळु पेळ्ळद कमदिदंमाळापंगळं पेळ्ळु कोळ्ळे ॥

गुणजीवा षड्जत्ती पाणा सण्णा गइंदिया काया ।

जोगा वेदकसाया पाणजमा दंसणा लेस्सा ॥७२५॥

५

भव्वा सम्मत्तावि य सण्णी आहारगा य उवजोगा ।

जोग्गा परूविदव्वा ओघादेसेसु समुदायं ॥७२६॥

गुणजीवाः पर्याप्तयः प्राणाः संज्ञा गतीन्द्रियाणि कायाः । योगा वेदकवाया ज्ञानयमा दश-
नानि लेख्याः ॥

भव्याः सम्यक्त्वानि च संज्ञिनः आहारकाश्चोपयोगाः । योग्याः प्ररूपयितव्याः ओघादेशेषु

१० समुदायं ॥

पदिनाल्कु गुणस्थानंगळुं मूलपर्याप्तजीवसमासंगळेळुं मूलापर्याप्तजीवसमासंगळेळुं संज्ञिपंचेन्द्रियजीवसंबंधिपर्याप्तिगळारुमपर्याप्तिगळारुं । असंज्ञिजीवसंबंधिगळु विकलत्रयजीव-
संबंधिगळुमप्य पर्याप्तिगळय्दुमपर्याप्तिगळय्दुं । एकेन्द्रियसंबंधिपर्याप्तिगळु नाल्कुमपर्याप्ति-
गळु नाल्कुं संज्ञिपंचेन्द्रिय पर्याप्तिजीवसंबंधिप्राणंगळु पत्तु । तदपर्याप्तजीवसंबंधिप्राण-
१५ गळेळुं असंज्ञिपर्याप्तपंचेन्द्रियजीवसंबंधिप्राणंगळोभत्तुं तदपर्याप्तप्राणंगळेळुं चतुरिन्द्रियप-
र्याप्तजीवसंबंधिप्राणंगळेळुं । तदपर्याप्तप्राणंगळारुं पर्याप्तत्रौन्द्रियजीवसंबंधिप्राणंगळेळुं
७ । तदपर्याप्तप्राणंगळेळुं पर्याप्तद्वौन्द्रियजीवसंबंधिप्राणंगळारुं । तदपर्याप्तप्राणंगळु नाल्कुं ।
पर्याप्तैकेन्द्रियजीवसंबंधिप्राणंगळु नाल्कुं । तदपर्याप्तजीवसंबंधिप्राणंगळु मूरुं । पर्याप्तसयोगि-
केवळिभट्टारकसंबंधिप्राणंगळु नाल्कुमवावुवेदोड वाक्कायायुरुच्छ्वासनिश्वासासंख्यकुमा । गुण-

२० द्वादशसु, असंज्ञिन एकस्मिन्, आहारकस्य त्रयोदशसु अनाहारकस्य पञ्चसु च गुणस्थानेषु सामान्यगुणस्थानोक्त-
क्रमेणालापः कर्तव्यः ॥७२४॥

गुणस्थानानि चतुर्दश, मूलजीवसमासाः पर्याप्ताः सप्त । अपर्याप्ताः सप्त । संज्ञिनः पर्याप्तयः षट्
अपर्याप्तयः षट् । असंज्ञिनो विकलत्रयस्य च पर्याप्तयः पञ्च अपर्याप्तयः पञ्च । एकेन्द्रियस्य पर्याप्तयः चतस्रः
अपर्याप्तयः चतस्रः । प्राणाः संज्ञिनो दश तदपर्याप्तस्य सप्त । असंज्ञिनः नव तदपर्याप्तस्य सप्त, चतुरिन्द्रियस्य

२५ अष्टौ तदपर्याप्तस्य षट्, त्रीन्द्रियस्य सप्त तदपर्याप्तस्य पञ्च, द्वौन्द्रियस्य षट् तदपर्याप्तस्य चत्वारः,
एकेन्द्रियस्य चत्वारः तदपर्याप्तस्य त्रयः । सयोगकेवलीनः चत्वारः वाक्कायायुरुच्छ्वासनिश्वासाख्याः । तस्यैव

बारह, असंज्ञीका एक, आहारकके तेरह और अनाहारकके पाँच गुणस्थानोंमें सामान्य गुण-
स्थानोंमें कहे गये क्रमके अनुसार आलाप कर लेना चाहिए ॥७२४॥

गुणस्थान चौदह, मूल जीवसमास चौदह उनमें सात पर्याप्त, सात अपर्याप्त, संज्ञीके

३० पर्याप्त अवस्थामें छह पर्याप्तियाँ और अपर्याप्त अवस्थामें छह अपर्याप्तियाँ, इसी प्रकार
असंज्ञी और विकलत्रयके पाँच पर्याप्तियाँ, पाँच अपर्याप्तियाँ । एकेन्द्रियके चार पर्याप्तियाँ,
चार अपर्याप्तियाँ, संज्ञीके प्राण दस, संज्ञी अपर्याप्तके सात, असंज्ञीके नौ, असंज्ञी
अपर्याप्तके सात, चतुरिन्द्रियके आठ, अपर्याप्तके छह, तेइन्द्रियके सात, अपर्याप्तके पाँच,
दोइन्द्रियके छह, उसी अपर्याप्तके चार, एकेन्द्रियके चार, उसी अपर्याप्तके तीन । सयोग-
३५ केवलीके चार प्राण वचन, काय, आयु, उच्छ्वास-निश्वास, उसीके पुनः मिश्रकाय और आयु ।

स्थानदोळे मिश्रकाय प्राणंगळेरडुं अयोगिकेवल्लिगुणस्थानदायुष्प्राणमोडुं नाल्कुं संज्ञेगळुं नाल्कुं गतिगळुं अण्डुमिद्वियंगळुं । आरुकायंगळुं पर्याप्तयोगंगळुं पनोडुं । अपर्याप्तयोगंगळुं नाल्कुं मूरुवेदंगळुं नाल्कुं कषायंगळुं एंडुं ज्ञानंगळुं एळु संयमंगळुं नाल्कुं दर्शनंगळुं आरुं लेश्यंगळुं यरडुं भव्यंगळुं आरुं सम्यक्त्वंगळुं येरडुं संज्ञेगळुं यरडुमाहारंगळुं । पन्नरडुमुपयोगंगळुं एंबी समुच्चयं गुणस्थानंगळोळं मार्गणास्थानंगळोळं यथायोग्यंगळानि प्ररूपिसल्पडुवुवलि संदष्टि :—

गु । प । जी । ७ । अ ७ । प ६ प्राणंगळु १० । ७ । ९ । ७ । ८ ।
१४ । अ । ६ । प ५ । अ ५ । प ४

६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । स २ । अ १ । संज्ञेगळुनाल्कु ४ । गतिगळु नाल्कु ४ । इन्द्रिय ५ । काय ६ । यो ११ । ४ । वे ३ । क । ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ ॥

जीवसमासेयोळु विशेषमं पेळदपं :—

ओघे आदेसे वा सण्णी पज्जंतगा हवे जत्थ ।

१०

तत्थ य उणवीसंता इगिबित्तिगुणिदा हवे ठाणा ॥७२७॥

ओघे आदेशे वा संज्ञिपर्यन्ता भवेयुर्ध्वं तत्र चैकान्तविशत्यंता एकद्वित्रिगुणिता भवेयुः- स्थानानि ॥

सामान्यदोळं विशेषदोळं संज्ञिपर्यन्तमाद मूलजीवसमासंगळावेड्योळु पेळल्पडुगुवलि एकान्तविशतिअंतमाव उत्तरजीवसमासस्थानविकल्पंगळु एकद्वित्रिगुणितमादोडे सर्वजीवसमास-

१५

स्थानविकल्पंगळुपुवु । सा १ । त्र १ । स्था १ । ए १ । वि १ । सं १ । ए १ । वि १ । अ १ । सं १ ।

पुनः मिश्रकायायुषो, अयोगस्य आयुर्नामैकः । संज्ञाश्चतस्रः, गतयः चतस्रः, इन्द्रियाणि पञ्च, कायाः षट्, योगाः पर्याप्ता एकादश, अपर्याप्ताश्चत्वारः, वेदाः त्रयः, कषायाश्चत्वारः, ज्ञानानि अष्टौ, संयमाः सप्त, दर्शनानि चत्वारि, लेस्याः षट्, भव्यद्वयं, सम्यक्त्वानि षट्, संज्ञिद्वयं आहारद्वयं उपयोगा द्वादश-एते सर्वे समुच्चयं गुणस्थानेषु मार्गणास्थानेषु च यथायोग्यं प्ररूपयितव्याः ॥७२५-७२६॥ जीवसमासेषु विशेषमाह—

२०

सामान्ये विशेषे वा संज्ञिपर्यन्ता मूलजीवसमासाः यत्र निरूप्यन्ते तत्र एकाश्विशत्यन्ता उत्तरजीव- समासस्थानविकल्पा एकद्वित्रिगुणिताः संतः सर्वजीवसमासस्थानविकल्पा भवन्ति ।

अयोगीके एक आयुप्राण है । संज्ञा चार, गति चार, इन्द्रियाँ पाँच, काय छह, पर्याप्तयोग ग्यारह, अपर्याप्त चार, वेद तीन, कषाय चार, ज्ञान आठ, संयम सात, दर्शन चार, लेस्या छह, भव्य-अभव्य, सम्यक्त्व छह, संज्ञी-असंज्ञी, आहारक-अनाहारक, उपयोग बारह । ये सब गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें यथायोग्य प्ररूपणीय हैं ॥७२५-७२६॥

२५

जीवसमासोंमें विशेष कहते हैं—

गुणस्थानों या मार्गणाओंमें जहाँ संक्षीपर्यन्त मूल जीवसमास कहे जायें, वहाँ उन्नीस पर्यन्त उत्तर जीवसमास स्थानके विकल्पोंको एक सामान्य, दो पर्याप्त-अपर्याप्त और तीन

१. म गु. जी. प ६ । ६ ।
१४ । ७ । ७ । ५ । ५ ।

३०

॥
 ए१। बि१। ति१। च१। पं१। पृ१। अ१। ते१। वा१। व१। त्र१। पृ१। अ१।
 ॥
 ते१। वा१। व१। बि१। स१। पृ१। अ१। ते१। वा१। व१। बि१। अ१। सं१।
 पृ१। अ१। ते१। वा१। व१। बि१। ति१। च१। पं१। पृ१। अ१। ते१। वा१।
 ॥
 व१। बि१। ति१। च१। अ१। सं१। पृ२। अ२। ते२। वा२। व२। त्र१। पृ२।
 ॥
 ५ अ२। ते२। वा२। व२। बि१। स१। पृ२। अ२। ते२। वा२। व२। बि१। सं१।
 पृ२। अ२। ते२। वा२। व२। बि१। ति१। च१। पं१। पृ२। अ२। ते२। वा२।
 ॥
 व२। बि१। ति१। च१। ति१। च१। अ१। सं१। पृ२। अ२। ते२। वा२। नि२।
 ॥
 च२। प्र१। बि१। अ१। सं१। पृ२। अ२। ते२। वा२। नि२। च२। प्र१। बि१।
 ॥
 ति१। च१। पं१। पृ२। अ२। ते२। वा२। नि२। च२। प्र१। बि१। ति१। च१।
 ॥
 १० अ१। सं१। पृ२। अ२। ते२। वा२। नि२। च२। प्र२। बि१। ति१। च१।
 ॥
 अ१। सं१।

१। २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १७।
 १८। १९॥ गुणकारसामान्यविदमो बु१। युति १९०। २। ४। ६। ८। १०। १२। १४। १६।
 १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२। ३४। ३६। ३८॥ गुणकाररयुति ३८०। ३। ६।

सा १ त्र १ स्था १ ए १ वि १ सं १ ए १ वि १। अ १ सं १ ए १ वि १ ति १ च १ पं १ पृ १
 १५ अ १ ते १ वा १ व १ त्र १ पृ १ अ १ ते १ वा १ व १ बि १ सं १ पृ १ अ १ ते १ वा १ व १ बि १।
 अ १ सं १ पृ १ अ १ ते १ वा १ व १ बि १ ति १ च १ पं १। पृ १ अ १ ते १ वा १ व १ बि १ ति १
 च १ अ १ सं १ पृ २ अ २ ते २ वा २ व २ त्र १ पृ २ अ २ ते २ वा २ व २ बि १ सं १। पृ २ अ २
 ते २ वा २ व २ बि १ अ १ सं १। पृ २ अ २ ते २ वा २ व २ बि १ ति १ च १ पं १। पृ २ अ २
 ते २ वा २ व २ बि १ ति १ च १ अ १ पं १। पृ २ अ २ ते २ वा २ नि २ च २ प्र १ वि १ अ १
 २० सं १। पृ २ अ २ ते २ वा २ नि २ च २ प्र १ बि १ ति १ च १ पं १। पृ २ अ २ ते २ वा २ नि २
 च २ प्र १ बि १ ति १ च १ अ १ सं १। पृ २ अ २ ते २ वा २ नि २ च २ प्र २ बि १ ति १ च १
 अ १ सं १। १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९। गुणकारः सामान्यत

सामान्य पर्याप्त-अपर्याप्तसे गुणा करनेपर समस्त जीवसमास स्थानके विकल्प होते हैं।
 एकसे लेकर उन्नीस तकके विकल्पोंको एकसे गुणा करनेपर उतने ही रहते हैं १, २, ३, ४,
 ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९। इन सबका जोड़ १९०

१. इवु पर्याप्तगलोदे भेदवु। २. पर्याप्तापर्याप्तभेददि द्विगुणंगलु। ३. इवु पर्याप्तनिवृत्यपर्याप्त-
 लब्ध्यपर्याप्तभेददित्रिगुणितंगलु।

९।१२।१५।१८।२१।२४।२७।३०।३३।३६।३९।४२।४५।४८।५१।५४।
५७॥ गुणकार ३ युति ५७०॥ इतु गुणस्थानंगळोळु मार्गणास्थानंगळोळं विंशतिविधं गळु
योजिसलपडुगुमदे ते दोडे :—

वीरमुहकमलणिग्गयसयलसुयग्गहणपयडणसमत्थं ।

णमिऊण मोदममहं सिद्धांतालावमणुवोच्छं ॥७२८॥

वीरमुखकमलनिर्गतसकलश्रुतग्रहणप्रकटनसमर्थं । नत्वा गौतममहं सिद्धांतालापमनु-
वक्ष्यामि ॥

सूत्रसूचितंगळप्प विंशतिविधंगळालापनिरुपणे माडलपडुवलि मोदळोळं गुणस्थानदिवं
येळलपडुगुमदे ते दोडे पदिनालकुं गुणस्थानवर्तिगळुं गुणस्थानातीतरुगळुमोळरु । पदिनालकुं जीव-
समासंगळनुळरुमतोतजीवसमासरुगळुमोळरु षट्पर्याप्तिगळोळकूडिदरुं । षट्पर्याप्तिगुत्तरुं १०
पंचपंचपर्याप्तिपर्याप्तिगुत्तरुं । चतुश्चतुःपर्याप्तिपर्याप्तिगुत्तरुगळुमोळरु । अतीतपर्याप्तिरुगळु-
मोळरु । दशप्राण । सप्तप्राण । नवप्राण । नवप्राण । सप्तप्राण । अष्टप्राण । षट्प्राण । सप्तप्राण ।
पंचप्राण । षट्प्राण । चतुःप्राण । चतुःप्राण । त्रिप्राण । चतुःप्राण । द्विप्राण । एकप्राण । युतरु-
मतोतप्राणरुगळुमोळरु । चतुर्विधसंज्ञायुत्तरुं । क्षीणसंज्ञरुगळुमोळरु । चतुर्गतिजीवंगळुं
सिद्धगतिजीवंगळुमोळरु ।

एकेंद्रियादिपंचजातियुतजीवंगळुमतोतजातिगळुमोळरु । पृथ्वीकायिकादिषट्कायिकंगळु-
मतोतकायिकंगळुमोळरु । पंचदशयोगयुत्तरुमयोगरुगळुमोळरु । त्रिवेदिगळुमपगतवेदगळुमोळरु ।

एकः १ । युतिः १९० । २ ४ ६ ८ १० १२ १४ १६ १८ २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२ ३४ ३६ ३८
गुणकारः २ युतिः ३८० । ३ ६ ९ १२ १५ १८ २१ २४ २७ ३० ३३ ३६ ३९ ४२ ४५ ४८ ५१ ५४ ५७
गुणकारः ३ । युतिः ५७० ॥७२७॥ इतोऽग्रे गुणस्थानेषु मार्गणास्थानेषु च ते गुणजीवेत्यादिविंशतिभेदा २०
योज्यन्ते तद्यथा—

तत्र गुणस्थानेषु यथा तावच्चतुर्दशगुणस्थानजीवाः तदतीताश्च सन्ति । चतुर्दशजीवसमासास्तदतीताश्च
सन्ति । षट् षट् पञ्च पञ्चचतुश्चतुः पर्याप्तिपर्याप्तिजीवाः तदतीताश्च सन्ति । दशसप्तनवसप्ताष्टसप्तपञ्चषट्च-
तुश्चतुस्त्रिचतुर्द्वयैकप्राणाः तदतीताश्च सन्ति । चतुःसंज्ञाः तदतीताश्च सन्ति । चतुर्गतिकाः सिद्धाश्च सन्ति ।

होता है । इन्हें दोसे गुणा करनेपर सबका जोड़ ३८० होता है और तीनसे गुणा करनेपर २५
सबका जोड़ ५७० होता है ॥७२७॥

यहाँसे आगे गुणस्थानोंमें और मार्गणाओंमें गुणस्थान जीवसमास इत्यादि बीस
भेदोंकी योजना करते हैं—

वर्धमान स्वामीके मुखरूपी कमलसे निकले सकलश्रुतको ग्रहण और प्रकट करनेमें
समर्थ गौतम स्वामीको नमस्कार करके सिद्धान्तालापको कहूँगा ।

गुणस्थानोंमें जैसे चौदह गुणस्थानवर्ती जीव हैं तथा गुणस्थानसे रहित सिद्ध हैं । चौदह
जीवसमाससे युक्त जीव हैं और उनसे रहित जीव हैं । छह-छह, पाँच-पाँच, चार-चार पर्याप्ति
और अपर्याप्तिसे युक्त जीव हैं और उनसे रहित जीव हैं । दस सात, नौ सात, आठ छह,
सात पाँच, छह चार, चार तीन, चार दो और एक प्राणके धारी जीव हैं और उनसे रहित
जीव हैं । चार संज्ञावाले और उनसे रहित जीव हैं । चार गतिवाले और गतिरहित सिद्ध ३५

- चतुःकषायिगळु मकषायरुमोळरु । अष्टज्ञानिगळु मोळरु । सप्तसंयमरुगळु मतीतसंयमरुगळु -
मोळरु । चतुर्दशनिगळु मोळरु । द्रव्यभावभेदषड्लेश्यरुगळु मलेश्यरुगळु मोळरु । भव्यसिद्धरुगळु मभ-
व्यसिद्धरुगळु मतीतभव्याभव्यसिद्धरुगळु मोळरु । षड्विधसम्यक्त्वयुक्तरुगळु मोळरु । संज्ञिगळु असं-
ज्ञिगळु मतिक्रांतसंज्ञ्यसंज्ञिगळु मोळरु । आहारिगळु मनाहारिगळु मोळरु । साकारोपयोगयुक्तरुगळु -
५ मनाकारोपयोगयुक्तरुगळु । युगपत्साकारानाकारयोगयुक्तरुगळु मोळरु । इन्नु पर्याप्तविशिष्टगुणस्थाना-
लापं विवक्षितमागळु पदिनालकुं गुणस्थानिगळु मोळरु । अतीतगुणस्थानरित्लेके दोडेपर्याप्तिरोळु
तदालापासंभवपप्पुदरिदं । पर्याप्तगुणस्थानिगळु गो १४ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ ।
८ । ६ । ७ । ४ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ११ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ ।
६ भा
म २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । अपर्याप्तगुणस्थानिगळु गो ५ । मि । सा । अ । प्र ।
१० सयोगी । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ ।
योग ४ । औ मि । वे मि । आ मि । कार्मण । वे ३ । कषा ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । म । भ्रु । अ ।

- पञ्चजातयः तस्तीताश्च संति । षट्कायिकास्तदतीताश्च संति । पञ्चदशयोगाः अयोगाश्च संति । त्रिवेदाः
तदतीताश्च संति । चतुःकषायाः अकषायाश्च संति । अष्टज्ञानाः संति । सप्तसंयमास्तदतीताश्च संति । चतु-
र्दशनाः संति । द्रव्यभावषड्लेश्याः अलेश्याश्च संति । भव्यसिद्धाः अभव्यसिद्धाः अतीततद्भावाश्च संति ।
१५ षट्सम्यक्त्वाश्च संति । संज्ञिनोऽसंज्ञिनोऽतीततद्भावाश्च संति । आहारिणोऽनाहारिणश्च संति । साकारोपयोगाः
अनाकारोपयोगाः युगपदुभयोपयोगाश्च संति । अथ पर्याप्तविशिष्टगुणस्थानालाप उच्यते-तत्र चतुर्दशगुण-
स्थानिनः संति न च तदतीताः पर्याप्तिषु तदालापासंभवात्—

- पर्याप्तगुणस्थानिनां गु १४ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ ।
इ ५ । का ६ । यो ११ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । म २ । स ६ । सं २ । आ १ ।
भा ६
२० उ १२ । अपर्याप्तगुणस्थानिनां गु ५ मि सा अ प्र स । जी ७ अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ ।
सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ४ औमि वैमि जामि कार्म । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु कु म भ्रु अ के ।

- हैं । पाँच जातिवाले और उनसे रहित जीव हैं । छह कायिक जीव और उनसे रहित जीव
हैं । पन्द्रह योगवाले जीव और योगरहित जीव हैं । तीन वेदवाले जीव और उनसे रहित
जीव हैं । चार कषायवाले जीव और कषायरहित जीव हैं । आठ ज्ञानवाले जीव हैं ।
२५ ज्ञानरहित जीव नहीं हैं । सात संयमसे युक्त जीव और उनसे रहित जीव हैं । चार दर्शन-
वाले जीव हैं । दर्शनसे रहित जीव नहीं हैं । द्रव्य भाव रूप छह लेश्यासे युक्त जीव और
उनसे रहित जीव हैं । भव्यसिद्ध, अभव्यसिद्ध जीव हैं और उन दोनों भावोंसे रहित जीव
हैं । छह सम्यक्त्वयुक्त जीव हैं । सम्यक्त्व रहित जीव नहीं हैं । संज्ञी और असंज्ञी जीव
तथा दोनोंसे रहित जीव हैं । आहारी और अनाहारी जीव हैं । साकार उपयोगी, अनाकार
३० उपयोगी और एक साथ दोनों उपयोगवाले जीव हैं । आगे गुणस्थान और मार्गणास्थानमें
यथायोग्य बीस प्ररूपणा कहते हैं—

विशेष सूचना—टीकाकारने गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें बीस प्ररूपणाओंका
निरूपण सांकेतिक अक्षरोंके द्वारा किया है । उनको आगे अन्तमें नकशों द्वारा अंकित
किया गया है ।

के।स४।अ।सा।छे।यथा।द४ ले २ क।शु॥
भा ६

सर्व्वेसि सुहुमाणं कावोदं सर्व्वविगगहे सुक्का ।
सर्व्वो मिस्सो देहो कवोदवण्णो हवे णियमा ॥

भ २।सं ५। मिथरुच्चिरहित सं २।आ २।उ १०। विभंग ज्ञानसहित मिथ्यादृष्टिगुण-
स्थानवर्त्तिगळ्णे गु १। जी १४ प ६।६।५।५।४।४। प्रा १०।७।९।७।८।६। ५
७।५।६।४।४।३।सं ४।ग ४। इं ५।का ६।यो १३। आहारकद्वयरहित। वे ३।
क ४।ज्ञा ३।कु।कु।वि।सं १।अ।द २। ले ६ भ २।सं १।मि।सं २।आ २।
भा ६
उ ५। पद्व्याप्तमिथ्यादृष्टिगळ्णे। गु १। मि। जी ७। प ६। ५।४। प्रा १०।९।८।
७।६।४॥

सं ४।ग ४। इं ५।का ६।यो १०। वे ३।क ४।ज्ञा ३।कु।कु।वि।सं १।अ।
द २।ले ६।भा ६। भ २।सं १।मि।सं २।आ १।उ ५॥अप्यर्थाप्तमिथ्यादृष्टिगळ्णे १०
गु १।मि।जि ७।पद्व्या।६।५।४। प्रा ७।७।६।५।४।३।सं ४।ग ४। इं ५।
का ६।यो ३।ओ मि वै मि।कार्म्म।वे ३।क ४।ज्ञा २।सं १।अ।द २। ले २ क।
भा ६
शु।भ २।सं १।मि।सं २।आ २।उ ४॥

सासादनगुणस्थानवर्त्तिगळ्णे गु १।सासा।जी २।प।अ।प ६।६। प्रा १०।७।
सं ४।ग ४। इं १।का १।अ।यो १३।म ४।वा ४।ओ २।वै २।का १।वे ३।क ४। १५
ज्ञा ३।कु।कु।वि।सं १।अ।द २।ले ६।भ १।सं १।सा सा।सं १।आ २।
६ भा

सं ४ अ सा छे यथा।द४ ले २ क शु।
भा ६

भ २।स ५। मिथं न हि, सं २।आ २ उ १०। विभङ्गमनःपर्ययी नहि, सामान्यमिथ्यादृष्टीनां ।
गु १।जी १४।प ६।६।५।५।४।४। प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३। सं ४। ग ४। इं ५।
का ६।यो १३ आहारकद्वयं नहि।वे ३।क ४।ज्ञा ३ कु कु वि।सं १ अ।द १।ले ६।भ २ स १ २०
भा ६

मि।सं २।आ २।उ ५।तत्पर्याप्तानां गु १।जी ७।प।६ ५ ४ प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४।सं ४।
ग ४। इं ५।का ६।यो १०।वे ३।क ४।ज्ञा ३ कु कु वि।सं १।आ।द २।ले ६।भ २।
भा ६

स १ मि।सं २।आ १।उ ५। तदपर्याप्तानां-गु १।जी ७।प ६ ५ ४।प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३।
सं ४।ग ४। इं ५। का ६।यो ३।ओमि।वैमि।का।वे ३।क ४।ज्ञा २।सं १ अ।द २
ले २।क।शु।भ २।स १ मि।सं २।आ २।उ ४। सासादनानां-गु १ सासा।जी २ प।अ। २५
भा ६

प ६।६।प्रा।१० ७।सं ४।ग ४। इं १ प।का १।यो १३।म ४।वा ४।ओ २।वै २।
का १।वे ३।क ४।ज्ञा ३ कु, कु, वि।सं १ अ।द २ ले ६।भ १।स १ सासा।सं १ आ २।
भा ६

उ ५ । पथ्यामिकसासादनगुणस्थानवर्तिगळ्णे । गु १ । सा सा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ३ । कु । कु । मि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा सा । सं १ । आ १ । उ ५ ।
भा ६

अपथ्यामिकसासादनगुणस्थानवर्तिगळ्णे । गु १ । अ । प । ६ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ ग ३ । ति ।
५ म । दे । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
सं । अ । द २ । ले २ । क । शु । भ १ । सं १ । या सा । पं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्थानवर्तिगळ्णे । गु १ । मिश्र । जी १ । प । प ६ । प । प्रा १० ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । मि म । मि श्र । मि अ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ ।
२ ६

१० मिश्ररुचि । सं १ । आ १ उ ६ ॥

असंयतगुणस्थानवर्तिगळ्णे । गु १ । अ । सं । जी २ । प । अ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । म ४ । व ४ । औ २ । वै २ । का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ ॥ ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे ।
भा ६

क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

१५ असंयतगुणस्थानवर्तिपथ्याप्तासंयतसम्यग्दृष्टिगळ्णे । गु १ । असं । जी १ । प । प ६ ।
प । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । व ४ । औ का १ । वै
का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ ।
भा ६

सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ उ ६ ॥

उ ५ । तत्पथ्याप्तानां—गु १ सासा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १०
२० म ४ । वा ४ । औका १ । वैका १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ ।
भा ६

स १ सासा । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपथ्याप्तानां गु १ । सासा । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ ।
ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ त्र । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ ।
द २ । ले २ क शु । भ १ । स १ सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥ सम्यग्मिथ्यादृष्टीनां गु १ मिश्र । जी
भा ६

१ प । प ६ प । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । म ४ वा ४ औका १ वैका १ ।
२५ वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ मिश्ररुचि । सं १ । आ १ । उ ५ ।
भा ६

असंयतानां—गु १ अ सं । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १३
म ४ वा ४ औ २ वै २ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ ।
भा ६

भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । तत्पथ्याप्तानां—गु १ अ । जी १ प । प ६ प । प्रा १० ।
सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० म ४ वा ४ औका १, वैका १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म

असंयतगुणस्थानवृत्ति अपर्याप्ता संयतसम्पददृष्टिगच्छे । गु १ । अ सं । जी १ । अ । प ।
६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का ।
वे २ । नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ । क । शु ।
भा ६

भ १ । सं ३ । उ वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

देशसंयतगुणस्थानवृत्तिगच्छे गु १ । देश । जी १ । प । प ६ । प । प्रा १० । सं ४ । ५
ग २ । ति । म । इ १ पं । का १ त्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
म । श्रु । अ । सं १ । देश । द ३ । च । अ । अ । ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा ३

आ १ । उ ६ ॥

प्रमत्तगुणस्थानवृत्तिप्रमत्तगे गु १ । प्र । जी २ । प । अ । प ६ । ६ प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग १ । म । इ १ । पं । का १ त्र । यो ११ । म ४ । व ४ । औ । का १ । आ २ । वे ३ । क ४ । १०
ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म ४ । सं ३ । सा । छे । प । द ३ । च । अ । अ । ले ६ भ १ । सं ३ ।
उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥ भा ३

अप्रमत्तगुणस्थानवृत्ति अप्रमत्तगे गु १ । अ प्र जी १ । प । प ६ । प । प्रा १० । सं ३ ।
भ । मै । प । कारणाभावे कार्यस्याप्यभावः एतु सदसद्वैद्यगच्छिगे प्रमत्तनोलुदीरणे व्युत्थितियादु-
दमपुर्दारदमाहारसंज्ञे अप्रमत्तनोलु संभविसदु । ग १ । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । १५
म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । द ३ ।
च । अ । अ । ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

भा ३

अपूर्वकरणगुणस्थानवृत्तिगच्छे । गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ ।

श्रु अ । सं १ । अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—
भा ६

गु १ असं । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इ १ पं । का १ त्र । यो ३ । औमि वैमि २०
का । वे २ नपुं । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले २ क शु । भ १ । स ३ उ
भा ६

वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देशसंयतानां—गु १ देश । जी १ प । प ६ प । प्रा १० प । सं ४ । ग २
ति म । इ १ पं । का १ त्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औका १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ देश ।
द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र । जी २
भा ६

प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ म । इ १ पं । का १ त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । औका १, २५
आ २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे
भा ३

क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १ अप्र । जी १ । प ६ प । प्रा १० । सं ३—भ मै प । कारणा-
भावे कार्यस्याप्यभावात् सदसद्वैद्यनुदीरणात् अत्र आहारसंज्ञा नहि । ग १ म । इ १ पं । का १ त्र । यो ९
म ४ व ४ । औका १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । द ३ च अ अ । ले ६ ।
भा ३

भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । अपूर्वकरणानां—गु १ अपू । जी १ । प ६ । प्रा १० । ३०

મ। હં ૧। પં। કા ૧। ત્ર। યો ૯। વે ૩। ક ૪। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા। છે। દ ૩। ચ। અ।
 અ। લે ૬। મ ૧। સં ૨। ડ। ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

અનિવૃત્તિકરણગુણસ્થાનવર્તિપ્રથમભાગાનિવૃત્તિકરણંગે। ગુ ૧। અનિ। જી ૧। પ ૬।
 પ્રા ૧૦। સં ૨। મૈ। ગ ૧। મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૩। ક ૪। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા છે।
 ૫ દ ૩। લે ૬। મ ૧। સં ૨। ડ। ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

અનિવૃત્તિકરણગુણસ્થાનવર્તિદ્વિતીયભાગાનિવૃત્તિકરણંગે। ગુ ૧। અનિ। જિ ૧। પ ૬।
 પ્રા ૧૦। સં ૧। પ। ગ ૧। મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૪। જ્ઞા ૪। મ। શ્રુ। અ। મ।
 સં ૨। સા। છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સં ૨। ડ। ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

તૃતીયભાગાનિવૃત્તિકરણંગે। ગુ ૧। જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧। પ। ગ ૧। મ। હં ૧।
 ૧૦ કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૩। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા। છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સં ૨। ડ।
 ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

ચતુર્થભાગાનિવૃત્તિકરણંગે। ગુ ૧। અનિ। જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧। પ। ગ ૧।
 મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૨। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા। છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧।
 સં ૨। ડ। ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

૧૫ પંચમભાગાનિવૃત્તિકરણંગે। ગુ ૧। અનિ। જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧। પ। ગ ૧। મ।
 હં ૧। પ ૦। કા ૧। ત્ર। યો ૯। વે ૦। ક ૧। લો। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા। છે। દ ૩। લે ૬
 મ ૧। સં ૨। ડ। ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭॥
 મા ૧

સં ૩। ગ ૧ મ। હં ૧ પં। કા ૧ ત્ર। યો ૯। વે ૩। ક ૪। જ્ઞા ૪। સં ૨। સા છે। દ ૩ ચ અ અ।
 લે ૬। મ ૧। સ ૨। ડ ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭। અનિવૃત્તિકરણપ્રથમભાગવર્તિનાં—ગુ ૧ અનિવૃત્તિ।
 મા ૧
 ૨૦ જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૨ મૈ પ। ગ ૧ મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૩। ક ૪। જ્ઞા ૪। સં ૨
 સા છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સ ૨ ડ ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭। તદ્દ્વિતીયભાગવર્તિનાં—ગુ ૧ અનિ।
 મા ૧

જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧ પ। ગ ૧। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૪। જ્ઞા ૪ મ શ્રુ અ મ।
 સં ૨ સા છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સ ૨ ડ ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭। તૃતીયભાગવર્તિનાં—ગુ ૧
 મા ૧

અનિ। જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧ પ। ગ ૧ મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૩। જ્ઞા ૪।
 ૨૫ સં ૨ સા છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સ ૨ ડ ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭। ચતુર્થભાગવર્તિનાં—ગુ ૧ અનિ।
 મા ૧

જી ૧। પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧ પ। ગ ૧ મ। હં ૧। કા ૧। યો ૯। વે ૦। ક ૨। જ્ઞા ૪। સં ૨ સા
 છે। દ ૩। લે ૬। મ ૧। સ ૨ ડ ક્ષા। સં ૧। આ ૧। ડ ૭। પંચમભાગવર્તિનાં—ગુ ૧ અનિ। જી ૧।
 મા ૧

પ ૬। પ્રા ૧૦। સં ૧ પ। ગ ૧ મ। હં ૧ પં। કા ૧ ત્ર। યો ૯। વે ૦। ક ૧ લો। જ્ઞા ૪। સં ૨ સા

सूक्ष्मसांपरायणगुणस्थानवर्तिसूक्ष्मसांपरायणे गु १ । सू । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । प ।

इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । कषा १ । ज्ञा ४ ॥ सं १ । सू । द ३ । ले ६ । सं २ । उ ।
भा १

उपशान्तकषायगुणस्थानवर्तिउपशान्तकषायणे । गु १ । उ ५ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
त ० । ग १ । म । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । ज्ञा ४ । सं १ । यथा । द ३ । ले ६
भा १

क्षीणकषायगुणस्थानवर्तिक्षीणकषायणे । गु १ । क्षी । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ० ।
ग १ । म । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । ज्ञा ४ ॥ सं १ । यथा । द ३ । ले ६ । भ १ ।
भा १

सयोगिकेवल्लिगुणस्थानवर्तिसयोगिकेवल्लिभट्टारकं गु १ । जी २ । प ६ । प्रा ४ । र । १०
स ० । ग १ । म । इं १ । का १ । यो ७ । म २ । व २ । औ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ ।
के । सं १ । यथा । द १ । के । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ २ । उ २ ॥
भा १

अयोगिकेवल्लिगुणस्थानवर्तिअयोगिकेवल्लिभट्टारकं । गु १ । अयो । जी १ । प ६ । प्रा १ ।
आयुष्य । सं १ । ग १ । म १ । इं १ । प ० । का १ । त्र । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के ।
सं १ । यथा । द १ । के । ले ६ । भ १ ॥ सं १ । क्षा । सं १ । आ १ । अनाहार । उ २ ॥ १५
भा ०

अतीतगुणस्थानसिद्धपरमेष्ठिगच्छे । गु ० जी ० प ० । प्रा ० सं १ । ग १ । सिद्धिगति ।

ले । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । सूक्ष्मसांपरायाणां—गु १ सू । जी १ ।
भा १

प ६ । प्रा १० । सं १ प । ग १ म । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । ज्ञा ४ । सं १ सू । द ३ ।
ले ६ । भ १ । सं २ उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । उपशान्तकषायणां—गु १ उ ५ । जी १ । प ६ ।
भा १

प्रा १० । सं ० । ग १ म । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । ज्ञा ४ । सं १ यथा । द ३ । ले ६ । २०
भा १

भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । क्षीणकषायणां—गु १ क्षी । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
सं ० । ग १ म । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । ज्ञा ४ । सं १ यथा । द ३ । ले ६ । भ १ ।
भा १

सं १ क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । सयोगिकेवल्लिनां—गु १ जी २ । प ६ । प्रा ४ । र । सं ० ग १ म ।
इं १ । का १ । यो ७ । म २ । वा २ । औ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ यथा । द १ । के ।
ले ६ । भ ० । सं १ क्षा । सं ० । आ २ । उ २ । अयोगिकेवल्लिनां—गु १ अयो । जी १ । प ६ । प्रा १ । २५
भा १

आयुष्यं । सं ० । ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ यथा । द १ । के ।
ले ६ । भ ० । सं १ क्षा । सं ० । आ १ अनाहार । उ २ । गुणस्थानातीतसिद्धपरमेष्ठिनां—गु ० जी ० ।
भा ०

इं०। का०। यो०। वे०। क०। जा१। के। सं०। द१। के। ले०। भ०। सं१।
क्षा। सं०। आ१। अनाहार। उ२॥

आदेशद्वौ गत्यनुवादेद्वौ नारकगच्छे सामान्याल्लापं पेच्छत्पडुवल्लि। गु४। जी२।
प०। अ०। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग१। नरकगति। इं१। का१। यो११। म४।
वा४। वै२। का१। वे१। षं०। क४। जा६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं१। अ।
द३। च। अ। अ। ले३। भ२। सं६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं१।
भा३
आ२। उ९॥

सामान्यपर्याप्तनारकगच्छे गु४। जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग१। न। इं१।
का१। यो९। वे१। षं०। क४। जा६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं१। अ। द३।
च। अ। अ। ले१। कृ। भ२। सं६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं२। उ९॥
भा३

सामान्यनारकापर्याप्तकगच्छे गु२। मि। अ। जी२। प६। प्रा७। सं४। ग१। न।
इं१। का१। यो२। वै। मि। का॥ वे१। षं०। क४। जा५। कु। कु। म। श्रु। अ।
सं१। अ। द३। ले२। क। शु। भ२। सं३। मि। वे। क्षा। सं१। आ२। उ८॥
भा३

सामान्यनारकमिथ्यादृष्टिगच्छे गु१। मि। जी२। प०। अ०। प६। ६। प्रा१०। ७।
सं४। ग१। न। इं१। का१। यो११। वे१। षं०। क४। जा३। कु। कु। वि। सं१।
अ। द२। ले३। भ२। सं१। मि। सं१। आ२। उ५॥
भा३

प०। प्रा०। सं०। ग०। इ०। का०। वे०। क०। जा१। के। सं०। द१। के। ले०।
भ०। सं१। क्षा। सं०। आ१। अनाहार। उ२॥

आदेशे गत्यनुवादे नरकगच्छे—गु४। जी२। प०। अ०। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग१। न।
इं१। का१। यो११। म४। वा४। वै२। का१। वे१। षं०। क४। जा६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं१।
अ। द३। च। अ। अ। ले३। पर्याप्तेष्वपरि कृष्णलेख्या एवैव अपर्याप्तकाले कपोतलेख्या विग्रहगतौ शुक्ललेख्या
भा३

इति द्रव्यलेख्यात्रयः। भ२। सं६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं१। आ२। उ९। तत्पर्याप्तानां—गु४।
जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग१। न। इं१। का१। यो९। वे१। षं०। क४। जा६। कु। कु। वि। म।
श्रु। अ। सं१। अ। द३। च। अ। अ। ले१। कृ। भ२। सं६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं१। आ१। उ९।
भा३

तदपर्याप्तानां—गु२। मि। अ। जी१। प६। अ। प्रा७। अ। सं४। ग१। न। इं१। का१। यो२।
वैमि। क। वे१। षं०। क४। जा५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं१। अ। द३। ले२। क। शु। भ२। सं३। मि। वे। क्षा।
भा३

सं१। आ२। उ८। तन्मिथ्यादृष्टीनां—गु१। मि। जी२। प०। अ०। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग१। न।
इं१। का१। योग११। वे१। षं०। क४। जा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। ले३। भ२। सं१।
भा३

१. कृष्ण कपोत शुक्ल।

सामान्यनारकपदपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगन्धे । गु १ मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै । का १ । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा ३ ।
कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले १ कृ भ २ । सं १ । मिथ्यारुचि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा ३

सामान्यनारकापदपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगन्धे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग १ नरक । इ १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ ष ० । क ४ । ज्ञा २ । कु । ५
कु । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मिथ्यारुचि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अ शु

सामान्यनारकसासावनसम्यग्दृष्टिगन्धे । गु १ । सा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग १ न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । वै का १ । वे ष ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु ।
वि । सं १ । अ । द २ । ले १ कृ भ १ । सं १ । सासावनरुचि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा ३

नारकसामान्यमिश्रणे । गु १ । जि १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । १०
यो ९ । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा ३ । मिश्र । सं १ । अ । द २ । ले १ कृ भ १ । सं १ ।
मिश्र । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३

नारकसामान्यासंयतणे । गु १ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
न । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । वै २ का १ । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा ३ । म । शु ।
अ । सं १ । अ । द ३ । ले ३ कृ । क । शु । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । १५
भा ३ अ शु
उ ६ ॥

मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ ।
का १ । यो ९ । म ४, वा ४, वै का १ । वे १ ष । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले १ कृ ।
भा ३

भ २ । सं १ मिथ्यारुचि । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां गु १ मि । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७
अ । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो २ । वै मि का । वे १ ष । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । २०
द २ ले २ । कृ शु भ २ । सं १ मिथ्यारुचि । सं १ । आ २ । उ ४ । सासादनानां—गु १ सा । जी १ प
भा ३

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो ९ म ४, वा ४, वै का १ । वे १ ष । क ४ । ज्ञा ३
कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले १ कृ । भ १ । सं १ सासादनरुचि । सं १ । आ १ उ ५ । मिश्राणां—
भा ३

गु १ मिश्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो ९ । वे १ ष । क ४ । ज्ञा ३
मिश्राणि सं १ अ । द २ । ले १ कृ । भ १ । सं १ मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ असंयतानां—गु १ । २५
भा ३

जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ११ । म ४, वा ४ वै २ का १ ।
वे १ ष । क ४ । ज्ञा ३ म शु अ । सं १ अ । द ३ ले ३ कृ क शु भ १ । सं ३ उ, वे क्षा । सं १ ।
भा ३ अ शुभ

सामान्यनारकपर्याप्तासंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ ।
का १ । यो ९ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ३ म । श्रु । अ । सं १ अ । द ३ । ले १ भ १ । सम्प ३,
भा ३
उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ५ ६ ॥

सामान्यनारकाऽपर्याप्तासंयतंगे । गुण १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
५ ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । षं ० । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । द ३ । ले २ क शु । भ १ । सं २ । वे क्षा ॥ सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा १ कपो

घर्मेय सामान्यनारकगर्गे । गु ४ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १
न । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । वै २ । का १ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु ।
वि । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले ३ कृ । क । शु । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
भा १

१० घर्मेय सामान्यनारकपर्याप्तिकर्गे । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ
१ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै का १ । वे १ । षं ० । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । अ । द ३ ।
ले १ कृ भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
भा १ कृ

घर्मेय सामान्यनारकापर्याप्तिकर्गे । गु २ । मि । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
१५ सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । षं ० । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म ।
श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले २ क शु । भ २ । स ३ । मि । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥
भा १ क

आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो ९ ।
वे १ षं । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ । ले १ कृ । म १ । स ३ । उ वे क्षा । सं १ ।
भा ३ अ

आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ ।
२० यो २ । वै मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ३ म, श्रु, अ । सं १ अ । द ३ । ले २ क शु । भ १ स २ वे ।
भा ३ अशुभ

क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । घर्मानारकाणां—गु ४ । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ न ।
इ १ । का १ । यो ११ । म ४ वा ४ वै २ का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ । सं १
अ । द ३ । ले ३ क क शु । भ २ स ६ । सं १ आ २ । उ ९ । तत्पर्याप्तानां—गु ४ । जी १ प । प ६ ।
भा १ क

प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ वा ४ वै का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ६ ।
२५ सं १ अ । द ३ । ले १ कृ । भ २ । स ६ । सं १ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ मि अ । जी १
भा १ क

अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ न । इ १ । का १ । यो २ वै मि । का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ५ ।
कु कु म श्रु अ । सं १ अ । द ३ । ले २ क शु । भ २ । स ३ मि वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ।
भा १ क

घर्म्येय मिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । न ।
इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । वै २ । का १ । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
सं १ । अ । द २ । ले ३ कृ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

भा १ क

घर्म्येय नारकपर्याप्तकमिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
न । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै का १ । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । ५
सं १ । अ । द २ । ले १ भ २ । सं १ । मिथ्यारुचि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

भा १ क

घर्म्येयनारकापर्याप्तकमिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । जी १ । प ६ । अ प्रा ७ । अ । सं ४ । ग
१ । इं १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । क षा ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले
भा १ क
२ क शु । भ २ । सं १ । सं १ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥

घर्म्येय पर्याप्तसादानंगे गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । १०
यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । द २ । ले १ कृ भ १ । सं १ । सं । आ
भा १ क
१ उ ५ ॥ कु । कु । वि । च । अ ॥

घर्म्येय मिश्रंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो
९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले १ कृ भ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ ।

भा १ क

घर्म्येय असंयतंगे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । १५

तन्मिथ्यादृशां—गु १ जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ न । इं १ । का १ । यो ११ । म ४
वा ४ वै २ का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ३ कृ क शु । भ २ । सं १
भा १ क

मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ न । इं १ ।
का १ । यो ९ । म ४, वा ४ । वै का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले १ कृ ।
भा १ क

भ २ । सं १ मिथ्यारुचिः । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ अ । २०
सं ४ । ग १ न । इं १ । का १ । यो २ । वै मि का । वे १ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । द २ ।
ले २ क शु । भ २ । सं १ । सं १ । आ २ । उ ४ कु कु च अ । सासादनानां—गु १ । जी १ । प ६ ।
भा १ क

प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ । द २ ।
ले १ कृ । अ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ कु कु वि च अ । मिश्राणां—गु १ । जी १ । प ६ ।
भा १ क

प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ । द २ । २५
ले १ कृ । भ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ।
भा १ क

यो ११। वे १। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ। सं १। द ३। ले ३ कृ क शु भ १। सं ३। उ
भा १ क
वे क्षा ॥ सं १। आ २। उ ६ ॥

धर्मेय पथ्यामिनारकाऽसंयतंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का
१। यो न। वे १। क ४। ज्ञा ३। सं १। द ३। ले १ कृ भ १। सं ३। उ वे। क्षा ॥ सं १।
भा १ क

५ आ १। उ ६ ॥

धर्मेय नारकापथ्यामिासंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे। गु १। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७।
अ। सं ४। ग १। इं १। का १। यो २। मि का। वे १। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ। सं १।
द ३। ले २ क शु। भ १। सं २। वे। क्षा। सं १। आ २। उ ६ ॥
भा १ क

१० द्वितीयादि पृथ्विनारकसामान्यके। गु ४। जी २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग
१। इं १। का १। यो ११। वे १। क ४। ज्ञा ६। म। श्रु। अ। कु। कु। वि। सं १। द ३।
च। अ। अ। ले ३
भा १

स्वस्वभूम्यनतिक्रमेण भावापेक्षया एका। द्रव्यापेक्षया। कृ क शु। भ २। सं ५। उ।
वे मि। सा। मि। सं १। आ २। उ ९। म। श्रु। अ। कु। कु। वि। च। अ। अ ॥

१५ द्वितीयादिपृथ्विगल नारकपथ्यामिर्गो। गु ४। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे १। क ४। ज्ञा ६। म। श्रु। अ। कु। कु। वि। सं १। द ३।
ले १ कृ भ २। सं ५। उ। वे। मि। सा। मि। सं १। आ १। उ
१ भावापेक्षयास्वस्वभूम्यनतिक्रमेण
९। म। श्रु। अ। कु। कु। वि। च। अ। अ ॥

सं ४। ग १। इं १। का १। यो ११। वे १। क ४। ज्ञा ३ म श्रु अ। सं १। द ३। ले ३ कृ क शु।
भा १ क

२० भ १। स ३ उ वे क्षा। सं १। आ २। उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग १। इं १। का १। यो ९। वे १। क ४। ज्ञा ३। सं १। द ३। ले १ कृ भ १। स ३ उ, वे,
भा १ क

क्षा, सं १ आ १, उ ६ तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो २ वे मि का, वे १, क ४, ज्ञा ३, म श्रु अ, सं १, द ३, ले २ क शु, भ १, स २ वे क्षा, सं १,
भा १ क

२५ आ २, उ ६, द्वितीयादिपृथ्वीनारकाणां—गु ४, जी २, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो ११, वे १, क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १, द ३ च अ अ, ले ३ स्वस्वभूम्यनतिक्रमेण भावापेक्षया
भा ३

एका द्रव्यापेक्षया कृ क शु, भ २, स ५ उ वे मि सा मि, सं १, आ २, उ ९ म श्रु अ कु कु वि च अ अ,
तत्पर्याप्तानां—गु ४, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १ का १, यो ९, वे १, क ४, ज्ञा ६ म श्रु अ
कु कु वि, सं १, द ३, ले १ कृ भ २, स ५ उ वे मि सा मि सं १, आ १, उ ९ म
भा १ स्वस्वभूम्यनतिक्रमेण

द्वितीयादिपृथ्वीनारकापर्याप्रणो । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । द २ । ले २ क शु
१ भा स्वस्वयोग्या
भ २ । सं १ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥

द्वितीयादिपृथ्वीनारकसामान्यमिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । अ
प्रा १० ॥ ७ । सं ४ । ग १ न । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । व ४ । वे २ । का १ । ५
वे १ । षं । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ३ कृ क शु भ २ ।
भा स्वयोग्या
सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥

द्वितीयादिपृथ्वीनारकपर्याप्रमिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग
१ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । द २ । ले १ कृ
१ भा स्वयोग्या
भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

द्वितीयादिपृथ्वीनारकापर्याप्रमिथ्यादृष्टिगल्गे । गु १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । द २
ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
१ स्वस्वयोग्या

द्वितीयादि पृथ्वीनारकसासादनगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । द २ । ले १ कृ भ १ । सं १ । १५
१ स्वस्वयोग्या
सा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

धृ अ कु कु वि च अ अ, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो २, वे मि का, वे १, क ४, जा २ कु कु, सं १, द २, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं १, आ
भा १ स्वस्वयोग्या

२, उ ४ कु कु च अ, तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १ न, इं १,
का १, यो ११ म ४, वा, ४, वे २ का १ वे १ षं, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, २०
ले ३ कृ क शु भ २ स १ मि सं १ आ २ १, उ ५ कु कु वि च अ, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६,
भा १ स्वस्वयोग्या

प्रा १०, सं ४, ग १ इं १, का १, यो ९, वे १, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १, द २, ले १ कृ,
भा १ स्वस्वयोग्या
भ २, स १ मि, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १,
इं १, का १, यो २, मि का, वे १, क ४, जा २ कु कु, सं १, द २, ले २ क शु, भ २ स १ मि,
भा १ स्वस्वयोग्या

सं १, आ २, उ ४, तत्सासादनानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, २५
वे १, क ४, जा ३, कु कु वि, सं १, द २, ले १ कृ, भ १, स १, सा, सं १, आ १, उ ५
भा १ स्वस्वयोग्या

द्वितीयापृथ्वीनारकसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । गति १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । जा ३ ॥ सं १ । व २ । ले १ । भ १ । सं १ । मिथ १ ।
सं १ । आ १ । उ ५ ॥

द्वितीयादिपृथ्वीनारकाऽसंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
५ ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । जा ३ । म । अ । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ ।
अ । १ । भ १ । सं २ । उ । वे । सं १ । आ । १ । उ ६ । म । अ । अ । च । अ । अ ॥
१

तिथ्यं चरु पंचप्रकारमण्यरवरोळु सामान्यतिथ्यं चरुगच्छे । गु ५ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ ।
५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ६ । ५ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ।
ति १ । इं ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । व ४ । औ २ । का १ । वे ३ । क ४ । जा ६ । म । अ । अ ।
१० कु । कु । वि । सं २ । अ । वे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । द्रव्यदोळु भावदोळुं भ २ । सं ६ ।
भा ६

उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । आ २ । उ ९ । म । अ । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥
तिथ्यं च सामान्यपर्व्याप्तिकर्गे । गु ५ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
६ । ५ । ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ६ । सं २ । व ३ ।
ले ६ । भ २ । स ६ । सं २ । आ १ । उ ९ ॥

६

१५ तिथ्यं च सामान्यापर्व्याप्तिकर्गे । गु ३ । मि । सा । अ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ ।
६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो २ । मिथका । वे ३ । क ४ । जा ५ ।
म । अ । अ । कु । कु । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । क शु । भ २ । सं ४ । मि । सा ।
भा ३ अशु

तत्सम्यग्मिथ्यादृष्टां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १, क ४, जा ३,
सं १, व २, ले १, भ १, स १, मिथं, सं १, आ १, उ ५, तदसंयतानां गु १, जी १, प ६, प्रा १०,
भा १

२० सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १, क ४, जा ३ म अ अ, सं १, अ, व ३, च अ अ । ले १ भ १
भा १
स २ उ वे, सं १ आ १ उ ६ म अ अ च अ अ ।

पञ्चविधतिथ्यं सामान्यानां—गु ५ । जी १४ । प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६
४ ४ ३ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ११ म ४ व ४ औ २ का १ । वे ३ । का ४ । जा ६ कु
कु वि म अ अ । सं २ अ वे । व ३ च अ अ । ले ६ । भ २ । स ६ उ वे सा मि सा मि । सं २ ।
भा ६

२५ आ २ । उ ९ म अ अ कु कु वि अ अ अ । तत्पर्याप्तानां—गु ५ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा १० ९ ८ ७ ६ ।
४ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ६ । सं २ । व ३ । ले ६ । भ २ ।
भा ६

स ६ । सं २ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ ।
सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो २ मिथका । वे ३ । क ४ । जा ५ कु कु म अ अ । सं १ । अ ।

क्षा। वे। सं २। आ २। उ ८। म। ध्रु। अ। कु। कु। च। अ। अ॥

तिर्य्यंचसामान्यमिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
७। ९। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग १। इ ५। का ६। यो ११। वे ३। क ४।
जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। च। अ। ले ६ भ २। सं १। मि। सं २। आ २।
६
उ ५। कु। कु। वि। च। अ॥

५

तिर्य्यंचसामान्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९।
८। ७। ६। ४। सं ४। ग १। ति। इ ५। का ६। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि।
सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २। आ १। उ ५॥

६

तिर्य्यंचसामान्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। मि। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ।
प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग १। ति। इ ५। का ६। यो २। मि। का। वे ३। १०
क ४। जा २। कु। कु। सं १। अ। द २। च। अ। ले २ क शु भ २। सं १। मि। सं २।
भा ३ अशु
आ २। उ ४। कु। कु। च। अ॥

तिर्य्यंचसामान्यसासादनं। गु १। जी २। प ६। ६। प्रा १०। ७॥ सं ४। ग १।
ति। इ १। का १। यो ११। वे ३। क ४। जा ३। सं १। द २। ले ६ भ १। सं १।
६

सा। सं १। आ २। उ ५। कु। कु। वि। च। अ॥

१५

तिर्य्यंचसामान्यसासादनपर्याप्तं। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। ति।
इ १। पं। का १। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। द २। ले ६ भ १। सं १।
६

द ३ च अ अ। ले २ क शु भ २। स ४ मि सा क्षा वे। सं २। आ २। उ ८। म ध्रु अ कु कु च
भा ३ अशुभ

अ अ। तन्मिथ्यादृशां—गु १। जी १४। प ६ ६ ५ ५ ४ ४ प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३
सं ४। ग १। इ ५। का ६। यो ११। वे ३। क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २ च अ। ले ६। २०
भा ६

भ २। स मि, सं २, आ २, उ ५ कु कु वि च अ। तत्पर्याप्तानां—गु १, जी ७, प ६ ५ ४, प्रा १० ९ ८
७ ६ ४, सं ४, ग १ ति, इ ५, का ६, यो ९, वे ३। क ४ जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६ भ २,
भा ६

स १ मि, स २, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ अ, प ६ ५ ४ अ, प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३,
सं ४, ग १ ति, इ ५, का ६, यो २ मि का, वे ३, का ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ,
ले २, क शु, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ कु कु च अ, तत्सासादनानां—गु १, जी २, प ६ ६, २५
भा ३ अशुभ

प्रा १० ७, सं ४, ग १ ति, इ १, का १, यो ११, वे ३, क ४। जा ३, सं १, द २, ले ६, भ १, स
भा ६

१ सा, सं १, आ २, उ ५ कु कु वि च अ, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इ १ पं,

सं १। आ १। उ ५॥

सामान्यतिथ्यंचापथ्यमिसासावनंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा ७। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो २। औ मि। का। वे ३। क ४। जा २। सं १। अ। व २। ले २ क शु। भ १।
३ अशुभ

सं १। सा। सं १। आ २। उ ४॥ कु। कु। च। अ॥

५ सामान्यतिथ्यंचसम्यग्मिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। द २। ले ६ भ १। सं १। सं १
६
आ १। उ ५॥

सामान्यतिथ्यंचासंयतंगे। गु १। जी २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ११। वे ३। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३। च। अ। अ। ले ६
६
१० भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ २। उ ६॥

सामान्यतिथ्यंचासंयतपर्याप्तंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १।
६
आ १। उ ६॥

सामान्यतिथ्यंचापथ्यमिसासंयतंगे। गु १। जी १। प ६। अ। प्रा ७। सं ४। गति १।
१५ इं १। का १। यो २। वे १। पुं। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। च। अ।
अ। ले २ क। शु। भ १। सं २। क्षा। वे। सं १। आ २। उ ६॥
भा १ क

का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, स १, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां
भा ६

गु १, जी १, प ६, प्रा ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ औ मि का, वे ३, क ४, जा २, सं १ अ,
द २, ले २ क शु, भ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ४, कु कु च अ। सम्यग्मिथ्यादृशी—गु १, जी १,
भा ३ अशुभ

२० प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १, द २, ले ६ भ १, स १,
भा ६

सं १, आ १, उ ५। असंयतानां—गु १, जी २, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११,
वे ३, क ४, जा ३, म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ६,
भा ६

तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३ म श्रु
अ, सं १, द ३, ले ६, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ,
भा ६

२५ सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले २ शु क,
भा १ क

सामान्यतिर्य्यचदेशसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । दे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । वे ।
भा शु भ

सं १ । आ १ । उ । ६ । म । श्रु । अ । च । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यचगणै । गु ५ । जी ४ ॥ पंचेंद्रियसंज्ञसंज्ञिपर्याप्ताऽपर्याप्ति ॥ प ६ । ६ ।
प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । वे ३ । क ४ । जा ६ । ५
म । श्रु । अ । कु । कु । वि । सं २ । अ । दे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । उ ।
६

वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । आ २ । उ ९ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यचपर्याप्तिकर्णै । गु ५ । जी २ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ६ । सं २ । अ । दे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ ।
६

सं ६ । उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । आ १ । उ ९ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यचापर्याप्तिकर्णै । गु ३ । मि । सा । अ । जीव २ । प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । १०
७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे ३ । क ४ । जा ५ । म । श्रु । अ ।
कु । कु । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ । कु । शु । भ २ । सं ४ । वे । क्षा । मि । सा ।
भा ३

सं २ । आ २ । उ ८ । म । श्रु । अ । कु । कु । च । अ । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यगमिथ्यादृष्टिगन्धै । गु १ । जी ४ । संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ति । अचंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ति ।
प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे ३ । क ४ । १५
जा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं । २ । आ २ । उ ९ ॥
६

भ १, स २ वे क्षा, सं १, आ २, उ ६ देशसंयतानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १,
का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ दे, द ३, ले ६, भ १, स २ उ वे, सं १, आ १,
भा ३ शुभ

उ ६ म श्रु अ च अ अ, पञ्चेन्द्रियतिर्य्यचगणै—गु ५, जी ४ संज्ञसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६ ५ ५, प्रा १० ७
९ ७, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो ११, वे ३, क ४, जा ६ म श्रु अ कु कु वि, सं २ अ दे, २०
द ३ च अ अ, ले ६, भ २, स ६, उ वे क्षा मि सा मि, सं २, आ २, उ ९ म श्रु अ कु कु वि च अ अ,
भा ६

तत्पर्याप्तानां—गु ५, जी २, प ६ ५, प्रा १० ९, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ६,
स २ अ दे, द ३ च अ अ, ले ६ । भ २, स ६ उ वे क्षा मि सा मि, सं २, आ १, उ ९ म श्रु अ कु कु
भा ६

वि च अ अ, तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी २, प ६ ५ अ, प्रा ७ ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो २ मि का, वे ३, क ४, जा ५ म श्रु अ कु कु, सं १ आ, द ३ च अ अ । ले २ क शु, भ २, स ४ २५
भा ३ अशुभ

वे क्षा मि सा, सं २, आ २, उ ८ म श्रु अ कु कु च अ अ, मिथ्यादृशां—गु १, जी ४, प ६ ६ ५ ५, प्रा
१० ७ ९ ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे ३, क ४, जा ३, सं १, द २, ले ६, भ २, स १
भा ६

पंचेंद्रियतिर्यग्मिथ्यादृष्टिपर्याप्तकर्मे । गु १ । जी २ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० ।
९ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ ।
द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

६

पंचेंद्रियापपर्याप्ततिर्यग्मिथ्यादृष्टिगन्त्रो । गु १ । जी २ । सं १ । प ६ । सं । अ । अ । अ ।
५ । प्रा सं ७ । असंज्ञि = अ ७ । स ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि का । वे ३ । क ४ ।
जा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ ।
भा ३ अ

आ २ । उ ४ ॥

पंचेंद्रियतिर्यग्मिथ्यासादानंगे । गु १ । जी २ । सं = प अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा ।
६

१० सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च अ ॥

पंचेंद्रियतिर्यग्मिथ्यासादानंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । ति ।
इं १ । का १ । यो १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
६

आ १ । उ ५ ॥

पंचेंद्रियतिर्यग्मिथ्यासादानापर्याप्तं । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
१५ का १ । यो २ । मि । का । वे ३ । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च अ ।
ले २ क श भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥
भा ३ अ शु भ

पंचेंद्रियतिर्यग्मिश्रं । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।

मि, सं २, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी २ सं अ, प ६ ५, प्रा १० ९, सं ४, ग १, इं १, का १,
२० यो १, वे ३, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ २ सं १ मि, सं २, आ १, उ ५,
भा ६

तदपर्याप्तानां—गु १ जी २ सं अ, प सं ६ अ ५, प्रा सं ७, अ ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का,
वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु भ २, सं १, सं २, आ २, उ ४,
भा ३ अशुभ

सासादानानां—गु १, जी २ सं प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे ३, क ४,
जा ३, सं १, द २, ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ५ कु कु वि च अ, तत्पर्याप्तानां—गु १,
भा ६

२५ जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो १, वे ३, क ४, जा ३, सं १, द २, ले ६, भ १,
भा ६

स १ सा, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ अ, प ६, प्रा ७, सं ४, ग १, इं १, का १ न,
यो २ मि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ १, स १ सा, सं १,
भा ३ अशु

आ २, उ ४ कु कु च अ, मिश्राणां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो १,

यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ३। मत्यादिमिश्रत्रयं। सं १। अ। व २। च। अ ले ६ भ १। स १
मिश्र सं १। आ १। उ ५ ॥

मत्यादिमिश्रत्रयं चक्षुरचक्षुः ॥ पंचेन्द्रियगसंयतंगे। गु १। जी २। प ६। अ ६। प्रा १०।
७। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ११। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सम्यग्ज्ञानत्रयं सं १। अ।
द ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ६। म। श्रु। अ। च। अ। अ ॥ ५

पंचेन्द्रियतिर्य्यगसंयतपर्याप्तंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ। व ३। ले ६ भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १।
आ १। उ ६ ॥

पंचेन्द्रियतिर्य्यगपर्याप्तासंयतंगे। गु १। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग १। ति। इं १। पं। का १। त्र। यो २। मिश्र। का। वे १। पुं। क ४। ज्ञा ३। १०
म। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। च। अ। अ ले २ क शु भ १। सं २। क्षा। वे। सं १।
भा १ क

आ २। उ ६। म। श्रु। अ। च। अ। अ ॥

पंचेन्द्रियतिर्य्यग्वेशसंयतंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। ति। इं १।
पं। का १ त्र। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। देशसंयम। व ३। ले ६ भ १। सं २।
भा ३

उ। वे। सं १। आ १। उ ६। म। श्रु। अ। अ। च। अ। अ ॥

१५

पंचेन्द्रियतिर्य्यगपर्याप्तकर्गे पंचेन्द्रियतिर्य्यग्वर्गे पेळदंते पेळवुकोळ ॥

वे ३, क ४, ज्ञा ३ मत्यादिमिश्रत्रयं, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ १, स १ मिश्र, सं १, आ १, उ ५,
भा ६

मत्यादिमिश्रत्रयं चक्षुरचक्षुश्च। असंयतानां—गु १, जी २, प ६, अ ६, प्रा १०, अ प्रा ७, सं ४,
ग १, इं १, का १, यो ११, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ। द ३। ले ६। भ १। स ३।
भा ६

सं १। आ २। उ ६ म श्रु अ च अ अ। तत्पर्याप्तानां—गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। २०
इं १। का १। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १ अ। द ३। ले ६ भ १। स ३ उ वे क्षा। सं १।
भा ६

आ १। उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १ जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४। ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र,
यो २ मि का, वे १ पुं, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले २ क शु, भ १ स २ क्षा वे,
भा १ क

सं १, आ २, उ ६ म श्रु अ च अ अ, देशसंयतानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १० सं ४, ग १ ति, इं १,
पं १, का १ त्र, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ वे, द ३, ले ६ भ १, स २ उ वे, सं १, आ १, उ ६ २५
भा ३ शु

म श्रु अ च अ अ, पञ्चेन्द्रियतिर्य्यगपर्याप्तानां-पञ्चेन्द्रियतिर्य्यग्वद्वक्तव्यम्।

पंचेंद्रियतिर्य्यङ्गोनिमतिजीवंगळगे गु ५ । जी ४ । संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ति भेदवि । प ६ ।
 १६ । सं ५ । ५ । अ । सं । प्रा १० । ७ । संज्ञि ९ । ७ । असंज्ञि । सं । ४ । ग १ । इ १ । का १ ।
 योग ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ६ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । सं २ । अ । वे । व ३ । च ।
 अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ५ । उ । वे । मि । सा । मि । सं २ । आ २ । उ ९ । म । श्रु । अ ।
 ६

५ कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

तिर्य्यङ्गोनिमतिपर्याप्तिजीवंगळगे । गु ५ । जी २ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । सं ९ ।
 अ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ६ । म । श्रु ।
 अ । कु । कु । वि । सं २ । अ । वे । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ५ । उ वे । मि । सा । मि ।
 ६

सं २ । आ १ । उ ९ । सं ३ । मि ३ । द ३ । तिर्य्यङ्गपंचेंद्रिययोनिमत्यपर्याप्तिर्गो ॥ गु २ । मि ।
 १० सा । जी २ । संज्ञ्यपर्याप्ता संज्ञ्यपर्याप्ति । प ६ । सं । अ । ५ । अ । प्रा ७ । अ ७ । अ । सं ४ ।
 ग १ । ति । इ १ । पं । का १ । त्र ॥ यो २ । मिश्र । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । कु ।
 कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले २ क शु भ २ । सं २ । मि । सा । सं २ । आ २ । उ ४ ।
 भा ३ अ शु

कु । कु । च । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यङ्गोनिमतिमिथ्यादृष्टिगे । गु १ । मि । जी ४ । संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ति ।
 १५ प ६ । ६ । ५ । ५ । असंज्ञि । प्रा १० । ७ । संज्ञि ९ ॥ ७ । असंज्ञि । सं ४ । ग १ । इ १ । पं ।
 का १ । त्र । यो ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ ।
 ६

मिथ्यात्व । सं २ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥

तिर्य्यङ्गोनिमतीनां—गु ५, जी ४ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तिभेदतः प ६ ६ सं, ५ ५ अ सं, प्रा १० ७
 संज्ञि ९ ७ असंज्ञि, सं ४, ग १, इ १, का १, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ६ म श्रु अ कु कु वि, सं २
 २० अ दे, द ३ च अ अ, ले ६, भ २, स ५ उ वे मि सा मिश्राः, सं २, आ २, उ ९ म श्रु अ कु कु वि च
 ६

अ अ, तत्पर्याप्तानां—गु ५, जी २ सं अ, प ६ ५, प्रा १० सं, ९ अ, सं ४, ग १ ति, इ १ पं, का १ त्र,
 यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ६ म श्रु अ कु कु वि, सं २ अ दे, द ३, ले ६, भ २, स ५ उ वे मि सा
 ६

मिश्राः, सं २, आ १, उ ९ स ३ मि ३ द ३, तदपर्याप्तानां—गु २ मि सा, जी २ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ती, प ६
 सं

अ ५ अ, प्रा ७ अ, ७ अ, सं ४, ग १ ति, इ १ पं, का १ त्र, यो २ मिश्र का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २
 अ सं अ

कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, स २ मि सा, सं २, आ २, उ ४ कु कु च अ, मिथ्या-
 २५ भा ३ अ शु

दृशां—गु १ मि, जी ४ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६ संज्ञि, ५ ५ असंज्ञि, प्रा १० ७ सं, ९ ७ असंज्ञि,
 सं ४, ग १ ति, इ १ पं, का १ त्र, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ आ, द २, ले ६, भ २, स १
 ६

पंचेंद्रियतित्यग्योनिमतिपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी २ । संज्ञिपर्याप्तासंज्ञि-
पर्याप्त । प ६ ॥ संज्ञिपर्याप्तिगच्छ ५ ॥ असंज्ञिपर्याप्तिगच्छ प्रा १० । संज्ञि । ९ । असंज्ञि । सं ४ ।
ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ ।
ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

६

पंचेंद्रियतित्यग्योनिमत्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी २ । संज्ञिपर्याप्तासंज्ञि- ५
पर्याप्त । प ६ । संज्ञिपर्याप्तिगच्छ । ५ । असंज्ञिपर्याप्तिगच्छ प्रा ७ । संज्ञि ७ । असंज्ञि । सं ४ ॥
ग १ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो २ । मिश्र । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ ।
अ । द २ । च । अ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥
भा ३ अशु

पंचेंद्रियतित्यग्योनिमतिसासादनंग । गु १ । सा । जी २ । सं । प । ख । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । १०
अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥ ० ॥

६

पंचेंद्रियतित्यग्योनिमतिसासादनपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ ।
सं १ । आ १ । उ ५ ॥

६

पंचेंद्रियतित्यग्योनिमतिसासादनंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । १५
इं १ । का । यो २ । मिश्र । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ क शु भ १ ।
भा ३ अशुभ
सं १ । सं १ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥

मिथ्यात्वं, सं २, आ २, उ ५ कु कु वि च अ, तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी २ संज्ञिपर्याप्तौ, प ६ संज्ञि
५ असंज्ञि, प्रा १० सं, ९ असंज्ञि, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ कु
कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, सं १ मि, सं २, आ १, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी २ संज्ञि- २०
६

संज्ञिपर्याप्तौ, प ६ संज्ञिपर्याप्तयः, ५ असंज्ञिपर्याप्तयः, प्रा ७ सं, ७ असंज्ञि, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १
त्र, यो २ मिश्र, का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, सं १ मि,
भा ३ अशु

सं २, आ २, उ ४, कु कु च अ, सासादनानां—गु १ सा, जी २ सं प अ, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४,
ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, सं १ सा,
६

सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ २५
स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २, ले ६ भ १, सं १, सं १, आ १, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १ ।
६

प ६ । प्रा ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २,

पंचेंद्रियतिर्य्यग्योनिमतिमिश्रं । गु १ । मिथ । जी १ । पं= । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले ६ भ १ । सं १ ।
मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यग्योनिमत्यसंयतंग । गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
५ का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ भ १ । सं २ । उ ।
वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यग्योनिमतिसंयतासंयतंगे । गु १ । दे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ॥
इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले ६ भ १ । सं २ । उ ।
वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

१० तिर्य्यक्पंचेंद्रियलब्धपद्व्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी २ । सं= । अ । प ६ । ५ । प्रा ७ ।
७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मिथ । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
द २ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशुभ

मनुष्यरु चतुर्व्विकल्पमप्परु । अल्लि सामान्यमनुष्यगो । गु १४ । जी २ । प ६ । ६ ।
प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १३ । वैक्रियिकद्वयरहितं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
१५ सं ७ । द ४ । ले ६ भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १२ ॥
६

सामान्यमनुष्यपद्व्याप्तिकर्गे । गु १४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।

ले २ क शु , भ १, सं १, सं १, आ २, उ ४, कु कु च अ, मिश्राणां—गु १ मिश्रं, जी १ सं प, प ६,
भा ३ अशुभ

प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले ६, भ १, सं १ मिश्रं,
६

सं १, आ १ उ ५, असंयतानां—गु १ अ, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४ ग १, इं १, का १, यो ९, वे १
२० स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३, ले ६ भ १, सं २ उ वे, सं १, आ १, उ ६, संयतासंयतानां—गु १
६

दे, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ वे, द ३,
ले ६, भ १ सं २ उ वे, सं १, आ १, उ ६, तिर्य्यक्पञ्चेंद्रियलब्धपद्व्याप्तानां—गु १ मि, जी २ सं, अ,
भा ३

प ६ ५, प्रा ७ ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मिथ का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २ कु कु । सं १ अ,
द २, ले २ क शु , भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ४, चतुर्व्विधमनुष्येषु सामान्यानां—गु १४, जी २,
भा ३ अशुभ

२५ प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो १३ वैक्रियिकद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७,
द ४, ले ६ भ २, सं ६, सं १, आ २, उ १२, तत्पर्याप्तानां—गु १४, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४,
भा ६

का १। यो ११। वे ३। क ४। जा ८। सं ७। द ४। ले ६ भ २। सं ६। सं १।
आ २। उ १२॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तकर्णे। गु ५। मि। सा। अ। प्र। स। जी १। प ६। अ। प्रा ७।
अ। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ३। औदारिकमिथ आहारकमिथ काम्मणि। वे ३। क ४।
जा ६। म श्रु। अ। के। कु। कु। सं ४। अ। सा। छे। यथाख्यात। द ४। ले क शु भ २। ५
मा ६
सं ४। मि। सा। वे। क्षा। सं १। आ २। उ १०॥ कु। कु। म। श्रु। अ। के। च।
अ। अ। के॥

सामान्यमनुष्यमिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। जी २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो ११। म ४। व ४। औ २। का १। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। द २।
च। अ। ले ६ भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ५॥ १०
६

सामान्यमनुष्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। म।
इं १। पं। का १। त्र। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। द २। ले ६ भ २। सं १।
६
मि। सं १। आ १। उ ५॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। जी १। प ६। अ प्रा ७। अ सं ४। ग १।
म। इं। पं। का १। त्र। यो २। औ मि का १। वे ३। क ४। जा २। सं १। द २ १५
ले २। क। शु। भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ४॥
भा ३। अशुभ

ग १, इं १, का १, यो १०, वे ३, क ४, जा ८, सं ७, द ४, ले ६, भ २, स ६, सं १, आ २, उ १२,
भा ६

तदपर्याप्तानां—गु ५, मि सा अ प्र सं, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ३, औमि
आमि का, वे ३, क ४, जा ६ म श्रु अ के कु कु, सं ४ अ सा छे यथाख्यात, द ४, ले २ क शु, भ २,
भा ६

सं ४ मि सा वे क्षा, सं १ आ २, उ १० कु कु म श्रु अ के च अ अ के, तन्मिथ्यादृशां—गु १, जी २, प ६ २०
६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११ म ४ वा ४ औ २ का १, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ,
द २ च अ, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०,
६

सं ४, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, सं १ मि.
भा ६

सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १ जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र,
यो २ औमि का, वे ३, क ४, जा २, सं १, द २, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ४। २५
भा ३ अशुभ

सामान्यमनुष्यसासादनंगे । गु १ सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । म ।
इ १ । पं का १ । त्र । यो ११ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १
सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यसासादनपर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म ।
इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तिसासादनंग । गु १ । सा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो २ । औ । मिश्र । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व २ ।
ले । क । शु । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशुभ

१० सामान्यमनुष्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिगे । गु १ । मिश्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । गति १ ।
म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ ।
सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यासंयतंगे । गु १ । अ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इ १ । का १ । यो ११ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
६

१५ आ २ । उ ६ ॥

सामान्यमनुष्यपर्याप्तिसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ ।
का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा ।
६

सासादनानां—गु १ सा । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ म । इ १ पं । का १० त्र ।
यो ११ । वे ३ । क ४ ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १, स १ सा, सं १ । आ २ । उ ५ ।
भा ६

२० तत्पर्याप्तानां गु १ सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४, ग १ म, इ १ पं । का १ त्र । यो ९ । वे ३ । क
४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ । ले ६, भ १ । स १ सा । सं १, आ १ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु
भा ६

१ सा । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो २ मि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा
२ । सं १, द २ ले २ क शु, भ १, स १ सा सं १, आ २ । उ ४, सम्यग्मिथ्यादृष्टां—गु १ मि, जी १, प ६,
भा ३ अशु

प्रा १०, सं ४, ग १ म, इ १, का १, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २ । ले ६, भ १ स १
भा ६

२५ मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ असं । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इ
१ । का १ । यो ११ वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ - व ३, ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ २, उ ६, तत्प-
६

र्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इ १ पं, का १, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ,

सं १। आ १। उ ६। म। श्रु। अ। च। अ। अ॥

सामान्यमनुष्यपय्याप्तासंयतंगे। गु १। अ। जी १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४।
ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो २। मि। का। वे १। पु। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ।
सं १। अ। द ३। च। अ। अ। ले २। क शु। भ १। सं २। वे क्षा। सं १। आ २। उ ६॥
भा ६

सामान्यमनुष्यसंयतासंयतंगे गु १। जी १। प ६॥ प्रा १०। सं ४। ग १। म। इ १। ५
पं। का १। त्र। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। दे। व ३। ले ६। भ १। सं ३। सं १।
भा ३ शुभ
आ १। उ ६॥

सामान्यमनुष्यप्रमत्तंगे। गु १। जी २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग १। म।
इ १। का १। यो ११। म ४। व ४। ओ का १। आ २। वे ३॥ द्रव्यविहं पुंवेदी। भावापेक्षे-
यिवं स्त्रीपुन्नपुंसक। क ४। ज्ञा ४। सं ३। व ३। ले ६। भ १। सं ३। सं १। आ १। उ ७। १०
भा ३ शुभ
म। श्रु। अ। म। च। अ। अ॥

सामान्यमनुष्यप्रमत्तपय्याप्तिगणे। गु १। प्र जी १। प। ६। प। प्रा १०। प। सं ४।
ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। व ४। ओ १। आ १। वे ३। क ४। ज्ञा ४।
म। श्रु। अ। म। सं ३। सा। छे। प। व ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ।
भा ३ शु
वे क्षा। सं १। आ १। उ ७। म। श्रु। अ। म। च। अ। अ॥ १५

सामान्यमनुष्यप्रमत्तापय्याप्तिगणे गु १। जी १। अ। प ६। अ॥ प्रा ७। अ। सं ४।

द ३, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६ म श्रु अ च अ अ। तदपय्याप्तानां—गु १ अ। जी १,

प ६ अ। प्रा ७ अ। सं ४। ग १ म। इ १ पं। का १ त्र। यो २ मि का। वे १ पुं। क ४। ज्ञा ३ म श्रु
अ। सं १ अ। द ३ च अ अ। ले २ क शु, भ १। स २ वे क्षा। सं १। आ २, उ ६। संयतासंयतानां—

भा ६

गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १ म। इ १ पं। का १ त्र। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ३। २०
सं १ दे। व ३। ले ६। भ १। स ३। सं १। आ १। उ ६। प्रमत्तानां—गु १। जी २। प ६ ६। प्रा

भा ३ शुभ

१० ७। सं ४। ग १ म। इ १ पं। का १ त्र। यो ११ प ४ वा ४ ओ १ आ २। वे ३। द्रव्यपुंवेदिनः
भावापेक्षया त्रिवेदिनः इत्यर्थः। क ४। ज्ञा ४। सं ३। द ३। ले ६। भ १। स ३। सं १। आ १। उ

भा ३ शुभ

७ म श्रु अ म च अ अ। तदपय्याप्तानां—गु १ प्र। जी १ प। प ६ प। प्रा १० प। सं ४। ग १ म। इ १
पं। का १ त्र। यो १० म ४ वा ४ ओ १ आ १। वे ३। क ४। ज्ञा ४ म श्रु अ म। सं ३ सा छे प। द २५
३ च अ अ। ले ६। भ १। स ३ उ वे क्षा। सं १। आ १। उ ७ म श्रु अ म च अ अ। तदपय्याप्तानां—गु

भा ३ शु

ग १ । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । आ मि = ॥ वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं २ । सा । छे । द ३ । च । अ । अ । ले १ क भ १ । सं २ । वेक्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ।
भा ३ शु

म । श्रु । अ । च । अ । अ ॥

सामान्यमनुष्याप्रमत्तगो । गु १ । जि १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । आहारसंज्ञेद्वल्लेकेदोडे
५ प्रमत्तनोळे असातसातावेदोदीरणगे व्युच्छित्तियुंठपुदरिदं । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । द ३ । ले ६ भ १ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा ३

मनुष्यसामान्यापूर्वकरणगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ । इ १ । का १ ।
यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ । सा छे । द ३ । ले ६ भ १ । सं २ । द्वितीयोपशम-
भा १ शु
क्षायिकंगळु । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

१० सामान्यमनुष्यप्रथमभागानिवृत्तिगे । गु १ । जी १ प ६ । प्रा १० । सं २ । मै । प । ग १ ।
इ १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ भ १ । सं २ ।
भा १
उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

द्वितीयभागानिवृत्तिगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह । ग १ । इ १ ।
का १ । यो ९ । वे ० । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ भ १ । सं २ । उ । क्षा ।
भा १

१५ सं १ । आ १ । उ ७ ॥

सामान्यमनुष्यतृतीयभागानिवृत्तिगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह ।

१ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ म । इ १ पं । का १ त्र । यो १ आ मि । वे १ पुं । क ४ ।
ज्ञा ३ म श्रु अ । सं २ सा छे । द ३ च अ अ । ले १ क भ १ । सं २ वेक्षा । सं १ । आ १ । उ ६ म श्रु
भा ३ शु

अ च अ अ । अप्रमत्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । आहारसंज्ञा नहि सातासातानुदीरणात् ।
२० ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ
६

१ । उ ७ । अपूर्वकरणानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे
३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ द्वितीयोपशमक्षायिको । सं १ । आ १ ।
भा १

उ ७ । अनिवृत्तिकरणप्रथमभागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं २ मै प । ग १ । इ १ । का १ । यो
९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ उ क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ।
भा १

२५ द्वितीयभागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ परिग्रहः । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे ० ।
क ४ । ज्ञा ४ । सं २ सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ उ क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । तृतीयभागे—
भा १

ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ३। मा। मा। लो। ज्ञा ४। सं २। सा। छे। द ३।
ले ६ भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। सं १। आ १। उ ७॥
भा १

सामान्यमनुष्यचतुर्थभागानिवृत्तिगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं १। परिग्रह।
ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क २। माया। लो। ज्ञा ४। सं २। द ३। ले ६ भ १।
भा १
सं २। सं १। आ १। उ ७॥

५

सामान्यमनुष्यपंचमभागानिवृत्तिगे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं १। ग १। इ १।
का १। यो ९। वे ०। क १। लोभ। ज्ञा ४। सं २। द ३। ले ६ भ १। सं २। सं १।
भा १
आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्यसूक्ष्मसांपरायणे गु १। सू। जी १। प ६। प्रा १०। सं १। परिग्रह। ग १।
इ १। का १। यो ९। वे ०। क १। लो। ज्ञा ४। सं १। सू। द ३। ले ६ भ १। सं २। १०
भा १
उ। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्योपशांतकषायणे। गु १। उ। जी १। प ६। प्रा १०। सं १०। ग १।
इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। ज्ञा ४। सं १। यथाख्यात। द ३। ले ६ भ १। सं २।
भा १
उ। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्यक्षीणकषायणे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं १०। ग १। इ १। १५
का १। यो ९। वे ०। क ०। ज्ञा ४। सं १। यथाख्यात। द ३। ले ६ भ १। सं १। क्षा।
भा १
सं १। आ १। उ ७॥

गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं १ परिग्रहः। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ३ मा माया
लो। ज्ञा ४। सं २ सा छे। द ३। ले ६ भ १। सं २ उ क्षा। सं १। आ १। उ ७। चतुर्थभागे—
भा १

गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं १ परिग्रहः। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क २ मा लो। ज्ञा ४। २०
सं २। द ३। ले ६ भ १। सं २। सं १। आ १। उ ७। पंचमभागे—गु १। जी १। प ६।
भा १

प्रा १०। सं १। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क १ लो। ज्ञा ४। सं २। द ३। ले ६ भ १।
१

सं २। सं १। आ १। उ ७। सूक्ष्मसांपराये—गु १ सू। जी १। प ६। प्रा १०। सं १ परिग्रहः। ग १।
इ १। का १। यो ९। वे ०। क १ लो। ज्ञा ४। सं १ सू। द ३। ले ६ भ १। सं २ उ क्षा। सं १।
भा १

आ १। उ ७। उपशांतकषाये—गु १ उ। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०। ग १। इ १। का १। यो ९। २५
वे ०। क ०। ज्ञा ४। सं १ यथाख्यातः। द ३। ले ६ भ १। सं २ उ क्षा। सं १। आ १। उ ७।
भा १

क्षीणकषाये गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। ज्ञा ४।

सामान्यमनुष्यसयोगकेवलिंगे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा ४ । २ । सं । ० । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ७ । म २ । वा २ । औ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । व १ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । ० । आ २ । उ २
भा १

सामान्यमनुष्यायोगिकेवलिंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ । आयुष्य । सं । ० । ग १ ।
५ इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । व १ । ले ६ । भ १ । सं १ । सं । ० ।
भा ०

अनाहार । उ २ ॥

पर्याप्तमनुष्ये मूलौघं वक्तव्यमकुं । मानुषियर्गे । गु १४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ० । संज्ञारहितं । ग १ । इं १ । का १ । यो । ११ । ० । अयोगिगळु । वे १ । ० ।
वेदरहितं । क ४ । कषायरहितं । ज्ञा ७ । म । श्रु । अ । म । के । कु । कु । वि । सं ६ । अ ।
१० वे । सा । छे । सू । य । द ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । लेश्यरहितं । भ २ । सं ६ । सं १ ।
६
१० । रहितसंज्ञित्वं । आ २ । उ ११ ॥

मनःपर्ययज्ञानोपयोगरहितं ॥ पर्याप्तमानुषियर्गे । गु १४ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ० । संज्ञारहितं । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । ० । योगरहितं । वे १ । स्त्री ० ॥
वेदरहितं । क ४ । ० । कषायरहितं । ज्ञा ७ । सं ६ । द ४ । ले ६ । अलेश्यं । भ २ । सं ६ ।
६

१५ सं १ । ० । संज्ञित्वशून्यं । आ २ । उ ११ ॥

सं १ यथाख्यातः । द ३ । ले ६ । भ १ । स १ । आ । सं १ । आ १ । उ ७ । सयोगिजिने—गु १ । जी २ ।
१

प ६ ६ । प्रा ४ २ । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ७ म २ वा २ औ २ का १ । वे ० । क ० । ज्ञा
१ । सं १ । द १ । ले ६ । भ १ । स १ । सं ० । आ २ । उ २ । अयोगिजिने—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा
भा १

१ आयुष्यं । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । द १ । ले ६ । भ १ ।
भा ०

२० स १ । सं ० । आ १ अनाहारः । उ २ । पर्याप्तमनुष्याणां मूलौघो वक्तव्यः । मानुषीणां—गु १४ । जी २ ।
प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ शून्यं च । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ शून्यं च । वे १ । क ४ शून्यं च ।
ज्ञा ७ म श्रु अ के कु कु वि । सं ६ अ वे सा छे सू य । द ४ च अ अ के । ले ६ शून्यं च । भ २ । स ६ ।
६

सं १ शून्यं च । आ २ । उ ११ मनःपर्ययो नहि ।

तत्पर्याप्तानां—गु १४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ शून्यं च । ग १ । इं १ । का १ । यो ९
२५ शून्यं च । वे १ स्त्री शून्यं च । क ४ शून्यं च । ज्ञा ७ । सं ६ । द ४ । ले ६ शून्यं च । भ २ । स ६ । सं
६

१. भावस्त्रीणां ।

मनःपर्ययज्ञानोपयोगं । स्त्रीवेदगळप्प संक्लिष्टरोज्जु संभविसद्वपुवरिदं । अपर्याप्तमानुषि-
यगो । गु २ । मि । सा । सयोग । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ० । संज्ञारहितर ।
ग १ । इ १ । का १ । यो २ । मि । का । ० । अयोगरं । वे १ । स्त्री । ० । अवेदरं । क ४ । ० ।
अकषायरं । ज्ञा ३ । कु । कु । के । सं २ । अ । यथाख्यातमुं । द ३ । अ । च । के । ले २ । क । शु
भा ४ अ ३ शु १
भ २ । सं ३ । मि । सा । क्षा । सं । १ । ० । संज्ञितवशून्यरं । आ २ । उ ६ । कु । कु । के । ५
च । अ । के ॥

मानुषिमिथ्यादृष्टिगळगे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का
१ । यो ११ । वे २ । आ २ । शून्यं । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । आ । द
२ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥
६

पर्याप्तमानुषिमिथ्यादृष्टिगं—गु १ । मि जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । १०
का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ ।
सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

अपर्याप्तमानुषिमिथ्यादृष्टिगे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इ १ ।
का १ । यो २ । मि । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले २ क । शु । भ २ ।
भा ३ अशुभ
सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
१५

मानुषिसासादनगे—गु १ । सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ ।
का १ । यो ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ ।
६

१ शून्यं च । आ २ । उ ११ । मनःपर्ययः स्त्रीवेदिषु नहि संक्लिष्टपरिणामित्वात् । तदपर्याप्तानां—गु ३ मि
सा सयोगः । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ शून्यं च । ग १ । इ १ । का १ । यो २ मि का शून्यं च ।
वे १ स्त्री । शून्यं च । क ४ । शून्यं च । ज्ञा ३ कु कु के । सं २ अ य । द ३ च अ के । ले २ क शु
भा ४ अ शु ३ शु १
भ २ । स ३ मि सा क्षा । सं १ शून्यं च । आ २ । उ ६ कु कु के च अ के । मानुषिमिथ्यादृष्टां—गु १ ।
जी २ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ११ । वैक्रियिकद्वयाहारकद्वयं नहि । वे १
स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ च अ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ५
६

कु कु वि च अ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ ।
वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ । आ १ । उ ५ । २५
६

तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ यो २ मि का । वे
१ स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ । सासा-
३ अशुभ
दनानां—गु १ सा । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ११ । वे १ स्त्री ।
१२३

सं १। सं १। आ २। उ ५॥

मानुषि सासादनपथ्यामिकेणे। गु १। सा। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे १। स्त्री। क ४। जा ३। सं १। अ। व २। ले ६ भ १। सं १। सं १।
आहा १। उ ५॥

५ मानुषिसासादनापथ्यामिणे। गु १। सा। जी १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो २। वे १। स्त्री। क ४। जा २। सं १। अ। व २। ले २ क शु। भ १। सं १।
भा ३ अनुभ
सा। सं १। आ २। उ ॥

मानुषिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। मिश्र। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो ९। वे १। स्त्री। क ४। जा ३। सं १। अ। व २। ले ६ भ १। सं १।
१० मिश्र। सं १। आ १। उ ५॥

मानुष्यसंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे। गु १। अ। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे १। स्त्री। क ४। जा ३। सं १। अ। व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १।
आ १। उ ६॥

मानुषिदेशसंयतं। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। का १। इं १। यो
१५ ९। वे १। स्त्री। क ४। जा ३। सं १। दे। व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३ शुभ

मानुषिप्रमत्तसंयतं। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १।
यो ९। वे १। स्त्री। क ४। जा ३॥

क ४। जा ३ कु कु वि। सं १। द २। ले ६ भ १। स १ सा। सं १। आ २। उ ५। तत्पर्याप्त-

सासादनानां—गु १ सा। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री। क ४।
२० जा ३। सं १ अ। द २। ले ६ भ १। स १ सा। सं १। आ १॥ उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ सा। जी

१। प ६ अ। प्रा ७ अ। सं ४। ग १। इं १। का १। यो २। वे १ स्त्री। क ४। जा २। सं १ अ।
द २। ले २ क शु। भ १। स १ सा। सं १। आ २। उ ४। सम्यग्मिथ्यादृष्टेः—गु १ मिश्रं। जी १।
भा ३ अनुभ

प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री। क ४। जा ३। सं १ अ। द २।
ले ६ भ १। स १ मिश्रं। सं १। आ १। उ ५। असंयतानां—गु १ अ। जी १। प ६। प्रा १०।

२५ सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री। क ४। जा ३। सं १ अ। द ३। ले ६ भ १। स

३। सं १। आ १। उ ६। देशसंयतस्य—गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १।

स्त्रीपुंनपुंसकवेदोदयंगलिदं । आहारद्विकं मनःपर्ययज्ञानं परिहारविशुद्धिसंयममुमिल्ल ।
सं २ । सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

भा ३

मानुष्यप्रमत्तसंयतर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । आहारसंज्ञे शून्यं । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क १ । ज्ञा ३ । सं २ । द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ ।

भा ३

आ १ । उ ६ ॥

५

मानुष्यपूर्वकरणर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । सा छे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ ।

भा १

उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुषिप्रथमभागानिवृत्तिगर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं २ । मैथु । प ।
ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ ।

भा १

१०

सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुषिद्वितीयानिवृत्तिगर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ० । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

भा १

यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ दे । द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ।

भा ३ अशु

प्रमत्तस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९, वे १ स्त्री, क ४,
ज्ञा ३, स्त्रीनपुंसकोदये आहारकद्विमनःपर्ययपरिहारविशुद्धयो नहि सं २ सा छे, द ३ । ले ६, भ १, स ३

१५

३

उ वे क्षा, सं १, भा १, उ ६, अप्रमत्तस्य—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ३ आहारसंज्ञा नहि, ग १, इं
१, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २, द ३, ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, अपूर्व-

भा ३

करणानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ३, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २
सा छे, द ३ च अ अ, ले ६ । भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ६, अनिवृत्तेः प्रथमभागे—गु १, जी १,

२०

भा १

प ६, प्रा १०, सं २ मै प, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २ सा छे, द ३, ले ६ ।

भा १

भ १, स २ उ क्षा, सं १ । आ १ । उ ६, द्वितीयभागे—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं १ परिग्रहः ग १,
इं १, का १, यो ९, वे ०, क ४, ज्ञा ३, सं २, द ३, ले ६ । भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ६,

भा १

मानुषितृतीयभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे ० । क ३ । मा । या । लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ ।
भा १
सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुषिचतुर्थभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ ।
५ का १ । यो ९ । वे ० । क २ । या । लो । जा ३ । सं २ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ६ ॥

मानुषिपंचमभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । वा = । लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ ।
भा १
भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

१० मानुषिसूक्ष्मसांपरायणे । गु १ । सू । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । सू = लो । जा ३ । सं १ । सू । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ ।
भा १
उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुष्युपजांतकषायणे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं । ० । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ० । क ० । जा ३ । सं १ । यथा । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ ।
भा १

१५ आ १ । उ ६ ॥

तृतीयभागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ ।
क ३ । मा । या । लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ । चतुर्थ-
भा १

भागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परि । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क २ । मा
लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ । पंचमभागे—गु १ । जी १ ।
भा १

२० प ६ । प्रा १० । सं १ । प । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । वा लो । जा ३ । सं २ । सा । छे ।
द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । सूक्ष्मसांपरायस्य—गु १ । सू । जी १ । प ६ ।
१

प्रा १० । सं १ । परिग्रहः । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । सू लो । जा ३ । सं १ । सू । द ३ ।
ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । उपजांतकषायस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
भा १

सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । जा ३ । सं १ । य । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा ।
भा १

मानुषिक्षीणकषायंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ० । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ० । क ० । जा ३ । सं १ । यथा । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ ।
भा १

आ १ । उ ६ ।

मानुषिसयोगकेवलिंगे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा ४ । २ । अ । सं ० । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ७ । म २ । व २ । औ २ । का १ । वे ० । क ० । जा १ । के । सं १ । यथा । द १ । ५
के ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं ० । आ २ । उ २ । के । के ॥
भा १

मानुषिभयोगिकेवलजिनंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ । आयुष्य । सं ० । ग १ । इं ।
० । का १ । यो ० । वे ० । क ० । जा १ । सं १ । द १ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं । ० ।
भा ०

आ १ । अनाहार । उ २ । के ॥

मनुष्यलब्ध्यपर्याप्तकर्म । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १०
१ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । षंढ । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । असंयम ।
द २ । च । अ । ले २ क । शु । म २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशुभ

इंतु मनुष्यगति समाप्तमावुवु ॥

देवगतिषोऽविवर्कङ्गे पेल्लपडुवल्लि । गु ४ । जी २ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
दे । इं १ । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । व ४ । वे २ । का १ । वे २ । स्त्री । पुं ० । क ४ । जा ६ । १५
म श्रु अ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ ।
भा ६

उ ९ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

सं १ । आ १ । उ ६ । क्षीणकषायस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ० । ग १ । इं १ । का १ यो
९ । वे ० । क ० । जा ३ सं १ य । द ३ ले ६ । भ १ । सं १ यथा । सं १ । आ १ । उ ६ । संयोगस्य—
भा १

गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा ४ २ । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ७ म २ वा २ औ २ । का १ । २०
वे ० । क ० । जा १ । के । सं १ य । द १ के । ले ६ । भ १ । सं १ क्षा । सं १ । आ २ । उ २ के के ।
भा १

अयोगस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ आयुः । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० ।
जा १ के । सं १ । द १ ले ६ । भ १ । सं १ क्षा । सं ० । आ १ अनाहार । उ २ के के । मनुष्यलब्ध्य-
भा ०

पर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि का ।
वे १ षं । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । द २ च अ । ले २ क शु । म २ । सं १ मि । सं १ । २५
भा ३ अशुभ

आ २ । उ ४ । देवगती—गु ४ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ दे । इं १ पं । का १ त्र ।
यो ११ म ४ । वा ४ २ । का १ वे । वे २ स्त्री पुं । क ४ । जा ६ म श्रु अ कु कु वि । सं १ अ । द ३

देवसामान्यपर्याप्तिकर्गे । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । दे १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ ।
भा ३
आ १ । उ ९ ॥

देवसामान्यपर्याप्तिकर्गे । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
५ ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ । कु । कु । सं १ ।
द ३ । ले २ । क । शु । भ २ । सं ५ । उ । वे । क्षा मि । सा । सं १ । आ २ । उ ८ । म । श्रु । अ ।
भा ६
कु । कु । च । अ । अ ॥

देवसामान्यमिथ्यादृष्टिगण्ठो । गु १ । मि । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ ।
१० ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥
भा ६

देवसामान्यमिथ्यादृष्टिपर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि ।
भा ३
सं १ । आ १ । उ ५ ॥

देवसामान्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगण्ठो । गु १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
१५ सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ ।
ले २ । क । शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । ऊ ४ ॥
भा ६

च अ अ । ले ६ । भ २ । स ६ । सं १ । आ २ । उ ९ । म श्रु अ कु कु वि च अ अ । तत्पर्याप्तानां—
६

गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । दे । इं १ । प । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ ।
सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ २ । स ६ । सं १ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ । जी १
भा ३

२० अ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि का । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ म श्रु अ कु
कु । सं १ । अ । द ३ । ले २ क शु । भ २ । स ५ उ वे क्षा मि सा । सं १ । आ २ । उ ८ म श्रु अ कु
भा ६

कु च अ अ । मिथ्यादृशां—गु १ मि । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ । अ । द २ च अ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ ।
भा ६

अ २ । उ ५ कु कु वि च अ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
२५ का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ । आ १ ।
भा ३ शुभ

उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ । अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि

देवसामान्यसासादनंगे । गु १ । सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ ।
भा ६
सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

देवसामान्यसासादनपर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । ५
भा ३ शु
आ १ । उ ५ ॥

देवसामान्यसासादनापर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । जा २ । सं १ । व २ । ले २ क । शु । भ १ ।
भा ६
सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

देवसामान्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिगन्धे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ ।
भा ३
आ १ । उ ५ ॥

देवसामान्यासंयतंगे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ ।
भा ३
सं १ । आ २ । उ ६ ॥

१५

का । वे २ । क ४ । जा २ । सं १ अ । व २ । ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४
भा ६

कु कु च अ । सासादनानां—गु १ सा । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो
११ । वे २ । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ५ ।
भा ६

तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा
३ । सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां गु १ जी १ अ । २०
३ शु

प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि का । वे २ । क ४ । जा २ । सं १ । व २ ।
ले २ क शु । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
६

सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा ३ । सं १ अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स १
भा ३

मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । व ३ ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । २५
३

देवसामान्यासंयतापर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ भ १ । सं ३ । सं १ ।
भा ३
आ १ । उ ६ ॥

देवसामान्यासंयतापर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
५ इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । पु ० । क ४ । जा ३ । सं १ । द ३ । ले २ क शु
भा ३ शु
भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भवनत्रयदेववर्कळगे । गु ४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । जा ६ । सं १ । द ३ । ले ६ भ २ । सं ५ । उ । वे । मि ।
भा ४
सा । मि । सं १ । आ २ । उ ९ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

१० भवनत्रयपर्याप्तदेववर्कळगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे २ । क ४ । जा ६ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । सं १ । द ३ । ले ६ भ २ ।
भा १
सं ५ । उ । वे । मि । सा । मि । सं १ । आ १ । उ ९ ॥

भवनत्रयापर्याप्तदेववर्कळगे । गु २ । मि । सा । जी १ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । जा २ । सं १ । द २ । ले २ क शु भ २ ।
भा ३ अ शु

१५ सं २ । मि । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ ।
क ४ । जा ३ । सं १ अ । द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ जी १
भा ३

अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इं १ । यो २ मि का । वे १ पु । क ४ । जा ३ । सं १ । द ३ ।
ले २ क शु । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । भवनत्रयदेवानां—गु ४ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ।
भा ३ शुभ

२० सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । जा ६ । सं १ । द ३ । ले ६ । भ २ । स ५ उ वे
भा ४

मि सा मि । सं १ । आ २ । उ ९ म श्रु अ कु कु वि च अ अ । तत्पर्याप्तानां—गु ४ । जी १ । प ६ ।
प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । जा ६ म श्रु अ कु कु वि । सं १ । द ३
च अ अ । ले ६ भ २ । स ५ उ वे मि सा मि । सं १ आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ मि सा । जी १
१

अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ यो २ मि का । वे २ । क ४ । जा २ । सं १ ।
२५ द २ । ले २ क शु । भ २ । स २ मि सा । सं १ । आ २ । उ ४ ।
भा ३ अ शु

भवनत्रयमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ४

आ २ । उ ५ ॥

भवनत्रयपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । का ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले ६ भ २ । स १ । मि । सं १ । ५
भा १

आ १ । उ ५ ॥

भवनत्रयापर्याप्तमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । द २ । ले २ । क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ३ अ शु

आ २ । उ ४ ॥

भवनत्रयसासादनं गु १ । सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा ४

आ २ । उ ५ ॥

भवनत्रयसासादनपर्याप्तकर्म । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले ६ भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा १

१
आ २ । उ ५ ॥

भवनत्रयसासादनापर्याप्तकर्म । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । द २ । ले २ क शु भ १ । सं १ । सा ।
भा ३ अ शुभ

सं १ । आ २ । उ ४ ॥

१५

मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी २, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४,
ज्ञा ३, सं १, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १ जी १, प ६, प्रा १०, २०
भा ४

सं ४, ग १, इं १ का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द ३ ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ १, उ ५,
१

तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६ ७, प्रा १० अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का, वे २, क ४,
ज्ञा २, सं १, द २, ले २ क शु भ २, स १ मि, सं १, आ २, उ ४, सासादनानां—गु १ सा, जी २,
भा ३ अ शु

प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २, ले ६ भ १,
भा ४

स १ सा, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो
९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १,
भा १

जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, च अ,
१२४

२५

भवनत्रयसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिश्र । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ५ ॥

भवनत्रयासंयतगो ॥ गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ ।
वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा १

सौधर्मेशानदेवकर्कळगे । गु ४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । द ३ । ले ३ । पो । प । शु । भ २ । स ६ ।
भा १
सं १ । आ २ । उ ९ ॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तदेवकर्कळगे । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । द ३ । ले १ ते । भ २ । सं ६ । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ९ ॥

सौधर्मद्वयापर्याप्तदेवकर्कळगे । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं १ ।
द ३ । ले २ । भ २ । सं ५ । उ । वे । क्षा । मि । सा । सं १ । आ २ । उ ८ । म । श्रु । अ ।
भा १
कु । कु । च । अ । अ ॥

सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले ३ । भ २ । सं १ । मि ।
भा १
सं १ । आ २ । उ ५ ॥

ले २ क शु भ १, स १ सा, सं १ आ २, उ ४, सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १,
भा ३ अशु

इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ४, सं १, द २, ले ६, भ १, स १ मिश्रं, सं १, आ १, उ ५,
भा १

असंयतानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १,
द ३, ले ६, भ १, स २ उ वे, सं १, आ १, उ ६, सौधर्मेशानदेवानां—गु ४, जी २, प ६, प्रा १० ७,
भा १

सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ६, सं १ द ३, ले ३ पी क शु, भ २, स ६, सं १,
भा १ ते

आ २, उ ९, तत्पर्याप्तानां—गु ४, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४,
ज्ञा ६, सं १, द ३ ले १ ते, भ २, स ६, सं १, आ १, उ ९, तदपर्याप्तानां—गु ३ मि स अ, जी १,
भा १

प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ, सं १, द ३,
ले २, भ २, स ५ उ वे क्षा मि सा, सं १, आ २ उ ८ म श्रु अ कु कु च अ अ, मिथ्यादृष्टीनां—गु १,
भा १

सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टिपय्याप्रिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले १ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा १

आ १ । उ ५ ॥

सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टि अपय्याप्रिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । द २ । ले २ । भ २ । सं १ । मि । ५
भा १

सं १ । आ २ । उ ४ ॥

सौधर्मद्वयसासादनर्गे । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ ॥ सं १ । द २ । ले ३ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा १

आ २ । उ ५ ॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तसासादनर्गे । गु १ सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले १ । भ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा १

सौधर्मद्वयसासादनापर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । द २ । ले २ क शु भ १ ।
भा १

सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

सौधर्मद्वयसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १५
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द २ । ले १ ते भ १ । सं १ । मिभ । सं १ ।
भा १

आ १ । उ ५ ॥

जी २, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले ३,
भा १

भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १,
का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले १, भ २, सं १ मि, सं १, आ १, उ १, तदपर्याप्तानां— २०
भा १

गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १, द २, ले २,
भा १

भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ४, सासादनानां—गु १, जी २, प ६, ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १,
का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले ३, भ १, सं १ सा, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—
भा १

गु १ सा, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले १, २५
१

भ १, सं १, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो २ मि का, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १, द २, ले २ क शु, भ १, सं १ सा, सं १, आ २, उ ४,
भा १

सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १,

सौधर्मद्वयासंयतर्गो । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले ३ ते क शु १ भ १ । सं ३ । उ ।
भा १ ते

वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तासंयतर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का
५ १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले १ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा १

सौधर्मद्वयापर्याप्तासंयतर्गो । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । पु ० । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । द ३ । ले २ क शु
भा १ ते

भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

अपर्याप्तिकालदोषपशमसम्यक्त्वमेतु संभविमुगुमेदोडे पेळल्पडुगुं । श्रेणियिदमवतीणं-
१० गळ्गो असंयतादिचतुर्गुणस्थानंगळोळु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमुंटप्पुवरिबं अल्लि मध्यमतेजोलेश्ये-
योळु कालंगेडु सौधर्मद्वयदेवक्कळोळु उत्पन्नर्गो अपर्याप्तिकालदोषपशमसम्यक्त्वमं पडेयल्प-
डुगुमेकेदोडे :-

तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य चोद्दसण्हं लेस्सा भवणादिदेवाणं ॥

तेऊ तेऊ तह तेऊ पम्मा पम्मा य पम्मसुक्का य ।

१५

सुक्का य परमसुक्का लेस्सा भवणादिदेवाणं ॥

इत्याविसूत्रसूचितक्रमविदमल्लपर्याप्तिकालदोषपशमसम्यक्त्वास्तित्वमरियल्पडुगुं । असंयत-
सम्यग्दृष्टिगे स्त्रीवेददोळु उत्पत्तिसंभविसदेवितु आतंगे पर्याप्ताळापमोदे वत्तव्यमक्कुमल्लि
आयिकसम्यक्त्वमुमिल्लेकेदोडे देवगतिपोळु दर्शनमोहनीयक्षपणाभावमप्पुवरिदविते विशेषमरि-
यल्पडुगुं ।

२० द २ ले १ ते, भ १, स १ मिश्रं, सं १, आ १, उ ५, असंयतानां-गु १, जी २, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४,
१

ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, द ३, ले ३ ते क शु, भ १ स ३ उ वे क्षा, सं १,
भा १ ते

आ २, उ ६, तत्पर्याप्तानां-गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४,
ज्ञा ३, सं १, द ३, ले १, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, तदपर्याप्तानां-गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ,
भा १

सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का, वे १ पुं, क ४, ज्ञा ३, सं १, द ३, ले २ क शु भ १, स ३ सं १,
भा १ ते

२५

आ २, उ ६, वैमानिकेषु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं आरोहकापूर्वकरणप्रथमभागवर्जितोपशमश्रेण्यारोहकावरोहकाणां
तदवतीर्णचतुरसंयतादीनां च तत्सम्यक्त्वमूतानां तत्तल्लेश्यया तत्रोत्पत्तेरपर्याप्तिकाले संभवति, असंयतस्त्रीणामेकः
पर्याप्तालाप एव सम्यग्दृष्टीनां तत्रानुत्पत्तेः, पर्याप्तकर्मभूमिमनुष्याणामेव दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभसंभवेऽपि
तन्निष्ठापकानां चतुर्गतिवृत्तेः, क्षायिकसम्यक्त्वमत्र संभवतीति विशेषः स्मर्तव्यः ।

सानत्कुमारसाहेन्द्रदेवकर्णगे । गु ४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे १ । पुंस्त्रीवेदिगळगे सौधर्मद्वयदोळे उत्पत्तियप्युदरिवं । क ४ । जा ६ ।
सं १ । द ३ । ले ४ ते प क १ शु १ भ २ । सं ६ । उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं १ ।
भा २ । ते प

आ २ । उ ९ ॥

सानत्कुमारद्वयदेवपर्याप्तगणे । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे १ । क ४ । जा ६ । सं १ । द ३ । ले २ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ ९ ॥

२

सानत्कुमारद्वयदेवापर्याप्तकणे । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । त्र । यो २ । वै ० मिश्र १ । का १ । वे १ । पुं ० । क ४ ।
जा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ ।
२

मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥

१०

संप्रति मिथ्यादृष्टिप्रभृति यावदसंयतसम्यग्दृष्टि तावच्चतुर्गुणस्थानंगळगे सौधर्मपुंवेदभंगं
वक्तव्यमक्कुं । ई प्रकारादिवं मेलयुं तंतम्मलेदयानुसारदिवं वक्तव्यमक्कुं । अनुदिशानुत्तरविमानंगळ
सम्यग्दृष्टिगळगे सम्यक्त्वत्रयाळापं कर्तव्यमक्कुमल्लि विशेषमुंटावुवेदोडे उपशमसम्यक्त्वमं बिट्टु
पर्याप्तकालदोळ वेदकक्षायिकसम्यक्त्वद्वयमे वक्तव्यमक्कुं । इंतु वेवगति समाममादुवु ॥

सिद्धगतियोळु सिद्धगणे तंते वक्तव्यमक्कुं । विशेषमुंटावुवेदोडे अस्ति सिद्धगतिस्तत्र केवल-
ज्ञानकेवलदर्शनक्षायिकसम्यक्त्वमनाहारमुपयोगद्वयमुंदु शेवाळापमिल्ल एकेदोडे सिद्धरुळगे एक-
द्वियादिजातिनामकर्मोदयाभावमप्युदरिवं । इंतु गतिमार्गणेसमार्गणे समाममाय्तु ।

१५

सनत्कुमारसाहेन्द्रदेवानां—गु ४, जी २, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११,
वे १ पुं कल्पस्त्रीणां सौधर्मद्वय एवोत्पत्तेः, क ४, जा ६, सं १, द ३, ले ४ ते प क शु, भ २, स ६ उ वे
भा २ ते प

क्षा मि सा मि, सं १, आ २, उ ९, तत्पर्याप्तानां—गु ४, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, २०
यो ९, वे १, का ४, जा ६, सं १, द ३, ले २, भ २, स ६, सं १, आ १, उ ९ ।

२

तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा १० ७ अ, सं ४, ग १ वे, इं १ पं, का १ त्र,
यो २ वै मि का, वे १ पुं, क ४, जा ५ कु कु म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले २ क शु, भ २, स ५
२

मि सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ८, तन्मिथ्यादृष्ट्याद्यसंयतान्तानां सौधर्मपुंवेदवक्तव्यं एवमुपर्यपि स्वस्व-
लेष्यानुसारेण योज्यं, अनुदिशानुत्तरविमानज्ञानामसंयतालाप एव तत्राप्ययं विशेषः, पर्याप्तकाले वेदकक्षायिक-
सम्यक्त्वद्वयमेव, सिद्धगती सिद्धानां यथासम्भवं वक्तव्यं, अस्ति सिद्धगतिस्तत्र केवलज्ञानदर्शनक्षायिकसम्यक्त्वा-
नाहारोपयोगद्वयेभ्यः शेवालापो नास्ति सिद्धानामेकेन्द्रियादिनामोदयाभावात्, गतिमार्गणा गता ।

२५

इन्द्रियानुवाददोळु मूलौघालापमवकुं । सामान्यैर्केन्द्रियंगळगे पेळल्पडुवल्लि । गु १ । मि ।
 जी ४ । वा । सू = १ । प । अ । प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । ए । का ५ ।
 त्रसरहितमागि योग ३ । औदारिक तन्मिश्रकाम्पण । वे १ । षंड । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ ।
 अ । द १ । अचक्षु । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ १ । आ २ । उ ३ । कु । कु । अचक्षु ।
 भा ३ अशुभ

५ सामान्यैर्केन्द्रिय पद्व्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जि २ । बा ० । सू ० । प ४ । प्रा ४ । ए । का
 उ । आयुः । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । ए । का ५ ॥ त्रसरहितमागि । यो १ । औ का वे १ । षंड ।
 क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द १ । अचक्षु ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
 भा ३ अशु
 असंज्ञि । आ । उ ३ । कु । कु । अचक्षु दर्शन ॥

सामान्यैर्केन्द्रियापद्व्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी २ । बा । अ ० । सू अ । प ४ । अ प्रा ३ ।
 १० अ सं ४ । ग १ । ति इं १ । ए । का ५ । यो २ । मि । का । वे १ । ष ० । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
 सं १ । अ । द १ । अचक्षु ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ।
 भा ३ अशु
 कु । कु । अच ॥

बादरैर्केन्द्रियंगळगे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ ।
 ति । इं १ । ए । का ५ । यो ३ । औ । मि । का । वे १ । ष । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ ।
 १५ द १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥
 भा ३ अशु

बादरैर्केन्द्रिय पद्व्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । ति इं १ ।
 ए । का ५ यो १ । औ काय । वे १ । ष । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच ले ६ भ २ ।
 भा ३ अशु
 सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ १ । उ ३ ॥

इन्द्रियानुवादे मूलौघः—तत्र सामान्यैर्केन्द्रियाणां—गु १ मि, जी ४ वा सू प अ, प ४ ४, प्रा ४ ३,
 २० सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५ त्रसो नहि, यो ३ औदारिकतन्मिश्रकाम्पणाः, वे १ षं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १
 अ, द १ अ, ले ६ भ २, सं १ मि, सं १ असंज्ञा, आ २, उ ३ कु कु अचक्षुः । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि,
 भा ३ अशु

जी २ वा प सू प, प ४ ए, प्रा ४ ए का उ आयुः, सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५, त्रसो नहि, यो १ औ,
 वे १ सं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले ६ भ २, सं १ मि, सं १ असंज्ञी, आ १, उ ३ कु कु
 भा ३ अशु

अचक्षुर्दर्शनं, तद्व्याप्तानां—गु १ मि, जी २ वा अ सू अ, प ४ अ, प्रा ३ अ, सं ४, ग १ ति, इं १ ए,
 २५ का ५, यो २ मि का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले २ क शु, भ २, सं २ मि,
 ३ अशु

सं १ असंज्ञी, आ २, उ ३ कु कु अच, बादराणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ४ ४, प्रा ४ ३, सं ४, ग १
 ति, इं १ ए, का ५, यो ३ औ मि का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले ६, भ २,
 ३ अशु

सं १ मि, सं १ असंज्ञी, आ २, उ ३, तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ प, प ४, प्रा ४, सं ४, ग १ ति, इं १

बादरैकैन्द्रियापथ्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ४ । अ । प्रा ३ । ए । का । आ ।
सं ४ । ग १ । ति । इं १ । का ५ । यो २ । मि । का । वे । १ । ष ० । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
अ । द १ । अ च ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अ

इतु बादरपथ्याप्तनामकर्मोदयसहितगे आलापत्रयं पेळत्पट्टुवपथ्याप्तनामकर्मोदयसहित
बादरैकैन्द्रियलब्धपथ्याप्तिकर्गे पेळत्पट्टुवतिल बादरैकैन्द्रियापथ्याप्तालापदंतालापमकुं ॥

५

सूक्ष्मैन्द्रियंगलो । गु १ । मि । जी २ । प । अ प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । स ४ । ग १ । इं १ ।
ए । का ५ । यो ३ । औ २ । का १ । वे १ । ष । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अ च ।
ले २ क शु एके दोडे :—
भा ३ अशु

सर्वेति सुहृमाणं काओदा सव्वविग्गहे सुक्का ।

सव्वो मिस्सो देहो कवोदवण्णो हवे णियमा ॥

१०

एवं नियममुंत्पुदरिद । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥

सूक्ष्मैकैन्द्रियपथ्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । इं १ । का ५ ।
यो १ । औ का । वे १ । ष ९ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अ च । ले ६ क भ २ ।
भा ३

सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ १ । उ ३ ॥

ए, का ५, यो १ औ, वे १ ष, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले ६, भ २, स १ मि, सं १
३ अशु

१५

असंज्ञी, आ १, उ ३, तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ अ, प ४ अ, प्रा ३ ए का आ, सं ४, ग १ ति, इं १
ए, का ५, यो २ मि का, वे १ ष, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अच, ले २ क शु, भ २, स १ मि, स १
भा ३ अशु

असंज्ञी, आ २, उ ३, एवं बादरपथ्याप्तानामोदयानामेकैन्द्रियाणामुक्तं, अपर्याप्तानामोदयानां तत्त्वव्यपयानां
तु तदपर्याप्तवद्योज्यं,

सूक्ष्माणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ४ ४, प्रा ४ ३, सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५, यो ३ औ २
का १, वे १ ष, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अच, ले २ क शु

२०

भा ३ अशु—कुतः ?

सर्वेति सुहृमाणं काओदा सव्वविग्गहे सुक्का ।

सव्वो मिस्सो देहो कवोदवण्णो हवे णियमा ॥१॥

सर्वेषां सूक्ष्माणां कापोता सर्वविग्गहे शुक्का ।

सर्वो मिश्रो देहः कपोतवर्णो भवेन्नियमात् ॥१॥

२५

भ २, स १ मि, सं १ असंज्ञि, आ २, उ ३, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ४, प्रा ४, सं ४, ग १, इं १,
का ५, यो १ औ, वे १ ष, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अच, ले १ क, भ २, सं १ मि, सं १ असंज्ञी,
भा ३ अशु

सूक्ष्मैर्केन्द्रियाऽप्यर्थाप्रकर्मो । गु १ । जी १ । प ४ । अ । प्रा ३ । ए । का । आ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का ५ । यो २ । मि । का । वे १ । षं ० । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च
ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

इंतु पर्याप्तनामकर्मोदय सहितरूप सूक्ष्मैर्केन्द्रिय निर्वृत्यपर्याकर्मो आलापत्रयं पेठल्पदुदु ।

५ सूक्ष्मैर्केन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तनामकर्मोदयसहितगो ओदे अपर्याप्तालापं वक्तव्यमक्कुमदुवुं
सूक्ष्मैर्केन्द्रियाप्यर्थाप्राप्तापदंतक्कु । विशेषमिल्ल ॥

द्वीन्द्रियंगळगे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ५ । ५ । प्रा ६ । सं ४ । ग १ । ति ।
इं १ । द्वि । का १ । त्र । यो ४ । औ २ । वा १ । का १ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
व १ । अ च । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ शु

१० द्वीन्द्रियपर्याप्तकर्मो । गु १ । जी १ । प ५ । प्रा ६ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ ।
वा १ । का १ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च । ले ६ । भ २ । सं १ ।
मि । सं १ । असंज्ञि । आ १ । उ ३ ॥
भा ३

द्वीन्द्रियाप्यर्थाप्रकर्मो । गु १ । जी १ । अ । प ५ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । द्वी ।
का १ । त्र । यो २ । मि । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च ।
ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ शु

१५ द्वीन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तगोदे अपर्याप्तालापं माडल्पदुगे । त्रीन्द्रियंगळगे गु १ । जी २ । प ५ ।
५ । प्रा ७ । ५ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । त्रि । का १ त्र यो ४ । औ २ वा १ । का १ । वे १ । षं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ ।
भा ३

आ २ । उ ३ ॥

२० आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ४ अ, प्रा ३ ए का आ, सं ४, ग १, इं १, का ५, यो २ मि
का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ च अक्षु, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १ अ, आ १, उ ३ ।
भा ३ अ शु

तल्लब्ध्यपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत्, द्वीन्द्रियाणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ५ ५, प्रा ६, ४, सं ४, ग १ ति,
इं १ द्वी, का १ त्र, यो ४, औ २, वाक् १, का १ वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ च अ, ले ६, भ २,
भा ३ अ शु

स १ मि, सं १ असंज्ञी, आ २, उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १, प ५, प्रा ६, सं ४, ग १ ति, इं १
द्वी, का १ त्र, यो २, वा १, का १, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २, सं १ मि,
भा ३

सं १ अ, आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ५ अ, प्रा ४ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २
मि का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ३ ।
भा ३ अ शु

तल्लब्ध्यपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत्, त्रीन्द्रियाणां—गु १, जी २, प ५ ५, प्रा ७ ५, सं ४, ग १ ति,
इं १ त्री, का १ त्र, यो ४ औ २ वा १ का १, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २,
भा ३

त्रौद्विपय्यामिकर्णे । गु १ । जी १ । त्री । प १ प ५ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ ।
त्री । का १ । त्र । यो २ । औ । वा १ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ व १ । अच ।
ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ १ । उ ३ ॥
भा ३

त्रौद्विपय्यामिकर्णे । गु १ । जी १ । प ५ । अ प्रा ५ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो २ । मि । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ व १ । अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ । ५
भा ३ अशु
मि । सं १ । अ । आ २ । उ ३ ॥

त्रौद्विपय्यामिकर्णेयुसो प्रकारदिदमो देआळापमक्कुं ॥ चतुरिन्द्रियंगळगे । गु १ । मि ।
जी २ । प । अ प ५ । ५ । प्रा ८ । ६ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । चतुरिन्द्रिय । का १ त्र । यो ४ ।
औ २ । वा १ । का १ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । च अ । ले ६ भ २ ।
भा ३
सं १ । मि । सं १ । अ । आ २ । उ ४ ॥

१०

चतुरिन्द्रियपय्यामिकर्णे । गु । मि । जी १ । च । प ५ । प्रा ८ । च ४ । वा १ । का १ ।
उ १ । आ १ । सं ४ । ग १ । इं १ । च । का १ । त्र । यो २ । औदारिक का १ । वा १ । वे १ षं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ द्रव्य भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं ।
भा ३ । अ शु
आ १ । ऊ ४ ॥

चतुरिन्द्रियापय्यामिकर्णे । गु १ । जी १ । प ५ । अ । प्रा ६ । च ४ । का १ । आ १ । १५
सं ४ । ग १ । इं १ । च । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
द २ । च । अ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । ऊ ४ ॥
भा ३ अशु
इंतु आळापत्रयं पेळत्पट्टु ॥

स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ त्रीं प, प ५, प्रा ७, सं ४, ग १ ति,
इं १ त्री, का १ त्र, यो २ औ १ वा १, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २, स १
भा ३

मि, सं १ अ, आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ५ अ, प्रा ५ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, २०
यो २ मि का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं १, आ २,
भा ३ अशु

उ ३ । तल्लब्धपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत्, चतुरिन्द्रियाणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ५ ५, प्रा ८, ६, सं ४,
ग १, इं १ चतुरि, का १ त्र, यो ४ औ २ वा १ का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २ च अ, ले ६,
भा ३

भ २, स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ च प, प ५, प्रा ८ च ४ वा १
का १ औ १ आ १, सं ४, ग १ ति, इं १ च, का १ त्र, यो २ औ १ वा १, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १
अ, द २ च अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं १ अ, आ १, उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ अ, प ५ अ, २५
भा ३

प्रा ६ अ, च ४, का १ आ १, सं ४, ग १, इं १ च, का १, यो २ मि का, वे १ षं, क ४, ज्ञा २, सं १
१२५

चतुरिन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तिकर्गो दे अपर्याप्ताळापं वक्तव्यमवकुमिदरंते । विशेषमिल्ल । पंचेन्द्रि-
यंगळो । गु १४ । जी ४ । संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ता । प ६ । ६ । प ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ ।
सयोगि ४ । २ । अयोग प्रा १ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ ॥
६

५ पंचेन्द्रियपर्याप्तिकर्गो गु १४ । जी २ । सं अ । प ६ । सं ५ । अ । प्रा । १० । सं । ९ ।
अ । सं । ४ । सयोगि । १ । अयोगि । सं ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । द ४ ।
औ । वै । आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
आ २ । उ १२ ॥
६

पंचेन्द्रियापर्याप्तिकर्गो । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयोग । जी २ । संज्ञ्यपर्याप्ता असंज्ञ्य-
१० पर्याप्ता । प ६ । सं ५ । अ । असंज्ञि । प्रा ७ । संज्ञि ७ । असंज्ञि २ । सयोग । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो ४ । औ मि १ । वै मिश्र १ । आहा मि १ । कार्म १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ६ । म । श्रु । अ । के । कु । कु । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४ । च । अ । अ ।
के । ले २ क । शु । भ २ । सं ५ । उ । वे । क्षा । मि । सा । सं २ । आ २ । उ १० ॥
भा ६

पंचेन्द्रियमिथ्यादृष्टिगळो । गु १ । मि । जी ४ । संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ता असंज्ञिपर्याप्ता-
१५ पर्याप्ता । प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १३ ।
आहारद्वयवर्जि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ ।
६

मि । सं २ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥

अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ४ । तल्लब्ध्यपर्याप्तस्य तदपर्याप्तवत्,
भा ३ अशु

पंचेन्द्रियाणां—गु १४, जी ४, संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६, प्रा १० ७, ९, ७, सयोगस्य ४, २, अयोगस्य
२० १, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १५, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४, ले ६, भ २, स ६, सं २,
भा ६

आ २, उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १४, जी २ सं, अ, प ६ सं, ५ अ, प्रा १० सं, ९ अ सं, ४ सयो, १
अयो, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो ११ म ४ वा ४ औ वै आ, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४,
ले ६, भ २, स ६, स २, आ २, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स, जी २ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ता ।
६

प ६ अ, सं ५ असंज्ञी, प्रा ७ संज्ञि ७ अ संज्ञि २ सयोग, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ औमि-
२५ आहारकमिश्र-वै-मिश्र-कार्मणा, वे ३, क ४, ज्ञा ६ म श्रु अ के कु कु, सं ४ अ स छे यथा, द ४ च अ अ के,
ले २ क शु, भ २, स ५ उ वे क्षा मि सा, सं २, आ २, उ १० । मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी ४
भा ६

संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, सं ४ ग ४, इं १ पं, का १ त्र यो १३ आहार-
कद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५ कु कु वि
६

पंचेंद्रियमिथ्यादृष्टिपर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी २ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु ।
वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥
६

पंचेंद्रियमिथ्यादृष्ट्यपर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी २ । सं १ । अ १ । प ६ । अ । ५ । अ ।
प्रा ७ । ७ सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का १ । वे ३ । क ४ । ५
ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । अ । च । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६ । अ शु

सासादनसम्पद्दृष्टिमोदलादयोगिकेवलपर्य्यंतं मूलौघभंगमो प्रकारं वि संज्ञिपंचेंद्रियगळ-
सकलाळापंगळु वक्तव्यंगळप्पुवु ॥

असंज्ञिपंचेंद्रियगळणे । गु १ । मि । जी २ । असंज्ञिपर्याप्तापर्याप्त । प ५ । ५ । प्रा ९ । ७ ।
सं ४ । ग १ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ४ ॥ औ २ का १ । अनुभयवचन । १ । वे ३ । क ४ । १०
ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशुभ

असंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तिकर्णे । गु १ । मि । जी १ । प ५ । प्रा ७ । ९ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
पं । का १ त्र । यो २ । औ का १ । अनुभयवचन । १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ ।
ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ १ । उ ४ ॥
भा ३

पंचेंद्रियासंज्ञ्यपर्याप्तिकर्णे । गु १ । मि । जी १ । प ५ । अ प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ति । १५
इं १ । पं । का १ त्र । यो २ । औ मि १ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ ।
ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ४ ॥
भा ६ अशु

च अ । तत्पर्याप्तानां—गु १, जी २ सं अ, प ६ ५, प्रा १०, ९, सं ४, ग ४, इं १, का १ यो १० म ४
वा ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ १,
६

उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी २, संज्ञ्यपर्याप्ती, प ६ अ, ५ अ, प्रा ७ ७ अ, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ २०
त्र, यो ३ आ मि, वै मि, कार्मण, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, च अ, ले २ क शु, भ २, स १ मि,
भा ६

सं २, आ २, उ ४ ।

सासादनादीनां गुणस्थानवत्, असंज्ञिनां—गु १ मि, जी २ तत्पर्याप्तापर्याप्ती, प ५ ५, प्रा ९ ७,
सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ औ २ का १ अनुभयवचनं १, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २
च अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं १ असंज्ञी, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १, प ५, प्रा ९, २५
भा ३ अशु

सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो २ औ १ अनुभयवाक् १, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले ६,
भा ४
भ २, स १ मि, सं १ असं, आ १, उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १, प ५ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १
ति, इं १ पं, का १ त्र, यो २ औ मि १ का १, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले २ क शु भ २,
भा ३

संप्रतिसामान्यपंचेन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तिकर्गो । गु १ । मि । जी २ । संज्ञ्यपर्याप्तासंज्ञ्यपर्याप्ति ।
 प ६ । अ । सं ५ । अ । अ । प्रा ७ । सं । अ । ७ । अ । अ । स ४ । ग २ ति । म । इं १ । पं । का
 १ । त्र । यो २ । औमि १ । का १ । वे १ । ख ० । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । च । अ
 ले २ क । शु भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । ऊ ४ ॥

५ भा ३ अशु

संज्ञिपंचेन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तिकर्गो । गु १ । मि । जी १ । सं ० अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग २ ति । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो २ । औमि । का १ । वे १ । ख ० । क ४ ।
 ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । संज्ञि । आ २ । ऊ ४ ॥
 भा ३ अशु

असंज्ञिपंचेन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तिकर्गो । गु १ । मि । जी १ । प ५ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ ।
 १० ग १ ति । इं १ । पं । का १ । त्र । यो २ । औमि । का १ । वे १ खं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
 अ । द २ । च । अ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ४ ॥
 भा ३ अशु

अनिन्द्रियरुग्णो सिद्धगतिर्योऽपेक्ष्यतयक्कुमेकंदोडे सिद्धरुग्णो एकैन्द्रियाविनामकम्मोदया-
 भावमप्युदरिदमितीन्द्रियमार्गणे समाप्तमादुदु ॥

कायानुवाददोळ । गु १४ । जी ५७ । ९८ । ४०६ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । पा १० ।
 १५ ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १५ ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ ॥

६

स १ मि, सं १ असंज्ञी, आ २, उ ४ । पंचेन्द्रियलब्ध्यपर्याप्तानां—गु १ मि, जी २ संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्ती, प ६
 अ, सं ५ अ अ, प्रा ७ सं अ, ७ अ अ, सं ४, ग २ ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो २ औमि १ का १,
 वे १ खं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ ।

भा ३ अशु

२० तत्संज्ञिनां—गु १ मि, जी १ प अ, प ६ प, प्रा ७ अ अ, सं ४, ग २ ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो २,
 औमि का, वे १ खं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं १ संज्ञी, आ २, उ ४ ।

भा ३ अशु

तदसंज्ञिनां—गु १ मि, जी १, प १ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ त्र, यो २ औमि का,
 वे १ खं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ४ ।

भा ३ अशु

अतीन्द्रियाणां सिद्धगतिवत् । इति इन्द्रियमार्गणा गता ।

२५ कायानुवादे—गु १४, जी ५७ ९८ ४०६, प ६ ६, ५ ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९ ७, ८, ६, ७, ५,
 ६, ४, ४ ३, ४ २ १, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १५, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४, ले ६, भ २ स
 ६

६, सं २, आ २, उ १२ ।

षट्कषायसामान्यपर्याप्तिकर्गे । गु १४ । जी १९ । ३७ । १८६ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । सयोगि । ४ । ४ । अयोगि १ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । मिश्र-
चतुष्कहीनं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ ॥
६

षट्कषायसामान्यापर्याप्तिकर्गे । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयो । जी ३८ । ६१ । २२० ।
प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । मिश्र ५
चतुष्टयं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ ॥ मनःपर्ययविभंगरहितं । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४
ले २ क शु भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ १० । ज्ञा ६ । द ४ ॥
भा ६

मिथ्यादृष्टिप्रभृतिगल्गे मूलौघभंगमकुमलिल मिथ्यादृष्टि त्रिविधरुगल्गे कायानुवाददल्लि
मूलौघदोलु पेन्द्रजीवसमासंगलु वक्तव्यंगलपुत्रु । नास्त्यन्यत्र विशेषः ॥

पृथ्वीकायंगल्गे । गु १ । जी ४ । बादरपर्याप्तापर्याप्तिसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ति । प ४ । ४ । १०
प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । ए । का १ । पृ । यो ३ । औ २ । का १ । वे १ । षं । क ४ ।
ज्ञा २ । सं १ । अ सं । द १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असं । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

पृथ्वीकायपर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी २ । बा । सू । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ।
ए । का १ पृ । यो २ । औ का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच ले ६
भा ३
भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । सं । आ १ । उ ३ ॥ १५

तत्पर्याप्तानां—गु १४ । जी १९ । ३७ । १८६ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
४ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । मिश्रत्रयकर्मणाभावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । स ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स ।
६

जी ३८ । ६१ । २२० । प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ त्रयो
मिश्राः कर्मणश्च । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ मनःपर्ययविभंगाभावात् । सं ४ अ सा छे यथा । द ४ । ले २ क शु । २०
भा ६

भ २ । सं ५ मि सा उ वे क्षा । सं २ । आ २ । उ १० ज्ञा ६ द ४ । मिथ्यादृष्ट्यादीनां मूलौघः किन्तु
सामान्यादित्रिविधमिथ्यादृष्टीनामेव कायानुवादमूलौघोक्तजीवसमासा वक्तव्याः । अन्यत्र विशेषो नास्ति ।

पृथ्वीकायिकानां—गु १ । जी ४ बादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तिः । प ४ ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १
ति । इं १ ए । का १ पृ । यो ३ औ २ का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६
३
भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ बा सू । प ४ । प्रा ४ । २५
सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ पृ । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच ।

पृथ्वीकायापय्याप्तिकर्गो । गु १ । जी २ । बा ० अ । सू ० अ । प ४ । अ । प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । ए । का १ । पृ । यो २ । औ मि । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अशु

बादरपृथ्वीकायिकंगळगे । गु १ । जी २ । प । अ । प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । ए । का १ । पृ । यो ३ । औ २ । का । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । असं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अशु

बादरपृथ्वीकायपय्याप्तिकर्ग । गु १ । मि । जी १ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । ए । का १ । पृ । यो १ । औ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । असं । द १ । अच । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ १ । उ ३ ॥

भा ३

१० बादरापय्याप्तपृथ्वीकायंगळगे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ४ । अ । प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ ति । इ १ । ए । का १ पृथ्वी । यो २ । मि । का वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । असं । द १ । अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अशु

बादरपृथ्वीकायलब्ध्यपय्याप्तिकंगे अपय्याप्तिकंगे पेळवंते पेळवुकोळगे । सूक्ष्मपृथ्वीकायंगे सूक्ष्मैकेन्द्रियवंते पेळवुकोळगे । अल्लि विशेषमुंटवावुवे'दोडे सूक्ष्मपृथ्वीकायंगे'दिताळापसं माळके । अप्कायिकंगळगे पृथ्वीकायिकंगळगे पेळवंते पे'ळवुको'बुवु । विशेषमुंटवावुवे'दोडे द्रव्यविद बादर-पय्याप्तियोळु शुक्ललेइयेयक्कुं । तेजस्कायिकंगळगे लेइयेयोळभेवमंटावुवे'दोडे द्रव्यविदं सूक्ष्मंगळगे

ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी २ बा अ सू अ । प ४ भा ३

अ । प्रा ३ अ । सं ४ । ग १ ति । इ १ ए । का १ पृ । यो २ औमि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ । तद्बादराणां—गु १ । जी २ भा ३ अशु

२० प अ । प ४ ४ । प्रा ४ ३ । सं ४ । ग १ ति । इ १ ए । का १ पृ । यो ३ औ २ का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ भा ३ अशु

मि । जी १ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इ १ ए । का १ पृ । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ भा ३

२५ मि । जी १ अ । प ४ अ । प्रा ३ अ । सं ४ । ग १ ति । इ १ ए । का १ पृ । यो २ मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । द १ अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ । भा ३ अशु

तल्लब्ध्यपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत् । तत्सूक्ष्माणां सूक्ष्मैकेन्द्रियवत् । अप्कायिकानां पृथ्वीकायिकवत् । किन्तु द्रव्यतो बादरपर्याप्ते शुक्ला तेजस्कायिकेषु सूक्ष्माणां पर्याप्तमिश्रकालयोः कपोता । बादराणां पर्याप्तकाले

कपोतमे बादरंगळगे पर्याप्तियोळु पीतवर्णमे उभयवर्कं । विग्रहगतियोळु शुक्लमे । वातकायिकं-
गळगेयुमपर्याप्तिकालवोळु गोमूत्रमुद्गाव्यक्तवर्णमवकुं । वनस्पतिकायिकंगळगे । गु १ । जी १२ ॥

प्रतिष्ठितप्रत्येक पर्याप्तापर्याप्त अप्रतिष्ठितप्रत्येकपर्याप्तापर्याप्त ४ । तित्यनिगोदबादरसूक्ष्म-
चतुर्गतिनिगोदबादरसूक्ष्मंगळंतु ४ वर्कं पर्याप्तापर्याप्तभेदविदमं टुकूडि पन्नेरडु । प ४ । ४ । प्रा ४ ।
३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ । ए । का १ । वन । यो ३ । औ । का मि । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । ५
सं १ । अ । व १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३

वनस्पतिपर्याप्तिकंगे । गु १ । जी ६ । प्र । अ । नित्यनिगोद बादरसूक्ष्मपर्याप्तचतुर्गति-
निगोदबादरसूक्ष्मपर्याप्तंगळु प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ । ए । का १ । वन । यो १ ।
औ । वे १ । षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ३

अ । आ १ । उ ३ ॥

१०

वनस्पतिकायिकापर्याप्तिकंगे । गु १ । मि । जी ६ । अ । प ४ अ । प्रा ३ । अ । सं ४ ।
ग । ति १ । इं १ । ए । का १ वन । यो २ । मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १
अच । ले २ कशु भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अशु

प्रत्येकवनस्पतिगळगे । गु १ मि । जी ४ । प्रति । अप्रति । प । अ । प ४ । ४ । प्रा ४ ।
३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो ३ । औ २ । का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । १५
सं १ । अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३

पीता । उभयविग्रहतौ शुक्ला । वातकायिकानां अपर्याप्तिकाले कपोता । विग्रहतौ शुक्ला । पर्याप्तिकाले
गोमूत्रमुद्गाव्यक्तवर्णा ।

वनस्पतिकायिकानां—गु १ । जी १२ प्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकबादरसूक्ष्मनित्यचतुर्गतिनिगोदाः पर्याप्ता-
पर्याप्ताः । प ४ ४ । प्रा ४ ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो ३ औ २ का १ । वे १ षं । २०
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—

३

गु १ । जी ६ प्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकबादरसूक्ष्मनित्यचतुर्गतिनिगोदाः पर्याप्ताः । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १
ति । इं १ ए । का १ व । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच । ले ६ । भ २ ।

३

सं १ मि । सं १ अ । आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी ६ अ । प ४ अ । प्रा ३ अ । सं ४ ।
ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो २ मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच । ले ६ २५

३

भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ । प्रत्येकानां—गु १ मि । जी ४ प्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितौ । प २
अ २ । प ४ ४ । प्रा ४ ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो ३ औ २ का १ । वे १ षं ।

प्रत्येकशरीरवनस्पतिपर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी २ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति ।
इं १ ए । का १ वन । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ भ २ ।
भा ३

सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥

प्रत्येकशरीरापय्यामिवनस्पतिगे । गु १ मि । जी १ । प ४ । प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ ति ।
५ इं १ ए । का १ वन । यो २ । मि । का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अ च
ले २ क शु भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ शु

इंतु निर्बृत्यपर्याप्तिकर्गे आलापत्रयं पेळत्पट्टुव । लब्ध्यपर्याप्तिकर्गे यो दे आलापमक्कुम-
दुवुं प्रत्येकबादरनिगोदप्रतिष्ठितंगळगे तु पेळदंते वक्तव्यमक्कुं ॥

साधारणवनस्पतिगळगे गु १ मि । जी ८ ॥ नित्यचतुर्गतिबादरसूक्ष्मपर्याप्तापय्याप्ति ।
१० प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो ३ । औ २ । का १ । वे १ षं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अ च ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

साधारणवनस्पतिपर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी ४ । नित्यचतुर्गतिबादरसूक्ष्मपर्याप्तिकर ।
प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ ।
सं १ । अ । द १ । अ च । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ १ । उ ३ ॥
भा ३

१५ क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—
३

गु १ मि । जी २ । प ५ ४ । प्रा ४ सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो १ औ । वे १ षं । क ४ ।
ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु
३

१ । जी २ अ । प ४ अ । प्रा ३ अ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो २ मि का । वे १ षं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ ।
३

२० तल्लब्ध्यपर्याप्तानां तन्निर्वृत्यपर्याप्तवत् ।

साधारणानां—गु १ मि । जी ८ बादरसूक्ष्मनित्येतरनिगोदाः पर्याप्तापर्याप्ताः । प ४ ४ । प्रा ४ ३ ।
सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो ३ औ २ का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १
अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी ४ बादरसूक्ष्म-
३

नित्यचतुर्गतिनिगोदाः पर्याप्ताः । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो १ औ । वे १
२५ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ १ । उ ३ ।
३

साधारणवनस्पत्यपर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी ४ । नित्यचतुर्गतिबादरसूक्ष्मापर्याप्तिकर ।
 प ४ । अ । प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ । साधारणवनस्पति । यो २ । मि १ ।
 का १ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अचक्षु ले २ भ २ । स १ । मि । सं १ ।
 भा ३
 असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥

साधारणबादरवनस्पतिगर्गे । गु १ । मि । जी ४ । नित्यचतुर्गतिपर्याप्तापर्याप्तिकर । ५
 प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो ३ । औ २ । का १ । वे १ षं ।
 क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । असं । आ २ । उ ३ ॥
 भा ३

साधारणबादरपर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी २ । नित्यचतुर्गतिपर्याप्तिकर । प ४ ।
 प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो १ । औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
 अ । द १ । अच ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ असं । आ १ । उ ३ ॥ १०
 भा ३

साधारणबादरापर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी २ । साधारणबादरनित्यचतुर्गति
 अपर्याप्तिकर । प ४ । अ प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो २ मि का ।
 वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
 भा ३ अशु
 असं । आ २ । उ ३ ॥

इंतु साधारणबादरवनस्पतिगे आलापत्रयं पेळत्पट्टुदु । आ लब्धपर्याप्तिकर्गे ओंदोदे १५
 आलापमकुं । साधारणसर्वसूक्ष्मगळगे सूक्ष्मपृथ्वीकायंगळगे पेळदंते पेळदुकोबुदु । अल्लि विशेष-

तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी ४ बादरसूक्ष्मनित्यचतुर्गतिनिगोदा अपर्याप्ताः । प ४ अ । प्रा ३ । सं ४ ।
 ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो २ मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले २ ।
 ३

भ २ । स १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ । तद्बादराणां—गु १ मि । जी ४ नित्यचतुर्गतिनिगोदाः
 पर्याप्तापर्याप्ताः । प ४ ४ । प्रा ४ ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो ३ औ २ का १ । वे १ २०
 षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ असं । आ २ । उ ३ ।
 ३

तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ । नित्यचतुर्गतिपर्याप्ती । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए ।
 का १ व । यो १ औ । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ अ ।
 ३

आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ जी २ । बादरनित्यचतुर्गती अपर्याप्ती । प ४ अ । प्रा ३ अ ।
 सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो २ मि का । वे १ षं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ २५
 अच । ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ । तल्लब्धपर्याप्तानां तन्निर्वृत्यपर्याप्तवत् ।
 भा ३ अशु

साधारणसर्वसूक्ष्माणां सूक्ष्मपृथ्वीकायवत् । किंतु जीवसमासाश्चत्वारः नित्यनिगोदानां चतुर्गतिनिगोदानां च
 १२६

माबुद्वेदोडे नाल्कु जीवसमासेगळं सूक्ष्मसाधारणवनस्पतिणे वितु वक्तव्यमक्कुं । मुळिवंते निर्विशेष-
मक्कुं । चतुर्गति निगोदंगळ्ग साधारणवनस्पतिणे पेळ्ळ क्रममेयक्कुं । नित्यनिगोदंगळ्गमुसा
क्रममेयक्कुं । अल्लिगुपयोगिगाथा :—

पुढवीआदिचउण्णं केवळिआहारदेवणि रयंगा ।
अपदिट्ठिदा ह्नु सव्वे पदिट्ठिवंगा ह्वे सेसा ॥

५

असकायंगळ्गे । गु १४ । जी १० । वि । ति । च सं पं । अ पं प ६ । ६ । ५ । ५ ।
२ २ २ २ २

प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । वि । ति ।
च । पं । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
६

आ २ । उ १२ ॥

१० असपर्याप्तिकर्ग । गु १४ । जी ५ । वि । ति । च । पं सं । पं अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ ।
१ १ १ १ १

८ । ७ । ६ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । वि । ति । च । पं । का १ । त्र । यो ११ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । असपर्याप्तिकर्गे गु ५ ।
६

मि । सा । अ । प्र । स यो । जी ५ । वि । ति । च । पं सं । अ सं प ६ । अ ५ । अ प्रा । ७ ।
१ १ १ १ १

७ । ६ । ५ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । वि । ति । च । पं । का १ । त्र । यो ४ । मिश्रत्रय-
१५ कर्मणयोगंगळु । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । म । श्रु । अ । के । कु । कु । सं ४ । अ । सा । छे ।

साधारणवत् । अत्रोपयोगिगाथा—

पुढवीआदिचउण्णं केवळिआहारदेवणिरयंगा ।

अपदिट्ठिदा ह्नु सव्वे पदिट्ठिवंगा ह्वे सेसा ॥१॥

असकायानां—गु १४ । जी १० । वि ति च सं असं । पं ६ ६ । ५ ५ । प्रा १० ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।
२ २ २ २ २

२० ७ ५ ६ ४ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग ४ । इ ४ वि ति च पं । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १४ । जी ५ । वि ति च
१ १ १ १ १

सं असं । प ६ ५ । प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४ १ । सं ४ ग ४ । इ ४ वि ति च पं । का १ । त्र । यो ११ । वे ३ ।
१ १

क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि
६

सा अ प्र स । जी ५ वि ति च सं असं । प ६ अ । ५ अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ ।

२५ इ ४ वि ति च पं । का १ । त्र । यो ४ मिश्राः ३ कर्मणः । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ म श्रु अ के कु कु ।
१ १ १ १

यथा । द ४ ले २ क शु भ २ । सं ५ । मि । सा उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ १० ॥
भा ६

असमिथ्यादृष्टिगण्णे । गु १ । मि । जी १० । बि । ति । च । सं । अ । प ६ । ६ ।
२ २ २ २ २

५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । का १ । अ । यो १३ ।
आहारद्वयवर्जितमाणि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द । २ ले ६ भ २ ।
६

सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ॥

५

असपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगण्णे । गु १ । मि । जी ५ । बि । ति । च । पं । अ । प ६ । ५ ।
१ १ १ १ १

प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । बि । ति । च । पं । का १ । अ । यो १० ।
१ १ १ १ १

म ४ । वा ४ । ओ १ । वे १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ भ २ । सं मि ।
६

सं २ । आ १ उ ५ ॥

असाऽपर्याप्तमिथ्यादृष्टिगण्णे । गु १ । मि । जी ५ । बि । ति । च । सं । अ । प ६ । ५ । १०
१ १ १ १ १

अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । सं ४ । ग ४ । इ ४ । बि । ति । च । पं । का १ । अ । यो ३ ।
१ १ १ १ १

ओ मि । वे मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु भ २ । सं १ ।
भा ६

मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥

सासावनसम्यग्दृष्टिप्रभृतियाणि अयोगिकेवलपट्यंतं मूलौघभंगमकुं ॥

सं ४ अ सा छे य । द ४ । ले २ क शु भ २ । सं ५ मि सा उ वे क्षा । सं २ । आ २ । उ १० । १५
भा ३

मिथ्यादृशां—गु १ मि । जी १० बि ति च सं अ सं । प ६ ६ । ५ ५ । प्रा १० ७, ९, ७, ८, ६, ७, ५,
२ २ २ २ २

६, ४, सं ४, ग ४, इ ४, का १ अ, यो १३ आहारकद्वयं नहि । वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ ।
द २, ले ६, भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी ५ बि ति च सं अ ।
१ १ १ १ १

प ६ । ५, प्रा १० ९ ८ ७, ६, सं ४ । ग ४, इ ४, बि ति च पं । का १ अ, यो १० म ४ वा ४ ओ १
१ १ १ १ १

वे १ । वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १, अ, द २, ले ६ । भ २, सं १ मि, सं २, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां— २०
६

गु १ मि । जी ५ बि ति च सं अ । प ६, ५ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, सं ४ ग ४, इ ४ बि ति च पं का १ अ,
१ १ १ १ १ १ १ १ १ १

यो ३ ओ मि १ वे मि १ का १, वे ३ क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले २ क शु भ २, सं १ मि, सं २,
भा ६

अकाङ्क्षगच्छे । गु० । जी० । प० । प्रा० । सं० ॥ ग१ । सिद्धगति । का० ।
यो० । वे० । क० । ज्ञा१ के० । सं० । द१ के० । ले० । भ० । सं१ । क्षा । सं० ।
आ१ । अनाहार । उ२ ॥

तत्सलब्धपथ्यस्तिकर्णे । गु१ । मि१ । जी५ । वि१ । ति१ । च१ । पं१ । अ१ । प६ । ५ । प्रा७ ।
१ १ १ १ १
५ ७ । ६ । ५ । ४ । सं४ । ग२ ति१ । म१ । इ४ । वि१ । ति१ । च१ । पं१ । का१ । त्र१ । यो२ । औ
१ १ १ १
मि१ । का१ । वे१ । षं१ । क४ । ज्ञा२ । सं१ । अ१ । द२ । च१ । अ१ । ले२ । क३ । भ२ । सं१ । मि१ ।
भा३ । अ३ । शु
सं२ । आ२ । उ४ । इ० । कायमार्गणं समाप्तमादुदु ॥

योगानुवादोऽलु मूलौघसंगमकुं । विशेषमावुर्देदोऽत्र त्रयोदशगुणस्थानंगच्छुषु । मनोयोगि
गच्छे । गु१३ । जी१ । पं० । प१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इ१ । का१ । त्र१ । यो४ ।
१० । नात्कुं । मनोयोग । वे३ । क४ । ज्ञा८ । सं७ । द४ । ले६ । भ२ । सं६ । सं१ ।
भा६
आ१ । उ१२ ॥

मनोयोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु१ मि१ । जी१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इ१ ।
का१ । यो४ । नात्कुं । मनोयोगंगच्छु । वे३ । क४ । ज्ञा३ । सं१ । अ१ । द२ । ले६ । भ२ ।
भा६
सं१ । मि१ । सं१ । आ१ । उ५ ॥

१५ मनोयोगिसासावनंगे । गु१ । सा१ । जी१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इ१ । पं१ ।
का१ । त्र१ । यो४ । मनोयोगंगच्छु । वे३ । क४ । ज्ञा३ । कु१ । कु१ । वि१ । सं१ । अ१ । द२ ।
ले६ । भ१ । सं१ । सासा । सं१ । आ१ । उ५ ॥
६

आ२ । उ४ । सासादनाद्ययोगांतेषु मूलौघवत्, अकायानां—गु०, जी०, प०, प्रा०, सं० ग१ सिद्धगतिः,
इ०, का०, यो०, वे०, क०, ज्ञा१ के०, सं० द० ले०, भ० । सं१ क्षा, सं० आ१ अनाहारः, उ२, तत्सलब्ध-
२० पर्याप्तानां—गु१, जी५ वि१ ति१ च१ सं१ अ१ प६, ५ अ, प्रा७, ७, ६, ५, ४, सं४, ग२ ति१ म, इ४
१ १ १ १ १
वि१ ति१ च१ पं१ । का१ । त्र१ । यो२ । औ१ मि१ । का१ । वे१ । षं१ । क४ । ज्ञा२ । सं१ । अ१ । द२ । च१ । अ१ । ले२ । क३ । भ२ ।
१ १ १ १
भा३ । अ३ । शु
भ२ । सं१ मि१ । सं२ । आ२ । उ४ । कायमार्गणा गता ।

योगानुवादे मूलौघः कितु गुणस्थानानि त्रयोदशैव, मनोयोगिनां—गु१३, जी१, पं०, प६, प्रा१०,
सं४ । ग४, इ१, का१ त्र१, यो४ म, वे३, क४, ज्ञा८, सं७, द४, ले६ भ२, सं६, सं१ आ१,
६

२५ उ१२ । तन्मिथ्यादृष्टां—गु१ मि१, जी१, प६, प्रा१०, सं४, ग४, इ१, का१, यो४ म, वे३, क४,
ज्ञा३, सं१ अ१, द२ ले६ भ२, सं१ मि१, सं१, आ१, उ५ । तत्सासादनस्य—गु१ सा१, जी१, प६,
६

प्रा१० । सं४ । ग४ । इ१ पं१, का१ त्र१ । यो४ म । वे३ । क४ । ज्ञा३ कु१ कु१ वि१ । सं१ अ१ ।

मनोयोगिमिश्रणे । गु १ । मिश्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं ।
का १ । यो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ भ १ । सं १ मिश्र ।
सं १ । आ १ । उ ५ ॥

मनोयोगि असंयतंगे गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
यो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ ५
भा ६
भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मनोयोगिदेशसंयतंगे । गु १ । दे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । इं १ ।
का १ । यो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ देश । द ३ ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वे ।
भा ३ । शु
क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मनोयोगिप्रमत्तंगे । गु १ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ म । इं १ । का १ । १०
यो ४ । मनोयोग । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । ले । प । द ३ । च । अ ।
अ । ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा ३

मनोयोगि अप्रमत्तप्रभृति सयोगकेवलपथ्यंतं मूलौघभंगमक्कुं । सर्वत्रनाल्कुं मनोयोगंगळु
सयोगरोळु सत्यानुभयमनोयोगद्वयं सत्यमनोयोगिमिथ्यादृष्टिप्रभृतिसयोगकेवलपथ्यंतं मनोयोगि
भंगवक्तव्यमक्कुं । विशेषमावुदं बोडे सत्यमनोयोगमोदे वक्तव्यमक्कुं । ई प्रकारमे अनुभयमनो- १५
योगिगळमक्कुं । विशेषमावुदं बोडे अनुभयमनोयोगमोदेयक्कुमेंबुदु ॥

द २, ले ६ । भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तन्मिश्रस्य—गु १ मिश्रं जी १ । प ६, प्रा १०, सं ४,
६

ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ म, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द २, ले ६ । भ १ । स १ मिश्रं,
६

सं १, आ १ । उ ५ । तदसंयतस्य—गु १ अ, जी १, प ६ । प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र,
यो ४ म, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, २०
६

आ १, उ ६ । तद्देशसंयतस्य—गु १ दे, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इं १ पं, का १ त्र,
यो ४ म, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ दे, द ३ च अ अ, ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ ।

भा ३ शु

उ ६ । तत्प्रमत्तस्य—गु १ प्र, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ म,
वे ३, क ४, ज्ञा ४ म श्रु अ म, सं ३ सा ले प, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा । सं १, आ १ ।

भा ३

उ ७ । तदप्रमत्तादिसंयोगांतं मूलौघः किंतु सर्वत्र मनोयोगावचत्वारः सयोगे सत्यानुभयो द्वौ सत्यानुभयमनो- २५
योगिनां मिथ्यादृष्ट्यादिसंयोगांतं मनोयोगिवत् किंतु योगस्थाने स्वस्वनामैकः ।

असत्यमनोयोगिगच्छो । गु १२ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
यो १ । असत्यमनोयोग वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ७ । अ । दे ।
सा । छे । प । सू । यथा । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं १
भा ६

आ १ । उ १० ॥

५ मिथ्यादृष्टिप्रभृतिक्षीणकषायपथ्यंतमसत्यमनोयोगिगच्छमुभयमनोयोगिगच्छं स्वस्वयोगमे
वक्तव्यमक्कं इति विशेषमक्कं ॥

वाग्योगिगच्छो । गु १३ । जी ५ । बि । ति । च । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ ।
७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । यो ४ । वचनयोगंगच्छ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । उ १२ ॥
६

१० वाग्योगिमिथ्यादृष्टिगच्छो । गु १ । मि । जी ५ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । यो ४ ॥ वाग्योगंगच्छ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ ।
द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ९ ॥
६

सासादनप्रभृतिसयोगकेवलपथ्यंत मनोयोगिभंगं वक्तव्यमक्कं । विशेषमिदु नाल्कुवाग्यो
गंगळेंदु वक्तव्यमक्कं । सयोगरिगेयं एल्लेल्लि मनोयोगं पेळल्पट्टुवल्लिल्लि वाग्योगं वक्तव्यमक्कं ॥

१५ काययोगिगच्छो । गु १३ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ ।
८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । २ ॥ सयोगिकेवलि । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ ।
यो ७ ॥ काययोगंगच्छ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
६
आ २ । उ १२ ॥

असत्यमनोयोगिनां—गु १२ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १
२० असत्यमनः । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ७ । अ । दे । सा । छे । प । सू । यथा । द ३ । ले ६ । भ २ ।
६

स ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ १० । तन्मिथ्यादृष्ट्यादिक्षीणकषायांतं योज्यं । उभयमनो-
योगिनामप्येवं । स्वस्वयोग एव वक्तव्यः ।

वाग्योगिनां—गु १३ । जी ५ । वि । ति । च । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । यो ४ । वा । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ ।
६

२५ स ६ । सं २ । आ १ । उ १२ । तन्मिथ्यादृष्ट्यां—गु १ । मि । जी ५ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
६ । सं ४ । ग ४ । का १ । यो ४ । वा । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ ।
६

स १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ । सासादनादिसयोगांतं मनोयोगिवत् किंतु योमस्थाने वाग्योगो वक्तव्यः ।

काययोगिनां—गु १३ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ४ । ६ । ४ । ३ । ४ ।
सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ७ । कायस्य । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । स ६ ।
६

काययोगिपट्याप्तिकर्गे । गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ । वै । आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ ।
ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । आहारकः । उ १२ ॥
६

अपट्याप्तिकाययोगिगळ्णे । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । स । जी ७ । अ । प । ६ । ५ । ४ ।
प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । ५
का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । म । श्रु । अ । के । सं ४ । अ १ । सा १ । छे १ । यथा
१ । द ४ । ले २ । क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । ऊ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ १० ॥
भा ६

काययोगिमिथ्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ५ ॥ आहार-
द्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । १०
६
आ २ । उ ५ ॥

काययोगिमिथ्यादृष्टिपट्याप्तिकर्गे । गु १ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो २ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥
६

काययोगिमिथ्यादृष्ट्यपट्याप्तिकर्गे । गु १ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । १५
४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ । मि । वै । मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ ।
सं १ । अ । द २ । ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

सं २ । आ २ । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
४ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ औ वै आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ सं ७ । द ४ ।
ले ६ । भ २ । स ६ । सं २ । आ १ आहारकः । उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स । जी २०
६

७ अ । प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ औमि वैमि आमि का ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु कु म श्रु अ के । सं ४ अ सा छे य । द ४ । ले २ क शु । भ २ । स ५ मि
भा ६

सा उ वे क्षा । सं २ । आ २ । उ १० । तन्मिथ्यादृशां—गु १ । जी १४ । प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७
९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३ । सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ५ आहारकद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १
अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा २५
६

१० ९ ८ ७ ६ ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो २ औ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
सं १ अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं २ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी ७ ।
६

प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ ।

काययोगिसासादनंगे । गु १ । सासा । जी २ प अ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । का १ । यो ५ । औ २ । वै २ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 ६

काययोगिसासादनपथ्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
 ५ का १ । यो २ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द २ । ले ६ भ १ । सं १ । सा ।
 सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 ६

काययोगिसासादनापथ्याप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ । ग ३ । म ।
 ति । दे । निरयं सासणसम्मो ण गच्छ दे । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा ६

१० काययोगिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मिश्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । का १ । यो २ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ ।
 सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 ६

काययोगिसंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । का १ । यो ५ । औ २ । वै २ । का १ । वे ३ । क ४ ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ ।
 १५ ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वै । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
 ६

ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं २ । आ २ उ ४ । तत्सासादनानां—गु १ सा ।
 भा ६

जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ५ औ २ वै २ का १ । वे ३ । क ४ ।
 ज्ञा ३ । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ अ । आ २ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ ।
 ६

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ यो २ औ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द २ ।
 २० ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ ।
 ६

सं ४ । ग ३ म ति दे । निरयं सासणसम्मो ण गच्छदीति वचनात् । इं १ । का १ । यो ३ औमि वैमि का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । सम्यग्-
 भा ६

मिथ्यादृशां—गु १ मिश्रं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो २ औ वै । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ मिश्रं । सं १ अ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—
 ६

२५ गु १ अ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ५ औ २ । वै २ । का १ । वे ३ ।

काययोगिपर्याप्तसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । हं १ । का १ ।
यो २ । औ वै । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
आ १ उ ६ ॥

काययोगिअपर्याप्तसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । हं १ ।
का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ । षं । पुं । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द ३ ।
ले २ क शु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा ६

काययोगिवेशप्रतिगच्छे । गु १ । वे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । म । ति ।
हं १ । का १ । यो १ । औ का । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । वे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ ।
सं १ । आ १ । उ ६ ॥

काययोगिप्रमत्तसंयतंगे । गु १ । प्र । जी २ । प ६ । द । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
म । हं १ पं । का १ अ । यो ३ । औ का १ । आहारक २ । वे ३ । क ४ । जा ४ । सं ३ । सा छे ।
प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा ३

काययोगिअप्रमत्तसंयतंगे । गु १ । अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । आहाररहित ।
ग १ । म । हं १ । पं । का १ अ । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । जा ४ । सं ३ । द ३ । ले ६ ।
भ १ । सं ३ । आ १ । उ ७ ॥

क ४ । जा ३ । सं १ अ । द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां—
६

गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । हं १ । का १ । यो २ औ वै । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ ।
द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । ३ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ ।
६

सं ४ । ग ४ । हं १ । का १ । यो ३ औमि वैमि का । वे २ षं पुं । क ४ । जा ३ । सं १ अ । द ३ ।
ले २ क शु । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । देशवर्तिनां—गु १ वे । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
६

सं ४ । ग २ म ति । हं १ । का १ । यो १ औ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ वे । द ३ । ले ६ ।
३

भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १
म । हं १ पं । का १ अ । यो ३ औ १ आहा २ । वे ३ । क ४ । जा ४ । सं ३ सा छे प । द ३ । ले ६ ।
३

भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १ अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
सं ३ आहारसंज्ञा नहि । ग १ म । हं १ पं । का १ अ । यो १ औ । वे ३ । क ४ । जा ४ । सं ३ । द ३ ।
१२७

१५

२०

२५

काययोगि अपूर्वकरणप्रभृतिक्षीणकषायपर्यंतं काययोगिगच्छे मूलौघभंगमक्कुं । विशेष-
मायुर्वेदोऽथ औदारिककाययोगमे वक्तव्यमक्कुं । काययोगि सयोगकेवलिगच्छे । गु १ । स के ।
जी २ । प । ख । प ६ । प ६ । प्रा ४ । २ । सं । ० । ग १ । म । इ १ पं । का १ । त्र । यो ३ ।
औ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ । यथा । द १ के । ले ६ भ १ । सं १ । क्षा ।
भा १

५ सं । ० । आ २ । उ २ । के । के ॥

औदारिककाययोगिगच्छे । गु १३ । जी ७ । प ६ । प ६ । प्रा १० । १ । ८ । ७ । ६ ।
४ । ४ । सं ४ । ग २ । म । ति । इ ५ । का ६ । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ ।
द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । उ १२ ॥
६

औदारिककाययोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी ७ । प ६ । प ६ । प्रा १० । १ । ८ ।
१० ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ ५ । का ६ । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ ।
अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥
६

औदारिककाययोगिसासादनंमे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । म । ति ।
इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ द २ । ले ६ । भ १ ।
सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

१५ औदारिककाययोगिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ मिथ्वा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द २ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ्वा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अष्टपूर्वकरणात् क्षीणकषायपर्यंतं मूलौघवत् किंतु औदारिक-

योग एव वक्तव्यः ।

२० सयोगकेवलिनां—गु १ सा, जी २ प ख, प ६ ६, प्रा ४ २ सं ०, ग १ म, इ १ पं, का १ त्र,
यो ३ औ २ का १, वे ० क ०, ज्ञा १ के, सं १ यथा, द १ के, ले ६ । भ १ स १ क्षा, सं ०, आ २,
भा १

उ २ के के । औदारिकयोगिनां—गु १३, जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, ४, सं ४, ग २
म ति, इ ५, का ६, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४, ले ६ । भ २, स ६, सं २, आ १,
भा ६

उ १२ । तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी ७, प ६ ५ ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग २ ति म, इ ५,
का ६, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २, ले ६ । भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५ ।
भा ६

तत्सासादनानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ म ति, इ १ पं, का १ त्र, यो १ औ, वे ३,
क ४, ज्ञा ३, सं १ अ द २, ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५, सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १ मिथ्वा,
६

औदारिककाययोगिसंयतसम्यग्दृष्टिगे । गु १ । अ । जी १ । पंजि । प । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ ।
द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

६

औदारिककाययोगि देशव्रतिगच्छे । गु १ । वे । जी १ । पं प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ५
ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । वे । द ३ ।
ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३

प्रमत्तसंयतप्रभृति सयोगिकेवलपद्व्यंतं काययोगिभंगं वक्तव्यमक्कुं विशेषमावुवेदोडे
सर्वत्रौदारिककाययोगमो दे वक्तव्यमक्कुं ॥

औदारिकमिश्रकाययोगिगच्छे । गु ४ । मि । सा । अ । सयो । जी ७ । अ । प ६ । ५ ।
४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ ५ । का ६ । यो १ । औ मि । १०
वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । विभंगमनःपर्ययरहितं । सं २ । अ । यथा । द ४ । ले १ क । भ २ ।
भा ६

सं ४ । मि । सा । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ १० ॥

औदारिकमिश्रकाययोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ ।
प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ ५ । का १ । यो १ । औ मि । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले १ क । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ४ ॥ १५
भा ३

औदारिकसासादनमिधर्गे । गु १ । सासा । जी १ । सं । पं । अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ ।
ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।

जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १, का १ त्र । यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ,
द २, ले ६ । भ १, स १ मिथं, सं १, आ १, उ ५, असंयतानां—गु १ अ, जी १ पं प, प ६, प्रा १०,
६

सं ४, ग २ ति म, इ १ पं, का १ त्र, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३, ले ६ । भ १, स ३, २०
६

सं १, आ १, उ ६, देशव्रतानां—गु १ दे, जी १ पं प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १ पं, का १ त्र,
यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ दे, द ३ ले ६, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, प्रमत्तात्संयोगांतं
३

काययोगिवत् कितु सर्वत्र औदारिकयोग एव वक्तव्यः ।

औदारिकमिश्रयोगिनां—गु ४ मि सा अ स । जी ७ अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ ।
४ । ३ । २ । सं ४ । ग २ ति म । इ ५ । का ६ । यो १ औमि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६, विभंगमनःपर्ययाभा- २५
वात् । सं २ अ य । द ४ । ले १ क । भ २ । स ४ मि सा वे क्षा । सं २ । आ १ । उ १० । तन्मिथ्यादृशां
भा ६

गु १ मि । जी ७ अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग २ ति म । इ ५ । का
६ । यो १ औमि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले १ । भ २ । स १ मि । सं २ । आ १ ।
भा ३

उ ४ । तत्सासादनानां—गु १ सा । जी १ सं अ । प ६ अ । प्रा ७ । सं ४ । ग २ ति म । इ १ पं ।

द २। ले १। अ १। सं १। सासा। सं १। आ १। उ ४॥
भा ३

औदारिकमिश्रकाययोगि असंयत सम्यग्दृष्टिगच्छे। गु १। असं। जी १ अ। प ६। प्रा ७।
अ। सं ४। ग २। ति। म। इं १। पं। का १। त्र। यो १। औ मि। वे १। पुं। क ४।
जा ३। सं १। अ। द ३। ले १ क। भ १। सं २। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ६

५ औदारिकमिश्रकाययोगिसयोगिकेवल्लिगच्छे। गु १। जी १। अ। प ६। प्रा २। का १।
आयुः १। सं। ०। ग १। म। इं १ पं। का १ त्र। यो १। औ मि। वे ०। क ०। जा १। के।
सं १। यथा। द १। के। ले १ क। भ १। सं १। क्षा। सं। ०। आ १। उ २॥
भा १ शु

वैक्रियिककाययोगिगच्छे। गु ४। मि। सा। मि। अ। जी १। प। प ६। प्रा १०।
सं ४। ग २। न। वे। इं १। पं। का १ त्र। यो १। वै का। वे ३। क ४। जा ६। कु। कु।
१० वि। म। शु। अ। सं १। अ। द ३। ले ६ भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा।
भा ६

सं १। आ १। उ ९॥

वैक्रियिक काययोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग २। न वे।
इं १। पं। का १ त्र। यो १। वै का। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १ अ। द २।
ले ६। सं १। मि। सं १। आ १। उ ५॥
६

१५ वैक्रियिककाययोगिसासादनगं। गु १। सा। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग २। न
वे। इं १ पं। का १। त्र। यो १। वै का। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २।
ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। उ ५॥
भा ६

का १ त्र। यो १ औमि। वे ३। क ४। जा २। सं १ अ। द २। ले १। भ १। सं १ सा। सं १।
भा ३ अशुभ

आ १। उ ४। तदसंयतानां—गु १ अ। जी १ अ प। प ६ अ। प्रा ७ अ। सं ४। ग २ ति म। इं १ पं।
२० का १ त्र। यो १ औमि। वे १ पु। क ४। जा ३। सं १ अ। द ३। ले १ क। भ १। सं २ वे क्षा।
भा ६

सं १। आ १। उ ६। तत्सयोगिनां—गु १। जी १ अ। प ६। प्रा २ का १ आ १। सं ०। ग १ म।
इं १ पं। का १ त्र। यो १ औमि। वे ०। क ०। जा १ के। सं १ य। द १ के। ले १ क। भ १।
१ शु

स १ क्षा। सं ०। आ १। उ २। वैक्रियिकयोगिनां—गु ४ मि सा मि अ। जी १ प। प ६। प्रा १०।
सं ४। ग २ न वे। इं १ पं। का १ त्र। यो १ वै। वे ३। क ४। जा ६ कु कु वि म शु अ। सं १।
२५ द ३। ले ६। भ २। स ६ मि सा मि उ वे क्षा। सं १। आ १। उ ९। तन्मिथ्यादृशां—गु १। जी १।
६

प ६। प्रा १०। सं ४। ग २ न वे। इं १ पं। का १ त्र। यो १ वै। वे ३। क ४। जा ३ कु कु वि।
सं १ अ। द २। ले ६। भ २। स १ मि। सं १। आ १। उ ६। तत्सासादनानां—गु १ सा। जी १।
६

वैक्रियिककाययोगिसम्यग्मिथ्यावृष्टिगच्छे । गु १ । मिथ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग २ न दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ ।
अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
भा ६

वैक्रियिककाययोगि असंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । अ सं । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग २ । न दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै । का । वे ३ । का ४ । ज्ञा ३ । म श्रु अ । ५
सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
६

वैक्रियिकमिथकाययोगिगच्छे । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । प ६ । अ । प्राण ७ । अ ।
सं ४ । ग २ । न दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै । मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म ।
श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले १ । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा ६

आ १ । उ ८ ॥

१०

वैक्रियिकमिथकाययोगिमिथ्यावृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ६ ।
अ । सं ४ । ग २ । न दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै । मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
अ । द २ । ले १ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
भा ६

वैक्रियिकमिथकाययोगसासावनसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ ।
प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ वेव । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १ । वै । मि । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । १५

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ १ । उ ५ । तत्सम्यग्मिथ्यादृशां— गु १ मिथं ।
६

जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु
वि । सं १ अ । द २ । ले ६ भ १ । स १ मिथं । सं १ । आ १ । उ ५ । तदसंयतानां—गु १ अ ।
६

जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । २०
ज्ञा ३ म श्रु अ । द ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । तन्मिथयोगिनां—गु १ मि
६

सा अ । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग २ न दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १ वैमि । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ । सं १ अ । द ३ । ले १ क । भ २ । स ५ मि सा उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ८ ।
भा ६

तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग २ न दे, इं १ पं, का १ त्र, यो १ वैमि,
वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले १ । भ २, स १ मि, सं १, आ १, उ ४ । तत्सासादनानां—गु १ सा, २५
६

जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, स ४, ग १ दे, इं १ पं, का १ त्र, यो १ वैमि, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १ अ,

सं १। अ। व २। ले १ क। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। उ ४॥
भा ६

वैक्रियिकमिश्रकाययोगिगच्छे। गु १। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७।
अ। सं ४। ग २। न दे। इ १। पं। का १ त्र। यो १। वे मि। वे २ वं पुं। क ४। जा ३। म।
श्रु। अ। सं १। अ। व ३। ले १ क। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ४

५ आहारककाययोगिगच्छे। गु १। प्र। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। म। इ १।
पं। का १ त्र। यो १। आ का। वे १ पुं। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं २। सा। छे। व ३।
ले शु १। भ १। सं २। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३

आहारकमिश्रकाययोगिगच्छे। गु १। जी १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १।
म। इ १। पं। का १ त्र। यो १। आ मि। वे १। पुं। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं २। सा।
१० छे। व ३। च। अ। अ। ले १ क। भ १। सं २। वे क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३ शु

काम्मर्णकाययोगिगच्छे। गु ४। मि। सा। अ। सयो। जी ७। अ। प ६। अ ५। अ ४।
अ। प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। २। सं ४। इ ५। का ६। यो १। का। वे ३। क ४। जा ६।
कु। कु। म। श्रु। अ। के। सं २। अ। यथा। व ४। च अ। अ। के। ले १ शु। भ २।
भा ६

सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ १। अनाहार। उ १०॥

१५ काम्मर्णकाययोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे। गु १। मि। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७।
७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इ ५। का ६। यो १। का। वे ३। क ४। जा २। कु। कु।

व २, ले १ क। भ १, सं १ सा। सं १, आ १, उ ४।

भा ६

तदसंयतानां—गु १ अ। जी १ अ। प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग २ न दे, इ १ पं, का १ त्र, यो
१ वे मि, वे २ वं पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ अ। व ३, ले १ क। भ १। सं ३, उ वे क्षा,
भा ४ शु ३ क १

२० सं १, आ १, उ ६। आहारकयोगिनां—गु १ प्र, जी १। प ६, प्रा १०, सं ४, ग १ म, इ १ पं, का
१ त्र। यो १ आ, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं २ सा छे, व ३, ले १ शु, भ १, सं २ वे क्षा, सं १,
भा ३

आ १, उ ६। तन्मिश्रयोगिनां—गु १ प्र, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ म, इ १ पं, का १ त्र,
यो १ आमि, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं २ सा छे, व ३ च अ अ, ले १ क। भ १, सं २ वे क्षा,
भा ३

सं १ आ १, उ ६। काम्मर्णयोगिनां—गु ४ मि सा अ स, जी ७ अ, प ६ अ, ५ अ, ४ अ, प्रा ७, ७, ६,
५, ४, ३, २, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १ का, वे ३, क ४, जा ६ कु कु म श्रु अ के, सं २ अ य,
व ४ च अ अ के, ले १ शु। भ २, सं ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ १ अनाहारः, उ १०। तन्मिथ्यादृशां—
भा ६

गु १ मि, जी ७ अ, प ६ ५ ४ अ, प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १ का, वे ३,

सं १। अ। द २। च। अ। ले १ शु। भ २। सं १। मि। सं २। आ १। अनाहार। उ ४॥
भा ६

काम्मंणकाययोगिसासावनसम्यग्दृष्टिगळगे। गु १। सासा। जी १। प ६। प्रा ७। सं ४।
ग ३। ति। म। वे। इं १। का १। यो १। का। वे ३। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १ अ।
द २। ले १ शु। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। अनाहार। उ ४॥
भा ६

काम्मंणकाययोगिसंयतसम्यग्दृष्टिगळगे। गु १। अ। जी १। प ६। अ। प्रा ७। अ। ५
सं ४। ग ४। इं १। का १। यो १। का। वे २। ष पुं। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ। सं १।
। अ। सं। व ३। ले १ शु। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ १। अनाहार। उ ६॥
भा ६

काम्मंणकाययोगि सयोगिकेवल्लिगळगे। गु १। सयो। जी १। अ। प ६। अ। प्रा २।
का। आ। सं। ०। ग १। म। इं १। पं का १ त्र। यो १। का। वे ०। क ४। ज्ञा १। के।
सं १। यथा। व १। के। ले १ शु। भ १। सं १। क्षा। सं। ०। आ १। अनाहार उ २। १०
भा १

के। के ॥ यितु योगमार्गणे समाप्तमावुवु ॥

वेदमार्गणानुवाददोळ मूलौघदोळे तंते जातव्यमक्कं। विशेषमावुवु दोळे नवगुणस्थानंगळे दु
वक्तव्यमक्कं। स्त्रीवेदिगळगे। गु ९। जी ४। संयसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तकर। प ६। ६। ५। ५।
प्रा १०। ७। ९। ७। सं ४। ग ३। म। ति। वे। इं १। पं। का १ त्र। यो १३॥ आहारक-
द्वयरहित। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ सं ४। अ। वे। सा। छे। १५
द ३। च। अ। अ। ले ६। भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं २।
६

आ २। उ ९॥

क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले १ शु, भ २, सं १ मि, सं २, आ १ अनाहारः, उ ४।
भा ६

तत्सासादनानां—गु १ सा, जी १, प ६, प्रा ७, सं ४, ग ३ ति म वे, इं १, का १, यो १ का, वे ३, क ४,
ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २, ले १ शु, भ १, सं १ सा, सं १। आ १ अना, उ ४। तदसंयतानां—गु १ २०
भा ६

अ, जी १। प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो १ का, १ वे २ वं पुं, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ,
सं १ अ, द ३ ले १ शु। भ १, सं ३ उ वे क्षा, सं १, आ १ अना। उ ६। तत्सयोगिनां—गु १ सयोगी,
भा ६

जी १ अ, प ६ अ, प्रा २ का, आ, सं ०, ग १ म, इं १, का १ त्र, यो १ का, वे ०। क ०। ज्ञा १ के, सं
१ य, द १ के, ले १ शु, भ १, सं १ क्षा, सं ०, आ १ अना, उ २ के के, योगमार्गणा गता। वेदमार्गणानुवादे
भा १

मूलौघवत् किंतु गुणस्थानानि नर्बव ।

तत्र स्त्रीवेदिनां—गु ९। जी ४ संयसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः। प ६ ६ ५ ५। प्रा १० ७ ९ ७। सं ४।
ग ३ म ति वे। इं १ पं। का १ त्र। यो १३ आहारद्वयं नहि। वे १ स्त्री। क ४। ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु
अ। सं ४ अ वे सा छे। द ३ च अ अ। ले ६। भ २। सं ६ मि सा मि उ वे क्षा। सं २। आ २। उ ९।
६

स्त्रीवेदिपर्याप्तकर्गे । गु ९ । जी २ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३ ।
ति । म । दे । इं १ । पं । का १ अ । यो १० । म ४ । व ४ । औ वै । वे १ । स्त्री । क ४ ।
जा ६ । कु । कु । वि । म । भ्रु । अ । सं ४ । अ । दे । सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ ।
भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ ९ ॥

५ स्त्रीवेदिपर्याप्तकर्गे । गु २ । मि । सा । जी २ । संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्तक । प ६ । ५ ।
अ प्रा ७ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ अ । यो ३ । ओमि १ । वै मि ।
का १ । वे १ । स्त्री । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ च । अ । ले २ क शु । भ २ ।
सं २ । मि । सा । सं २ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥

स्त्रीवेदिमिथ्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । मि । जी ४ । संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्तिकापर्याप्तक । प ६ ।
१० ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ अ । यो १३ ।
आहारकद्वयरहित वे १ । स्त्री । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ सं । व २ । ले ६ ।
भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ॥

स्त्रीवेदिमिथ्यादृष्टिपर्याप्तकर्गे । गु १ । जी २ । संज्ञ्यपर्याप्तासंज्ञ्यपर्याप्तक । प ६ । ५ ।
प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ अ । यो १० । म ४ । व ४ । औ ।
१५ वै । वे १ । स्त्री । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ सं । व २ । च । अ । ले ६ । भ २ ।
सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

स्त्रीवेदिमिथ्यादृष्टिअपर्याप्तकर्गे । गु १ । मि । जी २ । संज्ञ्यपर्याप्तासंज्ञ्यपर्याप्ता । प ६ ।
५ । अ । प्रा ७ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । इं १ । पं । का १ अ । यो ३ । औ । मि । वै मि ।

तत्पर्याप्तानां—गु ९ । जी २ सं अ । प ६ ५ । प्रा १० ९ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ अ ।
२० यो १० म ४ व ४ औ १ वै १ । वे १ स्त्री । क ४ । जा ६ कु कु वि म भ्रु अ । सं ४ अ दे सा छे । व ३
च अ अ । ले ६ । भ २ । स ६ मि सा मि उ वे क्षा । सं २ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ मि

सा । जी २ संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्ती । प ६ ५ अ । प्रा ७ ७ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ अ । यो
३ औमि वैमि का । वे १ स्त्री । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । व २ च अ । ले २ क शु । भ २ । स २
भा ३ अशु

मि सा । सं २ । आ २ । उ ४ कु कु च अ । तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि । जी ४ संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्तापर्याप्ता । प
२५ ६ ६ ५ ५ । प्रा १० ७ ९ ७ । सं ४ । ग ३ म ति दे । इं १ पं । का १ अ । यो १३ आहारकद्वयाभावात् ।
वे १ स्त्री । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं २ । आ २ । उ ५ ।

तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्ती । प ६ ५ । प्रा १० ९ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं ।
का १ अ । यो १० म ४ व ४ औ १ वै १ । वे १ स्त्री । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ च अ ।
ले ६ । भ २ । स १ । सं २ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ संज्ञ्यसंज्ञ्यपर्याप्ती ।

का। वे १ स्त्री। क ४। जा २। कु। कु। सं १। अ। व २। च। अ ले २ क शु भ २।
भा ३ अ शु
सं १। मि। सं २। आ २। उ ४॥

स्त्रीवेदिसासादनगे^१। गु १। सासा। जी २। पंचेंद्रियसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ति। प ६। प ६।
प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १३। आहारद्वयरहित।
वे १ स्त्री। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ १ सं १। सासा। ५
सं १। आ २। उ ५॥

स्त्रीवेदिसासावनपर्याप्तकर्णे^१। गु १। सासा। जी १। संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तक। प ६।
प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। व ४। औ। वै।
वे १ स्त्री। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ १। सं १।
सासा। सं १। आ १। उ ५॥ ६

स्त्रीवेदिसासावनाऽपर्याप्तकर्णे^१। गु १। सासा। जी १। स पं अ ० प ६। अ। प्रा ७।
अ। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो ३। औ मि। वै मि। का। वे १।
स्त्री। क ४। जा २। कु। कु। सं १। अ। व २। च। अ। ले २ क शु। भ १। सं १।
सासा। सं १। आ २। उ ४॥ ६

स्त्रीवेदिसाम्यग्मिध्यादृष्टिगच्छे^१। गु १। मिश्र। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। १५
ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। योग १०। म ४। व ४। औ १। वै १। वे १। स्त्री।
क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ १। सं १। मिश्र।
६

प ६ प ६ अ। प्रा ७ ७। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो ३ औमि वैमि का। वे १ स्त्री।
क ४। जा २ कु कु। सं १ अ। व २ च अ। ले २ क शु। म २। सं १ मि। सं २। आ २। उ ४।
भा ३ अ शु

तत्सासादनानां—गु १ सा। जी २ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तौ। प ६ ६। प्रा १० ७। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ २०
पं। का १ त्र। यो १३ आहारद्वयाभावात्। वे १ स्त्री। क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। व २। ले ६।
६

भ १। सं १ सा। सं १। आ २। उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १ सा। जी १ संज्ञिपर्याप्ति। प ६। प्रा १०।
सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो १० म ४ व ४ औ १ वै १। वे १ स्त्री। क ४। जा ३
कु कु वि। सं १ अ, व २ च अ। ले ६। भ १। सं १ सा। सं १। आ १। उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु
६

१ सा। जी १ सं अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र, यो ३ औमि वैमि का। २५
वे १ स्त्री। क ४। जा २ कु कु, सं १ अ, व २ च अ, ले २ क शु, भ १, सं १ सा, सं १, आ २, उ ४,
भा ३ अ शु

सम्यग्मिध्यादृशां—गु १ मिश्र, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र, यो १० म
४ व ४ औ वै। वे १ स्त्री, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २ च अ, ले ६, भ १, सं १ मिश्र,
६

सं १। आ १। उ ५॥

स्त्रीवेदिअसंयत्तंगे। गु १। अ। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे।
इं १। का १ त्र। यो १०। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु।
अ। सं १। अ। द ३। अ। च। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १।
६

५ आ १। उ ६॥

स्त्रीवेदिदेशव्रतिकंगे। गु १। दे। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग २ ति। म।
इं १। पं। का १ त्र। यो ९। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ।
सं १। दे। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३

स्त्रीवेदप्रमत्तंगे। गु १। प्र। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। म। इं १। पं।
१० का १ त्र। यो ९। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ। स्त्रीवेदिग-
ळप्प संक्लिष्टरोळु मनःपर्ययज्ञानमित्तल। सं २। सा छे। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ १।
भा ३ शु

सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥

स्त्रीवेदि अप्रमत्तंगे। गु १। अ प्र। जी १। प ६। प्रा १०। सं ३। आहाररहित। ग १।
म। इं १। पं। का १ त्र। यो ९। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु।
१५ अ। मनःपर्ययमित्तल। सं २। सा। छे।। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ।
भा ३ शुभ

वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥

स्त्रीवेदि अपूर्वकरणंगे। गु १। अपूर्व। जी १। प ६। प्रा १०। सं ३। ग १। म।
इं १। पं। का १। त्र। यो ९। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु।

सं १, आ १. उ ५, असंयत्तानां—गु १ अ। जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १,
२० का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वे, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६,
६

भ १, स ३ उ वे क्षा। सं १, आ १, उ ६। देशव्रतिनां—गु १ दे, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २
ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९ म ४, व ४ औ १, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ दे, द ३ च
अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६, प्रमत्तानां—गु १ प्र, जी १, प ६, प्रा १०,
३

सं ४, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९ म ४ व ४ औ १, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, संक्लिष्ट-
२५ त्वात् मनःपर्ययो नहि, सं २ सा छे, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६।
३

अप्रमत्तानां—गु १ अप्र, जी १, प ६, प्रा १०, सं ३ आहारसंज्ञा नहि, ग १ म, इं १ पं। का १ त्र,
यो ९, म ४ व ४ औ १, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ मनःपर्ययज्ञानं नहि, सं २ सा छे, द ३ च अ अ,
ले ६। भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ १। उ ६। अपूर्वकरणानां—गु १ अपू, जी १, प ६, प्रा १०,
३ शुभ

अ। सं २। सा छे। द ३ च। अ। अ। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा १

स्त्रीवेदि अनिवृत्तिकरणगे। गु १। अनि। जी १। प ६। प्रा १०। सं २। मै। प। ग १
म। इं १। पं। का १ त्र। यो ९। म ४। व ४। औ १। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। म। श्रु।
अ। सं २। सा छे। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा १

पुंवेदिगणगे। गु ९। जी ४। संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तकह। प ६। ६। ५। ५। प्रा १०। ५
७। ९। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १ त्र। यो १५। वे १। पुं। क ४।
ज्ञा ७। केवलज्ञानरहित। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ २।
सं ६। सं २। आ २। उ १०॥
६

पुंवेदिपर्याप्तकगे। गु ९। जी २। सं। अ। प ६। ५। प्रा १०। ९। सं ४। ग ३। ति। म।
दे। इं १। पं। का १ त्र। यो ११। म ४। व ४। औ १। वै १। आ १। वे १। पुं। क ४। १०
ज्ञा ७। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। द ३। च। अ। ले ६। भ २। सं ६। सं २।
आ १। उ १०॥
६

पुंवेदिअपर्याप्तकगे। गु ४। मि। सा। अ। प्र। जी २। प ६। ५। प्रा ७। ७। सं ४।
ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो ४। औ मि। वै मि। आ मि। का। वे १। पुं। क ४।
ज्ञा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं। अ। सा। छे। द ३। च। अ। अ। ले २ क शु भ २। १५
सं ५। मि सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥
भा ६

सं ३, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९ म ४ व ४ औ १, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं २ सा छे,
द ३ च अ अ, ले ६, भ १, सं २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ६। अनिवृत्तिकरणानां—गु १ अनि, जी १,
१

प ६, प्रा १०, मं २ मै प, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९ म ४ व ४ औ १, वे १ स्त्री। क ४, ज्ञा ३
म श्रु अ, सं २ सा छे, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, सं २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ६। पुंवेदिनां—गु ९, २०
१

जी ४ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६ ५ ५, प्रा १० ७ ९ ७, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र,
यो १५, वे १ पुं, क ४, ज्ञा ७ केवलज्ञानं नहि, सं ५ अ दे सा छे प, द ३ च अ अ, ले ६, भा २, सं ६,
६

सं २, आ २, उ १०। तत्पर्याप्तानां—गु ९, जी २ सं अ, प ६ ५, प्रा १० ९। सं ४, ग ३ ति म दे,
इं १ पं। का १ त्र, यो ११ म ४ व ४ औ वै आहा। वे १ पुं। क ४, ज्ञा ५, सं ५ अ दे सा छे प, द ३
च अ अ। ले ६। भ २। सं ६, सं २। आ १। उ १०। तदपर्याप्तानां—गु ४ मि सा अ प्र, जी २, २५
६

प ६ ५। प्रा ७ ७। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १। का १, यो ४ औ मि वै मि आ मि का। वे १ पुं, क ४,
ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ। सं ३ अ सा छे, द ३ च अ अ। ले २ क शु। भ २। सं ५ मि सा उ वे क्षा, सं २,
भा ६

आ २। उ ८।

पुंवेदिमिथ्यादृष्टिगणके । गु १ । मि । जी ४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ ।
सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे १ । पुं । क ४ ।
जा ३ । कु । कु । बि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ॥
६

पुंवेदिमिथ्यादृष्टिपथ्याप्तिके । गु १ । मि । जी २ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३ ।
ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १ । वै १ । वे १ । पुं । क ४ । जा ३ ।
कु । कु । बि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥
६

पुंवेदिमिथ्यादृष्टिअपथ्याप्तिके । गु १ । मि । जी २ । प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । ७ । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो ३ । औमि । वैमि । का । वेद १ । पुं । क ४ । जा २ ।
सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा १

१० पुंवेदिसासादनप्रभृति प्रथमानिवृत्तिपर्यंतं मूलौघभंग वक्तव्यमवकुमल्लि विशेषमावुदेदोडे :
सर्वत्र पुंवेदमोदे वक्तव्यमवकुं । सासादनमिश्रासंयतयो गतित्रयं वक्तव्यमवकुं । देशसंयतंगे गति-
द्वयं वक्तव्यमवकुं अन्यत्र विशेषमिल्ल । नपुंसकवेदिगणके । गु ९ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ ।
४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म ।
इं ५ । का ६ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे १ । पं । क ४ । जा ६ । कु । कु । बि । म । श्रु । अ ।
१५ सं ४ । अ । दे । सा । छे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ ९ ॥
६

नपुंसकवेदिपथ्याप्तिके । गु ९ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
सं ४ । ग ३ । न । ति । म । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १ । वै १ । वे १ । पं ।

तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी ४, प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, सं ४, ग ३ ति म दे,
इं १ पं, का १ त्र, यो १३ आहारद्वयं नहि, वे १ पुं, क ४, जा ३ कु कु बि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २,
६

२० स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी २, प ६ ५, प्रा १०, ९, सं ४, ग ९ ति म
दे, इं १ का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे १ पुं, क ४, जा ३ कु कु बि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २,
६

स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी २, प ६, ५, अ, प्रा ७, ७, सं ४, ग ३ ति
म दे, इं १ पं, का १, यो ३ औमि वैमि का, वे १ पुं, क ४, जा २, सं १ अ, द २ । ले २ क शु, भ २,
भा ६

स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तत्सासादनात् प्रथमानिवृत्तिपर्यंतं मूलौघः अत्र सर्वत्र पुंवेदो वक्तव्यः
२५ सासादनमिश्रासंयतानां गतित्रयं । देशसंयतस्य गतिद्वयं, अन्यत्र विशेषो नास्ति ।

नपुंसकवेदिनां—गु ९ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।
७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६ । यो १३ आहारद्वयाभावात् । वे १ पं, क ४,
जा ६ कु कु बि म श्रु अ, सं ४ अ दे सा छे, द ३ च अ अ, ले ६ भ २, स ६, सं २, आ २, उ ९ । तत्पर्या-
६

प्तानां—गु ९, जी ७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४ । ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो

क ४। जा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं ४। अ। दे। सा। छे। द ३। च। अ। अ। ले ६।
६
भ २। सं ६। सं २। आ १। उ ९॥

नपुंसकवेदिअपर्याप्तिकर्णे। गु ३। मि। सा। अ। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७।
६। ५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। औमि। वैमि। का।
१ १ १
वे १। षं। क ४। जा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३। च। अ। अ। ले २ क शु।
भा ३ अशु
भ २ सं १। ४। मि। सा। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥

नपुंसकवेदिमिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। मि। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६।
यो १३। आहारकद्वयवर्जित। वे १। नपुं। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २।
ले ६। भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ५॥
६

१०

नपुंसकवेदिमिथ्यादृष्टिपर्याप्तिकर्णे। गु १। मि। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९। ८।
७। ६। ४। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो १०। म ४। व ४। औ। वै।
वे १। षं। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २।
६
आ १। उ ५॥

नपुंसकमिथ्यादृष्टिअपर्याप्तिकर्णे। गु १। मि। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६।
५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। औमि। वैमि। का ४। वे १

१५

१० म ४ व ४ औ १ वै १, वे १ षं, क ४, जा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं ४ अ दे सा छे, द ३ च अ अ,
ले ६। भ २, स ६, सं २, आ १, उ ९। तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी ७, प ६ ५, ४ अ, प्रा ७, ७,
६

६, ५, ४, ३। ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४। ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो ३ औमि वैमि
का, वे १ षं, क ४, जा ५ कु कु म श्रु अ, सं १ अ, द ३ अ च अ, ले २ क शु भ २, स ४ मि सा वे क्षा,
भा ३ अशु

२०

सं २, आ २, उ ८। तन्मिथ्यादृष्टां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८,
६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १३ आहारद्वयं नहि, वे १ न, क ४,
जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २ उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी
६

७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८ उ ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ औ वै,
वे १ षं, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २। ले ६। भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५। तद-
६

२५

पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७, प ६, ५, ४, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६,

षं। क४। ज्ञा२। सं१। अ। द२। ले२ क शु। भ२। सं१ मि। सं२। आ२। उ४।
भा३ अशु

नपुंसकसासादनंगे। गु१। जी२। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग३। न। ति। म।
इं१। पं। का१। त्र। यो१२। म४। व४। औ२। वै१। कार्म्मण का१। वे१ नपुं। क४।
ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। च। अ। ले६। भ१। सं१। सासा। सं१।
६

५ आ२। उ५॥

नपुंसकवेदिसासादनपर्याप्तकंगे। गु१। सा। जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग३।
न। ति। म। इं१। पं। का१। त्र। यो१०। म४। व४। औ१। वै१। वे१ नपुं।
क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। ले६। भ१। सं१। सा। सं१।
६

आ१। उ५॥

१० नपुंसकवेदिसासादनापर्याप्तकंगे। गु१। सासा। जी१। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग२। ति। म। इं१। का१। यो२। औ१। मि। का। वे नपुं। क४। ज्ञा२। कु। कु।
सं१। अ। द२। च। अ। ले२ क शु। भ१। सं१। सासा। सं१। आ२। उ४॥
भा३ अशु

नपुंसकवेदिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगळगे। गु१। मिश्र। जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग३।
न। ति। म। इं१। पं। का१। त्र। यो१०। म४। व४। औ१। का। वै१। वे१ नपुं। क४।
१५ ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। च। अ। ले६। भ१। सं१। मिश्र। सं१। आ१।
६

उ५॥

यो३ औमि वैमि का, वे१ षं, क४, ज्ञा२, सं१ अ, द२, ले२ क, शु भ२, सं१ मि, सं२, आ२,
भा३ अशु

उ४, तत्सासादनानां—गु१। जी२, संपअ, प६, ६, प्रा१०, ७, सं४, ग३ न ति म, इं१ पं,
का१ त्र, यो१२ म४ व४ औ२ वै१ का१, वे१ षं, क४, ज्ञा३ कु कु वि, सं१ अ, द२ च अ,
२० ले६, भ१, सं१ सा, सं१, आ२, उ५, तत्पर्याप्तानां—गु१ सा, जी१ प, प६, प्रा१०, सं४,
६

ग३ न ति म, इं१ पं, का१ त्र, यो१० म४ व४ औका वैका, वे१ न, क४, ज्ञा३ कु कु वि, सं१
अ, द२, ले६, भ१, सं१ सा, सं१, आ१, उ५। तत्पर्याप्तानां—गु१ सा, जी१ अ, प६ अ।
६

प्रा७ अ, सं४, ग२ ति म, इं१, का१, यो२ औमि का, वे१ न, क४, ज्ञा२ कु कु, सं१ अ, द२
च अ, ले२ क शु। भ१, सं१ सा, सं१, आ२, उ४। तत्सम्यग्मिथ्यादृष्टीनां—गु१ मिश्र, जी१ प,
भा३ अशु

२५ प६, प्रा१०, सं४, ग३ न ति म, इं१ पं, का१ त्र, यो१० म४, व४ औ१ वै१, वे१ न, क४,

नपुंसकवेदिअसंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । अ सं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ३ । न ति । म । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । व ४ । औ का १ । वै का १ ।
का १ । वे १ नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ भ १ ।
सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

नपुंसकवेदि असंयतपर्याप्तिकंगे । गु १ । अ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ।
न । ति । म । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १ । वै १ । वे १ । नपुं । क ४ । ज्ञा ३ ।
म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
आ १ । उ ६ ॥

नपुंसकवेदिअपर्याप्तासंयतंगे । गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा ७ । अ । सं ४ ।
ग १ । न । इं १ । का १ । यो २ । वै मि १ । का १ । वे १ । नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ ।
द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु । भ १ । सं २ । क्षा । वे । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा १ अ शु

नपुंसकवेदिदेशवृत्तिगच्छे । गु १ । दे । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति म ।
इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे १ नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । दे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३ शु

नपुंसकवेदिप्रमत्तप्रभृतिप्रथमभागानिवृत्तिपर्यंतं स्त्रीवेदिगळ भंगमक्कुं विशेषमावुवेदोडे १५
सम्बन्ध नपुंसकवेदमोदे वक्तव्यमक्कुं ॥

ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, च अ, ले ६, भ १, स १ मिश्रं, सं १, आ १, उ ५ । तदसंयतानां—

गु १ अ, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ न ति म, इं १ पं, का १ अ, यो १२ म ४ व
४ औ वै वैमि का, वे १ न, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३,

सं १, आ २, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म । इं १, का १, २०
यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, वे १ न, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६ । भ १,

सं ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ ।
ग १ न । इं १ । का १ । यो २ वैमि का । वे १ न । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द ३ च अ अ ।
ले २ क शु । भ १ । स २ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देशवृत्तिनां—गु १ दे । जी १ प । प ६ ।
भा ३ अशुभ

प्रा १० । सं ४ । ग २ ति म । इं १ । का १ । यो ९ म ४ व ४ औ १ । वे १ न । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु २५
अ । सं १ दे । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तात् प्रथम-
भा ३ शु

भागानिवृत्त्यंतं स्त्रीवेदिवत् किंतु वेदस्थाने नपुंसकवेद एव ।

अपगतवेदगो^१ । गु ६ । अ । सू । उ । खी । स । अ । जी २ । प अ । प ६ । प्रा १० । ४ ।
 २ । १ । सं १ । परि । ग १ । म । इ १ । पं । का १ त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ २ । का १ ।
 वे ० । क ४ । २ । १ । लो । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं ४ । सा । छे । सू । यथा १ । द ४ ।
 च । अ । अ । के । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
 भा ६

५ इन्ती द्वितीयभागानिवृत्तिप्रभृति सिद्धपर्यंतं मूलौघभंगमक्कुं । मितु वेदमार्गणे
 समाप्तमावुदु ॥

कषायानुवादोळु ओघाळापं मूलौघभंगमक्कुं । विशेषमावुदं दोडे दशगुणस्थानंगळप्पुवु ।
 क्रोधकषायिगळगे । गु ९ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।
 ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १५ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ७ ।
 १० कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ५ अ । वे । सा १ । छे १ । प १ । द ३ । च । अ । अ ।
 ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १० ॥
 ६

क्रोधकषायिपर्याप्तिकर्गे । गु ९ । जी ५७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
 सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औका १ । वैका १ । आका १ । वे ३ ।
 क १ । क्रो । ज्ञा ७ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ५ । अ । वे । सा । छे । प । द ३ ।
 १५ च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १० ॥
 ६

क्रोधकषायिकापर्याप्तिकर्गे गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
 प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । अ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ४ । औमि । वैमि । अमि ।
 का । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । च ।

अपगतवेदानां—गु ६ अनि, सू, उ, क्षी, स, अ, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ४, २, १, सं १
 २० परि, ग १ म, इ १ पं, का १ त्र, यो ११ म ४ व ४ औ २ का १, वे ०, क ४, ३, २, १ लो । ज्ञा ५
 म श्रु अ म के, सं ४ सा छे सू य, द ४ च अ अ के, ले ६, भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ, २, उ ९ ।
 भा १

द्वितीयभागानिवृत्तितः सिद्धपर्यंतं मूलौघो भवति, वेदमार्गणा गता ।

कषायानुवादे ओघः तद्यथा—क्रोधिनां—गु ९, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९,
 ७, ८, ६ ७ ५ ६, ४, ४ ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १५, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ७ कु कु वि म श्रु अ
 २५ म, सं ५ अ दे सा छे य, द ३ च अ अ, ले ६ भ २, स ६, सं २, आ २, उ १० । तत्पर्याप्तानां—गु ९,
 ६

जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ४ इ ५, का ६, यो ११, म ४, व ४, औ वै
 आ, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ७ कु कु वि म श्रु अ म, सं ५ अ दे सा छे प, द ३ च अ अ, ले ६, भ २, स ६,
 ६

सं २, आ १, उ १० । तदपर्याप्तानां—गु ४ मि सा अ प्र । जी ७ अ, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६,
 ५, ४, ३ अ, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो ४ औमि वैमि अमि का, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ५ कु कु

अ। अ। ले २ क शु। भ २। सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥
भा ६

क्रोधकषायिमिथ्यावृष्टिगन्धे। गु १। मि। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। आहारद्वय-
रहित। वे ३। क १ क्रो। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ २।
सं १। मि। सं २। आ २। उ ५॥

५

क्रोधकषायिमिथ्यावृष्टिपर्याप्तिके। गु १। मि। जी ७। प। प ६। ५। ४। प। प्रा १०।
९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। औ। वे। वे ३।
क १ क्रो। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ २। सं १। मि।
सं २। आ १। उ ५॥

क्रोधकषायिमिथ्यावृष्ट्यपर्याप्तिके। गु १। मि। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७। १०
७। ६। ५। ४। ३। अ। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। औ मि। वे मि। का। वे ३।
क १ क्रो। जा २। कु। कु। सं १। अ। व २। ले २ क शु। भ २। सं १। मि। सं २।
आ २। उ ४॥

क्रोधकषायिसासादनं। गु १। सा। जी २। प अ। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४।
ग ४। इं १। पं। का १। अ। यो १३। आहारद्वयवर्जित। वे ३। क १ क्रो। जा ३। कु। कु। १५
वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥

म शु अ, सं ३ अ सा छे, द ३ व अ अ, ले २ क शु, भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा, सं २
भा ६

आ २, उ ८। तन्मिथ्यावृष्टां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५
६ ४ ४ ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६। यो १३ आहारद्वयं नहि, वे ३, क १ क्रो, जा ३ कु कु वि, सं १ अ,
द २ व अ। ले ६। भ २। स १ मि। सं २। आ २। उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १ मि। जी ७। प ६। २०
भा ६

५। ४। प्रा १०। ९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १० म ४ व ४ औ १
वे १। वे ३। क १ क्रो। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २ व अ। ले ६। भ २। स १ मि। सं २।
भा ६

आ १। उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि। जी ७ अ। प ६ ५ ४ अ। प्रा ७। ७। ६। ५। ४।
३ अ। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३ औ मि वे मि का। वे ३। क १ क्रो। जा २ कु कु।
सं १ अ। द २। ले २ क शु। भ २। स १ मि। सं २। आ २। उ ४। तत्सासादनानां—गु १ सा। २५
भा ६

जी २ प अ। प ६ ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ४। इं १ पं। का १ अ। यो १३ आहारद्वयवर्ज्यं। वे ३।
क १ क्रो। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २। ले ६। भ १। स १ सा। सं १। आ १। उ ५।
भा ६

क्रोधकषायिसासादनापय्यामिकंगे । गु १ । सासा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ । वै । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ ।
कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

क्रोधकषायिसासादनापय्यामिकंगे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा ७ । अ ।
५ सं ४ । ग ३ । नरकगतिवर्जित । इं १ पं । का १ त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ ।
क १ क्रो । जा २ । सं १ अ । द २ । ले २ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

क्रोधकषायिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगळगे । गु १ । मिथ्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ । मिथ्र सं १ । द २ । ले ६ ।
भ १ । सं १ । मिथ्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

१० क्रोधकषायिसंयतसम्यग्मिथ्यादृष्टिगळगे । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क १ । क्रो । जा ३ ।
म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
आ २ । उ ६ ॥
६

क्रोधकषायि असंयतसम्यग्मिथ्यादृष्टिपय्यामिकंगे । गु १ । असं । जी १ । प । प ६ । प्रा १० ।
१५ सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ ।
अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
६

तत्पर्याप्तानां—गु १ सा । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० म ४
व ४ औ वै । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ च अ । ले ६ । भ १ । स १ सा ।
६

सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ३ नरक-
२० गतिर्नहि । इं १ पं । का १ त्र । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क १ क्रो । जा २ । सं १ अ । द २ ।
ले २ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १ मिथ्रं, जी १ प । प ६ ।
६

प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ त्र । यो १० औ । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ मिथ्याणि । सं १ अ ।
द २ । ले ६ । भ १ । स १ मिथ्रं । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ अ । जी २ प अ । प ६
६

६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ आहारद्वयं नहि । वे ३ । क १ क्रो । जा
२५ ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ।
६

तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । वे ३ ।
क १ क्रो । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ ।
६

क्रोधकषायिअपर्याप्तिसंयतंगे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । पं । का १ । अ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ । पुं । नपुं । क १ क्रो ।
जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । उ ।
भा ६
वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

क्रोधकषायिदेशव्रतिकंगे । गु १ । वे । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । ५
इं १ । पं । का १ । अ । यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । वे । व ३ । च ।
अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ६

क्रोधकषायिप्रमत्तसंयतंगे । गु १ । प्र । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ म ।
इं १ पं । का १ । अ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ १ । आ २ । वे ३ । क १ क्रो । जा ४ ।
म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । १०
भा ३
आ १ । उ ७ ॥

क्रोधकषायिअप्रमत्तंगे । गु १ । अप्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मै । प । ग १ ।
म । इं १ । पं । का १ । अ । यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । छे ।
प । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा ३

क्रोधकषायिअपूर्वकरणंगे । गु १ । अपूर् । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मै । १५
प । ग १ । म । इं १ पं । का १ । अ । यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं २ ।
सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा १

उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ । अ ।
यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ पु न । क १ क्रो । जा ३ म श्रु अ । सं १ । अ । व ३ च अ अ । ले २ क शु ।
भा ६

भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देशव्रतानां—गु १ । दे । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । २०
ग २ ति म । इं १ पं । का १ । अ । यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । जा ३ म श्रु अ । सं १ । दे । व ३ च अ अ ।
ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ । प्र । जी २ प अ । प ६ ६ ।
३

प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ म । इं १ पं । का १ । अ । यो ११ म ४ । व ४ । औ १ । आ २ । वे ३ । क १
क्रो । जा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ।
३

अप्रमत्तानां—गु १ । अप्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ भ मै प । ग १ म । इं १ पं । का १ । अ । यो ९ । वे ३ । २५
क १ क्रो । जा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । व ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ ।
३

उ ७ । अपूर्वकरणानां—गु १ । अपूर् । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ३ भ मै प । ग १ म । इं १ पं । का १ । अ ।
यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । जा ४ म श्रु अ म । सं २ सा छे । व ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं २ उ
१

क्रोधकषायिप्रथमानिवृत्तिकरणगे । गु १ । अनि । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं २ ।
मै । प । ग १ । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म ।
सं २ । सा । छे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा १

क्रोधकषायिद्वितीयभागानिवृत्तिकरणगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । प ।
५ ग १ । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ० । क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । सं २ ।
सा । छे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा १

ई प्रकारविदमे मानमायाकषायंगळगे मिथ्यादृष्टिप्रभृति अनिवृत्तिकरणपर्यंतं वक्तव्यमवकुं ।
विशेषमावुदे दोडे एल्लि एल्लि क्रोधकषायमल्लल्लि मानमायाकषायंगळ वक्तव्यंगळप्पुवु । लोभ-
कषायवक्तुं क्रोधकषायभंगमेवकुं । विशेषमावुदे दोडे ओघालापदोळु दश गुणस्थानंगळे दु वक्तव्य-
१० मवकुमारु संयमगळुं लोभकषायमो दे वक्तव्यमवकुं ॥

अकषायरुगळगे । गु ४ । उ । क्षी । स । अ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ४ । २ । १ ।
सं । ० । ग १ । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ २ । का १ । वे ० ।
क ० । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं १ । यथा । द ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । भ १ ।
सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
भा १

१५ अकषायसामान्यं पेळलपट्टुवु । विशेषविदमुपशांतकषायप्रभृति सिद्धपरमेष्ठिगळपर्यंतं
सामान्यभंगगळप्पुवु । इंतु कषायमार्गगे समाममावुवु ॥

ज्ञानानुवादेदोळु ओघालापंगळु मूलोघभंगगळप्पुवु । कुमतिकुश्रुतज्ञानिगळगे । गु २ । मि ।
सा । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ ।

२० क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । अनिवृत्तिकरणानां प्रथमभागे—गु १ अनि । जी १ प । प ६ । प्रा १० ।
सं २ मै प । ग १ म । इ १ पं । का १ त्र । यो ९ । वे ३ । क १ क्रो । ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं २ सा
छे । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं २ उ क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । द्वितीयभागे—गु १ । जी १ ।
१

प ६ । प्रा १० । सं १ प । ग १ म । इ १ पं । का १ त्र । यो ९ । वे ० । क १ क्रो । ज्ञा ४ म श्रु अ प ।
सं २ सा छे । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं २ उ क्षा । सं १ । उ ७ । एवं मानमाययोरपि स्वस्थानि-
१

वृत्तिभागपर्यंतं वक्तव्यं किंतु क्रोधस्थाने तत्तन्नामकषायः, तथा लोभस्यापि, किंतु गुणस्थानानि दश ।

२५ अकषायिणां—गु ४ उ क्षी सा अ, जी २, प ६ ६, प्रा १० ४ २ १, सं ०, ग १ म, इ १ पं,
का १ त्र, यो ११ म ४ व ४ ओ २ का १, वे ०, क ०, ज्ञा ५, म श्रु अ म के, सं १ य, द ४ च अ अ के,
ले ६ । भ १, सं २ उ क्षा, सं १, आ २, उ ९ । इदं सामान्यकथनं विशेषेण उपशांतकषायात्सिद्धपर्यंतं
१

सामान्यभंगो भवति । कषायमार्गणा गता ज्ञानानुवादे ओघालाप भवति ।

कुमतिकुश्रुतानां—गु २ मि सा, जी १४, प ६ ६ ५ ५ ४ ४, प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४

३।सं४।ग४।इं५।का६।यो१३।वे३।क४।ज्ञा२।सं१अ।द२।ले६।
भ२।सं२।मि।सा।सं२।आ२।उ४॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानिपय्याप्तकर्मो।गु२।मि।सा।जी७।प।प६।५।४।प्रा१०।
९।८।७।६।४।सं४।ग४।इं५।का६।यो१०।म४।वा४।औका१।वैका१।
वे३।क४।ज्ञा२।कु।कु।सं१।अ।द२।च।अ।ले६।भ२।सं२।मि।
सा।सं२।आ१।उ४॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानिपय्याप्तकर्मो।गु२।मि।सा।जी७।अ।प६।५।४।अ।
प्रा७।७।६।५।४।३।सं४।ग४।इं५।का६।यो३।ओमि।वैमि।का।
वे३।क४।ज्ञा२।सं१।अ।द२।ले२कशु।भ२।सं२।मि।सा।सं२।
आ२।उ४॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानिमिथ्यादृष्टिगल्गे।गु१।मि।जी१४।प६।६।५।५।४।४।
प्रा१०।७।९।१।७।८।६।७।५।६।४।४।३।सं४।ग४।इं५।का६।
यो१३।वे३।क४।ज्ञा२।सं१।अ।द२।ले६।भ२।सं१।मि।सं२।
आ२।उ४॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानिपय्याप्तकर्मो।गु२।मि।सा।जी७।प।प६।५।४।प्रा१०।
९।८।७।६।४।सं४।ग४।इं५।का६।यो१०।म४।वा४।औका१।वैका
१।वे३।क४।ज्ञा२।कु।कु।सं१।अ।द२।च।अ।ले६।भ२।सं२।मि।
सा।सं२।आ१।उ४॥

३, सं४।ग४, इं५, का६, यो१३, वे३, क४, ज्ञा२, सं१अ, द२, ले६, भ२, स२मि सा,

सं२, आ२, उ४।तत्पर्याप्तानां—गु२मि सा, जी७प, प६५४, प्रा१०९८७६४, सं४, ग४,
इं५, का६, यो१०म४व४औ१वै१, वे३, क४, ज्ञा२, कुकु, सं१अ, द२चअ, ले६,

भ२, स२मि सा, सं२, आ१, उ४।तत्पर्याप्तानां—गु२मि सा, जी७अ, प६५४, प्रा७७६
५४३, सं४, ग४, इं५, का६, यो३ओमि वैमि का, वे३, क४, ज्ञा२, सं१अ, द२चअ,
ले२कशु।भ२, स२मि सा, सं२, आ२, उ४।तन्मिथ्यादृशां—गु१मि, जी१४, प६६५५

४४, प्रा१०७९७८६७५६४४३, सं४, ग४, इं५, का६, यो१३आहारखयवज्यं, वे३,
क४, ज्ञा२कुकु, सं१अ, द२चअ, ले६, भ२, स१मि, सं२, आ२, उ४।तत्पर्याप्तानां—

गु१मि, जी७प, प६५४प, प्रा१०९८७६४, सं४, ग४, इं५, का६, यो१०, म४व४
औ१वै१, वे३, क४, ज्ञा२कुकु, सं१अ, द२चअ, ले६, भ२।स१मि, सं२, आ१,

कुमतिकुश्रुतज्ञानिअपर्याप्तकर्णे । गु २ । मि । सा । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
 प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । सं २ । मि । सा । सं २ ।
 भा ६
 आ २ । उ ४ ॥

५ कुमतिकुश्रुतज्ञानिमिथ्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ ।
 प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ ।
 आहारकद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ ।
 सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥

१० कुमतिकुश्रुतज्ञानिमिथ्यादृष्टिअपर्याप्तकर्णे । गु १ । मि । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प ।
 प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ ।
 वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ ।
 मि । सं २ । आ १ । उ ४ ॥

१५ कुमतिकुश्रुतज्ञानिमिथ्यादृष्टिअपर्याप्तकर्णे । गु १ । मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ ।
 अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले २ क शु । भ २ । सं १ ।
 भा ६
 मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानिसासादनर्णे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ । आहारद्वयवर्जितं । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
 सं १ अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ उ ४ ॥
 ६

२० कुमतिकुश्रुतज्ञानिसासादनपर्याप्तकर्णे गु १ । सासा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ ।
 कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
 ६

उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ अ, प ६ ५ ४ अ, प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६,
 यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, ले २ क शु, भ २, स १ मि, सं २,
 ६

२५ आ २, उ ४ । तत्सासादनानां—गु १ सा, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र,
 यो १३ आहारद्वयवर्ज्यं । वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २ च अ, द २ च अ, ले ६, भ १ ।
 ६

स १ सा, सं १, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं,
 का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, स १ सा,
 ६

कुमतिकुश्रुतज्ञानिसासादनपय्यन्तिकर्गे । गु १ । सास । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ ।
भा ६
आ २ । उ ४ ॥

विभंगज्ञानिगळ्गे । गु २ । मि । सा । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । ५
का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । विभंग ।
सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं २ । मि । सा । सं १ । आ १ । उ ३ ॥
६

विभंगज्ञानिमिथ्यादृष्टिगळ्ग । गु १ । मि । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ ।
सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ३ ॥ ६

१०

विभंगज्ञानिसासादनर्गे । गु १ । सासा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । विभंग । सं १ ।
अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ३ ॥
६

मतिश्रुतज्ञानिगळ्गे । गु २ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । म । श्रु । सं ७ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । १५
सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥ ६

सं १, आ १, उ ४, तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं,
का १ त्र, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २, ले २ क शु । भ १, स १ सा,
भा ६

सं १, आ २, उ ४ । विभंगज्ञानिनां—गु २ मि सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं,
का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, वे ३, क ४, ज्ञा १ विभंगः । सं १ अ, द २, ले ६ । भ २, २०
६

स २ मि सा, स १, आ १, उ ३ वि च अ । तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४,
ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १०, वे ३, क ४, ज्ञा १, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ
६

१, उ ३ । तत्सासादनानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो १०, म ४
व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा १ विभंगः । सं १ अ, द २, ले ६ । भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ३ ।
६

मतिश्रुतानां—गु २, जी २ प अ । प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग ४ । इं १ । का १ त्र, यो १५ । वे ३ । २५
क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं ७ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १, आ २ । उ ५ ।
६

मतिश्रुतज्ञानिपय्याप्तिकर्गे । गु ९ जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । ओ का १ । वै का १ । आ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ ।
म । श्रु । सं ७ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
६

आ १ । उ ५ ॥

५ मतिश्रुतज्ञानिपय्याप्तिकर्गे । गु २ । असंयत । प्रमत्त । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो ४ । ओ मि । वै मि । आ मि । काम्मण । वे २ । पुं ।
नपुं । क ४ । ज्ञा २ । म । श्रु । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु । भ १ ।
भा ६

सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

१० मतिश्रुतज्ञानिपय्याप्तिकर्गे । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । म । श्रु । सं १ ।
अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
६

मतिश्रुतज्ञानिपय्याप्तिसंयतसम्यग्दृष्टिगर्गे । गु १ । अ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा २ । म । श्रु । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा ।
६

१५ सं १ । आ १ । उ ५ ॥

मतिश्रुतज्ञानिपय्याप्तिसंयतगर्गे । गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे २ । पुं । नपुं । क ४ । ज्ञा २ ।
म । श्रु । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा ६

आ २ उ ५ ॥

२० तत्पर्याप्तानां—गु ९ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ११ म ४ व ४ ओ
वै आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं ७ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ ।
६

आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु २ असंयतः प्रमत्तः । जी १ अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं ।
का १ यो ४ ओ मि वै मि आ मि का । वे २ पुं न । क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं ३ अ सा छे । द ३ च अ
अ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ । तदसंयतानां—गु १ अ । जी २
भा ६

२५ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ यो १३ आहारद्वयं नहि । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । अ २ । उ ५ ।
६

तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ यो १० । म ४ ।
व ४ । ओ १ । वै १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । म श्रु । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ ।
६

३० आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १
अ । यो ३ ओ मि वै मि का । वे २ पुं न । क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले २ क शु ।
भा ६

देशव्रतिप्रभृति क्षीणकषायपर्यंतं मूलौघभंगमक्कुं । विशेषमावुदे दोडे आभिनिबोधश्रुतज्ञानंगळगे दु वक्तव्यमक्कुं । अवधिज्ञानवक्की प्रकारमेयक्कुं । विशेषमावुदे दोडे अवधिज्ञानमो देये दु वक्तव्यमक्कुं । मतिश्रुतज्ञानंगळेर दुं निरुद्धंगळा गुत्तिरलु मतिज्ञानश्रुतज्ञानद्वयमुं मतिश्रुतावधिज्ञानत्रयमुं मतिश्रुतमनःपर्ययत्रयमुं मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानचतुष्टयमुमपुवु ।

मनःपर्ययज्ञानिगळगे । गु ७ । प्र अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । जी १ । प । प ६ । ५
प्रा १० । सं ४ । ग १ म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा १ । म । सं ४ ।
सा । छ । सू । यथा । मनःपर्ययज्ञानिगळगे परिहारविशुद्धिसंयममिल्ल । द ३ । च । अ । अ ।
ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ४ । म । च । अ । अ ॥ इंतोक्षीण-
भा ३
कषायपर्यंतं नडसत्पडुवु ॥

केवलज्ञानिगळगे । गु २ । सयोग । अयोग । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा ४ । २ । १ । १०
सं । ० । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ७ । म २ । व २ । औ २ । का १ । वे ० ।
क ० । ज्ञा १ । के । सं १ । यथा । द १ के । ले ६ । भ १ । सं १ क्षा । सं । ० । आ २ । उ २ ॥
भा १

सयोगाऽयोगिसिद्धपरमेष्ठिगळगे मूलौघमे वक्तव्यमक्कुं । इंतु ज्ञानमार्गणे सप्ताप्तमादुडु ॥

संयमानुवादोळु । गु ९ । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ । जी २ । प । अ ।
प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग १ । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । वे २ । १५
द्वयरहितं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं ५ । सा । छे । प । सू । यथा ।
द ४ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
भा ३

प्रमत्तसंयतंगे । गु १ । प्र । जी । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । म ।
इं १ । पं । का १ त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । आ २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ ।

भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ । देशव्रतात् क्षीणकषायपर्यंतं मूलौघभंगो भवति किंतु ज्ञान- २०
स्थाने मतिश्रुते वक्तव्ये । अवधेरपि एवं, ज्ञानस्थाने अवधिर्वक्तव्यः । वा मतिश्रुते निरुद्धे । मतिश्रुतावधित्रयं
वा मतिश्रुतमनःपर्ययत्रयं वा मतिश्रुतावधिमनःपर्ययचतुष्टयं वक्तव्यं ।

मनःपर्ययज्ञानिनां—गु ७ प्र अ अ अ सु उ क्षी । जी १ प । प ६ । ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ म । इं
१ पं । का १ त्र । यो ९ । वे १ पुं । क ४ । ज्ञा १ म, सं ४ सा छे सू य परिहारविशुद्धिर्नहि, द ३ च अ
अ, ले ६ । भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १ । आ १ । उ ४ । सयोगायोगिसिद्धेषु मूलौघः, ज्ञानमार्गणा गता, २५
३

संयमानुवादे—गु ९ प्र अ अ अ मू उ क्षी स अ । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ । ४ । २ ।
१ । सं ४ । ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ वैक्रियिकद्वयं नहि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ म श्रु अ
म के । सं ५ सा छे प सू य । द ४ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ । प्रमत्तानां—गु
३

१ प्र । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ । ४ । म १ म । इं १ पं, का १ त्र । यो ११ म ४ व ४ औ
१३०

म।श्रु।अ।म।सं३।सा।छे।प।व३।च।अ।अ।ले६।भ१।सं३।उ।वे।
भा३
क्षा।सं१।आ१।उ७॥

अप्रमत्तसंयतंगे।गु१।अ।जी१।प।प६।प्रा१०।सं३।आहारसंज्ञारहित।
ग१म।इं१।पं।का१त्र।यो९।वे३।क४।ज्ञान४।म।श्रु।अ।म।सं३।सा।
५ छे।प।व३।ले६।भ१।सं३।उ।वे।क्षा।सं१।आ१।उ७॥
भा३

अपूर्वकरणप्रभृति अयोगिकेवलपय्यंतं मूलौघभंगमक्कुं।सामायिकसंयतंगे।गु४।प्र।
अ।अ।अ।जी२।प।अ।प६।६।प्रा१०।७।सं४।ग१।म।इं१।पं।का१त्र।
यो११।म४।वा४।ओ।का१।आ२।वे३।क४।ज्ञा४।म।श्रु।अ।म।सं१।
सामायिक।द३।च।अ।अ।ले६।भ१।सं३।उ।वे।क्षा।सं१।आ१।उ७॥
भा३

१० अनिवृत्तिपय्यंतमूलौघभंगमक्कुं।छेदोपस्थापनसंयमक्कुमो प्रकारमे वक्तव्यमक्कुं॥

परिहारविशुद्धिसंयमिगळ्गे गु२।प्र।अ।जी१।प६।प्रा१०।सं४।ग१।म।
इं१।पं।का१त्र।यो९।वे१पुं।क४।ज्ञा३।म।श्रु।अ।सं१।परिहारविशुद्धि।
द३।च।अ।अ।ले६।भ१।सं२।वे।क्षा।सं१।आ१।उ६॥
भा३

प्रमत्ताप्रमत्तपरिहारविशुद्धिसंयतरुगळ्गे पेळत्पडुवल्लि ओघभंगमेयक्कुं।सूक्ष्मसांपराय-
१५ संयमक्के मूलौघभंगमेयक्कुं।यथाख्यातसंयमिगळ्गे।गु४।उ।क्षी।स।अ।जी२।प।अ।
प६।६।प्रा१०।४।२।१।सं।०।ग१।म।इं१।पं।का१त्र।यो११।म४।वा४।

१ आ२।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं३साछेप।द३चअअ।ले६।भ१।सं३
६

उवेक्षा।सं१।आ१।उ७।अप्रमत्तानां—गु१अप्र।जी१प।प६।प्रा१०।सं३।आहार-
संज्ञा नहि।ग१म।इं१पं।का१त्र।यो९।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं३साछेप।
२० द३।ले६।भ१।सं३उवेक्षा।सं१।आ१।उ७।अपूर्वकरणादयोगिपर्यंतं मूलौघभंगो भवति।
३

सामायिकसंयतानां—गु४प्रअअअ।जी२पअ।प६६।प्रा१०।७।सं४।ग१म।
इं१पं।का१त्र।यो११।म४व४ओ१आ२।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं१
सामायिक।द३चअअ।ले६।भ१।सं३उवेक्षा।सं१।आ१।उ७।अनिवृत्तिपर्यंतं
३

मूलौघभंगो भवति।छेदोपस्थापनसंयतानामप्येवं।

२५ परिहारविशुद्धिसंयमिनां—गु२प्रअ।जी१।प६।प्रा१०।सं४।ग१म।इं१पं।
का१त्र।यो९।वे१पुं।क४।ज्ञा३मश्रुअ।सं१परि।द३चअअ।ले६।भ१।
३

स२वेक्षा।सं१।आ१।उ६।तत्प्रमत्ताप्रमत्तानां सूक्ष्मसांपरायसंयतानां च मूलौघभंगः।

यथाख्यातसंयमिनां—गु४उक्षीसअ।जी२प।अ।प६६।प्रा१०।४।२।१।सं०।

औ २। का १। वे ०। क ०। ज्ञा ५। म। श्रु। अ। म। के। सं १। यथा। द ४। ले ६।
भा १

भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ २। उ ९॥

उपशांतकषायप्रभृति अयोगिकेवलपद्यंतं मूलौघभंगमवकुं । देशसंयमवके ओघभंगमेयवकुं ।

असंयमरुग्णे । गु ४। मि। सा। मि। अ। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४।
प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। ५
आहारकद्वयरहित। वे ३। क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३।
ले ६। भ २। सं ६। सं २। आ २। उ ९॥

६

असंयमिपद्यमिकर्णे । गु ४। मि। सा। मि। अ। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा १०।
९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वे का।
वे ३। क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३। ले ६। भ २। सं ६। १०
६

मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं २। आ १। उ ९॥

असंयमि अपद्यमिकर्णे । गु ३। मि। सा। अ। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७। ७।
। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। औ मि। वे मि। का। वे ३। क ४।
ज्ञा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३। च। अ। अ। ले २ क शु। भ २। सं ५।
भा ६

मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥

१५

मिथ्यादृष्टिप्रभृति असंयतसम्यग्दृष्टिपद्यंतं मूलौघभंगमवकुं । इंतु संयममार्गणे समाप्त-
मादुदु ॥

ग १ म। इं १ पं। का १ व। यो ११ म ४ व ४ औ २ का १। वे ०। क ०। सा ५ म श्रु अ म के।
सं १ य। द ४। ले ६। भ १। सं २ उ क्षा। सं १। आ २। उ ९। उपशांतकषायादयोगपर्यंतं देश-
१

संयतानां च मूलौघभंगः ।

२०

असंयतानां—गु ४ मि सा मि अ। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०। ७। ९।
७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। इं ५। का ६। यो १३ आहारद्वयं नहि। वे ३। क ४।
ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ। सं १ अ। द ३। ले ६। भ २। सं ६। सं २। आ २। उ ९। तत्पर्याप्तानां—
६

गु ४ मि सा मि अ। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५।
का ६। यो १० म ४ व ४ औ १ वै १। वे ३। क ४। ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ। सं १ अ। द ३। २५
ले ६। भ २। सं ६ मि सा मि उ वे क्षा। सं २। आ १। उ ९। तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ।
६

जी ७ अ। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३
औ मि वै मि का। वे ३। क ४। ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ। सं १ अ, द ३ च अ अ, ले २ क शु। भ २,
भा ६

स ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ २, उ ८। मिथ्यादृष्टितोऽसंयतानां मूलौघभंगो भवति, संयममार्गणा गता ।
दर्शनानुवादे ओषालापौ भवति—

३०

दर्शनानुवाददोळु ओघाळाणं मूलौघभंगमवकुं। चक्षुदर्शनिगळगे। गु १२। जी ६। सं अ च
२ २ २

प ६। ६। ५। ५। प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६ सं ४। ग ४। इं २। पं। च। का १ त्र।
यो १५। वे ३। क ४। ज्ञा ७। केवलज्ञानरहित। सं ७। अ। दे। सा। छे। प। सू। यथा।
दर्श १। च ले ६ भ २। सं ६। सं २। आ २। उ ८॥
६

५ चक्षुदर्शनिपथ्याप्तिकंगे। गु १२। जी ३। सं। अ। च। प ६। ५। प्रा १०। ९। ८। सं ४।
१ १ १
ग ४। इं २ पं च। का १ त्र। यो ११। म ४। वा ४। औ का। वै का। आ का। वे ३। क ४।
ज्ञा ७। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। म। सं ७। अ। दे। सा। छे। प। सू। यथा। द १। च।
ले ६। भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं २। आ १। उ ८॥
६

चक्षुर्दर्शनिअपथ्याप्तिकंगे। गु ४। मि। सा। अ। प्र। जी ३। सं अ च प ६। ५। अ।
१ १ १
१० प्रा ७। ७। ६। अ। सं ४। ग ४। इं २। पं। का १ त्र। यो ४। औ मि। वै मि। आ मि। का।
वे ३। क ४। ज्ञा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं ३। अ। सा। छे। द १ च। ले २ क शु। भ २।
भा ६
सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ६॥

चक्षुर्दर्शनिमिथ्यादृष्टिगळगे। गु १ मि। जी ६। सं अ च प ६। ६। ५। ५। प्रा १०।
२ २ २
७। ९। ७। ८। ६। सं ४। ग ४। इं २। पं। च। का १ त्र। यो १३। आहारद्वयरहित। वे ३।
१५ क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १ अ। द १। च। ले ६ भ २। सं १। मि। सं २।
६
आ २। उ ४॥

चक्षुर्दर्शनिनां—गु १२, जी ६, सं अ च। प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, सं ४,
२ २ २

ग ४। इं २ च, पं, का १ त्र, यो १५, वे ३, क ४, ज्ञा ७, कु कु वि म श्रु अ म, सं ७ अ, दे, सा, छे, प, सू,
य। द १ चक्षुः, ले ६। भ २। स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ २, सं ८। तत्पर्याप्तानां—
६

२० गु १२, जी ३ सं अ च, प ६, ५, प्रा १०, ९, ८, सं ४, ग ४। इं २ पं च, का १ त्र, यो ११ म ४ व
४ औ १ वै १, आ १, वे ३, क ४, ज्ञा ७ कु कु वि म श्रु अ म, सं ७ अ दे सा छे प सू य, द १ च। ले ६।
६

भ २। स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २। आ १। उ ८। तदपर्याप्तानां—गु ४ मि, सा, अ, प्र। जी ३
सं अ च। प ६, ५, अ, पा ७ ७, ६ अ, सं ४, ग ४, इं २ पं च। का १ त्र, यो ४ औ मि वै मि आ मि का,
१ १ १

वे ३, क ४, ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ। सं ३ अ, सा छे द १ च। ले २ क शु। भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा,
भा ६

२५ सं २। आ २। उ ६। तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि। जी ६ सं अ च। प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९,
२ २ २

चक्षुर्दृशनिमित्थ्यादृष्टिपर्याप्तिकर्गे । गु १ । जी ३ । संपं । अप । च प । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । सं ४ । ग ४ । इं २ । पं । च । का १ । त्र । यो १० । म ४ । व ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द १ । च । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ ।
६

आ १ । उ ४ ॥

चक्षुर्दृशनिमित्थ्यादृष्टिपर्याप्तिकमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ मि । जी ३ । सं । अ । अ । अ । च । अ । प ५
प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । ७ । ६ । सं ४ । ग ४ । इं २ । पं । च । का १ । त्र । यो ३ । औ मि । वै मि ।
का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द १ । च । ले २ । क शु । भ २ । सं १ मि । सं २ ।
भा ६

आ २ । उ ३ ॥

चक्षुर्दृशनिमासादनप्रभृति क्षीणकषायपर्यंतं मूलौघभंगमक्कुं । विशेषमावुदेदोढे चक्षु-
र्दृशनिगेदितु वक्तव्यमक्कुं । १०

अचक्षुर्दृशनिगच्छे । गु १२ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ ।
७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १५ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ७ । केवलरहितं । सं ७ । अ । दे । सा । छे । प । सू । यथा । द १ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ ।
६

सं २ । आ २ । उ ८ ॥

अचक्षुर्दृशनिपर्याप्तिकर्गे । गु १२ । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । १५
६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ७ । केवलज्ञानरहित । सं ७ । व १ । अचक्षु । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । उ ८ ॥
६

७, ८, ६, सं ४, ग ४, इं २ पं च, का १ त्र, यो १३ आहारकद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ३, कु कु वि,
सं १ अ, द १ च । ले ६ । भ २ । स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ३ संप,
६

अप, च प, प ६, ५, प्रा १०, ९, ८, सं ४, ग ४, इं २ पं च, का १ त्र । यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, २०
वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द १ च । ले ६ । भ २, स १ मि, सं २ । आ १ । उ ४ । तदपर्याप्तानां—
६

गु १ मि, जी ३ सं अ अ अ च अ, प ६ ५, प्रा ७, ७, ६, सं ४, ग ४, इं २ पं च, का १ त्र, यो ३ औ मि
वै मि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ च, ले २ क शु । भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ३ ।
भा ६

तत्सासादनात् क्षीणकषायांतं मूलौघभंगः कितु दर्शनस्थाने एकं चक्षुर्दर्शनमेव वक्तव्यं ।

अचक्षुर्दर्शनिनां—गु १२, जी १४, प ६ ६ ५ ५ ४ ४, प्रा १० ७, ९ ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, २५
३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १५, वे ३, क ४, ज्ञा ७ केवलं नहि, सं ७ अ दे सा छे प सू य, द १ अ,
ले ६, भ २, स ६, सं २, आ २, उ ८ । तत्पर्याप्तानां—गु १२, जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८,
६

७, ६, ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ११ म ४ व ४ औ १ वै १ आ १, वे ३, क ४, ज्ञा ७ केवलं

अचक्षुर्दृशनिमिथ्याप्रकर्मो । गु ४ मि । सासा । अ । प्र । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । ३ ।
अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । ओ मि वै मि । आ मि ।
का । वे ३ । क ४ । जा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द १ । अच ।
ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ६ ॥
भा ६

५ अचक्षुर्दृशनिमिथ्यादृष्टिपट्याप्रकर्मो । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा
१० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ ।
आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द १ । अच । ले ६ । भ २ ।
सं १ मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥ ६

अचक्षुर्दृशनिमिथ्यादृष्टिपट्याप्रकर्मो । गु १ । मि । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० ।
१० ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का । वै का ।
वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि ।
सं २ । आ १ । उ ४ ॥ ६

अचक्षुर्दृशनिमिथ्यादृष्ट्यप्रकर्मो । गु १ मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ प्रा ७ ।
७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ ।
१५ क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । द १ । अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं २ ।
भा ६
आ २ । उ ३ ॥

अचक्षुर्दृशनिसासादनप्रभृतिक्षीणकषायपट्यंतं अचक्षुर्दृनिगच्छो वु वक्तव्यमवकुं ।

नहि, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ २, स ६, सं २, आ १, उ ८ । तदपर्याप्तानां—गु ४ मि सा अ प, जी
६

७ अ, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ४ ओमि वैमि आमि का,
२० वे ३, क ४, जा ५, कु कु म श्रु अ, सं ३ अ, सा, छे । द १ अ, ले २ क शु । भ २, स ५ मि सा उ वे
भा ६

क्षा, सं २, आ २, उ ६ । तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९,
७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४ । इं ५, का ६, यो १३ आहारद्वयं नहि, वे ३, क ४, जा ३,
कु कु वि, सं १ अ, द १ अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि ।
६

जी ७ प, प ६ । ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ ओ १
२५ वै १, वे ३ । क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द १ अ, ले ६ । भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ४ ।
६

तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ अ, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६,
यो ३ ओमि वैमि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द १ अ, ले २ क शु । भ २, स १ मि, सं २,
भा ६

आ २ उ ३ । तत्सासादनात् क्षीणकषायांतं यथायोग्यं योज्यं ।

अवधिदर्शनिगच्छे । गु ९ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ७ । द १ । अवधि-
दर्शन । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
६

अवधिदर्शनिपथ्याप्तिकर्णे । गु ९ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं ।
का १ । त्र । यो ११ । म ४ । व ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ । क ४ । जा ४ । म । श्रु । ५
अ । म । सं ७ । द १ । अवधि । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
६

अवधिदर्शनिअपथ्याप्तिकर्णे । गु २ । अ । प्र । जी १ । प ६ । अ प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ पं । का १ । त्र । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । का । वे २ । पुं । षं । क ४ । जा ३ ।
म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द १ । अवधि । ले २ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
भा ६
आ २ । उ ४ ॥

१०

“असंयतप्रभृतिक्षीणकषायपथ्यंतं अवधिज्ञानवके पेच्छदंतं वक्तव्यमवकुं । केवलदर्शनिगे
केवलदर्शनिगे केवलज्ञानिगे पेच्छदंतं वक्तव्यमवकुं । इंतु दर्शनमार्गर्णं समाप्तमादु ॥

लेख्यानुवावबोळु गुणस्थानालापं मूलौघदंतवकं । विशेषमावुदेवोडे अयोगिगुणस्थानमित्ति ।
कृष्णलेख्याजीवगच्छे । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । १५
क ४ । जा ६ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ ।
भा १ कृ
सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ९ ॥

कृष्णलेख्यपथ्याप्तिकर्णं । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ ।

अवधिदर्शनिनां—गु ९, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४ । ग ४, इं १ पं, का १ त्र,
यो १५, वे ३, क ४, जा ४ म श्रु अ म, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ २, २०
६

उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु ९, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो ११ म ४, व ४,
औ १, वै १, आ १, वे ३, क ४, जा ४ म श्रु अ म, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ १ । स ३, सं १, आ १,
६

उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु २ अ प्र, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७, सं ४, ग ४, इं ५, का १ त्र, यो ४ औमि
वैमि आमि का, वे २ पुं न, क ४, जा ३ म श्रु अ, स ३ अ सा छे, द १ अ, ले २, भ २, स ३, सं १ ।
६

आ २, उ ४ । असंयतात् क्षीणकषायांतं अवधिज्ञानिवत् । केवलदर्शनिनां केवलज्ञानिवत् । दर्शनमार्गणा २५
गता । लेख्यानुवादे गुणस्थानालापौ मूलौघवत् । अयोगिगुणस्थानं नास्ति ।

कृष्णलेख्यानां—गु ४ मि सा मि अ । जी १४ । प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ८, ६,
७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १३, वे ३, क ४, जा ६ कु कु वि म श्रु अ,
सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६ । भ २ । स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ २, उ ९ । तत्पर्याप्तानां—
भा १ कृ

प्रा १०। ९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ३। म। ति। न। इं ५। का ६। यो १०। म ४।
 वा ४। औ का। वै का। वे ३। क ४। जा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं १। अ।
 द ३। च। अ। अ। ले ६। भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं २।
 भा १ कृ
 आ १। उ ९॥

५ कृष्णलेश्याऽप्यर्थाप्तिकर्गे। गु ३। मि। सा। अ। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ।
 प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। औ मि। वै मि। का। वे ३।
 क ४। जा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं १ अ। द ३। ले २ क शु। भ २। सं ३। मि।
 भा १ कृ
 सा। वे। पंचमादिपृथ्विगर्हितं वर्णं असंयतनोऽनु वेदकं संभविषुगुं। सं २। आ २। उ ८॥

१० कृष्णलेश्यामिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। मि। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
 ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। वे ३।
 क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २।
 भा १ कृ
 आ २। उ ५॥

१५ कृष्णलेश्यामिथ्यादृष्टिप्यर्थाप्तिकर्गे। गु १। मि। जी ७। प। प ६। ५। ४। प्रा १०।
 ९। ८। ७। ६। ४ सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। औ का।
 वै का। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १।
 भा १ कृ
 मि। सं २। आ १। उ ५॥

कृष्णलेश्यामिथ्यादृष्ट्यप्यर्थाप्तिकर्गे। गु १। मि। जी ७। अ। प ६। ५। ४। प्रा ७। ६।
 ५। ४। ३। अ। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। औ मि। वै मि। का। वे ३। क ४।

२० गु ४ मि सा मि अ, जी ७ प, प ६, ५, ४, प, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ म ति न, इं ५,
 का ६, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, जा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, द ३, च अ अ, ले ६,
 भा १ कृ

भ २, स ६ मि सा मि उ वे क्षा, स २, आ १, उ ९। तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी ७ अ, प ६,
 ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ३ औ मि वै मि का, वे ३, क ४, जा ५
 कु कु म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले २ क शु। भ २, सं ३, मि सा वे, पंचमादिपृथ्व्यागतासंयतेषु वेदक-
 भा १ कृ

२५ सम्यक्त्वसंभवात्, सं २, आ २, उ ८। तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०,
 ७, ९, ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३। सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १३। वे ३, क ४, जा ३ कु कु वि,
 सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ प, प ६, ५,
 कृ १

४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४,
 जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६। भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी
 भा १ कृ

७ अ, प ६, ५, ४ अ। प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३ अ, सं ४, ग ४। इं ५, का ६, यो ३ औ मि वै मि का,

जा २। कु। कु। सं १। अ। द २। ले २ क शु। भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ४॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासादनंगे। गु १। सा। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४।
ग ४। इं १। पं। का १ त्र। यो १३। आहारद्वयरहित। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि।
सं १। अ। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासादनपट्यामिकर्गे। गु १। सा। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३ ५
न। ति। म। इं १। पं। का १ त्र। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वै का। वे ३। क ४।
जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासादनापट्यामिकर्गे। गु १। सा। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १ त्र। यो ३। औ मि। वै मि। का। वे ३।
क ४। जा २। सं १। अ। द २। ले २ क शु। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ४॥ १०
भा १ कृ

कृष्णलेश्यामिश्रंग। गु १ मिश्र। जी १ प। प ६। प। प्रा १०। सं ४। ग ३। न। ति।
म। देवगतियोळ कृष्णलेश्ये पट्यामिकर्गे संभविसदु। अपट्यामिकालदोळिमभनिल्ल। इं १। पं।
का १ त्र। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वै का। वे ३। क ४। जा ३। मिश्रज्ञानंगळु।
सं १। अ। द २। च। अ। ले ६। भ १। सं १। मिश्ररुचि। सं १। आ १। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्याऽसंयतसम्यग्दृष्टिगळ्ये। गु १। अ सं। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। १५
७। सं ४। ग ३। न। ति। म। कृष्णलेश्याऽसंयतंगे। देवगति संभविसदु। इं १ पं। का १ त्र।

वे ३, क ४, जा २, कु कु, सं १। सं १ अ, द २, ले २ क शु। भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ४।
भा १ कृ

तत्सासादनानां—गु १ सा, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १३।
आहारद्वयाभावात्। वे ३, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, सं १ सा, सं १, आ २,
भा १ कृ

उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो १० २०
म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ, द २, ले ६। भ १, सा १ सा, सं १, आ १,
भा १

उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र,
यो १ औमि वैमि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द २, च अ ले २ क शु। भ १, सं १ सा,
भा १ कृ

सं १, आ २, उ ४। तन्मिश्राणां—गु १ मिश्र, जी १ पं, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, देवगती
पर्याप्ते कृष्णलेश्या अपर्याप्ते मिश्रगुणस्थानं च नहि। इं १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, २५
क ४, जा ३ मिश्राणि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ १, सं १ मिश्रं, सं १, आ १, उ ५। तदसंयतानां—
भा १ कृ

गु १ असं। जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ न ति म तेषां देवगतिर्नहि। इं १ पं, का १ त्र,

यो १२। म ४। वा ४। औ २। वै का १। काम्मण १। कृष्णलेश्यासंयतसम्यग्दृष्टि भवनत्रयदोळं
पुट्टनपुदरिदं वैक्रियिकमिश्रमिल्ल। अथवा घम्मेयं बिट्टु मिक्क नरकंगळोळं पुट्टनपुदरिदमंतु
वैक्रियिकमिश्रमिल्ल। घम्मेयोळपुट्टुवडं कपोतलेश्याजघन्यांशविदमल्लदे कृष्णलेश्यायिवं पुट्टलु
संभावनेयिल्लपुदरिदमंतु वैक्रियिकमिश्रयोगं संभविदु। वे ३। क ४। जा ३। म। श्रु। अ।
५ सं १। अ। व ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ २। उ ६॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासंयतसम्यग्दृष्टिपर्याप्तकर्मो। गु १। असं १। जी १। प। प ६। प्रा १०।
सं ४। ग ३। न। ति। म। इ १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वै १।
क ४। जा ३। म श्रु। अ। सं १। अ। व ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा।
भा १ कृ
सं १। आ १। उ ६॥

१० कृष्णलेश्यासंयतापर्याप्तकर्मो। गु १। अ सं। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो २। औ मि। का १। वे १। पुं। क ४। जा ३।
म। श्रु। अ। सं १। अ ०। व ३। च। अ। अ। ले २ क शु। भ १। सं १। वेदक। सं १।
भा १ कृ
आ २। उ ६॥

नीललेश्येगे कृष्णलेश्येयोळपेळवते पेळवु कोळगे। विशेषमानुदेदोडे सर्वत्र नीललेश्येदु
वक्तव्यमक्कुं। कपोतलेश्याजीवंगळो। गु ४। मि। सा। मि। अ। जी १४। प ६। ६। ५। ५।
४। ४। प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इ ५। का ६।
यो १३। म ४। व ४। औ २। वै २। का १। वे ३। क ४। जा ६। कु। कु। वि। म। श्रु।
अ। सं १। अ। व ३। च। अ। अ। ले ६। भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा।
भा १ कृ
सं २। आ २। उ ९॥

२० यो १२ म ४ व ४ औ २ वै १ का १ तेषां सम्यग्दृष्टित्वात् भवनत्रयद्वितीयादिपृष्ठीष्वनुत्पत्तेः। घर्मोत्पन्नानां
तु कपोतलेश्या जघन्यांशित्वाद्द्वैक्रियिक मिश्रयोगो नहि। वे ३, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च
अ अ, ले ६। भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १ असं, जी १ प, प ६,
भा १ कृ

प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, इ १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे १, क ४, जा ३ म श्रु अ,
सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६। तदपर्याप्तानां—गु १ असं, जी

१ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ म, इ १ पं। का १ त्र, यो २ औ मि का, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु
अ, सं १ अ, द ३, ले २ क शु। भ १, स १ वे, सं १, आ २, उ ६। नीललेश्यानां कृष्णलेश्यावद्वक्तव्यं।
भा १ कृ

कपोतलेश्यानां—गु ४ मि सा मि अ, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६,
७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १३ म ४ व ४ औ २ वै २ का १, वे ३, क ४, जा ६
कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६। भ २, सं ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ २, उ ९।
भा १ क

कपोतलेश्या पर्याप्तकर्गो । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ ।
प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म । अशुभलेश्याऽपर्याप्तकर्गो देवगति
संभविसदु । भवनत्रयादिदेवकंठनितुं पर्याप्तकालदोळु शुभलेश्यरेयपुर्दारिदं । इ ५ । का ६ ।
यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ ९ ॥ ५
भा १

कपोतलेश्या अपर्याप्तकर्गो । गु ३ । मि । सा । अ । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु ।
भा १ क

भ २ । सं २ । मि । सा । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ८ ॥

कपोतलेश्यामिध्यादृष्टिगल्गो । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । १०
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि ।
भा १ क

आ २ । उ ५ ॥

कपोतलेश्यामिध्यादृष्टिपर्याप्तकर्गो । गु १ । मि । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० ।
९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म । इ ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ १५
का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ २ ।
भा १ क

सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

तत्पर्याप्तानां—गु ४ मि सा मि अ, जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म,
देवगतिर्नहि भवनत्रयदेवानामपि पर्याप्तकाले शुभलेश्यत्वात्, इ ५, का ६, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३,
क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले ६ । भ २, स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ १, २०
भा १ क

उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी ७ अ, प ६, ५, ४ अ । प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४,
इ ५, का ६, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ,
ले २ क शु, भ २, स ४ मि सा वे क्षा, सं २, आ २, उ ८ । तन्मिध्यादृशां—गु १ मि, जी १४, प
भा १ क

६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १३,
वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६ । भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । २५
भा १ क

तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इ ५,
का १, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६ । भ २,
भा १ क

कपोतलेश्यामिध्यादृष्ट्यप्यन्तिकर्णे । गु १ मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ । प्रा ७ ।
 ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १ क

कपोतलेश्यासासादनसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । सा सा । जी २ । प अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ५ ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
 सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 भा १ क

कपोतलेश्यासासादनपय्याप्तिकर्णे । गु १ । सा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । न । ति । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा ।
 भा १ क

१० सं १ । आ १ । उ ५ ॥

कपोतलेश्यासासादनापय्याप्तिकर्णे । गु १ । सा । जी १ । अ । प । ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग ३ । ति । म । वे । इं । पं । का १ त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । च । अ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासादनरुचि ।
 भा १ क

१५ कपोतलेश्यासम्यग्मिध्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मिश्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । न । ति । म । देवगतियोळशुभलेश्ये पय्याप्तिकर्णे संभविस्वदु । इं १ । पं । का १ त्र । यो
 १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । मिश्रज्ञानंगच्छु । सं १ । अ । द २ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा १ क

स १ मि, सं २, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ अ, प ६, ५, ४, अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४,
 २० ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १, सं १ अ, द २, ले २ क
 भा १ क

शु । भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तत्सासादनानां—गु १ सा, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७,
 सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १३, वे ३ क ४, ज्ञा ३, कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६ ।
 क १

भ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न
 ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ,
 २५ ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ,
 भा १ क

सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ,
 द २ च अ, ले २ क शु, भ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ४ । सम्यग्मिध्यादृशां—गु १ मिश्र, जी १ प,
 भा १ क

प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, देवगतिर्निहि, इं १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३,

कपोतलेश्याऽसंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म । इ १ । पं । का १ । अ । यो १३ । औ २ । वै २ । म ४ । वा ४ ।
का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
भा १ क
आ १ । उ ६ ॥

कपोतलेश्यासंयतसम्यग्दृष्टिपर्याप्तिकर्णे । गु १ । असं । जी १ प । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग ३ । न ति म । इ १ पं । का १ अ । यो १० । म ४ । वा ४ । वै का । औ का ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म श्रु अ । सं १ अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा १ क

कपोतलेश्याऽसंयताऽपर्याप्तिकर्णे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ अ । सं ४ ।
ग ३ । न । ति । म । इ १ । पं । का १ अ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ । पुं । न पुं ।
क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले २ क शु । भ १ । सं २ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥ १०
भा १ क

तेजोलेश्याजीवगच्छे । गु ७ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । अ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग ३ । म ति दे । इ १ । पं । का १ अ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । केवलरहित । सं ५ ।
अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ॥
भा १ ते

तेजोलेश्यापर्याप्तिकर्णे । गु ७ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । म । वे ।
इ १ पं । का १ अ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै १ । आ १ । वे ३ । क ४ । १५
ज्ञा ७ । केवलरहित । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ ।
भा १ ते
आ १ । उ १० ॥

क ४, ज्ञा ३ मिश्राणि, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, स १ मिश्रं, सं १, आ १, उ ५ । असंयतानां—
भा १ क

गु १ अ, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ न ति म, इ १ पं, का १ अ, यो १३ म ४ व ४
औ २ वै २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, स ३, सं १, आ २, २०
भा १ क

उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, इ १ पं, का १ अ,
यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, स ३, सं १,
भा १ क

अ १, उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ न ति म, इ १ पं,
का १ अ, यो ३ औ मि वै मि का, वे २, पुं न, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३, ले २ क शु । भ १, स २
भा १ क

वे सा । सं १, आ २, उ ६ । तेजोलेश्यानां—गु ७, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग ३ ति म २५
दे, इ १ पं, का १ अ, यो १५, वे ३, क ४, ज्ञा ७ केवलं नहि, सं ५ अ दे सा छे प, द ३, ले ६, भ २,
भा १ ते

स ६, सं १, आ २, उ १० । तत्पर्याप्तानां—गु ७, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे,

तेजोलेश्यामिथ्यादृष्टिपथ्यामिकर्गो । गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग २ । म । दे । इं १ पं । का १ त्र । यो ४ । औ मि । वैमि आमि । का । वे २ ।
स्त्री । पुं । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । ले ६ क शु ।
भा १ ते

भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥

५ तेजोलेश्यामिथ्यादृष्टिगळो । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का । वै का ।
वै मि । काम्मण । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ भ २ । सं १ ।
भा १ ते
मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

तेजोलेश्यामिथ्यादृष्टिपथ्यामिकर्गो । गु १ । मि । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
१० ग ३ । ति । म । दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु वि । सं १ । द २ । ले ६ । भ २ । सं मि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा १ ते

तेजोलेश्यामिथ्यादृष्टि अपथ्यामिकर्गो । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ दे । इं १ पं । का १ त्र । यो २ । वै मि । का । वे २ । स्त्री । पुं । क ४ । ज्ञा २ ।
कु । कु । सं १ । अ द २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा १ ते

१५ तेजोलेश्यासासादनसम्यग्दृष्टिगळो । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ३ । ति म दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै २ ।

इं १ पं, का १ त्र, यो ११ म ४ व ४ औ वै आ, वे ३, क ४, ज्ञा ७ केवलं नहि, सं ५ अ दे सा छे प,
द ३ । ले ६ । भ २, स ६, सं १, आ १, उ १० । तदपर्याप्तानां—गु ४ । मि सा अ प्र, जी १ अ, प ६ अ,
भा १ ते

प्रा ७ अ, सं ४, ग २ म दे, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ औमि वैमि आमि का, वे २ स्त्री पुं, क ४, ज्ञा ५
२० कु कु म श्रु अ, सं ३ अ सा छे, द ३, ले २ क शु, भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ८ ।
भा १ ते

तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी २ प, अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं, का १ त्र,
यो १२ म ४ व ४ औ वै वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६ । भ २, स १ मि,
भा १ ते

सं १, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं,
का १ त्र, यो १० म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६ । भ २ । स १
भा १ ते

५२ मि । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग १ दे ।
इं १ पं । का १ त्र । यो २ वैमि का । वे २ स्त्री पुं । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । द २ ।
ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ । सासादनानां—गु १ सा । जी २ प अ । प ६ ६ ।
भा १ ते

का १। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ १। सं १।
भा १ ते
सासादनरुचि। सं १। आ २। उ ५॥

तेजोलेख्यासासावनपर्याप्तिकर्ग। गु १। सा। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १ त्र। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वै का। वे ३।
क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। ५
भा १ ते
उ ५॥

तेजोलेख्यासासावनापर्याप्तिकर्ग। गु १। सासा। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग १। दे। इं १। पं। का १ त्र। यो २ वै मि। का। वे २ स्त्री पुं। क ४। जा २।
सं १। अ। द २। ले २ क शु। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ४॥
भा १ ते

तेजोलेख्यासम्यग्मिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। मिथ। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। १०
ति। म। दे। इं १। का १। यो १०। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। द २। ले ६। भ १।
भा १ ते
सं १। मिथ। सं १। आ १। उ ५॥

तेजोलेख्यासंयतसम्यग्मिथ्यादृष्टिगन्धे। गु १। अ सं। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ७।
सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १३। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। द ३।
ले ६। भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ६॥
भा १ ते १५

तेजोलेख्यापर्याप्तासंयतगं। गु १। अ सं। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। म ३।

प्रा १० ७। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो १२ म ४ व ४ औ १ वै २ का १।
वे ३। क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २। ले ६। भ १। स १ सा। सं १। आ २। उ ५।
भा १ ते

तत्पर्याप्तानां—गु १ सा। जी १ प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो
१० म ४ व ४ औ वी। वे ३। क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २। ले ६। भ १। स १ सा। २०
भा १ ते

सं १। आ १। उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ सा। जी १ अ। प ६ अ। प्रा ७ अ। सं ४। ग १ दे।
इं १ पं। का १ त्र। यो २ वै मि का। वे २ स्त्री पुं। क ४। जा २। सं १ अ। द २। ले २ क शु।
भा १ ते

भ १। स १ सा। सं १। आ २। उ ४। सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १ मिथं। जी १ प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो १० म ४ व ४ वै औ। वे ३। क ४। जा ३। सं १ अ। द २।
ले ६। भ १। स १ मिथं। सं १। आ १। उ ५। असंयतानां—गु १ अ। जी २ प। अ। प ६ ६। २५
भा १ ते

प्रा १० ७। सं ४। ग ३ ति म दे। इं १ पं। का १ त्र। यो १३। वे ३। क ४। जा ३। सं १ अ।
द ३। ले ६। भ १। स ३। सं १। आ २। उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १ अ। जी १ प। प ६। प्रा
भा १ ते

ति० म० दे० इं० १०१ का० १०१ म० ४० वा० ४॥ औ० का० वे० ३० क० ४० जा० ३०
सं० १० अ० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० १० उ० ६॥

भा १ ते

तेजोलेख्याअपर्याप्तासंयतर्गे० गु० १० अ० जी० १० अ० प० ६० अ० प्रा० ७० अ० सं० ४०
ग० २० म० दे० इं० १० का० १० यो० ३० औ० मि० वै० मि० का० वे० १० पुं० क० ४० जा० ३० सं० १०
५ अ० द० ३० ले० २० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० २० उ० ६॥

भा १ ते

तेजोलेख्यादेशव्रतिगल्गे० गु० १० दे० जी० १० प० प० ६० प्रा० १० सं० ४० ग० २० ति०
म० इं० १० का० १० यो० ९० म० ४० वा० ४० औ० का० वे० ३० क० ४० जा० ३० म० भ्रु० अ० सं० १०
वे० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० १० उ० ६॥

भा १ ते

तेजोलेख्याप्रमत्तर्गे० गु० १० प्र० जी० २० प० अ० प० ६० प्रा० १० ७० सं० ४० ग० १०
१० म० इं० १० का० १० यो० ११० वे० ३० क० ४० जा० ४० सं० ३० सा० छे० प० द० ३० ले० ६० भ० १०
भा १ ते

सं० ३० सं० १० आ० १० उ० ७॥

तेजोलेख्याप्रमत्तर्गे० गु० १० अ० प्र० जी० १० प० प० ६० प्रा० १० सं० ३० ग० १० म०
इं० १० का० १० यो० ९० वे० ३० क० ४० जा० ४० म० भ्रु० अ० म० सं० ३० सा० छे० प० द० ३०
ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० १० उ० ७॥

भा १ ते

१५ १०० सं० ४० ग० ३० ति० म० दे० इं० १० का० १० यो० १० म० ४० व० ४० औ० वै० वे० ३० क० ४० जा० ३० सं० १०
अ० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० १० उ० ६॥

भा १ ते

तदपर्याप्तानां—गु० १० अ० जी० १० अ० प० ६० अ० प्रा० ७० अ० सं० ४० ग० २० म० दे० इं० १० का० १०
यो० ३० औ० मि० वै० मि० का० वे० १० पुं० क० ४० जा० ३० सं० १० अ० द० ३० ले० २० भ० १० सं० ३० सं० १०

भा १ ते

२० आ० २० उ० ६० देशव्रतिनां—गु० १० दे० जी० १० प० प० ६० प्रा० १० सं० ४० ग० २० ति० म० इं० १० का० १०
यो० ९० म० ४० व० ४० औ० वे० ३० क० ४० जा० ३० म० भ्रु० अ० सं० १० दे० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १०

भा १ ते

आ० १० उ० ६० प्रमत्तानां—गु० १० प्र० जी० २० प० अ० प० ६० प्रा० १० ७० सं० ४० ग० १० म० इं० १०
का० १० यो० ११० वे० ३० क० ४० जा० ४० सं० ३० सा० छे० प० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १० आ० १०

भा १ ते

उ० ७० अप्रमत्तानां—गु० १० अ० प्र० जी० १० प० प० ६० प्रा० १० सं० ३० ग० १० म० इं० १० का० १०
यो० ९० वे० ३० क० ४० जा० ४० म० भ्रु० अ० म० सं० ३० सा० छे० प० द० ३० ले० ६० भ० १० सं० ३० सं० १०

भा १ ते

पद्मलेश्याजीवंगण्ये । गु ७ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ३ ।
ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प ।
द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ॥

भा १ पद्म

पद्मलेश्यापट्यन्तिकर्णे । गु ७ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे ।
इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ५ ।
अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० ॥

भा १ पद्म

पद्मलेश्यापट्यन्तिकर्णे । गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग २ । म । दे । इं १ । पं । का १ । यो ४ । औ मि । वै मि । का । आ मि । वे १ ।
पुं । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । ले २ क शु ।

भा १ पद्म

भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥

१०

पद्मलेश्यामिथ्यादृष्टिगण्ये । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै २ । का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा १ प

आ २ । उ ५ ॥

पद्मलेश्यामिथ्यादृष्टिपट्यन्तिकर्णे गु १ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । १५
म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु ।
कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

भा १ प

आ १ । उ ७ । पद्मलेश्यानां—गु ७ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे ।
इं १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ ।
भा १ प

सं १ । आ २ । उ १० । तत्पर्याप्तानां—गु ७ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । २०
का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । औ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ ।
भा १ प

भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० । तत्पर्याप्तानां—गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी १ । अ । प ६ । अ ।
प्रा ७ । अ । सं ४ । ग २ । म । दे । इं १ । पं । का १ । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । का । वे १ । पुं । क ४ ।
ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा १ प

आ २ । उ ८ । तन्मिथ्यादृष्टां—गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । २५
म । दे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । व ४ । औ १ । वै २ । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ ।
द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । मि । जी १ । प । प ६ ।

भा १ प

प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १ । वै १ । वे ३ । क ४ ।

पद्मलेख्यामिथ्यादृष्ट्यप्यन्तिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । वे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । पुं । क ४ । जा २ । कु । कु ।
सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा १ प

पद्मलेख्यासासावनप्यन्तिकर्गे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । द । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
५ ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै का २ । का १ ।
वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
आ २ । उ ५ ॥
भा १ प

पद्मलेख्यासासावनप्यन्तिकर्गे । गु १ । सा । जी १ । प । प ६ । द । प्रा १० । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै का १ । वे ३ ।
१० क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ ।
आ १ । उ ५ ॥
भा १ प

पद्मलेख्यासासावनाप्यन्तिकर्गे । गु १ । सा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । वे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । पुं । क ४ । जा २ । कु । कु ।
सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा १ प

१५ पद्मलेख्यासम्यग्मिथ्यादृष्टिगळ्गे । गु १ । मिथ् । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १० । वे ३ । क ४ । जा ३ । मिथ् । सं १ । अ । व २ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ् रुचि । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा १ प

जा ३ कु कु वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १
भा १ प

मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । वे । इं १ । पुं । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । पुं ।
२० क ४ । जा २ कु कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ।
भा १ प

तत्सासावनानां—गु १ सा । जी २ प अ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ३ ति म वे । इं १ । का १ ।
यो १२ म ४ व ४ ओ १ वै २ का १ । वे ३ । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ ।
भा १

सं १ सा । सं १ । अ । व २ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ३ ति म वे । इं १ । का १ । यो १० म ४ व ४ ओ १ वै १ । वे ३ । क ४ । जा ३ कु कु वि ।
२५ सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ सा । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा ।
भा १ प

जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । वे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ । पुं । क ४ ।
जा २ कु कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । सम्यग्मिथ्यादृशां—
भा १ प

गु १ मिथ् । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ति म वे । इं १ । का १ । यो १० । वे ३ । क ४ । जा ३

पद्मलेश्याऽसंयतसम्प्रादृष्टिगन्धो । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ ।
जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा १ प

आ २ । उ ६ ॥

पद्मलेश्याऽसंयतपर्याप्तिकर्गो । गु १ । अ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ।
ति । म । दे । इं १ । का १ । योग १० । म ४ । वा ४ । औ का । वे का । वे ३ । क ४ । जा ३ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥ ५
भा १ प

पद्मलेश्याऽसंयताऽपर्याप्तिकर्गो । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
ग २ । म । दे । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे १ । क ४ । जा ३ । म । श्रु ।
अ । सं १ । अ । व ३ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा १ प

पद्मलेश्यादेशव्रतिगन्धो गु १ । देश । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । म । ति ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । देश । व ३ । ले ६ । भ १ । १०
सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा १ प

पद्मलेश्या-प्रमत्तसंयतगो । गु १ । प्र । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
गति १ । म । इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । आ का २ । वे ३ । क ४ ।
जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा ।
भा १ प

सं १ । आ १ । उ ७ ॥

१५

मिश्राणि, सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ मिश्रं । सं १ । आ १, उ ५ । असंयतानां—गु १ अ, जी
भा १ प

२ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १ । यो १३ आहारकद्वयाभावात्, वे ३, क ४,
जा ३ म श्रु अ, सं १ अ, व ३, ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ ।
भा १ प

जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४, ग ३ ति म दे । इं १ । का १ । यो १० म ४ व ४ औका वंका । वे
३ । क ४ । जा ३ । सं १ अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । तद- २०
भा १ प

पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग २ म दे, इं १, का १, यो ३ औमि
वैमि का, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ अ, व ३ । ले २ क शु, भ १, स ३ उ वे क्षा, सं १,
भा १ प

आ २ उ ६ । देशव्रतानां—गु १ दे । जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इं १ । का १ ।
यो ९, वे ३, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ दे, व ३ । ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६ ।
भा १ प

प्रमत्तानां—गु १ प्र, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १ म, इं १, का १ । यो ११ म ४ व ४ औ १ आ २, वे ३, क ४ । जा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । व ३ । ले ६ । भ २ । स ३ उ वे क्षा,
भा १ प २५

पञ्चलेश्येय अग्रमत्तर्गो । गु १ । अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । गति १ । म । इं १ ।
पं । का १ । त्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ ।
सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा १ प

शुक्ललेश्याजीवंगळगे । गु १३ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । ४ । २ ।
५ सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ ।
ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १२ ॥
भा १ शु

शुक्ललेश्यापर्याप्तकर्मो । गु १३ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । ४ । सं ४ । ग ३ । ति ।
म । दे । इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ द ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १२ ॥
भा १ शु

१० शुक्ललेश्या अपर्याप्तकर्मो । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयो । जी १ । अ । प ६ । अ ।
प्रा ७ । २ । सं ४ । ग २ । म । दे । इं । का १ । यो ४ । औ मि । वै मि । का । आ । मि । वे १ ।
पुं । क ४ । ज्ञा ६ । सं ४ । अ । सा । छे । य । द ४ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा ।
उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ १० ॥
भा १ शु

शुक्ललेश्यामिथ्यादृष्टिगळगे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
१५ ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का २ । काम्म
का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ ।
भा १ शु
मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

सं १, आ १ । उ ७ । अग्रमत्तानां—गु १ अग्र, जी १ प, प ६ । प्रा १०, सं ३, ग १ म । इं १ पं ।
का १ त्र । यो ९ म ४ व ४ औ १ । वे ३, क ४, ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं ३ सा छे प । द ३ । ले ६ ।
भा १ प

२० म १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । शुक्ललेश्यानां—गु १३ । जी २ प अ । प ६ । ६ ।
प्रा १० । ७ । सयोग ४ । २ । सं ४ । ग ३ ति म दे, इं १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४, ले ६ । भ २ । स ६ । सं १, आ २, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु १३ । जी १ प, प ६,
भा १ शु

प्रा १० ४, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १, यो ११ म ४ व ४ औ १ वै १, आ १ । वे ३, क ४, ज्ञा ८ ।
सं ७, द ४ च अ अ के, ले ६ । भ २, स ६, सं १ । आ १, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५, मि सा अ प्र स,
भा १ शु

२५ जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७, २, सं ४, ग २ म दे, इं १, का १ यो ४ औ मि वै मि आमि का, वे १ पुं,
क ४, ज्ञा ६, सं ४ अ सा छे य, द ४ ले २ क शु । भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ १० ।
भा १ शु

तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १, यो १२
म ४ व ४ औ १ वै २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु मि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं १,
भा १ शु

शुक्ललेश्यामिथ्यादृष्टिपर्याप्तकर्णे । गु १ । मि । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ ।
भा १ शु

उ ५ ॥

शुक्ललेश्यामिथ्यादृष्ट्यपर्याप्तकर्णे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । ६ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि १ । का १ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा २ । ५
कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा १ शु

शुक्ललेश्यासासादनर्णे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै २ ।
का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा ।
भा १ शु

सं १ : आ २ । उ ५ ॥

१०

शुक्ललेश्यापर्याप्तसासादनसम्यग्दृष्टिगन्धे । गु १ । सासा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वैक्रि का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा सं १ ।
भा १ शु

आ १ । उ ५ ॥

शुक्ललेश्यासासादनापर्याप्तकर्णे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । १५
सं ४ । ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि । का १ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा १ शु

आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १,
यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, सं १, सं १,
भा १ शु

आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ अ, प ६ । प्रा ७, सं ४, ग १ दे । इं १, का १, यो २, वैमि २०
का, वे १ पुं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द २, ले २ क शु । भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ४ ।
भा १ शु

सासादनानां—गु १ सा, जी २ प, अ, प ६, ६, प्रा १०, ७ । सं ४ । ग ३ ति म दे, इं १, का १,
यो १२ म ४ व ४ औ १ वै २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ । ले ६ ।
भा १ शु

भ १, सं १ सा, सं १, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३
ति म दे, इं १, का १, यो १० म ४, व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, २५
भा १ शु

भ १, सं १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४,
ग १ दे, इं १, का १ । यो २ वैमि का । वे १ पुं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ द २, ले २ क शु ।
भा १ शु

शुक्ललेइयासंयतसम्यग्दृष्टिगन्गे । गु १ मिश्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ।
 ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ ।
 जा ३ । मिश्र । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा १ शु

शुक्ललेइयासंयतसम्यग्दृष्टिगन्गे गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ५ । सं ४ । ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १३ । आहारद्वयवर्जित वे ३ । क ४ ।
 जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
 भा १ शु
 आ २ । उ ६ ॥

शुक्ललेइयासंयतसम्यग्दृष्टिपय्याप्रिकर्णे । गु १ । असं । जी १ । प । प ६ । प्रा १० ।
 सं ४ । ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ ।
 १० वे ३ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
 भा १ शु
 आ १ । उ ६ ॥

शुक्ललेइयासंयतसम्यग्दृष्ट्यपय्याप्रिकर्णे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ
 प्रा ७ । सं ४ । ग २ । म । वे । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे १ । पुं । क ४ ।
 जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
 भा १ शु
 १५ आ २ । उ ६ ॥

शुक्ललेइयादेशव्रतिगन्गे गु १ । वेश । जी । १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ग २ । ति । म ।
 इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । वेश । व ३ । ले ६ ।
 भा १ शु
 भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

भ १, स १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । सम्यग्मिध्यादृशां—गु १ मिश्र । जी १ प । प ६ । प्रा १० ।
 २० सं ४ । ग ३ ति म वे । इं १ । का १, यो १० म ४ व ४ औ वै । वे ३, क ४, जा ३ मिश्राणि ।
 सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १, स १ मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ अ । जी २ प
 भा १ शु

अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४, ग ३ ति म वे । इं १, का १ । यो १३ आहारद्वयाभावात् ।
 वे ३ । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । व ३, ले ६ । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ ।
 भा १ शु

उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ति म वे । इं १ । का १ ।
 २५ यो १० म ४ व ४ औ वै । वे ३ । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ ।
 भा १ शु

सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग २ म
 वे । इं १ । का १ । यो ३ औ मि वै मि का । वे १ पुं । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । व ३ ।
 ले २ क । शु । भ १ । स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देशव्रतानां—गु १ वे । जी १ प ।
 भा १ शु
 प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ ति म, इं १ पं । का १ अ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ म श्रु अ ।

शुक्ललेख्याप्रमत्तसंयतर्णे । गु १ । प्र । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । म । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । आ २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ ।
सं ३ । सा । छे । प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा १ शु

शुक्ललेख्याअप्रमत्तसंयतर्णे । गु १ । अ प्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ ।
म । इ १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । सा । छे । प । व ३ । ले ६ । भ १ । ५
भा १ शु
सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

शुक्ललेख्या अपूर्वकरणप्रभृतिसयोगकेवलिगुणस्थानपर्यंत ओघभंगमेयवकुं । अलेख्यरूप
अयोगकेवलिसिद्धपरमेष्ठिगळिगे ओघभंगमवकुं । इंतु लेख्यामार्गणे समाप्तमावुदु ॥

भव्यानुवावबोळु भव्यरुगळगे ओघभंगमवकुं । मभव्यसिद्धरुगळगे । गु १ । मि । जी १४ ।
प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । १०
ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ ।
ले ६ । भ १ । अभव्य । सं १ । मिथ्या । सं २ । आ २ । उ ५ ॥
६

अभव्यपर्याप्तिकर्मा । गु १ । मि । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
४ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । अभव्य । सं १ । मि । सं २ । १५
भा ६
आ १ । उ ५ ॥

सं १ दे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र । जी २ प । अ ।
भा १ शु

प ६ ६ । प्रा १०, ७ । सं ४ । ग १ म । इ १ । का १ । यो ११ म ४ व ४ औ १ । आ २ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । सा छे प, द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १
भा १ शु

अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ म । इ १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ सा २०
छे प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अपूर्वकरणात्सयोगपर्यंतानां अलेख्यायोगि-
भा १ शु

सिद्धानां च ओघमंगो भवति । लेख्यामार्गणा गता ।

भव्यानुवादे भव्यानामोघभंगः । अभव्यानां—गु १ मि । जी १४ प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७
९ ७, ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३, सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ अ । सं १ मि । सं २ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । २५
६

जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १० म ४ व ४ औ वै ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ अ । सं १ मि । सं २ । आ १ ।
६

अभव्याप्यर्थाप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ ।
५ । ४ । ३ । अ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा २ । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । अभव्य । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

भव्यरुमभव्यरुमत्लद सिद्धपरमेष्ठिगळगे गुणस्थानातीतर्गे मुं पेळ्दंतेयक्कुं । इंतु भव्य-
५ मागणें समाप्तमादुडु ॥

सम्यक्त्वानुवादेदोळु सम्यग्दृष्टिगळगे । गु ११ । असंयतादि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ ।
प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ ।
म । के । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
भा ६

सम्यग्दृष्टिप्यर्थाप्तिकर्गे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
१० का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ ।
म । के । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
भा ६

सम्यग्दृष्टि अप्यर्थाप्तिकर्गे । गु ३ । अ । प्र । सयो । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ २ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । काम्मं । वे २ ।
न पं । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । के । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४ च । अ । अ के ।
१५ ले २ शु क । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥
भा ४ क ते प शु

असंयतसम्यग्दृष्टिप्रभृति अयोगिकेवलप्यर्थाप्तं मूलौघभंगमक्कुं ॥

उ ५ । तदप्यर्थाप्तानां—गु १ मि । जी ७ अ । प ६ ५ ४ अ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ अ । सं ४ । ग ४ ।
इं ५ । का ६ । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । द २ । ले २ क शु ।
भा ६

२० भ १ अ । स १ मि । सं २ । आ २ । उ ४ । भव्याभव्यलक्षणरहितसिद्धानां प्राग्वत् । भव्यमार्गणा गता ।

सम्यक्त्वानुवादे सम्यग्दृष्टीनां—गु ११ असंयतादीनि । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ४ २ १ ।
सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १५ । वे ३, क ४, ज्ञा ५ म श्रु अ म के, सं ७, द ४ ले ६, भ १,
भा ६

स ३ उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ९ । तदप्यर्थाप्तानां—गु ११, जी १, प ६ ४, प्रा १० ४ १, सं ४,
ग ४, इं १, का १, यो ११ म ४ व ४ औ वै आ, वे ३ । क ४, ज्ञा ५ म श्रु अ म के, सं ७ । द ४,
२५ ले ६, भ १, स ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ । तदप्यर्थाप्तानां—गु ३ अ प्र स । जी १ अ ।
६

प ६ अ । प्रा ७ अ । २ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ४ औमि वैमि आमि का । वे २ न पं ।
क ४ । ज्ञा ४ म श्रु अ के । सं ४ अ सा छे य । द ४ च अ अ के । ले २ क शु । भ १ । स ३ उ वे
भा ४

क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ । असंयतादयोगिपर्यंतं मूलौघभंगः ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु ११ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । ४ । २ । १ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । सं ७ । द ४ । ले ६ ।
भा ६
भ १ । सं १ । सं १ । आ २ । उ ९ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टिपदार्थाप्तिकर्गे । गु ११ । जी १ । प ६ । प्रा १० । ४ । १ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । आ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । ५
म । श्रु । अ । म । के । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
भा ६

क्षायिकसम्यग्दृष्टिचपदार्थाप्तिकर्गे । गु ३ । अ । प्र । सयो । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा
७ । २ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । काम्मं । वे २ ।
न । पुं । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । के । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४ । च । अ ।
अ । के । ले २ क शु । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥ १०
भा ६

क्षायिकसम्यग्दृष्टि असंयतर्गे । गु १ । अ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु ।
अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा ६

क्षायिकसम्यग्दृष्टिपदार्थाप्तिकासंयतर्गे । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । १५
म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । स । सं १ ।
भा ६
आ १ । उ ६ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टीनां—गु ११ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ४ २ १ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं ।
का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ १ । स १ क्षा । सं १ । आ २ ।
६

उ ९ । तत्पर्याप्तानां—गु ११ । जी १ । प ६ । प्रा १० ४ १ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ त्र । यो ११
म ४ व ४ औ वै आ, वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ म श्रु अ म के । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ १ । स १ क्षा । २०
६

सं १ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु ३ अ प्र स । जी १ अ । प ६ । प्रा ७, २ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ पं । का १ त्र । यो ४ । औमि वैमि आमि का । वे २ न, पुं । क ४ । ज्ञा ४ म श्रु अ के । सं
४ अ सा छे य । द ४ च अ अ के । ले २ क शु । भ १ । स १ क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ । तदसंयतानां—
भा ६

गु १ अ । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ आहारद्वया-
भावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स १ क्षा । सं १ । २५
६

आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र ।
यो १० म ४ व ४ औ १ वै १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले ६ ।
६

आधिकसम्यग्दृष्ट्यसंयतापर्याप्तिकर्गे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ । न । पुं । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ क शु । भ १ । सं १ ।
भा ४ क ते प शु
आ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

५ आधिकसम्यग्दृष्टिदेशप्रतिगच्छे । गु १ । देश । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । दे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । आ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३

आधिकसम्यग्दृष्टिप्रमत्तप्रभृति सिद्धपर्यंतमोघभंगमक्कुं ॥

वेदकसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु ४ । अ । दे । प्र । अ । जी २ प । अ । प ६ । दे । प्रा १० ।
१० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वेदक । सं १ । आ २ । उ ७ ॥
भा ६

वेदकसम्यग्दृष्टिपर्याप्तिकर्गे । गु ४ । अ । दे । प्र । अ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ १ । वै १ । का १ । वे ३ । क ४ । जा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ५ । अ । दे । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वेदक ।
भा ६

१५ सं १ । आ १ । उ ७ ॥

वेदकसम्यग्दृष्टि अपर्याप्तिकर्गे । गु २ । असं । प्रम । जी १ अ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि का । वे २ । न । पुं । क ४ । जा ३ । म श्रु अ । सं ३ अ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वेदक । सं १ । आ २ ।
भा ६
उ ६ ॥

२० भ १ । सं १ आ । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ३ औ मि । वै मि का । वे २ न पुं । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ अ । द ३ च अ अ । ले २ क शु । भ १ । सं १ आ । सं १ । आ २ । उ ६ । तद्देशप्रतानां—
भा ४ क ते प शु

गु १ दे । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो ९ म ४ । व ४ । औ । वे ३ । क ४ । जा ३ म श्रु अ । सं १ दे । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । सं १ आ । सं १ । आ १ ।
भा ३

२५ उ ६ । प्रमत्तात्सिद्धपर्यंतं ओघभंगो भवति ।

वेदकसम्यग्दृष्टीनां—गु ४ अ दे प्र अ । जी २ । प ६ दे । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । जा ४ म श्रु अ म । सं ५ अ दे सा छे प । द ३ । ले ६ । भ १ ।
६

सं १ वे । सं १ । आ २ । उ ७ । तत्पर्याप्तानां—गु ४ अ दे प्र अ । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । यो ११ म ४ व ४ औ १ वै १ । आ १ । वे ३ । क ४ । जा ४ म श्रु अ म । सं ५ अ दे सा छे प ।

३० द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ वे । सं १ । आ १ । उ ७ । तदपर्याप्तानां—गु २ अ प्र । जी १ अ । प ६ । प्रा ७ ।
६

वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतसम्यग्दृष्टिगण्यो । गु १ । असं । जी २ प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ । म ४ । वा ४ । औ २ । वै २ । का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ २ ।
भा ६
उ ६ ॥

वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतपर्याप्तिकर्णो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । ५
इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु ।
अ । सं १ । असंयम । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ६

वेदकसम्यग्दृष्ट्यपर्याप्तासंयतसम्यग्दृष्टिगण्यो । गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे २ । षं । पुं । क ४ ।
ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले २ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ २ । उ ६ ॥ १०
भा ६

वेदकसम्यग्दृष्टिदेशव्रतिगण्यो । गु १ । देश । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ ।
ति । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
सं १ । देश । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तर्णो । गु १ । प्रम । जी २ । प अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग १ । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ १ । आ २ । वे ३ । १५
क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वेव ।
भा ३
सं १ । आ १ । उ ७ ॥

सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो ४ औमि वैमि आमि का, वे २ न पुं, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं ३ अ
सा छे, द ३, ले २, भ १, सं १ वे, सं १, आ १, उ ६ । तदसंयतानां—गु १ अ, जी २ प, अ प ६, ६ ।
६

प्रा १०, ७ सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १३ म ४ व ४ औ २ वै २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु २०
अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, सं १ वे, सं १, आ २, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ प, प ६,
६

प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, का १ त्र, यो १०, म ४ व ४ औ १ वै १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ,
सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, सं १ वे, सं १, आ १, उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ अ । प ६ अ,
६

प्रा ७ अ, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो ३ औमि वैमि का, वे २ षं पुं, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ,
द ३, ले २ क शु, भ १, सं १ वे, सं १, आ २, उ ६ । देशव्रतानां—गु १ वे, जी १ प, प ६, प्रा १०, २५
भा ६

सं ४, ग २ ति म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९ म ४ व ४ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ वे, द ३ ले ६,
३

भ १, सं १ वे, सं १, आ १, उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १ म,
इं १ पं, का १ त्र, यो ११ म ४ व ४ औ १, आ २, वे ३, क ४, ज्ञा ४ म श्रु अ म, सं ३ सा छे प,

उपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतपर्याप्तिकर्गो । गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

भा ६

उपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतापर्याप्तिकर्गो । गु १ । अ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ ।
ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वै मि १ । का १ । वे १ पुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ ।
द ३ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिदेशव्रतिगर्गो । गु १ । दे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति ।
म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । वे । द ३ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिप्रमत्तर्गो । गु १ । प्रम । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म ।
इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म ।
सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिअप्रमत्तसंयतर्गो । गु १ । अप्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ ।
ग १ म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ ।
सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

भा २

उपशमसम्यग्दृष्टि अपूर्वकरणाप्रभृति उपशांतकषायछास्यवीतरागपर्यंत ओघभंगमक्कुं ।
मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुचिगर्गो ओघभंगमेयधुनु । इंतु सम्यक्त्वमार्गणे समाप्रमादुदु ॥

तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० म ४ व ४ औ १
वै १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ १ । उ ६ ।

६

तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ दे । इं १ । का १ व । यो २ वैमि
का । वे १ पुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द ३ । ले २ क शु । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ २ । उ ६ ।

भा ३

देशव्रतानां—गु १ दे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ ति म । इं १ । का १ । यो ९ म ४ व ४
औ १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ दे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ १ । उ ६ ।

३

प्रमत्तानां—गु १ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ म । इं १ । का १ । यो ९ म ४ व ४ औ १ ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं २ सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ १ । उ ७ ।

भा ३

अप्रमत्तानां—गु १ अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ म । इं १ । का १ व । यो ९ म ४ व ४
औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं २ सा छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ १ । उ ७ ।

भा ३

अपूर्वकरणादुपशांतकषायपर्यंतमोघभंगः । तथा मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुचीनामपि । सम्यक्त्वमार्गणा गता ।

५

१०

१५

२०

२५

संज्ञानुवादबोळु । संज्ञिगळ्णे । गु १२ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं । ४ ग ४ । इं १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । द ३ । ले ६ । भ २ ।
 भा ६
 सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ॥

संज्ञिपय्याप्तिकर्णे । गु १२ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
 ५ यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । आ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । द ३ ।
 ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० ॥
 भा ६

संज्ञ्यपय्याप्तिकर्णे । गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । का १ । यो ४ । औ मि १ । वै मि १ । आ मि १ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ ।
 कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ ।
 भा ६
 १० वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥

संज्ञिमिथ्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
 सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 भा ६

संज्ञिमिथ्यादृष्टिपय्याप्तिकर्णे गु १ । मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
 १५ का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
 सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं । आ १ । उ ५ ॥
 ६

संज्ञ्यनुवादे संज्ञिनां—गु १२ । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
 यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ।
 ६

तत्पर्याप्तानां—गु १२ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ११ म ४ व ४ औ वै
 २० आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० । तदपर्याप्तानां—
 ६

गु ४ मि सा अ प्र । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ४ औ मि वै मि
 आ मि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ । सं ३ अ सा छे । द ३ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ मि
 भा ६

सा उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ । तन्मिथ्यादृष्टां—गु १ मि । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ आहारद्वयाभावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ ।
 २५ द २ । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ ।
 ६

प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० म ४ व ४ औ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।

संज्ञिमिथ्यादृष्ट्यपर्याप्तकर्मणे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । औ मि १ । वै मि १ । का १ । वे ३ । क ४ । जा २ । कु । कु ।
सं १ । अ । द २ । च । अ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

संज्ञिसासादनंगे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । म ४ । वा ४ । औ २ । वै २ । का १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । ५
कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
भा ६

संज्ञिपर्याप्तकसासादनंगे । गु १ । सासा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वै १ । वे ३ । क ४ । जा ३ ।
कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा ६

संज्ञिसासादनसम्यग्दृष्ट्यपर्याप्तकर्मणे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । १०
अ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
जा २ । कु । कु । सं १ । अ । द २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

संज्ञिमिश्रंगे । गु १ । मिश्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
यो १० । म ४ । व ४ । औ का १ । वै का १ । आहारकद्वयमिश्रद्वय-काम्मणरहित । वे ३ ।
क ४ । जा ३ । मिश्र । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥ १५
भा ६

सं १ अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं १ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ अ ।
६

प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ । जा २ कु कु ।
सं १ अ । द २ । ले २ क शु । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ । सासादनानां—गु १ सा । जी २ ।
६

प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ त्र । यो १३ म ४ व ४ औ २ वै २ का १ । वे ३ ।
क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ५ । २०
६

तत्पर्याप्तानां—गु १ सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १० म ४ व ४
औ १ वै १ । वे ३ । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ ।
६

आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ ।
का १ । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । द २ । ले २ । भ १ । स १ सा ।
६

सं १ । आ २ । उ ४ । मिश्राणां—गु १ मिश्रं । जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । २५
यो १० । औदारिकमिश्र-वैक्रियिकमिश्रकाम्मणाहारकद्वयाभावात् । वे ३ । क ४ । जा ३ मिश्राणि । सं १ अ ।

संज्ञ्यसंयतसम्पद्वृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भा ६

संज्ञिपर्याप्तासंयतसम्पद्वृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
५ इं १ । काय १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । आ १ । उ ६ ॥

भा ६

संज्ञ्यपर्याप्तासंयतसम्पद्वृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वै मि । कर्म । वे २ । न पुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भा ६

१० संज्ञिवेश्वरतिप्रभृतिक्षीणकषायपर्यंतं मूलौघभंगमक्कं ।

असंज्ञिगच्छे । गु १ मि । जी १२ । संज्ञिद्वयरहित प ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा ९ । ७ । ८ ।
६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ४ । औ २ । का १ । अनु-
भयवाग्योग १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ ।

भा ४ अशुभ । ते

सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

१५ असंज्ञिपर्याप्तिकं । गु १ । मि । जी ६ । अ । संज्ञ्यपर्याप्तरहित प ५ । ४ । प्रा ९ । ८ ।
७ । ६ । ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो २ । औ का १ । अनुभयवचन । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ३ । अशुभ । ते १

असंज्ञित्वं । आ १ । उ ४ ॥

द २ । ले ६ । भ १ । स १ मिश्रं । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां-गु १ अ । जी २ प अ । प ६ ।

६

२० ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ आहारकद्वयाभावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म
श्रु अ । सं १ अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां-गु १ अ । जी १ ।

६

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु अ । सं १ अ । व ३
च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे आ । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां-गु १ अ । जी १ अ ।

६

२५ प ६ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ३ औमि वैमि का क वे २ पुं । न । क ४ । ज्ञा ३ म श्रु
अ । सं १ अ । व ३ च अ अ । ले २ क शु । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । देशत्रतात्क्षीणकषाय-
भा ६

पर्यंतं मूलौघभंगः ।

असंज्ञिनां-गु १ मि । जी १२ संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ती नहि । प ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा ९ । ७ । ८ । ६ ।
७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ४ । औ २ । का १ अनुभयवचनं ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । व २ ले ६ । भ १ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ ।
भा ४ अ ३ शु १

असंज्ञ्यपद्व्याप्तिकं । गु १ । मि । जी ६ । अ । प ५ । ४ । अ । प्रा ७ । ६ । ५ । ४ । ३ ।
सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो २ । औ मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
व २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशु

संज्ञ्यसंज्ञिव्यपदेशरहितसयोगायोगि सिद्धरुगळगे मूलौघभंगमवकुं । इंतु संज्ञिमागंगे
समाप्तमावुदु ॥

५

आहारानुवादबोळु आहारिगळगे । गु १३ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १४ ।
काम्मणकाप्रयोगरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
आ १ । उ १२ ॥

आहारिपद्व्याप्तिकं । गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ५ । १०
४ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । आ का ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । उ १२ ॥
भा ६

आहारिअपद्व्याप्तिकं । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयो । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । आ मि ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । म । अ । अ । के । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४ । १५
ले १ क । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वै । क्षा । सं २ । आ १ । उ १० ॥
भा ६

तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी ६ संज्ञिपर्याप्तो नहि । प ५ । ४ । प्रा ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग १ ति ।
इं ५ । का ६ । यो २ औ । अनुभयवचनं । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १
भा ४ अ ३ शु १
मि । सं १ अ । आ १ । उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी ६ अ । प ४ अ । प्रा ७ । ६ । ५ । ४ । ३ ।
सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो २ औ मि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले २ क शु । २०
भा ३ अशु
भ २ । स १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ४ । संज्ञासंज्ञिव्यपदेशरहितानां सयोगायोगिसिद्धानां मूलौघभंगः ।
संज्ञिमागंगा गता ।

आहारानुवादे आहारिणां—गु १३, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, ७,
५, ६, ४, ४, ३, ४, २, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १४ काम्मणो नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४,
ले ६, भ २, स ६, सं २, आ १, उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १३, जी ७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, २५

६, ४, ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ११ म ४ व ४ औ वै आ, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४, ले ६,
भ २, स ६, सं २, आ १, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स, जी ७ अ, प ६, ५, ४, प्रा ७,
७, ६, ५, ४, ३, २, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ३ औ मि वै मि आ मि, वे ३, क ४, ज्ञा ६ कु कु म शु
अ के, सं ४ अ सा छे यथा, द ४, ले १ क, भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ १, उ १० ।
भा ६

आहारिमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
 ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १२ । आहारक-
 द्वयरहित । काम्मणरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ ।
 भा ६
 भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

५ आहारिमिथ्यादृष्टिपर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
 ६ । ५ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० । आहारद्वयमिश्रयोगत्रयरहित । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ ।
 भा ६
 उ ५ ॥

१० आहार्यंपर्याप्तिकमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ ।
 ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो २ । औमि । वैमि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु ।
 कु । सं १ । अ । द २ । ले १ क । भ २ । सं १ मि । सं २ । आ १ । उ ४ ॥
 भा ६

आहारिसासादनसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ २ । वै २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा ६

१५ आहारिसासादनसम्यग्दृष्टिपर्याप्तिकर्णे । गु १ । सासा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा ६

मिथ्यादृष्टीनां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ३,
 सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १२ आहारद्वयकर्मणाभावात्, वे ३, क ४, ज्ञा ३, कु कु वि, सं १ अ, द २,
 २० ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९,
 ६

८, ७, ६, ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १० आहारकद्वयमिश्रत्रयाभावात्, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि,
 सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७, प ६, ५, ४,
 ६

प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो २ औमि वैमि, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ,
 द २, ले १ क, भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ४ । सासादनानां—गु १ सा, जी २ प अ, प ६, ६,
 भा ६

२५ प्रा १०, ७, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो १२ म ४ व ४ औ २, वै २, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि,
 सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ सा, जी १, प ६, प्रा १०,
 ६

सं ४, ग ४, इं १, का १, यो १०, म ४ व ४ औ १ वै १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २,

आहारिसासादनसम्यग्दृष्टिअपर्याप्तिकंगे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो २ । औ मि । वै मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ ।
सं १ अ । द २ । ले १ क । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
भा ६

आहारिमिश्रंगे । गु १ । मिश्र । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । मिश्र । सं १ । अ । द २ । ५
ले ६ । भ १ । सं १ । मिश्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
भा ६

आहारिअसंयतसम्यग्दृष्टिगण्ठगे । गु १ । असं । जी २ । प अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ २ । वै २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ६

आहार्यसंयतसम्यग्दृष्टिपर्याप्तिकंगे । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । १०
ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का । वै का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
म । श्रु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ६

आहार्यसंयतसम्यग्दृष्टिअपर्याप्तिकंगे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो २ । औ मि । वै मि । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । द ३ । ले १ क । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥ १५
भा ६

ले ६, भ १, सं १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४,
६

ग ३ ति म दे, इं १, का १, यो २ औमि वैमि, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २, ले १ क, भ १,
भा ६

सं १ सा, सं १, आ १, उ ४ । मिश्राणां—गु १ मिश्रं, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, का १,
यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ मिश्राणि, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, सं १ मिश्रं,
६

सं १, आ १, उ ५ । असंयतानां—गु १ अ, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ४, इं १, का १, २०
यो १२ म ४, व ४ औ २ वै २, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, सं ३ उ वे क्षा,
६

सं १, आ १, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो १०
म ४ व ४ औ वै, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म श्रु अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, सं ३, सं १, आ १, उ ६ ।
६

तदपर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो २ औमि वैमि, वे २
पुं, न, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३ व अ अ, ले १ क, भ १, सं ३ उ वे क्षा, सं १, आ १, उ ६ । २५
भा ६

આહારિદેશસંયતંગે । ગુ ૧ । દેશ । જી ૧ । પ ૬ । પ્રા ૧૦ । ૭ । સં ૪ । ગ ૨ । તિ ।
મ । હં ૧ । કા ૧ । યો ૯ । મ ૪ । વા ૪ । ઔ કા ૧ । વે ૩ । ક ૪ । જા ૩ । મ । શ્રુ । અ ।
સં ૧ । દેશ । વ ૩ । લે ૬ । મ ૧ । સં ૩ । સં ૧ । આ ૧ । ડ ૬ ॥

ભા ૩

આહારિપ્રમત્તસંયતંગે । ગુ ૧ । પ્ર । જી ૨ પ । અ । પ ૬ । ૬ । પ્રા ૧૦ । ૭ । સં ૪ । ગ ૧
૫ મ । હં ૧ । કા ૧ । યો ૧૧ । મ ૪ । વા ૪ । ઔ ૧ । આ ૨ । વે ૩ । ક ૪ । જા ૪ । મ । શ્રુ । અ ।
મ । સં ૩ । સા । છે । પ । વ ૩ । લે ૬ । મ ૧ । સં ૩ । સં ૧ । આ ૧ । ડ ૭ ॥

ભા ૩

આહાર્યપ્રમત્તસંયતંગે । ગુ ૧ । અ પ્ર । જી ૧ । પ ૬ । પ્રા ૧૦ । સં ૩ । ગ ૧ । મ । હં ૧ ।
કા ૧ । યો ૯ । વે ૩ । ક ૪ । જા ૪ । સં ૩ । સા । છે । પ । વ ૩ । લે ૬ । મ ૧ । સં ૩ ।
સં ૧ । આ ૧ । ડ ૭ ॥

ભા ૩

૧૦ આહાર્યપૂર્વકરણંગે । ગુ ૧ અપૂ । જી ૧ । પ ૬ । પ્રા ૧૦ । સં ૩ । ગ ૧ મ । હં ૧ ।
કા ૧ । યો ૯ । વે ૩ । ક ૪ । જા ૪ । સં ૨ । સા । છે । વ ૩ । લે ૬ । મ ૧ । સં ૨ ।
ડ । ક્ષા । સં ૧ । આ ૧ । ડ ૭ ॥

ભા ૧

૧૫ આહારિપ્રથમભાગાનિવૃત્તિગ્ણંગે । ગુ ૧ । અનિ । જી ૧ । પ ૬ । પ્રા ૧૦ । સં ૨ । મૈ । પ ॥
ગ ૧ । મ । હં ૧ । પં । કા ૧ ત્ર । યો ૯ । વે ૩ । ક ૪ । જા ૪ । સં ૨ । સા । છે । વ ૩ ।
લે ૬ । મ ૧ । સં ૨ । ડ । ક્ષા । સં ૧ । આ ૧ । ડ ૭ ॥

ભા ૧

શેષચતુરનિવૃત્તિકરણંગો ઓઘભંગમવકું ॥

આહારિસૂક્ષ્મસાંપરાયસંયતંગે । ગુ ૧ । સૂ । જી ૧ । પ ૬ । પ્રા ૧૦ । સં ૧ । પરિગ્રહ ।
ગ ૧ । મ । હં ૧ । પં । કા ૧ ત્ર । યો ૯ । વે ૦ । ક ૧ । સૂક્ષ્મલોભ । જા ૪ । સં ૧ । સૂ । વ ૩ ।

૨૦ દેશવ્રતાનાં—ગુ ૧, જી ૧, પ ૬, પ્રા ૧૦, સં ૪, ગ ૨ તિ મ, હં ૧, કા ૧, યો ૯, વે ૩, ક ૪, જા ૩,
સં ૧ દે, વ ૩, લે ૬, મ ૧, સ ૩ ડ વે ક્ષા, સં ૧, આ ૧, ડ ૬ । પ્રમત્તાનાં—ગુ ૧ પ્ર, જી ૨ પ અ, પ ૬,
૩

૬, પ્રા ૧૦, ૭, સં ૪, ગ ૧ મ, હં ૧, કા ૧, યો ૧૧ મ ૪ વ ૪ ઔ ૧ આ ૨, વે ૩, ક ૪, જા ૪ મ શ્રુ
અ મ, સં ૩ સા છે પ, વ ૩, લે ૬, મ ૧, સ ૩, સં ૧, આ ૧, ડ ૭ । અપ્રમત્તાનાં—ગુ ૧ અ, જી ૧, પ ૬,
ભા ૩

પ્રા ૧૦, સં ૩, ગ ૧ મ, હં ૧, કા ૧, યો ૯, વે ૩, ક ૪, જા ૪, સં ૩ સા છે પ, વ ૩, લે ૬, મ ૧, સ ૩,
૩

૨૫ સં ૧, આ ૧, ડ ૭ । અપૂર્વકરણનાં—ગુ ૧ અ, જી ૧, પ ૬, પ્રા ૧૦, સં ૩, ગ ૧ મ, હં ૧, કા ૧, યો ૯,
વે ૩, ક ૪, જા ૪, સં ૨ સા છે, વ ૩, લે ૬, મ ૧, સ ૨ ડ ક્ષા, સં ૧, આ ૧, ડ ૭ । અનિવૃત્તીનાં
૧

પ્રથમભાગે—ગુ ૧ અ, જી ૧, પ ૬, પ્રા ૧૦, સં ૨ મૈ પ, ગ ૧ મ, હં ૧, કા ૧, યો ૯, વે ૩, ક ૪, જા ૪,
સં ૨ સા છે, વ ૩, લે ૬, મ ૧, સ ૨ ડ ક્ષા, સં ૧, આ ૧, ડ ૭ । શેષચતુર્ભાગિજ્વોઘભંગઃ, સૂક્ષ્મસાંપરાયાણાં—
૧

ગુ ૧ સૂ, જી ૧, પ ૬, પ્રા ૧૦, સં ૧ પ, ગ ૧, હં ૧, કા ૧, યો ૯ વે ૦, ક ૧, સૂક્ષ્મલોભઃ, જા ૪, સં ૧

ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥
भा १

आहार्युपशान्तकषायवीतरागछन्नस्थंगे। गु १। उप। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०।
ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो ९। म ४। वा ४। औ का १। वे ०। क ०। ज्ञा ४। म
श्रु। अ। म। सं १। यथा। द ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १।
भा १

आ १। उ ७॥

५

आहारिक्षीणकषायछन्नस्थवीतरागं। गु १। क्षीण। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०।
ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। योग ९। वे ०। क ०। ज्ञा ४। सं १। यथा। द ३। ले ६।
भा १

भ १। सं १। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥

आहारिसयोगकेवलिभट्टारकं। गु १। सयोग के। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा ४। २।
सं ०। ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो ६। म २। वा २। औ २। वे ०। क ०। १०
ज्ञा १। के। सं १। यथा। द १ के। ले ६। भ १। सं १। क्षा। सं ०। आ १। उ २॥
भा १

ई प्रकारविदं सयोगकेवलिभट्टारकं पर्याप्तापर्याप्ताळापह्वं वक्तव्यमप्युदु ॥

अनाहारिगळे। गु ५। मि सा। अ। सयोग अयोगि। जी। ८। एकैन्द्रियबावरसूक्ष्मद्वित्रि-
चतुःपंचैन्द्रियसंज्ञ्यसंज्ञिगळे। अपर्याप्तकर अयोगिकेवलिरहितमाणि। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७।
६। ५। ४। ३। २। १। सं ४। ग ४। इ ५। का ६। यो १। काम्मणं। वे ३। क ४। १५
ज्ञा ६। कु। कु। म। श्रु। अ। के। सं २। असंयममुं यथास्थातमुं। द ४। ले १ शु। भ २।
भा ६

सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ १। अनाहार उ १०॥

सू, द ३, ले ६, भ १, स २, उ क्षा, सं १, आ १, उ ७। उपशान्तकषायाणां—गु १ उ, जी १, प ६,
१

प्रा १०, सं ०, ग १ म, इ १, का १, यो ९ म ४ व ४ औ, वे ०, क ४, ज्ञा ४ म श्रु अ म, सं १ य,
द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ७। क्षीणकषायाणां—गु १ क्षी, जी १, प ६, २०
१

प्रा १०, सं ४, ग १ म, इ १, का १ त्र, यो ९, वे ०, क ०, ज्ञा ४, सं १ य, द ३, ले ६, भ १, स १ क्षा,
१

सं १, आ १, उ ७। सयोगिकेवलिनं—गु १ सयो, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा ४, २, सं ०, ग १ म, इ १,
का १ त्र, यो ६ म २ व २ औ २, वे ०, क ०, ज्ञा १ के, सं १ य, द १ के, ले ६, भ १, स १ क्षा,
१

सं ०, आ १, उ २। एवामपर्याप्तालापोऽपि वक्तव्यः।

अनाहारिणां—गु ५ मि सा अ स अ, जी ८ सप्तापर्याप्ता एकोऽयोगिनः, प ६, ५, ४, प्रा ७ ७ ६ २५
५ ४ ३ २ १, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १, वे १, क ४, ज्ञा ६ कु कु म श्रु अ के, सं २ अ य, द ४,

अनाहारकमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ ।
४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १ । कर्म । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ ।
अ । द २ । ले १ शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । अनाहार उ ४ ॥
भा ६

अनाहारिसासादनसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ ।
५ ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । कर्ममणकाय । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु ।
कु । सं १ । अ । द २ । ले १ शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । अनाहार । उ ४ ॥
भा ६

अनाहारि असंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे । गु १ । असं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । कर्ममणकाय । वे २ । पं । पुं । क ४ । ज्ञा ३ ।
म । शु । अ । सं १ । अ । द ३ । ले १ शु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । अनाहार । उ ६ ॥
भा ६

१० अपर्याप्तिकत्वदिदमुं प्रमत्तसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ म ।
इं १ । पं । का १ त्र । यो १ । आहारमिश्रमपुर्दरिदमौदारिकापेक्षेयिनाहारियक्कुं । वे १ । पुं ।
क ४ । ज्ञा ३ । म । शु । अ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले १ क । भ १ । सं ३ । सं १ ।
आ १ । उ ६ ॥
भा ३

अनाहारिसयोगिकेवल्लिगच्छे । गु १ सयोग । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा २ । कायबल ।
१५ आयुष्य । सं । ० । ग १ । म । इं । पं । का १ त्र । यो १ । कर्ममण । वे ० । क ० । ज्ञा १ के ।
सं १ । यथा । द १ के । ले १ । भ १ । सं १ । क्षा । सं ० । आ १ । अनाहार । उ २ ॥
भा १

ले ६, भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ १, उ १० । तन्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी ७, प ६ ५ ४,
भा ६

प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ ।
द २ । ले १ शु । भ २ । स १ मि । सं २ । आ १ अ । उ ४ । सासादनानां—गु १ सा । जी १ अ ।
भा ६

२० प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु ।
सं १ अ । द २ । ले १ शु । भ १ । स १ सा । सं १ अ । आ १ अ । उ ४ । असंयतानां—गु १ अ ।
भा ६

जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो १ का । वे २ पुं । पं । क ४ ।
ज्ञा ३ म शु अ । सं १ । द ३ । ले १ शु । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ अ । उ ६ । प्रमत्तानां—
भा ६

गु १ प्र । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ म । इं १ । का १ । यो १ आमि तेन औदारिकापेक्षया-
२५ ज्ञाहारः वे १ पुं । क ४ । ज्ञा ३ म शु अ । सं २ सा छे । द ३ । ले १ क । भ १ । स २ । सं १ ।
भा ३

आ १ । उ ६ । सयोगिकेवल्लिनां—गु १ स । जी १ अ । प ६ अ । प्रा २ । कायबल । आयुष्यं । सं ० ।
ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो १ का । वे ० । क ० । ज्ञा १ के । सं १ य । द १ के । के ।
भा १

अयोगिकेवलिभट्टारकंगे । गु १ अयो । जी १ । प । प ६ । प्रा १ । आयुष्य । सं ० ।
ग १ । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ के । सं १ यथा । द १ के । ले ६ ।
भा ०

भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ १ अनाहार । उ २ ॥

अनाहारि सिद्धपरमेष्ठिगङ्गे । गु ० । जी ० । प ० । प्रा ० । गति १ सिद्धगति । इं ० ।
का ० । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं ० । द १ के । ले ० । भ ० । सं १ । क्षा । सं ० । ५
आ १ । अनाहार । उ २ ॥

१ भ १ । स १ क्षा । सं ० । आ १ अ । उ २ । अयोगिकेवलिनं—गु १ अ । जी १ प । प ६ । प्रा १ आयु ।
सं ० । ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ के । सं १ य । द १ के । ले ६ ।
भा ०

भ १ । स १ क्षा । सं ० । आ १ अ । उ २ । सिद्धानां—गु ० । जी ० । प ० । प्रा ० । सं ० । ग १
सिद्धगति । इं ० । का ० । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ के । सं ० । द १ के । ले ० । भ ० । सं १ १०
क्षा । सं ० । आ १ अ । उ २ ॥ ७२८ ॥

[ऊपर कर्णाटक टीका और तदनुसारी संस्कृत टीकामें गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें बीस प्ररूपणाओंका कथन सांकेतिक अक्षरोंके द्वारा किया है । उन संकेतोंको समझ लेनेसे उक्त प्ररूपणाओंको समझ लेना सरल है ।

प्ररूपणा और उनके संकेत अक्षर इस प्रकार हैं ।

१५

गु (गुणस्थान १४) जी (जीवसमास १४) प (पर्याप्ति ६) प्रा (प्राण १०) सं (संज्ञा ४)
ग (गति ४) इं (इन्द्रिय ५) का (काय ६) यो (योग १५) वे (वेद ३) क (कषाय ४) ज्ञा
(ज्ञान ८) सं (संयम ७) द (दर्शन ४) ले (लेश्या ६) भ (भव्यत्व-अभव्यत्व) स (सम्यक्त्व ६)
सं (संज्ञी-असंज्ञी) आ (आहारक-अनाहारक) ।

इन बीस प्ररूपणाओंमेंसे जहाँ जितनी सम्भव होती है, उनको सूचना संकेताक्षरके आगे संख्यासूचक २०
अंक लिखकर दी गयी है । जैसे पृ. ९५० में पर्याप्त गुणस्थानवालोंके गुणस्थान १४ कहे हैं । जीवसमास ७
पर्याप्त सम्बन्धी कहे हैं । पर्याप्ति ६, ५, ४ कही हैं, क्योंकि पंचेन्द्रियके छह, विकलेन्द्रियके पाँच और
एकेन्द्रियके चार पर्याप्तियाँ होती हैं । प्राण १०, ९, ८, ७, ६, ४, ४, १ कहे हैं, क्योंकि संज्ञीके दस प्राण
होते हैं शेष के एक-एक इन्द्रिय घटती जाती है । एकेन्द्रियके चार ही प्राण होते हैं । सयोगकेवलीके चार
और अयोगकेवलीके एक प्राण होता है । संज्ञा चारों होती हैं । गति चार, इन्द्रिय एकसे लेकर पाँच तक, २५
काय छह, योग ग्यारह (चार मन, चार वचन, तीन पूर्णकाय योग) होते हैं । वेद तीन, कषाय चार,
ज्ञान आठ (पाँच और तीन मिथ्या), संयम सात (संयम मार्गणाके सात भेद हैं), दर्शन चार, लेश्या छह,
भव्यत्व-अभव्यत्व, सम्यक्त्व मार्गणाके ६ भेद, संज्ञी-असंज्ञी, आहारक होते हैं । उपयोग बारह—आठ ज्ञान,
चार दर्शन । अपर्याप्त गुणस्थानवालोंके गुणस्थान पाँच हैं—मिथ्यात्व, सासादन, असंयत, प्रमत्त (आहारककी
अपेक्षा), सयोगकेवली (समुद्धात अवस्थाकी अपेक्षा) । जीव समास सात अपर्याप्त होते हैं । पर्याप्ति छह ३०
पाँच चार हैं । प्राण अपर्याप्त अवस्थामें सात, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो होते हैं । एकेन्द्रियके तीन
और समुद्धात केवलीके दो होते हैं । संज्ञा चार, गति चार, इन्द्रिय पाँच, काय छह होते हैं । योग चार
होते हैं—बौद्धिक मिश्र, बैक्रियिक मिश्र, आहारकमिश्र, कार्मण । वेद तीन, कषाय चार, ज्ञान छह होते
हैं—कुमति, कुश्रुत, मति, श्रुत, अवधि, केवल । संयम मार्गणाके चार भेद होते हैं—असंयम, सामायिक,

मणपज्जवपरिहारो पढमुवसम्मत्त दोण्णि आहारा ।

एदेसु एक्कपगदे णत्थित्तियसेसयं जाणे ॥७२९॥

मनःपर्ययः परिहारः प्रथमोपशमसम्यक्त्वं द्वावाहारौ । एतेष्वेकस्मिन् प्रकृते नास्तीत्यशेषकं जानीहि ॥

५ मनःपर्ययज्ञानमुं परिहारविशुद्धिसंयममुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वं आहारकाहारकमिधमु-
मित्तिवरोद्धुमुं दु प्रकृतमागुत्तं बिरलुद्धिमिल्लेदितु शिष्य नीनरियेदु संबोधने माडल्पट्टुदु ।

मनःपर्ययज्ञानं परिहारविशुद्धिसंयमः प्रथमोपशमसम्यक्त्वं आहारकद्विकं च इत्येतेषु मध्ये एकस्मिन् प्रकृते प्रस्तुते अधिकृते सति अवशेषं उद्धरितं नास्ति-न संभवतीति जानीहि [तेषु मध्ये एकस्मिन्नुदिते तस्मिन् पुंसि तदा अन्यस्योत्पत्तिविरोधात्] ॥७२९॥

१० छेदोपस्थापना, यथाख्यात । दर्शन चार, लेख्या छह, भग्यत्व-अभग्यत्व, सम्यक्त्व मार्गणाके पाँच भेद सम्यक्-
मिध्यात्वके बिना । संज्ञी-असंज्ञी, आहारक-अनाहारक, उपयोग दस-विभंग और मनःपर्यय अपर्याप्त अवस्थामें नहीं होते ।

इसी तरह आगे चौदह गुणस्थानोंमें क्रमशः बीस प्ररूपणाओंका कथन संकेताक्षर द्वारा किया है ।
उसके पश्चात् क्रमशः चौदह मार्गणाओंमें कथन किया है ।

१५ गति मार्गणामें कथन करते हुए सातों नरकोंमें, तिर्यंचके भेदोंमें, मनुष्योंमें, देवोंमें गुणस्थानोंको आधार
बनाकर बीस प्ररूपणाओंका कथन विस्तारसे किया है । जैसे नरकगतिमें—नारक सामान्य, नारक सामान्य
पर्याप्त, सामान्य नारक अपर्याप्त, सामान्य नारक मिथ्यादृष्टि, सामान्य नारक पर्याप्त मिथ्यादृष्टि, सामान्य
नारक अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि, सामान्य नारक सासादन सम्यग्दृष्टि, नारक सामान्य मिश्र, नारक सामान्य
असंयत, सामान्य नारक पर्याप्त असंयत, सामान्य नारक अपर्याप्त असंयत, धर्मा सामान्य नारक, धर्मा
२० सामान्य नारक पर्याप्त, धर्मा सामान्य नारक अपर्याप्त, धर्मा मिथ्यादृष्टि, धर्मानारक अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि,
धर्मा पर्याप्त सासादन, धर्मा मिश्रगुणस्थान, धर्मा असंयत गु., धर्मा पर्याप्त नारक असंयत, धर्मा नारक
अपर्याप्त असंयत सम्यग्दृष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य, द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त, द्वितीयादि
पृथ्वी नारक अपर्याप्त, द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य मिथ्यादृष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त
मिथ्यादृष्टि, द्वितीयादि पृथिवी नारक अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि, द्वितीयादि पृथिवी नारक सासादन, द्वितीयादि
२५ पृथ्वी नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक असंयत सम्यग्दृष्टि, इतने विस्तारसे बीस प्ररूपणाओं-
का प्रत्येकमें कथन किया है । इसी प्रकार तिर्यंचगति, मनुष्यगति, देवगति, इन्द्रिय मार्गणाके भेद-प्रभेदोंमें
बीस प्ररूपणाओंका कथन किया है ।

पहले हमने पं. टोडरमलजीकी टीकाके अनुसार नक्षों द्वारा अंकित करनेका विचार किया था ।
किन्तु उनमें भी संकेताक्षरोंका ही प्रयोग करना पड़ता । और कम्पोजिंगमें भी कठिनाई आ जाती । ग्रन्थका
३० भार भी बढ़ जाता, इससे उसे छोड़ दिया । संकेताक्षर समझ लेनेसे टीकाको समझा जा सकता है ।]

मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धि संयम, प्रथमोपशम सम्यक्त्व, आहारक, आहारक-
मिश्र इनमें-से एक प्राप्त होनेपर उसके साथ शेष सब नहीं होते ॥७२९॥

१. य प्रती कोष्ठान्तर्गतः पाठो नास्ति ।

विदियुवसमसम्भत्तं सेडीदो दिण्ण अविरदादीसु ।

सगसगलेस्सामरिदे देव अपज्जत्तगेव हवे ॥७३०॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं श्रेणितोऽवतीर्णाविरतादिषु । स्वस्वलेश्यामृते देवापर्याप्तके एव भवेत् ॥

असंयतादिगळोळु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमे बुदुपशमश्रेणियिदमिळिदु संक्लेशवश- ५
दिदमसंयमादियोळु परिपतितरादरोळु दु निश्चैसूदु । आ द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिगळुप
असंयतादिगळु तंतम्म लेश्येगळोळुकूडि मृतरादरादोडे देवापर्याप्तकासंयतसम्यग्दृष्टिगळे नियम-
दिदमपरैके दोडे बद्धदेवायुष्यंगल्लदे मरणमुपशमश्रेणियोळु संभविसदु । इतरायुस्त्रयवर्द्धायुष्यंगे
देशसंयममुं सकलसंयममुं संभविसदुपरिवं ।

सिद्धाणं सिद्धगई केवलणाणं च दंसणं खइयं ।

१०

सम्भत्तमणाहारं उवजोगाणक्कमपउत्ती ॥७३१॥

सिद्धानां सिद्धगतिः केवलज्ञानं च दर्शनं क्षायिकं, सम्यक्त्वमनाहारः उपयोगधोरक्रम-
प्रवृत्तिः ॥

सिद्धपरमेष्ठिगळुगे सिद्धगतियुं केवलज्ञानमुं केवलदर्शनमुं क्षायिकसम्यक्त्वमुं अनाहारमुं
ज्ञानदर्शनोपयोगद्वयक्कमप्रवृत्तियुमरियल्पडुगुं ।

१५

अमूर्त्तसिद्धपरमेष्ठिगळुः—

गुणजीवठाणरहिया सण्णापज्जत्तिपाणपरिहीणा ।

सेसणवमग्गणूणा सिद्धा सुद्धा सदा होंति ॥७३२॥

गुणजीवस्थानरहिताः संज्ञापर्याप्तिप्राणपरिहीनाः । शेषनवमार्गणोनाः सिद्धाः शुद्धा-
स्सदा भवन्ति ॥

२०

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं संभवति । केधु ? उपशमश्रेणितः संक्लेशवशादधः असंयतादिषु अवतीर्णेषु ।
ते च असंयतादयः स्वस्वलेश्यया भ्रियन्ते तदा देवापर्याप्तासंयता एव नियमेन भवन्ति । कुतः ? बद्धदेवायुष्का-
द्वयस्य उपशमश्रेण्यां मरणाभावात् । शेषत्रिवर्द्धायुष्काणां च देशसकलसंयमयोरेवासंभवात् ॥७३०॥

सिद्धपरमेष्ठिनां सिद्धगतिः केवलज्ञानं केवलदर्शनं क्षायिकसम्यक्त्वं अनाहारः ज्ञानदर्शनोपयोग-
योरक्रमप्रवृत्तिश्च भवति ॥७३१॥

२५

संक्लेश परिणामोंके वश उपशमश्रेणिसे नीचे उतरनेपर असंयत आदि गुणस्थानोंमें
द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होता है । वे असंयत आदि जब अपनी-अपनी लेश्याके अनुसार
मरण करते हैं, तो नियमसे देवगतिमें अपर्याप्त असंयत ही होते हैं, क्योंकि जिसने देवायुका
बन्ध किया है, उसके सिवा अन्यका उपशमश्रेणिमें मरण नहीं होता । जिन्होंने देवायुके
सिवाय अन्य तीन आयुमें-से किसी एकका भी बन्ध किया है, उसके तो देशसंयम और
सकलसंयम ही नहीं होते ॥७३०॥

३०

सिद्ध परमेष्ठीके सिद्धगति, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व, अनाहार और
ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगकी एक साथ प्रवृत्ति, इतनी प्ररूपणाएँ होती हैं ॥७३१॥

चतुर्दशगुणस्थानरहितं चतुर्दशजीवसमासरहितं चतुःसंज्ञारहितं षट्पर्याप्तिरहितं दशप्राणरहितं सिद्धगति ज्ञानदर्शनसम्यक्त्वमनाहारमेवं मार्गणापंचकमल्लदुल्लिख नव मार्गणा-
रहितं सिद्धपरमेष्ठिगणं द्रव्यभावकर्मरहितरप्पुर्वारिदं सदा शुद्धरुमप्यहं ।

णिवस्वेवे एयट्ठे णयप्पमाणे णिरुत्तिअणियोगे ।

५

मग्गइ वीसं मेयं सो जाणइ अप्पसब्भावं ॥७३३॥

निक्षेपे एकार्थे नयप्रमाणे निरुक्त्यनुयोगे । मृगयति विंशतिभेदं स जानाति जीवसद्भावं ॥

- नामस्थापनाद्रव्यभावतो येन निक्षेपदोळं प्राणभूतजीवसत्त्वमेवेकार्थदोळं द्रव्यार्थिक-
पर्यायात्थिकमेवं नयदोळं मतिश्रुतावधिमनःपर्यायज्ञानकेवलमेवं प्रमाणदोळं जीवति जीविष्यति
जीवितपूर्वो वा जीवः एव निरुक्त्योळं 'किं कस्स केण कथं व केवच्चिरं कति विहा य भावाइ'
१० एव अनुयोगदोळं 'निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः साध्या' एव नियोगदोळं आवना-
तोऽर्थं भव्यं गुणस्थानादिविंशतिभेदमं तिळिगुमातं जीवसद्भावमनरिगुं ।

चतुर्दशगुणस्थानचतुर्दशजीवसमासरहिताः चतुःसंज्ञाषट्पर्याप्तिदशप्राणरहिताः सिद्धगतिज्ञानदर्शन-
सम्यक्त्वमनाहारेभ्यः शेषनवमार्गणारहिताः सिद्धपरमेष्ठिनो द्रव्यभावकर्मभावात् सदा शुद्धा भवन्ति ॥७३३॥

- नामादिनिक्षेपे प्राणभूतजीवसत्त्वलक्षणैकार्थे द्रव्यार्थिकपर्यायिकनये मतिज्ञानादिप्रमाणे जीवति
१५ जीविष्यति जीवितपूर्वो वा जीव इति निरुक्तौ 'किं कस्स केण कथंवि केव चिरं कतिविहा य भावा' इति च
निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः साध्या इति च नियोगिप्रश्ने यो भव्यः गुणस्थानादिविंशति-
भेदान् जानाति स जीवसद्भावं जानाति ॥७३३॥

- सिद्ध परमेष्ठी चौदह गुणस्थान, चौदह जीवसमास, चार संज्ञा, छह पर्याप्ति, दस
प्राण इन सबसे रहित होते हैं । तथा सिद्धगति, ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व और अनाहारके
२० सिवाय शेष नौ मार्गणाओंसे रहित होते हैं । और द्रव्यकर्म-भावकर्मका अभाव होनेसे सदा
शुद्ध होते हैं ॥७३३॥

- नामादि निक्षेपमें, एकार्थमें, द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयमें, मतिज्ञानादि प्रमाणमें,
निरुक्ति और अनुयोगमें जो भव्य गुणस्थान आदि बीस भेदोंको जानता है वह जीवके
अस्तित्वको जानता है । नामस्थापना द्रव्यभावनिक्षेप प्रसिद्ध है । प्राणी, भूत, जीव,
२५ सत्त्व ये चारों एकार्थक हैं । इन चारोंका अर्थ एक ही है । जो जीता है, जियेगा और
पूर्वमें जी चुका है, यह जीव शब्दकी निरुक्ति है—जो उसे त्रिकालवर्ती सिद्ध करती है ।
जीवका स्वरूप क्या है, स्वामी कौन है, साधन क्या है, कहाँ रहता है, कितने काल तक
रहता है, कितने उसके भेद हैं, इस प्रकार निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति और
विधान ये अनुयोग हैं । इनके उत्तरमें जो बीस भेदोंको खोजकर जानता है, उसे आत्माके
३० अस्तित्वकी श्रद्धा होती है ॥७३३॥

अज्जज्जसेणगुणगणसमूहसंधारि अजियसेणगुरु ।

भुवणगुरु जस्स गुरु सो राजो गोम्मटो जयउ ॥७३४॥

आर्यार्थसेनगुणगणसमूह संधार्यजितसेनगुरुर्भुवनगुरुर्ह्यस्य गुरुः स राजो य गोम्मटो जयतु ॥

इंतु भगवदहर्त्परमेश्वर चारुचरणारविद्वंद्वंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजराजगुरु-
भूमंडलाचार्यमहावादादीश्वररायवादिवितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदमयसूरिसिद्धांत-
चक्रवर्त्ति श्रीपादपंकजरजोरंजित ललाटपट्टं श्रीमकेशवर्णविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्ति-
जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळ आळापाधिकारं निरूपितमाडुतु ॥

गणनेगळिदिहं गुणगणमणिभूषण धर्मभूषणश्रीमुनि स-। दगणियुपरोधवि नानोणहे गुणि
गोम्मटसारवृत्तियं केशणं ।

१०

आर्यार्थसेनगुणगणसमूहसंधार्यजितसेनगुरुः भुवनगुरुर्ह्यस्य गुरुः स राजा गोम्मटो जयतु ॥७३४॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्त्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिका-
ख्यायां जीवकाण्डे विंशतिप्ररूपणासु ओषादेशयोर्विंशतिप्ररूपणालाप नाम
द्वाविंशतिमयोऽधिकारः समाप्तः ॥२१॥

आर्य आर्यसेनके गुण और गणसमूहको धारण करनेवाले अजितसेन—जो तीन
जगत्के गुरु हैं—वे जिसके गुरु हैं, वह गोम्मटराज चामुण्डराय जयवन्त हों ॥७३४॥

१५

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अहन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी
श्री अमयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्त्तिके चरणकमलोंकी भूमिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णी-
के द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका
तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक
भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत
बीस प्ररूपणाओंमेंसे आठाप प्ररूपणा नामक बाईसवाँ
अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥२१॥

२०

प्रशस्ति

स्वस्ति श्रीनृपशालिवाहन शके १२०६ वर्षे क्रोधिनाम संवत्सरे फाल्गुणमासे शुक्लपक्षे शिशिरर्तौ
उत्तरायणे अष्टां षष्ठिम्यां तिथौ बुधवारे सत्तावीसघटिका उपरांतिक सप्तम्यां तिथौ अनु-
राघानक्षत्रे तीस घटिका उपरांतिक ज्येष्ठा नक्षत्रे व्याघातनामयोगे दह घटिका
उपरांतिक हर्षणनामयोगे दवकरणे सत्तावीस घटिका यस्मिन् पंचांग-
सिद्धि तत्र मोळेंद शुभस्थाने श्रीपंच परमेश्विदिव्यचैत्यालयस्थिते,
श्रीमत्केशवर्ण विरचितमण्य गोम्मटसारकर्त्ताटक-
वृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोलु जीवकांडं
संपूणनमादुदु ।
मंगळं भूयात् ॥
श्री श्री श्री ॥

गो० जीवकाण्डगाथानुक्रमणी

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
अ			अवरे वरसंखगुणे	१०८	१८८
अह भीमदंसणेण य	१३६	२७०	अवरोग्माहणमाणे	१०३	१८२
अज्जज्जसेणगुणगण	७३४	१०७५	अवरो जुत्ताणंतो	५६०	७८७
अज्जवमलेच्छमणुए	८०	१५१	अवरोगाहणमाणे	३८०	६२४
अज्जीवेसु य ख्वी	५६४	८०३	अवरोहिखेतदीहं	३७९	६२४
अट्ठण्हं कम्माणं	४५३	६७२	अवरोहिखेतमज्जे	३८२	६२६
अट्ठत्तीसद्धलवा	५७५	८१०	अवरं तु ओहिखेतं	३८१	६२५
अट्ठवियकम्मवियला	६८	१३७	अवरं दव्वमुरालिय	४५१	६७१
अट्ठारस छत्तीसं	३५८	५९८	अवरंसमुदा सोह०	५२३	७१९
अट्ठेव सयसहस्सा	६२९	८६५	अवरं होदि अणंतं	३८७	६२९
अडकोहिएयलक्खा	३५१	५८१	अवरंसमुदा होंति	५२०	७१८
अण्णाणतियं होदि हू	३०१	५०७	अवहीयदित्ति ओही	३७०	६१७
अणुलोहं वेदंतो	६०	१२६	अव्वाधादी अंतो	२३८	३७४
अणुलोहं वेदंतो	४७४	६८६	असहाय णाणवंसण	६४	१२८
अणुसंखासंखेज्जा	५९४	८२२	असुराणमसंखेज्जा	४२७	६५९
अण्णोणुवयारेण य	६०६	८५०	असुराणमसंखेज्जा	४२८	६५९
अत्यक्खरं च पदसं	३४८	५७८	अमुहाणं वरमज्झिम	५०१	७०२
अत्यादो अत्यंतर	३१५	५२२	अहमिदा जह देवा	१६४	२९३
अत्थि अणंतो जीवा	१९७	३३०	अहिमुहणियमिय बोहण	३०६	५१२
अट्ठत्तेरस वारस	११५	२०४	अहियारो पाहुडयं	३४१	५७४
अप्पपरोभयबाधण	२८९	४८०			
अपदिट्ठिदपत्तेया	२०५	३३९			
अपदिट्ठिद पत्तेयं	९८	१६८			
अयदोत्ति छलेस्साओ	५३२	७२५	आउड्डरासिवारं	२०४	३३६
अयदोत्ति हू अवरिमणं	६८९	९११	आगासं वज्जिता	५८३	८१४
अवरद्ववादुवरिम	३८४	६२८	आणदपाणदवासी	४३१	६६०
अवरपरित्तासंखे	१०९	१८९	आदिमछट्ठाणम्हि य	३२७	५५२
अवरमपुण्णं पढमं	९९	१६९	आदिम समत्तद्धा	१९	५०
अवरा पज्जाय ठिदी	५७३	८०८	आदेसे संलीणा	४	३५
अवरद्वे अवस्वरि	१०६	१८६	आभीयमासुरक्खं	३०४	५१०
अवरुवरि इगिपदेसे	१०२	१८०	आमंतणी आणवणी	२२५	३६२
अवस्वरिम्मि अणेतम	३२३	५२९	आयारे सुदयणे	३५६	५९१

	पृष्ठ	गाथा		पृष्ठ	गाथा
आवलि असंखभागा	४१७	६५०	ई		
आवलि असंखभागा	४२२	६५६	ईहणकरणेण जदा	३०९	५१७
आवलि असंखभागे	२१३	३४७			
आवलि असंखभागो	४००	६३८	उ		
आवलि असंखभागं	४५८	६७५	उक्कस्सट्ठिदि चरमे	२५०	३८५
आवलि असंखभागं	३८३	६२७	उक्कस्ससंखमेत्तं	३३१	५५७
आवलि असंखसमया	५७४	८०९	उत्तम अंगमिह हवै	२३७	३७३
आवलि असंखसंखे	२१२	३४६	उदयावणसरीरो	६६४	८९५
आवलियपुषत्तं पुण	४०५	६४२	उदये दु अपुणस्स य	१२२	२५६
आवासया ह्व भव अ०	२५१	३८६	उदये दु वणफ्फदिक	१८५	३१६
आसव संवर दब्बं	६४४	८८२	उप्पापुव्वगेणिय	३४५	५७६
आहार कायजोगा	२७०	४६०	उवजोगो वणचऊ	५६५	८०४
आहरदि अणेण मुणी	२३९	३७४	उवयरण दंसणेण य	१३८	२७१
आहरदि सरीराणं	६६५	८९५	उववादगम्भजेसु य	९२	१६०
आहारदंसणेण य	१३५	२६९	उववादमारणंतिय	१९९	३३१
आहार मारणंतिय	६६९	८९७	उववादा सुरणिरया	१०	१६०
आहार य उत्तत्थं	२४०	३७५	उववादे अच्चित्तं	८५	१५७
आहारवग्गणादो	६०७	८५४	उववादे पढमपदं	५४९	७७६
आहारसरोरिदिय	११९	२५१	उववादे सीदुसणं	८६	१५८
आहारस्सुदएण य	२३५	३७२	उव्वकं चउरकं	३२५	५३०
आहारे सुदयणे			उव्वसमसुहुमाहारे	१४३	२७६
आहारो पज्जत्ते	६८३	९०८	उवसंत खीणमोहो	१०	४०
			उवसंते खीणे वा	४७५	६८६
			उवहीणं तेत्तीसं	५५२	७७९
			ए		
इगिदुगपंचेयारं	३५९	५९८	एइंदिय पट्टदीणं	४८८	६९५
इगिपुरिसे वत्तीसं	२७८	४६८	एइंदियस्स फुसणं	१६७	२९७
इच्छिदरासिच्छेदं	४२०	६५३	एकमिह कालसमये	५६	११९
इगिवणं इगिविगले	७९	१५१	एकं खलु अट्टकं	३२९	५५३
इगिवित्तिचखचडवारं	४४	७५	एककचउक्कं चउवी	३१४	५२१
इगिवित्तिचपणखपण	४३	७४	एककट्टु चदुवदु छस्स०	३५४	५८३
इगिवीसमोहखवणुव	४७	७९	एककरगदिणिरुवय	३३८	५७२
इह जाहि वाहियावि य	१३४	२६९	एकारस जोगाणं	७२३	९४४
इंदिय कायाऊणि य	१३२	२६७	एक्कं समयबद्धं	२५४	४०६
इंदिय काये लीणा	५	३६	एगणिगोदसरीरे	१९६	३२६
इंदिय णोइंदिय जो	४४६	६६८	एदमिह गुणट्टाणे	५१	११२
इंदियमणोहिणा वा	६७५	९०१			

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
एदम्हि विभज्जते	३९८	६३८	अंतरभावप्पबहु	४९२	६९७
एदे भावा णियमा	१२	४३	अंतरमवक्कस्सं	५५३	७८०
एयक्खरादु उवरि	३३५	५७०	अंतोमुहुत्तकालं	५०	११२
एयगुणं तु जहणं	६१०	८५६	अंतोमुहुत्तमेत्ते	५३	११३
एयदवियम्मि जे अ	५८२	८१३	अंतोमुहुत्तमेत्ता	२६२	४४९
एयपदादो उवरि	३३७	५७१	अंतोमुहुत्तमेत्तो	४९	८१
एया य कोडिकोडी	११७	२०५	अंतोमुहुत्तमेत्तं	२५३	३८७
एयंतबुद्धदरसी	१६	४७			
एवं असंखलोमा	३३२	५६५			
एवं उवरि विणेओ	१११	१९२	कदकफलजुदजलं वा	६१	१२६
एवं गुणसंजुत्ता	६११	८५६	कप्पववहारकप्पा	३६८	६१२
एवं तु समुग्धादे	५४७	७६२	कप्पसुराणं सग सग	४३३	६६२
			कमवण्णुत्तरवड्ढिय	३४९	५७८
			कम्मइयकायजोगी	६७१	८९७
			कम्मइयवग्गणं धुव	४१०	६४६
			कम्मेव कम्मभावं	२४१	३७५
			कम्मोराणियमिस्स य	२६४	४५३
			काऊ णीलं किण्हं	५०२	७०३
			काऊ काऊ काऊ	५२९	७२३
			कालविसेसेणावहिद	४०८	६४५
			काले चउण्ह उड्ढी	४१२	६४७
			कालो छल्लेस्साणं	५५१	७७८
			कालोत्ति य ववएसो	५८०	८१२
			कालं अस्सिय दव्वं	५७१	८०७
			किण्हचउक्काणं पुण	५२७	७२२
			किण्हतियाणं मज्झिम	५२८	७२२
			किण्हवरसेण मुदा	५२४	७२०
			किण्हा णीला काऊ	४९३	६९८
			किण्हादिरासिमावलि	५३७	७२८
			किण्हादिलेस्सरहिया	५५६	७८४
			किण्हं सिलासमाणे	२९२	४८३
			किमिशयचक्कतणुमल	२८७	४७९
			कुम्मुण्णयजोणीए	८२	१५५
			केवलणाणाणंतिम	५३९	७३१
			केवलणाणदिवायर	६३	१२८
			कोडिसयसहस्साइं	११४	२०४
			कोहादिकसायाणं	२९०	४८१

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
अंगुलअसंखगुणिदा	३९०	६३२	अंगुलअसंखभागे	३२६	५३१
अंगुलअसंखभागे	३९९	६३८	अंगुलअसंखभागो	६७०	८९७
अंगुलअसंखभागं	४०१	६३९	अंगुलअसंखभागं	४०९	६४६
अंगुलअसंखभागं	३९१	६३४	अंगुलअसंखभागं	१७२	३०१
अंगुलमावलियाए	४०४	६४२	अंगीवंगुदयादो	२२९	३६६

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
कंदस्स व मूलस्स व	१८९	३२०	चदुगदि भव्वो सण्णी	६५२	८८६
ख			चदुगदिमदिमुदबोहा	४६१	६७७
खयउवसमियवित्तोही	६५१	८८५	चरमधरासाणहरा	६३८	८७६
खवगे य खीणमोहे	६७	१२९	चरिमुव्वकेणवहिद	३३३	५६६
खीणे दंसणमोहे	६४६	८८३	चागी भद्दो चोक्खो	५१६	७१०
खेत्तादो असुहत्तिया	५३८	७३०	चितियमचितियं वा	४३८	६६४
खंधा असंखलोगा	१९४	३२५	चितियमचितियं वा	४४९	६७०
खंधं सयलसमर्थं	६०४	८४७	चोद्दस मग्गण संजुद	३४०	५७३
ग			चंडो ण मुंचइ वेरं	५०९	७०७
गइ इंदियेसु काये	१४२	२७५	चंदरवि जंबुदीव य	३६१	६००
गइ उदयजपज्जाया	१४६	२७८	छ		
गच्छसमा तक्कालिय	४१८	६५१	छट्टाणाणं आदो	३२८	५५३
गतनम मनगं गोरम	३६३	६०३	छट्ठोत्ति पढम सण्णा	७०२	९१९
गदिठाणोग्गह किरिया	५६६	८०५	छट्ठवावट्ठाणं	५८१	८१३
गदिठाणोग्गहकिरिया	६०५	८४८	छट्ठवेसु य णामं	५६२	८०२
गम्भजजीवाणं पुण	८७	१५८	छप्पयणीलकवोदसु	४९५	६९९
गम्भण पुट्ठिय सण्णी	२८०	४७०	छप्पंच णवविहाणं	५६१	८०१
गाउय पुधत्तमवरं	४५५	६७३	छप्पं चावियवीसं	११६	२०५
गुणजीवठाणरहिया	७३२	१०७३	छस्सद जोयणकदिहिद	१५६	२८५
गुणजीवा पज्जत्ती	२	३३	छस्सयवण्णासाइं	३६६	६०४
गुणजीवा पज्जत्ती	७२५	९४६	छादयदि सयं दोसे	२७४	४६५
गुणजीवा पज्जत्ती	६७७	९०४	छेतूण य परियायं	४७१	६८४
गुणपच्चइगो छट्ठा	३७२	६१९	ज		
गूढसिरसंघि पव्वं	१८७	३१९	जणधद सम्मदिठवणा	२२२	३५९
गोमयथेरं णमिय	७०६	९३५	जत्थेक्क मरइ जीवो	१९३	३२२
घ			जम्मं खलु सम्मुच्छण	८३	१५५
घण अंगुल पढमपदं	१६१	२९०	जह कंचण मग्गियं	२०३	३३५
घ			जहखादसंजमो पुण	४६८	६८३
घउगइसरुवरुवय	३३९	५७३	जह पुण्णापुण्णाइं	११८	२५१
घउपण चोद्दस चउरो	६७८	९०४	जह भारवहो पुरिसो	२०२	३३५
घउरक्खयावरविरद	६९१	९१२	जम्हा उवरिम भावा	४८	८०
घउसट्ठिपदं विरलिय	३५३	५८२	जाइजरामरणभया	१५२	२८२
घक्खूण जं पयासइ	४८४	६९२	जाई अविणाभावी	१८१	३११
घक्खू सोदं धाणं	१७१	३००	जाणइ कज्जाकज्जं	५१५	७०९
घसारावि खेत्ताइं	६५३	८८६	जाणइ तिकालविसए	२९९	५०५

गाथा	पृष्ठ	गाथा	पृष्ठ		
जाहि व वासु व जीवा	१४१	२७४	ण य सच्चमोसजुत्तो	२१९	३५७
जीवदुगं उत्तुं	६२२	८६२	णरतिरिय लोहमाया	२९८	५०१
जीवा अणंतसंखा	५८८	८१७	णरलोएत्ति य वयणं	४५६	६७३
जीवा चोद्दस भेया	४७८	६८८	णरतिरियाणं ओवो	५३०	७२३
जीवाजीवं दव्वं	५६३	८०३	ण रमंति जदो णिच्चं	१४७	२७८
जीवाणं च य रासी	३२४	५३०	णरलद्धि अपज्जस्ते	७१६	९४०
जीवादोणंतगुणा	२४९	३८४	णवमी अणवखरगदा	२२६	३६३
जीवादो णंतगुणो	५९९	८३९	णवि इंदियकरणजुदा	१७४	३०३
जीविदरे कम्मचये	६४३	८८२	णवरिय दु सरीराणं	२५५	४०८
जेट्टावरबहुमज्झिम	६३२	८६८	णव य पदत्था जीवा	६२१	८६१
जेहि अणेया जीवा	७०	१४२	णवरि विसेसं जाणे	३१९	५२६
जेहि दु लक्खिज्जंते	८	३९	णवरि य सुक्का लेस्सा	६९३	९१४
जेसि ण संति जोगा	२७३	३०८	णवरि समुग्गादग्नि य	५५०	७७७
जोइसियवाणजोगिणि	२७७	४६७	णाणुवजोगजुदाणं	६७६	९०१
जोइसियादो अहिया	५४०	७३१	णाणं पंचविहं पि य	६७३	९००
जोइसियंताणोही	४३७	६६४	णारयतिरिक्खणरसुर	२८८	४७९
जोगपउत्ती लेस्सा	४९०	६९७	णिक्खित्तु विदियमेत्तं	३८	६७
जोगे चउरक्खणं	४८७	६९३	णिक्खेवे एयत्थे	७३४	१०७५
जोगं पडि जोगिजिणे	७११	९३७	णिच्चिदरव्वादु सत्तय	८९	१५९
जो णेव सच्चमोसो	२२१	३५८	णिद्दा पयले णट्टे	५५	११८
जो तसवहाउ विरदो	३१	६०	णिद्दावंचणबहुलो	५११	७०८
जत्तस्स प्हं ठत्तस्स	५६७	८०५	णिद्देसवण्णपरिणा	४९१	६९७
जंबूदीवं भरहो	१९५	३२६	णिद्धत्तं लुक्खत्तं	६०९	८५४
जं सामणं गहणं	४८२	६९१	णिद्धणिद्धा ण वज्झंति	६१२	८५६
			णिद्धदरोलीमज्जे	६१३	८५७
			णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिण	६१५	८५८
ठाणेहिंवि जोणीहिं	७४	१४७	णिद्धिदरगुणा अहिया	६१९	८६१
			णिद्धिदरवरगुणाणु	६१८	८६०
			णिद्धिदरे समविसमा	६१६	८५९
णट्टकसाये लेस्सा	५३३	७२५	णिम्मूलखंघसाहु व	५०८	७०७
णट्टपमाए पढमा	१३९	२७१	णियखेत्ते केवल्लिदुग	२३६	३७३
णट्टासेसपमादो	४६	७८	णिरया किण्हा कप्पा	४९६	६९९
ण य कुणइ पक्खवायं	५१७	७१०	णिस्सेस खीणमोहो	६२	१२७
ण य जे भव्वाभव्वा	५५९	७८७	णीलुक्कस्संसमुदा	५२५	७२०
ण य पत्तियइ परं सो	५१३	७०९	णेरइया खलु संधा	९३	१६१
ण य परिणमवि सयं सो	५७०	८०७	णेवित्थी णेव पुंसं	२७५	४६६
ण य मिच्छत्तं पत्तो	६५४	८८७	णो इंदिय आवरण	६६०	८९२

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
णोह्दियत्ति सण्णा	४४४	६६८	तिरिय गदीए षोह्स	७००	९१८
णोह्दियेसु बिन्दो	२९	५९	तिरिय चउक्काणोवे	७१३	९३८
णोकम्मुरालसंचं	३७७	६२२	तिरियत्ति कुडिलमार	१४८	२७९
			तिविपच्चपुण्णपमाणं	१८०	३०८
			तिव्वतमा तिव्वतरा	५००	७०१
तज्जोगो सामण्णं	२६३	४५०	तिसयं भणंति केई	६२६	८६४
तत्तो उवरि उवसम	१४	४५	तिसु तेरं दस मिस्से	७०४	९२५
तत्तो कम्मइयस्सिगि	३९७	६३७	तोसं वासो जम्मे	४७३	६८५
तत्तो ताणुत्ताणं	६३९	८७६	तेउत्तियाणं एवं	५५४	७८०
तत्तो लांतव कप्प०	४३६	६६३	तेउदु असंखक्का	५४२	७३३
तत्तो संखेज्जगुणो	६४०	८७७	तेउस्स य सट्ठाणे	५४६	७६२
तत्तो एमारणवसग	१६२	२९०	तेऊ तेऊ तेऊ	५३५	७२६
तदियकसायुदयेण य	४६९	६८३	तेऊ पम्मे सुक्के	५०३	७०३
तदियक्खो बंतगदो	३९	६८	तेजा सरीरजेदुं	२५८	४११
तद्देहमंगुलस्साय	१८४	३१४	तेतोस वेंजणाई	३५२	५८१
तललीनमधुगविमलं	१५८	२८६	तेरस कोडी देसे	६४२	८८१
तव्वड्ढीए चरिमो	१०५	१८४	तेरिच्छिय लद्धिय प	७१४	९३९
तव्विदियं कप्पाणम	४५४	६७३	तेवि विसेसेणहिया	२१४	३४९
तसच्चदुजुगाणमज्जे	७१	१४३	तेसि च समासेहिं	३१८	५२५
तसजीवाणं ओवे	७२२	९४३	तो वासय अज्झयणे	३५७	५९५
तसरासिपुढविआदो	२०६	३४०	तत्सुद्धसलागाहिद	२६८	४९८
तसहीणो संसारी	१७६	३०४			
तस्समयवद्धवग्गण	२४८	३८३			
तस्सुवरि इगिपदेसे	१०४	१८३	थावरकायप्पहुडी	६८५	९०९
तहिं सेसदेवणास्य	२६९	४५९	थावरकायप्पहुडी	६८६	९०९
तहिं सव्वे सुद्धसला	२६७	४५६	थावरकायप्पहुडी	६८७	९१०
ताणं समयपबद्धा	२४६	३८१	थावरकायप्पहुडी	६९२	९१३
तारिस परिणामट्टिय	५४	११८	थावरकायप्पहुडी	६९४	९१४
तिगुणा सत्तगुणा वा	१६३	२९१	थावरकायप्पहुडी	६९८	९१७
तिणकारि सिट्ठपाग	२७६	४६६	थावरसंखपिपीलिय	१७५	३०३
तिण्णिसयजोयणाणं	१६०	२८९	थोवा तिसु संखगुणा	२८१	४७०
तिण्णिसयसट्ठिविरहिद	१७०	२९९			
तिण्णिसया छत्तीसा	१२२	२५६			
तिण्हं दोण्हं दोण्हं	५३४	७२६	दव्वं खेतं कालं	४५०	६७०
तियकालविसयल्लवि	४४१	६६७	दव्वं खेतं कालं	३७३	६२२
तिरियसयणवणउदी	६२५	८६४	दव्वं छक्कमकालं	६२०	८६१
तिरिए अवरं ओधो	४२५	६५८	दस चोदसट्ठअट्ठा	३४४	५७५

थ

व

गाथा	पृष्ठ	गाथा	पृष्ठ
दसविहसच्चे वयणे	२२०	३५७	
दस सण्णीणं पाणा	१३३	२६७	
दहिमुडमिव वा मिस्सं	२२	५२	
दिण्णच्छेदेणवहिद	२१५	३५१	
दिण्णच्छेदेणवहिद	४२१	६५४	
दिवसो पक्खो मासो	५७६	८१०	पच्चक्खाणुदयादो
दीव्वंति जदो णिच्चं	१५१	२८१	पच्चक्खाणे विज्जा
दुगतमभवा ह्व अवरं	४५७	६७४	पज्जत्त मणुस्साणं
दुगवारपाहुडादो	३४२	५७४	पज्जत्तसरीरस्स य
दुविहं पि अपज्जत्तं	७१०	९३७	पज्जत्तस्स य उदये
देवाणं अवहारा	६३५	८७०	पज्जत्ती पटुवणं
देवोहि सादिरेणो	६६३	८९३	पज्जत्ती पाणावि य
देवोहि सादिरेया	२६१	४४८	पज्जायक्खरपदसं
देवोहि सादिरेया	२७९	४६९	पडिवादी देसोही
देसविरदे पमत्ते	१३	४४	पडिवादी पुण पठमा
देसोहिस्स य अवरं	३७४	६२१	पठमक्खो अंतगदो
देसावहिवरदव्वं	४१३	६४८	पठमुवसमसहिदाए
देसोहि अवरदव्वं	३९४	६३६	पठमं पमदपमाणं
देसोहि मज्झभेदे	३९५	६३७	पणजुगले तससहिये
दोगुणणिद्धाणुस्स य	६१४	८५७	पणणउदिसया वत्थु
दोण्हं पंच य छक्के	७०५	९३३	पण्णट्टदाल पणतीस
दोत्तिग पभवदुत्तर	६१७	८६०	पण्णवणिज्जा भावा
दंसणमोहुक्खवणा	६४८	८८४	पणिदरस मोयणेण
दंसणमोहुदयादो	६४९	८८५	पणुवीस जोइणाइं
दंसणमोहुवसमदो	६५०	८८५	पत्तेयवुद्धतित्थ
दंसणवयसामाइय	४७७	६८७	पमदादिचउण्हजुदी
			पम्मस्स य सट्ठाणस
			पम्मुक्कस्संसमुदा
			परमणसिद्धियमट्ठं
			परमाणु आदियाइं
			परमाणुवग्गणम्मि ण
			परमाणुहि अणंतहि
			परमावहिस्स भेदा
			परमावहिस्स भेदा
			परमावहिवरखेत्ते
			परमोहिदव्वभेदा
			पल्लतियं उवहीणं
घणुवीसडदसयकदी	१६८	२९८	
घम्मगुणमग्गणाह्य	१४०	२७३	
घम्माघम्मादीणं	५६९	८०७	
घुदकोसुंभयवत्थं	५८	१२१	
घुवअद्धुवरुवेण य	४०२	६३९	
घुवहारकम्मवग्गण	३८५	६२८	
घुवहारस्स पमाणं	१८८	६३०	
घुल्लिग छक्कट्टाणे	२९४	४८८	

घ

प

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
पल्लसमऊण काले	४११	६४७	बहुवत्ति जादिगहणे	३११	५१८
पल्लासंखघणंगुल	४६३	६७८	बहुभागे समभागो	१७९	३०६
पल्लासंखेज्जाहय	२६०	४४७	बहु बहुविहं च खिप्पा	३१०	५१७
पल्लासंखेज्जदिमा	६५९	८८९	बहुविह्वहुप्पयारा	४८६	६९२
पल्लासंखेज्जदिमं	४८१	६८९	बादर आऊ तेऊ	४९७	७००
पल्लासंखेज्जवहिद	२०९	३४३	बादर तेऊ वाऊ	२३३	३७१
पस्सदि ओही तत्थ अ	३९६	६३७	बादर पुण्णा तेऊ	२५९	४४७
पहिया जे छप्पुरिसा	५०७	७०७	बादर बादर बादर	६०३	८४७
पुक्खरगहणे काले	३१३	५२०	बादर सुहुमुदयेण	१८३	३१३
पुढविदगाणिमारुद	१२५	२५८	बादर सुहुमा तेसि	१७७	३०४
पुढवी आऊ तेऊ	१८२	३१२	बादर सुहुमेदिय	७२	१४९
पुढवीआदिचउण्हं	२००	३३३	बादर सुहुमे इंदिय	७१९	९४२
पुढवी जलं च छाया	६०२	८४६	बादर संजलणुदये	४६७	६८२
पुण्णजहणं तत्तो	१००	१६९	बादर संजलणुदये	४६६	६८१
पुरुगुणभोगे सेदे	२७३	४६४	बारुत्तरसयकोडी	३५०	५८०
पुसमहुदुदारारालं	२३०	३६७	बावीस सत्तत्तिणि य	११३	२०४
पुरुसिच्छिसंढवेदो	२७१	४६२	बाहिर पाणेहि जहा	१२९	२६४
पुग्वापुग्गप्फ	५९	१२१	बित्तिच्चट्टाणजहणं	९६	१६६
पुब्बं जलयलमाया	३६२	६००	बित्तिच पमाणमसंखे	१७८	३०५
पुह पुह कसायकालो	२९६	४९९	बिदियुवसमसम्मत्तं	६९६	९१५
पोग्गल दग्गम्हि अणू	५९३	८२२	बिदियुवसमसम्मत्तं सेडोदो	७३०	१०७३
पोग्गल दग्गवाणं पुण	५८५	८१६	विहि तिहिचदुहि पंचहि	१९८	३३१
पोग्गलविवाइदेहो	२१६	३५४	विदावलिलोगाय	२१०	३४५
पोतजरायुजअंडज	८४	१५७	बीजे जोणिभूदे	१९०	३२७
पंचक्खतिरिक्खाओ	९१	१६०	बैसदछप्पणंगुल	५४१	७३३
पंचतिहिचउ विहेहि	४७६	६८७			
पंचरसपंचवण्णा	४७९	६८८	भक्तं देवी चंदप्पह	२२३	३५९
पंचवि इंदियपाणा	१३०	२६६	भरहम्मि अद्धमासं	४०६	६४३
पंचसमित्तो तिमुत्तो	४७२	६८४	भवणतियाणमधोघो	४२९	६५९
पंचेव होंति णाणा	३००	५०६	भवपच्चइयो ओही	३७३	६२०
			भवपच्चइयो सुरणिर	३७१	६१८
			भवत्तणस्स जोग्गा	५५८	७८६
			भग्वा सम्मतविद्य	७२५	९४६
			भविद्या सिद्धी जेसि	५५७	७८६
			भावणं सामण्णवि	४८३	६९१
			भावादो छल्लेस्सा	५५५	७८६
			मासमणवभण्णादो	६०८	८५४

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
भिण्णसमयट्ठिवोहि	५२	११२	मिच्छंतं वेदंतो	१७	४८
भू आउ तेउ वाऊ	७३	१४६	मिस्सुदए संमिस्सं	३०२	५०८
भू आउ तेउ वाऊ	७२१	९४३	मिस्से पुण्णालाओ	७१८	९४२
भोगापुण्णगसम्मे	५३१	७२४	मीमंसदि जो पुब्बं	६६२	८९३
			मूलगगपोरवीजा	१८६	३१७
			मूले कंदे छल्ली	१८८	३१९
			मूलसरीरमछंडिय	६६८	८९६
			मंदो बुद्धिविहीणो	५१०	७०८
म					
मग्गणउवओगावि य	७०३	९२०			
मज्झिम अंसेण मुदा	५२२	७१९			
मज्झिम चउमणवयणे	६७९	९०६	य		
मज्झिमदब्बं खेत्तं	४५९	६७५	याजकनामेनानन	३६४	६०३
मज्झिम पदक्खरवहिद	३५५	५९१			
मण दव्ववग्गणाण	४५२	६७२	र		
मण दव्ववग्गणाणवि	३८६	६२९	रूऊणवरे अवरु	१०७	१८७
मणपज्जवं च णाणं	४४५	६६८	रुवुत्तरेण ततो	११०	१९१
मणपज्जवं च दुविहं	४३९	६६५	रुसइ णिदइ अण्णे	५१२	७०८
मणपज्जयपरिहारो	७३९	१०७२			
मणवयणाणं मूल	२२७	३६४	ल		
मणवयणाण पउत्ती	२१७	३५५	लद्धि अपुण्णं मिच्छे	१२७	२६०
मणसहियाणं वयणं	२२८	३६६	लिपइ अप्पी कीरइ	४८९	६९६
मण्णंति जइओ णिच्चं	१४९	२८०	लेस्साणवकस्सादो	५०५	७०४
मणुसिणि पमत्तविरदे	७१५	९३९	लेस्साणं खलु अंसा	५१८	७११
मदि आवरण खओव	१६५	२९४	लोगागासपदेसा	५८७	८१७
मदिसुदओहिमणेहिय	६७४	९०१	लोगागासपदेसा	५९१	८१८
मरणं पत्येइ रणे	५१४	७०९	लोगागासपदेसे	५८९	८१७
मरदि असंखेज्जदिमं	५४४	७४६	लोगाणमसंखेज्जा	४९९	७००
मसुरं बुब्बिदु सूई	२०१	३३३	लोगाणमसंखमिदा	३१६	५२४
मायालोहे रदिपु	६	३७	लोमस्स असंखेज्जदि	५८४	८१५
मिच्छाइट्ठी जीवो	१८	४८			
मिच्छाइट्ठी जीवो	६५६	८८७	व		
मिच्छाइट्ठी पावा	६२३	८६२	वग्गणरासिपमाणं	३९२	६३५
मिच्छा सावयसासण	६२४	८६३	वण्णोदयसंपादिद	५३६	७२७
मिच्छे ललु ओदइओ	११	४२	वण्णोदयेण जणिदो	४९४	६९८
मिच्छे ओदइस जीवा	६९९	९१७	वत्तणहेइ कालो	५६८	८०५
मिच्छे सासणसम्मे	६८१	९०७	वत्तावत्तपमादे	३३	६१
मिच्छोदयेण मिच्छं	१५	४६	वत्थुणिमित्तं भावो	६७२	९००
मिच्छो सासणमिस्सो	९	४०	वत्थुस्स पदेसादो	३१२	५१९
मिच्छो सासणमिस्सो	६९५	९१४	वदसमिदिकसायाणं	४६५	६८१

	गाथा	पृष्ठ		गाथा	पृष्ठ
वयणेहि वि हेहहि	६४७	८८४	सग सग असंखमागो	२०७	३४१
वरकाओदंसमुदा	५२६	७२१	सग सग खेतपदेसत	४३४	६६२
ववहारो पुण कालो	५७७	८११	सट्ठाणसमुग्घादे	५४३	७३५
ववहारो पुण कालो	५९०	८१८	सण्णाणतिगं अविरद	६८८	९११
ववहारो पुण तिविहो	५७८	८११	सण्णाणरासि पंच य	४६४	६७८
ववहारो य वियप्पो	५७२	८०८	सण्णिस्स वारसोदे	१६९	२९९
बहुविह बहुप्पयारा	४८६	६९२	सण्णी ओवे मिच्छे	७२०	९४३
वापणनरनोनानं	३६०	५९९	सण्णी सण्णिप्पट्टुडि	६९७	९१६
वास पुवत्ते खइया	६५७	८८८	सत्तण्हं पुढवीणं	७१२	९३८
विउलमदो वि य छट्ठा	४४०	६६६	सत्तण्हं उवसमदो	२६	५७
विकहा तहा कसाया	३४	६२	सत्तमखिदिम्मि कोसं	४२४	६५७
विग्गहमदिमावण्णा	६६६	८९६	सत्तदिणा छम्मासा	१४४	२७६
वित्तिवपुण्णजहण्णं	९६	१६६	सत्तादी अट्ठंता	६३३	८६९
विवरीयमोहिणाणं	३०५	५११	सदसिवसंखो मक्कहि	६९	१४०
विविहगुणइड्डिजुत्तं	२३२	३७०	सद्दहणासद्दहणं	६५५	८८७
विसजंतकूड पंजर	३०३	५०९	सब्भावमणो सच्चो	२१८	३५६
विसयाणं विसईणं	३०८	५१५	समयत्तय संखावलि	२६५	४५३
वीरमुहकमलणिगय	७२८	९४९	समयो हु वट्टमाणो	५७९	८१२
वीरियजुदमदिसुवस	१३१	२६६	सम्मत्तरयणपव्वय	२०	५१
वीसं वीसं पाहुड	३४३	५७५	सम्मत्तमिच्छपरिणा	२४	५३
वेगुव्वं पज्जत्ते	६८२	९०७	सम्मत्तुप्पत्तीए	६६	१२९
वेगुव्विय वरसंचं	२५७	४१०	सम्मत्तदेसधादी	२५	५४
वेगुव्वियउत्तरं	२३४	३७१	सम्मत्तदेससयल	२८३	४७४
वेगुव्विय आहारय	२४२	३७६	सम्माइट्ठी जीवो	२७	५८
वैजण अत्थ अवग्गह	३०७	५१३	सम्मामिच्छुदयेण य	२१	५१
वेणुवमूलोरब्भय	२८६	४७८	सव्वमरूवी दव्वं	५९२	८२१
वेदस्सुदीरणाए	२७२	४६४	सव्वसमासो णियमा	३३०	५५५
वेदादाहारोत्ति य	७२४	९४४	सव्वसमासेणवहिद	२९७	५००
वेयणकसायवेगु	६६७	८९६	सव्वसुराणं ओवे	७१७	९४१
वेसदछप्पणंगुल	५४१	७३३	सव्वावहिंस एक्को	४१५	६४८
			सव्वेऽवि पुव्वभंगा	३६	६४
			सव्वेसि सुट्टमाणं	४९८	७००
			सव्वोहित्तिय कमसो	४२३	६५७
			सव्वं च लोयनालि	४३२	६६०
			सव्वंग अंग संभव	४४२	६६७
			सागारो उवजोमो	७	३८
			सामाइय चउवीस	३६७	६१२

स

सक्कीसाणा पढमं	४३०	६६०	सव्वोहित्तिय कमसो	४२३	६५७
सक्को जंबूदीव	२२४	३६१	सव्वं च लोयनालि	४३२	६६०
सगजुगुलम्हि तसस्स य	७७	१४९	सव्वंग अंग संभव	४४२	६६७
सग सग अवहारोहि	६४१	८७९	सागारो उवजोमो	७	३८
सगमाणोहि बिभत्ते	४१	७१	सामाइय चउवीस	३६७	६१२

स

सक्कीसाणा पढमं
सक्को जंबूदीवं
सगजुगुलमिह तसस्स य
सग सग अवहारोहि
सगमाणोहि बिभत्ते

४३० ६६०
२२४ ३६१
७७ १४९
६४१ ८७९
४१ ७१

गाथा	पृष्ठ	गाथा	पृष्ठ		
सामण्ण जीव तसया	७५	१४७	सेलट्ठिकट्ठवेत्ते	२८५	४७७
सामण्णा णेरइया	१५३	२८२	सेसट्ठारस अंसा	५१९	७१८
सामण्णा पंचिंदो	१५०	२८१	सोलस सय चउतीसा	३३६	५७०
सामण्णेण तिपंती	७८	१५०	सोवक्कमाणुवक्कम	२६६	४५५
सामण्णेण य एवं	८८	१५९	सो संजमं ण गिण्हदि	२३	५२
सामण्णं पज्जत्तम	७०९	९३७	सोलसयं चउवीसं	६२७	८६४
साहियसहस्समेकं	९५	१६३	सोहम्मसाणहारम	६३६	८७२
साहारणमाहारो	१९२	३२२	सोहम्मादासारं	६३७	८७३
साहरणबादरेसु	२११	३४६	सोहम्मीसाणाणम	४३५	६६३
साहारणोदयेण	१९१	३२१	संकमणे छट्ठाणा	५०६	७०५
सिक्खा किरियुवदेसा	६६१	८९२	संकमणं सट्ठाणष	५०४	७०४
सिद्धाणंतिमभागो	५९७	८३८	संगहियसयलसंजम	४७०	६८३
सिद्धाणं सिद्धगई	७३१	१०७३	संखा तह पत्थारो	३५	६३
सिद्धं सुद्धं पणमिय	१	२६	संखातीदा समया	४०३	६४१
सिलपुढविभेदपूली	२८४	४७६	संखावत्तय जोणी	८१	१५४
सिल सेल वेणुमूल०	२९१	४८२	संखावल्लिहिदपल्ला	६५८	८८८
सीवी सट्ठी तालं	१२४	२५७	संखेओ ओघोत्ति य	३	३४
सीलेसि संपत्तो	६५	१२९	संखेज्जपमे वासे	४०७	६४३
सुक्कस्स समुग्घादे	५४५	७५८	संखेज्जासंखेज्जा	५८६	८१६
सुण्णं दुग इगि ठाणे	२९५	४८९	संखेज्जासंखेज्जे	५९८	८३९
सुत्तादो तं सम्मं	२८	५८	संठाविदूण रुवं	४२	७३
सुदकेवलं च णाणं	३६९	६१६	संजलणणोकसाया	४५	७८
सुहदुक्कसुबहुसस्सं	२८२	४७३	संजलणणोकसाया	३२	६०
सुहमणिगोद अपज्ज०	३२०	५२८	संपुण्णं तु समग्गं	४६०	६७६
सुहमणिगोद अपज्ज०	३२१	५२८	संसारो पंचक्खा	१५५	२८४
सुहमणिगोद अपज्ज०	३२२	५२९	सांतरणिरंतरेण य	५९५	८२२
सुहमणिगोद अपज्ज०	९४	१६१			
सुहमणिगोद अपज्ज	१७३	३०२			
सुहमणिगोद अप०	३७८	६२३	हिदि होदि हु दठ्वमणं	४४३	६६७
सुहमेदरगुणगारो	१०१	१७०	हेदुहा जेसि जहण्णं	११२	१९३
सुहमणिवातेआभू	९७	१६७	हेदिठम छप्पुढवीणं	१५४	२८३
सुहमेसु संखभागं	२०८	३४१	हेदिठम छप्पुढवीणं	१२८	२६२
सुद्धमो सुद्धमकसाए	६९०	९११	हेदिठम उक्कसं पुण	६०१	८४२
सेढी सूई अंगुल	१५७	२८६	होदि अणंतिमभागो	३८९	६३०
सेढी सूई पल्ला	६००	८४०	होति अणियट्ठिणो ते	५७	१२०
सेलग किण्हे सुण्णं	२९३	४८७	होति खवा इगिसमये	६३०	८६७

इति जीवकाण्डप्रकरणस्याकारादिक्रमणिकासूची ।

गो० जीवकाण्डटीकागतपद्यानुक्रमणी

अ		उ	
अद्वट्ठेहि रोमं [ति. प. १।१२०]	२२४	उच्छेह अंगुलेण [ति. प. १।११०]	२३३
अगहिदमिस्सं गहिदं	७९२	उत्तम भोगखिदीए [ति. प. १।११९]	२३४
अज्ज समुच्छिगिगम्भे	१५३	उत्सर्पणावसर्पण	७९५
अज्झवसाण णिगोद सरीरे	६९२	उप्पज्जदि जो रासी [त्रि. सा. ७३]	२४३
अट्ठारस महाभासा [ति. प. १।६१]	२१	ए	
अट्ठारस ठाणेसु	२३५	एक्करसवण्णगंघं [ति. प. १।९७]	२३१
अट्ठेहि गुणदन्वेहि [ति. प. १।१०४]	२३२	एक्केक्कं रोमगं [ति. प. १।१२५]	२३६
अड्ढस्स अणलसस्स	८०९	एत्थावसप्पणीए [ति. प. १।६८]	२२
अणुभागपदेसेहि [ति. प. १।१२]	१२	एदस्स उदाहरणं [ति. प. १।२२]	१४
अण्णेहि अणतेहि [ति. प. १।७५]	२३	एदासि भासाणं [ति. प. १।६२]	२२
अद्वारपल्लच्छेदो [ति. प. १।१३१]	२४१	एदेहि अण्णेहि [ति. प. १।६४]	२२
अब्भंतर दम्बमलं [ति. प. १।१३]	१२	एदाणं पल्लाणं [ति. प. १।१३०]	२३९
अभिमतफलसिद्धे	२५	एवं अण्येयभेदं [ति. प. १।२७]	१५
अरिहाणं सिद्धाणं [ति. प. १।१९]	१३	ओ	
अवरं मज्जिम उत्तम [ति. प. १।१२२]	२३५	ओसण्णासण्णा जे [ति. प. १।१०३]	२३३
अवाच्यानामनन्तांशो	५६९	औ	
अह्वा भेदगयं [ति. प. १।१४]	१२	औपश्लेषिकवे-	८१४
अह्वा मंगं सौख्यं [ति. प. १।१८]	१३	अं	
आ		अंताइ मज्झहीणं [ति. प. १।९८]	२३१
आक्यानलसानुपहत	२५९	अंताइ सुइजोग्गं [त्रि. सा. ३१५]	२४०
आदिम संघणणजुदो [ति. प. १।५७]	२१	क	
आद्यन्तरहितं द्रव्यं	८०४	कः प्रजापतिरुद्दिष्टः	३०
आप्ते व्रते श्रुते [सो. उ. २३१]	८०२	कणयघरावरधीरं [ति. प. १।५१]	१९
आयुरन्तर्मुहूर्तः	२५९	कत्तारो दुवियप्पो [ति. प. १।५५]	२०
इ		कम्ममहीए बालं [ति. प. १।१०६]	२३२
इगिचउदुगसुणं	२८८	करितुरगरहाहिक्खं [ति. प. १।४३]	१८
इगिविगले इगसीदी	१५३	केवलणाणदिवायर [ति. प. १।३३]	१६
इय मूलतंसकत्ता [ति. प. १।८०]	२४	क्षणिकं निर्गुणं चैव	१४०
इय सक्खा पच्चक्खं [ति. प. १।३८]	१७		

ख		गिण्णट्ठरायदोसा [ति. प. ११८१]	२४
खंदं सयलसमत्थं [ति. प. ११९५]	२३१	णिग्गुसणाजहंवर [ति. प. ११९८]	२१
ग		त	
गणरायमंतितलवर	१८	तच्चिय पंचसयाइं [ति. प. ११९०८]	२३३
गालयदि विणासयदि [ति. प. ११९]	११	तत्तो रुवहियकमे	५४५
गुणपरिणदासणं [ति. प. ११२१]	१४	तदप्पलब्बमाहात्म्यं	५६
गुणयारद्धच्छेदा [त्रि. सा. १०५]	२४२, २४९	तव्वग्गे पदरंगुल [ति. प. १११३२]	२४२
घ		तसरेणु रथरेणु [ति. प. १११०५]	२३२
घणलोगगुणसल्लागा	६९२	तिरियपदे रुउणे	५४५
च		तिविकप्पमंगुलं तं [ति. प. १११०७]	२३३
चउविह उवसग्गेहि [ति. प. ११५९]	२१	द	
चामर दुंदुहिपीठ [ति. प. ११११३]	२३३	दंडपमाणंगुलए [ति. प. १११२१]	२३४
छ		दंसणमोहे णट्ठे [ति. प. ११७३]	२२
छक्खंड भरहणाहो [ति. प. १४८]	१९	दीवोवहि सेलाणं [ति. प. १११११]	२३३
छट्ठकदीए उवारी	२८९	दुगुण परित्तासंखेण [त्रि. सा. १०९]	२४६
छद्दव्वणवपदत्थे [ति. प. ११३४]	२८९	दुविहो हवेइ हेडु	१६
छहि अंगुले हि पादो [ति. प. १११३४]	२३४	दुसहससमउडबद्धाण [ति. प. ११४६]	१८
ज		देवमणुस्सादीहि [ति. प. ११३७]	१७
जणिदं इदं पडिदं [ति. प. ११४०]	१७	दोअट्ठ सुण्ण तिय	२३५
जत्थुद्देसे जायदि [त्रि. सा. ८०]	२२२	देहावदिठय केवल	१७
जदं चरे जदं चिट्ठे	५९२	दोण्णि वियप्पा हुंति ह्व [ति. प. १११०]	१२
जस्ति अस्ति काले [ति. प. १११०९]	२३३	दो भेदं च परोक्खं [ति. प. ११३९]	१७
जादे अणंतणणे [ति. प. ११७४]	२३	न	
जेत्ति वि खेतमेत्तं	८०९	नरकजघन्यायुध्या	७९६
जो ण पमाणणएहि [ति. प. ११८२]	२५	नानात्मीयविशेषेषु	५५
जो जो रासी दिस्सदि [त्रि. सा. ८८]	२३०	निमित्तमान्तरं तत्र	८१३
जोयण पमाण संठिद [ति. प. ११६०]	२१	प	
ठ		पंचंबुर सहियाइं [वसु. आ. ५७]	६८७
ठावणमंगलमेदं [ति. प. ११२०]	१३	पंच सयराजसामी [ति. प. ११४५]	१८
ण		पंचविधे संसारे	८००
णामएयपदेसत्थो	८०८	पठमे मंगलकरणे [ति. प. ११२९]	१५
णाणं होदि पमाणं [ति. प. ११८३]	२५	पत्तेयभंगमेगं	५८५
णाणावरणप्पहुडिय [ति. प. ११७१]	२३	पदमेत्ते गुणयारे [त्रि. सा. २३१]	७६७
णम्मणि ठावणाओ [ति. प. १११८]	१३	परमाणूहि यणंताणंतेहि [ति. प. १११०२]	२३२
णत्सस्सि विग्वं भीदी [ति. प. ११२७]	१५	परिणिकमणं केवल	१४
		परिहारद्विसमेतः	६८६

पल्लं समुद्भव उवमं	
पावं मलेति भण्णइ [ति. प. १११७]	
पुण्णं पूद पविता [ति. प. ११८]	
पुवेदं वेदंता पुरिसा [सिद्धम ६]	
पुव्विलाइरियेहि [ति. प. १११६]	
पुव्विलाइरियेहि उत्तो [ति. प. १११८]	
पूरंति मलंति जदो [ति. प. ११९९]	
पूर्वापरविरुद्धादे	
प्रदेशप्रचयात् काया	
प्रथमवयसि पीतं	

व

बाहिरसूर्इवग्गं [त्रि. सा. ३१६]	
बाहिरसूर्इवलय [त्रि. सा. ३१८]	
वेकिक्कूहिं दंडो	

भ

भज्जमिददुगगुणु	
भज्जस्सदन्धेदा [त्रि. सा. १०६]	
भब्बाण जेण एसा	
भवणतियाण विहारो	
भावणवेंतर जोइसिय [ति. प. ११६३]	
भावसुदपज्जाएण [ति. प. ११७९]	
भावियसिद्धंताणं	
भिगारकलसदप्पण [ति. प. १११२२]	

म

मंगलणिमित्तहेऊ	
मंगल षज्जाएहि [ति. प. ११२८]	
मलविद्धमणिव्यक्ति [लघीय. ५७ श्लो.]	
महमंडलियाणं [ति. प. ११४१]	
महमंडलीयणामो [ति. प. ११४७]	
महवीरभासिदत्थो [ति. प. ११७६]	
मूर्तिमत्सु पदार्येषु	
मेरुव्व णिप्पकंपं	
मोहो खाइयसम्मं	

य

यथा च पितृशुद्धया	
यदीन्द्रस्यात्मनो लिङ्गं	
यद्यपि विमलो योगी	

२३०	र	
१३	रूऊण सला वारस	७६४
११	रोमहदं छक्केस [त्रि. सा. १०४]	२४०
४६३	ल	
१३	लवणंबुहि सुद्धमफले [त्रि. सा. १०३]	२४०
१५	लोयालोयाण तहा [ति. प. ११७७]	२४
२३१	व	
२२	वग्गादुवरिमवग्गे [त्रि. सा. ७४]	२४४
८०२	वण्णरसगंधपासे [ति. प. १११००]	२३२
२६	वररथणमउडधारी [ति. प. ११४२]	१८
७६४	वर्णमन्धरसस्पर्शः	८०३
७६५	वयहारोमरासि [ति. प. ११२६]	२३६
२३४	ववहारुद्धारद्धा	२३०
	वासस्स पढममासे [ति. प. ११६९]	२२
२४७	विच्चं नाशयितुं	२६
२४९	विच्चोघाः प्रलयं यान्ति	१०
२०	विउले गोदमगोत्ते [ति. प. ११७८]	२४
७७४	विरलिज्जमाणरासि [त्रि. सा. १०७]	२३७, २४३, २४५, २४९
२२	विरिण तहा खाइव [ति. प. ११७२]	२३
२४	विरलिदरासिच्छेदा [त्रि. सा. १०८]	२४९
३२	विरलिदरासीदो पुण [त्रि. सा. ११०, १११]	२४०
२३३		३५२, ३९४, ७७०
११	विविहत्थेहि अणंतं [ति. प. ११५३]	२०
१५	विविह विक्कणं दव्वं [ति. प. ११३२]	१६
२९६	विस्साणं लोयाणं [ति. प. ११२२]	१४
१८	व्येकपदोत्तरघातः	५४३
१९	श	
२४	शमबोधवृत्ततपसां [आत्मानु० १५]	३०
८२३	श्रेयोभागस्य संसिद्धिः [आसप० २]	२५
३२	ष	
१३८	षट्केन युगपद् योगात्	८०४
	स	
३१	सक्खापच्चक्खपरंपर [ति. प. ११३६]	१७
२९६	सद्धी सत्तएहि [त्रि. सा. १४०]	७५७
११	सत्तणवसुण्णपंच य	७६३

पद्यानुक्रमणी

१०९१

सत्तासीदिचतुस्सद [त्रि. सा. १३९]	७५७	सुदणायभावणाए [ति. प. १।५०]	१९
सत्यादिमज्झ अवसाणएसु [ति. प. १।३१]	१६	सुद्धखरकुजलतेवा	१५३
सदाशिवः सदाऽकर्मा	१४०	सुरखेयरमणहरणे [ति. प. १।६५]	२२
समयं पडि एक्केक्कं [ति. प. १।१२७]	२३६	सुरखेयरमणुवाणं [ति. प. १।५२]	२०
समवट्टवासवग्गे [ति. प. १।११७]	२३४	सुहुमं च णामकम्मं	१३८
समेऽप्यनन्तशक्तित्वे	५६	सुहुमदिठविसंजुत्तं	७९१
सरागवीतरागात्म [सो. उ. २२७]	८०१	सेद जलरेणु [ति. प. १।११]	१२
सर्वत्र जगत्क्षेत्रे	७९४	सेदरजादिमलेण [ति. प. १।५६]	२१
सर्वेऽपि पुद्गलाः खलु	७९३	सोक्खं तित्थयरणं [ति. प. १।४९]	१९
सर्वथा स्वहितमाचरणीयं	१०	स्थान एव स्थितं	५६
सर्वप्रकृतिस्थित्यनु	७९८	स्याद्वादकेवलज्ञाने [आसमी. १०५]	६१७
ससमयमावलि अवरं	८१०	स्वकारितेऽर्हचैत्यादौ	५५
साधु रराज कीर्तरेणांको	२८७	स्वहेतुजनितोऽप्यर्थ [लघीय० ५९ इलो.]	९३३



विशिष्ट शब्द-सूची

अ		अनुत्तरोपपादिकदश	५९६	अवाय	५१७
अक्रियावाद	६००	अनुपक्रमकाल	४५६	अविनाभावसम्बन्ध	५२१
अक्षर (के भेद)	५६८	अनुपक्रमायुष्क	७१३	अविभागप्रतिच्छेद	१२२
अक्षर समास	५७०	अनुभागकाण्डकोत्करण	१०४	अविरतसम्बद्धि ४०, ४३, ५९	
अक्षरात्मक श्रु.	५२४	अनुभववचन	३६२, ३६३	अष्टाङ्क ५३१, ५५३, ५५५, ५६७	
अक्षिप्र	५१९	अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थान		असंख्यात गुणवृद्धि	५३१
अगस्त्य	६००		२२८	असंख्यात भागवृद्धि	५३१
अगाढ (दोष)	५६	अनुमान	५२०	असंख्याताणुवर्गणा	८२३
अङ्ग बाह्य	६१२	अनुयोगश्रु.	५७३	असंजी	८९२, ९३२
अप्रायणीयपूर्व	६०५	अन्तकृद्दशांग	५९६	असंयत	५७
अचक्षुदर्शन	६९२	अन्तर्मुहूर्त	८१०	अस्तिनास्तिप्रवाद	६०५
अचित्त (योनि)	१५६	अन्योन्याभ्यस्तराशि	१२२		
अज्ञान मिथ्यात्व	४७	अपकर्ष	७११, ७१२	आ	
अज्ञानवाद	६००	अपगतवेद	४६६	आकारयोनि	१५४
अण्डज	१५७	अपर्याप्तिक	२५१	आकाशगता	६०२
अणु वर्गणा	८२३	अपूर्वकरण	४१, ११२, ११३, ११८	आक्षेपणीक्या	५९७
अधःप्रवृत्तकरण	८०, ८१, १०४	अपूर्वस्पर्शक	१२१, १२२, १२५	आचारांग	५९२
अद्वैतपत्त्योपम	२३९	अप्रतिष्ठित प्रत्येक	३१७	आत्मप्रवाद	६०८
अधुव	५१९	अप्रत्याख्यानावरण	४७३	आत्मांगुल	२३२
अनन्तगुणवृद्धि	५३१	अप्रमत्त विरत	४१, ४४, ७८	आदेश	३४, ३५
अनन्तभागवृद्धि	५३१	„ संयत		आभीत	५१०
अनक्षरात्मक श्रु.	५२३	अप्रतिपाति	६२१	आयुप्राण	२६६
अनन्तानुबन्धी	५७, ४७४	अभिनिबोधिक (मतिज्ञान)	५१२	आवली	२१६, ८०९
अनन्ताणुवर्गणा	८२४	अयोगकेवलजिन	४१, १२८	आस्वलायन	६००
अननुगामी	६१९	अर्थपद	५७०	आसुरक्ष	५१०
अनवस्थित	६२०	अर्थाक्षर श्रु.	५६६, ५६८	आस्तिक्य	८०२
अनाकार उपयोग	९०१	अर्थावग्रह	५१४	आहारककाययोग	३७४
अनाहारक	८९६	अवग्रह	५१५	आहारपर्याप्ति	२५२
अनिवृत्तिकरण	४१, ११९, १२०	अवधिज्ञान	६१७	आहारक मिश्रकाययोग	३७५
अनिसुत	५१९	अवसन्नासन्न	२३१	आहार संज्ञा	२६९
अनुकृष्टि	८४	अवधिदर्शन	६९२	आहारक	८९५
अनुक्त	५१९	अवस्थित	६२०		
अनुगामी	६१९			इ	

इन्द्र (इवे. गुरु) ४७

इन्द्रिय	१२२
इन्द्रिय पर्याप्ति	२५२, २६५
इन्द्रिय प्राण	२६६
ई	
ईश्वर (दर्शन)	१४०
ईहा	५१८
उ	
उच्छ्वास	८०९
उत्तराव्ययन	६१५
उभयाननुगामी	६१९
उभयानुगामी	६१९
उपयोग	९००
ऋ	
ऋजुमति	६६५, ६५८, ६६९, ६७१
ए	
एकज्ञान	५१९
एकविधज्ञान	५१९
एकान्तमिध्यात्व	४६
एलापुत्र	६००
ऐ	
ऐन्द्र दत्त	६००
ओ	
ओघ	३४
औ	
औदयिक	३९, ४३
औदारिक काययोग	३६८, ९२४
औदारिकमिश्र	३६९
औपमन्यव	६००
औपशमिक	३९, ४५
औपशमिक सम्यक्त्व	४३, ५७, ८८५
क	
कठ	६००
कण्ठेविद्धि	५९९
कपाट समुद्घात	७५५
कपिल	६००

कपोत लेख्या	७०९
कर्मप्रवाद	६१०
कल्पव्यवहार	६१५
कल्प्याकल्प्य	६१५
कल्याणवाद	६११
कर्मपुद्गलपरिवर्तन	७९०
कषाय	४७३
काय	९२२
कायबल प्राण	२६६
कायमार्गणा	३११
कारणविपर्यास	४९
कार्मणकाययोग	३७५, ९२४
कालद्रव्य	८०६, ८०७
काल परिवर्तन	७९४
काल सामायिक	६१३
कालाणु	८१७
कुंथुमि	६००
कृतिकर्म	६१४
कृष्णलेश्या	७०७
केवलज्ञान	६७६
केवलदर्शन	६९३
केवलि-समुद्घात	७५५
कोत्कल	५९९
कौशिक	६००
क्रियावाद	६००
क्रियाविशालपूर्व	६११
क्षायिक	३९, ५५
क्षायिक सम्यक्त्व	४३, ५७, ८८४, ९३१
क्षायिकसम्यग्दृष्टी	८०
क्षायोपशमिक	३९, ४३
क्षायोपशमिक सम्यक्त्व	५४
क्षायोपशमिक संयम	४४
क्षीणकषाय	४१, १२७
क्षिप्र (ज्ञान)	५१९
क्षेत्र सामायिक	६१३
क्षेत्राननुगामी	६१९
क्षेत्रानुगामी	६१९

ग	
गतिमार्गणा	२७८
गर्भ (जन्म)	१५५, १५८, १६०
गुण	३३, ३४
गुणकारशलाका	२२३
गुणप्रत्यय	६१८
गुणश्रेणिनिर्जरा	१०४, ११८
गुण संक्रमण	१०४, ११८
गुणस्थान	३९, ४२
गुणहानि	१२२
गुणहानि आधाम	१२२
घ	
घनांगुल	२४२, २४४
च	
चक्षुदर्शन	६९२
चतुरंक	९३१, ५५३, ५५५
चतुर्विंशतिस्तव	६१४
चन्द्रप्रज्ञप्ति	६०१
चल (दोष)	५५
चारित्र्यमोह	४४, ४५
चूर्णि	५३८
चूर्णचूर्णि	५३८
चूलिका	६०२
छ	
छेदोपस्थापना	६८४
ज	
जगत्प्रतर	२४२
जगत्श्रेणी	२४२
जघन्य अनन्तानन्त	२१४
जघन्य असंख्यातासंख्यात	२१०
जघन्य परीतासंख्यात	२०८
जघन्य परीतानन्त	२११
जघन्य युक्तानन्त	२१४
जघन्य युक्तासंख्यात	२१०
जतुकर्ण	६००
जनपदस्त्य	३५९

जम्बुद्वीपप्रज्ञप्ति	६०१
जरायुज	१५७
जलगता	६०२
जीवसमास ३३, ३४, ४२, १४२-	
	१५३
जैमिनि	६००
ज्ञातृधर्मकथा	५९५
ज्ञानप्रवाद	५०६
ज्ञानमार्गणा	५०५
ज्ञानोपयोग	९३३

त

तर्क	५२१
तापस	४७
तिर्य्यचगति	२७९
तेजोलेश्या	७१०
त्रसकाय	२३१
त्रसनाली	२३२
त्रिलोकबिन्दुसार	६१२

द

दण्डसमुद्धात	७५५
दृष्टिवाद	५९९
दर्शन	६९१
दर्शनमोह	४३, ४६
दर्शनोपयोग	९३३
दशवैकालिक	६१५
देवगति	२८१
देशविरत ४०, ४१, ४४, ६७	
देशावधि	६२०, ६२२
दोगुणहानि	१२२
द्रव्य नपुंसक	४६३
द्रव्य पुरुष	४६३
द्रव्य प्राण	२६४
द्रव्यमन	६६७, ९९३
द्रव्यलेश्या	६९८
द्रव्य सामायिक	६१३
द्रव्य स्त्री	४६३
द्रव्येन्द्रिय	२९४, २९६

द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि	७९,
	९३१
द्विरूपघनधारा	२२१
द्विरूपघनघनधारा	२२३
द्विरूपवर्गधारा	२१५, ५३०
द्वोपसागर-प्रज्ञप्ति	६०१

ध

धारणा	५१७
ध्रुव (ज्ञान)	५१९
ध्रुवभागहार	६२८, ६३०

न

नष्ट	६३, ७१
नारायण	६००
नानागुणहानि	१२२
नारकगति	२७८
नामसत्य	३५९
नाम सामायिक	६१३
निगोदकावस्थिति	२२८
नित्यनिगोद	३३०
निर्वृत्यक्षर	५१८, ५६९
निर्वृत्यपर्याप्त	२५५, २६१
निर्वेजनी कथा	५९७
निषिद्धिका	६१६
निसृज	५१९
नीललेश्या	७०८
नोकर्म पुद्गलपरिवर्तन	७९०
नोकर्मशरीर	३७९

प

पंचांक	५३१, ५५३, ५५५
पदश्रुतज्ञान	५७०
पदसमासश्रु.	५७२
पशालेश्या	७१०
परक्षेत्र परिवर्तन	७९३
परमाणु	२३१, ८०४
परमावधि	६२०, ६४८
परिकर्म	६०१

परिग्रहसंज्ञा	२७१
परिहारविशुद्धि	६८४, ६८५
पर्याप्तक	२५१, २५५
पर्याप्ति	३४, ३५, २५१
पर्यायज्ञान	५२७, ५२९, ५५२
पर्यायसमास	५२९, ५५२
पल्य	२१६
पाराशर	६००
पारिणामिक भाव	४२, ४३
पिशुलि	५३८
पिशुलि पिशुलि	५३८
पुण्डरीक	६१५
पुद्गल	२३१
पूर्वस्पर्धक	१२१, १२५
पैष्पलाद	६००
पोत	१५७
प्रक्षेपक	५३८
प्रक्षेपक प्रक्षेपक	५३८
प्रथमानुयोग	६०१
प्रतिपाती	६२१
प्रतिपत्तिसमास	५७३
प्रतराकाश	२१७
प्रतरांगुल	२१६, २४२, २४४
प्रतरावली	२१६
प्रतिक्रमण	६१४
प्रतिपत्तिश्रु.	५७२
प्रतीत्यसत्य	३६०
प्रत्यक्ष	५२१
प्रत्यभिज्ञान	५२०, ५२१
प्रत्याख्यानपूर्व	६१०
प्रत्येक शरीर	३१६
प्रत्येकशरीरवर्गणा	८३०
प्रमत्तविरत	४१, ४४, ६१
प्रमाणपद	५७०
प्रमाणांगुल	२३२
प्रमाद	६२, ६३
प्ररूपणा	३३, ३५
प्रवचन	४८

प्रश्नव्याकरण	५९७
प्रस्तार	६५
प्राण ३४, ३५, २६४, २६६, ८०९	
प्राभृतश्रु.	५७४
प्राभृतप्राभृत	५७३
प्राभृतसमास	५७४

ब

बहुज्ञान	५१८
बहुविध	५१८
बादरकृष्टि	१२१, १२५
बादर निगोदवर्गणा	८३१, ८३३
बुद्धदर्शी	४७

भ

भट्टाकलंक	५१५
भयसंज्ञा	२७०
भवपरिवर्तन	७९५
भवप्रत्यय	६१८
भवानुगामी	६१९
भवाननुगामी	६१९
भग्न	९२८
भावनपुंसक	४६२
भावपुरुष	४६२
भावप्रमाण	२१८
भावप्राण	२६४
भावमन	९२४
भावसामायिक	६१३
भावसत्य	३६०
भावस्त्री	४६२
भावेन्द्रिय	२९४
भाषापर्याप्ति	२५३, २६५
भावपरिवर्तन	७९६
भावलेश्या	७२७
भाववाक्	८५०
भेदाभेद विपर्याप्त	४९

म

मण्डलि (दर्शन)	१४०
मति अज्ञान	५०९

मतिज्ञान	५२१, ५२३
मध्यमपद	५७०
मनःपर्याय	६६५, ६६७
मनःपर्याप्ति	२५३, २६५
मनुष्यगति	२८०
मनप्राण	२६५, २६६
मरीचि	६००

मलिन (दोष)	५६
मस्करी	४७, १४०
महाकल्य	६१५
महापुण्डरीक	६१५
माठर	६००
माध्यन्दिन	६००
मान्यपिक	६००
मायागता	६०१
मार्गणा	३४, ३७४
मिथ्यात्व	४६, ४८
मिथ्यात्वप्रकृति	४६
मिथ्यादृष्टि	४०, ४२, ४८, ८८७
मिश्र (गु)	४०, ४२, ५३
मिश्र (योनि)	१५६
मुण्ड	६००
मुहूर्त	२५९, ८१०
मैथुनसंज्ञा	२७०
मौद	६००
मौद्गलायन	६००

य

यथाख्यात	६८६
याज्ञिक	४७
योग	३५४, ३५५, ९२२
योनि	१५४, १५९

र

रामायण	५१०
रूपगता	६०२
रूपसत्य	३६०
रोमश	६००
रोमहर्षिणी	६००

ल

लब्धक्षर	५६८, ५६९
लब्धक्षर श्रु.	५२९, ५५७
लब्धपर्याप्तिक	२५६, २६१
लव	८१०
लेश्या	६९६, ९२८

व

वचन प्राण	२६५, २६६
वचनयोग	९२४
वन्दना	६१४
वर्ग	१२२
वर्गणा	१२२, ३८०
वर्धमान	६२०
वशिष्ठ	६००
वसु	६००
वस्तु श्रु.	५७५
वस्तुसमास	५७६
वाङ्मलि	६००
वादरायण	६००
वाल्कल	६००
वाल्मीकि	६००
विक्षेपणीकथा	५९७
विद्यानुवाद	६१०
विपरीत मिथ्यात्व	४७
विपाकसूत्र	५९८
विपुलमति	६६५-६७२
विभंगज्ञान	५११
विरताविरत	६०
विवृत (योनि)	१५६
विस्तार	३४
विस्तसोपचय	३८४
विहारवत्स्वस्थान	७३५
वीतरागसम्यग्दर्शन	८०१
वीर्यानुप्रवाद	६०५
वेदमार्गणा	४६२
वेदकसम्यक्त्व	४३, ५४, ८८५
वेदक सम्यग्दृष्टि	७९

वैक्रियिक काययोग	३७०
वैक्रियिक मिश्रका.	३७१
वैनयिक	६१४
वैनयिकवाद	६००
वैशेषिक	१४०
व्यंजनावग्रह	५१४
व्यवहारकाल	८०८, ८११
व्यवहारपत्य	२३५
व्यवहारपत्योपम	२३६
व्यवहारसत्य	३६०
व्याख्याप्रज्ञप्ति	६०१
व्याख्याप्रज्ञप्ति (अंग)	५९५
व्याघ्रभूति	६००
व्यास	६००

श

शरीरपर्याप्ति	२५२, २६५
शाकल्य	६००
शीत (योनि)	१४६
शुक्ललेख्या	७१०
श्वासोच्छ्वास	२६१, २६६
श्रुत अज्ञान	५१०
श्रुतज्ञान	५२३

ष

षडङ्क	५३१, ५५३, ५५५

स

संक्षेप	३४
संख्याताणुवर्गणा	८२३
संख्यातगुणवृद्धि	५३१
संख्यात भागवृद्धि	५३१
संघात श्रु.	५७१
संज्ञा	३४, २६९, ९३२
संज्ञी	८९२, ९३२
संज्वलनकषाय	४७५
संभावनासत्य	३५९
संमूर्छन (जन्म)	१५५, १५८, १६०

संयतासंयत	४०
संयम	६८१
संवृति सत्य	३५९
संवृत (योनि)	१५६
संवेजनो कथा	५९७
सांख्यव्यवहारिक प्रत्यक्ष	५२१
सत्यदत्त	६००
सत्यप्रवाद	६०६
सत्यमनोयोग	३५६
सत्यवचनयोग	३५७
सदाशिव	१४०
ससांक	५३१, ५५३, ५५४
सप्रतिष्ठित प्रत्येक	३१७
समय	८०८
समवायांग	५९४
समयप्रबद्ध	३८०
समुद्घात	७३५, ८९६
सम्यक्त्व	८०१
सम्यक्त्व (प्रकृति)	५४, ५७
सम्यग्दृष्टि	४०
सम्यक् मिथ्यात्व प्र.	५१
सम्यक्मिथ्यादृष्टि	५२, ८८७
सयोगकेवलजिन	४१, १२८
सरागसम्यग्दर्शन	८०१
सर्वावधि	६२०, ६२१
साकार उपयोग	९०१
सागरोपम	२४१, २४९
सातिशयाप्रमत्त	७९, ८०
सात्यमुग्धि	६००
साधारणशरीर	३१६, ३२१
सान्तरमार्गणा	२७६
सामायिक	६१३
सामायिक संयम	६८४
सासादन गु.	४३, ५०
सासादनसम्यग्दृष्टि	४०, ५०, ५१, ८८७

सिद्ध	४२, १३७
सिद्धगति	२८२
सिद्धपरमेष्ठी	४५
सूक्ष्मनिगोद लब्धपर्याप्तक	५२८, ५२९, ५३०
सूक्ष्मकृष्टि	१२१, १२५
सूक्ष्मसांपराय (गु.)	४१, १२१, १२५, १२६
सूक्ष्मसांपराय संयम	६८६
सूच्यगुल	२१६, २४२, २४४
सूत्र	६०१
सूत्र कृतांग	५९३
सूर्यप्रज्ञप्ति	६०१
सोपक्रमकाल	४५६
सोपक्रमायुष्क	७१३
स्तोक	८१
स्थलगता	६०२
स्थापनाक्षर	५६८, ५६९
स्थानांग	५९३
स्थापना सत्य	३५९
स्थापनासामायिक	६१३
स्पर्श (क्षेत्र)	७६०
स्मृति	५२१
स्वक्षेत्र परिवर्तन	७९३
स्वरूपविपर्यास	४९
स्वस्थानाप्रमत्त	७९
स्वस्थान स्वस्थान	७३५
स्विष्टिक्थ	६००
स्थितिकाण्डकोत्करण	१०४
स्थितिबन्धापसरण	१०५
स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान	२२७

ह

हरिश्मश्रु	६००
हारीत	६००
हीयमान	६२०

भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित

जैनधर्म-दर्शन, सिद्धान्त एवं

आचारपरक ग्रन्थ

गोम्मटसार, जीवकाण्ड (भाग 1 और 2)
(कर्णाटिकी वृत्ति, संस्कृत टीका एवं हिन्दी अनुवाद सहित)

गोम्मटसार, कर्मकाण्ड (भाग 1 और 2)
(कर्णाटिकी वृत्ति, संस्कृत टीका एवं हिन्दी अनुवाद सहित)

सर्वार्थसिद्धि

सम्पादन-अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. फूलचन्द्र शास्त्री
तत्त्वार्थराजवार्तिक (भाग 1 और 2)

मूल : भट्ट अकलंक

सम्पादन-अनु. : डॉ. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य
सत्यशासनपरीक्षा (संस्कृत), मूल : आचार्य विद्यानन्द

सम्पादन-अनु. : डॉ. गोकुलचन्द्र जैन

प्रमाणप्रमेयकलिका (संस्कृत), मूल : नरेन्द्र सेन
षड्दर्शनसमुच्चय

सम्पादन-अनु. डॉ. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य

षट्खण्डागम-परिशीलन : पं. बालचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री
SAMAYASAR (समयसार)

Edited by A. Chakravarti

Structure And Functions Of Soul In
Jainism

—Dr. S.C. Jain

श्रावकप्रज्ञप्ति (सावय पण्णत्ति)

सम्पादन-अनु. : पं. बालचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

मूलाचार (प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी), दो भागों में

सम्पादन-अनु. : आर्यिकारत्न ज्ञानमती

धर्माभूत (अनगार, सागार)

ज्ञानदीपिका पंजिका एवं हिन्दी अनुवाद सहित

सम्पादन-अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

आराधना-समुच्चयो योगसारसंग्रहश्च (संस्कृत)

मूल : रविचन्द्र; गुरुदास

ध्यानस्तव (संस्कृत, अंग्रेजी), मूल : भास्करनन्दि

गीतवीतराग (संस्कृत), मूल : पण्डिताचार्य

सम्पादन : डॉ. आ.ने. उपाध्ये

ज्ञानपीठ पूजांजलि (जैन पूजा, व्रत, स्तोत्रपाठ आदि संग्रह)

जिनवाणी (प्राकृत-हिन्दी)

सम्पादन-अनु. : डॉ. हीरालाल जैन

भारतीय ज्ञानपीठ

स्थापना : सन् 1944

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्री का अनुसन्धान
और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्य का निर्माण

संस्थापक

स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन

स्व. श्रीमती रमा जैन

अध्यक्ष

श्री अशोक कुमार जैन

कार्यालय : 18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003